खोज में उपलब्ध

हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों

का

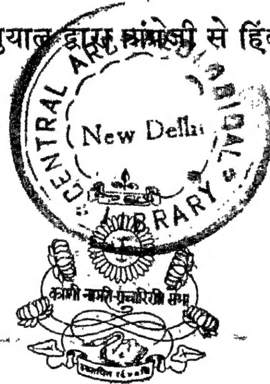
चौदहवाँ त्रैवार्षिक विवरण

[सन् १९२९—१९३१ ई०]

संपादक

स्वर्गीय डाक्टर पीतांबरदत्त बड़थ्वाल

(श्री दौलतराम जुयाल द्वारा अंग्रेजी से हिंदी में रूपांतरित)



उत्तरप्रदेशीय शासन के संरक्षण में काशी नागरीप्रचारिणी सभा
द्वारा संपादित और प्रकाशित

काशी

सं० २०११ वि०

प्रकाशक—नागरीप्रचारिणी सभा, काशी
मुद्रक—महताबराय, नागरी मुद्रण, काशी
प्रथम संस्करण, सं० २०११, ३०० प्रतियाँ
मूल्य १५)

सूची

Free

वक्तव्य

हमने त्रयोदश त्रैवार्षिक विवरण (सन् १९२६–२८ ई०) में दिए गए वक्तव्य में बताया है कि सौर मिति २० श्रावण २०१० वि० (५ अगस्त १९५३ ई०) की खोज उपसमिति ने उत्तरप्रदेशीय शासन की १००००रु०की सहायता को—जो खोज विवरणों के छापने के निमित्त दी गई है—दृष्टि में रखकर एक-एक हजार पृष्ठों की तीन जिल्दों में अधिक से अधिक विवरणों को छापने का निश्चय किया था। तदनुसार प्रथम जिल्द छप चुकी है जिसमें उक्त त्रयोदश त्रैवार्षिक विवरण है। दूसरी जिल्द पाठकों के सामने प्रस्तुत है। इसमें सन् १९२९-३१ ई० का त्रैवार्षिक विवरण है। इसका कलेवर बड़ा न होने से इसका संक्षेपीकरण भी कम हुआ है। जहां कहीं संक्षेपीकरण आवश्यक समझा गया है वहाँ उक्त विवरण के ही समान किया गया है। प्रस्तुत विवरण को भूतपूर्व निरीक्षक स्व० डा० पीतांबरदत्त बड़थ्वाल ने खोज विभाग के साहित्यान्वेषकों की सहायता से अंगरेजी में संपादन किया था। हिंदी में इसका रूपांतर खोज के वर्तमान साहित्यान्वेषक श्री दौलतरामजी जुयाल ने बड़ी सावधानी से किया है। रूपांतर में ग्रंथों और ग्रंथकारों का अनुक्रम अंगरेजी लिपि के ही अनुसार है। इसको परिवर्तित न करने का कारण पूर्वोक्त विवरण में पं० विश्वनाथ प्रसाद जी मिश्र द्वारा लिखित 'पूर्वपीठिका' में दिया गया है।

ऊपर यह उल्लेख किया गया है कि प्रत्येक जिल्द में एक-एक हजार पृष्ठ रहेंगे; परंतु प्रस्तुत जिल्द में लगभग सात सौ पृष्ठ हैं। व्यवहार करने वालों की सुविधा की दृष्टि से एक जिल्द में एक ही त्रैवार्षिक विवरण छापा जा रहा है जिससे पृष्ठों की संख्याओं का न्यूनाधिक हो जाना स्वाभाविक है। किंतु अंत में जितने पृष्ठ बच जाएंगे उनका उपयोग आगे के विवरणों को छापने में किया जाएगा।

दीर्घ व्यवधान के पश्चात् खोजविवरण प्रकाशित हो रहे हैं। इसके लिये हम उत्तरप्रदेश राज्य शासन के आभारी हैं जिसकी सहायता से यह संभव हो सका है और जिसे इस कार्य के संरक्षण का श्रेय प्राप्त है। हमें पूर्ण आशा है कि राज्य शासन की सहायता से अप्रकाशित सभी विवरण शीघ्र ही छप जाएँगे।

मैं सभा के प्रधान मंत्री डा० राजबली पांडेय के प्रति आभार प्रकट कर देना अपना कर्तव्य समझता हूँ जिन्होंने इस कार्य में पूर्ण रुचि लेते हुए इस विवरण को नागरी मुद्रणालय में छपवाने का शीघ्र प्रबंध कर दिया। मुद्रणालय के मैनेजर बाबू महताबराय जी का मैं विशेष अनुगृहीत हूँ जिन्होंने प्रस्तुत विवरण को समय पर छापने के अतिरिक्त प्रूफ संशोधन के कार्य में बड़ी सहायता पहुँचाई है। खोज विभाग के अन्वेषक श्री दौलतराम जुयाल के परिश्रम और लगन से ही यह कार्य शीघ्र संपन्न हो सका है। उन्होंने ही इस विवरण का हिंदी में रूपांतर किया है। अतः वे और उनके सहायक श्री रघुनाथ शास्त्री भी हमारे विशेष धन्यवाद के भाजन हैं।

हजारीप्रसाद द्विवेदी
निरीक्षक,
खोज विभाग

काशी,
३ अप्रैल, १९५४

प्रस्तावना

इस रिपोर्ट को आरंभ करने के पहले मुझे खोज विभाग के भूतपूर्व यशस्वी निरीक्षक डा० हीरालाल के स्वर्गवास का उल्लेख बड़े खेद के साथ करना पड़ता है। डाक्टर साहब की मृत्यु से सभा के खोजविभाग की बड़ी क्षति हुई है। आप विगत १७ वर्षों से खोज के कठिन कार्य का निरीक्षण बड़े उत्साह और योग्यतापूर्वक करते आ रहे थे। वे बड़े उदार सज्जन और कृपालु थे। क्या छोटे, क्या बड़े, सब उनका एकसा संमान करते थे। उनकी सेवाओं का आदर सरकार और जनता दोनों करती थी। कई संस्थाओं को उनका सहयोग प्राप्त था और वे लगन से साहित्य की श्री वृद्धि किया करते थे। वे एक अवकाशप्राप्त जिलाधीश थे। यदि चाहते तो अपने जीवन का शेषकाल सुख-पूर्वक बिता सकते थे, किंतु वे अंत तक कर्मण्य रहे। परमात्मा उनकी आत्मा को शांति दे।

सामान्यतया यह रिपोर्ट डा० हीरालाल जी के ही द्वारा लिखी जाती किंतु दुर्दैव ने उन्हें बीच ही में उठा लिया। परिशिष्ट १ को उन्होंने यत्र-तत्र सरसरी दृष्टि से देखा था किंतु उसे भी वे अच्छी तरह नहीं देख पाये थे। रिपोर्ट का काम उन्हीं के समय में, समय से बहुत पिछड़ गया था।

सन् १९२६–२८ ई० की त्रैवार्षिक रिपोर्ट उन्होंने ता० १–१०-३१ को लिखकर समाप्त की थी। ता० ६–८–३४ को जब निरीक्षण का कार्य मुझे सौंपा गया तब १९२९-३१ ई० की रिपोर्ट अभी लिखी जाने को थी। सन् १९२६-२८ ई० की वृहत्काय रिपोर्ट गवर्मेंट प्रेस से लौट आई थी क्योंकि तबतक सन् १९२३-२५ की रिपोर्ट को गवर्मेंट प्रेस छाप नहीं सका था। इस रिपोर्ट को भी यथासाध्य छोटा करना आवश्यक समझा गया। इधर मेरे कार्यकाल का भी काम जमा होता गया। इसी से यह रिपोर्ट इतनी देरी में पूरी हो रही है। परंतु यह प्रकाशित भी हो सकेगी या नहीं, यह बात संदिग्ध है। इन रिपोर्टों को गवर्मेंट प्रेस छापता है। सन् १९२३-२५ ई० की रिपोर्ट का छपना सन् १९३० में आरंभ हो गया था और सन् १९३३ ई० में उसकी छपाई का काम समाप्तप्राय था; किंतु अब तक वह प्रेस ही में है। यह अवस्था बड़ी खेदजनक है। आशा है गवर्मेंट इधर ध्यान देगी और रिपोर्टों को छापने की अच्छी व्यवस्था करने की कृपा करेगी।

साधु कवि रतिभान के संबंध में उनके ग्रंथ से बाहर की सूचनाएँ मुझे कालपी के श्रीयुक्त ''रसिकेन्द्र'' से प्राप्त हुई हैं। इसलिये वे मेरे धन्यवाद के पात्र हैं।

पाली, लैंसडौन,
ता० १५-५-३९ ई०

पीतांबरदत्त बड़थ्वाल
निरीक्षक, खोजविभाग

प्राचीन हस्तलिखित हिंदी ग्रंथों की खोज का चौदहवाँ त्रैवार्षिक विवरण

(सन् १९२९, १९३० और १९३१ ई०)

इस रिपोर्ट की कार्यावधि में खोज का कार्य लखनऊ, लखीमपुर, आगरा, हरदोई, उन्नाव, एटा और अलीगढ़ जिलों में हुआ। पं० बाबूराम बित्थरिया तथा पं० छोटेलाल त्रिवेदी ने पहले अन्वेषण का कार्य किया। परंतु बीच में ही बित्थरियाजी दिल्ली प्रांत में शोध का कार्य करने के लिये भेज दिए गए और उनके स्थान पर श्री सुखदेव शास्त्री की नियुक्ति हुई। उनके चले जाने के पश्चात् पं० लक्ष्मीप्रसाद त्रिवेदी उस स्थान पर नियुक्त किए गए।

इस अवधि में १५२१ हस्तलिखित ग्रंथों के विवरण प्राप्त हुए। इनमें से ४६ ग्रंथ सन् १८८० ई० के पश्चात् के रचे होने के कारण नियमानुसार अस्वीकृत कर दिए गए और ५ ग्रंथ अन्य भाषाओं के होने के कारण रिपोर्ट में सम्मिलित नहीं किए गए। इन्हीं विवरणों की संख्या में आगरा नागरीप्रचारिणी सभा के एजंटों—श्री श्रीनिवास तथा श्री अवधविहारीलाल और जिला रायबरेली के श्री त्रिभुवनप्रसाद के भेजे क्रम से ५० और ३९ समस्त ८९ ग्रंथों के विवरण भी सम्मिलित हैं। अस्वीकृत कार्य को छोड़कर शेष कार्य तीन वर्षों में इस प्रकार विभक्त है:—

सन् ईसवी	विवरण लिए हुए ह० लि० ग्रंथों की संख्या
१९२९ ,,	३८३
१९३० ,,	५८८
१९३१ ,,	५११

४९९ ग्रंथकारों के बनाए हुए ८८४ ग्रंथों की १२०३ प्रतियों के विवरण लिए गए हैं, जिनके अतिरिक्त २६७ ग्रंथों के रचयिता अज्ञात हैं। २७४ ग्रंथकारों के रचे हुए ४०८ ग्रंथ खोज में बिलकुल नवीन हैं। इनमें ६३ ऐसे नवीन ग्रंथ सम्मिलित हैं जिनके रचयिता तो ज्ञात थे किंतु उनके इन ग्रंथों का पता नहीं था।

नीचे दी हुई सारिणी द्वारा ग्रंथों और उनके रचयिताओं का शताब्दि क्रम दिखाया जाता है:—

शताब्दि	१४ वीं	१५ वीं	१६ वीं	१७ वीं	१८ वीं	१९ वीं	अज्ञात एवं संदिग्ध	योग
ग्रंथकार	...	४	३१	७६	८२	१७२	१३४	४९९
ग्रंथ	...	१६	१५३	२०२	२४८	४०८	४४३	१४७०

ग्रंथों का विषयानुसार विभाग नीचे दिया जाता है:—

१—साधारण काव्य और संग्रह	९३
२—प्रेम और श्रृंगार	१०४
३—संगीतशास्त्र और गीत-काव्य	३५
४—कथा कहानी	१४२
५—नाटक	४
६—रीति और पिंगल	२५
७—भक्ति और स्तोत्र	९६
८—पौराणिक	२२६
९—धार्मिक तथा सांप्रदायिक	२६४
१०—नीति	५
११—उपदेश	५४
१२—ज्योतिष और रमल	८९
१३—जंत्र मंत्र और स्वरोदय	३०
१४—वैद्यक	१४०
१५—कोक	१५
१६—विविध	१४५

अन्य भाषा के जिन ग्रंथों के नोटिस लिए गए और जो रिपोर्ट में सम्मिलित नहीं हैं उनकी तालिका यहाँ दी जाती है:—

क्र०सं०	रचयिता	ग्रंथ	विषय	रचना-काल	लिपि-काल	गद्य या पद्य	भाषा
१	चिंतामणि	दोषावली	ज्योतिष	×	१८५१	गद्य	
२	नरोत्तम-दास	वैष्णव वंदना	स्तुति	१८६४	१८६४	पद्य	बँगला
३	,,	,,	,,	,,	,,	,,	,,
४	,,	स्मरण मंगल	गौडीय संप्रदाय के वैष्णवों का मंगलगान	१८५४	१८५४	,,	,,
५	स्छल	उदीच्य-प्रकाश	उदीच्य ब्राह्मणों के गोत्रादि का वर्णन	...	...	गद्य	गुजराती

इस खोज में निम्नलिखित १४ मुसलमान ग्रंथकारों की कृतियाँ भी उपलब्ध हुई हैं। इनमें से तारांकित ग्रंथकार और ग्रंथ खोज में नवीन मिले हैं।

क्र०सं०	ग्रंथकार	ग्रंथ	रचना-काल	लिपि-काल
१	अब्दुल मजीद	क्लेशभंजनी	×	×
२	आलम	माधवानल-कामकंदला	×	१७६४ ई०
३	असगरहुसेन	यूनानीसार	१८७५ ई०	१८८७ ,,
४	भुल्लन शेख	महाराज भरतपुर और लाट साहब का मिलाप	१८७६ ,,	×
५	फरासीसी हकीम	१—इजुल पुरान	×	१८४० ,,
		२—वैद्यक फरासीसी❀	×	१७६० ,,
६	हैदर	कासिदनामा	×	१८४३ ,,
७	करमअली❀	निज उपाय❀	१७९० ,,	×
८	मल्लिक मोहम्मद जायसी	पद्मावत	१५४० ,,	१८०१ ,,
९	नजीर	१—कन्हैयाजन्म❀	×	×
		२—वंशी❀	×	×
		३—बंजारानामा❀	×	×
		४—हंसनामा	×	१८५३ ,,
१०	कुदरतुल्ला❀	१—रागमाला❀	×	१८८० ,,
		२—खेल बंगाला❀	×	१८५२ ,,
११	ताहिर	गुणसार कथा	१६२१ ,,	×
१२	मीरमाधो❀	सुदामाचरित्र❀	×	१७७५ ,,
१३	वहाब	बारहमासा	×	१८५१ ,,
१४	वजहनशाह	अलिफनामा	×	×

इसी प्रकार नीचे लिखे हुए १० जैन ग्रंथकारों की रचनाएँ प्राप्त हुई हैं। इनमें से भी तारकांकित ग्रंथकारों और ग्रंथों का पता पहले ही पहल चला है:—

क्र० सं०	ग्रंथकार	ग्रंथ	रचनाकाल	लिपिकाल
१	भागचंद❀	श्रावकाचार❀	१८५५ ई०	×
२	भूधरदास	१—भूधरविलास❀	×	१८७७ ई०
		२—चर्चासमाधान❀	×	१८४७ ,,
		३—पार्श्वपुराण❀	१७३२ ,,	×
३	बुधजनदास	देवानुरागशतक❀	×	१८४० ,,
४	गोकुल गोलापूरब❀	सुकुमालचरित्र❀	१८१४ ,,	१८६१ ,,
५	झुनकलाल❀	नेमीनाथ के छंद❀	१७८६ ,,	१८५६ ,,
६	मुनींद्र❀	रविव्रतकथा❀	१६८६ ,,	१७६८ ,,

क्र०सं०	ग्रंथकार	ग्रंथ	रचनाकाल	लिपिकाल
७	परमलदेव (आगरा)	श्रीपालचरित्र	१५९४ ,,	×
८	रग्घू कवि॥	दशलाक्षणिक धर्मपूजा॥	×	×
९	सदासुख कासिलीवाल॥	रत्नकांड श्रावकाचार की भाषामय वचनिका॥	१८६३ ,,	१९०१ ,,
१०	सुरति सिद्धि॥	जैनबारहखड़ी॥	×	×

इस त्रिवर्षी में कुछ नवीन लेखकों का पता लगा है, कुछ ज्ञात लेखकों के नए ग्रंथ मिले हैं और कुछ के समय और स्थान के विषय में नवीन प्रकाश पड़ा है जिनका यहाँ उल्लेख करना आवश्यक जान पड़ता है।

नवीन लेखकों में से जवाहरदास, रतिभान, रामप्रसाद (निरंजनी), रूपराम सनाढ्य और हरीराम मुख्य हैं।

१—जवाहरदास के "महापद" नामक एक सुंदर ग्रंथ का पता चला है। यह ग्रंथ अब तक अज्ञात ही था। ग्रंथकार फीरोज़ाबाद (आगरा) के निवासी और किन्हीं बाबा रामरत्न के शिष्य थे और जाति के शूद्र थे।

"हरिदास के जे दास हैं तिनको **जवाहिरदास**।
वासी फिरोजाबाद को लघुवरन सूद्र उदास॥"

शायद "उदास" शब्द इस बात का द्योतक हो कि जवाहरदास विरक्त हो गए थे। उनका निवासस्थान किसी विरहवन टीले पर था। वहीं बैठकर ग्रंथकार ने अपने ही हाथ से मिति ज्येष्ठ वदी ७ मंगलवार संवत् १८८९ वि० (१८३२ ई०) को ग्रंथ लिखकर समाप्त किया था। फीरोजाबाद में 'टीला' नामक एक मोहल्ला अब तक है। ग्रंथ का रचनाकालः—

"अट्ठासिया दस अष्ट संमत पुनीत।
पूस मास अरु तिथि अमावस वास(र ?) चंद्र विनीत॥
निज जीव के समझायबे को कियो पूरन गिरंथ।
आसक्ति जाकी छोड़ि कैं यह चलै हरि के पंथ॥"

मिती पौष कृष्ण ३० चंद्रवासरे संवत् १८८८ वि० (१८३१ई०) कहा गया है। यह बड़े विनीत भाव के साधु थे। इन्होंने अपने आपको बिना पढ़ा लिखा, पापी, अति पतित, अधम, कुटिल और कामी कहा है। केवल पतितपावन के नाते हरि से तरने की आशा की है। वे इतना सुंदर ग्रंथ लिखकर भी अपने में उपदेश की शक्ति नहीं समझते थे। अतएव उन्होंने ग्रंथ-निर्माण का उद्देश्य एकमात्र अपने जीव को समझाना ही लिखा हैः—

"निज जीव के समझायबे को कियो पूरन ग्रंथ॥"

फिर यदि चाहें तो अन्य जीव भी समझ लेंः—

"सो कहत निजु जीव सों सब जीव यामे समझियौ"॥

यद्यपि वह अपने को काव्य, कोष तथा व्याकरण के ज्ञान से रहित अपठित कहते

हैं तथापि उनकी प्रौढ़ विषय-प्रतिपादन-शैली, भाव-गांभीर्य, सरल शब्दयोजना आदि गुणों को देखते हुए यह बात केवल उनके विनीत भाव को ही प्रदर्शित करती है।

२—**रतिभान** और उनका 'जैमिनीपुराण' भी खोज में बिल्कुल नवीन हैं। 'विनोद' में भी इनका उल्लेख नहीं है। यह ग्रंथ संवत् १६८८ वि० (१६३१ ई०) में बना था, जैसा कि नीचे के दोहे से प्रकट है:—

"संवत सोरह सौ अट्ठासी अति पवित्र वैसाप ॥
सुक्ला सोम त्रयोदसी भई पूरन कथाऽभिलाप ॥"

कवि ने अपना परिचय इस प्रकार दिया है:—

"देस **नौरठौ** उत्तम ठाऊँ। बस्यो जहाँ **इटौरा** गाँऊँ ॥
कालपक्षेत्र **कालपी** पासा। सिद्धिसाध पंडित सुषवासा ॥
कलि गंगा बेतवै इत बहै। न्हाए जहाँ पाप नहीं रहै ॥
मध्य सुदेस इटौरा गाँऊँ। तहाँ **सत्य गुरु रोपन** तिहि नाऊँ ॥
प्रगट प्रनाम पंथ है जाकौ। निर्गुन मंत्र जपै जग ताकौ ॥
कीरति विदित कहै सबु कोई। हमरे कहे बड़े नहिं होई ॥
मैं आय बड़ाई काज बपानौं। जाते नाउ हमारो जानौं ॥
तासु पुत्र कुल मंडन दास। भगति भागवत प्रेम हुलास ॥
जानराय जगनाम कहायो। छोटे बड़े सबनि मन भायो ॥
ऐसो प्रगट जगत जसु जाको। **श्रीपरशुराम** पुत्र है ताको ॥

× × × ×

श्रीपरशुराम गुरु पिता हमारे। वाकी स्तुति करत पुकारे ॥
ताके भए पुत्र पुनि चारि।.....................
जेठे तीनि सबहि विधि लायक। संत साधु सबहि सुषदायक ॥

× × × ×

अपनी बात कहौं परवान। सब कोउ कहै नाम **रतिभान** ॥"

इससे प्रकट होता है कि ग्रंथकार (कलियुग की गंगा) बेतवा नदी के किनारे पर बसे इटौरा गाँव का निवासी; प्रणाम पंथानुयायी किसी परशुराम का शिष्य था। इटौरा गाँव कालपी से चार-पाँच कोस पर है। वहाँ रोपन गुरु का मंदिर प्रसिद्ध है। प्रतिवर्ष कार्तिकी पूर्णिमा से १५ दिन तक वहाँ मेला लगता है। यह स्थान 'निवट्टा' मंडल में है। बेतवा नदी के उस पार राठ तहसील है। इटौरा भी राठ का ही एक अंग माना जाता है। संभवतः 'निवट्टा' ही रतिभान का 'नौरठा' है और दोनों एक ही शब्द 'नवराष्ट्र' के अपभ्रंश रूप हैं, जो इस मंडल का प्राचीन नाम जान पड़ता है। प्रणाम पंथ, जिसे अब लोग परनाम पंथ कहते हैं, कबीर पंथ की तरह, निर्गुण सिद्धांत को ही माननेवाला जान पड़ता है, जैसा कवि के लिखे—"प्रगट प्रनाम पंथु है जाकौ। निर्गुण मंत्र जपै जगु ताकौ ॥" इस पद्यांश से प्रकट होता है।

इस पंथ के आदि-संस्थापक गुरु रोपन थे। रोपन गुरु का मंदिर कालपी में अब तक विद्यमान है। अब भी वहाँ के महंत प्रणाम पंथ की दीक्षा देते हैं। पंथ में जाति का भेद-भाव विशेष नहीं है। सूत्र की कंठी दी जाती है। अधिकतर वैश्य ही शिष्य हैं।

रतिभान इन्हीं गुरु रोपन की शिष्यपरंपरा में हुए हैं। और इटौरा में उनकी गद्दी के अधिकारी थे। रोपन गुरु के मंदिर में एक श्लोक का पता लगा है जिसमें रतिभान का उल्लेख है।

ऊपर के उद्धरण में रतिभान ने अपनी गुरु-परंपरा यह बताई है:—

सतगुरु रोपन
|
जानराय
|
परशुराम
|
रतिभान (ग्रंथकार)

"तासु पुत्र कुल मंडनदास" में कुल मंडनदास जानराय के विशेषण के रूप में आया हुआ जान पड़ता है, पृथक् नाम नहीं। यदि यह नाम हो तो एक पीढ़ी और बढ़ जायगी।

३—रामप्रसाद "निरंजनी" अब तक अज्ञात लेखक ही नहीं, उनका यह महत्त्व भी है कि वे खड़ी बोली के काफी पुराने गद्य-लेखक हैं। उनके रचे योगवासिष्ठ (पूर्वार्द्ध) की चार प्रतियों के विवरण इस खोज रिपोर्ट में आए हैं। ग्रंथ का रचना-काल संवत् १७९८ वि० (१७४१ ई०) और लिपि-काल पहली प्रति का संवत् १८८० वि० (१८२३ ई०); दूसरी का १८७५ वि० (१८१८ ई०); तीसरी का १८५६ वि० (१७९९ ई०) और चौथी का संवत् १९१२ वि० (१८५५ ई०) है। रचियता पटियाले के रहनेवाले थे। अन्वेषक का कहना है कि वह तत्कालीन महारानी पटियाला को कथा बांचकर सुनाया करते थे। अन्वेषक के अनुसार यह बात उनकी जीवनी में लिखी है। किंतु विवरण से विदित नहीं होता कि उन्हें यह जीवनी कहाँ देखने को मिली। यह पृथक् ग्रंथरूप में उन्होंने देखी है अथवा इसी ग्रंथ का कोई अंश है ? इसी प्रकार रचना-काल के विषय में अन्वेषक ने एक विवरण लिखा है—"तीसरे प्रकरण के अंत में इस प्रकार लिखा है कि साधु रामप्रसाद ने पटियाला में संवत् १७९८ वि० कार्तिक पौर्णिमा को ग्रंथ संपूर्ण किया।" इससे जान पड़ता है कि उनका लिखा यह उद्धरण उक्त ग्रंथ से ही उद्धृत किया गया है। दो अन्य विवरणों में भी यह संकेत किया गया है कि तृतीय प्रकरण उत्पत्ति के अंत में रचनाकाल सं० १७९८ दिया है और शेष एक विवरण में इस संबंध में लिखा है—"निर्माणकाल १७९८ वि० इनके जीवनचरित्र में लिखा है। जब तीन प्रतियों में निर्माणकाल का संवत् एक ही दिया हुआ है और ग्रंथकार की जीवनी भी इसी बात को पुष्ट करती है तो ग्रंथ का निर्माणकाल यही मानने में कोई आपत्ति नहीं जान पड़ती। अब तक गद्य के जो चार आचार्य सर्वप्रथम गद्य-लेखक माने गए हैं उनमें सबसे पुराने दिल्लीनिवासी

मुंशी सदासुखलाल "नियाज" हैं। उनका जन्म-संवत् १८०३ वि० माना गया है। प्रस्तुत शोध में मिला यह ग्रंथ उक्त मुंशीजी के जन्मकाल से पाँच वर्ष पूर्व की रचना है। इससे यह ज्ञात होता है कि गद्य का जो प्रारंभकाल अब तक कल्पित किया जाता है उससे बहुत पूर्व ही हिंदी गद्य विकसित होकर अपना परिमार्जित रूप ग्रहण कर चुका था।

इंशाअल्ला के गद्य की भाँति उसमें फारसीपन नहीं है। "समझाय के कहौ," "जाननेहारे हौ," "तैसे ही," "वह जो करता है सो बंधन का कारण नहीं होता" आदि पुराने प्रयोगों से उनकी भाषा मुंशी सदासुखजी की भाषा से समता रखती है। उन्हीं की भाँति शुद्ध तत्सम संस्कृत शब्दों का इन्होंने भी स्थल स्थल पर प्रयोग किया है। इनकी रचना में "बाद" आदि कुछ ही विदेशी शब्द मिलते हैं जो घुल-मिलकर हिंदी की निजी संपत्ति हो गए हैं। इस गद्य का महत्त्व यह है कि यह मुंशी सदासुखलाल के गद्य से कम से कम आधी शताब्दी पहले का तो अवश्य है। मुंशीजी के "भागवत" के अनुवाद का तो समय नहीं ज्ञात है किंतु उनके बनाए "मुंतखबुत्तवारीख" का रचनाकाल सं० १८७५ वि० विदित है और रामप्रसाद 'निरंजनी' का "योगवासिष्ठ" भाषा इससे सत्तर वर्ष पहले का है। इंशाअल्ला की "रानी केतकी की कहानी" और लल्लूजीलाल के "प्रेमसागर" (लगभग १८६० वि०) से वह लगभग ६२ वर्ष पहले का है।

४—**रूपराम सनाढ्य** और उनका ग्रंथ "कवित्तसंग्रह" खोज में पहले पहल प्रकाश में आ रहे हैं। यह आगरा जिले की तहसील बाह में कचौराघाट के निवासी थे, जहाँ जमुना आगरे से इटावा के जिले को अलग करती है। ग्रंथ में रचनाकाल तथा लिपिकाल नहीं हैं; परंतु अनुसंधान से पता चलता है कि उनको हुए ५०–६० वर्ष से अधिक नहीं हुए। कहते हैं कि उन्हें साहित्य और संगीत दोनों का पर्याप्त ज्ञान था। वे अच्छे वक्ता तथा कथावाचक थे।

५—**'हरीराम'** का "मृगयाविहार" नामक ग्रंथ इस खोज में प्राप्त हुआ है। पिछली रिपोर्टों एवं मिश्रबंधुविनोद में कई हरीरामों के नाम आए हैं। उन सबसे यह 'हरीराम' भिन्न हैं। इस ग्रंथ में महेंद्रसिंहजी महाराज-भदावर की मृगया का वर्णन है। ग्रंथ संवत् १९१५ वि० तदनुसार १८५८ ई० का बना और उसी सन् का लिखा हुआ है। ग्रंथकार का कथन है:—

"सुनि सुनि जस रसदान प्रति जोजन प्रगट पचीस।
चलि ग्रहते हरिराम जू आए जहाँ नृप ईस ॥
नवगाये में नवल नृप श्रीमहेन्द्र हरि नाम।
दरसि परम आनँद भयो मदनरूप अभिराम ॥"

नवगाये (नौगवाँ) आगरा जिला की वाह तहसील में अवस्थित है और भदावर राज्य की वर्तमान राजधानी है। उस समय वहाँ महेन्द्रसिंह गद्दी पर थे। उनके दान की कवि ने काफी प्रशंसा की है:—

"दोहा सुनि कै एक, वड़ै पुरानो हे रच्यौ।
चही तासु की टेक, बलि बोई कीरतिलता ॥
जाके कवि पंडित गुणी विमुख न एकौ जात।
बालापन ते हरिकथा सुनत प्रफुल्लित गात ॥"

ग्रंथ का रचनाकाल इस प्रकार है:—

"पांडुपुत्र[५] प्रति चंद्रमा[१] भूमिखंड[९] पुनि एक[१]।
संवत् में मृगया रची **हरीराम** करि टेक।"

अर्थात् ग्रंथ संवत् १९१५ वि० (१८५८ ई०) में बना। ग्रंथकार ने केवल संवत् का ही उल्लेख किया है तिथि, मास, पक्ष और वार का नहीं किया।

ज्ञात लेखकों में से कबीर, चरणदास, छत्रकवि, देवदत्त (देव), नजीर (अकबराबादी), नंददास, पद्माकर, रामचरण, रैदास और वाजिद आदि के कुछ नए ग्रंथ प्रकाश में आए हैं। अतः इनका उल्लेख यहाँ किया जाता है।

६ **कबीर**—के रचे कहे जानेवाले १६ ग्रंथों की २२ प्रतियाँ इस शोध में प्राप्त हुई हैं; इनमें सात ग्रंथ ऐसे हैं जिनके विवरण पिछली रिपोर्टों में नहीं लिए गए है और न विनोदकारों ने ही उनका उल्लेख किया। 'झूलना' का उनकी दी हुई कबीर के ग्रंथों की सूची में उल्लेख तो है, परंतु उसका नाम किसी भी पूर्व रिपोर्ट में नहीं मिलता। सन् १९-२९-३१ ई० की खोज में इनके जिन ग्रन्थों के विवरण लिए गए हैं, उनकी सूची नीचे दी जाती है:—

क्रं०सं० नाम ग्रंथ	लिपि-काल	विषय
१—अखरावत	१८१७ ई०	गुरुमाहात्म्य, शब्दमाहात्म्य, नाममाहात्म्य, तथा ज्ञान का वर्णन।
२—क—कबीर बीजक	१८२८ ,,	ब्रह्मविद्या, माया, एवं जीव विषयक भजन।
ख—बीजक रमैनी	१८५० ,,	साखी आदि द्वारा ईश्वर, माया, एवं ब्रह्म का वर्णन।
३—दत्तात्रय गोष्टी	×	दत्तात्रेय के जप, तप तथा साधनादि क्रियाओं का खंडन।
४—ज्ञानस्थित ग्रंथ पहला / दूसरा	१८७० ,, / १८१३ ,,	नाममाहात्म्य, तत्त्वनिरूपण, अजपाजाप तथा मंत्र।
क्रं०सं० नाम ग्रंथ	लिपि-काल	विषय
५—झूलना	×	कंठी माला छाप-तिलकादि का खंडन और निज मत मंडन।
६—कबीर गोरख गोष्ठी	×	कबीर-गोरख का आध्यात्मिक विषय पर वाद-विवाद।

क्र०सं०	नाम ग्रंथ	लिपि-काल	विषय
७—	कबीरजी के पद और साषियाँ	१६५३ ई०	मायादि की निस्सारता और ब्रह्मज्ञान-संबंधी पद।
८—	कबीरजी के बचन	×	ईश्वर की सत्ता, भक्ति तथा आत्मोपदेश।
९—	कबीर सुरतियोग	×	कृष्ण तथा युधिष्ठिर के संवाद के मिस भक्त का यथार्थ रूप प्रकाशन।
१०—	कुरम्हावली	×	सृष्टि की उत्पत्ति, कूर्मावतार और उसका विस्तार तथा प्रलयादि के साथ उद्धार का वर्णन।
११—	रमैनी	×	कबीर मत-संबंधी उपदेश।
१२—	रेखता	×	कबीरपंथ संबंधी उपदेश।
१३—	साधु-माहात्म्य	×	साधु-माहात्म्य, पारखी, गुरुसिफारिश, गुरु-माहात्म्य आदि १३ अंगों का वर्णन।
१४—	सुरति-शब्द-संवाद	×	भेष बनाने का खंडन, ब्रह्मज्ञान एवं आत्मनिरूपण।
१५—	स्वाँस गुंजार	×	श्वासों का वर्णन और साधु-उपदेश।
१६—	वशिष्ठ गोष्ठी	×	जीव, माया, ब्रह्म तथा शब्दादि के संबंध में वशिष्ठ की अनभिज्ञता दिखाकर निज मत की महत्ता प्रदर्शित करना।

इनमें से संख्या ३,४,५,८,९,१३ तथा १६ के सात ग्रंथ खोज में नवीन हैं।

संख्या २ (क-बीजक, ख-बीजक रमैनी), ११ (रमैनी) और ७ (पद) को छोड़कर अन्य ग्रन्थों में कुछ भी कबीर की रचना है इसमें संदेह है। कबीर के नाम पर उनके अनुयायियों ने खूब ग्रन्थों की रचना की है। दत्तात्रेय पौराणिक व्यक्ति हैं, उनका कबीर के साथ शास्त्रार्थ (दत्तात्रेय गोष्ठी) गढ़ंत ही है। वैसे ही गोरखगोष्ठी भी। क्योंकि गोरख और कबीर के समय में शताब्दियों का अंतर है। बहुधा इस शाखा के रचयिता लोग अपने समय तक के महंतों की 'दया' ग्रन्थ के आदि में पुकारते हैं। संख्या ५ "झूलना" में आदि से लेकर हक नाम साहब (लगभग ई० सन् १८१९—१८४४ तक) के महंतों की दया पुकारी गई है। संख्या १० कुरम्हावली में धर्मदासी शाखा के महंत अमोलनाम सुरतसनेही साहब की (लगभग ई० सन् १७९४ से १८१९ तक) दया पुकारी गई है। संभवतः यह उन्हीं के समय की रचना होगी। ये ग्रंथ १८ वीं शताब्दी से पहले के नहीं जान पड़ते। संख्या ७ 'कबीरजी के पद और साखियाँ' बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। इसकी प्रतिलिपि किसी कैसोदास ने संवत् १७१० वि० अषाढ़ पूनों को की है। परंतु नोट में अन्वेषक ने लिपि-काल न जाने किस आधार पर संवत् १६९६ वि० बताया है। संभवतः ग्रंथ के किसी अंश में यह तिथि भी दी गई

हो या ग्रन्थ आरंभ किया गया हो संवत् १६६६ वि० में और समाप्त हुआ हो संवत् १७१० वि० में।

इसका जितना अंश विवरण-पत्र में आया है, उससे पता चलता है कि वह कबीर-ग्रंथावली की पदावली और साखी से मेल खाता है। कबीर-ग्रंथावली के प्रधान आधार 'क' प्रति की सत्यता पर संदेह करने के लिये स्थान है। उसकी पुष्पिका में लिपि-काल संवत् १५६१ वि० दिया गया है। परंतु पुष्पिका की लिपि शेष ग्रंथ की लिपि से भिन्न जान पड़ती है। डाक्टर जूल्सब्लाश ने इस बात की ओर ध्यान आकृष्ट किया है (बुलेटिन ऑव दी स्कूल ऑव ओरियंटल स्टडीज लंडन इंस्टीट्यूशन, भाग ५-६ पृष्ठ ७४६—'सम प्रॉब्लेम्स ऑव इंडियन फिलॉलॉजी)। मैंने स्वयं इस हस्तलेख की जाँच की जिसका परिणाम मैंने अपने अँगरेजी ग्रंथ 'निर्गुण स्कूल ऑव हिंदी पोयट्री' के पृ० २७६-७७ पर दिया है। यद्यपि मुझे उसका १५६१ का लिखा होना असंभव नहीं मालूम होता, फिर भी मेरी जाँच से भी जो तथ्य प्रकाश में आए हैं वे कम संदेहोत्पादक नहीं हैं। क्योंकि पुष्पिका, जिसमें संवत् दिया गया है, गोड़ी हुई है। मैंने इस 'क' हस्तलेख को जाँच के लिये प्रयाग के डॉकुमेंट इक्सपर्ट श्री चार्ल्स ई० हार्डलेस के पास भेजा था। उनके अनुसार भी पुष्पिका और शेष ग्रंथ अलग अलग व्यक्तियों के लिखे हुए हैं। प्रस्तुत हस्तलेख कबीर ग्रंथावली के ढंग का कबीर-ग्रंथावली के अतिरिक्त सबसे पुराना हस्तलेख है और उसका बहुत कुछ समर्थन करता है।

७ **चरणदास**—के बाललीला, व्रजचरित्र, धर्मजिहाज, और योग नामक ग्रंथ नये मिले हैं। इनके विवरण पहले नहीं लिए गए थे।

बाललीला में कृष्ण के बाल चरित्र का वर्णन है; व्रजचरित्र कृष्ण की प्रेमलीला का गान है; धर्मजिहाज में गुरु-शिष्य-संवाद के रूप में सांसारिक दुख-सुख तथा ऊँच-नीच आदि विभिन्नताओं के कारणों का विवेचन किया गया है और जैसा नाम से प्रकट है 'योग' योग का ग्रंथ है। इस अंतिम ग्रंथ से चरणदास के एक शिष्य (नंदराम) के नाम का पता चलता है, जिसकी जिज्ञासा की पूर्ति के लिये उन्होंने इसका निर्माण किया था:—

"नंदराम विनती करै सुनो ईश गुरुदेव।
तुमही दाता भगति कै जोग जुगति कहि देव॥"

उनके और कई ग्रंथ गुरु-शिष्य-संवाद रूप में लिखे गए हैं, परंतु किसी में भी शिष्य का नाम नहीं आया है।

एक और बात है—गुरु-शिष्य-संवाद रूप में लिखे गए ग्रंथ कभी कभी गुरुओं के स्थान पर शिष्यों के बनाए होते हैं। परंतु इस ग्रंथ के आदि के अंश में बार बार इस बात का उल्लेख हुआ है कि इसका लेखक चरणदास ही है। जैसे—"अथ श्री सुखदेवजी का दास चरणदास कृत जोग लिख्यते"॥ "गुरु जनक को शिष्य तासु को दास कहाऊँ।" "चरणदास को हरिभक्ति कृपा करि दीजै।" "चरणदास यह जानि के सतसंगति हरि को भजो। सुखदेव-चरण चित लाय कें सो झूँठ कान दुविधा तजो।"

"षट्कर्म हठयोग" नामक एक और ग्रंथ प्रकाश में आया है जिसका नाम तो नया

है किंतु संदेह होता है कि वह दूसरे नाम से उनका ग्रंथ अष्टांगयोग (दे० खो० रि० सन् १९०५ नं० १७) ही या उसका एक अंश तो नहीं है । प्रस्तुत ग्रंथ का आरंभ यों होता है:—

"श्रीगणेशायनमः ॥ अथ षट् कर्म हठयोग लिख्यते"

शिष्यवचन

"दो० अष्टांगजोग वर्णन कियो मोको भई पहिचान ।
छहो कर्म हठयोग के बरणौ कृपानिधान ॥"

और उल्लिखित अष्टांगयोग का इस प्रकार:—

"श्रीगणेशायनमः अथ गुरु चेले का संवाद अष्टांग योग लिख्यते ।"

सिष्यवचन

"दो० व्यासपुत्र धन धन तुही धन धन यह स्थान ।
मम आसा पूरी भई धन धन वह भगवान ॥"

दोनों के अंत में थोड़ा सा पाठ-भेद के साथ निम्नांकित छप्पय आया है:—

छप्पय

"गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु गुरु देवन के देवा ।
सर्व सिद्धि फलदेन गुरु तुमही भक्ति करेवा ॥
गुरु केवट तुम होय करि करौ भवसागर पारी ।
जीव ब्रह्म करि देत हरौ तुम व्याधा सारी ॥
श्रीशुकदेव दयाल गुरु चरणदास के शीश पर ।
किरपा करि अपनो किया सबही विधिसौं हाथ धर ॥"

पुरानी रिपोर्ट में इस छप्पय के अतिरिक्त और कोई उद्धरण नहीं है जिससे अधिक मिलान किया जा सके । परंतु प्रस्तुत त्रिवर्षी में भी एक अष्टांग योग का विवरण लिया गया है जिसमें यह छप्पय नहीं है । शेष बातों में वह उपर्युक्त अष्टांगयोग से मेल खाता है । हो सकता है, इस छप्पय का अष्टांगयोग ग्रंथ से कोई संबंध न हो और किसी लिपिकार ने चरणदास के ही इस छप्पय को ग्रंथांत में लिख दिया हो । ऐसी दशा में षट्कर्म और अष्टांगयोग एक ही ग्रंथ के दो रूप नहीं माने जा सकते पर एक ही ग्रंथ के अंश होने की संभावना फिर भी बनी ही रहती है ।

८ **छत्रकवि**—का "सुधासार" ग्रंथ इस खोज में नवीन मिला है । 'विनोद' में भी इसका उल्लेख नहीं है । इसमें उन्होंने भागवत दशम स्कंध का अनुवाद किया है । इसकी रचना इनके सुप्रसिद्ध और प्रकाशित ग्रंथ "विजयमुक्तावली" से १९ वर्ष पश्चात् सन् १७१९ ई० में हुई है:—

"संवतु सत्रह सें बरप, और छिहँत्तरि तत्र ।
चैत्रमास सित अष्टमी, ग्रंथ कियो कवि छत्र ॥"

इस दोहे में ग्रंथ का रचनाकाल मि० चैत्र शुक्ला अष्टमी सं० १७७६ वि० (१७१९ ई०) है । वार दोहे में नहीं दिया गया है । विजय-मुक्तावली की भाँति इसमें भी छत्रकवि ने अपना और अपने आश्रयदाता का संक्षिप्त परिचय दिया है:—

"श्रीवास्तव कायथ कुल, छत्रसिंह इहि नाम।
गाइ विप्र के दास नित, पुर अटेर सुखधाम ॥
सोहति सिंह गुपाल की, कीर्ति दिसा विदिसानि।
भूतल षलभल अरिन के, गहतु षर्ग जब पानि ॥
भूपति भानु भदोरिआ, किरनि क्रांति जुग छाइ।
सुहृद सकल नृप के सुखद, तम अरि गए बिलाइ ॥
ताको सुखद अटेर पुर, मुलुक भदावर माँहि।
चारि वर्ण युत धर्म तहँ, रहत भूप की छाँह ॥"

उपर्युक्त अवतरण प्रकट करते हैं कि वह तत्कालीन भदावर नरेश "गोपालसिंहजी" के आश्रित थे, किंतु इससे १९ वर्ष पहले रचे जानेवाले "विजयमुक्तावली" ग्रंथ में इन्होंने भदावरनरेश "कल्याणसिंह" को अपना आश्रयदाता बतलाया है। यहाँ इस ग्रंथ की वर्तमान शोध में मिली हुई प्रति से कुछ अवतरण देते हैं जिनमें भदावर की स्थिति का भी कुछ वर्णन है:—

"मथुरा मंडल में बसै, देस भदावर ग्राम।
डगलतत (?) प्रसिद्ध महि, छेत्र वटेश्वर नाम ॥
सुजस सुवास सुनिकट ही, पुरी अटेर हि नाम।
जग्य जाप होमादि वृत, रचत धाम प्रति धाम ॥
नगर आदि अमरावती, वासी विबुध समान।
आखंडल सौ लसत तहँ, भूपतिसिंह कल्यान ॥"

इसी भदावर-राज्यांतर्गत अटेर नगर था। यह नगर अब रियासत ग्वालियर में है। विस्तृत भदावर राज्य अत्यंत संकुचित रह गया है और अब महाराज भदावर के पास रियासत का अंशमात्र है। अटेर भिंड से हटकर उनकी राजधानी आगरा जिले की बाह तहसील के नौगवाँ नामक गाँव में आ गई है। विवरण के पृष्ठ ४६ में तथा खोज रिपोर्ट सन् १९०६-८ संख्या २३ और खो० रि० स० १९०९-११ ई०, सं० ४८ पर कल्याणसिंह संभवतः विजय-मुक्तावली के उपर्युक्त आधार पर ही अमरावती के राजा कहे गए हैं जो स्पष्ट अशुद्ध है। नगर का नाम "अटेर" तो इससे ऊपरवाले दोहे में ही दिया गया है जिस पर अमरावती का आरोप किया गया है।

६ देव—के अन्य ग्रंथों के अतिरिक्त, नायिका-भेद-संबंधी, "शृंगार-विलासिनी" नाम का उनका एक और ग्रंथ प्राप्त हुआ है। यह संस्कृत में लिखा गया है। ग्रंथांत में उनका निवास स्थान इष्टिकापुरी (इटावा) दिया गया है। यथा:—

दोहा

"देवदत्त कवि रिष्टिका, पुरवासी स चकार।
ग्रंथ मिमं वंशीधर द्विजकुल धुरं बभार ॥

इससे आगे के छप्पय में ग्रंथ निर्माण-काल इस प्रकार दिया है—

"स्वर[७] भूत[५] स्वर[७] भूमि[१] मिते वत्सरे यदाऽयं ।
दिल्लीपति **नरंगसाहि** रजयत्सदुपायं ॥
दक्षिण दिशि च तदेव **कुंकुण** नाम विदेशे ।
कृष्णावेणीनाम नदी संगम प्रदेशे ॥
श्रावणे बहुल नवमी तिथौ रेवानो रेवती धृतियुते ।
कवि देवदत्त उदिते स्वावगमपय दहनिस्तुते ॥"

इससे प्रकट है कि उक्त ग्रंथ देव ने भारत के दक्षिण कोंकण देश में, जिसे वह विदेश कहते हैं और जो कृष्णावेणी नामक नदी-संगम पर स्थित है संवत् १७५७ वि०(१७०० ई०) के श्रावण की बहुला नवमी को सूर्योदय के समय पूर्ण किया था। वार और पक्ष स्पष्ट ज्ञात नहीं होते। उस दिन रेवती नक्षत्र और धृति योग था। ना०प्र० सभा में नायिका-भेद-संबंधी देवकृत एक संस्कृत ग्रंथ रखा बताया जाता है (दे० मिश्र बं० वि०, द्वि० सं० पृ० ५१९)। उसका रचना-काल संवत् १७५१ वि० (१६९४ ई०) कहा गया है। किंतु प्रस्तुत ग्रंथ का रचनाकाल सं० १७५७ वि० (१७०० ई०) है। इसकी विशेषता यह है कि संस्कृत में होने पर भी यह ग्रंथ छप्पय, सवैया और दोहा आदि छंदों में लिखा गया है जो हिंदी के खास अपने छंद हैं। हिंदी पिंगल के नियमों के अनुसार उनमें तुक भी मिलाई गई है। इन्हीं विशेषताओं के कारण इस ग्रंथ का विवरण रिपोर्ट में सम्मिलित किया गया है। सामान्यतया संस्कृत ग्रंथों के विवरण स्वीकार नहीं किए जाते। विवरण-पत्र में दो सवैये, एक दोहा और एक छप्पय आया है।

ग्रंथकार उस समय दिल्ली की गद्दी पर मुगल सम्राट् औरंगजेब का आधिपत्य बतलाता है। औरंगजेब की मृत्यु ग्रंथरचना-काल के सात वर्ष पश्चात् सन् १७०७ ई० में हुई थी। पिछली रिपोर्टों और मिश्रबंधुविनोद में देवरचित ग्रंथों की नामावली में इस ग्रंथ का नाम नहीं आया है। खेद है कि यह ग्रंथ खंडित अवस्था में मिला है, और लिखा भी अस्पष्ट अक्षरों में है।※

१० नजीर—की कविता खड़ी बोली में बड़ी लालित्यपूर्ण है। इस खोज में उनके रचे हुए चार छोटे छोटे ग्रंथ "कन्हैया-जन्म", "वंशी", "बंजारानामा" तथा "हंसनामा" मिले हैं। पहले तीन हमारी खोज में नवीन हैं। रचनाकाल किसी में नहीं दिया है। अंतिम ग्रंथ का लिपिकाल संवत् १९१० वि० (१८५३ ई०) है। उनका हंसनामा खोज रिपोर्ट सन् १९२६-२८ ई० के नं० ३३३ पर (रिपोर्ट अप्रकाशित है) विवरण में आ चुका है। डा० ग्रियर्सन ने अपने माडर्न वर्नाक्युलर लिटरेचर आफ हिंदुस्तान में इनका रचनाकाल सन् १६०० ई० से पूर्व माना है। कविताकौमुदी के भाग ४ में पं० रामनरेश त्रिपाठी इनका जन्म १७४० ई० में और मरण १८२० ई० के लगभग लिखते हैं। आगरे के बाबू

※ यह ग्रंथ अब एन० एल० ऐंड को भरतपुर (स्टेट) द्वारा प्रकाशित हो गया है—पी० द० ब० ।

रामप्रसाद गर्ग ने "रूहेनजीर" के नाम से इनकी कविताओं का एक संग्रह भी प्रकाशित किया है। उनका बंजारानामा वर्नाक्युलर स्कूलों की लोअर प्राइमरी कक्षा एक में पढ़ाया जाता था, जो मौलवी मोहम्मद इस्माइल द्वारा संपादित "उर्दू" की दूसरी किताब में संगृहीत है। इसमें संदेह नहीं कि कविता सरस एवं प्रसाद गुण-संयुक्त है। यही एक मुसलमान कवि है जिसने दिल खोलकर हिंदुओं के देवी-देवताओं और मेलों तथा त्यौहारों पर सहृदयतापूर्वक कविता की है। इसका कारण यह है कि उनका संपर्क मुसलमानों की अपेक्षा हिंदुओं से अधिक रहा। वह आगरे में पेशवा के लड़कों को पढ़ाते थे और वहीं माईथान मुहल्ले में सेठों और महाजनों के लड़कों को भी पढ़ाने जाया करते थे। उपर्युक्त पुरानी रिपोर्ट में हंसनामा का रचनाकाल संवत् १९१८ वि० (१८६१ ई०) दिया गया है। जान पड़ता है कि उसमें लिपिकाल के स्थान पर रचना-काल लिखा गया है।

११ **नंददास**—रचित ८ ग्रंथों की १४ प्रतियाँ प्रस्तुत खोज में मिली हैं। इनमें से "फूल मंजरी" तथा "रानी माँगौ" नवीन हैं। उनके नाम मिश्रबंधुओं की दी हुई इनके रचित ग्रंथों की सूची में भी नहीं आए हैं। पहले ग्रंथ में केवल ३१ दोहे हैं। उनमें नई दुलहिन के रूप सौंदर्य के वर्णन के साथ साथ प्रत्येक दोहे में एक फूल का नाम आया है। जैसेः—

सीस मुकुट कुंडल झलक सँग सोहे व्रजबाल।
पहरैं माल **गुलाब** की आवत है नँदलाल ॥ १ ॥
चंपक बरन सरीर सब नैन चपल है मीन।
नव दुलहनि कौ रूप लषि लाल भए आधीन ॥ २ ॥

"रानीमाँगौ" भी छोटा सा ही ग्रंथ है। इसके आदि में—"मैं जुवती जाँचन व्रत लीन्हों" की प्रतिज्ञा से ग्रंथ का उठान हुआ है और दान माँगने के रूप में कृष्ण-राधिका के प्रेम का वर्णन किया गया है। कूबरी को ध्यान में रखते हुए कवि ने राधिका के द्वारा कृष्ण पर बड़े मनोहर उपालंभ कराए हैं। दोनों ग्रंथों के रचना-काल और लिपिकाल अज्ञात हैं।

१२ **पद्माकर**—इस खोज में 'जगद्विनोद' और 'गंगालहरी' के अतिरिक्त एक नवीन, किंतु छोटी सी केवल ८ सवैयों की "लिलहारी लीला" नामक रचना और प्रकाश में आई है जो पद्माकर की बताई गई है। इसके पूर्व की रिपोर्टों में इसका उल्लेख नहीं है। 'विनोद' में भी इस ग्रंथ का नाम नहीं आया है। इसका कथानक यह है—श्रीकृष्ण लिलहारी का भेष बनाकर राधा के यहाँ पहुँचकर, "कोई लीला गुदवा लो" की आवाज लगाते हैं। राधा अपनी सखी द्वारा लिलहारी को बुलवाती है। लिलहारी के भीतर पहुँचने पर राधा नख से शिख तक सारे अंग में कृष्ण के अनेक नाम गोद देने की उससे प्रार्थना करती है। लिलहारी उसके प्रस्ताव को स्वीकार कर पारिश्रमिक ठहराती है। राधा ऐसा इच्छित कार्य कर देने के बदले मूल्यवान् आभूषण दुलरी तिलरी आदि देना स्वीकार करती है। लिलहारी इस पर सहमत होकर राधा का हाथ अपने हाथ में लेती है किंतु उसी समय राधा श्रीकृष्ण के छद्म वेश को पहचान लेती है:—

"हाथ पै हाथ धर्यौ जबही तब चौंकि उठी वृषभानु-दुलारी ।
श्याम सिखे छल छंद बड़े तुम काहे को भेष बनावत नारी ॥"

बात खुल जाती है और राधिका—"हम हैं हरि की पग धोवनहारी" कहकर लीला समाप्त कर देती है । इस ग्रंथ में रचनाकाल नहीं है । उसकी प्रतिलिपि चैत्र बदी अष्टमी संवत् १९१४ वि० (१८५७ ई०) में किन्हीं बालदीन पांडे ने की है । रचना रोचक होने के साथ साथ छोटी है ।

यह रचना पद्माकर की है या नहीं, निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता । इसकी भाषा उतनी मँजी हुई नहीं जितनी पद्माकर की अन्य रचनाओं की है । पद्य ढीले ढाले हैं । केवल अंतिम सवैये के अंतिम चरण में पद्माकर का नाम आया है । वह भी छंद में बाहर से जोड़ा हुआ जान पड़ता है । यदि यह पद्माकर की ही रचना है, तो संभवतः आरंभिक रचना होगी ।

१३ रामचरण—रामसनेही पंथ के संस्थापक और नवलराम महाजन मेहरी के गुरु थे, जिसका नवलसागर नाम का ग्रंथ १९०१ ई० की खोज रिपोर्ट के नं० ६४ पर नोटिस में आ चुका है । नवलदास ने स्वयं कहा है—

"अनंतकोटि जन सिरन पै, रामचरण उर माँहि ।
आन भरोसो आन बल, नवलराम के नाँहि ॥"

प्रस्तुत रिपोर्ट में उनके रचे ९ ग्रंथों के विवरण लिए गए हैं—१—जिज्ञासबोध (नि० का० १८४७ वि०) - विश्रामबोध (नि० का० १८५१ वि०) ३—समतानिवास-ग्रंथ (नि० का० १८५२ वि०) ५— विश्वासबोध ग्रंथ (नि० का० १८४९ वि०) ५—अमृत उपदेश (नि० का० १८४४ वि०) ६—रामचरण के शब्द ७—अणभै विलास (नि० का० १८४५ वि०) ८—रामरसायनि और ९ सुखविलास (नि० का० १८४६ वि०) । इनमें से अब तक कोई भी ग्रंथ खोज में नहीं मिला था । हाँ, 'विनोद' के नं० १०७५ पर इनके रचे ५ ग्रंथों का उल्लेख मात्र हुआ है, जो इस रिपोर्ट की सं० १, २, ४, ६ तथा ७ पर आए हैं । प्राप्त ग्रंथों के नं० ६ का नाम 'रामचरण के शब्द' है और 'विनोद' की सूची में एक ग्रंथ का नाम "वाणी" लिखा है । सामान्यतया 'वाणी' किसी संत की समस्त रचनाओं के संग्रह को और "शब्द" उसके एक अंश अर्थात् पदावली के संग्रह को कहते हैं । ऐसी अवस्था में 'शब्द' एक स्वतंत्र ग्रंथ न होकर "वाणी" का अंग भी हो सकता है । परंतु किसी निश्चय पर पहुँचने के लिये यहाँ पर्याप्त उपकरण प्रस्तुत नहीं है । विनोद में इनके एक और ग्रंथ "रसमालिका" का भी उल्लेख है; परंतु खोज में यह ग्रंथ अयोध्या के महंत रामचरण की रचनाओं में सम्मिलित किया गया है जो ठीक भी जान पड़ता है (दे० खो० रि० १९०३ नं० ४४) । ग्रंथ नं० ६ तथा ८ के अतिरिक्त शेष सभी ग्रंथों में रचनाकाल दिए गए हैं, जो उनके नामों के साथ कोष्ठकों में लिखे हैं ।

इनके सभी ग्रंथों में आरंभ का स्तुति-संबंधी दोहा एक ही है जो यहाँ दिया जाता है:—

"रामतीत (राम) गुरु देवजी (पुनि) तिहूँकाल के संत।
जिनकूँ रामचरण की वंदन वार अनंत ॥"

यह राजपूताने के शाहपुरा नामक स्थान के निवासी थे। इनके गुरु का नाम कृपाराम या कृपालराम था, जैसा उन्होंने अपने अमृत उपदेश नामक ग्रंथ में बताया है--

सिर ऊपर सतगुरु तपै कृपारामजी संत।
रामचरण ता सरणि में ऐसो पायो तंत ॥"

इसी प्रकार शब्द में लिखा है--

"सतगुरु संत कृपालजी रामचरण सिष तासु के।
कारिज करि कारण मिले तुम गुरु रामजन दास के ॥"

कहीं कहीं इन ग्रंथों के एक ही व्यक्ति के रचे होने के विषय में कुछ संदेह हो जाता है। 'रामरसायनि' में लिखा है--

"सबद एक महराज का नग मोताहल जोइ।
ग्रंथ जोड़कर रामजन षानाजाद जु होइ ॥" ॥ १ ॥
ए वाहक उधार करिणकूं रामचरण जी भाषै।
राम रसाइनि रस का भरिया आप सबन कूँ दाषै ॥ २ ॥
ताकी जोड़ ग्रंथ या परगट राम जन बणवायो।
ज्ञान भगति वैराग जुगति मुकती पंथ बतायो ॥ ३ ॥

पहले में ग्रंथ का जोड़नेवाला रामजन है, दूसरे में रस का भरनेवाला 'रामरसाइनि' "ए वाहक उधार करण कूँ" रामचरणजी ने 'भाषा' है और तीसरे दोहे में "ताकी जोड़"--उसी टक्कर का या (यह) ग्रंथ रामजन ने "बणवायो" है। किंतु ग्रंथ के अंत में--"इति श्री रामरसाइनि ग्रंथ रामचरणकृत संपूर्ण समाप्तः" ही लिखा है।

ग्रंथकार ने अपना मृत्यु-काल कैसे लिख दिया होगा? यह संदिग्ध है। अनुमान होता है कि किसी शिष्य तथा प्रतिलिपिकर्त्ता ने पीछे से इस या इसी प्रकार की अन्य प्रतियों में इसे अपनी ओर से जोड़ दिया होगा।

'अनुभवविलास' में भी--"ग्रंथ जोड़ कही रामजन" इसी प्रकार का पद आया है। रामचरण के शिष्य उनको 'राम' कहा करते थे, जैसा इनके शिष्य नवलदास ने अपने नवल-सागर में कहा है:—

"रामगुरु उर में बसे अनंत कोटि जन सीस।
नवलौ अनुचर रावरौ मानूँ बिसवा बीस ॥"

अनुभवविलास में रामचरण के गुरु कृपाराम की मृत्युतिथि—"बत्तीसै कृपाल छठि भाद्रपद सुदि सुकर। छोड़े आप सरीर परम पद पहुँचे मुकर ॥" और इससे पूर्व रामचरण का जन्मकाल—"अठारै सै षट वर्ष मास फागुन बदि सातैं। संत पधारै धाम सनीचर वार विष्यातैं ॥" इस प्रकार दिया है।

'रामरसाइनि' के अंत में रामचरण की मृत्यु का इस प्रकार उल्लेख है:—

"ये वाहक पुर माह पधारे धाम कूँ
ररंकार में लीन उचारे राम कूँ ॥
अठारह सै पचपन बुधि पाँचै परी।
परिहा वैसाष मास गुरुवार देह त्यागन करी ॥"

इनसे पता चलता है कि वि० १८०६ में रामचरण का जन्म हुआ, वि० १८३२ में उसके गुरु कृपाराम का निधन हुआ और १८५५ वि० में स्वयं रामचरण का। उनके 'शब्द' ग्रंथ में भी 'जन्म संवत्' वि० १८०६ (१७४९ ई०) दिया है।

इनकी भाषा में राजस्थानी शब्दों के अतिरिक्त फारसी, अरबी के शब्द भी बहुत आए हैं—जैसे, "मुरसदकूँ सजदा करै", "आलम औरत जुलम रहैं", "तू सिर गजब चलि आई जुरा की फौज", "गाफिल होइ मति भाई" आदि। इनकी रचना का सार गुरु-महिमागान, संसार से विरक्तता और केवल राम से नाता रखना है। कविता साधारणतया अच्छी है।

१४ **रैदास**—के नाम से दो ग्रंथ "प्रह्लादलीला" और "रैदास के पद" इस खोज में प्राप्त हुए हैं। दूसरा ग्रंथ तो निस्संदेह प्रसिद्ध रैदास का ही है। असंभव नहीं कि पहला भी उन्हीं का हो पर यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। दूसरे ग्रंथ का लिपिकाल संवत् १६९६ वि० (१६३९ ई०) है। खोज विवरण सन् १९०२ ई० के सं० ९७ पर भी आ चुका है, किंतु यह प्रति उससे १० वर्ष पुरानी है। प्रह्लाद लीला में निर्माणकाल तथा लिपिकाल नहीं दिया गया है। ग्रंथ छोटा ही है। इसमें नरसिंह-अवतारांतर्गत भक्त प्रह्लाद की अनन्य भक्ति का दिग्दर्शन कराया गया है। ग्रंथ की प्रतिलिपि अशुद्ध हुई जान पड़ती है। इस ग्रंथ में प्रह्लाद का जन्मस्थान मुलतान (पंजाब) बताया गया है—

"सहर बड़ो मुलतान जहाँ एक कुलवँत राजा।
यहँ जनमे प्रह्लाद सर सुर सुवि (? भुवि) के काजा ॥
पूछौ विप्र बुलाय कै जन्म्यौ राजकुमार।
या लक्षण तो कोई नहीं असुर संहारणहार ॥"

यहाँ 'सर' शब्द संभवतः सरे के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। प्रह्लाद के जन्म लेते ही उनके लक्षण पूछे गए हैं। जोर देकर यह भी पूछा गया है कि उसका कोई लक्षण "असुर संहारणहार" तो नहीं है ? इससे आगे कथाक्रम भंग हो गया है। पूछी बात का कोई उत्तर नहीं दिया जाता, उसकी पढ़ाई लिखाई आरंभ हो जाती है। "सुण धोरौं प्रह्लाद कौ रणगुण तैं पढैये। मैं पढैए राम को नामा और जान ही जानों ॥" "राम मैं छोड़ि तीसरो अंक न आनौं ॥" ज्ञात होता है, यहाँ 'धोरौं' शब्द पास के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। 'सुण धोरौं' पास जाकर सुन। पंडित से कहा गया है, "रणगुण तैं पढ़ैए" तू इसे रण-विद्या की शिक्षा देना। पास आकर कही हुई बात को भी प्रह्लाद सुन लेता है और उत्तर देता है:—

"कहा पढावै बावरै और सकल जंजार।
भौसागर जमलोक ते मुहि कौन उतारे पार॥"

इस प्रकार राम नाम को ही सार कहकर प्रह्लाद ने पढ़ा। इससे आगे भक्त की दृढ़ प्रतिज्ञा की परीक्षाओं का वर्णन समाप्त होकर, अंत में:—

"अस्त भयौ तब भानु उदै रजनी जब कीन्हा।
खंभा में ते निकरि जाँघ पर जोधा लीन्हा॥
नप सौं निझप बिडारिया तिलक दिया महराज।
सप्तलोक नव षंड में तीनि लोक भई राज॥"—

इस पद्य से विषय समाप्त हो जाता है। और ग्रंथकार भगवान् की वत्सलता का वर्णन करके ग्रंथ को समाप्त कर देता है:—

"जहाँ भक्त को भीर तहाँ सब कारज सारे।
हमसे अधम उधारि किए नरकन से न्यारे॥
सुर नर मुनि मंडल कहैं पूरण ब्रह्म निवास।
मनसा वाचा कर्मणा गावै जन रैदास॥"

१५ **वाजिद**—का राजकीर्तन नामक ग्रंथ पहले नोसिट में आ चुका है (दे० खो० वि० १९०२ ई० संख्या ७९)। इनका रचना-काल १६०० ई० माना गया है। इस खोज में बिना सन् संवत् के दो ग्रंथ "अरिल्ल" और "साखी" नाम से मिले हैं। दोनों ग्रंथ प्रायः संत संप्रदाय से संबंध रखते हैं। "अरिल्ल" की लिखावट अस्पष्ट और अशुद्ध है, अतएव पढ़ने में कठिनता से आती है।

इसमें विरह, सुमिरण, काल, उपदेश, कृपण, चाणक, विश्वास, साध तथा पतिव्रता इन नौ अंगों पर रचना की गई है। ग्रंथ के आरंभ में "संतसाहिब सत सुकृत कबीर" लिखा हुआ है जिससे पता चलता है कि या तो लेखक या प्रतिलिपिकर्त्ता कबीरपंथी था। परंतु अब तक परंपरा से जो कुछ ज्ञात है, उससे वाजिद या बाजिंदा दादू के चेले प्रसिद्ध हैं।

'साखी' बड़ा उपदेश-पूर्ण ग्रंथ है—किंतु अपूर्ण मिला है। इसमें भी सुमिरणादि विषयों के अनुक्रम से रचना की गई है।

इनके अतिरिक्त दो हस्तलिखित ग्रंथ और हैं जिनका उल्लेख करना आवश्यक है। एक तो प्रपन्नगणेसानंद का "भक्तिभावती" ग्रंथ और दूसरा "रामरक्षा" ग्रंथ।

१६ **'भक्तिभावती'**—पिछले एक विवरण में भी आ चुकी है, (दे० खो० वि० सन् १९०१ सं० १३६)। उसमें इसका रचनाकाल नीचे लिखी हुई चौपाई के अनुसार संवत् १६११ वि० ठहरता है:—

"संवत् सोले से भवसालै। मथुरापुरी केसवा आलै॥
असुन पेहल ग्यारसि रिविवारी। तह षट पहलीहि विसतारी॥"

परंतु प्रस्तुत खोज में इसकी जो प्रति प्राप्त हुई है उसमें रचनाकाल संवत् १६०९

वि० (१५५२ ई०) और लिपिकाल संवत् १८१० वि० (१७५३ ई०) दिया हुआ है। रचनाकाल की चौपाई इस प्रकार है:—

"संवत् सोलह सै नवसालै। मथुरापुरी केसव आलै॥
आश्वनि पहल ग्यारसि रविवारी। तहँ षट् पहर माहिं बिसतारी॥"

कवि ने संवत् को आधा संख्या में और आधा संकेत में न लिखा होगा जैसा पुरानी रिपोर्टवाली प्रति में है। वह असंभव तो नहीं पर अस्वाभाविक सा अवश्य लगता है। पुरानी रिपोर्टवाली प्रति में संभवतः लिपिकार ने 'नव' के स्थान में गलती से 'भव' (रुद्र = ग्यारह) लिख दिया है। ग्रंथ-रचना-काल १६०९ वि० ही माना जाना चाहिए जैसा वर्तमान प्रति में है।

१७ 'रामरक्षा'—इस बार के विवरण में रामानुजाचार्य के नाम से आई है। हस्तलेख के अंत में लिखा है—"इति श्री रामानुजाचार्य कृत श्रीरामरक्षा स्तोत्र संपूर्णम्॥" इसके अतिरिक्त ग्रंथ के उद्धरणों में रामानुज का नाम कहीं नहीं है जिससे यह प्रकट हो सके कि इसके रचयिता वही हैं। खोज विवरणों में अबतक यह रामरक्षा कई बार आ चुकी है (दे० खो० वि० सन् १९०० ई० सं० ७६; खो० वि० सन् १९०९—११ ई० सं० २५० ए और दिल्ली विवरण सन् १९३१ के पृष्ठ ८)। कभी यह सुप्रसिद्ध स्वामी रामानंद की मानी गई है और कभी रामानंददास की। किंतु रामरक्षा थोड़े से हेर फेर के साथ प्रत्येक दशा में मूलतः एक ही ग्रंथ है। उसके रचयिता अलग अलग नहीं समझे जाने चाहिएँ। स्वयं रामानंद इसके रचयिता हों या न हों, किंतु प्रस्तुत प्रति को छोड़कर अन्य प्रतियों में लिखनेवालों का अभिप्राय प्रसिद्ध रामानंद से ही जान पड़ता है। उनके शिष्य कबीर के नाम से भी एक रामरक्षा मिलती है (दे० खो० वि० सन् १९०६—८ सं० १७७ एस) जिससे इस बात की पुष्टि होती है। प्रस्तुत रामरक्षा भी रामानंद के नाम से मिलनेवाली रामरक्षा ही है। उसमें रामानंद का नाम तक आया है। तुलना के लिये हम सन् १९०३ ई० के खोज विवरण वाली तथा प्रस्तुत रामरक्षा के कुछ अंशों को नीचे उद्धृत करते हैं:—

(अ) खोज विवरण सन् १९०३ ई० से—

ओं संध्या तारणी, सर्व दोष निवारणी।
संध्या करे विघ्न टरैं पिंभ प्राण की रक्षा नाथ निरंजन करैं॥
ज्ञान धन मन पहुपै पंचहुताशनं। क्षमा जाय समाधि पूजा नमो देव निरंजनं॥१॥

गर्जंत गवन बाजंत वेयण शंखसवद ले त्रिकुटी सारं। दास रामानंद निजु तत्त्व बिचारं। निजु तत्त्व तें होते ब्रह्मज्ञानो। श्रीरामरक्षादीय उधरे प्राणी। राजद्वारे पथे घोरे संग्रामे शत्रुसंकटे। जायलागा धीरं। श्रीरामचंद्र उचरेते लक्ष्मणजी सुनते जानकी सुनते। हनुमान सुनते पापं न लिपंते। पुन्य ना हरंते। संध्याकाले प्रातःकाले जे नरा पठते सुनते मोक्ष मुक्तफल पावते। इति श्री रामरक्षा रामानंद की॥

(ब) प्रस्तुत खोज-विवरण के विवरणपत्र से:—

ओं संध्या तारणी सर्व **दुःख** निवारनि ।
संध्या **उचरे** विध्न टरे । **पिंड** प्राण की रक्षा श्रीनाथ निरंजन करे ॥ १ ॥

ज्ञान **धूप** मन **पहुप** इंद्रिय पंचहुतासन। क्षिमाजाप समाधि पूजा नमोदेव निरंजनं ॥ २ ॥

गाजंत गगन वाजंत **वेनु संख धुनि सब्द्** त्रिकुटी सारं । **गुरु** रामानंद **ब्रह्मको चिन्हंते सो ज्ञानि एते रामरक्षा वादिये** उच्चरंत प्राणी ॥ राजद्वारे पथे घोरे संग्रामे शत्रु- **संकटेश्रीरामरक्षास्तोत्रमंत्र** राजारामचंद्र उचरंते लक्ष्मणकुमार सुनत **धर्म्मनिहारं ततयो पुण्य लभ्यते। सीता सुनंत** हनुमान सुनंत । बीज त्रिकाल जपंते सो प्राणी परांगता ॥ इति श्री रामानुजाचार्यकृत श्रीरामरक्षा स्तोत्र सम्पूर्ण ॥

दोनों प्रतियों के पाठभेद मोटे अक्षरों द्वारा दिखाए गए हैं । पिछली विवरण वाली प्रति में जहाँ दोष, करे, पिंझ, धन, पहुपै, गर्जंत, गवन आए हैं वहाँ प्रस्तुत प्रति में क्रमशः दुःख, उचरे, पिंड, धूप, पहुप, गाजंत, गगन आदि शब्द हैं । 'पिंझ' तो जान पड़ता है 'पिंड' ही है जिसे लिपि की प्राचीनता के कारण विवरण लेनेवाले ने गलती से ऐसा पढ़ा है । कहीं साधारण मात्रादि का ही भेद है, कहीं शब्दों का भी भेद हो गया है और कहीं-कहीं कुछ अंश घट बढ़ भी गया है । परंतु इतना होने पर भी दोनों ग्रंथ एक दूसरे से अभिन्न ही हैं । रामानंद-संप्रदाय रामानुज के श्री संप्रदाय की एक शाखा है । इसलिये रामानंदियों में भी रामानुजाचार्य का बड़ा मान है । कभी कभी उनके ग्रंथ 'श्रीमते रामानुजाचार्याय नम' से आरंभ होते हैं । संभवतः किसी प्रतिलिपिकर्त्ता ने इसी कारण गलती से रामानुज को ग्रंथकार समझ लिया हो ।

पीतांबर दत्त बड़थ्वाल
निरीक्षक,
खोज-विभाग

प्रथम परिशिष्ट

उपलब्ध हस्तलेखों के रचयिताओं पर टिप्पणियाँ

प्रथम परिशिष्ट

रचयिताओं पर टिप्पणियाँ

१ अब्दुल मजीद्—इनका रचा हुआ 'कलेश भंजनी' नामक एक वैद्यक ग्रंथ मिला है। इसकी प्रस्तुत प्रति में न तो रचनाकाल का ही और न लिपिकाल का ही उल्लेख हुआ है। यह इसी विषय के फारसी ग्रंथ 'तोहफतुल गुरबा' का हिंदी अनुवाद है। परंतु इसकी भाषा अव्यवस्थित है। खोज में ग्रंथ प्रथम बार मिला है।

२ आधार मिश्र—इस शोध में इनके बनाये वैद्यक संबंधी चार ग्रंथ (१) धातु मारन विधि, (२) कठिन रोगों की औषधि, (३) वैद्यक विलास तथा (४) तिब्ब-सिकन्दरी (मदनुस्सफा) हैं। खोज विवरणिका १९२३–२५ में सं० १ पर यह ग्रंथकार उपरोक्त विषय के अपने एक अन्य ग्रंथ 'वैद्यक योग संग्रह' के साथ उल्लिखित है। प्रस्तुत सभी ग्रंथ शोध में नवीन हैं। पहला ग्रंथ संवत् १८६० (१८०३ ई०) में तीसरा १८९६ (१८३९ ई०) में और चौथा १९०९ (१८५२ ई०) में लिपिबद्ध हुए हैं। दूसरे ग्रंथ का लिपिकाल नहीं दिया है। रचनाकाल चौथे ग्रंथ में पाया जाता है जो सन् ९१६ हिजरी (सन् १६०८ ई०) है। उसमें यह भी लिखा है कि उक्त ग्रंथ किसी चेतसिंह भदौरिया की प्रार्थना पर रचा गया है जिससे पता चलता है कि रचयिता चेतसिंह भदौरिया के आश्रित था। इस ग्रंथ की प्रतिलिपि स्वयं चेतसिंह भदौरिया ने जो रचयिता का आश्रयदाता था, सं० १९०९ (१८५२ ई०) में क्वार मास, पूर्णिमा बुद्धवासर को की। इससे स्पष्ट है कि उपरोक्त रचनाकाल मूल ग्रन्थ का है, प्रस्तुत हिन्दी रचना का नहीं। इसका रचना काल तथा रचयिता और उसके आश्रयदाता का समय उपर्युक्त लिपिकाल संवत् १९०९ (१८५२ ई०) के लगभग होना चाहिये।

३ अग्रदास—ये गलता (जैपुर) गद्दी के अधिकारी थे और सन् १५७५ ई० के लगभग वर्तमान थे। इस बार इनके प्रसिद्ध ग्रंथ 'ध्यान मंजरी' की तीन प्रतियाँ मिली हैं। रचनाकाल इनमें से किसी में नहीं दिया है। लिपिकाल केवल एक प्रति में है जो सं० १९०२ (१८४५ ई०) है। यह पहले मिल चुकी है, देखिये विवरणिकाएँ (१९२०–२२, सं० १; १९२३–२५, सं० ४; १९२६–२८ सं० ४)।

४ अजयराज—इस ग्रंथकार के दो ग्रंथ मिले हैं, एक भाषा-सामुद्रिक' और दूसरा 'विजय विवाह'। पहले का विषय उसके नाम से ही प्रकट है। दूसरे में कृष्ण-रुक्मिणी के विवाह का वर्णन है। यह बहुत अशुद्ध लिखा है। पहला ग्रंथ संवत् १९२४

(१८६७ ई०) का और दूसरा सं० १८१३=१७५६ ई० का लिखा हुआ है। ग्रंथकर्त्ता शोध में नवीन है। रचनाकाल किसी ग्रंथ में नहीं दिया है। ग्रंथों की शैली से ऐसा विदित नहीं होता कि वे एक की ही रचनाएँ हैं। पहले ग्रंथ के अन्तिम दो दोहों और पुष्पिका द्वारा उसके रचयिता भी संदिग्ध जान पड़ते हैं।

५ अजीतसिंह (मेहता)—इनकी 'शिक्षा-बत्तीसी' और 'विद्या बत्तीसी' नामक दो रचनाओं के विवरण लिये गये हैं। पहली रचना की दो प्रतियाँ मिली हैं जिनमें से एक में लिपिकाल संवत् १९२७ (१८७० ई०) है। रचनाकाल दोनों का संवत् १९१८ (१८६१ ई०) है। रचयिता जैसलमेर के रावल रणजीतसिंह के दीवान और वल्लभ संप्रदाय के वैष्णव थे। खोज में ये नये मिले हैं।

६ अक्रूरपुरी—इनके रचे 'ब्रह्मपिंड' नामक ग्रंथ के विवरण लिये गये हैं जिसमें हित हरिवंश जी की 'चौरासी' के दस पद और कुछ मंत्र संगृहीत हैं। रचनाकाल एवं लिपिकाल ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में नहीं दिये हैं। इसके अनुसार रचयिता काशी के कोई गुसाईं विदित होते हैं। खोज में ये नवीन हैं।

७ अक्षर अनन्य—ये पिछली खोज विवरणिकाओं में उल्लिखित हैं, देखिए विवरणिकाएँ (१९२०-२२, सं० ४; १९२३-१९२५ सं० ७)। इस बार इनके पाँच ग्रंथों की ९ प्रतियाँ खोज में मिली हैं। रचनाकाल किसी ग्रंथ में नहीं दिया है। इनका ब्यौरा इस प्रकार है:—

(१) राजयोग—३ प्रतियाँ, लिपिकाल सं० १९१७ (१८६० ई०) दूसरी का सं० १९४७ (१८९० ई०) और तीसरी का सं० १९२७ (१८७० ई०)।

(२) अनुभव तरंग - १ प्रति, लिपिकाल सं० १८२० (१७६३ ई०)।

(३) ज्ञानयोग सिद्धान्त—१ प्रति, लिपिकाल नहीं दिया है।

(४) प्रेम दीपिका - ३ प्रतियाँ, लि० का० प्रथम दो का क्रमशः सं० १८४६ (१७८९ ई०) और १८७० वि० (१८१३ ई०) हैं।

(५) दुर्गापाठ—१ प्रति, लिपिकाल १८७० वि० (१८१३ ई०)। संख्या ३ और ५ के ग्रंथ खोज में नये मिले हैं। रचयिता संवत् १७१० के लगभग वर्तमान थे।

८ आलम—प्रस्तुत खोज में इस कवि का रचा हुआ "माधवानलकाम कन्दला" नामक ग्रंथ मिला है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल नहीं दिया है, पर इसका विवरण पहले लिया जा चुका है, देखिए विवरणिकायें (१९०४, सं० ९; १९२३-२५, सं० ८) जिनके अनुसार रचना काल हिजरी सन् ९९१ (१५८३ ई०) है।

रचयिता प्रसिद्ध कवि आलम (शेख के प्रेमी) से भिन्न प्रतीत होते हैं। माधवानल की निवासभूमि पुष्पावती नगरी को आजकल कटनी से ९ मील दूर बिलहरी बतलाते हैं जहाँ उसने कामकंदला को कामसेन के पास ले लाकर अपना जीवन बिताया था।

यहाँ से २ मील पर एक महादेव का मंदिर है जो काम कंदला नाम से प्रसिद्ध है।

कामसेन राजा का नगर डूंगरगढ़ बतलाया जाता है जो आजकल खैराबाद राज्य में है।

९ अमरदास—इनकी रची 'भक्त बिरुदावली' नामक रचना की दो प्रतियाँ मिली हैं। इनमें से एक में न तो रचनाकाल ही दिया है और न लिपिकाल ही। दूसरी प्रति में रचनाकाल सं० १७५२ (१६९५ ई०) और लिपिकाल सं० १७६४ (१७०७ ई०) दिये हैं। प्रस्तुत रचना का उल्लेख पिछली खोज विवरणिका (१९०६-८, सं० १२३) में हो चुका है।

१० अमरसिंह—इनका प्रस्तुत ग्रंथ 'अमर विनोद' पिछली खोज में मिल चुका है, देखिये विवरणिका (१९२३-२५, सं० १०)। इसबार इसकी तीन प्रतियाँ मिली हैं जिनमें लिपिकाल क्रमशः सं० १८६० (१८०३ ई०), १९०९ (१८५२ ई०) और सं० १९१९ (१८६२ ई०) हैं। रचनाकाल किसी में नहीं दिया है।

११ आनंद कवि—इस ग्रंथकार की रची हुई प्रसिद्ध पुस्तक 'कोकसार' या 'कोक मंजरी' अथवा 'आसन मंजरी' की सात प्रतियाँ मिली हैं।

सबसे प्राचीन प्रति संवत् १८१० वि० (१७५३ ई०) की लिखी हुई है। 'कोक-मंजरी' की दो प्रतियाँ, 'कोकसार' की चार प्रतियाँ और 'आसन मंजरी' की एक प्रति है। अन्तिम नाम नवीन है। इस ग्रंथ की इतनी अधिक प्रतियाँ हुई हैं कि एक ही ग्रंथ होते हुए भी उसकी विभिन्न प्रतियों में अनेक पाठभेद हो गए हैं जिससे उनका अलग अलग ग्रंथ होने का भ्रम उत्पन्न होता है। यह पहले कई बार विवरण में आ चुकी है।

देखिये विवरणिका (१९२०-२२, सं० ६)।

१२ आनंदराम—इस कवि के 'गीता, के अनुवाद की १० प्रतियाँ प्रस्तुत शोध में प्राप्त हुई हैं। एक प्रति में रचनाकाल सं० १७६१ दिया है। सब से पुरानी प्रति का लि० का० सं० १८१७ (१७६० ई०) है। यह ग्रंथ पहले कई बार मिल चुका है, देखिये विवरणिकाएँ (१९०१, सं० ८४; १९०६-८ ई०, सं० १२७; १९१२-१४ ई० सं० ५; १९१७-१९, सं० ६)। उक्त विवरणिकाओं की कुछ प्रतियों में रचयिता का नाम हरिवल्लभ दिया है, परन्तु इस बार किसी में भी यह नाम नहीं मिलता।

१३ आनंदी—इनका एक ग्रंथ 'गीत संग्रह' (अनुमान से) प्राप्त हुआ है, जिसके रचनाकाल तथा लिपिकाल दोनों अज्ञात हैं। इसमें साहित्य और संगीत दोनों का समन्वय है। विषय भक्ति और उपदेश है। ग्रंथकार शोध में नवीन है।

१४ आनंद सिद्धि—अंजन निदान नाम से इनका एक वैद्यक ग्रंथ उपलब्ध हुआ है जो इस नाम के मूल संस्कृत ग्रंथ का अनुवाद जान पड़ता है। रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल सं० १८८५ (१८२८ ई०) है। अनुवाद प्रायः गद्य में है। परंतु कहीं कहीं सवैया तथा छप्पय का भी व्यवहार हुआ है। "इससे पहले इस ग्रंथ का संग्रह (संगठन) किन्हीं देवाचार्य ने किया था" ऐसा इस ग्रंथ के अंत में लिखा है। प्रमाण के

लिये लोलिम राज, हंसराज तथा हेमराज के मतों को भी उद्धृत किया है। रचयिता शोध में नवीन है।

१५ अनाथदास—इनके बनाये 'विचारमाल' की ७ प्रतियाँ और 'सर्वसार' की एक प्रति प्राप्त हुई है। दोनों ही ग्रंथों का रचनाकाल संवत् १७२६ (१६६९ ई०) है। 'विचार माल' की सबसे पुरानी प्रति सं० १९०० (१८४३ ई०) की लिखी है और एक सं० १९१८ (१८६१ई० ,की। शेष चार में० लि० का० नहीं दिया है। 'सर्वसार' की प्रति संवत् १९३१ (१८७४ ई०) की लिपिबद्ध है। दोनों ग्रंथ पहले कई बार मिल चुके हैं। देखिये विवरणिकाएँ (१९०६-८, सं० १२६ बी; १९०९-११, सं० ७. १९२०-२२, सं० ८)। सन् १९०९-११ की त्रैवार्षिक विवरणिका में "सर्वसार" के रचयिता को विचार माल के रचयिता से भिन्न माना है जिसका आधार अनाथदास की अशुद्ध जन्मतिथि देना है। 'सर्वसार', 'प्रबोध चन्द्रोदय' का दूसरा नाम है जो पहले विवरण में आ चुका है। इस प्रकार दोनों ग्रंथों के रचयिता एक ही हैं।

१६ अर्जुनदेव—गत विवरणिकाओं में नानक को भूल से सुखमानि का रचयिता मान लिया गया है। परंतु वह वास्तव में गुरु अर्जुनदेव = (१५८१-१६०६ ई०) की रचना है जो पाँचवें गुरु थे। सभी सिख गुरुओं को स्वरूप से एक ही माना जाता है। अतः यही कारण है कि अधिकांश रचनाओं में उनका उपनाम 'नानक', भी मिलता है। ,सुखमनि के संबंध में यही बात है। इस बार भी इसकी एक प्रति मिली है जिसमें कोई मिति नहीं दी हुई है। विगत विवरणिकाओं (१९०९-११, सं० २०७; १९२३-२५, सं० २९३) में यह उल्लिखित है।

१७ अरुभद्र—इनका बनाया कोक सामुद्रिक मिला है जिसका रचनाकाल सं० १६७८ (१६२१ ई०) है। इसमें इन्होंने जहाँगीर बादशाह का उल्लेख किया है, जिसके राजत्व काल में इसकी रचना हुई।

१८ असगर हुसेन—इनका बनाया हुआ 'यूनानी सार' नामक वैद्यक ग्रंथ प्राप्त हुआ है जिसका रचनाकाल संवत् १९३२ (१८७५ ई०) और लिपिकाल संवत् १९४४ (१८८७ ई०) हैं। ये फर्रुखाबाद के रहनेवाले थे।

कुछ दिन पहले जिस हिन्दुस्तानी भाषा का आन्दोलन उठा था और जो राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द ने अपने ग्रंथों में लिखी है, उसी में प्रस्तुत ग्रंथ भी लिखा गया है। परन्तु भाषा इसकी परिमार्जित है। इसमें संस्कृत, फारसी एवं अर्बी के प्रायः बोल चाल के शब्दों का व्यवहार स्वतंत्रता से किया गया है। यह यूनानी ग्रंथों से उल्था होकर ही इस रूप में आया है। रचयिता खोज में नवीन है।

१९ बादेराय—इस ग्रंथकार का पता पहली बार लगा है। इन्होंने गदर (सन् १८५७) के दिनों में रामायण की रचना की जिसके विवरण इस बार लिये गये हैं। ये तिलोई राज्य के दीवान थे। पिता का नाम रामगुलाम बतलाते हैं। यद्यपि इन्हों ने अपनी जाति पाँति का पता स्वयं कुछ नहीं दिया है तथापि लिपिकर्ता ने इन्हें 'लाला बादेराया'

लिखा है, जिससे प्रतीत होता है कि ये कायस्थ थे। लिपिकर्त्ता का यह भी कथन है कि ये रहनेवाले तो तिलोई रियासत के थे; किन्तु इत्तिफाक से जफरपुर चले गये थे। वहीं यह पोथी पाँच दिन में लिखी गयी थी। पोथी लिखने का स्थान जफरपुर परगना देवा, जिला बाराबंकी (अवध) है। इसकी प्रस्तुत प्रति फारसी लिपि में है।

२० बैजनाथ कूर्म—ये मानपुर डेहवा जिला बाराबंकी के रहने वाले थे और तुलसी के विशेषज्ञों में गिने जाते हैं।

इन्हों ने तुलसी के प्रायः सभी ग्रंथों पर टीकाएँ रची हैं। उनकी लिखी रामायण की टीका प्रामाणिक मानी जाती है। प्रस्तुत विरवणिका में उनका 'काव्य कल्पद्रुम' नामक ग्रंथ आया है जिसका रचनाकाल सं० १९३५ (१८७८ ई०) और लि० का० सं० १९४७ (१८९० ई०) है। विषय इसका पिंगल है और यह बोपदेव कृत इस नाम के संस्कृत ग्रंथ का गद्यानुवाद है। रचना काल में सूक्ष्म से सूक्ष्म समय का भी निर्देश किया गया है जिससे पता चलता है कि ये ज्योतिषी भी थे।

२१ बकसकवि—इनके 'भागवत दशम स्कन्ध' के पद्यात्मक अनुवाद की दो प्रतियाँ इस शोध में मिली हैं। रचनाकाल किसी प्रति में भी नहीं है। लिपिकाल दोनों में संवत् १८८६ (१८२६ ई०) दिया है। ग्रंथकार शोध में नवीन है।

२२ बलबीर—इनके रचे हुए 'रस सागर' या 'दंपति विलास' की दो प्रतियाँ तथा 'उपमालंकार' (नखशिख) की एक प्रति इस शोध में प्राप्त हुई है। पहला ग्रंथ सं० १७५९ (१७०२ ई०) का रचा हुआ है। इसकी प्राप्त प्रतियों में लिपिकाल क्रमशः १८५६ (१७९९ ई०) और सं० १८८० (१८२३ ई०) हैं। दूसरे ग्रंथ में रचनाकाल नहीं दिया है। वह सं० १८५६ (१७९९ ई०) का लिखा हुआ है। प्रथम ग्रंथ पिछली खोज विवरणिका (१९०२ सं० २७,२८) पर उल्लिखित है। रचयिता हिम्मत खां के आश्रित कन्नौज के अधिवासी और द्विवेदी (कान्यकुब्ज) ब्राह्मण थे। रचनाकाल का पद्य इस प्रकार है :—

पंडवान मुनि रवि-रथ-चकै। संवत् नाम लोक तिथि चकै।
माधव सुकुल पक्ष लिपुवा में। अदित वार प्रगट किय नामै॥

२३ बलभद्र—ये सुप्रसिद्ध महाकवि केशव के भाई थे और अपने 'नख शिख' ग्रंथ के साथ पिछली कई विवरणिकाओं में आ चुके हैं, देखिये विवरणिकाएं (१९००, सं० १११; १९०२, सं० ४५; १९०९–११, सं० १५; १९१२–१६, सं० ९; १९२३ २५, सं० २८)। इस ग्रंथ की एक प्रति के विवरण इस बार भी लिये गये हैं जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल आदि का कोई उल्लेख नहीं मिलता। रचयिता का समय संवत् १६४१ (सन् १५८४) के लगभग है।

२४ बालदास—इनके बनाये हुए दो ग्रंथ 'मैनगो' (मयन गो) तथा 'अहोरवा अष्टक' प्राप्त हुए हैं। रचनाकाल किसी ग्रंथ की प्रति में नहीं दिया है। कहा जाता है कि ये सं० १८८५ (१८२८ ई०) के लगभग रची गयी थी, पर इस कथन की प्रामाणिकता

फिर भी अपेक्षित है। ग्रंथों का लि० काल बहुत नया है। एक प्रति संवत् १९८० (१९२३ ई०) की लिखी हुई है और दूसरी सं० १९४० (१८८३ ई०) की। रचयिता खोज में नवीन है। इनका निवास स्थान जैनगरा (जिला रायबरेली) है। जाति के ये कान्यकुब्ज त्रिपाठी ब्राह्मण थे तथा पिता का नाम चिरंजीवप्रसाद था। इनके रचे ८१ ग्रंथ बतलाये जाते हैं।

२५ बलदेवदास—ये ग्रंथकार शोध में नवीन हैं। इनका रचा हुआ 'जानकी विजय' नामक ग्रंथ मिला है जिसका र० का० सं० १८९१ (१८३४ ई०) और लि० का० सं० १९३५ (१८७८ ई०) है। ये जाति के श्रीवास्तव कायस्थ थे और इनके पिता का नाम दीनदयाल था। जिला फतेहपुर के कल्याणपुर परगने में स्थित दौलतपुर ग्राम के निवासी छीतूदास इनके मंत्र गुरु थे।

२६ बालकृष्ण—इनका बनाया हुआ 'भागवत एकादश स्कन्ध' का पद्यानुवाद मिला है जिसका रचनाकाल सं० १८०४ (१७४७ ई०) और लिपि काल सं० १८८० (१८२३ ई०) है। शोध में ये नवीन हैं। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति बहुत अशुद्ध लिखी है।

२७ बालमुकुन्द—'बारहमासा' नामक इनकी एक रचना के विवरण लिये गये हैं जिसमें रचनाकाल तो नहीं दिया है पर लि० का० सं० १९२६ (१८६९ ई०) है। इस नाम के कई रचयिता विगत विवरणिकाओं में उल्लिखित हैं पर नहीं कहा जा सकता कि उनमें से ये कोई एक हैं या नहीं।

२८ बालमुकुन्द—खोज में इनका पता पहली बार लगा है। इनका बनाया हुआ 'निघन्ट भाषा', नामक एक वैद्यक ग्रंथ मिला है। जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं है। ये जगनेर (आगरा) के रहनेवाले थे। इससे अधिक इनके संबंध में कुछ ज्ञात नहीं।

२९ बंशीधर—इनके बनाये हुए पाँच ग्रंथों की १२ प्रतियाँ इस शोध में हस्तगत हुई हैं। ये चिंता खेड़ा (राय बरेली) के निवासी थे और पश्चिम देशीय (पश्चात् संयुक्त प्रदेश, अब उत्तर प्रदेश) शिक्षा विभाग में पाठ्य-पुस्तकें तैयार करने के कार्य पर नियुक्त थे। इनकी प्रस्तुत पुस्तकें उक्त शिक्षा विभाग द्वारा प्रकाशित की गयी थीं और वे न केवल उस प्रदेश की हिन्दी पाठशालाओं में ही वरन मध्य प्रान्त की पाठशालाओं में भी पढ़ाई जाती थीं। ये उर्दू भी जानते थे और उसमें भी पाठ्य पुस्तकें लिखते थे। पीछे ये आगरा के नार्मल-स्कूल में दूसरे अध्यापक के पद पर नियुक्त हुए जहां इन्होंने संवत् १९३१ में 'अंजन निदान' की रचना की।

ग्रंथों का विवरण इस प्रकार है:—

(१) अंजन निदान की ४ प्रतियाँ रचना काल संवत् १९३१, सबसे प्राचीन प्रति का लि० का० सं० १९३२ (१८७५ ई०) है।

(२) भारतवर्ष का इतिहास २ ,, सब से प्राचीन प्रति का लि० का० सं० १९११ = १८५४ ई०।

(३) भाषा चन्द्रोदय	१ ,,	,,	,,	१९११ = १८५४ ई० ।
(४) सूर्य वंशी राजा	३ ,,	,,	,,	१९११ = १८५४ ई० ।
(५) भोज प्रबंध सार	२ ,,	,,	,,	१९१२ = १८५५ ई० ।

३० बासुदेव सनाढ्य—खोज में इनका पता पहली बार लगा है। इनके रचे सात ग्रंथों की ८ प्रतियाँ इस शोध में प्राप्त हुई हैं। ये रामानुज संप्रदाय के वैष्णव गुधैनिया-अल्ल के सनाढ्य ब्राह्मण और बाह (आगरा) के निवासी थे। ये उद्भट टीकाकार, साहित्य, वेदान्त, ज्योतिष, रमल-वैद्यक तथा सामुद्रिक आदि अनेक विषयों के अच्छे पंडित थे। संस्कृत और हिन्दी दोनों ही भाषाओं पर इनका पूर्ण अधिकार था। इनके ग्रंथों की भाषा वैसी ही है जैसी कथावाचक पंडितों की प्रायः हुआ करती है। इनके भ्राता भगवानदास सनाढ्य और चचेरे भाई बिहारी लाल अच्छे ग्रंथकार और वैद्य थे। ये भी इस विवरणिका में उल्लिखित हैं, देखिये संख्या ३७ और ५४। इनके ग्रंथ जिस संवत् में रचे गये हैं प्रायः उसी में इनके द्वारा लिखे भी गये हैं। दो एक ग्रंथों में इन्हों ने अपना नाम नहीं भी दिया है और दो एक में अधूरे होने के कारण अपने रचयिता होने के विषय में मौन हैं। परन्तु उनकी शैली ही उनके रचयिता होने का साक्ष्य है। उन्हों ने अपनी अल्लका परिचय इस प्रकार दिया है:—

भारद्वाज गोत्र के भारद्वाज अगरिंसि वार्हस्पत्य तीनिप्रवर सामवेद जानिये।
नारायणी साखा सांख्यायन सूत्र जिनको प्रथम ही सनाढ्य वेद मध्य भानिये॥
जिनके त्रैलोक्यनाथ आपुन चरन पूजे तिनके समतुल्य विप्र और को न मानिये।
जा दिन श्रीकृष्ण चन्द्र पूजौ गिरिराज तवै पूजे जे विप्र ते गुधैनिया वपानिये॥

ग्रंथों का व्योरा निम्नलिखित है:—

(१) सत्यनारायण व्रत कथा की टीका	१ प्रति	र० का०	सं० १८९९ (१८४२ ई०), लि०का० वही
(२) अध्यात्म गर्भसार स्तोत्र ,,	१ ,,	×	१८९४ (१८४७ ई०)
(३) महूर्त्त संचय ,,	२ ,,	×	×
(४) भगवत् गीता ,,	१ ,,	×	×
(५) आलुमन्दार स्तोत्र ,,	१ ,,	×	१९०९ (१८५२ ई०)
(६) एकादशी महात्म्य ,,	१ ,,	×	×
(७) रामाश्वमेध की टीका ,,	१ ,,	×	×

इनका वृहद् पुस्तक भंडार जिसमें संस्कृत तथा हिन्दी आदि के अनेक ग्रंथ सुरक्षित, इनके प्रपौत्र पं० लक्ष्मीनारायण जी वैद्य के पास हैं।

३१ वेनीप्रसाद 'बेन'—इनके द्वारा रचे 'लोलम राज' नामक संस्कृत वैद्यक ग्रंथ के अनुवाद की दो प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं। ग्रंथ का रचनाकाल सं० १८९९ (१८४२ई०) है। लिपि-काल केवल एक प्रति में सं० १९२२ (१८६५ ई०) दिया है। रचनाकाल का दोहा इस प्रकार है:—

"संवत् रस[९] रस[९] वसु[८] ससी,[१] मारग पूरन मास।
वेन वैद्य जीवन रच्यो, भाषा सुमति विलास॥"

इससे ज्ञात होता है कि ग्रंथ का दूसरा नाम "वैद्य जीवन" भी है। संभवतः रचयिता भिंड (गवालियर) के रहने वाले थे जिन्हों ने शालिहोत्र भी लिखा है, देखिये विवरणिका (१९०६–८, सं० १३५)।

३२ भद्रनाथ—इनका रचा हुआ "छन्दशिरोमणि" नामक पिङ्गल-ग्रंथ मिला है जिसमें रचनाकाल सं० १८८० (१८२३ ई०) दिया है और लिपिकाल सं० १८९० (१८३३ ई०)।

ये दीक्षित ब्राह्मण थे और इनका निवास-स्थान बिल्हौर (जिला, कानपुर) था। खोज में ये नवीन हैं।

३३ भागचंद्र—इनका रचा हुआ 'श्रावकाचार' ग्रंथ का विवरण लिया गया है जो अमित गति रचित मूल संस्कृत ग्रंथ का अनुवाद है। इसमें जैन धर्मानुसार आचार विचार का उपदेश किया गया है। रचना काल सं० १९११ (१८५५ ई०) है। लिपिकाल का उल्लेख नहीं। रचयिता गवालियर निवासी ओसवाल जैन थे। इन्होंने प्रमाण परीक्षा, नेमिनाथ पुराण तथा ज्ञान सूर्योदय नाटक आदि कई ग्रंथ रचे हैं। खोज में ये नवीन हैं।

३४ भगवान—इनके बनाये 'गुरु गैवीग्रंथ' तथा 'तमाँचा' नामक दो ग्रंथ शोध में मिले हैं। पहले ग्रंथ में 'हनुमान की विनय और दूसरे में उनकी महत्ता का वर्णन है। रचयिता अजबदास जी के शिष्य थे। अन्य परिचय नहीं दिया है। ग्रंथों का रचनाकाल और लिपिकाल अज्ञात है।

३५ भगवानदास—इनकी रची गीता की गद्यात्मक टीका "गीतावार्तिक" नाम से मिली है। इसकी प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १९१३-१८५६ ई० है। ग्रंथ शोध में पहले प्राप्त हो चुका है, देखिये विवरणिका (१९००, सं० ६९)। उसके अनुसार ग्रंथ का रचनाकाल सं० १७५६ (१६९९ ई०) है।

३६ भगवानदास निरंजनी—अब की बार इनके रचे 'कार्तिक महात्म्य' की ३ प्रतियों और 'अमृत धारा' की एक प्रति के विवरण लिये गये हैं। पहला ग्रंथ सं० १७४२ (१६८५ ई०) का और दूसरा, संवत् १७२८ (१६७१ ई०) का रचा हुआ है। पहले की एक प्रति सं० १९०६ (१८४९ ई०) में और दूसरी सं० १९२६ (१८६९ ई०) में लिखी गयी। तीसरी प्रति में लिपिकाल नहीं दिया है। दूसरे ग्रंथ की प्रति में भी लिखने का समय नहीं है। यह ग्रंथ पहले मिल चुका है, देखिये विवरणिका (१९०६–८ सं० १३६)।

३७ भगवानदास सनाढ्य—इनके रचे हुए "शीघ्रबोध की टीका" की दो प्रतियाँ मिली हैं जिनमें से केवल एक में लि० का० सं० १८८५ (१८२८ ई०) दिया है। रचनाकाल अज्ञात है। परंतु उक्त लिपिकाल वाली प्रति स्वयं टीकाकार की लेखनी से लिखी गयी है इसलिये रचनाकाल भी प्रायः लिपिकाल के लगभग ही होगा। रचयिता बासुदेव सनाढ्य (इस विवरणिका के सं० ३०) के भाई थे और कई विषयों के अच्छे पण्डित थे। जाति के गुधैनिया सनाढ्य ब्राह्मण तथा बाह (आगरा) के निवासी थे। इनकी शैली से

ज्ञात होता है कि इनके भंडार में सुरक्षित वे टीका ग्रंथ जिनमें रचयिताओं का नाम नहीं, अधिकांश इनकी रचनाएँ हैं, (दे० टिप्प०, सं० ३०) । ये खोज में नवीन हैं ।

३८. विप्रभगवती दास—इनकी रची हुई 'पोथी नासकेतु' मिली है जिसमें रचनाकाल सं० १६८८ (१६३१ ई०) और लि० का० सं० १९१६ (१८५९ ई०) दिये हुए हैं । खोज में ये नवीन हैं । रचनाकाल का दोहा इस प्रकार है:—

संवत् सोलह सै अट्टासी । जेठ मास द्वितीया परकासी ॥
शुक्ल पक्ष औ सोम क वारा । मृगसिर नखत कीन्ह उपचारा ।

३९ भारामल्ल—इनके बनाये 'दर्शन कथा' और 'मुक्तावली वृत्त कथा' दो ग्रंथ मिले हैं । 'मुक्तावली वृत्तकथा ग्रंथ' सं० १८३२ (१७७५ ई०) का रचा और सं० १८५५ (१७९८ ई०) का लिखा है । 'दर्शन कथा' का रचनाकाल नहीं दिया है, पर वह सं० १९३६ (१८७९ ई०) का लिखा हुआ है । दोनों ही ग्रंथ जैन धर्म विषयक हैं । रचयिता 'निशि भोजन कथा' और 'शीलकथा' नामक दो ग्रंथों के साथ पहले विवरण में आ चुके हैं, देखिये विवरणिका (१९२३-२५, सं० ५१) । ये फर्रुखाबाद के रहनेवाले थे ।

४० भट्टाचार्य—इनके रचे 'जुगलसत' और 'वाणी' इस बार विवरण में आये हैं । इनकी प्रस्तुत प्रति में समय सं० १९११ दिया है । परंतु ये रचनाएँ पूर्व विवरणिकाओं में आ चुकी हैं, देखिए विवरणिकाएँ (१९००, सं ३६; ११०६-८, सं० २३७; सं १९०९–११, सं० २९९) जिनमें सब से प्राचीन प्रति का लिपिकाल, संवत् १८४३ (१७८६ ई०) है । ऐसी दशा में उपरोक्त समय रचनाकाल न होकर लिपिकाल विदित होता है ।

४१ भाऊ कवि—इनकी रची एक रचना 'आदित्य कथा' नाम से मिली है । जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिये हैं । यह पहले मिल चुकी है, देखिये विवरणिकाएँ (१९००, सं० ११४) जिसमें इसका र० का० सं० १६७८ (१६२१ ई०) दिया है ।

४२ भवानी प्रसाद्—इनका रचा सटीक गोपाल सहस्रनाम ग्रंथ इस शोध में प्राप्त हुआ है । ये शोध में नवीन हैं । ग्रंथ द्वारा इनके और ग्रंथ के विषय में कुछ भी विदित नहीं होता । परंतु पूछ ताछ करने से पता चला कि ये जाति के ब्राह्मण और नौपुरा (सदर तहसील आगरा) के निवासी थे । प्रस्तुत ग्रंथ इन्होंने संवत् १९२१ में रचा ।

४६ भेदीराम—इनके बनाये दो ग्रंथों "चक्रकेवली" और "सालिंगा सदा-वृक्ष" के विवरण लिये गये हैं । रचनाकाल दोनों ग्रंथों के अज्ञात हैं । पहला ग्रंथ सं० १९१६ (१८५९ ई०) में और दूसरा सं० १९३० (१८७३ ई०) में लिखा गया । रच-यिता आगरा के रहनेवाले थे । अन्य वृत्त अनुपलब्ध है । पहला ग्रंथ ज्योतिष विषय से संबंध रखता है और दूसरे में एक रोचक कहानी है जो ग्रामों में अधिक प्रचलित है ।

४४ भिखारी दास—ट्योंगा (प्रतापगढ़, अवध) निवासी ये हिंदी के बहुत प्रसिद्ध कवि हैं । पिछली कई विवरणिकाओं में इनका उल्लेख हो चुका है, देखिये विवर-णिकाएँ (१९२०–२२, सं० १७; १९२३–२५, सं० ५५) । इसबार इनका रचा सुप्रसिद्ध

रीतिग्रंथ "काव्य निर्णय" मिला है जिसकी प्रस्तुत प्रति में र० का० सं० १८०३ (१७४६ ई०) और लि० का० सं० १८६६ (१८४२ ई०) दिये हैं ।

४५ भीषजन—इनका बनाया 'सर्वज्ञ वापनी' नामक ग्रंथ इस शोध में प्राप्त हुआ है जिसका र० का० सं० १६८३ (१६२६ ई०) और लि० का० सं० १८९६ (१८३९ ई०) है । ग्रंथ का र० का० इस प्रकार है:—

"संवत् सोलह सै वर्ष जब हुते तियासी ।
पौषमास पष सेत हेत दिन पूरन मासी ॥
सुभ नक्षत्र गुन कह्यो धरयो अक्षर जो आरिज ।
कथ्यौ भीषजन साति जाति द्विज कुल आचारज ॥"

इसमें संसार की अस्थिरता और ईश्वर की सत्ता का विवेचन किया गया है । रचयिता का पता प्रथम बार लगा है ।

४६ भीष्म—इनके बनाये भागवत के तीन स्कन्ध (प्रथम और दशम) के विवरण लिये गये हैं जिनमें से पहले की दो और दशम की चार प्रतियां हैं । रचनाकाल किसी प्रति में नहीं दिया है । लिपिकाल प्रथम स्कन्ध की एक प्रति में सं० १८९२ (१८३५ ई०) और दूसरी में सं० १९०० (१८४३ ई०) है । दशम की एक प्रति सं० १८९५ (१९३८ ई०) की दूसरी संवत् १८९८ (१८४१ ई०) की और तीसरी सं० १९१८ (१८६१ ई०) की लिखी है । चौथी में लि० का० नहीं दिया हैं । ये ग्रंथ पिछली एक विवरणिका में आ चुके हैं, देखिये विवरणिका (१९१७-१९, सं० २५) । 'विनोद' में इनका र० का० सं० १७२० (१६५३ ई०) लिखा है ।

४७ भोलानाथ—प्रस्तुत खोज में इनके बनाये ९ ग्रंथों का पता चला है—(१) शिव पार्वती संवाद, (२) जोगीलीला लि० का० सं० १९३२ (१८७५ ई०), (३), राधाकृष्ण लीला लि० का० सं० १९३५ (१८७८ ई०), (४) बारहमासा बिरह (लि० का० सं० १९३२ = १८७५ ई०), (५) पथरीगढ़ की लड़ाई (र० का० सन् १८५० ई० लि० का० १८५६ ई०) । (६) बारहमासा कृष्ण जी (लि० का० सं० १९३२ = १८७५ ई०), (७) शिवस्तुति (लि० का० १९३२ = १८७५ ई०), (८) ख्यालसंग्रह (लि० का० सं० १९३२ = १८७५ ई०) और (९) बारहमासा लावनी (लि० का० सं० १९३६ = १८७९ ई०) । ऊपर की सूची से पता चलता है कि केवल संख्या ५ में ही रचनाकाल दिया है जो सं० १९०७ है । अतएव इसी संवत् के इधर उधर इनकी सब रचनाएं होंगी । रचयिता जहानगंज फतेहगढ़ (फर्रुखाबाद) के निवासी और जाति के श्रीवास्तव कायस्थ थे । गणेशप्रसाद फर्रुखाबादी के समकालीन थे । खोज में ये नवीन हैं ।

४८ भूधरदास—इनका रचा 'सुदामा चरित्र' प्राप्त हुआ है जिसकी प्रस्तुत प्रति में र० का० तो नहीं दिया है पर लिपिकाल सं० १८३९ = १७८२ ई० है । रचयिता का अन्य कोई विवरण नहीं मिलता । ग्रंथ की प्राप्त प्रति बहुत अशुद्ध लिखी है ।

४९ भूधरदास—इनके बनाये 'भूधर विलास' 'चर्चासमाधान' तथा 'पार्श्व पुराण' नामक तीन ग्रंथ प्राप्त हुए हैं। इनमें से केवल पार्श्व पुराण में ही रचनाकाल दिया है जो सं० १७८९ वि० (१७३२ ई०) है, परंतु इसकी प्रति में लिपिकाल नहीं है। शेष दो ग्रंथों में से पहले ग्रंथ की प्रति में लिपिकाल सं० १९३४ (१८७७ ई०) और दूसरे ग्रंथ की प्रति में सं० १९०४ (१८४७ ई०) दिये हैं। रचयिता 'जैन शतक' ग्रंथ के साथ पिछली खोज विवरणिका (१९२३–२५, सं० ५८) में उल्लिखित है।

५० भुल्लन शेख—इन्होंने "महाराज भरतपुर और लाट साहब का मिलाप' नाम से एक छोटा ग्रंथ सं० १८७६ वि० (१८१९ ई०) में ब्रजभाषा मिश्रित खड़ी बोली में लिखा। उस समय महाराजा रणधीरसिंह भरतपुर की गद्दी पर थे। इसमें सन्देह नहीं कि रचना अपने ढंग की नवीन और एकाकी है। इसमें नगर की सजावट और प्रकाश का बड़ा भव्य वर्णन किया गया है।

५१ भूप या भूपति—इनके रचे 'वेद स्तुति' नाम के एक छोटे से ग्रंथ का पता लगा है। इसकी दो प्रतियाँ मिली हैं, पर रचनाकाल किसी में नहीं दिया है। लिपिकाल केवल एक प्रति में सं० १९३१ (१८७४ ई०) है। रचयिता के विषय में अधिक कुछ नहीं ज्ञात होता; परंतु ये इटावा वाले भूपति कवि ही हैं जो संवत् १७४४ (१६८७ ई० में वर्तमान थे, देखिये विवरणिकाएँ (१९२३–२५, सं० ११५ आदि)। दोनों की भाषा और शैली समान है।

५२ बिहारनदास—इनकी 'बिहारन दास की वाणी' नाम से एक रचना का विवरण लिया गया है जिसकी प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिये हैं। ये इस ग्रंथ के साथ पहले मिल चुके हैं। देखिये विवरणिकाएँ (१९०५, सं० ६१; १९१७–१९ सं० ३१; १९२३–२५, सं० ६४) इनका रचनाकाल संवत् १६३० (सन् १५७३) के लगभग है।

५३ महाकवि बिहारीदास—इनकी प्रसिद्ध रचना 'सतसई' की तीन प्रतियाँ इस खोज में प्राप्त हुई हैं, पर ये तीनों ही खंडित हैं। रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल केवल एक प्रति में है जो संवत् १७६२ (१७०५ ई०) है। इनका उल्लेख पिछली कई विवरणिकाओं में हो चुका है; देखिये विवरणिकाएँ (१९२०–२२ सं० २०; २३–२५, सं० ६२) आदि। ये नवरत्नों में गिने जाते हैं।

५४ बिहारीलाल सनाढ्य—वैद्यक विषयक इनकी एक रचना 'रस प्रक्रिया' नाम से मिली है। इसकी प्रस्तुत प्रति में र० का० नहीं दिया है। लिपिकाल सं० १८०२ है। रचयिता बाह (आगरा) के रहनेवाले गुधेनिया अल्ल के सनाढ्य ब्राह्मण थे। हिन्दी संस्कृत के ये उद्भट विद्वान रहे।

ये इस विवरणिका में आये वासुदेव सनाढ्य और भगवानदास सनाढ्य के समकालीन थे। इनके ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति का लिपिकाल अशुद्ध जान पड़ता है, क्योंकि इनकी विधवा पत्नी अभी तक जीवित हैं। अतः यह सं० १९०२ होना चाहिये।

५५ बोधीदास—इनके रचे हुए 'भक्ति विवेक' नामक ग्रंथ की दो प्रतियाँ इस खोज में प्राप्त हुई हैं जिनमें से एक संवत् १९३० (१८७३ ई०) की और दूसरी संवत् १९३६ (१८७९ ई०) की लिखी हुई हैं। रचनाकाल किसी में नहीं दिया है। रचयिता के विषय में अधिक कुछ ज्ञात नहीं होता। ये मिश्र बन्धु विनोद के सं० $\frac{२४१४}{२}$ पर उल्लिखित हैं उसमें खोज की चतुर्थ त्रैवार्षिक रिपोर्ट का उल्लेख दिया गया है, पर उसमें न तो इनका ही उल्लेख है और न इनके ग्रंथ का।

५६ ब्रह्मदास—इनके नाम से 'मंत्रों' के एक ग्रंथ का पता लगा है। जिसमें न तो रचनाकाल और लिपिकाल का ही ब्योरा है और न कवि के विषय में ही कुछ लिखा गया है। केवल अन्तिम मंत्र में 'सिकन्दरा वाला' शब्द आया है जिससे पता चलता बै कि ये सिकन्दरा (आगरा) के निवासी थे। शोध में ये नवीन हैं।

५७ ब्रजवासी दास—इनके रचे प्रख्यात ग्रंथ 'ब्रज विलास' की तीन प्रतियाँ और उसकी चार लीलाओं काली-लीला, माखन-चोरी लीला, अघासुर वध तथा मान चरित्र लीला की एक एक प्रति प्राप्त हुई हैं। केवल एक प्रति में र० का० सं० १८०६ (१७५२ ई०) दिया है। इसका लिपिकाल सं० १८९४ (१८३७ ई०) है।

'मान चरित्र लीला' की प्रति सं० १९०१ (१८४४ ई०) की और शेष संवत् १९१७ (१८६० ई०) की लिखी हैं। रचयिता ग्रंथ के साथ पिछली खोज विवरणिकाओं में उल्लिखित हैं; देखिये विवरणिकाएँ (१९२०–२२, सं० २२; १९२३–२५, सं० ६९ आदि)।

५८ वृन्दावनदास—इनके दो ग्रंथ 'मंगल विनोदवेली' तथा 'गुरु महिमा—प्रसाद वेली मिले हैं। दोनों ग्रंथ संवत् १८२२ (१७६५ ई०) के रचे हुए हैं। पहले का लिपिकाल नहीं दिया है। दूसरा सं० १८९७ (सन् १८४०) का लिखा हुआ है। रचयिता कई ग्रंथों के साथ पहले विवरण में आ चुके हैं, देखिये विवरणिका (१९०६–८, सं० २५०)। ये संवत् १८०३ (१७४६ ई०) के लगभग वर्तमान थे।

५९ वृन्दावन दास—इनके बनाए हुए 'रामायणी ककहरा' का विवरण लिया गया है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल नहीं दिया है। यह १९०९ (१८६२ ई०) की लिखी हुई है। इसमें संक्षेप में रामायण का वर्णन है। रचयिता का कोई वृत्त नहीं मिलता, परंतु ये पूर्व रचयिता से अभिन्न विदित होते हैं।

६० वृन्दावनदास—जैसा कि इनके गद्य से प्रकट होता है—ये आधुनिक समय के रचयिता विदित होते हैं। इनके बनाए हुए 'विहार वृंदावन' नामक ग्रंथ का विवरण लिया गया है जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल का कोई ब्योरा नहीं पाया जाता। ये आगरा के निवासी थे। ग्रंथ में इन्होंने वेदान्त का सार संक्षेप में किंतु बड़े आकर्षक ढंग से समझाया है।

६१ बुधजनदास—यह जैन कवि पहले अपने रचे 'योगीन्द्रसार' नामक ग्रंथ के साथ विवृत्त है, देखिये विवरणिका (१९००, सं० ११८)। यह सं० १८९५ (१८३८ ई०) के लभगभ वर्तमान थे। प्रस्तुत शोध में इनका रचा 'देवानुराग शतक' मिला

है। रचनाकाल इनका अज्ञात है। लि० का० सं० १८९७ (१८४० ई०) है। इसमें देव-स्तुतियां, जैनधर्म सिद्धांतानुसार वर्णित हैं।

६२ चक्रपाणि—"क्षमा षोड़शी" के रचयिता के रूप में इनका पता खोज में पहली बार लगा है। वेदाचार्य्य जी ने सोलह श्लोकों द्वारा रंगाचार्य्य जी की स्तुति की है जिनकी कान्यकुब्ज श्रीसुखाय मिश्र ने अन्वय सहित संस्कृत व्याख्या की। इसी व्याख्या की प्रस्तुत रचयिता ने भाषा टीका की है। व्याख्या विस्तृत और सुबोध है। अन्त में एक श्लोक द्वारा टीका का रचनाकाल संवत् १८८२ (१८२५ ई०) दिया है जो इस प्रकार है:—

> दग्दंति दंति विधु संमित विक्रमार्कें, भूपेंद्र हायन वरे द्विप वेरिगेर्के।
> मासेनभस्य मलपक्ष रमेशतिथ्यां, श्री चक्रपाणि बुधराट् विदधं सुटीकाम्॥

विनोद में संख्या १४२८ पर एक लेख चक्रपाणि मैथिल के नाम से आता है (डा० ग्रियर्सन इत्यादि इसका उल्लेख नहीं करते)। परन्तु प्रस्तुत ग्रंथकार उससे भिन्न है।

६३ चंद्रकवि—इनका बनाया 'कवित्त रामायण' नामक ग्रंथ शोध में मिला है। ग्रंथ का र० का० नहीं दिया है। इसको सं० १८६० (१८०३ ई०) में किन्हीं ठाकुर शाम (श्याम ?) ने नन्हा नागर के पढ़ने के लिये लिखा। उसका कथन है कि उसने ग्रंथकार के मुख के शब्द स्वयं अपने कानों से सुनकर लिखे हैं:—

> "ये चरित्र रघुनाथ के, वरनैं हैं कवि चन्द।
> नागर नन्हा पठन को, ठाकुर शाम लिपंत॥
> मुख ते जु वाहर चन्द के, जैसे निकसे वर्ण।
> तेसे ही शामा लिपो, सुन्यो जे अपने कर्ण॥"

इससे स्पष्ट है कि ग्रंथकार उक्त संवत् में जब यह ग्रंथ लिपिबद्ध हुआ वर्तमान था। संभव है ग्रंथकार पिछली खोज विवरणिका (१९२०-२२, सं० २६) पर उल्लिखित चंद्रदास हैं जिन्होंने सातोंकाण्ड रामायण की रचना की। उनका समय भी इसकी पुष्टि करता है। इस नाम का दूसरा रचयिता खोज विवरणिका (१९१७-१९, सं० ३६) पर भी उल्लिखित है।

६४ चन्द्रमणि—ये ओड़छा के महाराज उदोत सिंह सं०१७८९(सन् १७३५ ई०) और पृथ्वीसिंह (१७३५ ई०—५२ ई०) के आश्रित थे। इनके रचे दो ग्रंथ 'राजभूषण' और 'हितोपदेश' पहले खोज में मिल चुके हैं, देखिये विवरणिका (१९०६–८, सं० ६२ ए, बी)। इस बार इनका 'महूर्तदर्पण' नामक ज्योतिप-ग्रंथ प्राप्त हुआ है जो इस नाम के मूल संस्कृत ग्रंथ का पद्यानुवाद है। इसमें रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल सं० १८३९ (१७८२ ई०) है। इस ग्रंथ में महाराज उदोतसिंह का उल्लेख किया गया है।

६५ चरणदास—ये चरणदासी संप्रदाय के प्रवर्त्तक और प्रसिद्ध संत थे। प्रायः सभी गत विवरणिकाओं में किसी न किसी ग्रंथ के साथ इनका उल्लेख पाया जाता है,

देखिये विवरणिका (१९२०–२२, सं० ३९) इस बार इनके १४ ग्रंथों की २६ प्रतियों के विवरण लिये गये हैं:—

क्र० सं०	नाम ग्रंथ	प्रतियां	सबसे प्राचीन प्रति का लिपिकाल
(१)	बाललीला	१	×
(२)	ब्रजचरित्र	१	सं० १८८५ (१८२८ ई०)
(३)	धर्म जहाज	१	,, १९०१ (१८३४ ई०)
(४)	जोग (योग)	१	× ×

रचयिता का विस्तृत विवेचन भूमिका भाग संख्या ७ में किया गया है।

६६ चतुरदास—इनका "एकादश कथा" नाम से भागवत एकादश स्कन्ध का पद्यानुवाद मिला है। इसकी प्रस्तुत प्रति में ग्रंथ का रचनाकाल ("संवत् सोरह सै नवा जेठ सुकुल षष्ठी कुजदिवा") संवत् १६०९ (१५५२ ई०) दिया है जो अशुद्ध है। शुद्ध दोहा यों है—"संवत सोरह सै बावनवा, जेठ सुकुल षष्ठी कुज दिवा–", देखिये विवरणिका (१९२३–२५, सं० ७६)। इस ग्रंथ की प्रस्तुत प्रतिलिपि संवत् १८७४ (१८१७ ई०) में हुई।

६७ छन्दुराम—इनकी 'लग्न सुंदरी' नामक ज्योतिष ग्रंथ की तीन प्रतियाँ मिली हैं। जिनमें से एक में लि० का० नहीं है। अन्य दो में क्रमशः संवत् १८९३ (१८३६ ई०) और सं० १९३१ (१८७४ ई०) हैं। रचनाकाल सं० १८७० (१८१३ ई०) है। यह ग्रंथ पहले मिल चुका है, देखिये खोज विवरणिका (१९२३-२५, सं० ७८)।

६८ छत्रकवि—इनकी रची 'विजय मुक्तावली' की पांच प्रतियों और 'सुधासार' की एक प्रति के विवरण लिये गये हैं। पहला ग्रंथ पिछली कई विवरणिकाओं में आ चुका है। इसका रचना काल सं० १८५७ (१८०० ई०) है और इसकी प्रस्तुत प्रतियों में से एक में लि० का० सं० १८५७ = १७९२ ई० है। दूसरा ग्रंथ "सुधासार" नया मिला है और यह श्रीमद्भागवत के दशमस्कन्ध का पद्यानुवाद है। इसका र० का० इस प्रकार दिया है—

"संवतु सत्रह सै वरष, औरु छिहत्तरि तत्र।
चैत्र मास सित अष्टमी, ग्रंथ कियो कवि छत्र॥

अर्थात् संवत् १७७६ (१७१९ ई०) लि० का० सं० १८५३ (१७९६ ई०) है। इसकी प्रतिलिपि किन्हीं 'मोहनलाल मिश्र' ने की है। रचयिता का विशेष विवेचन भूमिका भाग संख्या ८ में किया गया है।

६९ चेतनचन्द—शालिहोत्र विषय पर संवत् १६१६ (१५५९ ई०) का रचा हुआ इनका "अश्वविनोद" मिला है जिसकी प्रस्तुत प्रति में लिपिकाल सं० १८५० (१७९३ ई०) दिया है। यह पहले शोध में मिल चुका है, देखिये खोज विवरणिकाएं (१९०९-११, सं० ७७)। किन्तु इसका रचनाकाल अभी तक विवादास्पद है। उक्त विवरणिकाओं में उल्लिखित रचनाकाल से प्रस्तुत प्रति में दिया हुआ रचनाकाल भिन्न है जो इस प्रकार है:—

"संवत् सोरह से अधिक, चार चौगुने जानि ।
ग्रंथ कह्यो कुशलेशहित, रक्षक श्रीभगवान ॥"

कवि ने अपना परिचय इस प्रकार दिया है:—

"घुरहा पाड़े गोपीनाथ । कानकुविज में भये सनाथ ॥
जिनके सुत चारौ अधिकाइ । इंद्रजीत, लछिमन, जदुराय ।
चौथौ तारा चंद कहायौ । जहि यह अश्व विनोद बनायो ॥

इससे ज्ञात होता है कि इनका वास्तविक नाम ताराचंद था । पिता का नाम गोपीनाथ और तीन बड़े भाइयों का नाम क्रमशः इन्द्रजीत, लछिमन और जदुराय था । जाति के कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे । आश्रयदाता का नाम कुशल सिंह था ।

७० छोटेलाल—इनके रचे 'व्यंजन प्रकार' या 'व्यंजन-प्रकाश' की तीन प्रतियाँ शोध में प्राप्त हुई हैं । रचना-काल संवत् १९२३ (१८६६ ई०) है:—

राम३ नेत्र२ ग्रह९ इंदु१ मित, संवत् विक्रम जानि ।
चैत्र मास सित सप्तमी, सुन्दर ग्रंथ बषानि ॥

उक्त दोनों प्रतियों का लिपिकाल एक ही संवत् १९३६ (१८७९ ई०) है । ग्रंथ के आदि में लिखा है—"अथ व्यंजन प्रकार छोटेलाल विट्ठलनाथ के पुजारी अवदीच ब्राह्मण जयशंकर के पुत्रकृत लिख्यते ।"

इससे रचयिता की जाति आदि का आभास मिलता है । खोज में ये नये हैं ।

७१ चिन्तामणि—इनके रचे दो ग्रंथ 'गीतगोविन्द का पद्यानुवाद' और "संगीत चिन्तामणि" मिले हैं । पहले ग्रंथ का विवरण गत विवरणिका (१९२०-२२, सं० ४१) में आ चुका है ।

दूसरा ग्रंथ नया मिला है । रचना-काल दोनों ग्रंथों की प्राप्त प्रतियों में नहीं दिया है, परन्तु पहले ग्रंथ का समय उक्त विवरणिका के अनुसार सं० १८१६ (सन् १७५९ ई०) है । लिपिकाल क्रमशः संवत् १९१६ (१८५९ ई०) और सं० १८९६ (१८३९ ई०) हैं ।

७२ चिरञ्जीव कवि—इनका रचा हुआ 'वर्णाकर पिंगल' नामक ग्रंथ का विवरण लिया गया है जिसकी प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं पाया जाता । शोध में ये नवीन हैं । 'मिश्र बन्धु विनोद' के संख्या ५६७ पर इस नाम का एक कवि आया तो है, पर उसमें उसके किसी ग्रंथ का उल्लेख नहीं । उसमें उसका समय सं० १७५४ (१६९७ ई०) से पूर्व माना है । सूदन के 'सुजान चरित्र' में उनका नाम लिखा देखकर ही ऐसा किया गया जान पड़ता है । इसी नाम का एक दूसरा बैसवाड़े का कवि जो महाभारत का अनुवादक है विनोद के संख्या १२०१ (रचनाकाल १८७० वि०) और ग्रियर्सन के माडर्न वर्नाक्यूलर आफ हिंदुस्तान के संख्या ६०७ पर अंकित है । परंतु प्रस्तुत रचयिता इससे भिन्न है या अभिन्न, निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता ।

७३ दादू—ये दादूपंथ के प्रवर्तक सुप्रसिद्ध सन्त हैं जिनका उल्लेख गत कई खोज विवरणिकाओं में हो चुका है, देखिये विवरणिकाएँ (१९०१, सं० ३७; १९१७-१९,

सं० ५२; २३–२५, सं० ८१)। इस बार इनकी 'बानी' का एक और हस्तलेख प्राप्त हुआ है। उसमें रचनाकाल नहीं दिया गया है, पर लिपिकाल उसका सं० १८१० (१७५३ ई०) है।

७४ दामोदर—इनकी बनाई हुई 'नेम बत्तीसी' का जिसका र० का० सं० १६८७ (१६३० ई०) है। विवरण लिया गया है। यह पहले मिल चुकी है, देखिये विवरणिका (१९१२–१६, सं० ४६ डी) इसकी प्रस्तुत प्रति में लिपिकाल का उल्लेख नहीं है।

७५ दामोदर दास—इनकी बनाई 'मोहविवेक' नामक पोथी की दो प्रतियाँ मिली हैं जिनमें से एक प्रति में लिपिकाल संवत् १८६१ (सन् १८०४) है। इस नाम के कुछ रचयिता 'मिश्र वन्धु विनोद' और 'माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान' (ग्रियर्सन) में भी आये हैं पर नहीं कहा जा सकता कि प्रस्तुत रचयिता उनमें से कोई एक है या नहीं।

७६ दामोदर—ये खोज की गत विवरणिकाओं में आये इस नामके सभी रचयिताओं से पृथक जान पड़ते हैं। प्रस्तुत शोध में उनका एक "वैद्यक" ग्रंथ मिला है जो मूल संस्कृत ग्रंथ शार्ङ्गधर संहिता का अनुवाद है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं। यह अधूरा प्राप्त हुआ है जिससे रचयिता के विषय में कुछ भी पता नहीं चलता।

७७ दरियाव दौवा—इनकी एक रचना 'जनक पचीसी' के विवरण लिये गये हैं। यह पहले भी मिल चुकी है, देखिये विवरणिका (१९०६–८, सं० ७२ ए)। रचयिता बुंदेलखंडी जान पड़ते हैं, क्योंकि इनकी प्रस्तुत रचना में बुंदेलखंडी शब्दों का प्रयोग काफी हुआ है। रचनाकाल सं० १८८१ (१८२४ ई०) है और लिपिकाल सं० १९५० (१८९३ ई०)। ये दौवा जाति (बुंदेलखंड में एक जाति जो बुंदेल ठाकुरों और अहीरों के मिश्रण से बनी है) के थे और शाहनगर में निवास करते थे। इस ग्रंथ का रचनाकाल संवत् १८८१ (१८२४ ई०) है और लिपिकाल सं० १८५० (सन् १८९३)।

७८ दरियावसिंह—इनके रचे दो ग्रंथों—वैद्यक विनोद और कोकशास्त्र के विवरण लिये गये हैं। पहला ग्रंथ सं० १८९० (१८३३ ई०) में रचा गया। इसकी दो प्रतियाँ मिली हैं जिनमें से एक संवत् १९१७ (१८६० ई०) की और दूसरी सं० १९१० (१८५३ ई०) की लिखी हुई हैं। दूसरे ग्रंथ की प्रति में रचनाकाल–लिपिकाल नहीं दिये हैं। रचयिता जाति के कुरमी और बीबीपुर (जिला, कानपुर) के निवासी थे।

७९ दत्तराम या रामदत्त माथुर—इनके बनाये 'अजीर्ण मंजरी' एवम् 'नाड़ी परीक्षा' नामक दो ग्रंथ इस शोध में प्राप्त हुए हैं। पहला ग्रंथ सं० १९२१ (१८६४ ई०) का बना और संवत् १९३० (१८७३ ई०) का लिखा हुआ है। दूसरे का रचनाकाल सं० १९३७ (१८८० ई०) और लि० का० सं० १९४८ = १८९१ ई० हैं। संभवतः रचयिता आगरे के रहनेवाले थे। खोज में ये नये हैं।

८० देवदत्त (देव)—ये हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि हैं और खोज की अधिकांश विवरणिकाओं में उल्लिखित हैं, देखिये विवरणिकाएँ (१९२०–२२, सं० ३९, १९२३–२५, सं० ८९ आदि) । इस बार इनके चार ग्रंथों की सात प्रतियाँ मिली हैं जिनका विवरण निम्न-लिखित हैः—

क्र० सं०	नाम ग्रंथ	प्रतियाँ	सबसे प्राचीन प्रति का लि०का०
(१)	अष्टयाम	४	सं० १८८३ (१८२६ ई०) ।
(२)	भाव विलास	१	सं० १९१२ (१८५५ ई०) ।
(३)	देवमाया प्रपंचनाटक	१	सं० १८८३ (१८२६ ई०) ।
(४)	श्रृंगार विलासिनी	१	×

उक्त चारों ग्रंथो में अंतिम ग्रंथ 'श्रृंगार विलासिनी' शोध में नवीन प्राप्त हुआ है । हिन्दी संसार में इसकी ख्याति नहीं है । इसके लिए देखिये भूमिका भाग में संख्या ९ ।

८१ देवकीनंदन—ये मकरन्द नगर (फर्रुखाबाद) के निवासी और अपने तीन ग्रंथों के साथ क्रम से खोज विवरणिका (१९०१, सं० ५७; १९०९–११, सं० ६५ और १९१७–१९, सं० ६५ बी) पर उल्लिखित हैं।

इसबार इनकी 'ससुरारि-पचीसी' की दो प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं। रचना खोज में पहली बार मिली है । इसका रचनाकाल संवत् १८३२ (१७७५ ई०) दिया है । लिपिकाल क्रमशः सं० १८६९ (१८१२ ई०) और संवत् १८७९ (१८२२ ई०) हैं ।

८२ देवीदास—इनके बनाये 'लीला' तथा 'विनोद मंगल' नामक दो ग्रंथ प्राप्त हुए हैं । पहले में रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं । दूसरे में रचनाकाल सं० १८३८ (१७८१ ई०) और लिपिकाल संवत् १८५० (१७९३ ई०) दिए हैं ।

रचयिता सत्यनामी संप्रदाय के संस्थापक स्वा० जगजीवन दास (कोटवां, बाराबंकी) के शिष्य थे । विशेष के लिये देखिये खोज विवरणिकाएँ (१९२०–२२, सं० ४०; २३–२५, सं० ९५) ।

८३ देबीदास—प्रस्तुत खोज में इनका बनाया 'बाल चरित्र' ग्रंथ प्राप्त हुआ है जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं । पिछली खोज विवरणिका (१९०९–११, सं० ६८) पर इनका उल्लेख हो चुका है जिसमें इन्हें सतनामी संप्रदाय के सुप्रसिद्ध देबीदास से भिन्न माना है । परंतु इनकी रचना शैली संतों की रचना शैली की तरह ही है । अतः ये उक्त सतनामी देबीदास ही, जिनका उल्लेख प्रस्तुत विवरणिका में इससे पूर्व हो चुका है, विदित होते हैं ।

८४ देवीप्रसाद—इनकी चार रचनाएँ 'बारहमासी', 'राग फुलवारी', 'राग विलास' और 'संगीतसार' मिली हैं जो क्रमशः संवत् १९०५ (१८४८ ई०), सं० १९०२ (१८४५ ई०), सं० १८९६ (१८३९ ई०) तथा सं० १९०० (१८४३ ई०) की रची हुई हैं । इनकी प्रस्तुत प्रतियों में लिपिकाल क्रमशः सं० १९१२ (१८५५ ई०), संवत्

१९३२ (१८७५ ई०), संवत् १९१० (१८५३ ई०) और संवत् १९५२ (१८९५ ई०) दिये हैं। रचयिता बेला (इटावा, उत्तर प्रदेश) के निवासी और बैजनाथ वैश्य के पुत्र थे। शोध में ये नवीन हैं।

८५ देवीसहाय—इनका रचा 'बाबा देवी सहाय कृति' नाम से एक ग्रंथ प्राप्त हुआ है जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिये हैं। ये खोज विवरणिका (१९०९–११, सं० ६९) पर उल्लिखित हैं। ग्रंथ में शिव विषयक भजनों का संग्रह है। ये शिव के भक्त थे। कहा जाता है कि एकबार ये छः वर्षों तक लगातार अंधे रहे, परंतु पीछे शिवपूजन करते समय इनकी आँखें अकस्मात् खुल गईं। ये बाजपेयी ब्राह्मण थे और इनके पिता का नाम मक्खन लाल था।

८६ देवकीसिंह—ये चन्देरी के राजा के आश्रित थे और सं० १७३३ (१६७६ ई०) के लगभग वर्तमान थे। पिछली खोज विवरणिका (१९०६–८, सं० २८) में इनका उल्लेख हो चुका है। इस बार इनकी 'बारहमासी' की एक प्रति मिली है। उसमें रचनाकाल तो नहीं दिया है, पर लिपिकाल दिया है जो सं० १९१९ (१८६२ ई०) है।

८७ धीरजराम—इनका बनाया 'चिकित्सा सार' नाम का ग्रंथ पहले पहल प्राप्त हुआ है। इसका र० का० सं० १८१० (१७५३ ई०) और लि० का० सं० १८६८ (१८११ ई०) हैं। रचयिता अपने को जाति का सारस्वत ब्राह्मण तथा कृपाराम द्विज का पुत्र बतलाता है।

८८ ध्रुवदास—इनकी तीन रचनाएँ 'वाणी', 'ब्यालीस लीला' और 'वृंदावन शत' मिली हैं जिनमें रचनाकाल नहीं दिये हैं। प्रथम दो ग्रंथों की प्रतियाँ क्रमशः सं० १८१० (१७५३ ई०) और सं० १८३६ (१७७९ ई०) की लिखी हैं। तीसरे ग्रंथ की ६ प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं, जिनमें से प्राचीन प्रति सं० १७९० (१७३३ ई०) की लिखी है। ये सभी ग्रंथ केवल नाम और कथाक्रम के भेद को छोड़कर एक ही विदित होते हैं और कई बार पिछली खोज विवरणिकाओं में आ चुके हैं, देखिये विवरणिका (१९१७–१९, सं० ५१ आदि)।

८९ ध्यानदास—इनका बनाया 'सत हरिश्चंद्र कथा नामक ग्रंथ इस बार फिर मिला है। इसका र० का० ज्ञात नहीं लिपिकाल सं० १८९० (१८३३ ई०) है। इसके लिये देखिये पिछली विवरणिकाएँ (१९०१, सं० १०७; १९०६–८ सं० ९)।

९० दीनादास—ये 'गोकुल काँड' ग्रंथ के साथ पिछली खोज विवरणिका (१९०६-८, सं० १६१) में उल्लिखित हैं। इस बार इनके चार ग्रंथ 'संग्रहीत-लतिका', 'मदचरित्र', 'प्रेम बिहारी' तथा 'गोपी विरह महात्म्य' मिले हैं। रचनाकाल केवल अंतिम दो ग्रंथों में दिया है जो एक ही संवत् १९३२ (१८७५ ई०) है। मदचरित्र की प्रति में लिपिकाल सं० १९३४ दिया है और शेष ग्रंथों की दो प्रतियों में सं० १९३६ (१८७९ ई०)। रचयिता चतुरनगर (परगनै, चाइल, जिला, इलाहाबाद) के निवासी और बादल शुक्ल के पुत्र थे।

ये अपने पिता को बड़ा साधु लिखते हैं। इनका असली नाम दाताराम था। बैजनाथ इनके गुरु थे।

९१ दीनानाथ—खोज में इनका पता प्रथम बार चला है। इनका बनाया 'विजय दर्शन' नामक ग्रंथ प्राप्त हुआ है। ग्रंथ अपूर्ण है, अतएव उसमें काल क्रम संबंधी विवरण उपलब्ध नहीं। इसका विषय 'वाममार्ग' से संबंध रखता है। अब तक इस विषय का कोई ग्रंथ उपलब्ध नहीं हुआ था इसलिये इसका महत्त्व है। इसके अंत के पत्रे त्रुटित और खंडित हैं जिसके कारण रचयिता के संबंध में केवल इतना ही कि इनके गुरु का नाम ज्ञानानंद था, अन्य कुछ पता नहीं चलता।

९२ दीप कवि—इनका बनाया "अनुभव प्रकाश" नामक ग्रंथ मिला है जिसमें रचनाकाल का उल्लेख नहीं पाया जाता। लिपिकाल संवत् १९५८ (१९०१ ई०) है। पहले इसके विवरण लिये जा चुके हैं, देखिये खोजविवरणिका (१९१७–१९, सं० ५२)। इसका विषय जैन धर्म से संबंधित है।

९३ दूलनदास—इनके बनाये तीन ग्रंथों 'कवितावली', 'मंगलगीत' और 'दोहावली' के विवरण लिये गये हैं। इन सबका लिपिकाल सं० १९८५ (१९२८ ई०) है। ग्रंथकार पिछली खोज विवरणिकाओं में आ चुके हैं, देखिये विवरणिकाएं (१९२०-२२, सं० ४६; १९२३-२५, सं० १०८)।

९४ दुर्गाप्रसाद—इनके दो ग्रंथ "बाराह पुराण" और "लीला नरसिंह औतार" नाम से मिले हैं। पहले ग्रंथ का र० का० सं० १९२७ (१८७० ई०) है। इसकी दो प्रतियाँ मिली हैं जिनमें लिपिकाल क्रम से सं० १९२७ और २८ वि० (१८७०–७१ ई०) हैं। दूसरा ग्रंथ संवत् १९२६ (सन् १८६९) का लिखा है। रचनाकाल उसका दिया नहीं। ग्रंथकार हमजापुर (अलवर) के रहनेवाले थे।

९५ द्वारिकादास—इनकी 'तत्वज्ञान की बारहमासी' नामक रचना मिली है। यह सं० १९३१ वि० (१८७४ ई०) की रची हुई है। इसकी तीन प्रतियाँ मिली हैं जिनमें से एक उक्त संवत् की लिखी है। शेष दो प्रतियों में लिपिकाल क्रम से सं० १९३४ और १९३७ वि०-१८७७ व १८८० ई० हैं। रचयिता मुहम्मदपुर (कानपुर) के रहनेवाले कहे जाते हैं। खोज में ये नये हैं।

९६ द्वारिकाप्रसाद—वैद्यक विषयक इनकी 'रस मंजूषा' नामक रचना की दो प्रतियां मिली हैं। र० का० अज्ञात है। लिपिकाल केवल एक प्रति में सं० १९०७ (१८५० ई०) दिया है। रचयिता खोज में नया है।

९७ फ़कीरदास—इनके 'शब्द होरी' 'वाणी' और 'शब्द कहरा' नाम से तीन ग्रंथों के विवरण लिये गये हैं। ये अपने दो ग्रंथों 'बीजग्रंथ' और 'आनन्द वर्द्धिनी' के साथ पिछली खोज विवरणिका (१९२३–२५, सं० १११) में आ चुके हैं। प्रस्तुत ग्रंथों में से प्रथम दो का रचनाकाल क्रमशः १२३८ फसली (१८३१ ई०) और १२२५ फ़ (१८१८ई०) हैं। तीसरी का रचनाकाल अनुपलब्ध है। इनकी दो प्रतियाँ सं० १९३० (१८७३ ई०) की लिपिबद्ध हैं।

९८ फ़कीरेदास—'ज्ञान उद्योत' नाम से इनका एक ग्रंथ मिला है जिसका र० का० सं० १८५२ (१७९५ ई०) और लि० का० सं० १८९२ वि० (१८३५ ई०) हैं। ये दुबे के पुरवा (मुसाफिर खाना जिला सुलतानपुर) के निवासी, सरयूपारीण ब्राह्मण (कुंड वरिघा दुबे गर्गगोत्रीय) थे। सत्यनामी सम्प्रदाय के महंत माधोदास इनके गुरु थे। ६५ वर्ष की अवस्था में सं० १८५७ (१८०० ई०) के चैत्र शुक्ल अष्टमी शनिवार को ये गो-लोकबासी हुए। इनके वंशज जो महंत हैं अब भी उक्त गांव में रहते हैं। प्रस्तुत ग्रंथ के अतिरिक्त इनकी फुटकर रचनाएं भी पाई जाती हैं।

९९ फ़रासीस हकीम—इनके दो ग्रंथों 'ईंजुल पुराण' तथा 'वैद्यक फ़रासीसी' के विवरण लिये गये हैं। र० का० किसी में नहीं दिया है। लि० का० क्रमशः सं० १८९७ (१८४० ई०) और सं० १८४७ (१७९० ई०) हैं। प्रथम ग्रंथ पहले कई बार मिल चुका है, देखिये विवरणिका (१९०६–८, सं० १६६ आदि)।

१०० गदाधर भट्ट—इनकी प्रस्तुत रचना 'गदाधर भट्ट की वाणी' पहले मिल चुकी है, देखिये खोज विवरणिका (१९००, सं० ३; १९०९-११, सं० ८१)। उक्त विवरणिका में इनका संवत् १५७५; (१५१८ ई०) के लगभग वर्त्तमान रहना लिखा है।

१०१ गौरीशंकर—इनके रचे हुए प्रायः छै ग्रंथ—(१) 'होली संग्रह' (२) 'काव्यामृत प्रवाह' (३) 'ऋतुराज शतक' (४) 'संगीत की पुस्तक' (५) 'संगीत बिहार' और (६) 'वीर विनोद' मिले हैं। इनमें से संगीत की पुस्तक की दो प्रतियाँ हैं और शेष की एक एक। रचयिता का पता नया ही चला है। विनोदादि में भी इनका परिचय नहीं दिया है। ये मसवानपुर (कानपुर) के निवासी थे।

पितामह का नाम मन्नालाल और पिता का नाम लालताप्रसाद था। पहले ग्रंथ की प्रति में लिपिकाल सं० १९३० (१८७३ ई०); दूसरे तीसरे की प्रति में सं० १९३९ (१८८२ ई०), चौथे की एक प्रति में सं० १९४० (१८८३ ई०), पाँचवें की प्रति में संवत् १९३६ (१८७९ ई०) और छठवें ग्रंथ की प्रति में सं० १९४० (१८८३ ई०) दिये हैं। सभी ग्रंथ लगभग संवत् १९३० (सन् १८७३) के रचे जान पड़ते हैं।

१०२ गौरीशंकर—इनकी पाँच रचनाएँ (१) 'चीरहरण लीला' (२ 'गोवर्द्धन लीला' (३) 'मनिहारिन लीला' (४) 'रहस पचासा' तथा (५) 'श्यामा विलास' नाम से मिली हैं। रचनाकाल केवल तीसरी रचना में दिया है जो संवत् १९३१ (१८७४ ई०) है। लि० का० दूसरी रचना की प्रति में सं० १९३० (१८७३ ई०), तीसरी की प्रति में सं० १९३४ (१८७७ ई०), चौथी की प्रति में सं० १९३६ (१८७९ ई०) और पाँचवीं रचना की प्रति में सं० १९३३ (१८७६ ई०) हैं। शेष में रचनाकाल तथा लि० का० नहीं दिये हैं। रचयिता खोज विवरणिका (१९१२-१४, सं० ६३) में आ चुका है। ये कपनसराय (शाहजहाँपुर)। के रहने वाले एक ब्राह्मण थे।

१०३ गल्लूजी महाराज—इनकी दो रचनाओं 'मंगल आरती' एवम् 'सुरमा वारी' के विवरण लिये गये हैं। ये शोध में नवीन हैं। विनोद में भी इनका नाम नहीं

आया है। पहले ग्रंथ का र० का० नहीं दिया है। उसका लिपिकाल संवत् १८७७ (१८२० ई०) है। दूसरे ग्रंथ में र० का० का दोहा इस प्रकार है :—

"गौर पक्ष की पंचमी, भृगुवासर वैसाष।
संवत नभ० ससि१ चंड९ जुग४ (?), फली चित्त तरु साष॥"

इससे वैसाख शुक्ला पंचमी संवत् १९१० रचनाकाल आता है। जाँच करने पर उस दिन १३ मई सन् १७५३ ई० (शुक्र दिन) निकलता है। अनुसंधान से पता लगा है कि रचयिता वृंदावन के प्रसिद्ध कवि और गौड़ीय सम्प्रदाय के आचार्य थे। इनका उपनाम गुणमंजरीदास था। ये प्रसिद्ध पंडित गोस्वामी राधाचरण के पिता थे। गो० राधाचरण का जन्म 'विनोद' सं० १९१५ (१८५८ ई०) मानता है (दे० मि० बं० वि० सं० २१९१)। ऐसी दशा में उक्त ग्रंथ का संवत् १९१० में रचा जाना अनुचित नहीं। विनोद राधाचरण जी को वल्लभी सम्प्रदाय का गोस्वामी कहता है' जो ठीक नहीं।

१०४ गन्नाराम—इनकी बनायी 'बारहमासी' की तीन प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं। र० का० अज्ञात है। लि० का० इनका क्रमशः संवत् १८९०, १८९७ तथा १९३६ (सन् १८-३३, १८४०, १८७९ ई०) हैं। इनके संबंध में कुछ भी ज्ञात नहीं।

१०५ गणेश—इनके वेदान्त विषयक 'परतत्व प्रकाश' नामक ग्रंथ की दो प्रतियाँ मिली हैं। पहली प्रति में रचनाकाल नहीं दिया है। वह संवत् १९१० (१८५३ ई०) की लिखी हुई है। किंतु दूसरी प्रति में रचनाकाल सं० १९२१ (१८६४ ई०) स्पष्ट दिया है। अतः पहली प्रति का लिपिकाल अशुद्ध है क्योंकि वह रचनाकाल से पहले का लिखा है जो संभव नहीं। दूसरी प्रति का लि० का० सं० १९३२ १८७५ ई०) है। रचयिता अपने गुरु का नाम रामचंद्र और पिता का नाम जगन्नाथ बतलाता है। ये आगरे के निवासी थे और इन्होंने प्रस्तुत ग्रंथ को साँवलदास माहौर के पुत्र नत्थामल के लिये रचा था।

१०६ गणेशदत्त—इनके द्वारा दोहा चौपाइयों में अनुवादित 'सत्यनारायण की कथा' मिली है। रचनाकाल इसमें नहीं दिया है। लि० का० सं० १९४० (१८८३ ई०) है। रचयिता का कोई वृत्त नहीं मिलता। इस नाम के जिन कवियों का पता लगा है यह उन सबसे भिन्न जान पड़ता है।

१०७ गणेशप्रसाद—यह फर्रुखाबाद के रहनेवाले लेखराज के पुत्र थे। इनकी रचना अच्छी है। लावनियाँ तो सर्व साधारण में आदर प्राप्त कर चुकी हैं। ये मि० बं० वि० के सं० १७९४ पर उल्लिखित हैं। वहाँ इनके कई ग्रंथों की सूची देकर इनका रचनाकाल सं० १९०० से १९३० (१८४३–१८७३ ई० तक बतलाया है। प्रस्तुत खोज में इनके १२ ग्रंथ मिले हैं जो सभी प्रकाशित कहे जाते हैं, पर हमारी शोध में इनका पता अभी चला है। ग्रंथों की सूची इस प्रकार है :—

क्र० सं०	नाम ग्रंथ	र० का०	लि० का०
१	बारहमासा	×	१९२५ (१८६८ ई०)
२	भ्रमर गीत	×	×

३	दानलीला	×	१९२२ (१८६५ ई०)
४	देवस्तुति	×	१९०८ (१८६१ ई०)
५	गायन संग्रह	×	१९३६ (१८७९ ई०)
६	हिंडोला	×	,, ,,
७	दरबार देहली मलका मु०	×	१९३४ (१८७७ ,,)
८	प्रेम गीतावली	×	१९२४ (१८६७ ,,)
९	रागमनोहर	×	१९२२ (१८६५ ,,)
१०	रागरत्नावली	×	१९२० (१८६३ ,,)
११	रामकलेवा	×	१९२६ (१८६९ ,,)
१२	रुक्मिणीमंगल	×	१९२४ (१८६७ ,,)

१०८ गंग—इनकी रची 'गंग पचीसी' नामक रचना के विवरण लिये गये हैं जिसकी प्रस्तुत प्रति में र० का० नहीं दिया है। यह संवत् १८६० वि० (१८०३ ई०) की लिखी हुई है। रचयिता खोज विवरणिका (१९००, सं० २६) में उल्लिखित गंग से भिन्न सुप्रसिद्ध गंग हैं जो अकबर बादशाह के दरबार में रहते थे।

१०९ गंगाधर—इन्होंने संवत् १८६० (१८०३ ई०) में 'नागलीला' की रचना की जिसकी संवत् १९०६ (१८४९ ई०) की लिखी एक प्रति के विवरण लिये गये हैं। इनका कोई परिचय उपलब्ध नहीं। पिछली विवरणिकाओं में आये इस नाम के रचयिताओं से ये भिन्न हैं।

११० गंगाप्रसाद वैश्य—ये शोध में नवीन हैं। आगरा जिले के बाह नामक स्थान के ये निवासी थे। वासुदेव सनाढ्य गुरु का नाम था। इनके बनाये तीन ग्रंथ पहला 'रामाश्वमेध', दूसरा 'बटेश्वर महात्म्य', तीसरा 'क्षत मुक्तावली' प्राप्त हुए हैं। पहला ग्रंथ बिना सन् संवत् का है, पर दूसरे का र० का० सं० १९०३ (१८४६ ई०) और लि० का० सं० १९१० (१८५३ ई०) हैं। तीसरे का र० का० संवत् १९०० है। इनके पिता का नाम ऊधव था और ये जाति के मुखारिया गोत्र के माथुर वैश्य थे। इन्होंने दूसरे ग्रंथ में महाराज भदावर महेन्द्र महेन्द्रसिंह का संक्षिप्त परिचय भी दिया है।

१११ गंगेश—इनके बनाये 'विक्रम विलास' नामक ग्रंथ की दो प्रतियाँ मिली हैं। रचनाकाल किसी प्रति में नहीं दिया है। लि० का० क्रमशः सं० १८२० (१७६३ ई०) और सं० १८६१ (१८०४ ई०) हैं। यह ग्रंथ पहले विवरण में आ चुका है, देखिये (१९१७–१९, सं० ८६; १९२३–२५, सं० १२५ आदि) की विवरणिकाएँ।

११२ गौरगनदास—इनके बनाये दो ग्रंथ 'शृंगार मंझावली' तथा 'गौराङ्ग भूषण विलास' प्राप्त हुए हैं। पहले में वृंदावन और दूसरे में राधा आदि की शोभा का वर्णन है। इसमें खड़ी बोली और ब्रजभाषा दोनों ही में रचना की गई है। दूसरे ग्रंथ में साम्प्रदायिक सिद्धान्तों के साथ साथ गौराङ्ग महाप्रभु की महिमा का वर्णन है। रचयिता

वृन्दावन के प्रसिद्ध महात्मा कवि और गौड़ीय सम्प्रदाय के वैष्णव थे। इनकी रचनाओं में फारसी और अरबी के शब्दों का व्यवहार स्वतंत्रता से हुआ है।

११३ गयाप्रसाद—इनकी 'भजनावली' की सं० १९४६ (१८८९ ई०) की लिखी एक प्रति मिली है। खोज में यह अब तक अज्ञात थी। रचयिता दाऊद ग्राम (तहसील, अलीगंज, जिला, एटा) के निवासी थे, और प्रस्तुत रचना करते समय जबलपुर (सी० पी०) में रहते थे। मिश्र बंधु विनोद में संख्या १३९८ पर इस नाम के एक रचयिता का उल्लेख है, पर वे प्रस्तुत रचयिता हैं या कोई अन्य, यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता।

११४ गेंदीराय—इनके रचे 'सूरज पुराण' की एक प्रति मिली है जिसमें रचना काल और लिपिकाल नहीं दिये हैं। अन्य वृत्त इनका अज्ञात है। खोज में ये नवीन हैं।

११५ घनानन्द—ये हिन्दी के प्रसिद्ध कवि हैं। पिछली खोज विवरणिकाओं में कई बार आ चुके हैं। इस बार इनके रचे निम्नलिखित चार ग्रंथ प्राप्त हुए हैं जिनमें रचना काल और लिपिकाल नहीं दिये हैं:—(१) प्रीतिपावस, (२) सुजानहित प्रबन्ध (३) वियोगवेली और (४) कवित्त। विशेष विवरण के लिये देखिये विवरणिका (१९१७-१९, सं० ९)।

११६ दासगिरन्द—इनका 'हरि भजन' नामक ग्रंथ मिला है जिसमें उपदेश और भक्ति सम्बंधी रागिनियाँ संगृहीत हैं। इसकी प्रस्तुत प्रति में रचना काल लिपिकाल नहीं दिये हैं। रचयिता नबाब रामपुर (मुरादाबाद) के अधिवासी बतलाए जाते हैं। खोज में ये नवीन हैं।

११७ गिरधारी—'श्याम श्यामा चरित्र' नामक ग्रंथ के ये रचयिता हैं। सांतनपुरवा (बैसवाड़ा) में इनका निवास स्थान था। विनोद में इनका जन्म काल सन् १७९० दिया है। प्रस्तुत ग्रंथ के साथ ये पिछली खोज विवरणिका में उल्लिखित हैं, देखिये विवरणिका (१९१२–१६ सं० ६१)। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति के आरंभ में संवत् १९०४ दिया है, पर वह रचनाकाल है अथवा लिपिकाल, कुछ पता नहीं चलता।

११८ गिरिधारीलाल—इनका बनाया 'पिङ्गल सार' नामक ग्रंथ प्राप्त हुआ है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल सं० १७६६ (१७०९ ई०) है। रचयिता आगरे का रहने वाला था। औरङ्गजेब के समय (सन् १६५७–१७०७ ई०) में प्रस्तुत ग्रंथ की इन्हों ने रचना की। खोज में ये नवीन हैं। ग्रंथ की प्रति औरङ्गजेब की मृत्यु के दो वर्ष पश्चात् लिखी गई। इस दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है।

११९ गिरिधारीलाल—इनके शालिहोत्र विषयक ग्रंथ 'अश्व चिकित्सा' के विवरण लिये गये हैं जिसकी प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल एक ही संवत् १९२७ (१८७० ई०) दिया है। अतः यह मूल प्रति है। ग्रंथकार शोध में नवोपलब्ध है। ये आगरा जिले के कोटला ग्राम के निवासी थे और किसी रियासत में कार्य करते थे। उनके प्रपौत्र जिनके पास प्रस्तुत ग्रंथ विद्यमान है उक्त ग्राम में अद्यावधि निवास करते हैं।

१२० गिरिधारी लाल—इनका बनाया 'माप मार्ग' नामक ग्रंथ प्राप्त हुआ है जिसमें रेखागणित की कुछ परिभाषाओं और खेतों को मापने तथा उनके क्षेत्रफलादि निका-

लने का वर्णन है। पुस्तक संवत् १९३० (१८७३ ई०) की रची और संवत् १९३१ (१८७४ ई०) की लिखी है। रचयिता समायूँ के निवासी थे। शोध में ये नवीन हैं।

१२१ गोकुलनाथ—ये वल्लभाचार्य के पौत्र और बिट्ठलनाथ के पुत्र थे। 'चौरासी वैष्णवों' तथा 'दो सौ बावन वैष्णवों की वार्त्ता'—के ये लेखक हैं। इनका र० का० सं० १६२५ (१५६८ ई०) है। इन्हीं की रची 'गोवर्द्धन जी के प्रगटन समय की वार्त्ता' और 'वन यात्रा' के इस बार विवरण लिये गये हैं। प्रत्येक की दो दो प्रतियाँ मिली हैं जिनमें से प्रथम रचना की एक प्रति में लिपिकाल संवत् १६२५ (१८६८ ई०) दिया है।

१२२ गोपाल—इनकी बनाई "भड़ई विलास" की पोथी मिली है जो संवत् १९०२ (१८४५ ई०) की रची और सं० १९२७ (१८७० ई०) की लिखी है। यह केवल मनोरंजन विषयक रचना है जिसमें अनेक हँसानेवाली कथाएं हैं। शोध में यह नवीन है। लेखक फ़तहपुर सीकरी (आगरा) का रहने वाला ब्राह्मण था।

१२३ जनगोपाल—इनके बनाये 'मोहमर्द राजा की कथा', ध्रुव चरित्र' और 'प्रह्लाद चरित्र' मिले हैं। रचनाकाल तीनों ग्रंथों का अज्ञात है। लिपिकाल दूसरे और तीसरे ग्रंथों की प्रतियों का एक ही संवत् १८०६ (१७४९ ई०) है। रचयिता प्रसिद्ध महात्मा दादू के शिष्य थे और सन् १६०० ई० के लगभग वर्तमान थे। इनके लिये देखिये पिछली खोज विवरणिका (१९००, सं० २५; १९१२-१६, सं० २३)।

१२४ गोपाल लाल—इनका बनाया हुआ "चारों दिशाओं के सुख दुःख" नाम से एक ग्रंथ मिला है जिसकी प्रस्तुत प्रति सं० १८९६ (१८३९ ई०) की लिखी है। इसमें रचनाकाल नहीं दिया है। ग्रंथकार और उसके ग्यारह ग्रंथों का पता पहले लग चुका है देखिये विवरणिका (१९१२-१४, सं० ६२) और मिश्र बन्धु विनोद सं० १९६३। ये उक्त विवरणिका के अनुसार वृंदावन वासी, सङ्गराय के पुत्र और सं० १८८५ (१८२८ ई०) के लगभग वर्तमान थे।

१२५ गोविंदलाल—इनकी बनाई 'कलजुग लीला' या 'कलजुग के कवित्त' की दो प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं। र० का० अज्ञात है। प्रतियों का लिपिकाल क्रमशः संवत् १९३० (१८७३ ई०) और सं० १९३६ (१८७९ ई०) हैं। रचयिता के संबंध में कुछ ज्ञात नहीं।

१२६ गोकरन नाथ—इनके रचे 'नैमि पारण्य महात्म्य' के विवरण लिये गये हैं। ग्रंथ सं० १९११ (१८५४ ई०) में रचा गया और इसकी प्रस्तुत प्रति सं० १९१८ (१८६१ ई०) में लिखी गई। रचयिता के संबंध में अधिक कुछ ज्ञात नहीं।

१२७ गोकुलचंद—इनकी 'सगुन परीक्षा' मिली है जिसमें रचनाकाल तो नहीं दिया है, पर जिसकी प्रस्तुत प्रति संवत् १९२७ (१८७० ई०) की लिखी हुई है। रचयिता मथुरा के निवासी थे। पिता का नाम हकीम रामचंद्र था। खोज में ये नवीन हैं।

१२८ गोकुल गोला पूरब—शोध में इनका प्रथम बार ही पता चला है। इनका रचा 'सुकमाल चरित्र' प्राप्त हुआ है जिसका र० का० १८७१ (१८१४ ई०) और

लि० का० सं० १९१८ (१८६१ ई०) है । उसमें जैन धर्म का वर्णन है । यह गद्य में है जो प्राचीन कथा वाचकों की गद्य शैली से मिलता है ।

१२९ गोपीनाथ—इनका रचा भागवत दशम पूर्वार्द्ध' का पद्यानुवाद मिला है । र० का० इसका सं० १६३९ (१५८२ ई०) है । लि० का० दिया नहीं । रचयिता के गुरु का नाम मिश्र चतुर्भुज था जिनसे पुराण सुनते समय इन्हें ज्ञान की उपलब्धि हुई । इनके पूर्वजों का निवास स्थान दिहुली (तहसील; करहल जिला मैनपुरी) था, पर ये आगरा में रहते थे । शोध में ये नवीन हैं ।

१३० गुलाबदास—इनकी 'शीघ्रबोध की टीका' मिली है जिसका र० का० संवत् १८०२ (१७४५ ई०) और लि० का० सं० १८२३ (१८३८ ई०) है । ये शोध में नवीन हैं और इनके विषय में अधिक कुछ ज्ञात नहीं ।

१३१ गुलजारीलाल—इनकी बनाई 'रसीले तरंग' की एक प्रति शोध में प्राप्त हुई है जो सं० १९२८ (१८७१ ई०) की रची और सं० १९३२ (१८७५ ई०) की लिखी हुई है । इसमें रामचरित्र का वर्णन है । रचयिता जाति के प्रधान और नरवर (जिला कानपुर) के रहने वाले थे । शोध में ये नवीन हैं ।

१३२ गुरुदीन—इनका बनाया 'रामचरित्र' मिला है जिसका र० का० अज्ञात है । ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति सं० १८७८ (१८२१ ई०) की लिखी हुई है । इसके विवरण पहले लिये जा चुके हैं, देखिये खोज विवरणिका (१९०५, सं० २५) । रचयिता मनोहर नाथ के शिष्य थे । डाक्टर ग्रियर्सन इस नाम के एक कवि का सन् १८८३ में होना बतलाते हैं ।

१३३ गुरुप्रसाद—इनका बनाया 'कवि विनोद' नामक ग्रंथ (र० का० सं० १७४५=१६८८ ई० और लि० का० सं० १८९१ (१८३४ ई०) शोध में मिला है जो वैद्यक से सम्बन्ध रखता है । संभव है, यह "रत्नसागर' के रचयिता से, जो सं० १७५५ = १६९८ ई० के लगभग वर्तमान था, अभिन्न हो । इसी विषय का एक दूसरा ग्रंथ "वैद्यकसार संग्रह' और मिला है जो इन्हीं का रचा जान पड़ता है ।

१३४ गुरुप्रसाद—प्रस्तुत शोध में इनका बनाया 'याज्ञवल्क्यस्मृति भाषा' नामक ग्रंथ, जो सं० १९३० (१८७३ ई०) का लिखा है पर जिसका रचनाकाल अज्ञात है, मिला है । रचयिता के सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञात नहीं होता । शोध में ये नये हैं ।

१३५ ग्वालकवि—यह हिन्दी का सुप्रसिद्ध कवि है और पिछली विवरणिकाओं में कई बार आ चुका है, देखिये विवरणिका (१९२०-२२ सं० ५८) । इस बार इस कवि के तीन ग्रंथ मिले हैं जिनके नाम क्रमशः "गोपी पचीसी", 'कैवि हृदय विनोद' और 'नख शिख' हैं । ये सब प्रायः पिछली विवरणिकाओं में आ चुके हैं । इनकी प्रस्तुत प्रतियों में रचना काल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं पाया जाता ।

१३६ हैदर—इनका बनाया 'क़ासिद नामा' प्राप्त हुआ है । इस नाम का न तो कोई कवि पहले शोध में प्राप्त हुआ और न हिन्दी के इतिहास ग्रंथ 'सरोज' आदि में इसका

कुछ पता है। ग्रंथ में प्रेमी के वियोग दशा का वर्णन है। इसकी दो प्रतियाँ मिली हैं जो संवत् १९०० वि० (१८४३ ई०) की लिखी हुई हैं।

१३७ हंसराज—इनके बनाये 'सनेह सागर' नामक ग्रंथ की दो प्रतियाँ एक संवत् १८६१ (१८०४ ई०) की और दूसरी संवत् १८९४(१८३७ ई०) की लिखी हुई मिली हैं। रचनाकाल उनमें से एक में भी नहीं दिया गया है। यह पहले मिल चुका है, देखिये विवरणिका (१९०६-८ सं० ४५ सी)। कवि पन्ना नरेश हृदय साहि सभासिंह और अमान-सिंह के आश्रित था एवं सं० १७८९ (१७३२ ई०) के लगभग वर्तमान था।

१३८ हरनाम—इनका बनाया एक बारह मासा मिला है जिसका र० का० सं० १९१० (१८५३ ई०) है। इसकी प्रस्तुत प्रति का लि० का० अज्ञात है। रचयिता के संबन्ध में कुछ ज्ञात नहीं। शोध में ये नवीन हैं।

१३९ हरिचन्द्र—इनका बनाया 'राधिका जी की बधाई' नामक ग्रंथ मिला है। इसकी प्रस्तुत प्रति में न तो रचनाकाल ही दिया है और न लिपिकाल ही। कवि के विषय में भी कुछ पता नहीं चलता। पिछली कई खोज विवरणिकाओं में इस नाम के कवियों का उल्लेख है, पर प्रस्तुत कवि उनमें से कोई एक है या नहीं, नहीं कहा जा सकता।

१४० हरिदास—इनके रचे सात ग्रंथों की प्रतियाँ मिली हैं। ये पहले विवरण में आ चुके हैं, देखिये खोज विवरणिकाएं (१९२०-२२, सं० ६०; १९२३-२५, सं० १५५)। ग्रंथों का विवरण इस प्रकार है :—

क्र० सं०	नाम ग्रंथ	प्रतियाँ	र० का०	लि० का०
१	हरिप्रकाश	१	×	×
२	वर्षोत्सव	१	×	१८४७ (१७९० ई०)
३	गुरु नामावली	१	×	×
४	रस के पद	१	×	×
५	वाणी	२	×	×
६	पदनामावली	१	×	इन दोनों में भिन्न भिन्न पद हैं।
७	हरिदास जी का पद	१	×	

पाँचवें ग्रंथ की दो प्रतियाँ उपलब्ध हुई हैं।

१४१ हरिदास—इनके 'कवित्त रामायन' के विवरण लिये गये हैं, जो सं० १८९६ (१८३९ ई०) में रचा और उसी समय का लिखा हुआ है। इनका मुख्य नाम सूर्य बख्श सक्षाई था, और ये जायस (रायबरेली) के रहने वाले थे। प्रस्तुत ग्रंथ इन्हों ने महात्मा तुलसीदास जी के अनुकरण पर 'कवित्त' 'सवैयों' में रचा है। कहीं कहीं दोहे सोरठे भी रखे हैं, परन्तु रामचरित मानस की अपेक्षा इसकी रचना साधारण है। भाषा की दृष्टि से यह जायसी की भाषा से मेल खाता है।

१४२ हरिदेव—ये गोकुल में निवास करते थे। इनके बनाये दो ग्रंथ 'रंगभाव माधुरी' एवम् 'केशव जस चन्द्रिका' प्राप्त हुए हैं। पहला संवत् १८७३ (१८१६ ई०) का

लिपिबद्ध और दूसरा संवत् १८६९ (१८१२ ई०) का रचा हुआ है। पहले ग्रंथ में श्रृंगार वर्णन है। दूसरे में कृष्ण स्वामी के शिष्य और सखी सम्प्रदाय के अनुयायी 'केशवजी' (मिश्र मोहन लाल जी के पुत्र) का यश वर्णन किया गया है।

१४३ हरिप्रसाद—इनका सं० १८६० (१८०३ ई०) का रचा और संवत् १९०२ (१९४५ ई०) का लिखा 'लघुतिब्ब निघण्टु' मिला है जिसमें ३३६ विविध वस्तुओं के गुण दोषों का वर्णन है।

१४४ हरिराम (कविराज)—इनका बनाया हुआ 'मृगया विहार' नामक ग्रंथ शोध में मिला है जिसका रचनाकाल और लिपिकाल एक ही संवत् १९१५ (१८५८ ई०) है। इसमें महाराज "महेन्द्र महेन्द्र सिंह जू" भदावर नरेश के शिकार का वर्णन है। विशेष विवरण भूमिका भाग ५ में दिया गया है।

१४५ हरिराय—इनकी बनाई 'शिक्षा-पत्र' नामक पुस्तक शोध में मिली है जिसका रचनाकाल तो अज्ञात है, पर लि० का० सं० १९२३ (१८६६ ई०) है। रचयिता के संबंध में देखिये खोज विवरणिका (१९२३-२५, सं० १६०)। ये वल्लभाचार्य के शिष्य और सं० १६०७-(१५५० ई०) के लगभग उपस्थित थे।

१४६ हरिश्चन्द्र (भारतेन्दु)—ये हिन्दी के वर्तमान युग के महाकवि प्रसिद्ध हैं। इनके एक ग्रंथ 'सुन्दरी-तिलक' का, जिसमें देव इत्यादि कई कवियों की कविता संगृहीत हैं विवरण लिया गया है। यह ग्रंथ प्रकाशित हो चुका है। कुछ लोगों का कथन है कि इस ग्रंथ का संग्रह भारतेन्दु जी की आज्ञा से पुरुषोत्तम शुक्ल ने किया था, देखिये, माडर्न वर्नाक्यूलर लिटेरचर आफ हिन्दुस्तान में संख्या ५८१।

१४७ हरिवल्लभ—इनके 'भगवद्गीता' के अनुवाद की ९ प्रतियाँ तथा 'राधा नाम माधुरी' ग्रंथ की एक प्रति के विवरण लिये गये हैं। पहला ग्रंथ संवत् १७०१(१६४४ ई०) का रचा हुआ है और उसकी सबसे पुरानी, प्रति सं० १८२४ (१७६७ ई०) की लिखी हुई है। दूसरे ग्रंथ का र० का० ज्ञात नहीं। लिपिकाल सं० १८७३ (१८१६ ई०) है। इसमें राधा के अनेक नाम दिये गए हैं। पहला ग्रंथ प्रायः सभी खोज विवरणिकाओं में आया है देखिये विवरणिका (१९२३-२५ सं० १५० आदि)।

१४८ हरिवंश—इनके बनाये 'रसिक विनोद', 'सुनारिन लीला', 'अनन्त व्रत कथा' तथा 'पंछी चेतावनी' नामक ग्रंथों की ७ प्रतियां प्राप्त हुई हैं। रसिक विनोद संवत् १८२३ (१७६६ ई०) का बना हुआ है। शेष ग्रंथों का र० का० दिया नहीं। पहले ग्रंथ की सब से प्राचीन प्रति सं० १८४० (१७८३ ई०) की, दूसरे ग्रंथ की सं० १९२६-(१८६९ ई०) की और तीसरे ग्रंथ की सं० १८३४ (१७७७) ई० की लिखी हुई हैं। ग्रंथकार पहले मिल चुका है, देखिये विवरणिका (१९०६-८, सं० २६१)।

१४९ हरिविलास—इनकी तीन रचनाएँ मिली हैं जिनमें से 'गाने की पुस्तक' की दो प्रतियाँ और 'रागसार' एवं 'रोगाकर्षण' की एक एक प्रति के विवरण लिये गये हैं।

र० का० तीसरे के अतिरिक्त और किसी रचना में नहीं दिया है। पहली में लिपिकाल भी नहीं। दूसरे की पुरानी प्रति सं० १९३२ = १८७५ ई० की लिखी है।

तीसरी का र० का० तथा लिपिकाल क्रम से १९१९ (१८६२ ई०) तथा सं० १९३० (१८७३ ई०) हैं। अंतिम ग्रंथ में रचयिता के पिता का नाम दामोदर लिखा है। वे लखनऊ के निवासी थे। ग्रंथकार शोध में नवीन हैं।

१५० हजारीदास—इनका रचा 'शब्दसागर' ग्रंथ पहली बार मिला है। ये डेरमऊ (जिला बाराबंकी) के रहनेवाले थे। ग्रंथ में वेदान्त का विषय वर्णित है। इसका र० का० सं० १८९५ = १८३८ ई० और लि० का० सं० १९६७ = १९१० ई० है।

१५१ हजारीलाल—इनका बनाया 'उपदंश चिकित्सा' नामक वैद्यक ग्रंथ जो पहले विवरण में नहीं आया था, इस बार की खोज में मिला है। रचयिता इटावे के रहनेवाले थे। इससे अधिक इनके विषय में कुछ ज्ञात नहीं। ग्रंथ का र० का० नहीं दिया है। लि० का० सं० १९१६ = १८५९ ई० है।

१५२ लाला हजारीलाल—फर्रुखाबाद निवासी का बनाया "आल्हखण्ड आल्हा निकासी" ग्रंथ का पता प्रथम बार चला है। इसकी प्रस्तुत प्रति द्वारा न तो कवि के विषय में ही कुछ ज्ञात होता है और न ग्रंथ का रचनाकाल और लिपिकाल का ही पता चलता है।

१५३ हीरालाल—इनका 'सर्व संग्रह' नामक एक वैद्यक ग्रंथ संवत् १९०० (१८४३ ई०) का बना और संवत् १९२४ = १८६७ ई० का लिखा इस शोध में मिला है। इसकी दो प्रतियाँ हैं, पर दूसरी में सन् संवत् का ब्योरा नहीं। यह पहले विवरण में आ चुका है देखिये खोज विवरणिका (१९२३–२५, सं० १६६)।

१५४ हीरामणि—इनकी 'रुक्मिणी–मंगल' नामक रचना मिली है जिसमें रचनाकाल का उल्लेख नहीं, पर इसकी प्रस्तुत प्रति में लि० का० सं० १८७८ (१८२१ ई०) दिया है। ये 'एकादशी-महात्म्य' के साथ पिछली खोज विवरणिका (१९२३–२५, सं० १६७) पर उल्लिखित हैं। कहा जाता है कि प्रसिद्ध हिन्दी-कवि 'सेनापति' के ये गुरु थे। इनका समय १७ वीं शताब्दी का मध्य है।

१५५ हित हरिवंश—ये राधा वल्लभी सम्प्रदाय के संस्थापक और हिन्दी के उत्तम कवि थे। वृंदावन निवास स्थान था। इनका समय १६ वीं शताब्दी है। इनके रचे "चौरासी पदी" नामक ग्रंथ की दो प्रतियाँ और 'प्रेमलता' की एक प्रति के विवरण लिये गये हैं। पहला ग्रंथ कई बार विवरण में आ चुका है। देखिये खोज विवरणिकाएँ (१९००; सं० ८; १९०६–८, सं० १७४; १९०९–११, सं० १२०) और (१९२३–२५ सं० १६८)। र० का० किसी में नहीं दिया है। लि० का० केवल दूसरे ग्रंथ की प्रति में सं० १८२४ (१७६७ ई०) दिया है। वास्तव में ये दोनों ग्रंथ भिन्न नहीं हैं। उनके पद और क्रम मिलते हैं केवल नाम में अन्तर कर दिया गया हैं।

१५६ हुलास पाठक—इनके "वैद्य विलास" नामक वैद्यक विषयक ग्रंथ के विवरण प्रथम बार लिये गये हैं। इनका अन्य विवरण अनुपलब्ध है।

१५७ इच्छाराम—इनकी रची 'गोविन्द चन्द्रिका' (र० का० १६८४ = १६२७ ई० और लि० का० सं० १९१७ = १८६० ई०) मिली है जो गत विवरणिकाओं में आ चुकी है, देखिये खोज विवरणिकाएँ (१९०६–८ सं० २६३ ए; १९२३–२५ सं० १७१)। उक्त विवरणिकाओं में उल्लिखित रचनाकालों में अन्तर था जो दूसरी में शुद्ध कर दिया गया। यही शुद्ध किया गया रचनाकाल वर्तमान प्रति में भी दिया हुआ है।

१५८ ईश्वर कवि— यह कवि शोध में नवोपलब्ध है। इसके रचे दो ग्रंथों 'भक्ति रत्नमाला' और मानव-प्रबोध की तीन प्रतियाँ उपलब्ध हुई हैं। पहला ग्रंथ सं० १९३० = १८७३ ई० में और दूसरा संवत् १९१२ = १८५५ ई० में रचा गया। लि० का० किसी प्रति का नहीं दिया गया है।

१५९ ईश्वरदास—इनका बनाया 'ग्रहफल विचार' नामक ज्योतिष-ग्रंथ मिला है जिसकी प्रस्तुत प्रति में र० काल सं० १७५६ (१६९९ ई०) और लि० का० सं० १९०२ (१८४५ ई०) दिये हैं। ये अपने को जाति के खरे सकसेना कायस्थ, लोकमणि का पुत्र तथा आगरे का रहनेवाला बतलाते हैं। इनका कथन है कि प्रस्तुत ग्रंथ इन्होंने गोपाचल (गवालियर) में लिखा था। ये खोज में नवोपलब्ध हैं।

१६० ईश्वरनाथ—इनका रचा "सत्यनारायण की कथा" का दोहाबद्ध अनुवाद मिला है। इसकी प्रस्तुत प्रति में रचना-काल नहीं दिया है, लिपिकाल संवत् १९११ (१८५४ ई०) है। रचयिता नवोपलब्ध है।

१६१ ईश्वरीप्रसाद—इनकी 'रामविलास' रामायण की चार प्रतियाँ मिली हैं। र० का० सं० १९१६ = १८५९ ई० है। इसकी सबसे प्राचीन प्रति का लि० का० सं० १९१८ (१८६१ ई०) है। रचयिता, पीरनगर (लखनऊ) निवासी कश्यपकुलोद्भव त्रिपाठी ब्राह्मण था। प्रस्तुत ग्रंथ वाल्मीकि का रामायण पद्यानुवाद है।

१६२ जगजीवन दास—ये प्रसिद्ध सत्यनामी सम्प्रदाय के संस्थापक थे। इनके रचे १९ ग्रंथों का पता लगा है जो पहले मिल चुके हैं, देखिये खोज विवरणिका (१९२३–२५ संख्या १७५)। प्राप्त ग्रंथों में से कुछ तो बड़े ग्रंथों के अंश मात्र हैं और कुछ स्वतंत्र हैं। ग्रंथों की सूची नीचे दी जाती है :—

क्र० सं०	ग्रंथ	लि० का०
१	मनपूरन	१९४० (१८८३ ई०)
२	बुद्धि वृद्धि	१९४० (१८३८ ई०)
३	दृढ़-ध्यान	१९४० (१८८३ ई०)
४	विवेक मंत्र	" "
५	कहरानामा	" "
६	कहरानामा दोसर	" "
७	कहरानामा तीसर	" "
८	चरन बंदगी	" "

क्र० सं०	ग्रंथ	लि० का०
९	सरन बंदगी	,, ,,
१०	विवेक ज्ञान	१९८७ (१९३० ई०)
११	उग्रज्ञान	,, ,,
१२	छंदविनती	,, ,,
१३	बारहमासा	१९४० (१८८३ ई०)
१४	स्तुति महाबीरजी या जन्म चरित्र	,, ,,
१५	स्तुति महाबीर दूसरी	,, ,,
१६	परम ग्रंथ	,, ,,
१७	महाप्रलय	,, ,,
१८	ज्ञान प्रकाश	,, ,,
१९	दृष्टांत की साखी	१८५० (१७९३ ई०)

१६३ जगन्नाथ—इनके बनाये "गुरुमाहात्म्य" की दो प्रतियाँ और "मोहमर्द राजा की कथा" की तीन प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं। यह दोनों ही ग्रंथ पहले विवरण में आ चुके हैं, देखिये खोज विवरणिकाएँ (१९०९–११ सं० १२६, १९२३–२५ सं० १७६)। उक्त विवरणिकाओं में इन ग्रंथों के रचयिता भिन्न भिन्न ठहराये गए हैं। विनोद के सं० ६७६ और 'सरोज' के सं० ३० पर प्राचीन जगन्नाथ कहकर उनको गुरु चरित्र के लेखक से भिन्न माना है, देखिये विनोद सं० (६३२)। दोनों के रचनाकालों में अधिक अन्तर नहीं है। गुरु चरित्र सं० १७६० में रचा गया और मोहमर्द की कथा सं० १७७६ में। एकी रचयिता की दो रचनाओं के समय में इतना अन्तर होना असंभव नहीं है। इसके अतिरिक्त इन दोनों लेखकों के अभिन्न होने का पुष्ट प्रमाण यह भी है कि अपने को किसी तुलसीदास का सेवक बतलाते हैं। साथ ही दोनों की रचना-शैली अभिन्न है। प्रमाण के लिये दोनों ग्रंथों से एक एक उदाहरण दिया जाता है।

स्वामी तुलसी दास के, सेवक अति ही हीन।
जगन्नाथ भाषण रचन, गुरु चरित्र गुन कीन॥

—गुरु चरित्र

स्वामी तुरसी दास जु धरयो सिर हाथ।
यह मोहमरदन कथा कही जन जगन्नाथ॥

—मोह मर्द राजा की कथा

यद्यपि लिपि कर्त्ताओं की असावधानी से दूसरा दोहा कुछ अशुद्ध हो गया है, फिर भी उनके तात्पर्य में कोई अन्तर नहीं पड़ता। गुरु चरित्र की सबसे प्राचीन प्रति सं० १७८६–(१७२९ ई०) की लिखी है और मोहमर्द राजा की कथा की सं० १८६० (१८०३ ई०) की।

१६४—जगन्नाथ भट्ट—'सार चंद्रिका' नामक ग्रंथ के ये रचयिता हैं। ग्रंथ की दो प्रतियाँ मिली हैं जिनमें रचनाकाल नहीं दिया है। ग्रंथ में बंशी, किशोरी, और लली आदि सखी सम्प्रदाय के कुछ महात्माओं के पदों का संग्रह किया गया है। ग्रंथकार 'रस प्रकाश' ग्रंथ के साथ पिछली एक खोज विवरणिका में आ चुका है, देखिये विवरणिका (१९१७-१९, सं० ७९)।

१६५ जगन्नाथ दास—इनके रचे 'धर्म गीता', देवीपूजनादिमंत्र' तथा 'वैदिक-मंत्र' नामक तीन ग्रंथ शोध में मिले हैं। तीनों ग्रंथ गद्य में हैं। रचनाकाल किसी भी ग्रंथ का नहीं दिया है। लि० का० दो प्रतियों में क्रम से सं० १८७२ = १८१५ ई० और सं० १९३२ = १८७५ ई० हैं। रचयिता फैजाबाद के निवासी थे। इनके विषय में और कुछ ज्ञात नहीं। खोज में ये नवोपलब्ध हैं।

१६६ जगतमणि—इनके रचे "जैमिन पुराण" की तीन प्रतियाँ मिली हैं। ग्रंथ का र० का० सं० १७२४-१७२७ ई० है। लि० का० सबसे प्राचीन प्रति का सं० १८६८ (१८११ ई०) है। रचना साधारण है। रचयिता के विषय में और कुछ ज्ञात नहीं।

१६७ जनदयाल—इनके बनाये 'धर्मसंवाद' के विवरण लिये गये हैं जिसकी प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं है। रचयिता 'प्रेमलीला' ग्रंथ के साथ पहले विवरण में आ चुके हैं, देखिये खोज विवरणिका (१९०६-८, संख्या २६८)।

१६८ जनार्दन भट्ट—इनके रचे "वैद्य रत्न" की चार प्रतियाँ मिली हैं। र० का० उनमें से एक में भी नहीं दिया है। सबसे प्राचीन प्रति सं० १८८७ = १८३० ई० की लिखी हुई है। इस ग्रंथ के पहले भी विवरण लिये जा चुके हैं, देखिये खोज विवरणिकाएँ (१९०२, सं० १०५, १९०६-८, सं० २६७ आदि)।

१६९ जसवंतराय—इनका बनाया हुआ "सांगीत गुलशन" (र० का० १८९९ = १८४२ ई० और लि० का० १९१८ = १८६१ ई०) मिला है। ये जाति के सकसेना कायस्थ और एटा के निवासी थे। खोज में ये नवोपलब्ध हैं। ग्रंथ में राग रागिनियाँ संगृहीत हैं।

१७० (राजा) जसवंत सिंह—भाषाभूषण के रचयिता के रूपमें ये प्रसिद्ध हैं, देखिये खोज विवरणिकाएँ (१९२०-२२, सं० १००; १९२३-२५, सं० १८३)। उक्त ग्रंथ की एक प्रति और मिली है जिसमें र० का० एवम् लिपिकाल नहीं दिये हैं।

१७१ जवाहरदास—इनका 'महापद' नामक ग्रंथ मिला है। खोज में ये नवोपलब्ध हैं। विनोद और सरोज में इनका उल्लेख नहीं तथा डा० ग्रियर्सन ने भी इनके विषय में कुछ नहीं लिखा है। ये आगरा जिले में स्थित प्रसिद्ध कस्बा फिरोजाबाद के निवासी थे। अपने को शूद्रवंश का भूषण बतलाते हैं। गुरु का नाम राम रत्न था।

ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति स्वयं रचयिता की हस्तलिपि में है। वह सं० १८८८ (१८३१ ई०) और सं० १८८९ (१८३२ ई०) की लिखी है।—रचयिता के विशेष वृत्त के लिये देखिये भूमिका भाग संख्या० १।

१७२ जयदयाल—इनके रचे 'प्रेमसागर' ग्रंथ के नौ खण्डों यथा विज्ञानखण्ड, वलभद्रखण्ड, बिश्वजितखण्ड, द्वारिकाखण्ड, मथुराखण्ड, माधुर्यखंड, गोवर्द्धनखण्ड, वृन्दावन-खण्ड, और गोलोकखण्ड के विवरण लिये गये हैं। ग्रंथ का रचनाकाल संवत् १९०६ (१८४९ ई०) है और इनकी प्रस्तुत प्रतियाँ १९०९ (१८५२ ई०) की लिखी हैं। रचयिता पहले खोज में मिल चुका है, देखिये खोज विवरणिका (१९१७-१९, सं० ८६)।

१७३ जयजय राम—इस खोज में इनका बनाया "ब्रह्म वैवर्त्य पुराण" जिसका रचनाकाल सं० १८६७ (१८१० ई०) है, मिला है। पिछली खोज विवरणिका (१९१७-१९, सं० ८७) में यह उल्लिखित है।

१७४ जयलाल—ये किसी पुरुषोत्तमदास के शिष्य थे। इनके रचे निम्नलिखित ग्रंथ मिले हैं जिनमें से किसी में भी र० का० नहीं दिया है:—

क्र० सं०	ग्रंथ	प्रति	सबसे प्राचीन प्रति का लि० का०
१	गर्भचिन्तामणि	१	सं० १९०४ (१८४७ ई०)
२	जैलालकृति	२	,, १९०१ (१८४४ ,,)
३	जैलालकृत ख्याल	१	,, ,, ,,
४	कठिन औषधि संग्रह	१	,, १८५५ (१७९८ ,,)
५	श्रीकृष्णजी की विन्ती	२	,, १९०४ (१८४७ ,,)
	कुल	८	

कवि के सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञात नहीं। वह खोज में नवीन है।

१७५ जेटमल—इन्होंने संवत् १७१० (१६५३ ई०) में "नरसी मेहता की हुंडी" की रचना की जिसकी एक प्रति मिली है। लि० का० केवल एक प्रति में सं० १८५६ (१७९९ ई०) दिया है। ग्रंथ पहले मिल चुका है, देखिये खोज विवरणिका (१९०१ सं० ७७)।

१७६ झुनकलाल जैन—इनके बनाये "नेमिनाथ जी के छन्द" मिले हैं जिनकी रचना संवत् १८४३ (१७८६ ई०) में हुई। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में लि० का० सं० १९१३ (१८५६ ई०) है। रचयिता जैनी थे। इनका बिशेष परिचय नहीं मिलता।

१७७ जुगतराय—इनकी "छन्द रत्नावली" मिली है जो सं० १७३० = १६७३ ई० की रची और जिसकी प्रस्तुत प्रति सं० १९०८-(१८५१ ई०) की लिखी है। ये खोज में नवोपलब्ध हैं। ये आगरा के निवासी और इन्होंने किसी हिम्मतषान (हिम्मत खाँ) की आज्ञानुसार इस ग्रंथ की रचना की। ग्रंथ पिंगल विषय का है। इसमें कुल सात अध्याय हैं। छठें अध्याय में फारसी के छन्दों पर भी प्रकाश डाला गया है। अन्य पिंगल ग्रंथों से इसमें यही विशेषता है।

१७८ कबीरदास- ये प्रसिद्ध महात्मा पिछली कई खोज विवरणिकाओं में अनेक ग्रंथों के रचयिता के रूप में उल्लिखित हैं, देखिये खोज विवरणिकाएँ १९१७-१९, सं० ९२,

१९२०-२२, सं० ७४; १९२३-२५, सं० १९८)। इसबार इनके १६ ग्रंथों की २२ प्रतियाँ हस्तगत हुई हैं जिनका विवरण नीचे दिया जाता है:—

क्रम संख्या	ग्रंथ का नाम	प्रतियों की गणना	सबसे प्राचीन प्रति का लि०का०
१	अखरावत	३	सं० १८७४=१८१७ ई०
२	बीजक तथा बीजक रमैनी	३	,, १८८५=१८२८ ,,
३	दत्तात्रय की गोष्ठी	१	,, ×
४	ज्ञान स्थित ग्रंथ	२	,, १८७० = १८१३ ,,
५	झूलना	२	,, ×
६	कबीरगोरख गोष्ठी	१	,, ×
७	कबीर के पद	१	,, १६९६ = १६३९ ,,
८	कबीर के वचन	१	,, ×
९	कबीर सुरति योग	१	×
१०	कुरम्हावली	१	×
११	रमैनी	१	×
१२	रेखता	१	×
१३	साधु-महात्म्य	१	×
१४	सुरति-शब्द-सम्वाद	१	×
१५	स्वाँस-गुंजार	१	×
१६	वशिष्ठ-गोष्ठी	१	×

रचयिता का विस्तृत विवेचन भूमिका भाग संख्या ६ में किया गया है।

१७९ कालिका चरण—इनकी स्तुति विषयक "कृष्ण क्रीड़ा" नामक रचना की दो प्रतियाँ मिली हैं। र० का० अज्ञात है। लि० का० एक प्रति का सं० १९११ (१८५४ ई०) है और दूसरी का सं० १९२० (१८६३ ई०)।

१८० कालीप्रसन्न—"नरकों के पापी" नाम से इनका एक ग्रंथ मिला है जिसमें पापियों के नरक में जाने पर उनके पापों के फलस्वरूप भिन्न-भिन्न यातनाओं का वर्णन है। नैतिक बातों का पालन करने की दृष्टि से ग्रंथ उपयोगी है। इसकी प्रस्तुत प्रति में रचना-काल और लिपिकाल नहीं दिये हैं। रचयिता का भी कोई वृत्त नहीं मिलता। खोज में ये नवोपलब्ध हैं।

१८१ कमलाकर—इनके "भृगुगण-गोत्र" और "गोत्रप्रवर" नामसे एक ही विषय के दो ग्रंथ मिले है। अन्य वृत्त इनका उपलब्ध नहीं। विनोद के संख्या १९१५ पर इस नाम का एक ग्रंथकार है, परन्तु उससे इनको अभिन्न मानने के लिये कोई प्रमाण नहीं। ग्रंथों का र० का० अज्ञात है। लिपिकाल पहले में सं० १९२६ (१८६९ ई०) और दूसरे में सं० १९२७ (१८७० ई०) दिये हैं।

१८२ कनकसिंह—'दशम स्कन्ध भाषा' नाम से इनके एक ग्रंथ के विवरण लिये गये हैं। ग्रंथ का रचनाकाल ज्ञात नहीं। इसकी प्रति संवत् १८५५ (१७९८ ई०) की लिखी हुई है। ग्रंथकार जाति के कायस्थ थे। इससे अधिक कुछ ज्ञात नहीं।

१८३ कान्ह कवि—श्रृंगार विषय पर लिखा हुआ 'रसरंग-नायिका' ग्रंथ मिला है। इस नाम के एक कवि की 'नखशिख' और 'देवी विनय' नामक रचनाएँ पहले विवरण में आई हैं, देखिए खोज-विवरणिकाएँ (१९०३, सं० ९०; १९०६-८, सं० २७७) परन्तु प्रस्तुत कवि से उसकी एकता स्थापित करने के लिये कोई प्रमाण नहीं। ग्रंथ का र० का० सं० १८०४ (१७४७ ई०) तथा लि० का० सं० १८८१ (१८२४ ई०) हैं। रचनाकाल का दोहा इस प्रकार है:—

"संमत धृति[१८] सत जुग[४] वरष, कान्हा सुकवि प्रसंग
क्वार सुदी तेरसि ससि, रच्यो ग्रंथ रस रंग॥"

जाँच करने पर चन्द्रवार, ५ अक्टूबर सन् १७४७ ई० को ठहरता है। पिछली विवरणिकाएँ, उनमें उल्लिखित, कवि का जन्म-काल सं० १९१४ (१८५७ ई०) मानती हैं। डा० ग्रियर्सन इस नाम के दो कवियों का उल्लेख करते हैं और उनमें से एक का जन्म काल सन् १७९५ और दूसरे का उक्त विवरणिकाओं के अनुसार १७५७ ई० मानते हैं; परन्तु प्रस्तुत कवि इन सबसे पुराना है।

१८४ करमअली—इनका रचा हुआ 'निज उपाय' नामक वैद्यक ग्रंथ पहले पहल मिला है। इसका र० का० १०९८ हि० १७९० ई० है। ग्रंथ के आरंभ में कवि ने मोहम्मद की वन्दना की है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति बहुत अशुद्ध लिखी है।

१८५ करनीदान—इनके रचे 'वृहद्श्रृंगार' ग्रंथ प्राप्त हुआ है जिसके विवरण लिये गये हैं। ग्रंथ का र० का० नहीं दिया है। लि० का० सं० १८२८ वि० = १७७१ ई० है। यह पिछली शोध में मिल चुका है, देखिये खोज विवरणिका (१९०१, सं० १०५)। कवि का र० का० संवत् १७८५ (सन् १७२८ ई०) माना गया है। ये जोधपुर नरेश अभयसिंह के आश्रित थे जिन्होंने इनको जागीर तथा कविराज की उपाधि से विभूषित किया था।

१८६ कर्त्तानन्द—इनके रचे 'एकादशी महात्म्य' की चार प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं जिनमें सबसे प्राचीन प्रति सं० १९०० (१८४३ ई०) की लिखी है। ग्रंथ का र० का० सं० १८३२ (१७७५ ई०) है। ग्रंथकार अपने को फर्रुखाबाद का निवासी और स्वा० 'चरणदास' की शिष्या सहजोबाई का शिष्य बतलाता है।

१८७ काशीगिरी बैनारसी—इनका बनाया 'ख्याल मराठी' नामक रचना प्राप्त हुई है जिसका रचनाकाल अनुपलब्ध है। लि० का० सं० १९४० (१८८३ ई०) है। इसमें अरबी फारसी मिश्रित खड़ी बोली का व्यवहार हुआ है।

१८८ काशीनाथ—इनका 'भरतरी चरित्र' मिला है जिसकी प्रस्तुत प्रति में र० का० नहीं दिया है। लिपिकाल सं० १९१६ (१८५९ ई०) है। रचयिता नवोपलब्ध हैं।

१८९ काशीराज—इनके दो ग्रंथ 'चित्र चन्द्रिका' और 'मुष्टिक प्रश्न' मिले हैं। पहले ग्रंथ का र० का० सं० १८८९ = १८३२ ई० है और वह पिछली शोध में मिल चुका है, देखिये खोज विवरणिकाएं (१९०९-११, सं० १४५; १९२३-२५, सं० २०५)। दूसरे ग्रंथ का र० का० बिदित नहीं। उसकी प्रति सं० १८०२=१७४५ ई० की लिखी है। यह ज्योतिष विषय का है। रचयिता बनारस के महाराजा चेतसिंह के पुत्र थे। इनका वास्तविक नाम बलवान सिंह और उपनाम 'काशिराज' था।

१९० कवीन्द्र—इनके 'योग वाशिष्ट सार' अथवा 'वसिष्टसार' की दो प्रतियों के विवरण लिये गये हैं जिनके अनुसार ग्रंथ का र० का० सं० १७१४ = १६५७ ई० है। लि० का० किसी प्रति में नहीं दिया ह। ग्रंथ पहले मिल चुका है, देखिये खोज विवरणिकाएं (१९०६-८, सं० २७६; १९२०-२२, सं० ७९)।

१९१ केशवराय कायस्थ—इनके (गणेशवृत कथा) की चार प्रतियों के विवरण लिये गये हैं। र० का० किसी प्रति में नहीं दिया है। लि० का० सबसे प्राचीन प्रति का सं० १८४० (१७८३ ई०) है। रचयिता 'जैमुनी की कथा' वाले केशव राय से अभिन्न जान पड़ते हैं, देखिये खोज विवरणिका (१९०५, सं० ३४)। ये संवत् १७५३ (१६९६ ई०) के लगभग वर्तमान थे। पिता का नाम माधवदास और भाई का नाम मुरलीधर था। ओड़छा नरेश महाराज छत्रसाल से इन्हें एक ग्राम प्राप्त हुआ था। बुंदेलखंड के इतिहास में दी हुई कवियों की सूची में प्रस्तुत ग्रंथ के साथ इनका नाम अंकित है।

१९२ केशवदास मिश्र—ये ओड़छा निवासी थे और इनके रचे ग्रंथ पिछली कई खोज विवरणिओं में उल्लिखित हैं। ये भाषा साहित्य के सर्वप्रथम आचार्य एवं हिंदी के सुप्रसिद्ध कवि हैं। इस शोध में प्राप्त इनके ग्रंथों की सूची नीचे दी जाती हैः—

क्र० सं०	ग्रंथ का नाम	प्रतियों की गणना	सबसे प्राचीन प्रति का लि० का०
१	रामचन्द्रिका	३	सं० १८४९ = १८९२ ई०
२	कविप्रिया	४	,, १८८२ = १८२५ ,,
३	रसिकप्रिया	१	,, १९०८ = १८५१ ,,
४	विज्ञानगीता	१	,, १८४९ = १७९२ ,,

प्रायः सभी ग्रंथ पहले मिल चुके हैं, देखिये खोज विवरणिकाएं (१९२०-२२ सं० ८२; १९२३-२५, सं० २०७)।

१९३ केशवप्रसाद—यह ग्रंथकार शोध में नवोपलब्ध है। इनके बनाये निम्नलिखित ५ ग्रंथ प्राप्त हुए हैं। ये राधन ग्राम (कानपुर) के निवासी और आगरा कालिज में संस्कृत के प्रधान पण्डित थे। काव्य, कोश तथा वैद्यक आदि में निपुण थे। इनके पितामह का नाम देवकी राम द्विवेदी पिता का नाम परमसुख और भाई का नाम बलदेव था। अपने पिता के साथ ही आगरा आये और पं० हीरालाल नामक एक अध्यापक की सहायता से वहाँ रहेः—

क्र० सं०	ग्रंथ का नाम	प्रतियाँ	र० का० सं० = ई० सन्,	लि० का० ई० सन्
१	अंगस्फुरण ग्रंथ	१	१९२६ = १८६९	,, १९३१=१८७४ ई०
२	होरा व शकुनगमन	१	×	१९३० = १८७३ ,,
३	ज्योतिष भाषा	१	×	१९३९ = १८८२ ,,
४	ज्योतिषसार	२	१९३० = १८७३	,, १९३३ = १८७६ ,,
५	वैद्यकसार	३	१९२७ = १८७०	,, १९३० = १८७३ ,,

१९४ केशवसिंह—'इनके पशुचिकित्सा' ग्रंथ की चार प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं। र० का० सं० १९३१=१८७४ ई० है और सबसे प्राचीन प्रति में लि० का० सं० १९३६=१८७९ ई० दिया है। रचयिता नवोपलब्ध है। विनोदादि ग्रंथों में भी इनका पता नहीं चलता। ये जाति के अहीर और उन्नाव जिले के पियरी ग्राम के निवासी थे।

१९५ खेमदास - यह मधनापुर (ज़िला बाराबंकी) के निवासी और कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे। एक ब्रह्मचारी से उपदेश लेकर इन्हों ने दस वर्ष तक कठिन तपस्या की; परन्तु उससे ज्ञान में कुछ वृद्धि न देख कर (सत्यनामी सम्प्रदाय के संस्थापक जगजीवन दास के शिष्य हो गये। तदोपरान्त हरिसकरी नामक स्थान पर रहकर भजन करने लगे। इन्होंने अपने स्फुट भजनों के अतिरिक्त, (काशीकाण्ड), (शब्दावली) तथा (तत्तसार दोहावली) नामक तीन ग्रंथ रचे जिनमें भक्ति एवम् ज्ञान का वर्णन है। पहली पुस्तक संवत् १८२७ (१७७० ई०) में रची गई। लिपिकाल तीनों ग्रंथों का एक ही संवत् १९५६ (१८९७ ई०) है।

१९६ खेतसिंह—इनके बनाये "वैद्य-प्रिया" नामक ग्रंथ का पता लगा है। इसका र० का० सं० १८७२ (१८१५ ई०) और लि० का० सं० १९०३ (१८४६ ई०) है। यह ग्रंथ पहले खोज में मिल चुका है। देखिये खोज विवरणिका (१९०६–८,सं० ६०सी)।

१९७ खुशीलाल—इनकी एक बारहमासी 'रसरंग' नाम से मिली है जो सं० १९२५ (१८६८ ई०) में रची गयी। इसकी प्रस्तुत प्रति का लि० का० सं० १९४० (१८८३ ई०) है। रचयिता बरजीपुर (कानपुर) के निवासी थे। जाति के ये कायस्थ, (श्रीवास्तव दूसरे) थे, और इनके पिता का नाम देवीदयाल था।

१९८ किशोरीदास—इनकी 'वाणी' के विवरण लिए गये हैं। कहा जाता है कि ये गौडीय संप्रदाय के अनुयायी और दो सौ वर्ष पूर्व वृन्दावन में निवास करते थे। संभवतः ये मि० बं० वि० के सं० ६०५/१ वाले कवि हैं। वहाँ इनका काल सं १७५७ = १७०० ई० माना है।

१९९ कोक—इनके बनाये "सामुद्रिक या नारीदूषण" की दो प्रतियाँ और "कोक विद्या" की एक प्रति के विवरण लिये गये हैं। र० का० दोनों ग्रंथों का अज्ञात है। इनकी प्रस्तुत प्रतियों में पहली का लि० का० सं १७१० (१६५३ ई०) है और दूसरी का सं० १८९० = १८३३ ई०। रचयिता के नाम पर उक्त विषयों के छोटे मोटे ग्रंथ बहुत से पाये गये हैं जिनके विषय में देखिये खोज विवरणिका (१९२३–२५, सं० २१५)।

२०० कृष्णादत्त—इनका "कवि विनोद" नामक ज्योतिष ग्रंथ का, जो सं० १९२८ = १८७१ ई० में रचा गया, विवरण लिया गया है। यह ग्रंथ महाभट्ट त्रिलोकीचन्द्र की आज्ञा से "लावनी" चाल में संस्कृत से भाषा में अनूदित हुआ है। कवि जाति का ब्राह्मण था। इससे अधिक उसके विषय में कुछ ज्ञात नहीं।

२०१ कृष्णादास—ये सुप्रसिद्ध स्वामी "हित हरिवंश जी" के द्वितीय पुत्र थे। इनके रचे पदों का एक संग्रह जिसमें रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं इस शोध में प्राप्त हुआ है। इनके "पद सिद्धांत" का उल्लेख पिछली खोज विवरणिका (१९१२-१४, सं० ९५) में हो चुका है जिसके अनुसार रचयिता सं १६२६ (१५६९ ई०) के लगभग वर्तमान था। मिश्रबन्धु विनोद के सं० $\frac{१३१}{१}$ पर भी इनका नाम 'कृष्ण-चंद्र गोस्वामी हित' के नाम से आया है।

२०२ कृष्णदास आदि 'मंगल संग्रह' नाम से एक संग्रह ग्रंथ इस शोध में मिला है जिसमें कई महात्माओं के मंगल संबंधी पद संगृहीत हैं। ग्रंथ का मुख्य रचयिता कृष्णदास माना गया है। संभव है वही संग्रहकर्त्ता भी हो। उसकी प्रस्तुत प्रति में कोई संवत् नहीं दिया है। यह पहले विवरण में आचुका है, देखिये खोज-विवरणिका (१९१२—१४, सं ९७)। उसके अनुसार रचयिता का समय संवत् १८५३ = १७९६ ई० के लगभग ज्ञात होता है।

२०३ कृष्णदास—यह इस नाम के प्रायः सभी ग्रंथ-कर्ताओं से भिन्न प्रतीत होते हैं। इनके रचे हुए "ज्ञान प्रकाश" ग्रंथ की दो प्रतियाँ मिली हैं जिनमें से केवल एक में ही लिपिकाल संवत् १९१० = १८५३ ई० दिया है। रचनाकाल ज्ञात नहीं। ग्रंथ में, जो गुरुशिष्य संवाद के रूप में है, वेदांत का सार दिया है।

२०४ कृष्णदास—यह कवि शोध में नवोपलब्ध है। इसका रचा "पंचाध्यायी" ग्रंथ पहले पहल मिला है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति फारसी लिपि में है जिसमें लिपिकाल सं० १९१० (१८५३ ई०) दिया गया है। रचनाकाल अस्पष्ट है—

'शुक्लपक्ष तिथि पूर्णिमा, अश्वनिमास पुनीत।
बनछाभूलन विविध, अरुननील सुतपीत॥"

कवि अपने को मनाढ्य ब्राह्मण, खेमकरण मिश्र का शिष्य, सकसेना कायस्थ तथा रामपुर शमशाबाद का निवासी बतलाता है।

२०५ कृष्णकवि—इनकी रची "बिहारी सतसई" और 'बिदुर प्रजागर' की टीकाओं की तीन प्रतियाँ इस शोध में मिली हैं। पहले ग्रंथ की प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं। दूसरे की प्रति में १७८२ (१७३५ ई०) रचना-काल और सं० १९११ (१८५४ ई०) लिपिकाल दिये हैं। ये दोनों ग्रंथ पिछली खोज में आ चुके हैं। देखिये खोज विवणिकाएँ (१९२०-२२, सं ८६; १९२६-२८, सं० २४८)।

२०६ कुदरतुल्ला (फरुखाबादी)—इनकी 'रागमाला' एवम् 'खेल बंगाला' का पता प्रथम बार लगा है। इनके संबंध में विशेष कुछ ज्ञात नहीं। ग्रंथों का रचनाकाल

अज्ञात है। लिपिकाल क्रमशः सं० १९३७ (१८८० ई०) और सं० १९०९ (१८५२ ई०) हैं।

२०७ कुन्दनदास—इनके रचे 'उपदेशावली' और 'रामविलास' नामक दो ग्रंथ मिले हैं। पहले का विषय भक्ति और उपदेश है, दूसरे में रामचरित्र का वर्णन किया गया है। र० का० किसी ग्रंथ का नहीं दिया है। लिपिकाल केवल पहले ग्रंथ की प्रति में सं० १८९३ (१८३६ ई०) दिया है। कवि ने अपने गुरु का नाम 'हीराराम' बतलाया है जिनकी मृत्यु सं० १९९१ में हुई थी।

२०८ लाड़िली प्रसाद—इनके बनाये 'लघुतिब्ब निघण्टु' की दो प्रतियाँ शोध में प्राप्त हुई हैं, अन्य विवरण इनका अप्राप्त है। ग्रंथ की प्राप्त प्रतियों में रचनाकाल नहीं दिया है, लि० का० क्रमशः सं० १९३२ (१८७५ ई०) और सं० १९३६ (१८७९ ई०) हैं।

२०९ लघुलाल—इनका 'रामगोल वैद्यकी सार' ग्रंथ मिला है। अन्य वृत्त अप्राप्त है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में न तो रचनाकाल ही दिया है और न लिपिकाल ही।

२१० ललितलाल—इनका 'भगवंतभूषण' नामक ग्रंथ के जो १९०१ १८४४ ई० का रचा हुआ है विवरण लिये गये हैं। ग्रंथ धौलपुर नरेश भगवंतसिंह के लिये रचा गया। इसमें उक्त राज्य के सभी स्थानों के विवरण देने के अतिरिक्त वहाँ के सामाजिक उत्सवों, मेलों और राजके कार्यों के विषय में वर्णन किया गया है। रचयिता नवोपलब्ध है।

२११ लल्लूभाई—'उदाहरणमंजरी' नामक ग्रंथ के ये रचयिता हैं। ग्रंथ का र० का० सं० १८३३ (१७७६ ई०) और लिपिकाल सं० १८३६=१७७९ ई० है। इसमें 'भाषा भूषण' में वर्णित अलङ्कारों के उदाहरण दिये गये हैं। रचयिता भृगुपुर (वर्तमान भड़ोच रियासत गवालियर) का निवासी था।

२१२ लल्लूजी लाल—इनके रचे तीन ग्रंथ 'प्रेमसागर', 'राजनीति' और सभा-विलास' मिले हैं। पहले ग्रंथ का र० का० सं १८६० = १८०३ ई० और लि० का० सं० १९१० = १८५३ ई० है। दूसरे का रचना काल सं० १८५९ (१८०२ ई०) और लि० का० सं १८६७ = १८१० ई० है तथा तीसरे ग्रंथ का रचनाकाल सं० १८७० (१८१३ ई०) है और लिपिकाल सं० १८७३ = १८१६ ई० है। ये सभी ग्रंथ पिछली खोज में मिल चुके हैं देखिये खोज विवरणिकाएँ (१९०९–११, स० १७४; १९२६-२८, सं० २६६)।

२१३ लोककवि—इनके रचे 'कन्दुक क्रीड़ा' नामक ग्रंथ की एक प्रति के विवरण लिये गये हैं जिसमें 'श्री कृष्ण की गेंद लीला' तथा कुछ अन्य लीलाओं का वर्णन है। कविता साधारण है। रचनाकाल ज्ञात नहीं। लि० का० सं० १८०५ = १७४८ ई० है।

२१४ माधव—इन्हों ने 'भगवद्‌गीता' पर "सुबोधिनी" नामक टीका रची है टीका का रचनाकाल अज्ञात है। लि० का० सं० १९१८ = १८६१ ई० दिया है। कवि के सम्बन्ध में कुछ ज्ञात नहीं है। संभव है खोज विवरणिका (१९२२–१४, सं० १०४; १९२३–२५ सं० २५४) पर उल्लिखित इस नाम के रचयिता यही हों।

२१५ माधवदास—प्रस्तुत खोज में इनके रचे "जन्म-कर्म-लीला" की एक प्रति और "करुणा बत्तीसी" की चार प्रतियों के विवरण लिये गये हैं। रचनाकाल दोनों ग्रंथों

का अज्ञात है। ग्रंथ पिछली खोज में आ चुका है। देखिये खोज विवरणिकाएं (१९०१, सं० ७८; १९२६-२८, सं० २७५)।

२१६ माधव—इनके रचे 'नासिकेतुकथा' की दो प्रतियाँ मिली हैं। र० का० अज्ञात है लि० का० केवल एक प्रति में सं० १८८५ = १८३० ई० दिया है। कवि के सम्बन्ध में कुछ ज्ञात नहीं। खोज में ये नवोपलब्ध हैं।

२१७ माधवदास कत्थक—यह रीवां नरेश महाराज विश्वनाथसिंह के आश्रित थे। उन्होंने ही इनको सिखाया पढ़ाया एवं इनका पालन पोषण किया था। प्रस्तुत खोज में इनकी 'आदि रामायण' नामक रचना पहले पहल मिली है जिसमें रामायण' की पद्यबद्ध टीका है। ये रीवाँ के निवासी गंगाप्रसाद के नाती और काशीराम के पुत्र थे। ग्रंथ का दूसरा नाम 'माधव मधुर रामायण' भी है।

२१८ मधूसूदनदास—इनका रचा "द्वैत-प्रकाश" नामक वेदान्त-ग्रंथ मिला है। उसका र० का० सं० १७४९ (१६९२ ई०) और लि का० सं० १८७२ (१८१५ ई०) है। रचयिता 'कृष्णदास' रामानुजी वैष्णव को अपना गुरु बतलाते हैं। इस नाम के दो कवि "सरोज" और "विनोद" में आये हैं किन्तु वे इनसे भिन्न हैं।

२१९ महादेव—इनकी रची ध्रुवलीला की एक प्रति और 'बारहमासी' की दो प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं। रचनाकाल किसी भी प्रति में नहीं है। लि० का० दो प्रतियों में क्रमशः सं० १९५० और सं० १९३९ हैं। रचयिता जाति का "अयोध्यावासी वैश्य" और मैनपुरी का निवासी था। पहला ग्रंथ पिछली खोज में आ चुका है, देखिये खोज विविरणिका १९२६ २८, सं० २८०)।

२२० महेशदत्त शुक्ल धनौली (बाराबंकी)—इनके रचे निम्नलिखित दस ग्रंथों की १२ प्रतियों के विवरण लिये गये हैं जिनमें सं० २ की ३ प्रतियां हैं और शेष की एक एक। र० का० संख्या १ का सं० १९३० (१८७३ ई०), संख्या ६ का सं० १९२९ (१८७२ ई०) तथा सं० ७ का १९३० (१८७३ ई०) हैं। शेष में र० का० दिया नहीं। रचयिता अपने दो ग्रंथों 'अठारह पुरान' और 'पच्चीस अवतारों के नाम' के साथ पिछली खोज विवरणिका (१९२६-२८, सं० २८५) में उल्लिखित हैं—

क्र० सं०	ग्रंथ	लि० का०	क्र० सं०	ग्रंथ	लि० का०
१	अमरकोश भा० अ०	१९४० = १८८३ई०	२	नरसिंह पुराण	१९३६ = १८७९ ई०
३	वाल्मीकीयरामायन बालकांड	१९३६ = १८७९,,	४	वाल्मीकीय रा० अयो०	१९३४ = १८७७ ,,
५	,, ,, अरण्य	,, ,,	६	कि० का०	१९४० = १८८३ ,,
७	,, ,, सुन्दर	१९४० = १८८३ ,,	८	लं० का० सं०	१९३८ = १८८१,,
९	,, ,, उत्तर का०	,,	१०	विष्णुपुराण	१९३० = १८७३,,

२२१ महेशदत्त त्रिपाठी—इनका हिन्दू व्रतों के विषय में 'वृत्तार्क भाषा' नामक ग्रंथ मिला है। यह नीलकण्ठात्मज शङ्करभट्ट प्रणीत 'व्रतार्क' नामक संस्कृत ग्रंथ की टीका है। अनुसन्धान से ज्ञात हुआ है कि लेखक नन्दापुर (सुल्तानपुर) का निवासी था। प्रस्तुत ग्रंथ पहले नवलकिशोर प्रेस-लखनऊ में छपा था।

२२२ महीपाल-(द्विजदत्त)—इनका रचा 'चित्रकूट महात्म्य' प्राप्त हुआ है। र० का० सं० १९२८ (१८७१ ई०) है और लि० का० सं० १९३८ (१८८१ ई०)। ग्रंथकार तरौहा (बाँदा) का निवासी था। अन्य विवरण उपलब्ध नहीं।

२२३ मक्खनलाल चौबे—इनकी "गणेश कथा" की दो प्रतियाँ मिली हैं जिनमें र० का० का कोई उल्लेख नहीं है। लि० का० एक प्रति में सं० १८०० वि० (१७४३ ई०) है। ग्रंथ पिछली खोज में मिल चुका है, देखिये खोज विवरणिका (१९०६-८, सं० ६९)। उक्त खोज विवरणिका में उल्लिखित और प्रस्तुत खोज में प्राप्त ग्रंथ की प्रतियों का पाठ भिन्न भिन्न है। बुँदेलखण्ड के इतिहास में ग्रंथ का र० का० सं० १९२० (१८६३ ई०) माना है जो अशुद्ध है। प्रस्तुत खोज में प्राप्त दोनों प्रतियाँ उससे बहुत पहले की लिखी हुई है। इनका र० का० अठारहवीं शताब्दी से पीछे का नहीं हो सकता। रचयिता कुलपहाड़ (हमीरपुर) के निवासी थे।

२२४ मकुन्ददास—इनका रचा 'कोकशास्त्र' जिसका र० का० सं० १६७५ (१६१८ ई०) है इस शोध में मिला है। यह पिछली खोज में आचुका है, देखिये खोज विवरणका (१९०९-११, सं० १८३ ए, बी)। प्रस्तुत खोज में मिली प्रति का रचनाकाल उक्त विवरणिका में उल्लिखित एक प्रति के रचनाकाल से मिलता है। अन्य प्रतियों में रचनाकाल संवत् १६७२ दिया है, परंतु सभी प्रतियों में पाठान्तर पाया जाता है।

२२५ मलिक मोहम्मद (जायसी)—ये और इनका रचा 'पद्मावत' हिन्दी संसार में बहुत प्रसिद्ध हैं। ग्रंथ की एक प्रति इस बार भी मिली है जिसमें र० का० सं० ९२७ हिजरी = १५९७ ई० (?) दिया है। यह सं० १८५८ (१८०१ ई०) की लिखी हुई है। ग्रंथ पहले कई बार मिल चुका है, देखिये खोज विवरणिकाएं (१९००, सं० ५४; १९०२, सं० २४, २५, ५३; १९०९–११, सं० ११५; १९२६–२८, सं० २८४)।

२२६ मानदास—इनके रचे 'एकादशी महात्म्य' के विवरण लिये गए हैं। ग्रंथ का० र० का० विदित नहीं है। लि० का० सं० १८९५ (१८३८ ई०) है। यह ब्रजभाषा गद्य में लिखा गया है, पर बीच बीच में पद्य भी प्रयुक्त हुए हैं। रचयिता के सम्बन्ध में कुछ ज्ञात नहीं। यह शोध में नवीन है। ऐतिहासिक ग्रंथों में इस नाम के जो लेखक दिये गये हैं उनमें से यह निश्चय करना कठिन है कि ये किसी से अभिन्न तो नहीं है। पिछली खोज विवरणिकाओं में इस नाम के कई ग्रंथकारों का उल्लेख है पर ये उनमें कोई एक हैं या नहीं, निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता।

२२७ मानामन्त्री—इन्होंने जायसी के पद्मावत की शैली पर दोहा चौपाइयों में 'गोपीचन्द्र राजा की कथा' की रचना की। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल तो नहीं दिया है पर उसका लि० का० सं० १९२७ (१८७० ई०) है। रचयिता का कोई विवरण उपलब्ध नहीं। ये वास्तव में रचयिता नहीं हैं वरन् मैनावंती का मानामंत्री हो गया है मैनावंती राजा गोपीचंद की माता का नाम था, प्रस्तुत ग्रंथ की भाषा ब्रज और खड़ी बोली मिश्रित है।

२२८ मंगलदेव—'गनिका-चरित्र' नाम से इनकी एक रचना मिली है जिसमें गणिका की निंदा की गयी है और उससे बचने का उपदेश दिया गया है। र० का० सं० १९३२

(१८७५ ई०) और लि० का० सं० १९४० (१८८३ ई०) हैं। रचयिता आगरा निवासी एक सन्यासी थे। खोज में ये नवोपलब्ध हैं।

२२९ मन्नालाल—इन्हों ने संवत् १९३१ (१८७४ ई०) में 'राग-सार-संग्रह' नामक संगीत ग्रंथ की रचना की जिसकी ३ प्रतियाँ मिली हैं। इनमें से केवल एक प्रति में लि० का० सं० १९४१ = १८८४ ई० दिया है। रचयिता जाति के वैश्य और ग्राम डुंडवा (कानपुर) के निवासी थे। खोज में नवोपलब्ध हैं।

२३० मेघराज (प्रधान)—'एकादशी महात्म्य' एवं 'मकरध्वज कथा' नाम से इनकी दो रचनाओं के विवरण लिये गये हैं। रचनाकाल दोनों ग्रंथों का अज्ञात है। लिपिकाल केवल एक ग्रंथ की प्रति में, सं० १९२० (१८६३ ई०) दिया गया है। दूसरा ग्रंथ खोजविवरणिका (१९०६-८, सं० ७४ बी) में उल्लिखित है। प्रथम ग्रंथ नया मिला है और वह गद्य में है। रचयिता उक्त पिछली खोजविवरणिका के अनुसार सं० १७१७ (१६६० ई०) के लगभग वर्तमान थे।

२३१ मीराबाई—इनकी "वाणी" की एक प्रति के विवरण लिये गये हैं जिसका लिपिकाल सं० १८१२ (१७५५ ई०) है। इनके बहुत से पद पहले विवरण में आ चुके हैं, देखिये खोज विवरणिकाएं (१९१२-१४. सं० ११५; १९२६-२८. सं० ३०३)।

२३२ मोहनलाल—ये खोज में नवोपलब्ध हैं। इनके रचे 'गणित-निदान' की तीन प्रतियां मिली हैं। र० का० सं० १८५४ (१७९७ ई०) है। प्राचीन प्रति का लि० का० सं० १८६० (१८०३ ई०) है। पोथी बालोपयोगी है और उसमें प्रारंभिक गणित पर लिखा गया है। एक प्रति में रचनाकाल सं० १९०९ भी दिया है।

२३३ मोतीलाल—(लखनऊ निवासी)—इनका रचा हुआ 'कहानियों का संग्रह' मिला है, जिसके विवरण लिये गये हैं। इनके संबंध में और कुछ ज्ञात नहीं हो सका। ग्रंथ का र० का० भी अज्ञात है। इसकी प्रस्तुत प्रति संवत् १९३०-(१८७३ ई०) की लिखी हुई है।

२३४ सुखदास—इनके लिखे निम्नांकित चार ग्रंथों का पता लगा है। रचनाकाल सबका अज्ञात है। ग्रंथकर्ता के विषय में भी कुछ पता नहीं चला।

क्र० सं०	नाम ग्रंथ	प्रतियाँ	लि० का० सन् ई०।
१	दुर्गा स्तुति	२	सं० १८९६ = १८३९ ,,
२	गर्भगीता	३	,, १८१२ = १७५५ ,,
३	सारगीता	३	,, १८१२ = १७५५ ,,
४	धर्म संवाद	१	,, १८९० = १८३३ ,,

२३५ मुक्तानंद—इनका 'हनुमान स्तोत्र' मिला है। अन्य विवरण अप्राप्त है। इस नाम के एक रचयिता का उल्लेख मिश्रबंधु विनोद के संख्या ११५८/१ पर है, परंतु कहा नहीं जा सकता कि इनसे वे भिन्न हैं या अभिन्न। प्रस्तुत रचना में इन्होंने अपनी 'मुक्त' छाप रक्खी है। रचना की प्राप्त प्रति में न तो रचनाकाल ही दिया है और न लिपिकाल ही।

२३६ मुकुंदराय—इनका रचा 'ज्ञानमाला' नामक ग्रंथ मिला है जिसमें 'कृष्णार्जुन संवाद' के व्याज से जनता को सुकर्मों और कुकर्मों का भेद समझाते हुए व्यावहारिक शिक्षा दी है। अन्य वृत्त अप्राप्त है। ग्रंथ का रचनाकाल दिया नहीं। इसकी प्रस्तुत प्रति का लिपिकाल संवत् १९०० (१८४३ ई०) है।

२३७ मुनींद्र जैन—इनका रचा 'रवि व्रत-कथा' नामक जैन धर्म विषयक ग्रंथ का पहले पहल विवरण लिया गया है। इसका र० का० सं० १७४३ (१६८६ ई०) और लि० का० सं० १८५५ (१७९८ ई०) है।

ग्रंथकार विरथरा ग्राम के निवासी थे और गोपाचल में जाकर रहते थे। इनका पूरा नाम सुरेन्द्र कीर्ति मुनीन्द्र था। इन्हें गोपाचल के देवेंद्र कीर्ति मुनीन्द्र का पद प्राप्त हुआ था। गोपाचल के जैसवाल वंशोद्भव साहि जसवंत के भ्राता भगवंत की धर्मपत्नी की प्रार्थना पर प्रस्तुत ग्रंथ की रचना हुई।

२३८ मुन्नूलाल—इनकी बनाई 'चित्रगुप्त की कथा' के विवरण लिये गये हैं। र० का० सं० १८५१ (१७९४ ई०) है। लि० का० १२४६ हि० (१८८५ वि० या १८२८ ई०) दिया है। रचयिता सैर कोट (प्रयाग) के रहनेवाले माथुर कायस्थ थे। इनके पिता का नाम इंद्रजीत और अल्ल 'माउले' थी। इनकी रचना प्रायः दोहा-चौपाइयों में साधारण-श्रेणी की हुई है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति अरबी लिपि में है।

२३९ मुरली—इनका बनाया 'प्रियव्रत व ध्रुवचरित्र' नामक ग्रंथ मिला है। ग्रंथारंभ में 'मंत्र' की तरह कुछ वाक्य लिखे हैं और कुछ ग्रामों एवं नदियों आदि के भी नाम दिये हैं। इनसे ग्रंथ का कोई संबंध नहीं जान पड़ता। रचयिता संभवतः खोज-विवरणिका (१९२६-२८, सं ३१२) पर उल्लिखित मुरली ज्ञात होते हैं जिन्होंने 'गुरु महिमा' लिखी है। उनका भी परिचय अज्ञात है।

२४० मुरलीधर (मिश्र)—इनका बनाया "श्रृंगार-सार" मिला है जिसमें श्रृंगार रस का विवेचन किया गया है। यह माथुर चौबे थे और 'रस संग्रह' 'पिङ्गल-विषय' एवं 'नखशिख' के साथ पिछली खोज विवणिकाओं में उल्लिखित हैं। देखिये खोज विवरणिका (१९२३-२५, सं० २८८)। ये संवत् १८१८ (१७६१ ई०) के लगभग वर्तमान थे।

२४१ नागरीदास—इनका बनाया 'भागवत दशम स्कंध' का पद्यानुवाद मिला है जिसके विवरण लिये गये हैं। इसकी एक अपूर्ण प्रति पहले खोज में आ चुकी है, देखिये खोज विवरणिका (१९१७-१९, सं० ११८)। विशेष विवरण के लिए देखिये विवरणिका (१९२६-२८ सं० ३१३)।

२४२ नहसूर—ये खोज में नवोपलब्ध हैं। इनके नाम से कामशाला विषयक ग्रंथ 'कोक-मंजरी' के विवरण लिये गये हैं। ग्रंथ का विषय और पाठ सुप्रसिद्ध कवि आनंदकृत 'कोकसार' से मिलता है। इस दृष्टि से रचयिता ने प्रस्तुत ग्रंथ की रचना करके

कोई विशेष महत्व का काम नहीं किया। ग्रंथ में न तो रचनाकाल और लिपिकाल दिये हैं और न रचयिता का ही उसमें कुछ परिचय मिलता है।

२४३ नामदेव—इनके रचे पदों का एक संग्रह प्राप्त हुआ है जिसकी प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल नहीं है, पर लि० का० सं० १७६० (१७५७ ई०) दिया है। ये जाति के छीपी थे। पिछली खोज विवरणिका (१९०२, सं० २१७) में भी इनका उल्लेख है।

२४४. नन्ददास—ये प्रसिद्ध अष्टछाप के कवि हैं जो प्राय: पिछली खोज विवरणिकाओं में उल्लिखित हैं, विशेष विवरण के लिए देखिये खोजविवरणिकाएं (१९२०-२२, सं० २१३, १९२३-२५, सं० २९; १९२६-२८, सं० ३१६)। इसबार इनके निम्नलिखित ८ ग्रंथों की १४ प्रतियाँ देखने में आई हैं:—

क्र० सं०	नाम ग्रंथ	प्रतियाँ	सब से प्राचीन प्रति का लि० का०
१	अनेकार्थ मंजरी	३	सं० १८१४ = १७५७ ई०
२	भँवरगीत	१	,, १८६३ = १८०६ ,,
३	नाम मंजरी या मानमंजरी	३	,, १८१४ = १७५७ ,,
४	फूल मंजरी	१	×
५	रानी मंगौ	१	×
६	रास पंचाध्यायी	२	,, १८८२ = १८२५ ,,
७	रुक्मिणी मंगल	१	,, १८७८ = १८२१ ,,
८	विरहमंजरी	२	,, १८१४ = १७५७ ,,

सं० ४ और ५ के अतिरिक्त सभी रचनाएँ पहले मिल चुकी हैं। रचयिता का भूमिका में विवेचन है, देखिये भूमिका संख्या ११।

२४५ नन्दलाल—इनके बनाये "जैमुनी अश्वमेध" की ३ प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं। ग्रंथ का र० का० अज्ञात है। इसकी उक्त प्रतियों में से सब से प्राचीन प्रति सं० १८७२ (१८१५ ई०) की लिखी हुई है। ग्रंथकार के विषय में कुछ पता नहीं चला। पिछली खोज विवरणिकाओं में आये इस नाम के कवियों से यह भिन्न प्रतीत होता है।

२४६ नरसिंह—इनका बनाया कौतुक विषयक ग्रंथ 'भानमती कबूतर कला चरित" मिला है जिसकी प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिये हैं। रचयिता के सम्बन्ध में कुछ भी विवरण नहीं मिलता।

२४७ नारायण—प्रस्तुत खोज में इनके रचे ५ ग्रंथों की ६ प्रतियाँ मिली हैं। र० का० का उल्लेख किसी ग्रंथ में नहीं है। दो ग्रंथ—'अनुराग-रस' जिसका लि० का० सवत् १९२८ (१८७१ ई०) है और "पदों का संग्रह" पिछली खोज में मिल चुके हैं, देखिये खोज विवरणिका (१९२३-२५, सं० २९९)। रचयिता वृन्दावन के निवासी थे। इससे अधिक इनके विषय में कुछ ज्ञात नहीं। शेष चार ग्रंथों का विवरण इस प्रकार है:—

क्र० सं०	ग्रंथ का नाम	लि० का० = ई० सन्।
१	गायन संग्रह	सं० १९३२ = १८७५ ,,
२	गोपाल अष्टक	,, १९२८ = १८७१ ,,
३	नारायण संग्रह	,, १९१६ = १८५९ ,,
४	ब्रज—विहार	,, १९२८ = १८७१ ,,

२४८ नरोत्तमदास—इनका 'सुदामा चरित्र' प्रसिद्ध है जिसकी एक प्रति के विवरण इस बार भी लिये गये हैं। र० का० अज्ञात है। लि० का० संवत् १८६० = १८५७ ई० दिया है। ग्रंथ पहले कई बार मिल चुका है, देखिए विवरणिकाएँ (१९००, सं० २२; १९०६-८, सं० २०१; १९१७—१९, सं० १२४, १९२०—२२ सं० ११७; १९२६—२८, सं० ३२४ आदि)।

२४९ नवलदास—इनके रचे 'शब्दावली' तथा 'ककहरा' नामक ग्रंथ मिले हैं जिनमें रचनाकाल नहीं दिये हैं। इनकी एक प्रति जो सं० १९८२ (१९२५ ई०) की लिखी है बिल्कुल नई है। रचयिता के कुछ ग्रंथ 'भागवत पुराण-(सुखसागर कथा), रत्न-ज्ञान और ज्ञान सरोवर पिछली खोज में मिल चुके हैं, देखिये खोजविवरणिकाएं (१९२३-२५, सं० ३०१; २६-२८, सं० ३२७)। ये सत्यनामी सम्प्रदाय के महात्मा थे। लखनऊ जिले के धनेसा नामक ग्राम के निवासी और संवत् १८०७ (१७५० ई०) के लगभग वर्तमान थे।

२५० नवनदास—इनका बनाया 'भक्तसार' ग्रंथ प्राप्त हुआ है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में र० का० का उल्लेख नहीं है। लि० का० सं० १८१७ (१७६० ई०) है। रचयिता साधु थे और किसी गंगादास के गुरु थे। ये 'गीता-सागर' ग्रंथ के साथ पिछली खोज में मिल चुके हैं। देखिये खोज विवरणिका (१९०६-८, सं० ३०४)।

२५१ नजीर (अकबराबादी)—इस प्रसिद्ध मुसलमान कवि के रचे हुए चार ग्रंथ, 'कन्हैया का जन्म,–, 'बाँसुरी' 'बंजारानामा' तथा 'हंसनामा'—मिले हैं जिनमें रचनाकाल का कोई उल्लेख नहीं किया गया है। लि० का० भी अन्तिम ग्रंथ का ही दिया है जो संवत् १९१० (१८५३ ई०) है जो पहले आ चुका है, देखिये खोज विवरणिका (१९२६-२८, सं० ३३३)। इनके विशेष विवरण के लिये देखिये भूमिका में संख्या १०।

२५२ निम्बकवि—इनके रचे 'रस रत्नाकर' एवं 'अजीर्ण मंजरी' नाम से दो वैद्यक ग्रंथों के पहले पहल विवरण लिये गये हैं। र० का० दोनों का अज्ञात है। लिपिकाल केवल दूसरे ग्रंथ की प्रति में सं० १८२५ (१७६८ ई०) दिया है। रचयिता अपने को "ग्वाल" कवि का शिष्य बतलाता है।

२५३ निपट निरंजन—इनका बनाया वेदान्त विषयक विना नाम का तथा आद्यन्त से खण्डित ग्रंथ मिला है। इसकी प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं मिलता। 'शान्तसरसी' नामक रचना के साथ रचयिता का उल्लेख पिछली खोज विवरणिका (१९२३-२५, सं० ३०६) में हो चुका है। संभव है प्रस्तुत ग्रंथ भी वही हो।

२५४ निश्चलदास—प्रस्तुत खोज में इनका रचा 'विचार सागर' नामक वेदान्त ग्रंथ का पता पहले पहल लगा है यद्यपि इसकी ख्याति बहुत पहले से है। वेदान्त के विद्यार्थी इसी ग्रंथ से अपना अध्ययन प्रारम्भ करते हैं। यह व्यंकटेश्वर प्रेस बम्बई से प्रकाशित हो चुका है। रचयिता की वेदान्त पर दो अन्य कृतियाँ–'वृत्ति प्रभाकर' और 'युक्तिप्रकाश' भी हैं जिनमें विषय का प्रतिपादन अत्यन्त वैज्ञानिक ढंग पर हुआ है। ये कृतियाँ भी क्रमशः व्यंकटेश्वर प्रेस और जगदीश प्रिंटिंग वर्क्स, अहमदाबाद से छप गयी हैं। रचयिता दादूपंथी था। प्रस्तुत ग्रंथ में रचनाकाल नहीं दिया है पर उसका लिपिकाल सं० १९०५ (१८४८ई०) है। इसकी रचना किहडौली ग्राम (दिल्ली से १८ कोस पश्चिम) में हुई।

२५५ नित्यनाथ (पार्वती-पुत्र)—इनके रचे 'महा सावर', 'वीरभद्र', 'रस रत्नाकर' (दो प्रतियाँ) तथा उड्डीस ग्रंथ प्राप्त हुए हैं। रचनाकाल किसी ग्रंथ में नहीं दिया है। लि० का० क्रम से सं० १९५६ (१८९९ ई०), सं० १९१५ (१८५८ ई०) तथा सं० १८५६ (१७९९ ई०) हैं। ये सभी ग्रंथ तंत्र मंत्र से संबंधित हैं। तीसरा और चौथा ग्रंथ क्रमशः पिछली खोज विवरणिका (१९०३, सं १५७: १९१७-१९ सं० १२९) में उल्लिखित हैं।

रचयिता वास्तव में संस्कृत के रचयिता हैं। हिन्दी में उनकी रचनाएँ अनुवाद मात्र हैं। परन्तु इन हिन्दी रचनाओं में अनुवादक का नाम न रहने के कारण इन्हीं को रचयिता मान लिया है।

२५६—पद्मैया (पद्म भगत)—इनका बनाया हुआ "रुक्मिणी-मंगल" नामक ग्रंथ प्राप्त हुआ है। रचनाकाल अज्ञात है। लि० का० सं० १९४२ (१८८५ ई०) है। यह ग्रंथ पहले शोध में प्राप्त हो चुका है, देखिये खोजविवरणिका (१९००, सं० २४ और ९२)। इसके अनुसार पुस्तक का रचनाकाल संवत् १६६९ (१६१२ ई०) है। रचयिता जाति के तेली थे। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति बहुत अशुद्ध लिखी है। इसमें रुक्मिणी के विवाह का वर्णन है। ग्रंथ की भाषा मारवाड़ी (राजस्थानी) हिन्दी है। अबतक ग्रंथ की जितनी प्रतियाँ उपलब्ध हुई हैं उन सब में कुछ न कुछ पाठ भेद पाया जाता है। परंतु इसमें सन्देह नहीं कि ये सब एक ही ग्रंथ की प्रतिलिपियाँ हैं। पंजाब खोज विवरणिका के संख्या ८० पर भी यह ग्रंथ आया है। उसमें रचयिता को जैन बताया गया है क्योंकि उसमें उल्लिखित प्रति में श्रीकृष्ण अपने विवाह के अन्त में नेमनाथ जी का धन्यवाद करते हैं। प्राप्त प्रति में इस प्रकार कुछ नहीं लिखा है। पता चला है, पंजाब की खोज विवरणिका में आई प्रति की किसी जैन धर्मानुयायी ने नकल की है।

२५७ पद्माकर भट्ट—इनका उल्लेख पिछली कई खोज विवरणिकाओं में हो चुका है, देखिये विवरणिकाएँ (१९२०-२२, सं० १२३; १९२३–२५, सं० ३०७; १९२६–२८, सं० ३३८)। इस बार इनके तीन ग्रंथ जगद्विनोद, गंगालहरी, और लिलहारी मिले हैं। प्रथम दो का उल्लेख उपर्युक्त खोज विवरणिकाओं में हो चुका है जिनकी प्रस्तुत प्रतियों में से केवल गंगा लहरी की एक प्रति में लिपिकाल संवत् १९०८ (१८५१ ई०) दिया है। तीसरा

ग्रंथ नया मिला है। इसकी प्रति में रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १९१४ (१८५७ ई०) है। इसका विशेष विवेचन भूमिका में किया गया है, देखिये भूमिका संख्या—१२।

२५८ पद्मरंग—इनका वैद्यक विषय पर रचा हुआ 'रामविनोद' ग्रंथ मिला है जिसके विवरण लिये गये हैं। अन्य विवरण इनका अज्ञात है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल का उल्लेख नहीं है। लि० का० सं० १९२८ (१८७१ ई०) है।

२५९ पहाड़ कवि—रामदास कवि कृत 'उषा चरित्र' ग्रंथ में केवल चौपाई देखकर इन्हें उसमें फीकेपन की झलक दिखाई दी। अतएव आपने बीच बीच में अपने रचे कुछ विश्राम-छन्द् रख कर उक्त ग्रंथ को सरस बनाने का उद्योग किया है। ये अपने को जाति का कायस्थ और सुलताँपुरी (चँदेरी वाला) लिखते हैं। इससे अधिक इनके विषय में कुछ पता नहीं चलता। हस्तलेख में रचनाकाल नहीं दिया है। लि० का० सं० १९१८ (१८६१ ई०) है।

२६० द्विज पहलवान—इनके बनाये 'भजन-पचासा' एवं 'ख्याल पचासा' मिले हैं। रचनाकाल किसी ग्रंथ का नहीं दिया है। लि० का० पहले का सं० १९३० (१८७३ ई०) है। रचयिता सत्यनामी सम्प्रदाय के पहलवान दास से जिनके कई ग्रंथ पहले शोध में मिल चुके हैं अभिन्न जान पड़ते हैं, देखिये खोज विवरणिका (सं० १९२६–२८ सं० ३४०)।

२६१ परमल्लदास (आगरा निवासी)—इनका संवत् १६५१ (१५९४ ई०) का रचा हुआ 'श्रीपाल-चरित्र' मिला है जो इसी नाम के संस्कृत ग्रंथ का अनुवाद है। यह ग्रंथ पहले शोध में आ चुका है, देखिये खोज विवरणिका (१९२३–२५, सं० ३०९)।

२६२ परमानंद—इनका 'कबीर भानु प्रकाश' नामक सं० १९३५ (१८७८ ई०) का रचा हुआ, एक ग्रंथ का प्रथम बार पता लगा है। इसके हस्तलेख में लि० का० नहीं दिया है। 'रचयिता ने कबीर को नायक, भक्ति को नायिका एवं 'सुरति' को दूती कल्पना करके संसार के अन्य धर्मों की तुलनात्मक आलोचना करते हुए अपने मत को स्थापित किया है। ग्रंथ महत्त्वपूर्ण है, इसमें संदेह नहीं। रचयिता मुक्तसर (पंजाब) के निकट दौदा ग्राम में रहता था।

२६३ परमानंद—इनके रचे 'बहुरंगी सार' नामक-पदों के एक संग्रह के विवरण लिये गये हैं। इसकी दो प्रतियों में से प्राचीन प्रति सं० १९०० (१८४३ ई०) की लिखी हुई है। रचनाकाल सं० १८९० (१८३३ ई०) है। यह ग्रंथ पहले खोज में मिल चुका है, देखिये खोजविवरणिका (१९२६-२८, सं० ३२२)। उसमें रचयिता का निवास स्थान 'संभल' (मुरादाबाद) निम्नलिखित पंक्तियों के आधार पर माना है:—

दोहा—"संभल मुरादाबाद मेरा, मित्र कलंकी रूप।
कछू दिना में प्रगटि है, परमानंद अनूप"

परंतु यह धारणा निराधार है। उक्त दोहे में रचयिता के निवासस्थान का उल्लेख न होकर भविष्य पुराण के आधार पर कलंकी अवतार के स्थान का उल्लेख है। अतः उसे रचयिता का निवास स्थान बतलाना भूल है। प्रस्तुत प्रति के विवरण लेनेवाले अन्वेषक ने इटावा को रचयिता का निवासस्थान माना है जिसका कोई आधार नहीं दिया है। ऐसी दशा में रचयिता का निवासस्थान अभी अज्ञात ही समझना चाहिये। खोज में ये नवोपलब्ध हैं।

२६४ परशुराम—इनका रचा हुआ 'उषा-चरित्र' नामक ग्रंथ मिला है जिसकी प्रस्तुत प्रतियों में एक सं० १८७२ (१८१५ ई०) की लिखी हुई है। उसमें रचनाकाल नहीं दिया है। ग्रंथ पिछली खोज में मिल चुका है, देखिये पिछली खोज विवरणिकाएँ (१९१२—१४, सं० १२७; १९२३—२५ सं० ३११; १९२६—२८, सं० ३४४) जिनके अनुसार रचनाकाल संवत् १६३० (१५७३ ई०) है।

२६५ पर्वतदास—इनके बनाये निम्नलिखित ग्रंथों के विवरण लिये गये हैं जो पहले विवरण में आ चुके हैं, देखिये विवरणिकाएँ (१९२०-२२, सं० १२५; १९२३-२५, सं० ३१२; १९२६—२८, सं० ३४५)। इनका समय १७ वीं शताब्दी है।

ग्रंथों की सूचीः—

क्र० सं०	ग्रंथका नाम	प्रतियाँ	रचनाकाल	लिपिकाल
१	पट रहस्य निरूपण	२	सं० वि० १७४० = १६८३ ई०	१८९८ = १८४१ ई०
२	जानुकी विवाह (च० रह०)	१	×	१९०० = १८४३ ,,
३	राम कलेवा रहस्य	१	×	,, ,,

ये सब ग्रंथ प्रथम ग्रंथ के भाग मात्र हैं।

२५६ पातीराम—इनके बनाये 'रण सागर' एवम् 'पाती राम के भजन' मिले हैं जिनके विवरण लिये गये हैं। उक्त दोनों ग्रंथों का पता खोज में प्रथम बार लगा है। प्रथम ग्रंथ की प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल नहीं दिये हैं। दूसरा ग्रंथ सं० १९३० (१८७३ ई०) का रचा हुआ है, पर लि० का० उसका भी विदित नहीं। रचयिता जाति के ब्राह्मण और आगरा जिले के सरैंधी नामक ग्राम के निवासी थे। इनका जन्म काल सं० १९०० के लगभग है। उनके वंशज ('पुत्र ज्वाला प्रसाद और पौत्र धनपाल) आगरा जिले की किरावली तहसील के "बछड़ा" ग्राम में रहते हैं। पहला ग्रंथ, महाभारत सभापर्व का पद्यानुवाद है और दूसरा भजनों का संग्रह।

२६७ पतितदास—इनका रचा 'रजस्वला वैद्यक' ग्रंथ इस शोध में मिला है जो सं० १८९०=१८३३ ई० का रचा हुआ है। इसकी दो प्रतियाँ मिली हैं जिनमें लि० का० क्रमशः सं० १९१२ (१८५५ ई०) और सं० १९३९ (१८८२ ई०) दिये हैं। ग्रंथ पहले मिल चुका है, देखिये विवरणिकाएँ (१९१७—१९, संख्या १३३; १९२३—२५, सं० ११४; १९२६—२८; सं० ३४६)।

२६८ पतितदास, दास पतित पतितानंद अथवा पतितपावन दास—इनके दो ग्रंथों 'विवेकसार' एवम् 'पतित पावनदास की कविता, का पता चला है जिनके विवरण लिये गये हैं। केवल पहले ग्रंथ की प्रति में लि० का० सं० १९३९ (१८८२ ई०) दिया हुआ है। रचनाकाल दोनों ग्रंथों का अज्ञात है। इनका विषय भक्ति और ज्ञानोपदेश है। रचयिता अपने को क्षत्रिय कुल का बतलाते हैं। इनका निवासस्थान 'चकौली' में, ननिहाल अशरफपुर में और गुरु द्वारा 'रिठुरी-ग्राम में था।

२६९ प्राणनाथ (पन्ना)—ये प्रसिद्ध धामी संप्रदाय के संस्थापक थे। इनके रचे निम्नलिखित ग्रंथ मिले हैं। विशेष विवरण के लिये देखिये खोज विवरणिका (१९२३–२५ संख्या ३१८)।

क्र० सं०	नाम ग्रंथ	लि० का० = सन् ई०
१	प्रेम पहेली	×
२	श्री धाम पहेली	×
३	प्रगट बाणी	×
४	तारतम्य	×
५	वेदांत के प्रश्न	×

२७० प्रपन्न गणेशानंद—इनके भक्ति भावँती ग्रंथ के जो संवत् १६०९ (१५५२ ई०) का रचा हुआ है विवरण लिये गये हैं। इसकी प्रस्तुत प्रति संवत् १८१० (१७५५ ई०) की लिखी हुई है। ग्रंथ का उल्लेख खोज विवरणिका (१९०१, सं० १३६) पर भी है जिसमें रचनाकाल संवत् १६११ माना है। विशेष के लिये देखिये प्रस्तुत विवरणिका का भूमिका भाग संख्या १६।

२७१ प्रतापराय—प्रस्तुत खोज में इनका "वैद्यक-विधान" ग्रंथ प्रथम बार मिला है। इसका र० का० सं० १७७२ (१७१५ ई०) और इसकी प्रति का लि० का० सं० १९०० वि० (१८४३ ई०) है। यह अनुवाद ग्रंथ है। रचयिता के संबंध में कुछ ज्ञात नहीं।

२७२ प्रताप सिंह (जैपुर-नरेश)—का रचा "अमृत-सागर" नामक ग्रंथ का विवरण लिया गया है। इसकी प्रस्तुत प्रति में र० का० सं० १८३६ (१७७९ ई०) और लि० का० सं० १९०० (१८४३ ई०) दिये हैं। ग्रंथ पहले शोध में मिल चुका है, देखिये खोज विवरणिकाएँ (१९२३–२५ सं० ३२२; १९२६–२८, सं० ३५२)

२७३ प्रियादास—इनके रचे निम्नांकित ग्रंथों का विवरण लिया गया है—

क्र० सं०	ग्रंथ का नाम	रचनाकाल	लिपिकाल
१	अनन्य मोदिनी	×	×
२	भागवत सम्पूर्ण द्वादश स्कन्ध	×	सं० १९२४=१८६७ ई०
३	,, प्रथम स्कन्ध	×	सं० १८३७=१७८० ई०
४	,, अष्टम ,,	×	×

५	,,	द्वि० अ०	×	सं० १९१४=१८५७ ,,
६	भक्तमाल की भक्ति रस बोधिनीटीका	सं० १७६९=१७१२ ई०		सं० १९०२ = १८४५ ई०
७	पीपा जी की कथा	,, ,,		,, १८७६ = १८१९ ,,
८	रसिक मोदिनी		×	,, १८९६ = १८३९ ,,
९	संगीत रत्नाकर		×	,, १८३५ = १७७८ ,,
१०	संग्रह प्रियादास कृत		×	,, १९१० = १८५३ ,,

इनमें सं० ९ की दो प्रतियाँ हैं। शेष की एक-एक प्रति है। सं० ६ के विवरण पहले कई बार लिये जा चुके है, देखिये खोज विवरणिकाएँ (१९२०-२२ सं० १३५; १९२३-२५ सं० ३२३; १९२६-२८, सं० ३६१)।

२७४ पुरुषोत्तम—इनके रचे "जैमुनी पुराण" का पता लगा है जिसका र० का० सं० १५५८ (१५०१ ई०) है। रचयिता दादरपुर का निवासी था जो अयोध्या से चार योजन दक्षिण में बताया गया है। वहाँ के राजा का नाम रुपुमल्ल वैश्य लिखा है। ये क्षेमानंद के पुत्र थे और इनके व्याकरण गुरु का नाम रघुनाथ था। अपने गुरुद्वारा ये अम्बकपुर में बनलाते हैं। इनका प्रस्तुत ग्रंथ पहले मिल चुका है, देखिये खोजविवरणिका (१९२६–२८, सं ३६३)।

२७५ पुरुषोत्तम (मिश्र)—इनके बनाये "वैद्यकसार" ग्रंथ के विवरण लिये गये हैं जिसका र० का० अज्ञात है। इसकी प्रति का लि० का० सं० १९०२ (१८४५ ई०) है। यह पहले विवरण में आ चुका है, देखिये खोजविवरणिका (१९२३-२५, सं० ३२५)।

२७६ प्यारेलाल (काश्मीरी)—के रचे 'योग वाशिष्ट' की एक प्रति और "शिवपुराण' की दो प्रतियाँ पहले पहल मिली हैं। पहले ग्रंथ का र० का० सं० १९२२ (१८६५ ई०) और लि० का० सं० १९३३ (१८७६ ई०) हैं। दूसरे ग्रंथ का रचनाकाल अज्ञात है। लिपिकाल केवल एक प्रति में सं० १९३२ = १८७५ ई० दिया है। रचयिता के सम्बन्ध में कुछ ज्ञात नहीं है। "योग वाशिष्ठ" की पुष्पिका से पता चलता है कि उसके प्रतिलिपि-कार भैरवलाल ने पारिश्रमिक के रूप में रुपये लिये थेः—"सं० १९२२ में भाषा समाप्त हुई लिखा भैरवलाल ब्राह्मण भाद्रपद सं० १९३३ लिखाई का साढ़े सात ७||) रु० पाये।"

२७७ रग्घूकवि—यह जैन धर्म के अनुयायी थे। 'दश लाक्षणिक-धर्मपूजा' नामक ग्रंथ के ये रचयिता हैं जिसके इस बार विवरण लिये गये हैं। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में न तो रचनाकाल ही दिया है और न लिपिकाल ही। रचयिता का परिचय भी अज्ञात है। मूल ग्रंथ प्राकृत में है जिसके साथ साथ हिन्दी अनुवाद भी दिया गया है। पता नहीं कि ये दोनों कृतियाँ-प्राकृत मूल और हिन्दी रूपान्तर रग्घू कवि की ही हैं अथवा अलग अलग रचयिताओं की।

२७८ (जन) रघुनाथ रामसनेही—इनके रचे निम्नांकित ग्रंथ इस शोध में मिले हैं:—

क्र० सं०	ग्रंथ का नाम	लिपिकाल = ई० सं०
१	मानस दीपिका शंकावली	सं० १९३० = १८७३ ई०
२	,, ,, विश्राम	,, ,,
३	विश्राम—सागर	,, १९०१ = १९४४ ई०
४	प्रश्नावली	,, ,,

रचना-काल किसी का नहीं दिया गया है। रचयिता का कई ग्रंथों के साथ पहले उल्लेख हो चुका है, देखिये विवरणिकाएँ (१९२०-२२ सं० १३६; १९२६-२८ सं० ३७०)। संभवतः उपरोक्त सभी ग्रंथ 'मानस दीपिका' के ही खण्ड हैं। रचयिता का समय उनके 'भक्त माल महाकाव्य' के आधार पर सं० १९१४ (१८५७ ई०) के लगभग ठहरता है।

२७९ रैदास—जाति के चमार और प्रसिद्ध भक्त। इनके रचे 'प्रह्लाद लीला' और 'रैदास के पद' मिले हैं जिनका रचनाकाल विदित नहीं। लिपिकाल केवल दूसरे ग्रंथ की प्रति में सं० १६९६ (१६३९ ई०) दिया है। इस दृष्टि से यह प्रति महत्त्वपूर्ण है। दूसरा ग्रंथ पहले मिल चुका है देखिये खोज विवरणिका (१९०२, सं० ९७)। 'प्रह्लाद चरित्र' खोज में नया मिला है। विशेष विवेचन के लिये देखिये भूमिका भाग संख्या १४।

२८० रामचन्द्र (ज्योतिषी)—इनकी सं० १८५८ (१८०१ ई०) की रची और इसी समय की लिखी 'ज्योतिष पद्धति' नामक पुस्तक शोध में पहले पहल मिली है। रचयिता मेवाड़ निवासी था। उसने प्रस्तुत ग्रंथ को मारवाड़ के बहादुर सिंह दीवान की आज्ञानुसार लिखा था। ग्रंथ की भाषा में राजस्थानी का मिश्रण है।

२८१ रामचरण (साहपुर निवासी)—इनके रचे निम्नलिखित ९ ग्रंथ शोध में सर्वप्रथम प्राप्त हुए हैं:—

क्र० सं०	ग्रंथ का नाम	र० का० = ई० सन्	लि० का० = ई० सन्
१	जिज्ञासा बोध	सं० १८४७ = १७९० ई०	सं० १९०४ = १८४७ई०
२	विश्राम बोध	,, १८५१ = १७९४ ,,	,, १९०३ = १८४६ ,,
३	समतानिवास ग्रंथ	,, १८५२ = १७९५ ,,	,, १९०० = १८४३ ,,
४	विश्वास बोध ग्रंथ	,, १८४९ = १७९२ ,,	,, १९०४ = १८४७ ,,
५	अमृत उपदेश	,, १८४४ = १७८७ ,,	,, १९०० = १८४३ ,,
६	रामचरण के शब्द	,, ×	,, ,,
७	अणभै विलास	,, १८४५ = १७८८ ,,	,, १९०३ = १८४६ ,,
८	राम रसायनि	,, ×	,, १९०० = १८४३ ,,
९	सुखविलास	,, १८४६ = १७८९ ,,	,, १९०५ = १८४८ ,,

रचयिता नवल राम के गुरू और रामसनेही पंथ के संस्थापक थे, देखिये खोज विवरणिका (१९०१, सं० ६४)। मिश्र बन्धु विनोद के संख्या १०७५ पर भी इनका नाम आया है जिसमें इनके छः ग्रंथों का उल्लेख है जिनमें से पाँच ग्रंथ (संख्या १,२,४,६ और ७)

प्रस्तुत खोज में मिले हैं। रस मालिका ग्रंथ इनका न होकर अयोध्या के रामचरन दास का है। विशेष विवेचन के लिये देखिये भूमिका भाग सं० १३।

२८२ रामचरण (शाहजहांपुर के वैश्य)—इनके रचे 'संगीत मनोहर' नामक ग्रंथ के विवरण लिये गये हैं। ग्रंथ का र० का० अज्ञात है। इसकी प्रति में लि० का० सं० १९१६ (१८५९ ई०) दिया है। रचयिता जाति के वैश्य थे। ये खोज में नवोपलब्ध हैं।

२८३ रामहरी (वृन्दावन निवासी)—इनके रचे हुए निम्नलिखित ६ ग्रंथ शोध में पहले पहल मिले हैं:—

क्र० सं०	ग्रंथ का नाम	र० का०	लि० का०
१	रस पचीसी	सं० १८३५ = १७७८ ई०	सं० १८३५ = १७७८ ई०
२	बोध बावनी	,, ,, ,,	,, ,,
३	लघुशब्दावली	,, १८३४ = १७७७ ,,	,, ,,
४	लघु नामावली	,, ,, ,,	×
५	सत हंसी	,, १८३३ = १७७६ ,,	×
६	बुद्धि विलास	,, १८३२ = १७७५ ,,	×

कवि के विषय में कुछ ज्ञात नहीं।

२८४ रामहित—इनके "गणक अह्लादिका" जोतिष ग्रंथ की दो प्रतियाँ मिली हैं। ग्रंथ संवत् १८८४ (१८२७ ई०) में रचा गया था। प्रस्तुत प्रति में कोई लिपिकाल नहीं दिया है। रचयिता के सम्बन्ध में कुछ ज्ञात नहीं। ग्रंथ की एक प्रति में रचनाकाल का केवल पहला ही दोहा अंकित है।

२८५ रामकवि—इनके रचे 'गायन-संग्रह' ग्रंथ का पता लगा है। र० का० अज्ञात है। इसकी प्रति का लि० का० सं० १९२७ (१८७० ई०) है। रचयिता का परिचय अप्राप्त है। इस नाम के कई कवि हैं पर नहीं कहा जा सकता कि ये उनमें से कोई एक हैं अथवा नहीं।

२८६ राम औतार—इनके द्वारा रचे गए 'शिवपार्वती विवाह' अथवा 'शिव विवाह कवितावली' ग्रंथ की दो प्रतियाँ मिली हैं। र० का० सं० १९१९ (१८६२ ई०) है। प्राप्त प्रतियों का लि० का० एक ही संवत् १९४९ (१८९२ ई०) है। रचयिता नवोपलब्ध है।

२८७ रामबकस (विप्र)—इनके रचे तीन ग्रंथ 'कवित्त' 'विप्रकरुणा सागर' तथा 'रामबकस के कवित्त' मिले हैं जिनके विवरण लिये गये हैं। इनकी प्रतियों में र० का० नहीं दिये हैं। कवि के सम्बन्ध में भी कुछ ज्ञात नहीं होता। विनोद के सं० १६७९ पर इस नाम का एक कवि अवश्य है। परन्तु यह उससे भिन्न है अथवा अभिन्न प्रमाणाभाव के कारण कुछ नहीं कहा जा सकता। पहले ग्रंथ में बुढ़ापे से छुटकारा पाकर शरण में लेने की ईश्वर से प्रार्थना है। दूसरे में ब्राह्मणों की रक्षा की प्रार्थना है और तीसरे में राम-कृष्ण के चरित्रों का संक्षिप्त दिग्दर्शन कराया गया है।

२८८ रामकृष्ण—इनके बनाये 'कार्तिक महात्म्य' की तीन प्रतियाँ प्रस्तुत शोध में पहले पहल मिली हैं जिसका र० का० सं० १७४२ (१६८५ ई०) है। लिपिकाल केवल एक प्रति में दिया गया है जो संवत् १९०६ (१८४९ ई०) है। रचयिता के सम्बन्ध में कुछ ज्ञात नहीं। खोज में ये नवोपलब्ध हैं।

२८९ रामानुजाचार्य—इनके नाम से 'राम-रक्षा' नामक स्तोत्र की एक प्रति के विवरण लिये गये हैं। विस्तृत विवरण के लिये देखिये विवरणिका की भूमिका संख्या १७।

२९० रामप्रसाद—इनका रचा 'सुखजीवन प्रकाश' नामक एक वैद्यक ग्रंथ का पता पहले पहल लगा है। उसका र० का० सं० १९३२ (१८७४ ई०) है रचयिता जहानगंज का निवासी था। अन्य वृत्त अप्राप्त है। पुस्तक की प्रस्तुत प्रति का लि० का० सं० १९३६ (सन् १८७९ ई०) है।

२९१ रामप्रसाद (निरंजनी)—इनके रचे 'योगवाशिष्ठ सार' की चार प्रतियाँ पहले पहल मिली हैं। ग्रंथ का र० का० सं० १७९८ (१७४१ ई०) है। इसकी सबसे प्राचीन प्रति का लि० का० सं० १८५६ (१७९९ ई०) है। रचयिता पटियाला के निवासी थे और वहाँ की महारानी को प्राचीन धार्मिक ग्रंथ सुनाया करते थे। इनके विस्तृत विवरण के लिये देखिये भूमिका का अंश संख्या ३।

२९२ रामसेवक—इनकी बनाई 'अखरावटी' की एक प्रति इस में प्राप्त हुई है। उसका र० का० अज्ञात है। हस्तलेख में लि० का० सं० १९३८ (१८८१ ई०) दिया है। इस ग्रंथ के विवरण पहले लिये जा चुके है, देखिये खोज विवरणिका (१९०९-११, सं० २५८)। उक्त विवरणिका में रचयिता के संबंध में कुछ नहीं दिया है। अब पता लगा है कि ये सं० १८५० (१७९३ ई०) के लगभग वर्तमान थे। हरचन्दपुर (बाराबंकी अवध) के निवासी और सत्यनामी सम्प्रदाय के साधु देवीदास के शिष्य थे।

२९३ रंगीलाल (माथुर)—इनके रचे 'कार्तिक महात्म्य' और 'जर्राहीप्रकाश' (वैद्यक-ग्रंथ) की दो-दो प्रतियाँ मिली हैं। पहले ग्रंथ का र० का० अज्ञात है। दूसरे का सं० १९२७ (१८७० ई०) है। पहले ग्रंथ की दोनों प्रतियों और दूसरे ग्रंथ की एक प्रति में लिपिकाल सं० १९४० (१८८३ ई०) दिये हैं।

२९४ रसजानि—इनके बनाये भागवत महापुराण का पूरा अनुवाद एवम् उसके आठ खण्ड (प्रथम स्कन्ध से अष्टम स्कन्ध तक पृथक पृथक) मिले हैं जिनके विवरण लिये गये हैं। ग्रंथ का र० का० सं० १८०७ (१७५० ई०) है। सबसे प्राचीन प्रति का लिपि काल सं० १८६३ है। इसका उल्लेख पिछली दो खोज-विवरणिकाओं (१९०१ सं० ९४; १९१२-१४, सं० १५०) में हो चुका है।

२९५ रतिभान—इनके रचे 'जैमुनी पुराण' की दो प्रतियाँ मिली हैं जिनका विवरण पहले पहल लिया गया है। ग्रंथ का र० का० सं० १८८८ (१८३१ ई०) है। लि० का० केवल एक प्रति में सं० १८४४ (१७८७ ई०) दिया है। रचयिता अपने को परशुराम का पुत्र बताते हैं। इनका निवास स्थान मध्य प्रदेशान्तर्गत 'इटौरा' नामक ग्राम था जो

'नौरठौ या नौरठा' नामक (कालपी के समीप) ग्राम के पास ही दैतवे नदी के तीर पर बसा है । ये प्रणामी पंथ के संस्थापक सतगुरु रोपन के अनुयायी थे ।

वंश वृक्ष इस प्रकार है:—

सतगुरु रोपन (प्रणामी पंथ का संस्थापक)
|
मण्डनदास
|
जानराय
|
परशुराम
|
| | | |

(इनके चार पुत्र-सब में छोटे रतिभान ग्रंथ लेखक)

[रचयिता का विशेष विवेचन भूमिका भाग संख्या-२ में है ।]

२९६ रतीराम—इनका बनाया 'वैद्यसुधा निधि' ग्रंथ प्रथम बार मिला है जिसकी प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल और लिपिकाल का कोई उल्लेख नहीं मिलता । प्रति अशुद्ध और अपूर्ण है । ग्रंथकार अपने पिता का नाम हरदेव बताता है । ग्रंथ बड़े परिश्रम से चरक, सुश्रु-तादि प्राचीन संस्कृत ग्रंथों के आधार पर लिखा गया है । चीड़, फाड़ और फोड़ा फुंसी आदि कुछ विषयों को छोड़ कर इसमें सभी रोगों पर प्रकाश डाला गया है । इसमें मंत्रादि का भी समावेश है । रचयिता के सम्बन्ध में अधिक कुछ ज्ञात नहीं ।

२९७ रत्नदास—इनके रचे 'प्रेमरत्न' नामक ग्रंथ की दो प्रतियाँ इस शोध में मिली हैं । ग्रंथ का र० का० सं० १८४४ (१७८७ ई०) है । इसकी प्राप्त प्रतियों में से केवल एक में ही लि० का० सं० १८७२ (१८१५ ई०) दिया है । इसके विवरण पहले भी हो चुके हैं, देखिये खोजविवरणिकाएँ (१९०९–११, सं० २६७; १९२३-२५, सं० ३५९)। इन दोनों विवरणिकाओं में रचयिता का नाम "रत्न कुँवरि बीबी (राजा शिवप्रसाद की दादी) दिया हुआ है जो प्राचीन शोध से अशुद्ध सिद्ध हो चुका है ।

२९७ रत्नसिंह—इनका रचा 'विग्रह वर्णन' नामक बिना सन् संवत् का एक ग्रंथ इस शोध में पहली बार मिला है । यह मूल संस्कृत ग्रंथ पंचतन्त्र का पद्यानुवाद है । रचयिता के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं । काशी के राजा राजसिंह के पुत्र ने भी इसी नाम (रत्नसिंह) से ग्रंथ रचना की है । वह संवत् १८४३ ई० के लगभग वर्तमान था । परन्तु प्रमाणाभाव के कारण यह नहीं कहा जा सकता कि प्रस्तुत लेखक वही हैं या उनसे भिन्न ।

२९९ रूपराम सनाढ्य—आगरा और इटावा जिलों को जहाँ यमुना प्राकृतिक रूप में पृथक करती है वहीं एक प्राचीन स्थान कचौरा घाट (आगरा) है जहाँ प्रस्तुत रच-यिता का निवास स्थान था । इनके रचे कुछ फुटकर छन्द 'कवित्त संग्रह' के नाम से इस शोध में प्राप्त हुए हैं जिनका र० का० और लि० का० अविदित हैं । रचयिता का विशेष विवे-चन भूमिका भाग संख्या ४ में किया गया है ।

३०० सदासुख लाल (कासिली वाल)—इनका रचा "रत्नकरंड श्रावकाचार की देश भाषा मय वचनिका" नामक ग्रंथ मिला है जिसके विवरण लिये गये हैं। मूल ग्रंथ संस्कृत में स्वामी समंतभद्र का रचा हुआ है जो सूत्रों में है। प्रस्तुत लेखक उसके टीकाकार हैं। ग्रंथ की रचना संवत् १९१९ में आरंभ हुई और संवत् १९२० में पूरी हुई। इसकी प्रस्तुत प्रति में लि० का० सं० १९५८=१९०१ ई० दिया है।

३०१ सहाई राम—इनका संवत् १९०७ (१८५० ई०) का रचा हुआ "अयोध्या महात्म्य" नामक ग्रंथ मिला है जिसकी प्रस्तुत प्रति का लि० का० सं० १९३६ (१८७९ई०) है। यह इस नाम के संस्कृत ग्रंथ का अनुवाद है और शोध में नवीन है। रचयिता के सम्बन्ध में कुछ भी ज्ञात नहीं है।

३०२ शक्तधर (शुक्ल)—इनका रचा 'रामायण महात्म्य' मिला है जो मूल संस्कृत ग्रंथ का भाषा में अनुवाद है। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल नहीं दिया है। लिपिकाल संवत् १९४० (१८८३ ई०) है। रचयिता के संबंध में कुछ भी ज्ञात नहीं।

३०३ शंकरदास—इनका बनाया 'महाभारत गदापर्व' का अनुवाद मिला है जो खंडित है। इसका र० का० अज्ञात है। इसकी प्रस्तुत प्रति का लि० का० सं० १८७६ (१८१९ ई०) है। रचयिता के संबंध में कुछ ज्ञात नहीं।

३०४ सेवादास पाँडेय—इनका बनाया हुआ 'करुणा-विरह प्रकास' नामक ग्रंथ मिला है। इसका रचनाकाल सं० १८२४ (१७६७ ई०) है जिसकी प्राप्त प्रति में लि० का० सं० १८६२ (१८०५ ई०) दिया है। ग्रंथ के विवरण पहले लिये जा चुके हैं, देखिये खोज विवरणिका (१९१२–१४, सं० १७३)। उक्त विवरणिका में रचनाकाल सं० १८२२ (१७६५ ई०) दिया है:—

"संवत् अष्टादश भये विधि विंशति गुरुवार।
कातिक सुदी एकादशी, लियो ग्रंथ अवतार ॥"

विचार करने पर विदित होता है कि रचनाकाल संवत् १८२२ ही ठीक है। क्योंकि विधि विंशति में आधी संख्या सांकेतिक शब्द में और आधी संख्या संख्यावाचक शब्द में है जो उचित नहीं जँचता। रचयिता ने दोनों संख्याओं को संख्यावाची शब्दों में ही दिया होगा। अतः स्पष्ट है कि 'विवि' का 'विधि' हो गया।

३०५ शीतल प्रसाद—इनका बनाया "राधा रहस्य" नामक विनय संबंधी ग्रंथ मिला है जिसका र० का० सं० १९०६ (१८४९ ई०) है। इसकी प्रति में लि० का० सं० १९१८ (१८५१ ई०) दिया है। रचयिता का निवास स्थान रहीमाबाद के अन्तर्गत जुरिया नामक स्थान था। उस समय यह स्थान सूबासिंह—के गोवत्सगोत्रीय क्षत्रिय—के अधिकार में था। ये त्रिपाठी ब्राह्मण और उक्त सूबासिंह के आश्रित थे।

३०६ सीताराम—इनके "दिल लगन चिकित्सा" नामक ग्रंथ की तीन प्रतियाँ मिली हैं जिनमें र० का० सं० १८७० (१८१३ ई० दिया है। लि० का० सब से प्राचीन

प्रति का सं० १८९० (१८३३ ई०) है। ग्रंथ पहले मिल चुका है, देखिये खोज विवरणिकाएँ (१९२३-२५; सं० ३८९) (१९२६–२८, सं० ४३७)।

३०७ सीताराम—इनके रचे 'कवि तरंग' नामक वैद्यक ग्रंथ की तीन प्रतियाँ मिली हैं। र० का० सं० १७६० वि० (१७०३ ई०) है और प्राचीन प्रति का लि० का० सं० १८६९ (१८१२ ई०) है। इस ग्रंथ के विवरण पहले भी लिये जा चुके हैं, देखिये खोज विवरणिका (१९२६–२८, सं० ४४०)।

३०८ सीताराम—इनके बनाये "प्रभाती-भजन" की एक प्रति मिली है जिसकी प्रस्तुत प्रति में रचना काल नहीं दिया है पर इसका लि० का० सं० १९३० (१८७३ ई०) है। इनके बनाये 'कवित्त संग्रह' के विवरण पहले लिये गये हैं। उसका र० का० सं० १९३० (१५७३ ई०) था। यही या इसी समय के लगभग इनका भी रचनाकाल समझा जाता है। देखिये खोज-विवरणिका (१९२६—२८, सं० ४३८)।

३०९ शिवगोपाल—इनका रचा "औषधि यूनानीसार" नामक ग्रंथ खोज में पहले पहल मिला है। र० का० सं० १८८० (१८२३ ई०) है। इसकी प्रति में लि० का० सं० १९०२ (१८४५ ई०) दिया है। रचयिता दिल्ली निवासी था। इससे अधिक उसके विषय में कुछ ज्ञात नहीं है।

३१० शिवगुलाम—इनका संगृहीत 'श्रृंगार सार' ग्रंथ मिला है : इसकी प्रस्तुत प्रति में सन् संवत् का उल्लेख नहीं है। यह पहले पहल विवरण में आ रहा है। संग्रह अच्छा है। संग्रहकार वेथन (उन्नाव) के निवासी थे।

३११ शिवनाथ—इनका रचा 'रस रंजन' नामक ग्रंथ शोध में मिला है जिसका र० का० अज्ञात है पर लि० का० सं० १८४६ (१७८९ ई०) दिया है। ग्रंथ पहले विवरण में आ चुका है, देखिये खोज विवरणिका (१९२६–२८, सं० ४४८)। 'विनोद' के सं० ७६७ पर इनका र० का० १७९८ (१७४१ ई०) और डा० ग्रियर्सन के ग्रंथ में सं० १५२ पर १६६० ई० माना गया है। विनोद इन्हें पन्ना का निवासी बतलाते हैं और उक्त डाक्टर महोदय जसवंतसिंह बुंदेला के आश्रित लिखते हैं। हमारी पिछली रिपोर्ट में भी लि० का० सं० १८४६ (१७८९ ई०) ही दिया है। परंतु मैं समझता हूँ उसे मौखिक रूप से रचनाकाल मान लिया है।

३१२ राजाशिवप्रसाद—इनके द्वारा अनुवादित ग्रंथ 'मनुधर्म सार' जिसका र० का० अज्ञात है और लि० का० सं० १९१३ (१८५६ ई०) है, इस त्रिवर्षी में प्राप्त हुआ है। इसके विवरण पहले नहीं लिये गये।

३१३ शिवराम शास्त्री—इनके रचे 'वैद्य संग्रह' नामक ग्रंथ की दो अपूर्ण प्रतियाँ मिली हैं। कहा जाता है कि इनमें से एक प्रति को स्वयंभू रचयिता ने सं० १९२७ (१८७० ई०) में अपने हाथ से लिखा। अतएव ग्रंथ का यही रचनाकाल भी होता है। रचयिता के संबंध में कुछ ज्ञात नहीं।

३१४ शिवरत्न मिश्र—इनका बनाया 'बैताल पचीसी" नामक ग्रंथ का इस त्रिवर्षी में पहले पहल विवरण लिया गया है। ग्रंथ का र० का० सं० १८५६ (१७९९ ई०) और लि० का० १८९६ (१८३९ ई०) है। यह खड़ी बोली में लिखा गया है।

३१५ श्रीधर स्वामी— इनके 'भागवत भावार्थ दीपिका' नामक भागवत के अनुवादित ग्रंथ के चौथे स्कंध से नवें स्कंध तक (सातवाँ स्कंध छोड़ कर) पृथक पृथक पाँच प्रतियाँ उपलब्ध हुई हैं। इनमें सन्-संवत् का कोई उल्लेख नहीं हुआ है। रचयिता के संबंध में भी कुछ ज्ञात नहीं है।

३१६ श्रीलाल—इनके रचे 'गणित प्रकाश' के तीन भाग तथा 'महाजनी सार' की दो प्रतियाँ शोध में मिली हैं। पहले भाग (गणितप्रकाश) का र० का० सं० १९०७ (१८५० ई०), दूसरे भाग का (सन् १८५६ ई०) और तीसरे का सं० १९११ (१८५४ ई०) हैं। लि० का० इनका क्रमशः सं० १९१० (१८५३ ई०), १८६० ई० और १९१३ (१८५६ ई०) है। दूसरे ग्रंथ का र० का० एक प्रति के अनुसार सं० १९०३ (१८४६ ई०) और दूसरी के अनुसार सं० १९१३ (१८५६ ई०) हैं। लि० का० क्रमशः सं० १९१३ = १८४६ ई० और १९२० (१८६३ ई०) हैं। संभवतः महाजनी सार के भी पृथक-पृथक भाग हैं। यह उत्तर प्रदेश (तब युक्त प्रांत) के शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर के कार्यालय में काम करते थे और पाठ्य पुस्तकें भी लिखते थे।

३१७ श्रीपति भट्ट—इनका रचा 'हिम्मत प्रकाश' नामक वैद्यक ग्रंथ मिला है जिसके विवरण लिये गये हैं। इसकी प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल का उल्लेख नहीं है। लि० का० सं० १८९८ (१८४१ ई०) है। यह पहले विवरण में आ चुका है, देखिये खोज विवरणिका (१९०६–८ सं० २३८)। प्रस्तुत प्रति अधूरी है। उक्त विवरणिका के अनुसार रचनाकाल सं० १७३१ (१६७४ ई०) है। रचयिता इलाहाबाद के नबाब सैयद हिम्मत खाँ के आश्रित थे जो औरंगजेब के समकालीन थे।

३१८ सुन्दरलाल—इनके रचे 'ध्रुव लीला', 'हरिश्चन्द्रलीला' और 'ऊषालीला' नामक तीन ग्रंथ मिले हैं। पहले ग्रंथ का र० का० सं० १९०१ = १८४४ ई० और लि० का० १९१८ (१८५१ ई०) है। शेष दोनों ग्रंथों का रचनाकाल अज्ञात है। लि० का० सं० १९३२ (१८७५ ई०) तथा सं० १९४० (१८८३ ई०) दिये हैं। रचयिता मथुरा जिले के करहल्ला ग्राम के निवासी थे। गत विवरणिका (१९२६-२८, सं० ४६८) में इनका पहला ग्रंथ 'सुन्दर श्रृंगार' के रचयिता सुन्दरदास के नाम पर उल्लिखित है। परन्तु इस बार प्रमाण मिल जाने के कारण यह सुन्दर लाल नामक एक अलग रचयिता की कृति विदित हुई। शेष दोनों ग्रंथ नवीन हैं।

३१९ सूरदास—ये प्रसिद्ध कवि और महात्मा हैं। अष्टछाप के ये प्रथम कवि थे और पिछली कई खोज विवरणिकाओं में इनका उल्लेख हो चुका है, देखिये खोज विवरणिकाएँ (१९१२-१४ सं० १८५; १९२०-२२, सं० १८६; १९२६-२८, सं० ४७०)। इस बार इनके निम्नलिखित ग्रंथ और मिले हैं: —

क्र० सं०	नाम ग्रंथ	प्रतियाँ	लि० का० = सन् ई०
१	सूर सागर	२	सं० १७९७ = १७४० ;,
२	भागवत (दशम)	३	सं० १९१७ = १८६० ,;
	,, (एकादश स्कन्ध)	१	,, ,,
	;, (द्वा० स्कं०)	१	,, ,,
३	सूर रतन	१	,, १८७४ = १८१७ ,,
४	राग माला	१	×
५	विसाँतन लीला	२	,, १८३१ = १७७४ ,,

ये सभी ग्रंथ लगभग उपर्युक्त विवरणिकाओं में आ चुके हैं । रागमाला इस खोज में विशेष उल्लेखनीय है । इसमें सूरदास जी के १००० पद संगृहीत हैं और ग्रंथ चित्रों से भूपित है । इसका लेख भी सुन्दर है ।

३२० सूर्यनारायण—समस्या पूर्तिया के विचार से लिखा गया इनका 'कविता-वली पूर्ति प्रभाकर' नामक ग्रंथ पहले ही पहल मिला है । ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति में रचनाकाल नहीं दिया है । लि० का० सं० १८५४ (१७९७ ई०) है । रचयिता कोद (मिर्जापुर) का निवासी था ।

३२१ श्यामलाल (गौरी लावा निवासी)—के बनाये 'नवरत्न' नामक कृष्ण चरित्र संबन्धी एक ग्रंथ की दो प्रतियाँ शोध में प्राप्त हुई हैं । ग्रंथ का रचनाकाल अज्ञात है । इसकी प्रस्तुत प्रति में लि० का० १९०८ (१८५१ ई०) दिया है । रचयिता गौरी लावा (तहसील, शिवराजपुर, जिला कानपुर) के निवासी थे । इससे अधिक इनके विषय में कुछ ज्ञात नहीं ।

३२२ श्यामलाल (माथुर)—इनके रचे "सैर-बाटिका" और "दान-लीला" नामक दो ग्रंथ पहले पहल प्राप्त हुए हैं । पहला ग्रंथ सं० १८९४ (१८३७ ई०) और दूसरा सं० १८९१ (१८३४ ई०) के रचे हुए हैं । लिपिकाल दोनों का एक ही अर्थात् सं० १९०० (१८४३ ई०) है । रचयिता के सम्बन्ध में कुछ ज्ञात नहीं ।

३२३ टिकैतराय—इनकी बनाई 'गाजर की लड़ाई' के जो आल्हा छन्दों में लिखी गई है विवरण लिये गये हैं । ग्रंथ का र० का० अज्ञात है । इसकी प्राप्त प्रति में लि० का० सं० १९१२ = १८५५ ई० है । अन्य सूत्रों से पता चला है कि रचयिता सं० १९०० = १८४३ ई० के लगभग वर्तमान थे । इनके सम्बन्ध में अधिक कुछ ज्ञात नहीं ।

३२४ टीकाराम (अवस्थी)—इन्होंने बाराहमिहिर कृत संस्कृत ग्रंथ 'लघुजातक' का पद्यबद्ध अनुवाद किया है जिसकी एक प्रति जिसमें सन्-संवत् का विवरण नहीं दिया हैं इस शोध में प्राप्त हुई है । रचयिता के पिता का नाम भवानीप्रसाद था । इससे अधिक इनके विषय में और कुछ ज्ञात नहीं ।

३२५ गोस्वामी तुलसीदास—ये हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं और इस बार इनकी कई रचनाओं की ६५ प्रतियाँ मिली हैं जिनका विवरण नीचे दिया जाता है:—

क्र० सं०	ग्रंथ का नाम	प्रतियाँ	लि० का० (पुरानी प्रति का)
१	रामचरित मानस	१	×
२	,, ,, बालकाण्ड	५	१८३४ = १७७७ ई०
३	,, ,, अयोध्या ,,	३	१७९० = १७३३ ,,
४	,, ,, आरण्य ,,	६	१७६० = १७०३ ,,
५	,, ,, किष्किन्धा,,	७	१८६२ = १८०५ ,,
६	,, ,, सुन्दर ,,	७	१७९० = १७३३ ,,
७	,, ,, लंका ,,	३	१८७८ = १८२१ ,,
८	,, ,, उत्तर ,,	६	१७६० = १७०३ ,,
९	,, ,, लवकुश ,,	२	१७६० = १७०३ ,,
१०	विनय पत्रिका	२	×
११	कवितावली	१	×
१२	गीतावली	१	१९०७ = १८५० ,,
१३	कृष्ण गीतावली	३	१७८८ = १७३१ ,,
१४	दोहावली	१	×
१५	विजय दोहावली	१	१८३२ = १७७५ ,,
१६	हनुमान चालीसा	१	१९२६ = १८७० ,,
१७	हनुमान बाहुक	१	×
१८	विराग संदीपनी	१	×
१९	जानकी मंगल	२	१८०२ = १७४५ ,,
२०	रामाज्ञा प्रश्नावली	३	१८०३ = १७४६ ,,
२१	चेतावनी दोहा	१	१८९८ = १८४१ ,,
२२	हनुमान त्रिभंगी छन्द	१	×
२३	बारह मासी(रा० चं०की)	१	×
२४	श्रीरामजी स्तोत्र	१	×
२५	त्रिदेव स्तुति	१	×
२६	ज्ञान दीपिका	२	१८४५ = १७९७ ,,

३२६ तुलसी साहब (हाथरस वाले)—इनके बनाये चार ग्रंथ 'घटरामायण' संवाद फूलदास कबीर पंथी (संवाद फूलदास कबीर पंथी से तुलसी साहब का), संवाद पलक राम नानक पंथी (संवाद पलक राम नानक पंथी से तुलसी साहब का) और रत्नसागर प्राप्त हुए है । र० का० किसी ग्रंथ का नहीं दिया है । लि० का० प्रथम दो ग्रंथों की प्रतियों का सं० १९११ = १८५४ ई० और तीसरे ग्रंथ की प्रतिका सं० १९१९ = १८६२ ई० है । चौथे ग्रंथ की प्रति में लिपिकाल नहीं दिया है । घट रामायण के विवरण पहले हो चुके हैं , देखिये खोज-विवरणिका (१९१२-१४ सं० १९०) । उक्त सभी ग्रंथ बेलवेडियर प्रेस प्रयाग से प्रकाशित हो चुके हैं ।

३२७ वाजिद—इनके बनाये 'आरिल्ल' और 'साखी' नामक दो ग्रंथ पहले पहल मिले हैं। इनसे पूर्व इनका 'राजकीर्तन' नामक ग्रंथ मिला था, देखिये खोज-विवरणिका (१९०२, सं० ७९)। इनका र० का० सं० १६५७ = १६०० ई० माना गया है। ये जन्म के मुसलमान और दादूपंथी सन्त थे। इनके प्रस्तुत ग्रंथों की प्रतियों में सन् संवत् का ब्योरा नहीं है। विशेष विवेचन के लिये देखिये भूमिका भाग संख्या १५।

३२८ विष्णुदास—इनके लिखे निम्नलिखित तीन ग्रंथ प्राप्त हुए हैं जिनका र० का० अज्ञात है।

क्र० सं०	ग्रंथ का नाम	प्रतियाँ	लि० का० = सन् ई०।
१	महाभारत	१	×
२	रुक्मिणी मंगल	१	×
३	स्वर्गारोहण	४	१८०६ = १७४९ ई०

रचयिता का समय सं० १४९२ = १४३५ ई० के लगभग है और वह गवालियर (गोपाचल) नरेश राजा डोंगर सिंह के आश्रित थे। इनके प्रस्तुत ग्रंथ पहले मिल चुके हैं देखिये खोज बिवरणिकाएं (१९०६-८, सं० २४८; १९१२-१४, सं० १९३; १९२६-२८ , सं० ४६६)।

३२९ यमुनाशंकर—इनके रचे तीन ग्रंथ-१ अवतार सिद्धि (२) रामगीता की टीका और (३) माँडूकोपनिषद भाषा टीका—पहले पहल मिले हैं। दूसरा ग्रंथ सं० १९२९= १८७२ ई० में रचा गया और यही इसका लि० का० भी है। शेष ग्रंथों में र० का० का उल्लेख नहीं है। प्रथम ग्रंथ की प्रति का लि० का० सं० १९३२ = १८७५ ई० है। तीसरे ग्रंथ की प्रति में लिपिकाल नहीं है। परन्तु यह गद्य में होने के कारण महत्व की है। माँडूकोपनिषद् पर संस्कृत में जगद्गुरु जी के भाष्य का और उनके पूज्य गुरु श्रीगौड़पादाचार्य जी की कारिकाओं का भी उल्लेख इस ग्रंथ में है। रचयिता गुर्जर नागर ब्राह्मण था, और स्वामी ब्रह्मानंद का शिष्य था। ये काशी में रहते थे।

———

द्वितीय परिशिष्ट

प्रथम परिशिष्ट में वर्णित रचनाकारों की कृतियों के उद्धरण

द्वितीय परिशिष्ट

रचनाकारों की कृतियों के उद्धरण

संख्या १. कलेस भंजनी, रचयिता—अब्दुल मजीद, कागज—देशी, पत्र—६०, आकार–१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९०८, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० प्रागदत्त दुवे, ग्राम—सिकंदरपुर, डाकघर—बेनीगंज, जिला—हरदोई।

आदि—ॐ श्री गणेशायनमः ॥ कोआ को इलाज कै दुषण को दूरि कराबे को इलाज ॥ अफला तण हकीम सकराती हकीम, जाली नूस हकीम लोकमान हकीम अरस्ता तालीस हकीम सकराती हकीम सबकी मन मिलिकै इलाज दूषण का सभनू पोथी से जो जो अजमाइस वीच आया सो एक जगह कै कै पोथी वैदक वनाई। वैदक वनाई के नाम, तोफतूल गुर्वा फारसी मँह और हिन्दु महं कलेस भंजनी राषा ॥ वरकत उस नाम की सै मैं वद अदान फकीर हक। मै न उरूफ अब्दुल मजीद अनुसार लिषण पोथी का की खैर आफियत सो तमाम होतीस पीछे इलाज सब दुषण का वनाइ दिया कि दुखिण के काम आवै और इलाज औरति मरद का अैब हुनर औरतहु का तरकीब होली नफा माजून का और दारु कुवत वाह मर्द का कि काम देव जियादा होइ। और गुरदा गरम होइ। तरकीव दूसरी। लज्जत पावना वखत संग्रह के मरद और औरति के औ मायल करण औरति को संग्रह मो ॥

अंत—इलाज मंतर थन इल का आजमूदा है ॥ जो किसी औरति को थन इल हो तो क्या करे। इस भांतिना उस औरति को पूंछ मांगे औ कारन वाले का नाव उस औरति के कान में कहि आवै कि फलाना तुम्हारा थनइल करता है जो दहिनी चूची महँ होइ तो अपनी बाईं चूची पकरि कै कारै औ फूंकै जो वांय महँ होइ तौ अपनी दाहिनी चूची पकरि कै कूरै तौ खाम खाह मोर वाह फुरसति होय॥ मंतर यहि है पढ़ि के फूंकने को जानना॥ पाकरि येक आये खानी नागिन दुहै गाय फलानी का थनइल कारौ पानी पंथ होइ जाइ सात बेर फूंकै फुरसति होइ। मंतर धनिही का है सात बेर पढ़ि के फूंकना और मंतर अध कपारी का भी यही है। नदी किनारे रुखवा तेहि पर चढ़े ढंखिनी हंखीनी भंखिनी संखिनी मंखिनी हे हां। ईश्वर महादेव गौरा पारवती को भीतर ही जॅरि होइ जरि होइ छार होइ नरहै नरहै नरहै ॥ अपूर्ण।

विषय—वैद्यक।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ को अब्दुल मजीद ने फारसी तुहफतुल गुरबा से हिन्दी में लिखकर कलेश भंजनी नाम रखा।

संख्या २ ए. धातु मारन विधि, रचयिता—आधार मिश्र, कागज—देशी, पत्र—२०६, आकार—८ X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८१०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६० = १८०३ ई० | प्राप्तिस्थान—लाला स्वामीदयाल, ग्राम—ताहरपुर, डाकघर—मुरसान, जिला—अलीगढ़ |

आदि—श्री गणेशायनमः || अथ धातु मारन विधि ग्रन्थ लिख्यते ॥ अथ फौलादि मारन विधिः—लोह चूर्ण भुरकी में करै । अर्क दुग्ध ऊपर ते भरै || गंधक नैनुवां देइ डारि । गज पुट आंच दे लेइ निकारि ॥ पुनः लोह मारन—लोह चूर्ण भुरकी में करै । अपामार्ग रस ऊपर भरै || तीनि वेर दृढ़ गज पुट करै । रस पौलादि तब निश्चय मरै

अंत—अथ पाह मारन विधिः—अर्क दूध पाह दुगुन भुरकी में भरै दीपक ते मुंह मूंदि गज पुट में भरै || जों भरि जो खाइ प्रात तिगुन भूख लागै ॥ पुष्टक अधिकार है प्रमेह बीस भागै ॥ पुनः पाह मारन विधिः—अमलोना की भाजी सों घोटि कै धरीजै ॥ ताके वीच पाह भरै गज पुट आंच दीजै ॥ अमिली को मुर्चा तर ऊपर धरि दीजै ॥ अमिली ना मिलै तो पीपर को लीजै ॥ ऐसी दृढ़ भट्टी सो तीनि दिवस प्रचै । चौथे दिन रस निकारि रोगी लषि प्रचै ॥ कोता दम छई कास बाई को मारै || चारि प्रकार जूड़ी रस पहुँचत में टारै इति श्री आधार मिश्र विरचिते धातु मारन विधि ग्रंथ संपूर्ण समाप्तः लिखतं दुरगा परसाद मिश्र अश्वनि सुदि प्रतिप्रदा संवत् १८६० वि० ॥

संख्या २ बी. वैद्यक (कठिन रोगों की औषधि), रचयिता—आधार मिश्र, कागज—देशी, पत्र—४०, आकार—८ X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००८, रूप—प्राचीन, नागरी, प्राप्तिस्थान—रामशंकर वैद्य,—ग्राम—धनराजपुर, डाकघर—मल्लावाँ, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ वैद्यक आधार मिश्र कृत लिख्यतेः—अथ सर्व ज्वर को धूरा बत्तीसा, चिरैता कुटकी मिर्च पीपरि, सोंठि, बहेरा, हर्रा, अवरा, देवदारु, हींग, मजीठ, सोंफ, मगरैल, अजमोद, जवाइन, कचूर जेठी मधु, कुरथी अगर कैपूरा, अतीस बड़ी बच, अरहरी, या रसानि, जेवासा सरसों- वाय भिडंग सेधौ सहि जेन की पाती खुरा जुवाइनि घिया रासनि भरंगी, पुहकर मूल. सब सम लेव धूरा करै सर्व ज्वर हरे ॥

अंत—अथ जावत्री पाग—जावत्री पाव भरि दूध सेर पांच गौ घ्रत पैसा १२ सब मिलाइ खोवा दाना दार करब खांड पैसा अठारह पाग में मिलावै पत्रज अकर करह इलायची नाग केशरि मूसरि के बीच के बीज उटंगन माल काकुनि वरियारा के बीज अज मोद सौंफ तेज वल गुखरू सतावरि वंश लोचन जेठी मधु त्रिकुटा कचूर कवाव चीनी मोच रस प्रति टंक २ चूर्न कै अभ्रक तोला १ सोरा तोला १ कस्तूरी मासे १ कपूर मांसे १ सब मिलाइ खाइ टंक दो दूनौ जून पुष्ट करै रोग वहि जाइ धातु वृद्धि होइ लिंग दृढ़ होइ ॥

इति श्री आधार मिश्र विरचिते वैद्यक कठिन रोगों की औषधि संपूर्ण समाप्तः।

संख्या २ सी. वैद्यक विलास संग्रह, रचयिता—आधार मिश्र, कागज—देशी, पत्र—१००, आकार—१२ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२००४, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य-गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९६ = १८३९ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला कन्नूमल पटवारी, ग्राम—बलदेवपुर, डाकघर—उम्मरगढ़, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ वैद्यक विलास संग्रह आधार मिश्र कृत लिख्यये ॥ जीर्ण ज्वर लक्षण—उदर पीड़ा क्षर्दि होइ गरो जरै विरोचन हुंकार ॥ अथ मल ज्वर लक्षण—कंठ सोष दाह अंग अंग पीड़ा भर्म सिर पीड़ा ॥ अथ पित्तज्वर लक्षण—सिर पीड़ा भर्म मूर्च्छा अस्ति पीड़ा ॥ दाह रक्त मुख कटुक ॥ अथ षेद ज्वर लक्षण—देह पीड़ा निद्रा आलस स्वेद जम्भ नेत्र पीड़ा—अथ वात ज्वर लक्षण—सीत कंप महा दाह तृषा चित्त भर्म विकलता जीभ कंटक फटी ॥

अन्त—पुनः पाह मारन विधिः—अमिलना की भाजी सों घोटि के धरीजै। ताके वीच पाह धरै गज पुट आंच दीजै ॥ अमिली को मुर्चा तर ऊपर धरि दीजै। अमिली न मिलै तौ पीपर को लीजै ॥ ऐसी दृढ़ भट्ठी सो तीन दिवस पचै। चौथे दिन रस निकारि रोगी लषि खरचै ॥ कोता दम छई कांस बाई को मारै ॥ चारि प्रकार जूड़ी रस पहुँचत मारै ॥ इति श्री आधार मिश्र कृत वैद्यक विलास संग्रह तृतीय अध्याय संपूर्ण समाप्त. लिखतं वेनीराम कायस्थ शिवपुर संवत् १८९६ वि० ॥

विषय—वैद्यक

संख्या २ डी. मदनुस्सफा या किताब सिकंदरी, रचयिता—आधार सिंह, कागज—साधारण, पत्र—६०७, आकार—१४ × १२ इं०, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९२८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०९=१८५२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० कृष्णकुमार शास्त्री, ग्राम—अलीगंज, डाकघर—अलीगंज, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। दो०—आदि वैद करता धनी प्रथमैं विनवौं ताहि। जाके भजन प्रताप ते सकल रोग मिटि जाहि ॥ सुमिरि देवगुरु काज करि वन्दौ दानव राज। विघन न कोऊ लाइयो यह परमारथ काज ॥ ता पाछे आरंभ रच्यो करन वचनिका ताहि। तिब्ब सिकंदरी पारसी वैद्यक शास्त्र जु आहि ॥ पुराचीन जे पुस्तकें हती जो जेहि जेहि ठौर। तिनके वकता सहित ते जोरी आनि बटोरि ॥ षरच्यो द्रव्य जु साहि तब लाख डेढ़ परिमान। व्यह वैद सर्वराह करि रची पारसी आनि ॥ ता पारसि के पढ़न कौ मनमें करो विचार। सो यह है दुस्तर नदी क्यों करि उतरौ पार ॥ महा गूढ़ है पारसी महा कष्ट सौ जानि। ताते उर्दू है भली तुर्तहिं होवै ज्ञान। ऐसी हिये विचारि चेत सिंह भदौरिया वोल्यो वचन रसाल अधार सिंह सो हेतु निज। सब ग्रन्थन को सार ले वैदनि पारसि करौ ॥ पात साहि के हेत सोहै तिब्ब सिकंदरी ॥ सुनिये दादा राउ सोई तिब्ब सिकंदरी मोपै दया विचारि मेरे हित भाषा करौ ॥ ग्रन्थ वर्णन ॥ श्रुश्रुत, चरक, जाबूकरन, भोज, भेव, वाग भट्ट व रस

रतना कर सारंगधर, वग सैन चिन्ता मनि माधौ निधान वैदक के ग्रन्थ जे जे मालूम भये तिन सब का सार षैचि इकट्ठा करा तिब्ब सिकंदरी का नाव मदन नुस्सफा रखा आनंद की खानि बीच सन नौसे सोलह हिजरी ऊपर तैयार की ॥

अन्त—वास्ते दूरि करन प्रमेह—वाह रतन माला की जड़ उसकी लाल होती है लाये वीच छांह के सुषाये और परछावा औरति नापाक से बचाये रखे और वीच मकान पवित्र के ॥ चूर्ण बारीक करिके कपड़े से छांनि राषै तिस पीछे एक टंक चूना सुफेद कि जो पान के संग खाते है और दो आंवले सूखे बारीक पीसकर जु देखे। जब चाहै कि औषदि को ऊपर फोड़ो फिरंग के लेप करै। पारा सोधा हुआ तीन टंक लेवै ॥ तिसको हाथ की हथेली पर डालै आधी टंक वाह रतन माला और एक रत्ती उस चूने को और आंवले पिसे से भी डालै और अंगूठे से मलै तो वह पारा छार हो जावेगा ॥ तिस पीछे औषधि हथेरी पर से लैकरि और रोगी को लिटाइ करि उसके पकाऊ फोड़े को मलै और सुलाय देवै औषधि सोषि जावेगी। जब पसीना सूखि जावे ति पीछे उसको कहै तौ उठै और पथ्य अपना चावल साठी और दूध करै ऐसे ही तीनि टंक पारो हर रोज जिस तरह कि कहि आये है ऊपर पकाऊ फोड़े के लगाये ऐसा कि १५ रोज तक पांच टंक पारा काम में लावै अच्छा होवै ॥ इति श्री किताब सिकंदरी कि जो मदनुस्सफा नाम है यामे आनंद की खानि है तिसका टीका संपूर्ण किया। क्वार मासे शुक्ल पक्षे पूर्णिमा बुद्ध वासरे इदं पुस्तकं लिखतं चेत सिंघ भदौरिया संवत् १९०९ वि०

विषय—वैद्यक

संख्या ३ ए. ध्यान मंजरी, रचयिता—अग्रदास, पत्र—१६, आकार—७×५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९०२ = १८४५ ई०। प्राप्तिस्थान—पं० बाँकेलाल शास्त्री, डाकघर—खैरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—अथ लिष्यते ध्यान ध्यान मंजरी की पोथी सुमरौ श्री रघुवीर धरि रघुवंस विभूषन, सरन गहे सुषरास हरत अघ सागर पुषन, सुंदर राम उदार, वान कर सारंग धारी, हिय धर प्रभु को ध्यान, विद्वजन आनंदभारी अवध पुरी निज धाम, प्रेम अत सुंदर राजै, हाटक मन मय सदा नगन की विराजै ॥ पौरी द्वार अत चारु चारु सुहावन चित्रन सोहे, चंच नार मंदार कल्पतरु देषत मोहे।

अंत—ध्यान मंजरी नाम सुनत मन मोद पढ़ावौ ॥ श्री रघुवरि भो दास मुदित जन अग्र सु गावौ ॥ इति श्री अग्रदास कृत ध्यान मंजरी संपूर्ण समाप्त सुभ मस्तु मिती चैत्र सुदी को सं० १९०३ की साल में यथा प्रती उतारी विषयः—रामचंद्र जी की भक्ति के भजन हैं।

सं० ३ बी. ध्यान मंजरी, रचयिता—अग्रदास, कागज—बाँसी कागज, पत्र—१०, आकार—७×४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० देवकीनंदन झम्मनलाल जी, डाकघर—कागारोला (उप०—खैरागढ़), जिला—आगरा।

आदि—श्री मते रामानुजायन्मः । सुमिरौ श्री रघुवंश विभूषण 'सरण गहे सुख रासि हरत अघ सागर दूषण । सुंदरराम उदार वाण कर सारंग धारी । होय धरि प्रभु को ध्यान विषै जन आनंद कारि ।

अंत—इति श्री स्वामी अग्रदास कृतं श्री रामध्यान मंजरी समाप्तं संपूरनं पं० श्री रामध्यान धरत है संतजन ॥ राम ॥

सं० ३ सी. ध्यान मंजरी, रचयिता—अग्रदास, पत्र—१४, आकार—१० × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप)—१२६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पंडित लक्ष्मीनारायण, ग्राम—पचवान, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ श्री गुरुचरणेभ्यो नमः श्री सरस्वत्यै नमः ॥ सुमिरौं श्री रघुबीर धीर रघुवंश विभूषण । शरण गहे सुष राशि हरत अघ सागर दूषण ॥ १ ॥ सुंदर राम उदार वाण कर सारंग धारी । हिय धरि प्रभु को ध्यान विदुष जन आनंदकारी ॥ २ ॥

विषय—श्री रामचंद्र जी की स्तुति वर्णन ।

संख्या ४ ए. भाषा सामुद्रक, रचयिता—अजयराज, कागज—साधारण, पत्र—१०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप)—३२५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२४ = १८६७ ई० । प्राप्तिस्थान—पं० रामलाल, ग्राम—तुरकीया, डाकघर—अछरेरा, जिला—आगरा ।

आदि—अथ भाषा सामुद्रकलिख्यते । दोहा । प्रथमहिं देखो आयुबल, लक्षिणत दिन विचार आयु विना लक्षिण विथा यहै ग्रंथ विवहार ।

अंत—दोहा—सुभग सुलक्षिन सुनि सुभ सज्जन के सुखदेत भाषा सामुद्रक रचौ अजै राज के हेत । सोरठा । जो याने सोजानि धता होइ आजान पुनि । जानपनों अरुदान अजैराज दुहुविधि निपुनि । इति श्री अजैराज विरचितायां भाषा सामुद्रक पुरुष स्त्री लछन संपूर्ण । मिति माघ कृष्णा ६ बुधे संवत् १९२४ लिषतं चुन्नीलाल मु० कोटिला । जदुवंशी महाराज तुम अपनो विर्द समारि । हमको सरने राखियो, अपनी ओर निहार ।

विषय—सामुद्रिक वर्णन ।

संख्या ४ बी. विजय विवाह, रचयिता—अजयराज, पत्र—२०, आकार—८ × ५½ इंच, परिमाण (अनुष्टुप)—६४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१३ = १७५६ ई०, प्राप्तिस्थान—बटेश्वर दयाल जी दीक्षित, प्रधानाध्यापक, ग्राम—गुबरौट्टा, डाकघर—फतहाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्री रामाय नमः ॥ अथ विजय विवाह लिषिते ॥ ॐ वदन अंग आभूषणं, परमल निरमल पूरणा पहरणं ॥ वाघी साज साज वाहरणं, प्रणम स्वंर सति उकीत समर्पणं ॥ १ ॥ लंवोदर गुण वेसा, अणक दिगै आप गणेसा ॥ आयो मुक्ति आछर उपदेसा, कीरति कँवला गाऊँ केसा ॥ २ ॥ आनन च्यार वेद उपासी, बुधि प्रकासौ काशी वासी ॥

नमो व्यास नारद निवासी, आदि पुरुष गाऊ अभिनासी ॥ ३ ॥ लछिमी पति लिषि मीरा लीला लप लाष कोडि गंधरप समनीला ॥ लहै न चतुर मुष वासिग नीला, लायक को गावक समनीला ॥ ४ ॥—अथ छंद त्रोटिका—नीला घन स्याम तणी लहणी, किय जाय नकाय वसौं कहेणी ॥ दिपणा ददि सायक राज दिपै, छवि देखत इन्द्र पुरिंद छिपै ॥ कुंडणपुर भीषम राज करै धर सारिथ ऊपर छत्र छरै ॥ तिणरै सह मंदिर हे मंतण, धरणा मोलाइ नग जहाव घणा ॥

अंत—बुधि सारु सगू कीयौ में व्याह विजय, अरदासि सहव वाधा उपजै ॥ जुध जीययो काम वध कीयो, दामोदर दान भगति दीयौ ॥ जादू राय सहाय करौ जनकी, महाराज हरौ ममता मन की ॥ क्रणां करिहौ करुणा करि ज्यो कवित्त तु गुण सागर परम । तूही निरगुण पणमेश्वर । तू अकरण सव करण कृष्ण तू ही करुणा कर ॥ तू ही निरंजन निराकार ॥ तू ही जरंजग्र रुक मारै, तू निकला निरधार तु हीज आधार कह मोरे ॥ विरज राजकुमार ये वीनती, अजेराज साँभलि इति ॥ सुभरारि देषि मुरारि दिसि पेम भगति छोह जगत पीत ॥ इति श्री गुण विजै व्याह सम्पूर्णम् समाप्तं ॥ शुभं भूयात्—संवत् १८१३ वषे ॥ पौष मासे शुक्ल पक्षे २ जीव वासरे लिषितं ॥ मिदं मिश्र अमर दासेन पठनार्थ देवी सिंह जी ॥ श्री श्री

विषय—रुक्मिणी कृष्ण का विवाह

टिप्पणी—इस पुस्तक में अशुद्धियाँ बहुत हैं । अपभ्रंश शब्दों और मारवाड़ी शब्दों का प्रयोग अधिक है ॥ कुंडनपुर के राजा के वैभव, कन्या के सौंदर्य और युद्धादि कई विषयों पर प्रकाश डाला गया है ॥ अशुद्ध लिपि एवम् मराठी तथा मारवाड़ी भाषाओं के प्रयोगों के कारण कहीं कहीं ऐसी भाषा बन जाती है जो वर्तमान हिन्दी के रूप से कहीं अधिक दूर पहुँचती हुई सी दिखलाई देती है ।

संख्या ५ ए. शिक्षा वत्तीसी, रचयिता—अजीत सिंह महता (जैसलनगर) कागज—देशी, पत्र ३, आकार - ६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप)—३६; रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९१८ = १८६१ ई०, लिपिकाल—सं १९२७ = १८७० ई०, प्राप्तिस्थान—लाला छीतरमल, ग्राम—रायजीत का नगला, डाकघर—लखनऊ, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ शिक्षा वत्तीसी लिख्यते ॥ श्री वल्लभ विट्ठल प्रभू गिरधर गोविंद राय । बाल कृष्ण गोकुल रघू यदू स्याम घन साय ॥ गढ़ जैसाणौ पै तपै रावल श्री रणजीत । यहि शिक्षा वत्तीस को मेहिता करी अजीत ॥ मंत्री सेवन कीजिये नृप सेवन के काज । केवल नृप नहिं सेइये सेवे होय अकाज ॥ पहिलो भय भगवान को दूजो भय भुव पाल । तीजो भय लोकान को राखौ विन मत चाल ॥ देख इष्ट अरि गुण परम पैदा खरच सम्हार ॥ हर यक कारज कीजिये समै विचार विचार ॥ सब दिन होय न एक से समुझि विचक्षण बात । बरतन ऐसी वरतिये आदि अंत जो जात ॥ खावो पीवो खरच लो कर लो सुकृत सुकाम ॥ तन मन धन थिर नहि रहै थिर रहै गोविंद नाम ॥

अंत—भक्त किये भगवत मिले सक्ति किये सिधि काम ॥ उक्ति किये आदर मिलै युक्ति किये जग नाम ॥ राख सुसीख सांच वढ़ रख लिहाज रख रीति। क्षमा दया रख शील शत रख संतोष सुधि प्रीति ॥ जुरत फुरत अरु सुरत से सिधि कारज सब होय। म्हेता अजीत को कियो निश्चय यह करि जोय ॥ भूल चूक सब समझ कै करि कवींद्र सुध सोध। सुन अजीत की वीनती मोमैं नहिं वहु वोध ॥ सत ऊनीस अठारवैं आश्विन सुदि दश राव। भयो समापत ग्रंथ यह करि अजीत सिंह चाव ॥ इति शिक्षा वत्तीसी म्हेता अजीत सिंह कृत संपूर्ण शुभ मस्तु लिखा चांद मल मुनीम स्वपठानार्थं संवत् १९२७ जेठ सुदि दशमी।

विषय—शिक्षा संबंधी दोहे।

संख्या ५ बी. शिक्षा वत्तीसी, रचयिता—महता अजीत सिंह (जैसलमेर), कागज—देशी, पत्र—६, आकार—८$\frac{1}{2}$ × ६$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप)—७२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९१८ = १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० लक्ष्मीनारायण, ग्राम—जसरथ पुर, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि अंत—५ ए के समान।

पुष्पिका—इति शिक्षा बत्तीसी मेहता अजीत सिंह कृत सम्पूर्णम् ।।—

संख्या ५ सी. विद्या बत्तीसी, रचयिता—महता अजीत (जैसलमेर), कागज—देशी, पत्र—५, आकार—८$\frac{1}{2}$ × ६$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप)—६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९१८ = १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० लक्ष्मीनारायण, ग्राम—जसरथपुर, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि श्री गणेशाय नमः ।। अथ लिष्यते म्हेता अजीत सिंह कृत विद्या वत्तीसी ।। दोहा ।। श्री कृष्ण की शरण हूँ। सुध बुधि दे तत्काल। विघ्न हरण सब सुख करन। नमो नमो गोपाल ।। १ ।। गादी जैसल नगर की। राजेश्वर रणजीत। यह विद्या बत्तीस को। म्हेता करी अजीत ।। २ ।। प्रातहि उठि गुरू ध्यान धर। प्रभु के चरण सम्हार। सादर गणपति सुमिरि कै। कर विद्या उपचार ॥ ३ ॥ काना सूं गुरू वाक्य सुन। मुखसौं करौ उचार फेरि हृदय धरि कर लिखो। अक्षर नयन निहार ॥ ४ ॥ अक्षर मात्रा अंक सिख। फिरि संजोग विचार। इन विद्या को पार नहिं। होय अपारं पार ।। ५ ॥

अंत—धन धन है गुरु देव कूं। धन है उनकी जात ॥ ३४ ॥ अरज करत अगजीत ये। भाइन मोमैं बोध। चूक भूल को जान कर। शुद्ध करो कवि शोध ॥ ३५ ।। उगनी सौ अट्ठारवैं। दीप मालि शनि दिन्न। किय पूरण यह ग्रन्थ कूं। पढ़ मन होय प्रसन्न ॥ ३६ ॥ इति विद्या वत्तीसी मेहता अजीत कृत ॥ सम्पूर्ण समाप्तं ॥

विषय—विद्या की महत्ता और उसके ग्रहण करने का उपदेश।

संख्या ६. ब्रह्मपिंड, रचयिता—अक्रूरपुरी (काशी), कागज—देशी, पत्र—६, आकार—८$\frac{3}{4}$ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप)—८१,

रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—मुंशी मन्नालाल, ग्राम—बच्छगाँव, डाकघर—हिम्मतपुर, जिला—आगरा।

आदि—काशी वसत कवीर जू एक। तिन पकरी नाम भगति की टेक॥ निरबान बानी बोलैं यौं। भगति बिना दरसन न त्यों॥१॥ हरि वंस क्लष्ट काचक्रिमृ आसन विष्णु॥ मंगल सिंगार धूप॥ सेन संध्या स्थापन राज। सात समें राधा वल्लभ॥ जोई जोई प्यारो करै॥ सोई सोई करैं प्यारो मोको तो भावती ढौंर प्यारे के नैन में॥ प्यारो भयो चाहैं मेरे नैनन के तेरे॥ मेरे तन्मन प्राण प्राणहु तो पीतम प्रिय॥ अपने कोटिक प्राण प्रीतम मोस्यो हारे॥ जयश्री हरिवंस अंस हंसनी सावल गौर कहौं कौंनु करै जल तरंगण न्यारे॥ १॥ प्रात सम्यें दोऊ रस लपट क्रति युद्धाजय पुत अति फूल॥ श्रम वारिज घन विन्दु बदन पर भूषण अंग ही अंग विकूल॥ कछू रह्यौ तिलक शिथिल अलकावलि बदन कमल मानों आली भूल॥ जय श्रीहित हरि वंस मदन रंग रँगि रहे नेंन बेंन कटि शिथिल दुकूल॥ २॥

अंत—अत्येंला शिखरी राज बखाण। महंमदस्तुं भागी रथ भजन ठानि॥ ऊँ काले ब्रह्मा शंकरे विष्णु आदि निरंजनं मध्य निरंजनं तत्त्व पद निपरुप आकार निराकार अविनासी अखण्धत सोहं मन विसराम काया क्षेत्र तारक राम साटिया वृद्धिभावा मान सिद्धि सव सुख जाज्ञा परे दास श्री मन हरे जय जय हिंत कल्यान वाय जीथ धरे काशी अक्रूर पुरी कृत ब्रह्मापिंड परी देव्या ईश्वरी॥ यदक्षर पद भ्रष्ट मात्रा हीन पद भुवे तत्सर्वं-क्षम्यतां देव मह मदस्तं भागी रथ त्रेता द्वापर के

बिषय—दस पद, मंत्र तीसा, चौबीसा गायत्री। आसा गोरी, मंत्र साठिया। नरयाजी अष्ट वक्र॥

संख्या ७ ए. राजजोग, रचयिता—अक्षर अनन्य, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४२, परिमाण (अनुष्टुप्)—७०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९१७ = १८६० ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा रामदास, ग्राम—सीतामऊ, डाकघर—मल्लावा, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ राज जोग लिख्यते॥ सवैया॥ आतम ज्ञान सो ज्ञान वहै परमातम ध्यान सो ध्यान सुरे सुर॥ वेद विधान विधान वहै सत पात्रहि दान सो दान धनेश्वर॥ अंतर भक्ति सो भक्त वहै उर अंतर की परखै परमेश्वर॥ वेद प्रमान अनन्य भनै यह भेद सुनौ पृथि चन्द नरेश्वर॥ छंद पाधरी—यह भेद सुनौ पृथ्वी चंद राउ। फल चारिउ को साधन उपाव॥ एक लोक साध लोकीक लोग। घातहु कमात रचि काम भोग॥ यह लोक सधै सुख पुत्र वाम परलोक परे वस नर्क धाम॥ परलोक लोक दोऊ सधै जाइ। सोइ राज जोग सिंघात आइ॥

अंत—करि प्रतिमा पूजन दरस नित्त। सोई मूरति राखै ध्यान चित्त॥ यहि भांति ध्यान उर वसै आनि। यह ध्यान रहे नर नाह जानि॥ जो ध्यान सधै नहिं लगै चित्त। तौ नेम सहित जप मंत्र नित्त॥ जो मंत्रन विधि सों सधै राउ। तौ पावन प्रभु को लेइ

नाउ ॥ तन सुद्ध होय मुख सुद्ध बानि । मन सुद्ध होइ सर विज्ञ जानि ॥ मन को सुभाव भ्रम को अक्कथ । तौ सुमिरन साधन ज्ञान गथ्थ ॥ मुख को सुभाव वकवो नरेस । तौ नाम भजन वर कर सुदेश ॥ करु भजन सुद्ध सुमिरन सुवुद्धि । मिटि है मन की भरमना कुवुद्धि जित तित मनसा भरमै अनंत । तित तित सुमिरन साधन तुरन्त ॥ कछु दिन साधन करने उपाइ । परिजात वहुरि मनसा सुभाइ ॥ मनसा सुभाउ पुनि ध्यान लीन । यह राज जोग जानहु प्रवीन ॥ जो राज जोग यह सधै राज । मन वंछित ते सव होहिं काज ॥ अरु कर्म लिप्त कवहूं न होत । जग जीवन मुक्ति सदा उदोत ॥ यह ज्ञान भेद अरु वेद साषि । अक्षर अनन्य सिंधांत भाषि ॥ दोहा—राज जोग सिधांत यह जानु राज पृथि चंद ॥ यह सम मत नहिं दूसरो षोजेहु साषहु वृंद ॥ जो चाहै संसार सुष अरु सिधांत प्रकास । तौ साधौ सर्वज्ञ यह राज जोग अन्यास ॥ इति श्री राज जोग समाप्तं लिखी विहारी लाल निज हेत मिती चैत्र सुदी १३ संवत् १९१७ रोज वृहस्पति ॥ राम श्री राम राम राम

विषय—राज धर्म का वर्णन है ।

संख्या ७ वी. राजयोग, रचयिता—अक्षर अनन्य, कागज—देशी, पत्र—६ आकार—८ × ५$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप)—१६२, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९४७ = १८९० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० भोजराज शुक्ल, अवसर प्राप्त सब डिप्टी इंसपेक्टर, शिक्षा-विभाग; ग्राम—इतमादपुर, जिला—आगरा ।

आदि—श्री परमात्मने नमः । अथ राज योग्य लिख्यते । आत्म ज्ञान सुज्ञान वही परमात्म ध्यान सो ध्यान धनेश्वर । सब वेद विधान विधान वही सत पात्रहिं दान सुदान दनेश्वर । अंतर भक्ति सो भक्ति वही गति अंतर की परखै परमेश्वर । वेद प्रमान अनन्य भने यह भेद सुनो पृथ्विचंद नरेश्वर ।

अंत—कछू दिना साध करनो उपाव, पर जात बहुर मनसा सुभाव । मनसा स्वभाव धुनि सहजलीन, जहं राज जोग जानत प्रवीन । जब राज योग यह सधै राज, तौ मन वांछित सव होइं काज । और कर्म विपत कबहूँ न होत, जग जीवन मुक्त सदा उधोत । यह ज्ञान भेद अरु वेद साख, अक्षर अनन्य सिद्धांत भाख । इति श्री राज योग अनन्य कृत राजा पृथ्वीचंद वोध समाप्तः ।

विषय—राजयोग वर्णन ।

संख्या ७ सी. राजजोग, रचयिता—अक्षर अनन्य , कागज—देशी, पत्र—७, आकार—६$\frac{3}{4}$ × ५ इंच; पंक्ति (प्रति पृष्ठ) ६, परिमाण (अनुष्टुप)—६३, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२७ = १८७० ई०, प्राप्तिस्थान—मुंशी सुखरासी लाल, अध्यापक प्राइमरी स्कूल, ग्राम—टूंडला, डाकघर—टूंडला, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—७ ए के समान । श्री गणेशाय नमः अथ राज जोगः लिषते । कवितः आत्मा ज्ञान सुज्ञ ना बहै परत्मा ध्यान सुध्यान धेने स्वरः । आतम भक्ति सुभक्ति बहै गति अंतर की परषे मनमें सुरः वेद प्रमान अनन्य भने यह चंद सुनौ पृथीराज नरेसुर ।

पुष्पिका—इति श्री राज जोग संपूर्ण शुभंम वकलम लाल चोपेलाल पटवारी ।

विषय—राजयोग वर्णन ।

संख्या ७ डी. अनुभव तरंग सिद्धांत, रचयिता—अक्षर अनन्य, पत्र—१४, आकार—६३/४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४६२, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८२० = १७६३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० गोकुलप्रसाद, ग्राम—मिहावा, डाकघर—इरादतनगर, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। श्री गुरुभ्यो नमः। श्री गणपादपतये नमः। पोथी अनुभव तरंग की लिखते श्री लक्ष्मण जू शाहि। एक कहै सत्यारुप एक कहै स्वरुप एक कहै ज्योति नूप नूप कव हाण सो। एक कहै निरंकाल एक कहै महाकाल एक कहै महादेव महातम हान सो। एक कहै ब्रह्मा विष्णु एक कहै राम किष्ण नाम गुन भिर्न लोग गुनत अहान सो। कोऊ कछु कहो सब कछू सो अनन्य भनैं हौं न कछू कहौं ऐसौ अकह कहान सों। सोई नामु कहौ सोई नाम वाके नामु निरनामु कहा कहनो अनूप कौ। जोई गुन गनै सोई गुन गुन सागर के निर्गुन हू सर्गुन सुभाव भव भूप कौ। जोई कितु करौ सोई कितु करता रही कौ सुकृत अकृत भेद मिटै भ्रम कूप कौ। जोई अनिभासै अनुभौ अनन्य भनै जेहि रूप देषौ सोई रूप जगरूप को।

अंत—नाना अर्थ चर्नन में चतुर उरझि रहै नाना राग रागनि में रागी गुन अटकै। नाना ग्रंथ कथानि में पंडित भ्रमतभूले नाना उकति जुगतिन में कवि बुद्धि भटके। नाना रिद्धि सिद्धिन में सिद्ध ललचाय रहै माया की झकोरिन में जहां तहां झटकै। अछिर अनिन एक सार निरधार करि विरेरै पुरुष एक धारन सो अटकै। दोहा—सो मत कौ मतु एक यह करके वलगुर भागो। देषि सबै सब दिस्टि धरि सर्व रूप शिवसक्ति। ऐते श्री अनुभव तरंग सिद्धांत समापत सुभमती जैसी पाई तैसी लिखी संवत १८२० माण ३ बुद्ध को लिषि चुकौलि मोतीलाल की नगर में लिखी श्री राम जू सहाई रहैं—१००

विषय—आध्यात्मिक अनुभव।

संख्या ७ ई. ज्ञानयोग सिद्धांत, रचयिता—अक्षर अनन्य, पत्र—३०, आकार—७३/४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप)—३६०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—ठाकुर जगन्नाथसिंह, ग्राम—चंद्रावल, डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ।

आदि—ज्ञान योग अनन्य कृत सिद्धान्त ॥ दोहा ॥ श्री गुरु चरण सरोज रज। धरि अनन्य उर सीस। ज्ञान योग सिद्धान्त मत। जिन कीनिं बकसीस ॥ १ ॥ ज्ञान कहावै जानिबो। युक्ति कहावै योग। दधि घृत जाननि युक्ति मथि। तब पावै रस भोग ॥ २ ॥ ज्ञान बिना लघु योग है। योग बिना लघु ज्ञान। ज्ञान योग सिद्धान्त करि। यह सिद्धान्त प्रमान ॥ ३ ॥ मूढ़न को हठ योग है। देह कर्म उरझाव। ज्ञान योग ज्ञानिन कहा। साधन सहज स्वभाव ॥ ४ ॥ अलख कर्म यासो कहत। कृपा लखै नहिं कोय। ज्यों मछरी जल कव पियै। युक्ति न जाने लोय ॥ ५ ॥ ज्ञान योग निज युक्ति मत। अनुभव सिद्ध विचार। अगम निगम पुराण मत। मथि काढ़ो सार ॥ ६ ॥

अंत—विघन को सिरे ब्रह्म विद्या है स्वतः सिद्ध। विघन के सिरे वेद विध लीन और है ॥ गुणन के सिरे तत्त्व साधन महान गुण। धर्मन के सिरे तत्त्व भाखौ सब ठौर है ॥

सिद्धन के सिरे ज्ञान सिद्ध है अनन्य भनै। सिद्ध ही असिद्ध की न पाते भ्रम भोर है॥ कर्मन के सिरे भक्ति योग हठ योग जान। ज्ञानिन के सिरे ज्ञान योग सिर मौर है॥ ८६॥ दोहा—भक्त जुदे जोगी जुदे। ज्ञानी जपहिं महंत॥ तीनों मत संयुक्त यह। ज्ञान योग सिद्धान्त॥ ८७।'

संख्या ७ एफ. प्रेमदीपिका, रचयिता—अक्षर अनन्य, कागज—देशी, पत्र—२८, आकार—८×८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप)—७००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८४६ = १७८९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवकंठ गौड़, ग्राम—अवागढ़, डाकघर अवागढ़, जिला एटा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः॥ अथ प्रेम दीपिका काव्य लिख्यते॥ कवित्त॥ जाकी शक्ति पाइ ब्रह्मा विष्णु शिव विस्व रचैं, जाकी शक्ति पाइ शेष धरनी धरत हैं॥ जाकी शक्ति पाइ अवतार करतूति करै, जाकी शक्ति पाइ भानु तम को हरत है॥ जाकी शक्ति पाइ शारदा हूं गन पति गुनी, जाकी शक्ति पाइ जगत जीवत मरत है॥ अक्षर अनन्य आनि अमर उपाय छांड़ि, ताही आदि शक्ति को प्रनामहिं करत है॥१॥ दोहा—करि प्रनाम श्री मात को ज्ञान सुमति अति पाइ। प्रेमदीपिका हरि कथा कहौं प्रेम समुझाइ॥२॥ कुन्डलिया—माधौ जू एक दिन कह्यो मधुकर सों सत भाउ। गोपिन गोप प्रवोध कौं तुम ब्रज मंडल जाउ॥ तुम ब्रज मंडिल जाउ प्रेम अति ही उन कीन्हों॥ जब ते भयो विछोह सोध हम कबहूं न कीन्हों॥ तुम ममता दरसाइ हरौ दुख सिन्धु अगाधौ॥ कहियो सब सौ यहै दूरि तुमते नहिं माधौ॥३॥

अंत—सवैया—दुंदुभि दीप वजै हरि द्वारिका गोकुल प्रेम नदी जु वही॥ जिन राधिका प्रान तजे विछुरे तिन की न कथा कछु जात कही॥ जिमि दीप पतंगहि यों मछरी जल प्रीति इकंग अबै तबहीं। जग को यह रीति अनन्य भनै अपने सुष लौ सुष है सबही॥ छप्पय—प्रीति इकंगी नेम प्रेम गोपिन को गायो॥ लीला विरह विहार तरकि सब्दनि रसु छायो॥ ज्ञान जोग्य वैराग्य मधुप उपदेशन भाष्यौ॥ भक्ति भाव अभिलाष मुष्य वनितन मनु राष्यो॥ बहु बिधि वियोग से जोग सुष सकल भेद समुझौ भगत। यह अद्भुत प्रेम सो दीपिका कहि अनन्य उदित्त जगत॥ इति प्रेम दीपिका संपूर्ण समाप्तः लिखतं रामदास स्वामी राधा कृष्ण का मंदिर संवत १८४६ वि० ॥

विषय—गोपियों और श्री कृष्ण का प्रेम वर्णन।

सख्या ७ जी. प्रेमदीपिका, रचयिता—अनन्य कवि, कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—८×६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—९०५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७० = १८१३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामभजन मिश्र, ग्राम—चौगवा, डाकघर—मल्लावा, जिला—हरदोई।

आदि-अंत—७ एफ के समान।

पुष्पिका—इति श्री प्रेम दीपिका संपूर्ण समाप्तः मिती वैसाख शुक्ल संवत् १८७० वि० ॥ कृष्ण कृष्ण कृष्ण कृष्ण

विषय—श्री कृष्ण राधिका का प्रेम वर्णन।

संख्या ७ एच. प्रेमदीपिका, रचयिता—अक्षर अनन्य, पत्र—४८, आकार—५ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप)—३८४, खंडित। रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० शिवकुमार शर्मा, ठि० पं० वद्री प्रसाद प्लीडर, स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। लिष्यते प्रेम दीपिका। कुंडरिया। माधो जू एक दिन कह्यो, मधुकर सों सति भाउ। गोपी गोप प्रबोध कौं तुम ब्रज मंडल जाउ। तुम ब्रज मंडल जाउ प्रेम अति ह्वी उन कीन्हो। जबते भयौ विछोहु सोधु हम कबहूं नहिं लीन्हौ। तुम मम मनु दरसई हरौ, दुष सिंध अगाधौ, कहियो सबसे यहै दूरि तुमते नहिं माधौ।

अंत—यह तो करम योगु आपुहि करत रहौ, भरम ठगौरी लै ठगन कठे दुनियै। चहिहैं नई हा हम ब्रज की चतुरवाल, चापि सुष सुधा तजि कंकर क्यों चुनियै। अक्षर सु अक्षनि मैं देषत प्रत्यक्ष जोति, स्वक्ष क्षिति छांडि कहा धर्मनि कौ धुनियै। सकल रसागर हैं सागर गुपाल ऐसे, नागर विसारि कहा निर्गुन कौ गुनियै। ऊधौ जू तिहारे इह निर्गुन में सार कहा। पानी में मथैतें कहूं माषन कढ़तु है। देषौ धौं विचारि विना भीति··· ।

संख्या ७ आई. दुर्गापाठ भाषा, रचयिता—अनन्य कवि, कागज—देशी, पत्र—४०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप)—१०००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७० = १८१३ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा बैजनाथ सहाय, ग्राम—रामनगर, डाकघर—नौखेड़ा, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ अथ दुर्गा पाठ भाषा लिख्यते ॥ दोहा॥ सुन्दर पट गुरु नाथ के सुन्दर गुरु उपदेश। सुन्दर चरित भवानि के सुन्दर सुरथ नरेश॥ सुरथ धर्म राजा भयो केवल धर्म निधान॥ सकल नगर कुल जन प्रजा पालहिं पुत्र समान॥ नृपति भार मंत्रिन दियो आपु करत सुष मोद॥ कै नित नेम शिकार को कै रस वाम विनोद॥ तब शत्रुन ब्यौहार लहि जान्यो नृपति अचेत। देश मारि उघरो नगर सव परिवार समेत॥ राजा मंत्रिन वल रहे मंत्रिन कियो विश्वास॥ जाइ मिले सव शत्रु लहि नृपति भाग बनवास॥ मन मह राउ विसूर ही करि करि सवको शुद्धि॥ अपने दुख तन खवरि नहि परी मोह वस वुद्धि॥

अंत—अनन्यै भनै एक को एक दाता सदा सर्वदा सर्व दाता भवानी॥ ३॥ सदा सर्व दाता सदा सर्व कर्ता सदा सर्व रूपक कहै वेद वानी॥ न आदै न अन्ता कहावै अनंता निश्चंता सवै लोक की लोक रानी॥ हरी शंभु ब्रह्मा करै भक्ति जाकी धरे ध्यान जोगी तपी सिद्धि ज्ञानी॥ अनन्यै भनै जो रहै गुप्त रूपा कहै ज्योति जासो वहै है भवानी॥ ४॥ दोहा—गुप्त वहै प्रगटै वहै निकट वहै अरु दूरि। श्री भवानि त्रिभुवन विषै रही सबनि भरि पूरि॥ ५॥ जो जेहि भांति भजै जहां ताको तहां प्रतक्षि। त्रिभुवन व्यापक शक्ति निज श्री भवानि शुभ लक्षि॥ ६॥ श्री भवानि शुभ लक्षिनी परम सुन्दरी जानि। ताको सुन्दर चरित यह अक्षर अनन्य वखानि॥ ७॥ जो यह सुन्दर चरित को पढ़ै सुनै मन लाय। मन वांछित फल देति तेहि श्री भवानि जग माय॥ ८॥ इति श्री मारकांडे पुराणे देवी माहात्म्ये

सुरथ वैश्य वर प्रदानं तेरहवां अध्याय संपूर्णम् समाप्तः लिखा देवी प्रसाद वैश्य स्वपठनार्थ अषाढ़ सुदी ९ नौमी संवत् १८७० त्रि०

विषय—दुर्गासप्तशती का पद्यानुवाद

संख्या ८. माधवानल कामकंदला, रचयिता—आलम, कागज—बाँसी, पत्र—२४, आकार—८३/४×५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८२१ = १७६४ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री गोविंदराम ब्राह्मण, ग्राम—हिंगोट खिरिया, डाकघर—बमरोली कटरा, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः श्रीगुरुभ्योन्मः। अथ माधवानल भाषा ग्रंथ लिख्यते। प्रथम पार ब्रह्म परणामं, पुनि कछु युगति रीति वरनामं। घट घट बसैं सुअन्तर गामी। ताका भेद पार नहिं पामी। घटैं घट रहैं लखे नहिं कोई। जल थल रहैं सर्व में सोई। जाकि आदि अन्त नहिं जानी। पंडित कथा ग्यान सोइ मानी। ग्यानी होइ सुगुरु मुख धावैं। खोजी हेरू सो खोजें पावैं॥

अंत—माधवानल कन्दला मिलाई। फिर विक्रम नुजै नै जाई। संग विप्र माधव तल लीन्हा, जिन यह प्रेम पसारा कीन्हा। राजा नगर उजैन कुं गयऊ। तब ही अन्त कथा को भयऊ। माधवानल अरु कन्दल नारी, विधना जोरी दई सवारी। सुनो कथा जा श्रवन सुहाई, अति रिसाल पंडित चतुराई। प्रीतम होइ सुनै जो कोई॥ बाढ़ै प्रीत नैन सुख होई॥ दोहा—पंडित बुधवन्ता चतुर, गुन जन अक्षर टेक। नाम नमित अक्षर सरसा, करि करि कथा अनेक। ग्रंथ संख्या एती कही, एक सहस इक बीस। माधवानल काम कन्दला बड़ी प्रीत सुखरीश॥ इति श्री माधवानल काम कन्दला भाषा कथानक शास्त्र सम्पूर्ण॥ श्रीकृष्ण॥ संवत् १८२१ वर्षे मासोत्मासे चैत्र मासे शुक्ल पक्षे प्रति पदायां तिथौ सोमवासरे एतत पुस्तिका सम्पूर्ण मस्त्का॥ यादृशं पुस्तकं दृष्ट्वा तादृशं लिखितंमया। यदि शुद्धम शुद्धवा। मम दोखो न दीवते। लेखणी पुस्तक रामा। पर हस्ता गता यदि। आवते दैव योगेन घृष्टा पृष्ठा चन्मर्द्दिता॥२॥ इति लिपि कृता कुंभेर नगर मध्ये राज श्री जवाहिर सिंध जादुं राज्ये लिखिता जन्ती माणंक चन्द्र भार्जार्थे॥

विषय—माधवानल और कामकंदला की प्रेम कथा।

संख्या ९ ए. भक्त विरुदावली, रचयिता—अमरदास, कागज—पुराना, पत्र—६, आकार—६×५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६, रूप—प्राचीन; लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—नागरी प्रचारिणी सभा, बनारस, स्थान—बनारस, डाकघर—बनारस, जिला—बनारस।

आदि—श्री गणेशायन्मः श्री सीतारामावैन्मः श्री महावीरायैन्मः अथ लिष्यते भक्त विरुदावली॥ की पोथी॥ श्री रघुनाथ या जस लीजियो, मोहि भक्ति पद वर दीजये॥ तुम दीन बन्धु दयाल हौ, त्रैलोक के प्रतिपाल हौ॥

अंत—तुम गोपी गोपिन में बचे। तुम हरि कमंडल में पचै। तुम जनम धरै अवधपुरी। जहां पूतना······तुम छांडि कर छोडी जी। तुम भये नंद किशोर जी॥ ······ जमिके लीन्ही जो श्री पति प्राति कै॥ वह भक्त हेत बिरदावली गावे सुनै जो हालजी॥ वैकुंठ जिनके वास है॥ जिन भजत अभ्या दास है॥ इति श्री भक्त विरुदावली

विषय—भक्तों का गुणगान ।

संख्या ६ बी. भक्ति विरुदावली, रचयिता—अमरदास, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५२ = १६९५ ई०, लिपिकाल—सं १७६४ = १७०७ ई० । प्राप्तिस्थान—बाबा रामदास, ग्राम—दही नगर, डाकघर—टेढ़ा, जिला—उन्नाव ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ भक्ति विरुदावली लिख्यते—तुम भली होय सो कीजिये । रघुनाथ यह जस लीजिये ॥ मोहिं भक्त पदवी दीजिये । जन आपनो करि लीजिये ॥१॥ तुम दीन वन्धु दयाल हौ । तिहुं लोक के प्रति पाल हौ । तुम राधिका पति रमण हौ । परगास चौदह भुवन हौ ॥२॥ तुम ज्ञान गोकुल चंद हौ । हरि वंश कंस निकंद हौ ॥ हम पतित पावन सुनत हैं । नित नाम निर्मल भजत हैं ॥३॥

अंत—जुग चार पूरन ब्रह्म हौ । महि मंड मंडल खंभ हौ ॥ कहं लगि वरणौं अनंत गुण । जेहि चरण श्री पति के गेह ॥ कहौ कौन तेरे तेरी आस सों । हरि भजन नित परगास सों ॥ गुरु परम परमा नंदनं । श्री परस राम मन रंजनं ॥ भगत छंद सिरावली । गावै सुनै वरदावली ॥ ते मुक्ति फल नर पावहीं । दुख पाय जल भव भाजहीं ॥ बैकुन्ठ उनको बास है सो कहत अम्मर दास है ॥ जो नैन[२] सर[५] रिषि[७] चन्द[१] है सो जानु संवत् छंद है ॥ मधु मास उजरो पाख है । तिथि सत्तमी की साख है ॥ इति श्री अम्मर दास कृत भक्त विरदावली संपूर्णम् लिखतं रामलाल शुक्ल शिवभजन के पुत्र ग्राम असोकापुर संवत् १७६४ वि० ॥

विषय—भक्ति की महिमा और मनुष्य जीवन के लिये उपदेश ।

संख्या १० ए. अमर विनोद, रचयिता—अमर सिंह, कागज—देसी, पत्र—६०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४००, रूप—प्राचीन, पद्य और गद्य । लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६० = १८०३ ई०, प्राप्ति-स्थान—पं० रामदुलारे वैद्य, स्थान—मलीहाबाद, डाकघर—मलीहाबाद, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ अमर विनोद लिख्यते दोहा—परमा नंद पद बंदि कै श्री शार्कभरि ध्यान । गुरु गणेश अरु शारदा ईश्वर जगपति भान ॥ विविध शास्त्र को देखि कै समय करौ अधिकार ॥ अमर विनोद जो ग्रन्थ ही सकल जीव सुख सार ॥ श्री धन्वंतर चरण जुग प्रणम धरो आनंद । शेष फूट इस ग्रन्थ को उपज्यो आनन्द कंद ॥ इति ॥ निघंट मते द्रव्य गुणं ॥ अथ जल अष्ट प्रकार लिख्यते ॥

अंत—अथ वृहल्लक्ष्मी विलास—जायफल ३, नख २, लौंग ३, इलायची ४, केशर ५, नाग केशर ६, तज ४, पत्रज ४, त्रिकुटा ९, पीपला मूल तीन, उटंगड़ ३, धतूरे के बीज ३, खुरासानी अजवाइन ३, छड़ ३, अफीम ३, अकरकरा ३, बहुफली ३, मोथा ३, विडंग ३, मलियागिरि चंदन ३, समुद्र सोख ३, खदिर ३, सिंघाड़े ३, वंग २५, अभ्रक १५, सार १५, विजया १५, मिसरी सबते दूनी गुलकंद दूणा बदरी प्रमाण भुक्तव्यं । पुष्ट करै स्तंभन होइ ॥

जायफल जावित्री लौंग केशर इलायची लघु अफीम अकर करा प्रत्येक कर्ष प्रमाण कपूर सानैं पांचों के रस में वही बांधै चणा के समान बल पुष्टि करै ॥ इति श्री अमर सिंह विरचिते अमर विनोदे भाषायां संपूर्ण समाप्तः लिखतं शिव दीन पांडे चैत्र शुक्ला त्रयोदशी संवत् १८६० वि० ॥

विषय—वैद्यक।

संख्या १० बी. अमर विनोद, रचयिता—अमर सिंह, कागज—देशी, पत्र—९६, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९०४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०९ = १८५२ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला भगवती प्रसाद वैद्य, ग्राम—बकौठी, डाकघर—सिकंदरापुर, जिला—सीतापुर।

आदि—१० ए के समान।

अंत—द्वितीय वन्ध्या चिकित्सा। कलौंजी हाथ का नख वत्ती कर जोन में राखै ॥३॥ साबुन टंक ३ त्रिफले का पानी रुई की वत्ती भिंगोय दिन ३ भग में धरै ४, ५ अनार की कली का पानी असली तेल गुलाब सम औषधिन में बाती कर जोन में राखै दिन ३ ॥ ५ वच काली जीरे बाबची कलौंजी तिल का तेल बाती करके दिन तीन जोन में वाती करके राखै पश्चात संगम करै गर्भ रहै सप्तम दोष में यंत्र लिपि पंच मांहि नख मोर पांख हलद मेंहदी हाथी डाढ़ के रस को लिखै स्त्री का मध्य में नाम लिखै यंत्र के बीच फिर कमर से बांधै सप्तम दोष मिटै ॥

७।	७॥	७	३४	।।९	४॥	६	१	३॥
९	७	।७	१॥	७४।	९ रा	१	४	४०
७	०।	७	६३	६	३	७	७	६
॥।	७	७	६	६	६	७	०	३
१४	६	७।	७	७	४७	७	०	६

इति श्री अमर विनोद नाम ग्रन्थ अमर सिंह कृतौ संपूर्णम् समाप्तः संवत् १९०९ वि० लिखतं शिव विशुन हरीपुर ॥

विषय—वैद्यक

संख्या १० सी. अमर विनोद, रचयिता—अमरसिंह, कागज—देशी, पत्र—८८, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४; परिमाण (अनुष्टुप)—१६२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१९ = १८६२ ई०; प्राप्तिस्थान—लाला कन्हैयालाल, ग्राम—बहुराजपुरा, डाकघर—कासगंज, जिला—एटा।

आदि—१० ए के समान ।

अंत—सप्तम दोष में यंत्र लिखै यंत्र मांहि नख मोर का पांख हलद मेंहदी हस्ती डाढ़ की रस की लिखें स्त्री का मध्य में नाम लिखै यंत्र के बीच फिर कमर से वांधै सप्तम दोष मिटै गर्भ रहै । इति श्री अमरसिंह विरचिते अमर विनोद भाषायां पुरुष स्त्री वन्ध्या प्रयोग विधि संपूर्ण समाप्तः लिखतं गुलजारी लाल कायस्थ संवत् १९१९ मार्ग शीर्ष कृष्ण १२ ॥

विषय—वैद्यक ।

संख्या ११ ए. कोकसार, रचयिता—आनंद कवि, कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप)—४१६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१८=१८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—ज्योतिषी रामभज, ग्राम—विजयगढ़, डाकघर—विजयगढ़, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ कोकसार आनन्द विरचिते लिख्यते ।। दोहा ॥ ललित सुमन अलि पवच छवि आभूषण कंद । रति विनोद मन अति वढ़े तीजे मदन अनंद ।। वरण काम अभिराम छवि वरणों भामिनि भोग । सकल लोक दधि मथन करि रच्यो सार सुख जोग ।। मनुष रूप नहिं अवतन्यो तीन वात के जोग । द्रव्य उपावन हरि भजन अरु भामिनि के भोग ॥ भगति एक भगवंत की भोग सुभामनि भोग । वह संकट में सुख करन वह दुख हरण वियोग । पिंगल विन छन्दहिं रचे अरु गीता विन ज्ञान । कोक पढ़े विनु रति रमें तिहुंन रंचि समान ॥ कोक पढ़े विन रति रमें ज्यों विन दीपक धाम । ता कारण विधना रच्यो कोक सार जे नाम ॥

अंत—अथ मरति संख्या—कवित्त—प्रथम जोग रति जानि पुनि काम करत ही जानि, इन्द्र को नाम जानि लालम की वरत ही । पुनि सुजानि विपरीति प्रीतें जानि अंवुज आसन पर रीति पोषत परवान जान हिरन परसपर ॥ अति सरस तमाल त्रिनाल पुनि सुष वल, और महावली पुनि सूरत वंत इमि जानिये ॥ ये षोड़स आसन रुचि भले । रति संख्या ॥ आरस अरु संकोच कहि सिथिन सुनिहु दे कान । पांचौ आसन देत रति सोजे टुक परिमान ॥ दोहा—वे षोड़स ये पांच करि सकल भेद इक ईस । सुख उपजावत दुख हरत द्रावण रति को ईस । चौरासी आसन सकल कहे कोक सुख कंद । ता मधि नसत अति कठिन करन जान आणंद ॥ इति श्री कोक सार भैरव विरचिते भेद अस्तरी पुरुष की वोषदी मंत्र का संपूरण संवत् १९१८ वि०

विषय—कोकशास्त्र

संख्या ११ बी. कोकमंजरी या कोकसार, रचयिता—आनंद कवि, कागज—देशी, पत्र—३४, आकार—८ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप)—४५०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१०=१७५३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामभजन मिश्र, ग्राम—चौगवा, डाकघर—मल्लावा, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ कोक मंजरी (कोकसार) लिख्यते ॥ दोहा ॥ ललित सुमन धनु अलि पनिच तन छवि अभिनव कंद । मधु रति संग जो रति खन जै जै

मदन अनंद ॥ वरनों काम अभिराम छवि वरनौ भामिनि भोग । सकल कोक दधि मथन करि रचौं सार सुष जोग ॥

अंत—प्रथमहि हो अमरा पुर कोक । को जानत है या मृत लोक ॥ ये कहते वद-राइक मुकतेस । तिन प्रगट करी क्रीड़ा रतेस ॥ ता पाछे भये सुकवि अनेक । तिन रचे काव्य करि करि विवेक ॥ मदनोद्दित आनंग रंग रति रंजन समाप्त रति रंग ॥ छंद—पढि सकल काव्य करि करि विचार । वरन्यो आनंद कवि कोकसार ॥ दो०—सर्ग जो द्वादश सरित सर सव जे जुते बहु छंद ॥ पढ़त वढ़त रति रंग नव विविचित आनंद ॥ इति श्री सार (कोक-सार) आनन्द कवि कृत संपूर्ण समाप्तः संवत् १८१० जेष्ठ शुक्ला सप्तमी ॥ जै श्री रसिक विहारी की ॥

विषय—स्त्री पुरुषों के भेद गुप्त आसन गुप्त रोगों की औषधियां आदि वर्णन हैं ॥

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता आनन्द कवि थे । इनका इस ग्रन्थ से कुछ भी पता नहीं चलता । केवल लिपिकाल संवत् १८१० वि० है ॥

संख्या ११ सी. कोकमंजरी, रचयिता—आनंद कवि, पत्र—२०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२३ = १८६६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० छज्जूराम, ग्राम—वियारा, डाकघर—अछनेरा, जिला आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । अथ कोक मंजरी लिख्यते । भक्ति एक भगवान की भोग सु भामिन भोग । वह संकट मैं सुख करन वह दुःख हरन वियोग । सोरठा । वरनो काम अरु भोग, सकल कोक दधि मथन करि । रच्यो सु भामिनी भोग सकल सार दधि मथन करि । (इसके बाद ११ ए के समान) ।

अंत—सुरति आसनः—त्रिय के चरन कंध पर धरै कटिकर गहि क्रीड़ा विस्तरे । सुरति अंग आसन कौ नाम, जाही मैं सो हुवै कांम । एपोडस आसन करवावै तब कामिन कौ मनमथ दावै । इति श्री कोक मंजरी संपूर्ण । संवत् १९२३ मिती भाद्र पद वदी १३ व्रहस्पति वासरे लिपतं चौबे चुन्नीलाल मदसंह कोटिला में ।

विषय—पूर्ववत्

संख्या ११ डी. कोकसार, रचयिता—आनंद कवि, पत्र—४३, आकार—७½ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप् —६०२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५१ = १७९४ ई०, प्राप्तिस्थान—मुंशी जोरावरसिंह, मेथड टीचर ट्रेनिंग स्कूल, ग्राम—मिढ़ाकुर, डाकघर—मीढ़ाकुर, जिला—आगरा ।

आदि—११ ए के समान ।

अंत—प्रथम अमर पुर हतौ जु कोक । कोई जानतु नहिं मृत लोक हुतौ शान्तिन नाम नरेश । जिन प्रगट कियौ कलि आनि तेस ॥ ५५ ॥ ता पाछें कविता भये अशेष । जिनि रचे कवि कवित अशेष ॥ कामा प्रदीप अरु पंच वान । पुनि रति रहस्य जाने सुजान ॥५६॥ उर मंडन सिव अदिक अनंग । अति रंजन संमत अंग रंग । पढ़ि सकल कवि करि करि

विचार । वरन्यों आनंद कवि कोकसार ॥५७॥ दोहरा—षंड जु द्वादस अति सरस । वरने वहु विधि छंद । पढ़त पढ़त रति रंग । अति विविचित हित आनंद ॥५८॥ इति श्री कोक सारे आनन्द क्रते सप्तदशो षंड संपूर्ण मिती मार्ग वदि ॥१०॥ संवत् १८५१ ॥ राम राम राम

विषय—स्त्री तथा पुरुषों के लक्षण । वीर्य निवासादि वर्णन । चुम्बन आलिंगनादि वर्णन आसन तथा कुछ वीर्य वृद्धि और संतान सम्बन्धी ओषधियों का वर्णन ॥

संख्या ११ ई. कोकसार, रचयिता—आनंद कवि, पत्र—३४, आकार—६ × २½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१६, रूप—बहुत प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९४३ = १८८६ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० तिलकसिंह जी, ग्राम—लतीफपुर, डाकघर—कोटला, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । जो ना जाने कोक पढ़ करें सुजतन विचार । अति रुचि उपजे तरुन तन अति रुप मानै नार । अथ मदन निवास वर्णनो । दोहा । मदन भाम के नाम इव सत सदा इक अंग । सोचत मदन जगाइ के पिय बिलसै पिय संग । अमावस वडुवा विमल तिथि पद अंगुष्ठि अनंग । तिह भग उतस्वो रत खल चढ़ चल्यो तिहि अंग कृष्ण पक्ष को आदि दें अरुविच शुक्ल जान । यंत्र से तिथि निरखि के तिया अंग पहिचानि । श्रंडल । काम चरण वरनाम इकठा धरतहु सकल कोक विचार सुक्ल पक्ष का कृष्ण पक्ष को आदि सुपुनि मनावहिं । वाम अंगना अंग अनेक वरण नहिं । चौपाई, पड़वो पूनो जान मांग नव दीजिये । के अछंत कछु केश नतन बहु कीजिये । कै छूवत ललाट घाट सम पाइये । इहि विधि सोवत काम अनंग जगाइये ।

अंत—अथ चित्रनि रूप आसान । दोहा । मृग तमाल नट जानियो सुख वल्लभो जो विचार चित्रनी को अति रुचि वढ़ै कहत कोक निरधार । अथ संखनी आसन । विपरीत सुरत तसु न सिंथल संकोच न लेह । संखनी सुरत सुहाय अति इह विधि ते सुख देह । अथ हस्तनी रूप आसन । उध्यम आसन लखै रूप पोषित आनंद । हस्थनो रत अति रुचि वढ़े मिटे तरुन तन द्वंद ।३१। पिय धोवे ताते उदक तरुनी सीतल होय । वह द्रढ़ को द्रढ़ ही रहे भंग संकोचन होय । सुनो रसिक जन श्रवण धन कोक सुखद परकास । चाहत चतुर तिय प्रीति दे असि करत मुदित इतिहास । खंड पांच दस अति सरस स्वेसु बहु विधि छंद । पढ़त सुनत चौप चित्त बाढ़त अति आनंद । एक ही तो कवि आनंद हीस निज प्रकट कियो जगदीश सीस । ता पाछे के भये अनेक तिन रचो आप भाव कर विवेक । इति श्री कोकसार आनंद कृत आसन विधान वर्नन नाम पंच, दशोषड़ ।१५। सम्वत् १८४५ लिखितम फूलसिंह लतीफपुर के सम्वत् १९४३ ।

विषय—पुरुषों तथा स्त्रियों के भेदों उनके लक्षण, वन्ध्या व्यभिचारिणी, दूती आदि स्त्रियों की पहिचान, वशीकरण यन्त्र मन्त्र काम सम्बन्धी विषयों का सविस्तृत उल्लेख अंत में आसनों का संक्षिप्त उल्लेख ।

टिप्पणी—यह अपने विषय की उत्तम पुस्तक है । भाषा सरल एवं हृदय ग्राहिणी है । विषय का विवेचन तो बड़ी बुद्धिमत्ता से क्रमशः किया गया है । किन्तु पुस्तक की दशा इतनी खराब है कि पन्ने बिलकुल फटे हैं प्रथम २ हो रहे है इसी लियें पुस्तक का पढ़ना भी बड़ा कठिन हो जाता ह ।

संख्या ११ एफ. कोकसार, रचयिता—आनंदकवि, कागज—देशी, पत्र—३६, आकार—७½ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—७२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री चिरंजीलाल वैद्य, ग्राम—बालनगंज, डाकघर—बालनगंज, जिला —आगरा ।

आदि—अथ पद्मिनी लक्षण दोहा पद्मिनी चंपक वरण वन, अति कोमल सब अंग, चहुँ ओर गुंजत भ्रमर, निमिष न छाँडत संग, अति कोमल तन अतिहिमन, आतुरता मुख बैन, उजल चरि पर भल धरै, लाजवन्त है नैन ॥३॥ छप्पै—दग अंजित जिय लाल नैन, मृग कुटिल भृकुटिवर तिल प्रसून सम नासि त्रिविल जहि कंठ सर वचन गमन जिहि हीन अंग कोमल विचित्र अति तनु सुछम कटि छीन प्रगट दामिनी देह दुत ससि संपूर्ण वदन छवि अंग सदा निरमल रहै आहार निमिथ अछत अमल विमल छौर दैठौ चहै ।

अत—चौपाई प्रथम आरा दिहु तो कोक । प्रथम कोऊ जानत नाहिं मृत्यु लोक । येकहु तौ पातसाह जन मुनीस । तिहि प्रगट करी कर विप्र अनीस । तापछै भये जो कवि अनेक तिन रचे काव्य कर विवेक । काम प्रतीत अरु पंच बान । पुनि रति रहस जानहु सुजान । अमोद विनोद अनेक रंग । रति रंजन सप्तम रत तरंग ॥ पढि सकल काव्य कर २ विचार । वरनो आनंद कवि कोक सार ॥ दोहा—सर्गा द्वादस अति सारि॰॰॰रचे जु बहु विधि छन्द । पठति पठति रति रंग नव विवचित हित आनंद ।

विषय—पद्मिनी, चित्रणी, संखिनी, हस्तिनी, लक्षण ७ तक। पद्मिनी वशी करन, वासक सज्जा भेद, उत्कंठा, अष्ट नायिका, स्वाधीन पतिका, नायक दूषण, सात्विक दुख, ससा लक्षण, कुरंग लक्षण, वृषभ लक्षण, अश्व लक्षण, सठ, दक्षिण अनुकूल, नीचरता, विशेष चंद्र कला, लिंग मदन सदन, कन्या, गौरी, बाला, तरुणी, प्रौढ़ा, वृद्धा लक्षण वर्णन १७ पृष्ठ तक। प्रीत हरण, विरक्त, अवश्य कामिनी, अनुरागवती, कामवती, प्रवत्ती, दूती प्रीत्या, वर्णन, पुरुष सिंगार, २१ पृष्ठ तक । वाजी करण, थंभन, मदन मोद केश्वर, रति, प्रमोद, स्थूल करण, संकोचन, आदि दवाएँ पृष्ठ ३२ तक । भिन्न २ आसनों का वर्णन ४१ पृष्ठ तक ।

टिप्पणी—इस पुस्तक में कवि का परिचय नहीं दिया है अध्याय समाप्त करते वक्त लेखक ने "आनंद कवि" विरचितं ऐसा लिखा है ।

संख्या ११ जी. कोकसार, रचयिता—आनंद कवि, कागज—बाँसी, पत्र—३६, आकार—६½ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—५९४, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५९ = १८०२ ई० । प्राप्तिस्थान—पं० गोबिंद-प्रसाद, ग्राम—हिंगोटु खिसिया, डाकघर—हिंगोटु खिसिया, जिला—आगरा ।

आदि—११ ए के समान ।

अंत—ता पाछे भई जुक्ति अनेक, जे है रचे कवि करि विवेक । काप पर दीप अरु पंच वान, सुनि रति करहिं जानिहिं सुजान । अस मदन विनोद अनेक रंग, इति रंजन सन्य मूरति तरंग । पठै सकल कवि करि विचारि । वरनौ अनंद कवि कोकसार । दोहा—षट पंच दस अति सरस, रचे जो बहु विधि छंद । पढ़त सुनत अति चोप चित, बाढ़त अधिक अनंद । टूटौ शब्द समारियौ' विन्ती करौ अनंद । चातुर कवि पंडित सरस, जो जानो छबि

छन्द । इति श्री कोकसार आनन्द कृत पंचदसोस्वर्ग १५ सम्पूर्ण संवत १८५७ लिखितं दुलीचंद पंडित अस्थान नौगुरा में बसई को बासु ॥

संख्या ११ एच. आसन मंजरीसार, रचयिता—आनंद कवि, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८२८ = १७७१ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला ज्ञानी-राम, पटवारी, ग्राम—दयानगर, डाकघर —सिकंदरा राऊ, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—अथ आसन मंजरी सार आनन्द कवि कृत लिख्यते ॥ दोहा ॥ प्रथम चतुर जो कामिनी पति को आसन देत । अति अनंद चित ऊपजै वाढ़ै विवि चित हेत ॥ अथ जोग आसन-भुजंग प्रयात छंद– पौढ़ि कै बालिथ आपु करै जुग जंघ दुहूं कर वीच धरै ॥ पति वैठि भुजा गहि केलि मचै ॥ अथ रति नाम आसन ॥ भुज ऊपर नारि को पाइ धरै पिउ वैठि भुजा गहि कलि करै ॥ रति नामक होइहि आसन को । अति काम कलोल प्रकासन को ॥ अथ मद मोदित आसन ॥ कटि ऊपर नारि को पाउ धरै पिउ वैठि गहै कुच केलि करै ॥ मदनोदित नामहिं यों चरिकै रति होत नहीं दिढ़ता करि कै ॥

अंत—हित अंवुज रति पोषिता अरु विपरीति बखान । ये तमाल मृनाल पुनि उथ्थित विधिहि सुठानि ॥ नारी आसन—अंवुज रति पोषित विपरीति लाल सहित सो जिय धरि प्रीति ॥ आसन पांच तरुनि सुख करै । कोक चारि निहचै उच्चरै ॥ आसन जातु परस्पर नाम ताको करत पुरुष अरु वाम । सेष पंच दस आसन रहे ते पुरषहिं करिबे को कहे ॥ इति श्री आसन मंजरी सार आनंद कवि कृत संपूर्ण समाप्तः संवत् १८२८ वि० आश्वनि शुक्ला सप्तमी ॥

विषय—स्त्री पुरुषों के काम केलि संबंधी आसन ॥

संख्या १२ ए. गीता भाषाटीका, रचयिता—आनंदराम, पात्र—१०५, आकार—१२$\frac{3}{4}$ × ७$\frac{3}{4}$ इंच; परिमाण (अनुष्टुप्)—४४१०, रूप—प्राचीन, पद्य और गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७६१ = १७०४ ई०, लिपिकाल—सं० १९१८ = १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—बौहरे परसुराम, ग्राम—नगला धीर, डाकघर—वरहन, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः । श्रीराधाकृष्णाय नमः । अथ भगवद्गीता भाषाटीका संयुक्त लिषते । दोहा । ॐ हरि गौरीश गणेश गुर प्रनवौं सीस नवाय । गीता भाषा रथ कर्‌यौं दोहा सहित बनाय । सुथिर राज विक्रमनगर नृपमनि नगर अनूप । थिर थार्‌यौं परधान यह राज सभा कौं रूप । नाजर आनंद राम कैं यह उपज्यौं चित चाउ । गीता कौ टीका कर्‌यौं सुनि श्रीधर कौ भाउ । आनंद राम अनूप कौं नाजर अति परवीन । सुघड़ सुधारि विचारि कै जन हित करी नवीन । आपुहि आनंद राम यह टीका रची बनाइ । निसि दिन हरि हिरदै बसौं गिरधर कृष्ण सहाय । गीता ज्ञान गंभीर लषि रची जु आनंद राम । कृष्ण चरन चित लगि रह्यौं मन में अति आराम । आनंद मन ऊछव भयौं हरि गीता अवरेषि । दोहारथ भाषा लिषी बानी व्यास विसेषि । जो यह गीता समुझि कै हिरदैं धारैं सोय । ब्रह्म मगन निस दिन रहे कर्म लिपे ननि कोय । इति आदि दोहा संपूर्ण । धृतराष्ट्रउवाचः ॥ ऽश्लोक ॥ धर्म क्षेत्रे कुरु क्षेत्रे समवेता युयुत्सवः ॥ मामकः पांडव श्चैव

किम कुर्वत संजय ।१। टीका ॥ धृतराष्ट्र पूछत हैं संजय सौं कि हे संजय धर्म क्षेत्र ऐसे जो है कुल क्षेत्रता विषै येकत्र भयो है। अरु युद्ध की इंछा धरत है। ऐसे जो मेरे और पांड के पुत्र ते कहा करत हे। दोहा। धर्म क्षेत्र कुरु क्षेत्र मै मिले युद्ध के साज। संजय मो सुत पांडवनि कीनै कैसे काज।

अंत—कृतार्थ के लिये सवैं ज्ञान को सोध, आनंद रामहि यह कन्यौ परमानंद प्रबोध। परमानंद प्रबोध यह, कीन्यौ आनंद राम, पढ़ैं गुनैं याकौं सुनैं सो पावैं प्रभु धाम। नारायन निज नाम कौं धन्यौ देषि कै ध्यान, आपुनि आनंद राम कौं, भक्ति दई भगवान। जव लगि रवि ससि मेरु महि अगनि उदधि थिर होइ, परमानंद प्रबोध यह, तब लगि जग में जोइ। तव लगि दीपति भानुकी, तापत ह्वै सब देस, जब लगि दिष्ट परौं नहीं, हरि गीता राकेस। ससि रसि उदधि धरा समित कातिक उजिल मास, रवि पान्यौं पूरन भयो, यह गीता परगास। इति श्री भगवद्गीता सूपनीसत्सु ब्रंह्म विद्यायां योग सास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन संवादे दोहा सहित भाषा टीकायां आनंदराम कृत परमानंद प्रवोधे मोक्ष सन्यास योगोनाम अष्टादसोध्यायः। १८। पदसं पुस्तकं दृष्टा तादृसं लिषितं मया मम दोषो न दीयते। १। संवत् १९१८ मार्गसिर मांसे सुक्ल पक्षे तिथौ १३ रवि वासरे लिखना मिश्र हरिनारायण मौजे मितावली पठनार्थं रुपराम अजाची ब्राह्मन मौजे वरहन नगराधीर दसषत हरिनारायन।

विषय—श्रीमद्भगवद्गीता का दोहों में अनुवाद तथा गद्य में टीका।

संख्या १२ बी. भगवत गीता, रचयिता—आनंद, कागज—स्यालकोटी, पत्र—९४, आकार ६$\frac{१}{२}$×३$\frac{१}{३}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—११७५, रचना—बहुत प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० केदारनाथ, ग्राम—कुंडोल, डाकघर—दौकी, जिला—आगरा।

आदि—१२ ए के समान।

अंत—गीता प्रति दिन उच्चरै, सदा सुछिम जगमाह, मनसा वाचा कर्मना तेहि समान को नाहि। जो कोउ चाहे भव तरन, कृस्न कमल को पास। अवर सकल श्रम छाड़ि कै, गीता करै अभ्यास। लोक कृतारथ के लिये, सबे सार को सोध। आनन्द रामहि यह कन्यो, परमानन्द परबोध। परमानन्द परबोध यह कीनो आनन्द राम। पढ़ै सुनै याको सुनै, सौ पावै प्रभु धाम। नारायण निज नामको, धरयो देखि के ध्यान। अपनी आनन्द राम को भक्ति देहु भगवान।

संख्या १२ सी. भगवत् गीता संवोधिनी टीका, रचयिता—आनंदराम, पत्र—२२२, आकार—६$\frac{१}{२}$×३$\frac{३}{४}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४६६२, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१७ = १७६० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० छिंगामल जी, पुजारी राधाकृष्ण मंदिर, ग्राम—फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः। ॐ नमो भगवते वासुदेवाय। ॐ नमो गुरवे। ॐ अस्य श्री भगवद्गीता मालामंत्रस्य। धृतराष्ट्र उवाच। धर्म क्षेत्रे कुरु क्षेत्रे समावेता युयु-

त्सवः ॥ मामकाः पांडवाश्चैव किमकुर्वत संजय ।१। संजय उवाच । दृष्ट्वातु पांडवानीकं व्यूढं दुर्य्योधनस्तदा । आचार्य्यमुपसंगम्य राजावचनमब्रवीत ।२। भाषा । राजा धृतराष्ट्र कहते हैं—संजय प्रति । संजय तोकुं व्यास जी कौ प्रसाद है । तातें दिव्य चक्षुहें तेरे । अत्र इहि विरिया में मेरे पुत्र दुर्योधनादिक । अरु पांडव युधिष्टिर आदि संग्राम के विषें मिले हैं । सु इन दो ऊनि कौ कियौ तू मोसों कहि ।१। राजा धृतराष्ट्र को पुछण सुनिकें संजय कहतु है । अहो राजा सुनि । पांडवनि के सेना के व्यूह कों भलौ रच्यौ देषिके । तब दुर्य्यो-धन द्रोणाचार्य के सन्निकट जाइकें वचन कहतु हैं ।२।

अंत—कदाचित् कोऊ अपनी पंडिताई केवल गीता विचारै तौ गीता के अंतर जो तत्त्व है । सु कबहू न पावै । गुर कृपा अमृत दृष्टि विना । सोइ दृष्टान्त करि कहत हैं । जो कोऊ समुद्र कों अंजुली निकरि छांहै । अरु नगलीयौ चाहै । तौन हाथ न आवैं । लह-रितु ही में डूबै । अर्जुन युद्ध करि करि यही समझे ॥ इति श्री भगवद्गीता संबोधिनी टीका श्री एकं शास्त्रं देवकी पुत्र गीतं । देवश्चै को देवकी पुत्र एव । धर्मश्चै को देवकी पुत्र सेवा । मंत्रश्चै को देवकी पुत्र नाम ।१। इति सर्व्यं । लेखक पाठकयोः शुभंभूयात् । संवत् १८१७ शाके १६८२ चैत्र मासे शुक्ल पक्षे तिथौ १५ ॥ लिखायतं धर्म मूचि गत ब्राह्मण प्रति पालक राजि श्री श्री श्री उमेदस्यहं जी ।

विषय—श्री मद्भगवद्गीता की टीका ।

संख्या १२ डी. भगवत् गीता सटीक, रचयिता—आनंदराम, पत्र—१०३, आकार—९½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७०४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१६ = १८५९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० वेदनिधिजी चतुर्वेदी, ग्राम—पारना, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः ॥ धृतराष्ट्र उवाच ॥ धर्म क्षेत्रे कुरु क्षेत्रे समवेताय युयुत्सवः । माम काः पांडवाश्चैव किम कुर्वत संजय ॥१॥ टीका ॥ राजा धृतराष्ट्र संजय प वास ताकों पूछत भये कै धर्म क्षेत्र जामैं धर्म उगै सो कुरु क्षेत्र तामैं हमरे वेटा और राजा पान्डु ताके वेटा ते युद्ध करिवे कौं एकत्र भये है सो वे कहा करै हैं सो कहो ॥१॥ संजय उवाच – द्रष्टातु पांडवानीकं, व्यूढ़ दुर्जोधनस्तदा । आचार्यमुप संगम्य राजा वचनमब्रवीत ॥२॥ टीका ॥ संजय राजा सों कहै है तिहारे वेटा दुर्जोधन पांडवन की सेना की समूह देषि करिकै आचार्य्य श्री द्रोणाचार्य्य श्री द्रोणाचार्य तिनके निकट जायकें पूछी ॥२॥

अंत—तच्च सस्मृत्य संस्मृत्य रुप मद्भुतं हरे । विस्मयो मे महाराज हृस्यामिच पुनः पुनः ॥७७॥ टीका—ता संवाद हूते अधिकतर वह श्रीकृष्ण कौ रूप महा विकराल जो अर्जुन कौं वतायौ अति अद्भुत ताकौ स्मरण करिकै बड़ो आश्चर्य मोको है । वारंवार यादि करि हर्ष होत है ॥ ७७ ॥ इति श्री भगवद्गीता सूप विषत्सु ब्रह्म विद्यायां योग शास्त्रे श्रीकृष्णा-र्जुन संवादे सन्यास योगो नाम अष्टो दशोध्याय १८ सं० १९१६ लिखितं पंडित भमानी प्रसाद सुस्थान कुदौना मध्ये चर्मन्वत्या⋯ण तटे मास माघकृष्णापक्षे तिथौ १३ भृगुवासरे ।

विषय—श्रीभगवद्गीता की टीका ।

संख्या १२ ई, भगवद्गीता, रचयिता—आनंदराम, पत्र—३२५, आकार—४ × ३¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८३५, रूप—प्राचीन,

पद्य और गद्य । लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५७ = १८०० ई० । प्राप्तिस्थान—पुजारी बनारसीदास, ग्राम—बमनथोक मोहल्ला, समाई; डाकघर—समाई, जिला—आगरा ।

श्री गणेशायनमः । ॐ ॥ धर्म क्षेत्र कुरु क्षेत्र में मिले युद्ध के साज । संजय मो सुत पांडवन, कीने कैसे काज । टीका । धर्म कौ क्षेत्र ऐसो जो कुरु क्षेत्र । ता विषै सम वेत । एकत्र भए ऐसे जो कैरु अरु पांड के पुत्र कैसे हैं । युध की इछ धरतु है । हे संजय ते कहा करत भए । संजयउ । दृष्ट्वातु पाँडवा नीकं व्यढं दुर्योधन धनस्तदा । आचार्य मुप संगम्य राजावचनम ब्रवीत । दोहा । पांडव सेना व्यूह लषि दुर्योधन ढिग आइ, निज आचारज द्रोन सों, बोल्यो ऐसे भाइ । टीका । दुर्योधन पांडवन की सेना देखि । द्रोणाचार्य पास जाइ । अरू वचन बोल्यो ।

अंत—श्लोक—यत्र योगेश्वर कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्द्धरः तत्र श्रीर्पि जयोभूतिर्क वानीति मतिर्मम । ७८ । दोहा । योगीश्वर श्री कृष्ण जू अर्जुन है जाठौर । तहां विजय अरु नीति है अष्ट संपदा और । ७८ । टीका । हे राजन यह मोकु निश्चै है जहां जोगेश्वर श्री कृष्ण है । अरु जहां धनुर्द्धर अर्जुन है तहां सर्वथा लक्ष्मी है विजै है विभूति है अरु नीति है । मेरी मति यों कहे हैं । ७९ । इति श्री भगवद्गीता सूपनिषत्सु ब्रह्म विद्या यां योग शास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन संवादे मोक्ष सन्यास योगोनामाष्टादशोध्यायः । संवत् १८५७ एमिति वैशाषमासे शुक्ल पक्षे तिथौ दशम्यायां रवि दिने । लि० भट गंगाधरेणः ॥ श्री रस्तु ॥ शुभं भूयात् लेखक पाठक यो ।

संख्या १२ एफ. भगवद्गीता, रचयिता—आनंदराम, पत्र—६३, आकार—८ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० गंगाप्रसाद तिवारी, प्रधानाध्यापक, टाउन स्कूल, ग्राम—फतहाबाद, डाकघर—फतहाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीगनेशायनमः श्री सरस्वती नमः, श्री गुरुचरणभ्यो नमः अथ भगवत् गीता लिष्यते । धृतराष्ट्रो वाच । धर्म क्षेत्र कुरु क्षेत्र में, मिले जुद्ध के साज । संजय मो सुत पाँडवनि, कीन्हें कैसे काज ॥ संजय उवाच ॥ दोहा ॥ पांडव सेना व्यूह लीपु दुर्जोधन ढिंग आइ । निज आचारज द्रोन सों, बोल्यो ऐसे भाइ ॥ ३ ॥ दोहा ॥

अंत—जोगेस्वर श्रीकृष्ण जू, अर्जुन हैं जा ठौर ॥ तहां विजय अरु नीति है, अटल संपदा और ॥८०॥ दोहा—यह गीता अद्भुत रतन, श्रीमुष कियो बखान । वार वार निरधार कीय, पराभक्ति को ज्ञान ॥८१॥ भक्तिवस्य श्रीकृष्ण जू, यहै कियौ निरधार । करे भक्ति रिछा समें, यहै वेद को सार ॥ ८२ ॥ इति श्री भगवत् गीता सूपनिषदसु ब्रह्म विद्यायां जोग सास्त्रे श्री कृष्णार्जुन संवादे मोक्षि सन्यास योगो नाम अष्टा दशो अध्याई ॥ १८ ॥ सम्पूर्न स्माप्तं ॥ सिद्धि श्री महाराज कुमारि श्री महारानी वाकावती देव्या जू साहब के पठनारथ लिषत माडन सींघ कनोंजीआ चौधरी मोजे सिरसा के सुभ मिती वैसाष सुदी १५ चंद्र संवत् १६१५ ॥ श्रीराम जी ॥

विषय—गीता का पद्यानुवाद ।

संख्या १२ जी. श्रीमद्भगवद्गीता, रचयिता—आनंदराम, पत्र—१९०, आकार—६ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—८६४, रूप—बहुत प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७६१ = १७०४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० गौरीशंकर जी गौड़, ग्राम—नगला धौंकल, डाकघर—बरहर, जिला—आगरा।

आदि-अंत—१२ एफ के समान।

संख्या १२ एच. श्रीमद्भगवद्गीता, रचयिता—आनंदराम, पत्र—१००, आकार—६ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—८७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७६१ = १७०४ ई०, लिपिकाल—सं० १८७५ = १८१८ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० विहारीलाल, प्रधानाध्यापक, ग्राम—नौगवां, डाकघर—नौगवां, जिला—आगरा।

आदि-अंत—१२ एफ के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री भगवद्गीता सूपनिषत्सु ब्रह्म विद्यायां योगशास्त्रे श्री कृष्णार्जुन संवादे मोक्ष सन्यास योगो नाम अष्टादसोध्यायः।१८। संवत् १८७५ श्रीमते रामानुजाय नमः।

संख्या १२ आई. भगवद्गीता, रचयिता—आनंदराम, पत्र—४५, आकार—६७५, परिमाण (अनुष्टुप्)—६७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७६१ = १७०४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० बद्रीप्रसाद, ग्राम—मूसेपुरा, डाकघर—फतहाबाद, जिला—आगरा।

आदि-अंत १२ एफ के समान।

संख्या १२ जे. श्रीभगवद्गीता, रचयिता—आनंदराम, कागज—बाँसी कागज, पत्र—५४, आकार—८३/४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप)—८१०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७६१ = १७०४ ई०, लिपिकाल—१८७७ = १८२० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० जयगोविंद मिश्र, ग्राम—सरहैदी, डाकघर—जगनेर, जिला—आगरा।

आदि—अंत—१२ एफ के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्रीभगवतगीता रूप ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्री कृष्णार्जुन संवादे कोक्ष सन्यास योगे नाम अष्टदशोध्याय॥ १८॥ लिखितं मनुलाल ब्राह्मन॥ पठनार्थ केसरी सिंह। शुभंभवतु॥ मिति भाद्र बदी एकादशी। मंगलवार। संवत—१८७७ शुभमस्तु कल्याणमस्तु।

संख्या १३. गीत संग्रह, रचयिता—आनंदी कवि, पत्र—९२, आकार—१० × ६ इंच; पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—५५२, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० जगन्नाथप्रसाद तिवारी, ग्राम—निगोहा, डाकघर—निगोहा, जिला—लखनऊ।

आदि—श्री जानकी वल्लभो जयति॥ राग आसावरी॥ श्री गणपति शुभ सिद्धि के दानी। गावत सुर नर मुनि विज्ञानी॥ प्रथम पूजि जग होत अनंदित। गिरिजा सहित सकल जग वंदित॥ लंबोदर गज वदन विनायक। मंगल दानि अरिष्ट नसायक॥ शिव के

सुत समस्त गण स्वामी । मन वांछित तव चरण नमामी ॥ आनंदी मांगत कर जोरे । श्री गुरु चरण वसै हिय मोरे ॥१॥ भजन ॥ रघुकुल प्रगट धरम धुर धारी । गुरु पित मात चरण सेवा रत खल वन कमल तुषारी ॥ १ ॥ मुनि मष हेतु सुबाहु ताड़का प्रवल पिशाचर मारी ॥ गौतम नारी साप के नाशक त्रिभुवन जस विस्तारी ॥ २ ॥ जनक राय प्रण के प्रति पालक परसराम मदहारी । सीता व्याहि अवध पुर आयो परिजन सुख महतारी ॥ ३ ॥ आयसु सीस मातु कर लीन्हों वचन को गमन विचारी । चित्र कूट छाये रघुनंदन कामद गिरि सुषभारी ॥ ४ ॥ सानुज भरत परे चरणन्ह मह आरत सरण पुकारी । करि सनमान पादुका दीन्हीं भरत प्राण रखवारी ॥ ५ ॥

अंत—घनाक्षरी—गाधि तनै संजुत अनंदित लखन राम धनुष जग्य प्राप्ति भये सोभा वहुतै भई ॥ मानहु प्रभा करके संग सोहै मोद भरे काम औ वसंत देखि सभा सब मोहई ॥ जनक जू प्रणाम कीन्हों आपुन को धन्य मानि जज्ञ को रचित सकल मुनिहि दिखा वई ॥ कौशिक अशीसदई नृपहि सराह्यो अति कहत अनंदी रघुनाथ जू सही दई ॥ ३४ ॥ द्वै भाई देखत नृपति वलहीन भये । रजनी के विगत जैसे तारेगन सोहई ॥......... शेष लुप्त]

विषय—(१) पृ० १ से १० तक—मंगला चरण । रामचन्द्र की धर्म धुरीणता और उनका महत्व (२) पृ० ११ से ४५ तक—पापियों के तारने का प्रमाण देकर अपने तारने की प्रार्थना । श्री राम की दयालुता और वत्सलता । राम चन्द्र जी के अनुपम कार्य । चेतावनी । भक्ति का उपदेश राम के सौंदर्यादि का वर्णन । कुछ कृष्ण संबंधी गीत । सीता राम विवाह का सूक्ष्म वर्णन । बधाई । प्रेम । राम के गुणानुवाद का फल । (३) पृ० ४६ से ६४ तक—राम भजन की बेरा । उसका यत्न तथा वसंत वर्णन । होली राधा कृष्ण की शोभा और वस्त्र भूषण का वर्णन । प्रेम । उपालंभादि वर्णन । राम चन्द्र जी की कुछ कृतियां । (४) पृ० ६५ से ९२ तक—उपदेश के कवित्त । पंचक । चेतावनी । राम नामका महत्व । राम के जनकपुर संबंधी कुछ छन्द ॥ –आगे लुप्त ॥

टिप्पणी—प्रस्तुत पुस्तक के आदि में उसका कोई नाम नहीं दिया गया है और अन्त से वह लुप्त है अतएव उसका नाम कल्पित रख लिया गया है । इसमें संगीत और कविता दोनों ही का समावेश हुआ है और दोनों ही में प्रायः सीता राम अथवा राधाकृष्ण का गुणानुवाद हुआ है । इसके अतिरिक्त उसमें भक्ति, विनय, उपालम्भ, उपदेश और चेतावनी विषयों का वर्णन है । कविता साधारणतया अच्छी है ॥

संख्या १४. अंजननिदान, रचयिता—आनंदसिद्धि, पत्र—१५७, आकार—९¾ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२३९, रूप—प्राचीन, पद्य और गद्य । लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८५ = १८२८ ई०, प्राप्तिस्थान—गिरिधारीलाल चौबे, ग्राम—चंदवार, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीमते रामानुजाय नमः । नमामिधन्वन्तरि मादिदेव सुरासै वंदित वाद पद्मं । लोके ज्वरासभय मृत्युनाशं । धातार मीशं विविधौपदीनां । पानी यं नतु पानी यं

पानी येन्ये प्रदेशयं । अजीर्णे क्वचिते चामयेक्वे जीर्णे चनेतरं । नाना शोभ वंवारिस विषं भवति ध्रुवं । स्वक्षं केतक मक्ता धैशीतं दोषायनं क्वचित । वर्षे वसंत समये कूपं वारि प्रशस्य । शरदकाल तालका जल उत्तम । श्लोक । पानीयं प्राणिनां प्राणं निश्चये न च तन्मयं अत्योपति निषेधेक न क्वाचिद्वारि वर्यंते । टीका । ज्वरस्य प्रथमेरूपे भषंजन दिनत्रयं । नोदेयं क्वथितं तोयं वदंती न क्वचि-द्वारि वर्यंते । ८ । टीका । ज्वरके प्रथम लछिन विषै औषदि तीनि दिन तांई न दीजै । काढ़ो न दीजे सर्व बैद्य मतहे ।

अंत—अथ विस्तरपुस्तक पाठद्दा हस्तधिया धृतिभूरिभया नवानानल द्दमित् पद्य कृतं । भिषजा मिदमंजन मस्तुमुदे । अग्निवेशः । सुधन्यो यं कूटात्कूटं । परकृतं शतवान्यै षु पंचानि रहस्यानि शत स्ततु ॥ २ ॥ अंजनेन कृतं सर्वे किंचित् ग्रंथा तरादपि । देवाचार्येण ग्रथितं तद्वघृंत तत्व बुद्धिभि ॥

इति श्री अंजन निदानः संपूर्णः संवत् १८८५ भाद्रशुक्ल १ लिः झुनीलाल चौवे सुपठनार्थं ॥ श्री राम जयति ।

विषय—क्वाथ वर्णन, चूर्ण, लेप तथा अवलेहादि, घृत, तेल, स्त्री चिकित्सा, घृतपान, धातुसोधन तथा मारन विधि, कुछ वस्तुओं के गुण और रसों का वर्णन । परिभाषाएं, परीक्षाएं, साध्यासाध्यज्ञान, द्रवनिरूपण अर्क आदि, दुर्गंध निवारण, तथा हंसराजकृत नाड़ी परीक्षा । हेमराजकृत पाग, निदान आदि, बालरोग, सूतिका प्रदरादि और विष रोग वर्णन ।

संख्या १५ ए. विचारमाल, रचयिता—अनाथदास, पत्र—८, आकार—१० × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२६ = १६६९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामजति, ग्राम—बड़ा गाँव, डाकघर—कमतरी, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीमते रामानुजाय नमः ॥ दोहा ॥ नमो नमो श्री रामजू । सतचित आनंद रूप । जिआनि अग्नि जग स्वप्नवत् । नसि भ्रम तम कूप ॥ १ ॥ राम मया सत गुरू दया । साधु संग जव होय । तव प्राणी समझें कछू । रह्यो विषय रस भोय ॥ २ ॥ पद वंदन आनंद जुत । करि श्री देव मुरारि । विचार माल वरनन करूं । मुनिजू को उर धारि ॥ ३ ॥ किं मुनि ॥ यह में यह मम नाहिं मम, सव विकल्प भय छीन । परमात्मा पूरण सकल, जानों मुनि तालीन ॥ ४ ॥

अंत—लिखै पढ़े अति प्रीति करि । अरु पुनि करैं विचार । क्षण क्षण ज्ञान प्रकास तहँ । होइ सुरति प्रकार ॥ ४० ॥ गीता भरथरि कौ मतौ । एकादश की उक्ति । अष्टावक्र वशिष्ट मुनि । कछू वेद की उक्ति ॥ ४१ ॥ मूरष कौ न सुनाइयै । नहिं जारौ जिज्ञास । कै करै विषाद कछु । कै मन होइ उदास ॥ ४२ ॥ आस्तिक बुधि गुरू मुनि विषैं । हृदय सुदृढ जिज्ञास । अभिमान रहित धर्म हिते, प्रति का होइ प्रकास ॥ ४३ ॥ सोरठा ॥ सत्रह सै छब्बीस, सवत माधव मास शुभ । मोमति जेइ तीस, विचारि मति दिय प्रगट करि ॥४४॥ इति श्री विचार मालायां आसवान स्थिति वर्णनी नाम अष्टमो विश्राम ॥ ८ ॥ इति श्री विचार माला संपूर्णन ॥ समास ॥

विषय—संतों के लक्षण, सत्सङ्ग, ज्ञान भूमि, ज्ञान साधन, आत्मोपदेश, जगत-मिथ्यात्व, अनुभव तथा आत्मवान की स्थिति वर्णन ।

टिप्पणी—ग्रंथकार अपने को नरोत्तमपुरी का मित्र बतलाता है । प्रस्तुत ग्रंथ गीता, भर्तृहरि शतक, भागवत एकादश स्कंध, अष्टावक्र एवम् वाशिष्ठ आदि ग्रंथों और वेदों के आधार पर लिखा गया है ।

संख्या १५ बी. विचारमाल, रचयिता—अनाथदास, पत्र—४०, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४३६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९४ = १८३७ ई०, प्राप्तिस्थान—श्रीमहंत दाताराम जी, कबीर पंथी, ग्राम—मेवाली, डाकघर—जगनेर, तहसील—खैरागढ़, जिला—आगरा ।

आदि—सत कबीर साहब की दया । धनी धर्म्मदास की दया । अथ लिष्यते ग्रन्थ विचार माला । श्री दोहा । नमो नमो श्री राम जी, सतचित आनंद रूप । जिह जाने जग स्वप्न वत् नासत भूत तम कूप । राम दया सतगुरु दया, साधु संग जब होय तब प्रानी जानै कछू रहै विपैरस भोय । पद वन्दन आनन्द सुत करि श्री देव मुरारि । विचार माल वर्नन करूं मौनी जी उर धारि किं मौन यहुपै मम, यहुनाहि मम । सव विकल्प भये खीन । परमातम पूरन सकल जानि ।

अंत—सत्रह सै छब्बीस सम्मत, माघवमास सुभ ॥ सोमन्ति जिती कहती सु ॥ तिन्ती वरनि प्रगट करी । गीता भरथर कौ मतौ, एकादश की जुक्ति । अष्टाव वशिष्टक, मुनि, कछुक वेद की उक्ति । मूरिख कौ न सुनाइये, नहीं ताकै जज्ञास । कैतो करै विषाद कछु, कै मन होत उदास । इति श्री विचारमाला आत्मावान की मथित मोती जूकृत अष्टमो विश्राम ॥ ८ ॥ समाप्तं । मिती अगहन बदी ॥ ४ ॥ संवत् १८९४ श्री श्री श्री

विषय—वेदान्त के विषय का विवेचन तथा आत्मज्ञान का महत्व

संख्या १५ सी. विचारमाल, रचयिता—अनाथ, पत्र—७०, आकार—७ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप)—३१५, रूप—प्राचीन; लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२६ = १६६९ ई०, प्राप्तिस्थान—जैदामल पंसारी, स्थान—फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—टेरत सतगुरु दयाकर मोह नींद सोवंत । जग्यो ज्ञान लोचन खिले खसो भ्रम विसरंत । गुरुबिन भ्रम लगि भरम्यो भेद लहे बिन खान । केहर क्यु झांई निरख पड़यो कूप अग्यान । प्रगट अवनि करुणार नव रतन ग्यान विग्यान । वचन लहरि तन पर सतैं अग्य होत सुग्यान । सूरदर्स आदर्स जो होत आनि उद्योत । तैसों गुरु प्रसाद तें अनुभव निर्मल होत । जिमिचन्द हिलाहि चन्द्रमा अमी द्रवै तिहि काल । गुरुमुख निरखत सिष्य को अनुभव होत विलास । अथ सिष्यो पश्रा किं मौनं । इह मैं मम इन नाहि मम सर्व विकल्प भये छीन । परमातम पूरन सकल जानि मौनता लीन । अथ गुरु अस्तुतिः । भरत तात भ्राता सुहृत इष्टदेव नृप प्रान । अनाथ सुगुरु सबते अधिक दान ग्यान विग्यान । प्रगट पोहम गुरु सुरदुत जन्मनि ललित प्रकास अनाथ रैन दिनि विमुख जन कबहुँ न होत उलास ।

अंत—पूरी निरतम मित्रवर खरो अतित भगवान वरनी माला विचार में तिहि आग्या परमान। लिखै पढ़ै अति प्रीत जुत अरुपन करै विचार। क्षिन २ ज्ञान प्रकास तें होई सुख प्रकार। गीता भरथर कों मतों एकादस की जुग्त। अष्टा वक्र वशिष्ट पुन कछु वेद की युग्त। मूरख को न सुनाइये नहि जाके जग्यान। कै तो करैं विषाद कछु कै मन होइ उदास। अस्थित मत गुरू श्रुत विषै हृदै द्दढ़ जग्यास। अभिमान रहित धर्मग्य युत ताहि करौ प्रकास। युक्त विषै वैराग जो वन्धन विषै सनेह। सब ग्रन्थन को यह मतौ मन माने सो करेह। ४४। सोरठा। सत्रह सै छब्बीस माधव मास सुभ जानिये। ताकी ही सुदि तीज ता दिन वरन प्रकट करी। इति श्री विचार माला संपूर्णम। शुभ भूयात् श्री रामजी।

विषय—पुस्तक शिष्य की शंका लेकर सामने आती है पुस्तक प्रणेता गुरु को मार्ग का दिखाने वाला ज्ञान का दाता मोक्ष के समीप ले जाने वाला आदि बतला कर उसकी स्तुति करता है। तदनन्तर साधु को किस प्रकार जितेन्द्रिय, निरभिमानी औ राग द्वेष रहित होना चाहिये इसका वर्णन है। पुनः सत्संगति की महिमा उसकी उत्कृष्टता का दिग्दर्शन बड़े अच्छे शब्दों में कराया गया है।

संख्या १५ डी. विचारमाल, रचयिता—अनाथपुरी, पत्र—३६, आकार—८½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८८, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२६ = १६६९ ई०, लिपिकाल—स० १९१८ = १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—बैजनाथ ब्रह्मभट्ट, ग्राम—अमौसी, डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ बिचार माल ॥ अनाथपुरी कृत लिष्यते ॥ दोहा ॥ नमो नमो श्री राम जू। सत चित आनंद रूप। जेहि जानत जग स्वप्नवत। नासहि भ्रम तम कूप ॥ १ ॥ राम मया सत गुरु दया। साधु संग जव होय। तव प्रानी जानै कछू। रह्यौ विषै मति भोय ॥ २ ॥

अंत—मूरषन नहीं सुनाइये। नहीं जाके जिज्ञास। कै तो करै विषाद कछु। कै मन होइ उदास ॥ आस्तिक मति गुरु श्रुति विषै। हृदय सुदृढ़ जिज्ञास ॥ अभिमान रहित धरमात्मा। तिहि प्रति करिय प्रकास ॥ इति श्रीविचारमाल आतम वान की अस्तुति ॥ अष्टमो विश्राम ॥ ९ ॥ इति श्री विचार माल, समाप्त संपूरणम् सुभ मस्तु ॥ श्री जेठ मासे शुक्ल पक्षे तिथि पंचमी ॥ वेशवन व संवत् १९१८ विक्रमादिती ॥

विषय—मंगला चरण, गुरु वंदना, गुरु की महत्ता तथा शिष्य की आशंका का वर्णन (१ अध्याय) साधुलक्षण वर्णन। सत्संग की महिमा (२ अ०) ज्ञान की सप्त भूमिकाओं का वर्णन (३ अ०)। ज्ञान साधन वर्णन (४ अ०) आतम जगत उपदेश वर्णन [५ अ०] जगत मिथ्यात्व वर्णन [६ अ०] शिष्य अनुभव वर्णन [७ अ०] गुरु परीक्षा वर्णन ग्रन्थकार तथा ग्रन्थ परिचय।

ग्रन्थ निर्माण काल—सत्रह सै छब्बीस। संवत् माघ मास सुभ। मोमति जेति काहती। सो तेतिक वरनी प्रगट करि :

संख्या १५ ई. विचारमाल, रचयिता—अनाथदास, पत्र—८, आकार—१३¾ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५५, रूप—प्राचीन, लिपि—

नागरी, रचनाकाल—सं० १७२६ = १६६९ ई०, प्राप्तिस्थान—लक्ष्मीनारायण श्रीवास्तव्य, अध्यापक, ग्राम—चंदवार, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्रीमते रामानुजायनमः ॥ दोहा ॥ नमो नमो श्री राम जू सत चित आनंद रूप। राममया सत गुर दया, साध संग जब होय। तब प्राणि समझें कछु, रह्यो विसे रस भोय। पद वंदन आनंद जुत, करी श्री देव मुरारि। विचार मल वरनन करूं, मुनि जु उरधारि। किंमुनि। यह मैं यह मम नाहि, मम सब विकल्प भयेछीन, परमात्मा पूरण सकल, जानि मुनतालीन।

अंत—माधव मास सुभ। मोमती जेठु तीसतें प्रतीप्रगट करि। इति श्री विचार मालायां आत्मवान स्थिति वर्णनोनाम अष्टमो विश्राम ॥ १८ ॥ इति श्री विचार माला। संपूर्ण समाप्त। श्री रामायनमः।

विषय—साधुलक्षण, सत्संग, ज्ञानभूमि, ज्ञान साधन, आत्मोपदेश, जगतमिथ्यात्व अनुभव तथा आत्मावान स्थिति वर्णन।

संख्या १५ एफ. विचारमाल, रचयिता—अनाथदास, पत्र—२१, आकार—९ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल सं० १७२६ = १६६९ ई०, प्राप्तिस्थान—लक्ष्मीनारायण गौड़, ग्राम—चंदवार, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि–अंत १५ ए के समान।

संख्या १५ जी. विचार माल, रचयिता—अनाथदास, पत्र—३४, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२६ = १६६६ ई० लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—बदन सिंह शर्मा, अध्यापक, ग्राम—खाण्डा, डाकघर—बरोहन, जिला—आगरा।

आदि–अंत १५ ए के समान।

संख्या १५ एच. सर्वसार उपदेश, रचयिता—अनाथदास, कागज—बाँसी, पत्र—८०, आकार—९½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२६ = १६६९ ई०, लिपिकाल—सं० १९३१ = १८७४ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री श्रवणलाल हकीम वैश्य, ग्राम—बसई, डाकघर—तांतपुर, तह—खैरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—श्री परमात्मने नमः। श्री गुरुचरणकमलभ्यो नमः ॥ अथ सर्वसार लिख्यते ग्रंथ भाषा। दोहा। श्री। गंग यमुन गोदावरी सिंधु सरस्वतीसार। आरज सब तीर्थ जहां सुर रघुवर विस्तार। श्री गुण सुखमंगल सबै, आनन्द तहाँ वसंन्त कीर्ति श्री हरिदेव की भद भरि सन्त कहन्त। भक्ति युक्ति वन्दन करौं, श्री गुरु परम उदार। जिनकी कृपा उदार ते गोपद सब संसार। गुरु सुवैद दाता सुघर मुक्ति पंच हगदंन्त। जो जुगादि जड़ता सघन, सो छिन में हरि लेत। हृदय कमण प्रफुलित करै श्री गुरु सुर अनूप। कोटि कोटि वन्दन करौं, धरौ चित्त निज रूप।

अंत—द्वादस दिन में ग्रंथ यह, सर्वसार उपदेश। भाषा कियो अनाथ जन, कृपासु अवध नरेश। सोधत लागे मासद्वै सिद्ध भये रुचि ग्रंथ। पकरि बांह निज लै चलै, अगम मुक्ति को पंथ। सोधतउ भस तरा, जुगल छाप नव और। जनु अनाथ श्रीनाथ के संग ले पायौ ठौर। सम्बत सत्रहसै अधिक षष्ट बीस निरधार अश्वनि मास रचना रची, सार असार विचार। कृष्णपक्ष सुचि मार्ग सिर, एकादश रविवार, पोथी लिखी पूरण भई, रमारमण अधार।

इति श्री सर्वसार उपदेश शिष्य आंशंका निवृति अनाथदास विरचिते चतुर्विंशतिको विश्राम ॥ २४ ॥ श्री ता दिन यह पूरी भई तन भयो हुलास। लिख्यक को यह नाम है श्रीकृष्ण कौ दास। याद्दशं पुस्तक द्दष्टा ताद्दशं लिखितं मया। यदि शुद्धिम शुद्धिवा मम दोषो न दीयते। श्री जगदीश कृपाल है, दास गरीब निवाज। तिनमों पर ऊदार है देवदास सुभ आज। हरिहर जन जब हीं अवैं तबही होत × × × मिती वैशाख शुक्ला प्रथमा भृगुवार सं० १९३१।

विषय—गुरु शिष्य संवाद प्रारंभ, मनुष्य की प्रवृत्ति निवृत्ति के परिवार, मनसा कर्म्मणा का उपदेश, क्षमा और क्रोध का संवाद, लोभ और संतोष का संवाद, दंभ और सत्य का युद्ध वर्णन, गर्व और शील; धर्म और अधर्म; न्याय और अन्याय, मोहदल; विवेक रूपी नृपदल; मोह-विवेक; शास्त्र एक्यता, वैराग्य और मन, जिज्ञासा उत्पत्ति; अपरोक्ष और परोक्ष; तत्वलक्षण; मन संकल्प वर्णन, आशंका-निवृत्ति करण आदि का उल्लेख।

संख्या १६. सुखमनी, रचयिता—अर्जुनदेव गुरु, पत्र—५८, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्) ८१२, रूप—प्राचीन, लिपि—फारसी, प्राप्तिस्थान—ठा० शिवनाथ सिंह जी रईस, स्थान—इतमादपुर, डाकघर—इतमादपुर, जिला—आगरा।

आदि—प्रभु के सुमरन जप तप पूजा, प्रभु के सुमरन न बसे दूजा। प्रभु के सुमरन तीरथ अस्नाने, प्रभु के सुमरन दरगह माने। प्रभु के सुमरन होय सो भला, प्रभु के सुमरन सो फल फला। से सुमिराजिन आप सुमिराये, नानक ताकी लागू पाये। प्रभु का सुमरन सबतें ऊँचा। प्रभु के सुमिरन उधरी भूचा। प्रभु के सुमिरन तृष्णा बूझी, प्रभु के सुमरन सबको भय सूझी। प्रभु के सुमरन नहीं जम नासा, प्रभु के सुमरन पूरन आसा। प्रभु के सुमरन मन का मल जाय, अमृत नाम रिध माहिं समाय। प्रभु जी बसे साध की रसना, नानक जिनका दासन दसना।

अंत—जिस मन से सुनि लाये प्रीति, जिस जम आवै हरि पर चीत। जन्म मरन ताका दुःख निवारे, दुलभ देह ततकाल उधारे। निर्मल सोभा अमृतताकी बानी, एक नाम मन माहिं समानी। दुख रोग विनसै यह भरम, साधनाम निरमल ताकी करम। सबते ऊँच ताकी सोभा बनी, नानक इह को नाम सुखमनी। वखत सूरजभान खत्री वल्द मन सुख व मुकाम पिनाहट पुनि सुखमनी जो तमाम शुद्ध फूल जोक वख्शी तारीख ३१ मार्च सन् १८७४ ई० मुताबि चैत्र सुदी पंचमी संवत् १९३० तमाम शुद हस्ब फरमायश ठाकुर वेनी प्रसाद साहब तहसीलदार।

विषय—ईश्वर का स्मरण, भक्ति महात्म्य, सत्संग प्रभाव तथा ब्रह्म ज्ञान का उपदेश वर्णन ।

संख्या १७. कोक सामुद्रिक, रचयिता—अरुभद्र, पत्र—४८, आकार—७ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६६, रूप—प्राचीन, लिपि—कैथी, रचनाकाल—सं० १६७८ = १६२१ ई०, लिपिकाल—सं० १८५० = १७९३ ई०, प्राप्ति-स्थान—पं० लक्ष्मीनारायण वैद्य, स्थान—बाह, डाकघर—बाह जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशायनमः । श्री सरस्वती नमः । अथ कोक सामुद्रिक लिख्यते । दोहा । च्यारि च्यारि सुव जोरिके कीनो जगत वनाया । ते सुभाई ते चतुर नर दीनो चारि गिनाय । चारि चक्र विधना रचै जैसे समुद्र गंभीर । छत्र धरै अविचल सदा राज साहि जिहांगीर । धनि जीवन जननी सुफल मिटै जगत की पीर । सुथिर सदा रहौ छत्रपति नर दीन जिहांगीर । चारि वेद चित्त में धरै करै वेद दिनु रैनि । सपनें दुखन देखि है सदा जगत सुख चैन । एक दांत अरु सूरवां मेटै जगत कलेस । अष्ट सिधि नव निधि लै गाढ़ करत आदेस । जोग भोग पूरन सकल पूरे करम समाथ । चारि चक्र सेवै सदा रह जन जोरे हाथ । को बाजा साधै जुगति कोउ भोग रस भोग । अपने अपने प्रेम वश करत कुलाहल लोग । सम्वत सोरह सै समै अठहत्तरि अधिकाय । वदी असाढ़ तिथि पचमी कही कथा समुझाय । चारि पुरुष अरु कामिनी कहे वेद मुख चार । कहो सुलच्छन चारिके एक २ निरधार । सोरठा । रचै जु विधना नारि कर्म अंक ता दिन दिये । सोई भुगतन हार । जो कछु लिखि ललाट मधि अंबुल समुद्र उलीचिये नख सोंकटै सुमेर क्योंहू हाथ न आवहिं काल कर्म को फेर ।

अंत—अथ नाम लछिनम् । कै सालिता के वन फला नरदेव काई भाय । धन के आगे पिय भरे वेद वतावे ठाय । जै तीरथ के नाम त्रिया वंस वरधिनी जानि । सुख विलास गृह में करै बृधि होइ सो जानि । महा पापनी दुष्टनी । सकल अंग आलस भरी हीये भरि रहै रोप । रहै नैन भरि नीद सो । यह वरूनी तन दोस । नख सिख सौ लछिन कहे । अंग अंग नर नारि तिसका गुन औगुन सकल लीज्यो चित्त विचार । जेते औगुन पुरिप के तन सब गुनि कर भेष । जैसो भागिन कामिनी औगुन कर्म विसेप । इति श्री कोक सामुद्रिक अरु भद्रकृत संपूरन समप्तः । शुभं भूयात् । लिखितम् मिश्र दौलति राम मिति चैत्र कृष्ण पक्ष सप्तमी सं० १८५० (यहां पर हस्त रेखा की जानकारी के निमित्त हस्त चित्र बना है)

विषय—पुरुष लक्षण, जाति वर्णन, चरण, नख, इन्द्री, टांग, पिंडी, रोमावली, जानु पिंजर, पीठ, कंधा, भुजा, नेत्र, गुदा, उपस्थ आदि अङ्गों के लक्षणों का वर्णन ।

संख्या १८. यूनानी सार, रचयिता—असगर हुसेन (फरुखाबाद), पत्र—८७, आकार ८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३२७, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३२ = १८७३ ई०, लिपिकाल—सं० १९४४ = १८८७ ई०, प्राप्तिस्थान—वैद्य रामभूषण, ग्राम—जमुनिया, डाकघर—हरदोई, जिला—हरदोई ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः। अथ यूनानी सार लिख्यते। दोहा—अलह नाम छवि देत ज्यों ग्रन्थन के सिर आइ। ज्यों राजन के मुकुट ते अति सोभा सरसाइ॥ परमेश्वर को प्रणाम करके असगर हुसेन रहने वाला फरुखाबाद का वास्ते बेहतरी और फायदे हिन्दुस्तानी भाइयों के यह सूक्ष्म ग्रन्थ रचता है इस कारण कि वैद्यक की विद्या तो पृथ्वी पर से अब अलोप हो गई क्योंकि यह विद्या तो परीक्षा की है और सैकड़ों वर्ष से वैद्यों में कोई ऐसा बुद्धिमान मनस्वीं तेजस्वी पैदा नहीं हुआ कि वह तजुरबा करके इस विद्या को बढ़ाता बल्कि जब से मुसलमानों की अमलदारी हिन्दुस्तान में हुई तब से तो इसका नाम ही मिट गया पुराने और मातवर ग्रन्थों का तो नाम भी बाकी नहीं रहा दो चार ग्रन्थ जैसे श्रुश्रुत और चरक वहार करन, बभोज, भेड़, वागभट्ट, रस रत्नाकर, शारंगधर, वंगसेन, चिन्तामणि माधौ निदान चक्क दत्त, रह गये थे उनका अब कोई पढ़ने पढ़ाने वाला नहीं है॥

अंत—इसी तरह हुम्माइ योम की बहुत सारी किस्में हैं। जब तक हर किस्मों का वयान न किया जाय और निदान ग्रन्थ के और इलाज सबका न कहा जावे तब तक फायदा नहीं है इस कारण ज्वरों के वखान में दूसरी पुस्तक विस्तार पूर्वक लिखी जायगी इसी तरह जुदरी अर्थात चेचक का इलाज अलग दूसरी पुस्तक में लिखेंगे। अब इस पुस्तक को हम समाप्त करते हैं। जान लेना चाहिये कि जो कुछ रोगों का हमने वरनन ऊपर कहा है वह बहुत थोड़ा है॥ इससे दसगुना यूनानी कितावों में मौजूद है। इसी तरह सैकड़ों रोग हजारों दवाइयां इस पुस्तक में लिखने से रह गई हैं। अगर हमारी जिंदगी रही तो बहुत सारी तिव यूनानी का उल्था करेंगे॥ और हमने यह ग्रन्थ अपनी नेक नियती से वास्ते फायदा पहुंचाने अपने भाई वैदों के लिखा है ताकि इनकी रोटियां भी चलैं और खुदा के वन्दों की जान भी वचे॥ इति पोथी यूनानी सार चैत्र शुक्ला दिन सुक्रवार संवत् १९३२ में खत्म करते हैं। लिखा गुलाब चंद पसारीं माधो नगर संवत् १९४४ वि० जै रामज की कृष्ण॥

विषय—यूनानी वैद्यक।

संख्या १९. रामायण, रचयिता—बादेराय (तिलोई राज्य), पत्र—५९२, आकार—९½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ —१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—११२४८, रूप—प्राचीन, लिपि—फारसी, रचनाकाल—सं० १९१४ = १८५७ ई०, लिपिकाल—हिजरी सन् १२६६ = सं० १९१६ = १८५९ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा शिवकुमार, प्लीडर, स्थान लखीमपुर, डाकघर—लखीमपुर, जिला—खीरी।

आदि—बाल कांड—श्री गणेशाय नमः दोहा। विनती करहुँ कर जोरि के। गन पति पद धरि शीस। जाकी कृपा कटाक्ष ते। वरनौ गुन जगदीस॥ सोरठा॥ दीजै मोहिं वरदान। मागौं यह करिवर वदन। प्रेम प्रीति जिय आन। कहूँ चरित भगवान की॥ ॥ चौपाई॥ गुरु पद वन्दौ अति अनुरागा। जासु चरन जस विदित परागा॥ गुर चरनन को ध्यान लगाऊँ। गुरु की महिमा कछु में गाऊँ॥

अंत—कृपा करौ रघुवीर। तो गति में जानौं नहीं। हरिये मन की पीर। दास आपनौं जानि के॥ पोथी रामायन तफनीस लाला बादीराय साहव साकिन तिलोइ हाल

वारिद दर मुकाम जफर पुर जमींदारी लाला मक्खन लाल कानूनगो अज इत्तिफाकात वक्त रफ्त न खुद दरमुकाम मजकूरह सुद पोथी रामायन वा मुआइना खुद आमदा व खयाल भासफ सुदन नकल तहरीर करद व मुआविनत साहिबाँन आँजा दर पंज रोज जुमला पोथी समाप्त करदीद दरसन् १२६६ फलसी सुरु माह पूस दर मुकाम जफर पुर मुत अल्लि कै परगनै देवा जमीदारी ला० मक्खन लाल साहव कानून को कथारामायन समाप्त ॥

विषय—रामचन्द्र का जीवनचरित्र

टिप्पणी—ग्रन्थ निर्माण काल संवत् की षरगास। नौ दस सत चौदह रह्यौ। राम चरन धरि आस अर्थ कियो तव यह कथा ॥ कवि परिचय—नगर तिलोई मेरो धामा। नाम पिता को रामगुलामा ॥ राज तिलोई बहुत बखानी। बहुत काल तक कीन्ह दीवानी ॥ अंतकाल हरि पद चित लायो। राम कृपा से धाम सिधायो ॥

प्रस्तुत ग्रन्थ तिलोई राज्य के दीवान वादेराय जी का रचा हुआ है। इन्होंने अपने पिता का नाम 'रामगुलाम' बताया है। इन्होंने अपनी जाति पाँति का कुछ पता नहीं लिखा है किन्तु ग्रन्थ के प्रति लिपि कर्त्ता ने इन्हें "लाला वादी राय" लिखा है इस से ज्ञात होता है कि यह जाति के कायस्थ थे। इसके अतिरिक्त उसका यह भी कथन है कि वह वास्तव में तिलोई निवासी थे किन्तु इत्ताफाक से मुजफ्फर पुर जहाँ लाला मक्खन लाल की जिमींदारी थी आगये थे। वहीं उनकी देख रेख में यह पोथी केवल पाँच दिन में लिखी गई थी। पोथी लिखने का स्थान मुजफ्फरपुर वाराबंकी प्रान्त के देवा परगने में है ॥

संख्या २०. काव्य कल्पद्रुम, रचयिता—वैजनाथ कूर्म (मानपुर, डोहवा, बाराबंकी), पत्र—१९६, आकार—१० × ७½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६१७, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३५ = १८७८ ई०, लिपिकाल—सं० १९४७ = १८९० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० भगवत प्रसाद, ग्राम—सराय नूरमहल, डाकघर—टुंडला, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ काव्य कल्पद्रुम सटीक लिख्यते ॥ कला वर्ण विश्व स्थिति पलि याये गुगो निर्गुणात्मांस लै वेद गाये तमे के विभुंसार स्वच्छंद नामी स श्री राम पदावुंजतिनमामी ॥१॥ अथ गुरु विचार विसर्गादि संजोगि दीर्घानुस्वारो चतुर्भांति जुतसंदर्वैवधारै लवौ गुर्कै हौ पाद अंतै कहे जनमः सत्य सीता परम्या रहै ज ॥ २ ॥ श्री गनेशायनमः स श्री सहित श्री जानकी जी श्री रघुनाथ के पद कमल को नमस्कार है कैसे हैं श्री रघुनाथ जी जिनकी कला वर्ण कहे चेष्टा है विराट रूप की अर्थात् विश्व की उत्पत्ति पालन संहार गुणों कहे यावत सगुन रुप है निरगुनात्मक है निर्गुन रूप सो जो जिनको अंश हैं ऐसा वेद गावत है ते कहे तौन जो श्री रघुनाथ जो है एकै कहे एक आपु ही विर्मुक हैं समर्थ है सब को सारांश हैं स्वच्छंद कहे स्ववश हैं नामी कहे जिनको राम ऐसो नाम ब्रह्मांड में प्रसिद्धि है अथवा श्री आदि छन्दन को नमस्कार है कैसी हैं छन्दें कला जो मात्रा वर्ण जो अक्षर कहे दोऊ जाके स्थिति कहे।

अंत—परतापगंज परगना बंकी में पूर्व लखनऊ योजन दोइ ग्राम मानपुर वैजनाथ वसि जमीदार के राती सोई ॥ २६० ॥ कातिक असित भौम पचमी निशादि याम रोहिनी

नक्षत्र वरिया नगर कर नाथ पैंतिस अधिक उन्नविंस सत संवतार्क सुतांश कराति पाइ वृष लग्न निशि नाथ लाभ शनि तीजे केतु धर्म्म बुरुत्तम पाइ पंच में सुबुध मृग भौम ताहि रवि साथ पांच पल गत दंड पैंतिस को इष्ट काल काव्य कल्पद्रुम को समाप्त कीन बैजनाथ ॥ २६१ ॥ इति श्री बैजनाथ विरंचिते काव्य कल्पद्रुम समाप्तम् ॥ इति शुभम् ॥ मिती चैत्र शुक्ल पक्षे तृतीया संवत् १६४७ विक्रमे ॥

विषय—पिंगल—गणगणादि तथा नष्ट उद्दिष्टादि का वर्णन कविमाल (प्राचीन कवियों की नामावाली) तथा कवि परिचय और ग्रंथ निर्माण कालादि वर्णन ॥

संख्या २१ ए. भागवत दशम स्कंध, रचयिता—बकस कवि, कागज—देशी, पत्र—२६६, आकार—१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४८, परिमाण (अनुष्टुप्)—६७२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८६ = १८२६ ई० । प्राप्ति-स्थान—पं० विष्णुभरोसे शुक्ल, ग्राम—जनगाँव, डाकघर—अतरौली, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ दशम स्कन्ध भागवत भाषा लिख्यते ॥ सो० प्रणवौं गणपति ईश ब्रह्मादिक जे सकल सुर । वरदा व्यास फणीस करौ अनुग्रह परस पर ॥ वरनौ दशम स्कन्ध क्रम नवे अध्यायवरि । अच्युत चरित प्रबंध निर्मल जगत् वितानकरि ॥ दोहा—प्रथम परीक्षित प्रश्न अरु देव क्या उपजाम ॥ कंस भयंकर नभ गिरा बसुदेवा रक्षै वाम ॥ चौपाई—श्री पति चरिता मृत बहुपीन्हें । राज परीक्षित तृप्तिन कीन्हें ॥ सोरठा अस विचारि बहु भूप, राजकोष तजि वन गये । लहि तिन मोछ अनूप, भक्ति प्रभाव न जाहि कहि ॥ दोहा—भक्त मनोहर कल्प तरु कारण रहित कृपाल । बकस विचारि अस ईस भजु छाँडि कपट जंजाल ॥ अक्षर आंकरु भृष्ट पद रेफ मात्राहीन । छम्यो मोर अपराध सो कृष्ण दया करि दीन ॥ इति श्री भागवते महापुराणे दशम स्कन्धे कृष्ण लीला चरित नाम नवे सीति तमोध्याय ९० ॥ इति श्री भागवते महापुराणे दशम स्कन्धे समाप्त शुभ मस्तु कुंवार वदी १५ । रविवासर संवत् १६८० वि० ॥

विषय—श्री कृष्ण जी का चरित्र ।

संख्या २१ बी. भागवत दशम स्कंध, रचयिता—बकस, कागज—देशी, पत्र—३१६, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) –४४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६९८२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८६ = १८२९ ई०, प्राप्ति-स्थान—हरिवल्लभ मिश्र, ग्राम—झाझन, डाकघर—पिहानी, हरदोई ।

आदि—श्रीगणेशायनमः अथ हरि चरित्र भागवत लिख्यते । अथ दशम स्कन्ध ॥ सोरठा ॥ प्रणवों गणपति ईश ब्रह्मादिक जे सकल सुर । वरदा व्यास फणीश करौ अनुग्रह परसपर ॥

अंत—दोहा—भक्ति मनोरथ कल्प तरु कारण रहित कृपाल । बकस विचारि अस ईशु भजु छाँडि कपट जंजाल ॥ अक्षर आंकर भृष्ट पद रेफ मात्रा हीन । छम्यो मोर अपराध सो कृष्ण दयाकरि दीन ॥ इति श्री भागवते महापुराणे दशम स्कन्धे कृष्ण लीला चरित नाम नवे सीत मोध्याय ९० ॥ इति श्री भागवते महापुराणे दशम स्कन्धे समाप्त शुभ मस्तु कुवांर वदी १५ रविवासर संवत् १८८६ वि० ।

विषय—श्री कृष्णलीला।

संख्या २२ ए. रससागर (दंपति विलास), रचयिता—बलवीर (कन्नौज), कागज—देशी, पत्र—८०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३८, परिमाण (अनुष्टुप्—१५७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५९ = १७०२ ई०, लिपि काल—सं० १८८० = १८२३ ई०, प्राप्तिस्थान—शिवदयाल ब्रह्मभट्ट, ग्राम—मुहम्मदपुर, डाकघर—बेनीगंज, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ रस सागर दंपति विलास लिख्यते ॥ छंद मात्रा सवैया ।। सिद्धि सदन गुन वृद्धि करन पुनि विघन हरन सुख देत अनंत ॥ गिरिजा नंदन जगके वंदन शत्रु निकंदन गन वर कंत ॥ सब सुख दायक सदा सहायक हैं सब लायक जपत सुरेस। सत्य के सदना एकै रदना गज वर वदना नमो गनेस ॥ दो०—कर जोरे विनती करौं काली को सिर नाइ। रस सागर के तरनको तरनि तिहारे पाइ ॥ प्रथमहिं वरनौं साहि गुन जो मति करै सहाइ। चित्तु चलै वल वीर की कृपा रावरी पाइ ॥ फूलि फलित अभिलाप है। जे सेवत हैं साहि ॥ जिंद पीर नौ रंग वली ताको सदा सहाइ ॥ कवित्त। पूरन मनोरथ औ स्वारथ भरे हैं, वीर पूजत जो कोऊ सूवा एक चित्त साहि को ॥ ताहि रिद्धि सिद्धि अति वृद्धि नव निद्धि की, सो इन्द्र सम पदवी मिलति पुनि वाहि को ॥ पावै सुभ दाई औ वड़ाई बड़ी ठौरनि में, खानन में खानी औ वहादुरी सराहि को ॥ हिन्दू पति परम सु इन्द्र पथ पति किधौं। जाहिर जगत जोति दरसन जाहि कौ ॥

अंत—मीरा वाई छन्द मदिरा—जे सिव शंकर औ सनकादिक आदिक वेद पुरानन गायो। सेस गनेस गिरा गिरिजा गिरि में जपि कै जग में जसु पायो ॥ जे गुनि गंधर्व किन्नर जक्षनि साध समाधिनि सौ चितु लायो। सो वलवीर कहा कुवरी जिन चंदन दै नंद नन्द रिझायौ ॥ दो०—दया धर्म अरु दान को साधन धरौ सरीर। सांत रस सेवे सदा सांचे हैं रघुवीर ॥ ७४० ॥ स्वारथ सब यामें कह्यौ मैं परमारथ बूझि। दोष न दीजौ विनु गुनै घट घट अपनी सूझि ॥ छंद वंद रस नाइका नाइक श्री गोपाल। पूजो लखै न दृष्टि भरि कवि वलवीर रसाल ॥ दंपति कह्यो विलास मैं राधे श्री व्रजराज। देह धरी जिन जगत में वीर भक्त के काज ॥ इति श्री रस सागर दंपति बिलास संपूर्ण समाप्तः संवत् १८८० जेष्ठ शुक्ला नवमी शिवपुर मध्ये लिखा रामा भगत ॥

विषय—नायक नायिका लक्षण, भेद तथा रसों का वर्णन।

टिप्पणी—कवि परिचय सो वलबीर कन्नौज को वासी। सदा चित्त जाके अविनासी। ब्राह्मन बरन दुवेद वखानौ। सो कवि हिम्मत खां को जानौ ॥ निर्म्माण काल षंड[९] वान[५] मुनि[७] रवि[१] रथ चकै। संवत् नाम लोक तिथि वकै ॥ माधक सुकुल पक्ष लिपु वामैं। आदित वार प्रगट किय नामैं ॥

संख्या २२ बी. रससागर, रचयिता—बलवीर, कागज—देशी, पत्र—६०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५९ = १७०२ ई०, लिपिकाल—सं०

१८५६ = १७९९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामभजन मिश्र, ग्राम—चौगाँव, डाकघर—मल्लावाँ, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ रस सागर दंपति विलास लिख्यते ॥ छन्द सवैया ॥ सिद्धि सदन गुन वृद्धि करन पुनि विघन हरन सुख देत अनंत। गिरिजा नन्दन जग के वन्दन सत्रु निकंदन गनवर कंत ॥ सब सुख दायक सदा सहायक हैं सब लायक जपत सुरेस। सत्य के सदना ये कै रदना जग वर वदना नमो गनेस ॥ १ ॥

अंत—दोहा—दया धर्म अरु दान को साधन धरौ शरीर। सांत रस सबै सदा सांचे हैं रघुवीर ॥ स्वारथ सब यामें कह्यो मैं परमारथ बूझि ॥ दोष न दीजौ विनु गुनै घट घट अपनी सूझि ॥ छंद बंद रस नाइका नाइक श्री गोपाल। दूजो लखौ न दृष्टि भरि कवि वर वीर रसाल ॥ दंपति कह्यो विलास में राधे श्री व्रज राज। देह धरी जिन जगत में वीर भक्त के काज ॥ इति श्री दंपति विलास रस सागर संपूर्ण समाप्तः ॥ संवत १८५६ क्वार मास शुक्ल पक्ष दशमी ॥

विषय—नायक नायिका भेद, रस, हाव भाव आदि

संख्या २२ सी. उपमालंकार-नखशिख, रचयिता—बलवीर, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३००, खंडित, रूप प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५६ = १७९९ ई० प्राप्तिस्थान—पं० वंसगोपाल, ग्राम—दीनापुर, डाकघर—उमरगढ़, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ वलवीर कृत उपमालंकार नख सिख लिख्यते ॥ दोहा ॥ कछुक भेद कवि कहत हैं उपमा समता कीन। मेहदी जुत कर वीर यो जावक पगनि प्रवीन ॥ १ ॥ अथ अरुणोपमालंकार ॥ दोहा ॥ पल्लव से कोमल कमल अंगुरी कोस समान। जावक पावक राज गुन भूषन भेद वखान ॥ २ ॥ यथा ॥ दिन मनि मित्र पितु पावन विरंचि जू के। सुन्दर सुमन सोभ सोभित जमल से ॥ ललित अरुन पर जावक रजो को गुन। पावक अरुन सुख छम सोसमल से ॥ अंगुली अरुन कोस भूषन अरुन नष। वरनत कवि रवि द्वादस अमल से ॥ पल्लव नवीनता रूप रमा परम सारु, प्यारी के चरन कोमल कमल से ॥

अंत—दोहा—द्रग पुतरिन की किरनि सम कहै कसौटी धीर। मधु कुर माला रैनि सी मछु मसी वलवीर ॥ यथा ॥ किधौं है मयूख द्रग तारन की राही धौं ॥ कनक कसौटी पै कसौटी लीक कसी है ॥ किधौं मार मधुकर कंज कमनीय पर। हाटक घटित सी किधी मधु मासी है ॥ किधौ वलवीर व्याली वलित पयूष काज। उपमा न आवै और याही मति उसी है ॥ प्यारी के वदन पर अलक सुमिल किधौं, कला निधि ऊपर ते तमी धारधंसी है ॥ अपूर्ण ॥

विषय—उपमालंकार को लेकर नखशिख का वर्णन।

संख्या २३. शिखनख वर्णन, रचयिता—बलभद्र (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—३४, आकार—७ × ५ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६, रूप—प्राचीन, लिपि—

नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री अद्वैतचरण गोस्वामी, स्थान—घेरा श्री राधारमण जी, वृंदावन, डाकघर—वृंदावन, जिला—मथुरा।

आदि—श्री राधा रमणे जयति। अथ बलिभद्रकृत शिख नख वर्णन लिख्यते। कवित्त। केश मरकत के सूतकिधौं पन्नग के पूत किधौं राजत अभूत (तमराज) कैसे तारहैं। सखमूल गुन ग्राम सोभित सरसय्याम काम मृग कानन की कुहुके कुमार हैं। कोय की किरन किधौं नीलक जरी तंत उपमा अनंत चारु चमर सिंगार हैं। कारे सटकारे भीनै सौंधे सौं सुगंध बास ऐसे बलिभद्र नव वाला तेरे बाल हैं। १।

अंत—नाजुकता वरणन। पालिक तै पाव जो धरत धन धरनी में छाले परे पग मांहि पद राग गमनते। लीलै जो तमोलाव ताप आवै वलिभद्र होति है अरुचिपान पीक अचवनते ॥ हार हूके भार और तन हूंकूं चीर भार यातें नहीं होत वाम बाहिर भवनतें। लागै जो समीर तौ तौ पूरे परै सौ तिनके फूल ज्यौं उड़त आली पंखा के पवनते। ६५। छप्पै। सज्जनता सीलता सुजलता सुंदरताई। उज्जलता सुचि अंग धीरता चित अचलाई। अलपमान मन विमल कमल सुचि पिय सुपदाई। मीठे सुवयन प्रफुल्लित बदनपट परिमल भूषणि धरनि। सौभाग्य भाग्य शोभित सरस सव विधि कै शिखनख वरण।

विषय—राधाजी के शृंगार का वर्णन।

संख्या २४ ए. मयनगो, रचयिता—बालदास महात्मा (जयनगरा, रायबरेली), पत्र—१७, आकार—११×९ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६८, रूप—साधारण, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८८५ = १८२८ ई०, लिपिकाल—सं० १९८० = १९२३ ई०, प्राप्तिस्थान—त्रिभुवन प्रसाद त्रिपाठी, ग्राम—पूरे प्राण पांडेय, डाकघर—तिलोई, जिला—रायबरेली।

आदि—दो० प्रथमहि वरनौं गुर चरन, हरन दोष दुख दुर्ग। यथा अमी को असन करि डसन करत हैं। उर्ग। चौ०—प्रथमहिं वरनौ गुरु के चरना। सुख समुद्र दुख दारुन हरना। आदि अवाज आदि पद गाई। निः अक्षरा तीत प्रभुताई। तेहि के परे निः अक्षर वरना। अक्षर आदि ताहि की सरना। तेहि आगे छर शब्द बखानी। आगे अलख अखंडित जानी। परे अनादि वादि सब कोई। तन मन धन सरनागत होई। तेहि आगे आदेख बखानी। तेहि के परे अचिंतहि जानी। पुनि वरनौं चित को बिस्तारा। जेहि चित ईश्वर कीन हजारा। तेहिं ते प्रकृत पुरुष भे भाई। ईश्वर प्रति चौदह पुरगाई।

अंत—मूठी डीठ पिसाची होई। पढ़तै पाठ रहै ना कोई। पूरुष नारि विरोध मिटावै। सेवक सिद्धि सदा दरसावै। पेट पांच के रोग नसावै। तीन काल नित पाठ करावै। शीस रोग अरू फूल नसावै। तीन काल नित अस्तुत गावै। कछुई रक्त पेट को गोला। पाठ किये सपनेहु नहि होला। देह भरे के रोग नसावै। तीन काल नित अस्तुत गावै। दौलत भूमि मिलै अधिकारी। तीन काल कहै अस्तुति झारी। इष्ट सकल औ कीमिया आवै। तीन काल नित पाठ सुनावै। जो २ सकल भावना भाई। पाठ करै मांगै सिर नाई। नारि पुरुष पुरुष को नारी। पाठ किहे हरि देहि विचारी। अनिमा, महिमा गरिमा सिद्धी। लक्ष्मी प्रापत औ नव निद्धी।

विषय—गुरु वंदना के पश्चात् निराकार ब्रह्म का वर्णन और प्रसंगानुसार निः अक्षर क्षर आदि के स्थान और पुरुष प्रकृति आदि का वर्णन। तत्पश्चात् स्थूल शरीर और देवताओं तथा उनकी शक्तियों की वंदना फिर गुरु प्रणाली में प्रथम श्री रामानुज स्वामी की वंदना एवं राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुहन और संपूर्ण सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग के महात्माओं की वंदना तथा संपूर्ण ब्रह्मांड की वंदना अंत में पाठ करने का माहात्म्य।

संख्या २४ बी. अहोर्वा अष्टक, रचयिता—बालदास बाबा (जयनगरा, रायबरेली), पत्र—७, आकार—५१/२ × ४१/२ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४१, रूप—नवीन, रचनाकाल—सं० १८८६ = १८२९ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—त्रिभुवन प्रसाद त्रिपाठी, ग्राम—पूरे प्राण पांडेय, डाकघर—तिलोई, जिला—रायबरेली।

आदि—जै २ जग तारणि संत उवारणि राक्षस मारणि तारणि है। जै २ मधु खंडनि दुष्टिनि। दंडनि मदर नन्दनि-तारणि है। जै २ जग पावनि शोक नसावनि, वेदन गावनि वेन सखा। जै २ मरु मारणि शंभु विहारणि-खप्पर धारनि रुपरेखा। जै २ अविनासिन मन्दिर वासिन वेद विलासिन खड़ग धरी। विन्ध्याचल धोखा तजि यह बेखा ग्राम अहोरवा वास करी। जै २ मधु मर्दनि दृष्टनि गर्दनि-नूरि विपर्दनि धूत भरी। जै २ अति भाषणि त्रैगुण-राषणि-परलै शाषनि पूरि करी। जै २ विश्वकरणी, संशय हरणी-वेदन वरणी तृषित हरी। जै २ कैलाशिनि विन्ध्य निवासिनि सब सुख राशिनि धीर धरी। विन्ध्याचल धोखा तजि यहि बेखा ग्राम अहोरवा पीर हरी।

यन्होना पश्चिमें भागे अर्द्धं क्रोशं विचारयत्। अहोरवा शक्ति स्थानं बालदास नमाम्यहम्।

विषय—अहोरवा देवी की प्रार्थना जो शुंभ निशुंभ मधु कैटभ आदि दैत्यों का नाश करने वाली काली, पार्वती और विन्ध्यवासिनी देवी का अवतार बतलाई गई है।

संख्या २५. जानकी विजय, रचयिता—बलदेवदास (खटवार, जिला, बाँदा), पत्र—२४, आकार—८ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९१ = १८३४ ई०, लिपिकाल—सं० १९३५ = १८७८ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा रामदास करौंधा, ग्राम—करौंधा, डाकघर—शाहाबाद, जिला—हरदोई।

आदि—श्रीगणेशाय नमः॥ अथ श्री जानकी विजय लिख्यते दो०—श्रीवास्तव कायस्थ कुल दीन दयाल प्रवीन। तेहि सुत सत जन सहज रत नाम संकठा दीन॥ जिला फतेपुर परगना है कल्यानपुर नाम। तहं दौलतपुर ग्राम यक तहां सो तिनकर धाम॥ श्रीगुरु छीतू दास पुनि भक्तराज गुन गेह। दीन सुमंजुल मंत्र तेहि उर उपज्यो सिय नेह॥ तेहि हित तेहि उपदेश सुनि तेहि सहाया पाय। तऱ्यो चहत भव सिन्धु जन विनु श्रम सिय गुन गाय॥ राजापुर श्री जमुन तट तासु निकट खटवार। तहं लघु मति वल्देव जन कीन्ह ग्रन्थ अवतार॥ जानै कौन कवित्त गति सिय गुन गावन साधु॥ साधन सुनहहिं साधु जन छमि अपराज अगाधु॥ भक्तन नित नित सुनत सिय प्रेम मुदित चित लाय।

जिमि बालक तोतर वचन जननि सुनै सुख पाय ॥ ग्रन्थ जानकी विजय वर पढ़हिं सुनहिं जन जौन ॥ विजय विवेक विभूति गति अवशि लहैंगे तौन ॥

अंत—कवित्त—पूरन पवित्र औ विचित्र हैं चरित्र यामें ॥ माया का प्रभाव आदि मध्य अवसान हैं ॥ जासु के पढ़े ते औ सुने गुने ते भारी। मोह मिलत अर्थ धर्म काम निर्वान हैं ॥ मुंशी संकटा प्रसाद चह्यो है सप्रेम जब, दास वल्देव तब कीन्हों गुन गान है ॥ जानुकी विजय है नाम परमपुनीत ग्रन्थ, सीता के उपासक को गीता के समान है ॥ इति श्री अद्भुत रामायण मते श्री जानकी विजय ग्रन्थ वल्देव कृत संपूर्ण समाप्तः संवत् १९३०

विषय—श्री जानकी जी का विजय वर्णन।

निर्माणकाल संवत शशि निधि सिद्धि शशि आश्वनि सित शनिवार। पूरन कवि वल्देव करि सीय सुयस विस्तार ॥

संख्या २६. भागवत एकादश स्कंध, रचयिता—बालकृष्ण, पत्र—१६८, आकार—१०×६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६९६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८०४ = १७४७ ई०, लिपिकाल—सं १८८० = १८२३ ई०। प्राप्तिस्थान—बनवारी दास पुजारी, बभन थोक मंदिर, ग्राम—समाई, डाकघर—इतमादपुर, जिला—आगरा।

आदि—ॐ श्री राधाय कृष्णाय नमः ॐ श्री परम गुरभ्यो नमः। ॐ नमो भगवते वासुदेवायनमः। सोरठा। वंदौ श्री रघुबीर कृपा सिंधु संतत सुखद। प्रणत पाल रणधीर दुःख हरण दासि प्रदमन।—दोहा—हरण मोह तम द्वंद सब, श्री गुरुपद करि ध्यान। कृष्ण कथा वरणे विमल, अवहर कर कल्यान। सोरठा। मैं मतिमंद मलीन क्रूर कपट पंकज परसि करि। सरस कृपा जगजानी देव गिरा समझे नहीं। भाषा ही सुव मानि। रमा रमन विधि सों कहि। तिन्ह नारद को दीन्ह। व्यास मुनि तिनपै सकल शुक तिनपै पढ़ि लीन्ह। कृष्ण कथा कलिमल हरनि। कूरवि विसद सुख भूरि। कृष्णकृपा जेनर सुनहिं तिन कहभव रुजदूरि। ऐसे कृष्णकृपाल प्रभु, सब घट पूरण काम सोई मम श्री गुरु में प्रगट बालकृष्ण अस नाम। श्री गुरु बालकृष्ण मम स्वामी किंकर कृपा तासु अनुगामी।

अंत—वरष अठारह सौ पुनि चारी। सरद शुक्ल सव कहँ सुषकारी। तथि पुनि लग्न वार भल योगा। ता दिन कथा कीन उपजोगा। जो कोउ सुनैं कहै मन लाइ। कृष्णचंद्र तेहि सदा सहाई। सुनै सुनावै पुनि कहै कृष्ण कथा सुषकंद। उपजै भक्ति अनन्य तेहि मिटै जगत दुष द्वंद। ध्यान योग तपदान, मष पूजा अरु व्रत नेम। सकल सिद्धि फल होई तेहि कृष्ण कथा जेहि प्रेम। इति श्री भागवत महापुराणे एकादश स्कंधे श्रीशुक परीक्षित संवादे भाषायां श्री भगवान स्वधाम गवनो नाम एक त्रिंसोध्यायः॥३१॥ शुभमस्तु श्री रस्तु संवत १८८० कातिक मास शुक्ल पक्षे तिथी सत्तमी सनिवारे मथुरा मध्ये यमुना तटे लिखितं लालदास।

विषय—भागवत एकादश स्कंध का भाषानुवाद।

टिप्पणी—ग्रंथ के रचयिता का नाम भी संदिग्ध है। एक स्थान पर वह स्पष्ट 'बालकृष्ण' अपना नाम बतलाता है और दूसरे स्थान पर यही नाम अपने गुरुका लिखता

है। और वही अपने नाम का संकेत 'किंकरकृपा' करता है। इससे यह ठीक समझ में नहीं आता कि उसका नाम वास्तव में क्या था। ग्रंथ की रचना साधारण श्रेणी की है।

संख्या २७. वारहमासा, रचयिता—बालमुकुंद, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२६ वि०, प्राप्तिस्थाथ—पं० शिवराम वैद्य, ग्राम—विजौलिया, डाकघर—नौखेड़ा, जिला—एटा।

प्रारम्भः—श्री गणेशाय नमः। अथ बाल मुकुंद कृत वारहमासा लिख्यते॥ शुरू आषाढ़ ऐ प्यारे। छवै वंगले जगत सारे। भरे आकाश घन कारे॥ अजहूं आया न निर्मोही। मिलावै मेरे दिलवर से है ऐसा जक्त में कोई॥ १॥ हुआ सावन शुरू जव से जले दूना जिगर तव से न पाया वो किसी ढव से। वयस योही सभी खोई॥ मिलावे मेरे दिलवर से है ऐसा जक्त में कोई॥ २।' ये भादों ने दिखाया खो। करैं विरहन से दादुर जंग। जो होती प्राणपीतम संग। न डर पाता मुझे कोई। मिलावे मेरे दिलवर से है ऐसा जक्त में कोई॥ ३॥ महीना क्वार का आया। पिया ने नेह विसराया। करै अब सौत मन भाया जलन तो है मुझे सोई॥ मिलावे मेरे दिलवर से ऐसा जक्त में कोई॥ ४॥ महीना कातिक के आली। पुजै घर घर में दीवाली। हमैं यह रितु गइ खाली। यो ही वरसात भर रोई॥ मिलावै मेरे दिलवर से है ऐसा जक्त में कोई॥ ५॥

अंत—महीना पूष ओ साजन। बहुत ढूढ़ा मैं वन जोगन। न पाया पर तेरा दर्शन। मिलो अभिलाष है योई॥ मिलावे मेरे दिलवर से है ऐसा जक्त में कोई॥ ७॥ आय माह ने घेरा। न प्रीतम का हुआ फेरा। लिया तरसाय वहुतेरा। दिखा अव आय मुख लोई॥ मिलावै मेरे दिलवर से है ऐसा जक्त में कोई॥ ८॥ मस्त फागुन महीना है। ध्यान तैं कुछ न कीना है। उन्हीं का सत्य जीना है जो सोवैं मिल जने दोई॥ मिलावे मेरे दिलवर से है ऐसा जक्त में कोई। ९॥ चैत चिंता हुई भारी। न आया प्राण आधारी॥ रही रोती विरह मारी। कवन अघ दुख अस होई॥ मिलावै मेरे दिलवर से है ऐसा जक्त में कोई॥ १०॥ लगा वैसाख ऐ प्यारे। विरह लूने जिगर जारे। खबर ले प्राण आधारे। प्रीत क्यों चित्त से धोई। मिलावै मेरे दिलवर से है ऐसा जक्त में कोई। ११। जेठ में मिल गया दिलदार। सलूनो पायता उजियार। सजन संग सब करूं त्योहार। कथन नहिं वाल की नोई। मिलावे मेरे दिलवर से है ऐसा जक्त में कोई। १२॥ इति श्री वारहमासा बालमुकुन्द कृत संपूर्ण समाप्तः लिखा राम दीन पाठक, माधौ गंज निवासी जेठ वदी तेरस संवत् १९२६ वि० राम राम राम

विषय—विरहनी ने अपनी दशा ११ महीनों की वर्णन की है बारहवें मास में उसका पति मिला जिससे विरहाग्नि शांति हो गई।

संख्या २८. निघंट भाषा, रचयिता—बालमुकुंद ब्राह्मण (जगनेर), कागज—बाँसी, पत्र—६८, आकार—७ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१४२, खंडित। रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—ललिताप्रसाद दीछित, स्थान—जगनेर, तह०—खेरागढ़, डाकघर—जगनेर, जिला—आगरा।

आदि—श्री राम जी ।। श्री राम जी सहाय ॥ श्री गणेशाय नमः ॥ निघंट भाषा ॥ प्रथम हाड के नाम शिवा और हत की । और यथ्या ॥ चैन की ॥ विजया ॥ और गया ॥ धूमप्यो ॥ प्रथमा अमोघ ।। कायस्था ॥ प्राणदा ॥ अमृता ॥ जावे नीधा ॥ हेम ॥ पूतनीया ॥ वनंता ॥ लमया ॥ जवस्था ॥ नंदिनी ॥ प्रेयसी ॥ रोगेणी यह इक्कीस नाम हड़ के हैं ॥ हड़ के गुण ।। हरड़ में गुण ॥ है मीठी कसेला खट्टा कडुआ तेल सूखी है और गरम हैं दीपनी है बुद्धी को बढ़ाने वाली हैं और पचने के समय मीठी है रस भरी हैं बुद्धि की दाता है और शकरी को बढ़ाती है बल को बढ़ाती है हलकी है और दभी खासी को दूर करे हैं। कबज और विषम ज्वर गोला वेकेट आकरे को और फोड़े छिदि हिचकी और खाज होता वाम कवल वाय मूल ताप तिल्ली मीठे खटे स्वाद से वाव को हरती है और चरो के स्वास सो पित को हरती हैं कड़वे और वेज सो कफ को हरती हैं ।

अंत—अर्थ मद्य गम ॥ वर्क सवनि इणे स्वत्व नतंला गुण ठंडा है काविज है कफ को पित को हरे हैं । हलकी है पची में मोठे है खुराक है और हरेण भी उसी के समान है ।। कलावज सोठ ॥ कलाम खड़िक लिपुट तुप्रवडिक गुण ।। वण्णम के कफ पित को हरता है । काविज है ठंडा है खुश्क है पित को लोई कफ को हरे हैं हलका है उसेला है बादी हैं। पुरुस्व को दूर करता है । प्रथम पंडरा ॥ गुण ॥ मीठी पत्रने में काविज ठंडी है कफ पित्ति को तीन रंग अच्छा करे हैं ।

विषय—निघण्टु वैद्यक का वर शाखा है जिसमें सब खाद्य तथा दवाइयों के नाम वा गुण वर्णन हैं । १ पौधों तथा दवाइयों के नाम गुण । २ काष्ठादिक दवाओं के नाम गुण । ३ सर्व साध फलों के नाम तथा गुण । ४ साग तरकारियों के नाम गुण । ५ भिन्न २ प्रकार के जामों के नाम तथा गुण । ६ सब प्रकार के दूधों का गुण । ७ घृतों तथा तेलों के नाम तथा गुण । ८ सब प्रकार के तथा दाल आदि के नाम व गुण ।

टिप्पणी—संस्कृत के प्रसिद्ध मदन पाल के मदन विनोद निघण्टु का यह पद्यानुवाद बालमुकुन्द जगनेर वाले ने किया है ।

संख्या २९ ए. अंजन निदान, रचयिता—बंशीधर ब्राह्मण (आगरा), पत्र—६०, आकार—६ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८५६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं १९३१ = १८७४ ई०, लिपिकाल—सं० १९३४ = १८७७ ई०, प्राप्तिस्थान—बेनीदीन तिवारी, ग्राम—माधौपुर, डाकघर—बिलराम, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ अंजन निदान ग्रंथ भाषा लिख्यते ।। जिन वैद्यों के नेत्र अज्ञान रूपी अंधकार से घिरे हैं ।। इसलिये ग्रन्थकर्ता अग्निवेश बहुत सूक्ष्म अंजन नाम ग्रंथ को करता है । वात पित्त अरु कफ रूपी दोषों का कोप रोग का कारण होता है ॥ और तीनों के कोप का कारण काल द्रव्य और क्रिया तीनों की भिन्न भिन्न न्यूनता अभाव अधिकाई है । कटु वस्तु चिरपरी वस्तु के सेवन से वायु कुपित होता है । कसैली वस्तु के सेवन से बादल के होने से चोट लगने से श्रम से और मल मूत्र के अवरोध से

वायु कुपित होता है । वासी अन्न खाने से भय से उपास करने से जागने से शोक करने से तैरने से वायु कुपित होता है ॥

अंत—वैद्यक के जो बड़े बड़े ग्रन्थ हैं वे न पढ़ने पडे इस हठ से वैद्यों के विनोद के लिए ग्रंथकर्त्ता अग्निवेष ने अति लघु अंजन निदान यह ग्रंथ बनाया है जिसमें मुख्य श्लोक १००८ विस्तार के भय से रखे हैं। आगरे में रह कर वंशीधर पंडित ने संवत् १९३१ के भीतर अंजन निदान ग्रंथ का उलथा सब लोगों के अर्थ ज्ञान के लिये देशी बोल चाल में किया है। इसको पढ़ कर वैद्य लोग देशी इलाज करने में अति प्रसन्न होंगे । इति अंजन निदान ग्रंथ समाप्तः लिखा रामसेवक शुक्ल संवत् १९३४ वि० ।

विषय—वैद्यक ।

संख्या २९ बी. अंजननिदान, रचयिता—वंशीधर (आगरा), कागज—देशी, पत्र—४४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८४०, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३१ = १८७४ ई०, लिपिकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० पीतमसिंह, ग्राम—बेहनाका नगरा, डाकघर—अलीगंज, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ अंजननिदान भाषाग्रन्थ लिख्यते ॥ जिन वैद्यों के नेत्र अज्ञानरूपी अंधकार से घिरे हैं इस कारण ग्रन्थकर्ता अग्निवेश वहुत सूक्ष्म अंजन नाम ग्रन्थ को करता है । बात पित, अरु कफ रूपी दोषों को कोप रोग का कारण होता है । और तीनों के कोप का कारण काल द्रव्य और क्रिया तीनों की भिन्न २ न्यूनता अभाव अधिकाइ है ।

अंत—विनोद के लिये ग्रन्थकर्ता अग्निवेश ने अति लघु अंजन निदान यह ग्रन्थ बनाया है जिसमें मुख्य श्लोक १००८ विस्तार के भय से रखे हैं आगरे में रहकर वंशीधर पंडित ने संवत १९३१ के भीतर अंजन निदान ग्रन्थ का उलथा सब लोगों के अर्थ ज्ञान के लिये देसी बोल चाल में किया है । इसको पढ़ कर वैद्य लोग देशी इलाज करने में अति प्रसन्न होंगे । इति अंजन निदान ग्रन्थ संपूर्ण समाप्तः लिखा गंगा राम वैद्य स्वपठनार्थं मार्ग शीर्ष संवत् १९३२ वि० तृतीया कृष्णपक्ष ॥

विषय—वैद्यक ।

संख्या २९ सी. अंजन निदान, रचयिता—वंशीधर (आगरा), कागज—देशी, पत्र—६४, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९०७, रूप—फटी, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३१ = १८७४ ई०, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवशर्मा वैद्य, ग्राम—बासुपुर, डाकघर—फरौली, जिला—एटा ।

आदि-अंत-२९ ए के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—इति अंजन निदान ग्रंथ संपूर्ण समाप्तः लिखा देवी लाल पंडित वैद्य स्वपठनार्थं संवत् १९३६ वि० ॥ फरौली निवासी जाति के चौबे माथुर ॥

संख्या २६ डी. अंजन निदान, रचयिता—वंशीधर ब्राह्मण (आगरा), कागज—देशी, पत्र—८०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्) १९२९, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३१ = १८७४ ई०, लिपिकाल—सं० १९३४ = १८७७ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० मानसिंह, ग्राम—पाली, डाकघर—पाली, जिला—हरदोई।

आदि—अंत—२९ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—इति अंजन निदान ग्रंथ समाप्तः लिखा रामसेवक शुक्ल संवत् १९३४ वि०।

संख्या २९ ई. भारतवर्ष का इतिहास, रचयिता—बंशीधर, कागज—देशी, पत्र—१२०, आकार—१० × ८ इंच; पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०९ = १८५२ ई०, लिपिकाल—सं० १९११ = १८५४ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० हरिहर सिंह, स्थान—एटा, डाकघर—एटा, जिला—एटा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ भरत षंड का इतिहास लिख्यते। पुराने इतिहासों के ठीक न मिलने के कारण निश्चय नहीं होता है कि आदि में कौन से लोग भरत खंड के निवासी थे। परन्तु इसमें भी कुछ संदेह नहीं है कि प्राचीन काल से हिन्दू जाति के लोग बसे हैं और उन्हीं के नाम से भरत खंड का दूसरा नाम हिन्दुस्थान भी ठहरा है। कभी ये लोग मिसर देश से आये होंगे और मुख्य निवासियों में से जो शेष रह गये उन सबने पहाड़ और जंगल में जाकर निवास किया फिर पच्छिम से वेद पढ़े हुए लोगों ने भरत खंड में आकर जो लोग पहिले से इस देश में वसते थे उनको आधीन कर लिया। भरत खंड में चारों वर्ण पहिले इतने विस्तार के वीच में न बसते थे जितने में अब वसते हैं वरन उस समय में उनके निवास करने का केवल एक छोटा सा देश था।

अंत—कौंसिल के अधिकारी साहिब हिन्दुस्तान के बड़ी पदवी वाले साहिवों से चुने जाते हैं और माली और मुल्की कामों में विलायत से वड़े घराने के और विद्यावान नौ योवन साहिब आन कर नियत होते हैं और वे क्रम क्रम से वड़े वड़े अधिकारों पर पहुंचते हैं और यही रीति सेना वाले साहिवों में भी जारी है और बंगाला और मद्रास और बम्बई इन तीनों प्रेसीडेन्सियों अर्थात् हातों में न्यारी न्यारी फौज नियत है उनमें कुछ फरंगस्तानी और वहुत से हिन्दुस्तानी हैं। परन्तु हिन्दुस्थानी सिपाही के भी सर्दार अंग्रेज हैं और हिन्दुस्तान में सारी फौज लगभग दो लाख आदमियों के होगी। इति श्री भारतवर्ष का इतिहास संपूर्णम् लिखा छेदीलाल अवस्थी अपने पढ़ने के लिये। सन् १८५४ ई० संवत् १९११ वि०

विषय—इस ग्रन्थ में भारतवर्ष का इतिहास सन् १८४७ ई० तक का है।

संख्या २९ एफ. भारतवर्ष का इतिहास, रचयिता—बंशीधर, कागज—देशी, पत्र—१२०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४; परिमाण (अनुष्टुप्)—२१६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०९ = १८५२ ई०, लिपिकाल—सं० १९१४=१८५७ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रामदयाल, ग्राम—बाजनगर, डाकघर—नौखेड़ा, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ।। अथ भारत वर्ष का इतिहास पं० बंशीधर कृत लिष्यते ।। भरत खंड के भूगोल का वर्णन ॥ भरत खंड के उत्तर में हिमालय पहाड़ है और पूरब में ब्रह्मपुत्र जिसकी दूसरी ओर ब्रह्मा देश है और आग्नेय और नैऋत्य और दक्षिण में समुद्र है इस देश की लम्बाई काश्मीर से कन्या कुमारी अंतरीप तक अर्थात् उत्तर और दक्षिण के वीच १९०० मील है और चौड़ाई अटक के दहाने से उन पहाड़ों तक जो ब्रह्मपुत्र के पूरब में हैं १५०० मील है। भरत खंड के वीच में पूर्व से पश्चिम तक विन्ध्याचल पहाड़ है उससे भरत खंड के दो भाग हो गये हैं एक उत्तरा खंड दूसरा दक्षिण भरत खंड है।

अंत—बंगाला और मद्रास और वम्बई इन तीनों हातों में न्यारी न्यारी फौज नियत है। उसमें कुछ फरंगस्तानी और वहुत से हिन्दुस्तानी हैं। परन्तु हिन्दुस्तानी सिपाही के भी सर्दार अंग्रेज हैं और हिन्दुस्तान में सारी फौज लगभग दो लाख आदमियों के होगी लिखा चैन सुख विद्यार्थी दर्जा ४ मदरसा सोरों जिला एटा चैत्र सुदी दशमी संवत् १९१४ वि०

विषय—भारतवर्ष का इतिहास

संख्या २९ जी. भाषाचंद्रोद्रय, रचयिता—बंशीधर, कागज—देशी, पत्र—७२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६९०, लिपि—नागरी। रचनाकाल—सं० १९११ = १८५४ ई०, लिपिकाल—सं० १९११ = १८५४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामभरोसे, ग्राम—देवकली, डाकघर—मारहटा, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ भाषा चन्द्रोदय लिख्यते ॥ हिन्दी भाषा का व्याकरण—व्याकरण विद्या से लोगों को शुद्ध और अशुद्ध शब्द की विवेचना और शब्दों की योजना का ज्ञान होता है ॥ शब्द मात्र वर्णों से बनते हैं इसलिये पहिले शब्दों के मूल वर्णों का लिखना उचित है वर्ण अर्थात् अक्षर बुद्धिमानों के बनाये हुये संकेत हैं। वे देश भेद से नाना प्रकार के हैं उनमें से देव नागरी को वर्णमाला लिख्यते हैं ॥

अंत—दोहा—भाषा चन्द्रोदय भयो जग के वीच अनूप। ता प्रकाश सूझै परै छोटे मोटे रूप ॥ १ ॥ बिना पढ़े व्याकरण के हुओ चहै परबीन। पंडित मंडल बीच जा सो नर हो छबि छीन ॥ २ ॥ शाब्दिक के मुख बचन को कैसे कोउ डुलाय। जस दृढ़ जड़ तरुना हले पवन झकोरे पाय ॥ ३ ॥ यह मैं निश्चय करि कहौं सुनौ जु तुम दै कर्ण। विद्या वारिध तरण को लखो नांव व्याकर्ण ॥ ४ ॥ तजि के सबही काम को धरु विद्या में ध्यान। विद्या ते नर जग लहैं विषद कीर्त्तिधन मान ॥ ५ ॥ इति श्री भाषा चन्द्रोदय ग्रन्थ संपूर्ण समाप्तः लिखतं छेदीलाल विद्यार्थी दर्जा ४ पाठशाला कासगंज जिला ऐटा ता० २२ फरवरी सन् १८५४ ई० ॥ राम राम ॥

विषय—हिन्दी व्याकरण।

संख्या २९ एच. सूर्यवंशी राजा, रचयिता—वंशीधर, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०, रूप—

प्राचीन, लिपि—नागरी । रचनाकाल—सं० १९०७ = १८५० ई०, लिपिकाल—सं० १९११ = १८५४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामऔतार, ग्राम—नगला वीरसिंह, डाकघर—मारहटा, जिला—एटा ।

आदि्—अथ सूर्य वंशी राजाओं की नामावली लिख्यते ॥ सूर्य वंशी राजा ॥

इक्ष्वाकु	दढ़ाश्व	त्रिधन्वा	अंशुमान
विकक्षी	हर्यश्व	त्रयारण्य	दिलीप
पुरंजय	निकुंभ	त्रिशंकु	भगीरथ
काकुस्थ	संकटाश्व	हरिश्चन्द	श्रुंग
अनेनास	प्रसेनजित	रोहिताश्व	नाभाग
पथु	युवनाश्व	हरिति	अंबरीष
विश्व गश्व	मान्धाता	चुंचु	सिन्धु द्विप
आर्द्र	पुरु कुत्स	विजय	अयु ताश्व
भाद्र आर्द्र	त्रिश दश्व	रुरुकुं	ऋतुपर्ण
भुवनाश्व	अनारण्य	वृक	सर्व काम
अवस्थ	पृश दश्व	वाहु	सुदास
ब्रह दश्व	हर्यश्व	सगर	कल्माष पाद
कुवलयाश्व	वसुभान	असमंजस	असमक

अंत —

			हरि कवच
दशरथ	अहनिज	सुसंधि	भानु रत्न
इलिवथ	कुरु	आसर्प	सुप्रतीक
विश्वासह	परिपात्र	महाश्य	मरुदेव
खट्वांग	दल	वृहदवाल	सुनक्षत्र
दीर्घ वाहु	छल	वृहद शान	केशी नर
रघु	उकथ	उरू क्षेप	अंतरीक्ष
अज	बज्रनाभि	वत्स	सुवर्ण
दशरथ	शंखनाभि	वत्स व्यूह	अमित्र जित
श्री राम	व्युथिनाभि	प्रति व्योम	वृहद्राज
कुश	विश्वासह	देव कर	धर्म
अतिथि	हिरण्य नाभि	सहदेव	कृतंजय
निषमध	पुष्प	वृहदश्व	रणंजय
नल	ध्रुव संधि		संजय
नाभ	अपवर्ग		शाक्य
पुंडरीक	शीघ्र		क्रोध
क्षेम	मरु		दान
धन्वा	प्रशवश्रुत		अतुल

द्वारिका।

प्रसेनजित
क्षुद्रक
कुंदक
सुरथ
सुमित्र ॥

इति श्री सूर्य वंश के राजाओं की नामावली संपूर्ण समाप्तः संवत् १९११ वि०

विषय—केवल सूर्य वंश के राजाओं के नाम इक्ष्वाकु से लेकर श्री रामजी तक व कुश से लेकर सुमित्र तक ५७ राजा अर्थात् कुल १२० राजा लिखे हैं ॥

संख्या २६ आई. सूर्यवंशी, चंद्रवंशी राजाओं के नाम, रचयिता—बंशीधर, पत्र—३, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—लाला स्यामसुंदर पटवारी, ग्राम—सराय रहमत खाँ, डाकघर—विजयगढ़, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ सूर्यवंशी चंद्रवंशी राजाओं के नाम लिख्यते ॥ १ इक्ष्वाकु २ विकक्षी ३ पुरंजय ४ काकुस्थ ५ अनेनास ६ प्रथु, ७ विश्वगश्व ८ आर्द्र ९ भार्द्र आर्द्र १० युव नाश्व ११ श्रवस्थ १२ वृहदश्व १३ कुवल याश्व १४ दढ़ाश्व १५ हर्यश्व १६ निकुंभ, १७ शकटाश्व १८ प्रसेन जित १९ युवनाश्व २० मान्धाता २१ पुरुकुत्स २२ त्रश दश्व २३ अनारन्य २४ पृष दश्व २५ हर्यश्व २६ वसुमान २७ त्रिधन्वा २८ त्रयारुण्य २९ त्रिशंकु ३० हरिश्चन्द्र ३१ रोहिताश्व ३२ हारीति ३३ चुंचु ३४ विजय ३५ रुरुक ३६ वृक ३७ वातु ३८ सगर ३९ अस मंजस ४० अंशुमान ४१ दिलीप ४२ भगीरथ ४३ श्रुत ४४ नाभाग ४५ अंबरीष ४६ सिंधु द्विप ४७ अयुताश्व ४८ रितुपर्ण ४९ सर्वकाम ५० सुदामा ५१ कल्माष पाद ५२ असमक ५३ द्वरिकवच ५४ दशरथ ५५ इलिब्रथ ५६ विश्वासह ५७ खट्वांग, ५८ दीर्ववाहु ५९ रघु ६० अज ६१ दशरथ ६२ श्री राम ६३ कुश ।

अंत—यदु का वंश—यदु, कीष्टा, वजीन वान, स्वही, रूस दय, चित्रारथ, सर बिन्दु, प्रथु श्रवस, तमस उस नस, सितेयंशु रुक्मा, कवलह, पारा वृत्त, जैमध, विदर्भ क्रथ कुंति वृष्णि निरवृत्ति, दशार, विजामन् जीमूत, विकृति भीमरथ, नवरथ दशरथ, सुकुनि, कुसंभ देव रथ देव क्षेत्र मधु अनवरथ कुरुवत्स अनुरथ पुरुहोत्र अंगस, सात्वत, भजमान विदूरथ, सुर समन प्रति क्षेत्र स्वायंभुव हरि दोक देव मेधस, सुर वसु देव । श्री कृष्ण पांडु, कुल, शांतनु, विचित्रिवीर्य, पांडु, युधिष्ठिर परीक्षित, जन्मेजय, सतानीक, अश्वमेघ घात, उष्ण, चित्तारथ, धृतमान, निचत्र सुसेन सुनीथ, रिच, नृचक्षु सुखवत, पारि, प्लव, सुनय, मेधावी, नृपंजय मृदु तिग्म, वृहद्रथ, वसुदान सतानीक, उद्यान अहीनर निर्मित्र । इति श्री सूर्यवंसीचंद्रवंशी राजाओं की नामावली संपूर्ण समाप्तः ।

विषय—प्रथम सूर्यवंशी राजाओं के नाम जो इक्ष्वाकु से प्रारंभ होकर सुमित्रतक लिखे है चन्द्रवंशी राजा पुरुरवा से प्रारंभ होकर ययाति के दो पुत्र पुरु और यदु फिर पुरु का कुल जन्मेजय से प्रारम्भ होकर दुर्योधन तक और पांडु का कुल शांतनु से प्रारंभ

होकर निर्मित्र तक और यदु का कुल यदु से प्रारम्भ होकर श्री कृष्ण तक सब राजाओं के नाम लिखे हैं ॥

संख्या २९ जे. सूर्यवंशी और चंद्रवंशी राजा, रचयिता—वंशीधर, पत्र—१२, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३०, रूप—प्राचीन; लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०७=१८५० ई०; लिपिकाल—सं० १९१३=१८५६ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला भोलानाथ हकीम, ग्राम—जगरावा, डाकघर—कादिरगंज, जिला—एटा।

आदि–अंत—२९ आई के समान। पुष्पिका इस प्रकार है :—

इति चंद्र वंशी राजा समाप्तः ॥ इति श्री सूर्यवंशी राजा संपूर्ण समाप्तः संवत् १९१३ वि० लिषतं सालिग्राम–आगरा नाई मंडी ॥

संख्या २९ के. भोज प्रबंध, रचयिता—बंशीधर, कागज—विदेशी, पत्र—१२०, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—११५५, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचना काल—सं० १९०७=१८५० ई०, लिपिकाल—सं० १९१२=१८५५ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर रामसिंह, ग्राम—मझगवा, डाकघर—बेनीगंज, जिला—हरदोई।

आदि—श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ भाषा भोजप्रबन्ध लिख्यते—राजा विक्रमादित्य के वंश में एक राजा सिन्धुल हुआ उसके बुढ़ापे में भोज नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ जब वह पांच वर्ष का हुआ तब उसके बापने मरने के समय अपने मंत्री बुद्धि सागर को बुलाया और कहा कि जो मैं भोज को राजगद्दी देता हूं तो मेरा भाई मुंज जो बलवान है मेरे पुत्र को वृथा मार डालेगा और आप राज भोगेगा क्योंकि लोभ बुरी वस्तु है।

अंत—हरएक चौकीदार अपनी अपनी गली के ऐसे धनवान मूर्खों को लेकर दो घंटे निरंतर बराबर टहलाने में रखें और १२ दिन में हर रोज चार चार अक्षर सिखावैं ॥ और जो चौकीदार के कहने से न आवै वे एक महीने सर्कारी कैद में रहैं ॥ इस दंड के सुनते ही सब के कान हो गये और उन्होंने थोड़े ही दिनों में बारह खड़ी पूरी की। इस प्रकार राजा भोज और रानी लीलावती ने धीरे धीरे उज्जैन नगरी में विद्या का प्रचार किया और नाम पाया ॥ इति श्री भोजप्रबंध भाषा पं० वंशीधर कृत संपूर्ण शुभ मस्तु लिखा ज्ञानी राम शुकुल स्वपठनार्थ संवत् १९१२ वि० श्री शंकराय नमः ॥

संख्या २९ एल. भोज प्रबंध सार, रचयिता—बंशीधर, कागज—देशी, पत्र—१२०, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—११००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी। रचनाकाल—सं० १९१४=१८५७ ई०, लिपिकाल—सं० १९२३=१८६६ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० शिवमंगल सिंह, ग्राम—जयखेड़ा, डाकघर—ऊमरगढ़, जिला—एटा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ भोज प्रवंध सार पं० बंशीधर कृत भाषानुवाद लिख्यते त्रिक्रम के वंश में एक राजा सिन्धुल भया उसके बुढ़ापे में भोज एक पुत्र भया।

अंत—इस प्रकार राजा भोज और रानी लीलावती ने क्रम क्रम से उज्जैन नगरी में विद्या का प्रचार किया और नाम पाया ॥ इति श्री भोजप्रबन्ध सार का प्रथम खंड संपूर्ण समाप्त हुआ लिखा जैलाल वैश्य खजुहा निवासी संवत् १९२३ वि० ॥

विषय—राजा भोज के विद्या प्रचार का प्रबन्ध।

संख्या ३० ए. सत्यनारायण व्रत कथा, रचयिता—बासुदेव सनाढय (बाह, आगरा), पत्र—३२, आकार—१३ X ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—८९६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९९ = १८४२ ई०, लिपिकाल—सं० १८९९=१८४२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० नरोत्तमदास और लक्ष्मी नारायण वैद्य, ग्राम—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्रीमते रामानुजायनमः ऋषयः ऊचुः वृतेन तपसा किंवा वां छते फलम्। तत्सर्वम् श्रोतु मिच्छामि कथयस्वमहामुने। के ऋपि जे हैं ते नैमसारण्य के विषैं श्री सूत जी जो हैं तिनहिं पूछत हैं कि हे महामुने हे सूत जी वृतेन वृत करिकें वा तपसा तप करिकें किं वाच्छतं फलं कौन ऐसो मनोवांछित फल जो है ताहि प्राप्यते प्राप्त होतु है। तत्सर्वं तौन सब श्रोतुमिच्छामि हम सुनवे की इच्छा करत हैं। ताहि कथयस्व हमसों कहौ।

अंत—इदं पठते नित्यं श्रुणो तिमुनि सत्तमः। तस्यन श्यन्ति पापानि सत्य देव प्रसादंतः। हे मुनि सत्तमः हे श्रेष्ठ ऋषि मुनि हो यह जो पुरुष नित्यं नाम दिन दिन प्रति इदम् जह कथा जो है ताहि पठते पढ़े वांचै और श्रणोति भक्ति पूर्वक सुनै तो सत्य देव प्रसादतः सत्य देवनारायण के प्रसाद तें भक्त जन के पापानि सम्पूर्ण पाप जे हैं ते नश्यन्ति नास है जाइंगे। १६। इति श्री स्कंध पुराणे देवा खण्डे सूत ऋषि सम्वादे सत्यनारायण वृत्त कथाया सनाढय कुलोद्भव वासुदेव रामानुजदासेन् अन्वयार्थ प्रकाशिका विरचितियकायम् पंचमोध्याय ॥ ४ ॥ मधुमास सिते पक्षे प्रतिपत्त चन्द्र वासरे नव नन्दाष्ट भू संबत लिखि पूर्णाकृतः इदंम् संवत् १८९९।

विषय—श्री सत्यनारायण कथा का ब्रजभाषा में शाब्दिक अर्थ

संख्या ३० बी. योगसारार्थ दीपिना (अध्यात्मगर्भसार स्तोत्र), रचयिता—बासुदेव सनाढ्य (बाह, आगरा), पत्र—२०, आकार—१३¾ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ट)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—६००, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९४ = १८३७ ई०, प्राप्तिस्थान—पंडित लक्ष्मीनारायण जी वैद्य, स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्रीपद्म पुराणे उत्तर खंडे माघ महात्म्ये वशिष्ठ दिलीप संवादे एकोनविंशोध्यायः ॥ ९ ॥ देव द्युति स्तदारभ्य नारायण प्रभोभवत् ॥ सुमित्र ब्राह्मण के पुत्र देव द्युति जो है सो तदारभ्य ता दिन तें आरम्भ करिकें नारायण परः श्री मन्नारायण ही की भक्ति में तत्पर ऽ भवत् होत भये ॥ १ ॥

अंत—इति ते कथितं स्तोत्रं गुह्यंपाप प्रणाशनं। अत उर्द्धं प्रवक्ष्यामि पिशाचश्य विमोक्षणं ॥ इति जा प्रकार हे वेद निधि ते तुमसों पाप प्रणाशनं प्रकर्ष करिके पाप को नाश करिवे वाए गुह्यं छिपाइवे कों जोग्य स्तोत्रं ऐसो जो स्तोत्र सो कथितं कहियतु भयो अतः

उर्द्धं जः उपरान्त पिशाचस्य पिशाचत्व को प्राप्त जे हैं गर्धवनि की पांचो कन्या अक मुनि को पुत्र तिनको विमीक्षणं पिशाचत्व ते छुटियो ताहि प्रवक्ष्यामि प्रकर्ष करिकैं कहेंगी ॥ ८०॥ इति श्री सनाढ्यन्वयेऽवतीर्णं वासुदेव रामानुज दासेन कृत योग सारार्थ दीपिना समाप्तः ॥ फाल्गुणे कृष्ण पक्षेणु सप्तम्यां भृगुवासरे ॥ वेदां काष्टकु वर्षेषु कृतार्थं दीपं समाप्ता ॥ १ ॥ संवत् १८९४ ॥

विषय—अध्यात्म गर्भ सार स्तोत्र

संख्या ३० सी. मुहूर्त संचय सुलभार्थ प्रकाशिका टीका, रचयिता—बासुदेव सनाढ्य (बाह, आगरा), पत्र—४९, आकार—१० X ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४७०, रूप—प्राचीन; लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० लक्ष्मीनारायण वैद्य, स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला— आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ विवाह प्रकरणं व्याख्यायते ॥ तत्रऽनाश्रमी पुरुषः न तिष्टेत इत्यादि वचनात् समावर्तनकर्मानंतरं सर्वा श्रमाणं उपकार कत्वात् गृहस्थाश्रम एव मुख्यः सच सुशील स्त्रिया याधीनः शीलं तु सुलग्ना धीनं अतः लग्न शुद्धि कथनं प्रति जानीते भार्यात्रिवर्नेति शुभ शील युक्ता भर्त्रादिक के अनुकूल हे शुभ शील स्वभाव जाको ऐसी जो भार्या स्त्री नस्याः ताको लग्न वशेन शुभ लग्न (मुहूर्त चिन्ता करने) ॥

अंत—अथ ज्योतिर्निबंधे ॥ क्षौरं प्रवेशे प्रस्थाने वर्जयेन्निशि संध्ययोः ॥ सागर्नदर्शे पौर्णिमासे निशायाम् विकारयेत् ॥ ५ ॥ अरु ज्योतिर्निबंधग्रंथ के विषें कहत हैं प्रवेशे गृह प्रवेश के विषे प्रस्थाने प्रस्थान यात्रा के बिषें निशि रात्रि के विषें संध्ययोः प्रातः संध्या अरु सायं संध्या इन दोऊ संध्या समय के विषें क्षौरं वार वनवाइवो जौ है सो वर्जयेत् वर्जित कह्यो है । अरु सार्गनः कार्य के विषें मुछा के दाहिक के विषें दर्शे अमावसदिहु के विषें पौर्णमासे पूनों के दिन विषैं निशायां अपि राति हू के विषैं क्षौरं क्षौर कर्म जो हे वारनि को वनवेवो ताहि करियत् करवावै ॥

विषय—अनेक कार्य संबंधी मुहूर्तों का वर्णनः—(१) विवाह प्रकरण [पृ० १—३९ चतुर्थ प्र०] (२) दुरागमन प्रकरण [४०—४४ पंचम प्रकरण] (३) वस्त्र भूषणादि धारण प्रकरण [४५–४७ षष्ट प्रकरण] (४) क्षौर कर्म के मुहूर्त वर्णन [४८–४९] शेष लुप्त ।

संख्या ३० डी, मुहूर्त संचय, रचयिता—बासुदेव सनाढ्य (बाह, आगरा), पत्र—६७, आकार—१० X ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८७६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान - पं० लक्ष्मीनारायण वैद्य, स्थान—बाह; डाकघर— बाह, जिला—आगरा ।

आदि—श्री मते रामानुजाय नमः ॥ विष्वक्सेनं नमस्कृत्य हय ग्रीवं तथैवच ॥ मुहूर्त संचयोः टीकां यथा मति करोम्यहं ॥ १ ॥ क्षेमरायेण क्षेमराम जो हे ग्रन्थकार ता करिकें मुहूर्त संचयः मुहूर्तनि को जो संग्रह सो यथा क्रियेत यथा स्यात् जेसे हे तथा तेसेई क्रियते करि यतु भयो किं कृत्य कहा करिकें श्री गणेश नमस्कृत्य श्री गणेश जी हे तिनहिं नमस्कार

करिकें च पुनः कहे और ज्योतिः शास्त्रं विलोक्य ज्योतिस शास्त्र जो हे ताहि देख करिकैं ॥१॥ श्री गणेशाय नमः ॥ श्री गणेशं नमस्कृत्य ज्योतिः शास्त्रं विलोक्यच । क्रियते क्षेम रामेण मुहूर्त संचयो यथा ॥ १ ॥ अथ तिथीशाः मु चिं ॥ तिथि शावन्हि को गौरी गणेशोऽहि जु होरविः ॥ शिवो दुर्गति को विश्वे हरिः कामः शिवः शशी ॥ २ ॥

अंत—विचैत्रेति ॥ विचैत्र एक चेत कों छोड़िकें व्रतमासा दौ यज्ञो पवीत करिवे कों जो न्म कहे जे माघ फाल्गुण वैशाख ज्येष्ट आदि शब्द करिकें तिथि वार नक्षत्र लग्न जे कहे इनके विषें इनके विषें की देश व्रतमासादौ कैसे हैं यज्ञोपवीतोक्त मासादिक विभौमास्ते नाहीं भयो हे मंगल की अस्ता जे के विषें विभूमिजे भौम वाररहिते मंगल को छोड़िकें और जे रहे सूर्यादिक वार तिनकें विषें नृपाणां क्षत्रियाणां क्षत्री जे हैं तिनकों विवाहतः विवाह जेहि तातें प्राक् येह ले छरि का बंधनं छुरि काया आल्प शास्त्र विशेष जो हे छुरी ताको कण्यां कंध्या कटि के विषें बंधनं बाधिवे जो हे सो शस्तं शुभ हे ॥६३॥ इति श्री मुहूर्त संचये संस्कार प्रकरणे सनाढ्य कुलोद्भव श्री वासुदेव रामानुजदासेण विरचिता सुलभार्थं प्रकाशिका टीकायां तृतीय प्रकरणं ॥ ३ ॥

विषय—(१) शुभा शुभ योगादि वर्णन प्रथम प्रकरण १–१७ (२) गोचरादि प्रकरण द्वितीय प्रकरण १८–४६ (३) संस्कार प्रकरण तृतीय प्रकरण ४६–६७

सं० ३० ई. भगवद्गीता की टीका, रचयिता—वासुदेव सनाढ्य (बाह, आगरा), पत्र—२४, आकार—१३३/४ × ७ इंच, पंक्ति प्रति पृष्ठ—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—९००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० लक्ष्मीनारायण वैद्य, स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा ।

आदि—श्री मते रामानुजाय नमः ॥ संचितं ये भगवतश्चरणारविंदं वज्रां कुशध्वज सरोरुह लांछनाढ्यं ॥ उत्तुंगरक्त विलसन्नख चक्रवाल ज्योत्स्ना भिराहतम्ह हृदयांश्च कार ॥ × × य ब्रह्मा वरुणेन्द्र रुद्र मरुतः स्तुत्वंति दिव्यैः सतवैर्वेद, सांग पदक्रमोपनिषदे गायंपियं सामगाः ॥ ध्यानावस्थित तद्गते न मनसा पश्यंतियं योगिनो यस्यांतं न विदुः सुरासुर गणाः देवाय तस्मै नमः ॥ १३ ॥ तस्मै देवाय नमः तौन जो देव हैं लक्ष्मीनारायण तिन कह नमस्कार है तस्मैं कस्मै तौन कों नयं नाम जिनीहं ब्रह्मा वरुण इंद्र रुद्र जो हैं शिव मरुतः मरुद्गता देवता जे हैं दिव्यैः वेदैः दिव्य जे हैं मंगल स्तोत्र तिन करिकें स्तुत्वंति स्तुति करै हैं अरु सामगाः सामवेद के गाइवे वारे जे हैं ते अंग पदक्रमेण सह अंग पद क्रम करिकें सहित जे उपनिषदै उपनिषद तिन करिकें यं जिनहि गांयति गा में हैं अरुध्यानावस्थित योगिनः ध्यान करिकें स्थित जे जोगेश्वर ते तद्गते न मनसा श्री मन्नारायण ही के विषें प्राप्त जो मन ता करिकें यं जिनहिं पश्यंति देखें है अरु सुरा सुर गणाः सुरजे हैं देवता असुर जे हैं दैत्य तिनके जे गुण कहैं समूह ते यस्य जिन श्री मन्नारायण को अंत । अंत जो है परिणाम ताहि न विदुः नहीं जाने हैं तस्मै देवाय ताने जे देव हैं तिनको नमस्कार है ॥ १३ ॥

अंत -- हे पार्थ हे अर्जुन एपा आत्मज्ञान पूर्विका आत्मज्ञान पूर्वक ब्राह्मी ब्रह्म प्रदीपिका ब्रह्म कों प्रकाशित करिवे वारी स्थितिः ज्ञान नेष्टा जामें एसी एनांस्थितिं जह जो स्थिति ज्ञान नेष्ठा ताहि प्राप्य प्राप्त हो करिकें पुमान् पुरुष जे हैं सो मुह्यतिपुनः संसारं नाप्नोति फेरि संसार जो हे ताहि नहीं प्राप्त होत हे अस्यां निष्ठायां जाही नेष्ठा के विषें अंत काले प्रयाण कालेपि देहावसान जात्राहू के विषें स्थित्वा प्राप्त हो करिकें निर्वाणं सुख रूपं सुखं हो के अनुरूप ब्रह्म स्वात्मानं अपनो जो आत्मा ताहि ऋछीत प्राप्नोति प्राप्त होत है ॥ ७२ ॥ इति श्री भगवद्गीतायां श्री कृष्णार्जुन संवादे सांख्य योगो नाम द्वितीयोध्यायः ॥ २ ॥

विषय—गीता के प्रारंभिक दो अध्यायों की व्याख्या।

संख्या ३० एफ. आलु मंदारु स्तोत्रस्य गूढ़ शब्द दीपिका, रचयिता—बासुदेव (बाह, आगरा), पत्र—२१, आकार— १३ × ७½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—११३४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०९=१८५२ ई० प्राप्तिस्थान—पं० लक्ष्मीनारायण वैद्य; स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्री मते रामानुजाय नमः स्वाद यन्निह सर्वेषां त्रय्यंतार्थं सुदुग्रहं ॥ स्तोत्र यामास योगींद्र स्तं वंदे यामुना ह्वयम् ॥ १ ॥ नमो नमो यामुनाय नमो नमः ॥ नमो नमो यामुनायः यामुनाय नमो नमः ॥ २ ॥ तं यामुनाह्वयं तोन जे यामुनाचार्य स्वामी जो हैं तं तिनीहं वंदे में दंडवत करतु हों। तेकं ते कौन जो यामुनाचार्य स्वामी सुदुग्रहं सुतरां अतिसय करिकें दुग्रंह कठिन जो त्रैयं तार्थ ऋग् यजु सामवेद को जो अर्थ ताहि इह जा लोक के विषै सर्वेषां चारों वर्ण चारों आश्रम मनुकों स्वाद यन् स्वाद करवाइ वे की इच्छा करत संते स्तोत्र यामास स्तोत्र रुप करि देत भये सो कैसे हैं यामुना चारि स्वामी योगीद्रः योगी जे सरणागत योगी तिनके बिषैं इंद्र कहें श्रेष्ट जो हैं ॥ १ ॥

अंत—यत्पादां भोरुह ध्यान विध्वस्ता शेष कल्मषः ॥ वस्तुता मुप यातो हे यामुने येनमामितं ॥ ६९ ॥ जाके अव वस्तु तां उपयातः वस्तु ता जो है अभयता भय करिकें रहित जो पद ताहि उपयातः प्राप्त भयो जो अहं में सो तं यामनेयं तोन जे यामुनाचार्य तिनहि नमामि नमस्कार दंडवत करतु हों ॥ ६९ ॥ इति श्री आलुमंदारु स्तोत्र व्याख्यानं संपूर्णम् ॥ संवत् १९०९ ॥ आलु मंदारु स्तोत्रस्य गूढ शब्दार्थं दीपिका रामानुजस्य दासेन वासुदेवे न कीर्तिताः ॥ ७० ॥

विषय—आलुमंदारु स्तोत्र की टीका

संख्या ३० जी. एकादशी महात्म्य, रचयिता—बासुदेव सनाढ्य (बाह, आगरा), पत्र—९२, आकार—१४ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४; परिमाण (अनुष्टुप्)—२५७६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० लक्ष्मीनारायण वैद्य, स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि श्री हय ग्रीवाय नमः ॥ ॐ नमः श्री परमात्मने पुराण पुरुषोत्तमाय ॥ सूत उवाच ॥ कदाचिदर्जनः श्री मान विष्णु भक्ति परायणः ॥ भक्तिजिज्ञासया प्रछद्वासुदेव महा

मीतं ॥ सूत जो हैं सो नैमिषारण्य के विषें शौनकादिक ऋषि जे हैं तिन प्रति जह कथा वरनन करत है के हृ शौनक सुनों कदाचित् एक समय के विषें विष्णु भक्ति परायण विष्णु की भक्ति में तत्पर श्रीमान अर्जुनः श्री शोभा करिकें शोभित ऐसे जो अर्जुन सो भक्ति जिज्ञासया भक्ति मार्ग के पूछवे की इच्छा करिके महामतिं वासुदेवं वड़ी उदार है बुद्धि जिनकी असे जो श्री कृष्ण तिनहिं आप्रछत् नीकी प्रकार पूंछत भये ॥ १ ॥

अंत—इष्ट्वा ऋतु शतैर्पुण्यं दत्वारत्नान्य नेकशः । तुलसी दलै स्तुतत्पुण्यं प्रावरी केशवार्चनात् ॥ ऋतुं शतै इष्ट्वा सो यज्ञं करिके अरु अनेकशः रत्नानि दत्वा और अनेक रतन के दान करिकें यत् पुण्यं जो कछु पुण्य प्राप्त हो तुम्हें तत पुण्यं तौन वह पुण्य तुलसी दलैस्तु तुलसी के दल जे हैं तिनहीं करिके केशवार्चनात् शालिग्राम के पूजन से प्राप्यते प्राप्त होतु है ॥ ८१ ॥ इति श्री पद्म पुराणे श्रीकृष्णयुधिष्ठिर संवादे कीर्तिकस्य शुक्ले हरेः वोधनी एका दश्यायाः माहात्म्यं कथितम् ॥ २४ ॥

विषय—साल भर में पड़नेवाली चौबीसों एकादशियों के उपवास का माहात्म्य और फलादि का वर्णन ।

संख्या ३० एच. रामाश्वमेध की टीका, रचयिता—बासुदेव सनाढ्य (बाह, आगरा), पत्र—९२, आकार—१४ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्) २७६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं लक्ष्मीनारायण वैद्य, स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा ।

आदि—श्री मते रामानुजायनमः ॥ श्री मते हय ग्रीवाय नमः ॐ नमः ॥ श्री परमात्मने श्री रामचन्द्राय ॥ नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम् ॥ देवीं सरस्वतीं व्यास ॥ ततो जय मुदीरयेत् ॥ १ ॥ नरोत्तम नरनि के विषें उत्तम नर कहे नर ऐसे जो नारायणं कहें श्री मन्नारायण तिनहि नमस्कृत्य नमस्कार करिकें एव व्यासं श्री वेदव्यास जे हैं तिनहि नमस्कृत्य नमस्कार करिके ततः ता उपरान्तः जयं नाम्ना कथा जो है सो उदीरयेत् गाइये है ॥ १ ॥

अंत—सर्व शोभा समंवितः संपूरण युद्ध करिवे की जे सामग्री तिनि करिकें सहित मीत मान वीर बुद्धिमान जो वीर शत्रुध्न सो उवाच बोलत भये हे राम हे श्री रामचंद्र अनुज्ञया तुह्मारी आज्ञा करिकें आयो ता मो कहँ हयस्य रक्षार्थं यज्ञ के घोड़ा की रक्षा करिवे के अर्थ आज्ञा षय आज्ञा देउ रघुनाथो पित्तच्छ्रुत्वा भद्र भास्वतिचापब्रवीत् बाल स्त्रियं प्रमत्तं वामा हन्या शस्त्र वर्जितं ॥ ५६ ॥ तत् तस्य शत्रुध्न को जो कहिवो ताहि श्रुत्वा सुनिके रघुनाथोपि श्री रामचंद्र जो है सोउ इति ॥ शेष लुप्त ॥

विषय—श्री रामाश्वमेध की टीका ।

संख्या ३१ ए. लोलिमराज (वैद्यजीवन), रचयिता—बेणीप्रसाद त्रिपाठी 'बेन वैद्य', पत्र—६४, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—७२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९९ = १८४२ ई०, लिपिकाल—

सं० १९२२ = १८६५ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० शिवपरशन सिंह, स्थान—राज शिवगढ़, डाकघर—अमेठी, जिला—लखनऊ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ लोलिम राज लिष्यते ॥ छप्पै ॥ दुरद वदन छवि रदन अद्भुत यक राजत। डिम डिम धुनि विविध भाँति डमरु धुनि वाजत ॥ पुरुष पूरन पुरान वेद तुमकौं ठहरावत। याही ते जग सकल राउर गुण गावत ॥ हियकै प्रसन्न करिकै क्रिया मम हृदय धर कीजिये। तुव चरण कमल रति अति बढ़ै गणपति यह वर दीजिये ॥१॥ दोहा ॥ निसि वासर नर जो करै। श्री गणपति गुण गान। सुर पूरन पुर नाग सुर। ताको करत विचार ॥ २ ॥ दंडक ॥ पंच सम जाके वीन दंड वर मंडित है। अमल कमल जाको असन विराज मान। कुंद चन्द हूते महा धवल सिंगार जाको। सुभ्र वस्त्र आवत परम तेज पुंज वान ॥ वेधा' विष्णु शंकरादि देव प्रनामत जाको। नित ही करत गुन आगम निगम गान। वानी जगरानी वुद्धि वल की निसानी येक सुभ सरसानी मोहि रक्षा करैं सावधान ॥ ३ ॥

अंत—दंडक ॥ हिंग घृत जुक्त सूल मूल को कदन कारी। चपल समधु पुरान रजर हरत है। भूषन समधु हरै स्वास रुज सेवत ही लसुन स घृत वात सिगरो हरत है। होय जो त्रिदोष आदि अर्क मधु संग दीजै चतुर विचार अनोपान वितरतु हैं। त्रिफला सिला समेत मेह रुज दूरि करै मिरिच समूल सीत अति ही हरतु है ॥ ममापी ॥ मीरण ॥ सोंठि ॥ ॥ पिपरी ॥ मिरच ॥ अवरहिर वहेरा नास ॥ ३६ ॥ सिलाजीत प्रमेह ॥ दोहा ॥ ज्वर मेचन पर्य्यंट कह्यो। ग्रहणी वक्र मिलाइ। सुवरन जल गुद रोग में। कहत वैद्य समुदाय ॥ ३७ ॥ राज संग चम रोग को। कुटज संग अतिसार। रक्त पित्त वृष दीजिये। अनोपान निरधार ॥ ३८ ॥ गुदज रोग पावक मिलै। क्रमि क्रमि शत्रु वषानि। सुनु सुन्दर मुनि जन कहैं। अनोपान अनुमानि ॥ इति श्री मति त्रिपाठी वेणी प्रसाद विरचितं वैद्य जीवन काव्ये इसा विधि नाम पंचमो विलासः ॥ ५ ॥

विषय—(१) पृ० १ से ३० तक—मंगला चरण। निदान तथा वैद्य की पहिचान। ज्वर की पहिचान तथा उसका उपचार। ज्वर भेद सन्निपात आदि की औषधियाँ। विष रोग संबंधी औषधियाँ। संग्रहणी आदि का उपचार (संग्रहणी प्रतिकार) प्रथम वा द्वतीय प्रकाश। (२) पृ० ३० से ४० तक—कास स्वांस। नेत्र रोग। भग शूल। कमल रोग प्रदर तथा गर्भ हरणादि स्त्री रोग वर्णन-तृतीय प्रकाश ॥ (३) पृ० ४० से ५४ तक—चतुर्थ प्रकाश-राज रोग। महाव्रण। प्रमेह हिम तृषा। त्रिदोष। अमल पित्त आदि। हिचकी। मूत्र कक्ष (सर्वरोग प्रतीकार) (४) पृ० ५४ से ६४ तक—वीर्य वर्धक औषधियाँ। घुंघची आदि सोधन संग्रहणी आदि चिकित्सा और रस विधि। पंचम प्रकाश। ग्रन्थ निर्माण कालः—संवत् रस रस वसु ससी। मारग पूरन मास। वेन वेद्य जीवन रच्यौ। भाषा सुमति विलास ॥ ग्रन्थ लिपि कालः—संवत् वनइस सै वाइस में। पूस मास सुक्ल पंछ। तिथि आठैं खीची लिख्यौ राम अधार सुभ अंछ ॥

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रन्थ विविध छन्दों में स्त्री पुरुष संवाद के व्याज से लिखा गया है। इसकी रचना अच्छी है। वर्णनों को रोचक बनाने और पाठकों के चित्तांकित करने के

लिये बहुधा अच्छे अच्छे उदाहरणों का प्रयोग किया गया है। ग्रन्थ के प्रायः अधिकांश वर्णन सरस हैं और उसमें उत्तमोत्तम औषधियाँ भी लिखी हैं॥

संख्या ३१ बी. लोलिमराज, रचयिता—बेनीप्रसाद (बेन वैद्य), पत्र—१६, आकार—१० × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—८००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९९ = १८४२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० हीरालाल वैद्य, उपाध्याय, ग्राम—पचवान, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—३१ ए के समान।

अंत—सुनु सुंदर मुनि जन कहे अनो पान अनुमानि॥ संवत् रसरस वसु ससी मारग पूरन मास। वेन वैद्य जीवन रच्यौ भाषा सुमति विलास॥ इति श्रीमद् वेन वैद्य विरचिते वैद्य जीवन काव्ये रस विधि नाम पंचमो विलास॥

विषय—(१) निदान सम्बन्धी विचार। ज्वर ज्वर भेद। विषैले रोग सम्बन्धी वर्णन—प्रथम प्रकाश। (२) संग्रहणी आदि रोगों का उपचारादि। द्वितीय प्रकाश॥ (३) नेत्र रोगादि वर्णन। तृतीय प्रकास। (४) प्रमेह। पिपासा। त्रिदोषादि सर्व रोग प्रतीकार चतुर्थ प्रकाश॥ (५) पुष्टि संबंधी औषधियाँ तथा रसों का कथन। ग्रन्थ निर्माण काल तथा ग्रन्थ समाप्ति॥ पंचम प्रकाश॥

संख्या ३२. छंद शिरोमणि, रचयिता—भद्रनाथ दीक्षित (बिल्हौर, कानपुर), कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—६००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८८० = १८२३ ई०, लिपिकाल—सं० १८९० = १८३३ ई०, प्राप्तिस्थान ठा० गनेश सिंह, ग्राम—आदमपुर, डाकघर—टाडियाव, जिला—हरदोई।

आदि—श्रीगणेशाय नमः—श्रीगणपति श्री शारदहिं वन्दौं गुरु पद कंज। विघ्न हरण मंगल करन हरण मोह तम पुंज॥ जै जै पिंगल नाग जिन प्रगटो छन्द प्रकास। याहि मिले वाणी लहै बहु विधि विमल विलास। जद्यपि दृष्ट सपुष्ट मति जोरि कहै कछु छंद॥ पिंगल पाठी बाल लौं हंसै ताहि कहि मंद॥ पुण्य पाठ श्रुति अंग है ज्ञान पदारथ खानि॥ दृग ज्योतिष मुख व्याकरण छंद पाद पहिचान॥ भद्रनाथ यह आपने मन कीन्हों अनुमान॥ छन्द शिरोमणि नाम कहि करिये ग्रन्थ प्रधान॥ जद्यपि प्राकृति संस्कृत भाषाहू बहु ग्रन्थ। तदपि मतो लै ग्रन्थ को मैं कीन्हों ऋजु पंथ॥ छंद शिरोमणि प्रेम कै कंठ धरै जो कोइ। आदर पावै नृप सभा मूरष लौ कवि होइ॥ छंद सकल द्वै भांति के गद्य एक एक पद्य। कला रचित सो गद्य है वरण रचित सो पद्य॥ गद्य पद्य के भेद तहं तीनि भांति के जानु। इक सम दूजे अरध सम तीजे विषम प्रमानु॥ चारि चरण समकल वरण सो कहिये सम वृत्त। कोउ पद औरहि और कोउ कोउ विषम कहत उद्धत्त॥

अंत—रूप घनाक्षरी छंद—सोरह वरण पर विरति करिये जह लघु करि पदंत, सब वत्तिस वर्ण पग॥ और गुरु लघु को कछु नियम न मानिये, आनिये सुद्ध कल वरण सब चारि पग॥ होत सुकवि नाथ छंद रूपक घनाक्षरी, परम सुहायो मन भायो है प्रसिद्धि

जग संसै हरण सब महा मोद करण यह छंदन को आभरण कविन कोसी सुमग ॥ इति वृत्ति भे—गद्य पद्य रचना सकल कही स्वमति अनुसार। पिंगल को मत देखिकै नाना छंद विचार ॥ सज्जन पर कृत श्रवन लौ देषि स्वमति सुधारि ॥ दुर्जन हठि निन्दा करैं विहँसै वदन विदारि ॥ संवत् ठारह सै असो चैत्र शुक्ल छठि बुद्ध। मृग सिर की रजनीस सुभ भयो ग्रन्थ यह सुद्ध ॥ भद्रनाथ दीक्षित प्रगट वासी वलहुर ग्राम। सुलभ ज्ञान प्रद कविन हित कियो ग्रन्थ सुख धाम ॥ छंद सकल दुइसै अधिक तिरसठि जह निरधारि। कला वरण युत आभरण कीन्हें ग्रन्थ विचारि ॥ इति श्री भद्रनाथ दीक्षित विरचिते छन्द शिरोमणौ वरण वृत वरणनं तृतीयो प्रकासः समाप्तयो यं ग्रन्थः सुभं भूयात संवत् १८९० माघ सुदी ३ श्री कृष्णाय नमः।

विषय—इस ग्रन्थ में छन्दों का भेदोपभेद वर्णन है ॥

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता पं० भद्रनाथ दीक्षित जाति के ब्राह्मण, बिल्हौर जिला कानपुर निवासी थे। इनके भाई रुद्रनाथ दीक्षित भी अच्छे कवि हो गये हैं। निर्माण काल संवत् १८८० लिपि काल संवत् १८६० वि० है। उपरोक्त लेख को इस प्रकार वर्णन किया है ॥ संवत् ठारह से असी चैत शुक्ल छठि बुद्ध ॥ मृगसिर की रजनीस सुभ भयो ग्रन्थ यह सुद्ध ॥ भद्रनाथ दीक्षित प्रगट वासी वलहुर ग्राम। सुलभ ज्ञान प्रद कविन हित कियो ग्रन्थ सुख धाम ॥

संख्या ३३. श्रावकाचार, रचयिता—भागचंद्र, पत्र—४०२, आकार—१३ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—७२३६, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९१२=१८५५ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रिषभदास जैन, ग्राम—महोना, डाकघर—इटौंजा, जिला—लखनऊ।

आदि-श्री वीतरागाय नमो नमः ॥ अथ श्री श्रावकाचार भाग चन्द्र जी कृत वचनिका सहित लिप्यते ॥ दोहा सिद्धारथ प्रिय कारणी। नंदन वीर जिनेश। शिव कर वंदू अमित गीत। कर्त्ता वृष उपदेश ॥ १ ॥ पंच परमेष्ठी की स्तुति ॥ गीता छन्द ॥ मनुज नाग सुरेन्द्र जाके उपरि छत्र त्रय धरे। कल्यान पंचक मोद माला प्राय भव भ्रम तम हरे ॥ दर्शन अनंत अनंत ज्ञान अनंत सुख वीरज भरे। जय वंत ते अर हंत शिव तिय कंत मो उर संचरे ॥ १ ॥ जिन परम ध्यान कृशानु वान सुतान तुरत जला दये। युत मान जन्म जरा मरण भय त्रिपुर फेर नहीं भये ॥ अविचल शिवालय धाम पायो स्वगुण तैं न चलै कदा। ते सिद्ध प्रभु अविरुद्ध मेरे शुद्ध ज्ञान करो सदा ॥ २ ॥ जे पंच विध आचार निर्मल पंच अग्नि सु साधते। पुनि द्वादशांग समुद्र अवगाहत सकल भ्रम वाधते ॥ वर सूरि संत महंत विधि गण हरण को अति दक्ष हैं। ते मोक्ष लक्ष्मी देहु हमकौं जहाँ नाहिं बिपक्ष हैं ॥ ३ ॥

अंत—॥ काव्य ॥ यावत्तिष्ठति शासनं जिन पतेः पाप्पहारोद्यतं। यावद्ध्वं सयते हिमेतर रुचिर्विश्वं तमः शार्वरम् ॥ यावद्धारयते महीध्र धर वचितं वात त्रयी विष्टपं। ता वच्छास्त्रमिदं करोतु विदुषा मभ्यस्य मानं मुदम् ॥ अर्थ—पाप के हरने में उद्यमी जो जिनराज का मत सो जहाँ ताइं तिष्ठै है अर जहाँ ताईं सूर्य रात्रि संबंधी सकल अंधकार

कौं हरै है वहुरि जहाँ ताईं पर्वत निकरि जड़ित जो लोक ताहि तीनौं वात वताप धारै है तहाँ ताईं यह श्रावकाचार शास्त्र अभ्यास किया संता ज्ञानी जीवन कौं आनंद करहु। ऐसे आचार्य ने आशीर्वाद दिया है॥ × × × भजूं देव सर्वज्ञ अज्ञ जन भ्रम तम नाशक। ध्याऊँ सिद्ध समूह ध्यान जिस स्वपर प्रकाशक॥ आचारज मुनि राज तने पद वारिज वंदूं। उपाध्याय गुण गाय पाप तरु मूल निकंदूं॥ पुनि सर्व साधु यह लोक मैं तहैं नित प्रति चिंतवन करूं। यह मंगल उत्तम शरण लखि वार वार जिन चित धरूं॥

× × × ×

इति श्री आचार्य अमितिगति कृत श्रावकाचार की वचनिका समाप्त भई।

बिषय—(१) पृ० १ से २० तक—प्रथम परिच्छेद। मंगला चरण। देव वंदना तथा ग्रन्थ प्रतिज्ञा। मनुष्य भव की प्रधानता और उसके कर्त्तव्य कर्म। (२) पृ० २५ से ४० तक—द्वितीय परिच्छेद। मिथ्यात्व तथा उसके सातों भेदों के स्वरूप मिथ्या दर्शन। मिथ्या ज्ञान वा मिथ्या चरित्र के छः प्रकार के अनाय तन। सम्यक्त होने का विशेष स्वरूप। (३) पृ० ४१ से ७५ तक—तृतीय परिच्छेद। सम्यग्दर्शन के विषय जीवादिक पदार्थों का वर्णन (सम्यग्दर्शन के विषय सप्त तत्व के अंक का निरूपण) (४) पृ० ७६ से १०९ तक—चतुर्थ परिच्छेद—अन्यमतावलंवियों के एकान्त पक्ष का निराकरण। (५) पृ० ११० से १४० तक—पंचम परिच्छेद। व्रतों का वर्णन मदिरा व मांस का त्याग। रात्रि भोजन का निषेध। (६) पृ० १४० से १५५ तक—ष० प०—द्वादस अणु व्रत (जीव दया की प्रधानता हिंसा का निषेध तथा अन्य अणु व्रतों का वर्णन) (७) पृ० १५६ से १७८ तक—(स० प०) व्रतों की महिमा। सत्य अणु व्रत अतीचार। अन्य दिग्विरति आदि के अती चार। शल्यनि का निषेध निदानादि वर्णन। जीव कर्म का संबंध। एकादश प्रति मान का वर्णन। (८) पृ० १७९ से २२५ तक—(अ० प०) षट आवश्यकों का वर्णन (९) पृ० २२६ से २५० तक—(न० प०) दान पूजा शील तथा उपवास इन चार धर्मों का वर्णन। (१०) पृ० २५१ से २७० तक—(द० प०) पात्र कुपात्र और अपात्र का वर्णन (११) पृ० २७१ से ३०५ तक—(ग्या० प०) दोनों का फल कथन। (१२) पृ० ३०५ से ३३० तक—(वा० प०) पूजा तथा शील का वर्णन। घूतादिक व्यसनों का निषेध। चार प्रकार के व्रतों का वर्णन। (१३) पृ० ३३१ से ३५५ तक—(ते० प०) महाव्रत भाव। तथा आत्मध्याय भावादि का वर्णन। (१४) पृ० ३५६ से ३८७ तक—(चौ० प०) द्वादश अनुप्रेक्षाओं का वर्णन (१५) पृ० ३८८ से ४०२ तक—(प० प०) ध्यान का सामान्य स्वरूप साध्य तथा साधनादि का वर्णन। टीकाकार का संक्षिप्त परिचयः—गोपाचल के निकट सिंधिया नृपति कटक वर। जैनी जन बहु वसैं जहाँ जिन भक्ति भार भर॥ तिनमें तेरह पंथ गोष्ठि राजत विशिष्ट अति। पार्श्व नाथ जिन धाम रच्यो जिन सुभ उतंग अति॥ तहाँ देश वचनिका मय भली भाग चंदा रचना करिय। जय वंत होउ सत संग यह जा प्रसाद वुधि विस्तरिय॥ × × × साधर्मिन की प्रेरणा वा जिन श्रुत अनुराग। उभय हेतु वस मैं लिख्यो कि मापे अर्थहि त्याग॥

ग्रन्थ निर्माण कालः—संवत सर उगणीस सौ द्वादशि ऊपरि धार। अष्टात्‌दिक असाढ़ की। पूर्ण वचनिका सार॥

टिप्पणी—प्रस्तुत टीका अमित गति रचित श्रावकाचार की है। टीकाकार भागचन्द्र जी ग्वालियर राज्य के अन्तर्गत ईसागढ़ के निवासी ओसवाल जैन हैं। इन्होंने प्रमाण परीक्षा नैमिनाथ पुराण तथा ज्ञान सूर्य्योदय नाटक नाम वाले कई ग्रन्थों की रचना की है। इन्होंने टीका को यथाशक्ति उपादेय बनाने की चेष्टा की है। ज्ञात होता है, ये पद्य और गद्य दोनों ही में रचना करते थे और संस्कृत एवम् हिन्दी दोनों ही भाषाओं के पण्डित थे॥

संख्या ३४ ए. गुरु गैबी ग्रंथ, रचयिता—भगवान, पत्र—१०, आकार ८ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२५, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री दुर्गादास साधु, ग्राम—हाजी गुर्ज, डाकघर—नगराम पूरब, जिला—लखनऊ।

आदि—श्री गुरु कृपा कटाक्ष ते। निरखौ मम हिय प्रीति। सो विचारिं वर वकसि देव। उपजै उत्तम रीति॥ क०॥ माँगत हौं कर जोरि वहोरि करौ गुरुदेव अजब जी दाया। तब सुधरैं मम बात सबै विगरैं न कवो न करे न करे कछु माया॥ भागि चलै भ्रम भूत सबै हिय होइ विशुद्ध अनूपम काया॥ भगवान भनै वर देव यहै सोइ रूप करौं मैं निरंतर ध्याया॥ १॥ श्री गुरुदेव अजब के अंश तुम्हैं परसंग करै श्रुतिगाया। ज्ञान गजानन से दरसै दृढ़ ध्यान मनो वृष केतु दिखाया॥ तेज मनो शशि सूरज को तनि तूल मनोज नौ मनौ बनाया। भगवान भनै वर देव यही सोइ रूप करौं मैं निरंतर ध्याया॥

अंत—श्री गुरु गैबी ग्रंथ यह। पढ़ै जो मन चित लाय। तेहिका सर्वै वस्तु की। तत्त्व परै दरशाय॥ १॥ जे पर संसय हंसते। जे निन्दा हैं ते काग। गान करैं ते विमल विधु। जे त्यागे ते नाग॥ २॥ सुनि समुझें ते विप्र वर। ना समझहिं ते जाग। जे ध्यावहि ते कल्पतरु। नहि बबूर के वाग॥ ३॥ पढ़ै पढ़ावै गुन कथै। तेहि होवैं अनुराग। छूटहिं तेहिकर शीघ्र ही। सकल दोष दुष दाग॥ ४॥ जे दूखें ते दुख लहैं। सुख से रहै विभाग। होय निरादर जक्त में। ज्यों द्विज वध अघ लाग॥ ५॥ × × × इति॥

विषय—हनुमान विनय।

संख्या ३४ बी. तमाचा, रचयिता—भगवान, पत्र—१०, आकार—८ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२५, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री दुर्गादास साधु, ग्राम—हाजीगुर्ज, डाकघर—नगराम पूरब, जिला—लखनऊ।

आदि—तन द्रिवि दीर्घ से सुमेर ते विसाल अति। शीश आत उदित उँचाई आसमान के॥ भुज वल प्रवल प्रचंड काल दंड सम। अंग सब वज्र अति जोर जंगवान के॥ लंबी लूम लफत हंहां स होत तेहुँ पर। तेहु पर दास भगवान लखि होत संक भानु के॥ महाबीर वाके अति घोर हांके जाके कोई। असुर न वांचे सो तमाचे हनुमान के॥ १॥ लक लक करत कपीस केस अंग पर। नख दंत संत जैसे श्री नग हिमवान के॥ पिंग पिंग

लोचन निहारि रिपु हारि जात। बांकी बांकी भृकुटी विदित वीरवान के ॥ लाली लूमै लसत ललामी नभ छुइ रही। दास भगवान जैसे चाप इंद्रवान के॥ महांवीर वाँके अति घोर हाँके जाके कोई। कोई असुर न वाँचे सो तमांचे हनुमान के ॥ २ ॥

अंत—ग्रास करै रवि को प्रकास करै तासु कर। जोम हरै सोम कर मिटावै रण वान के॥ धाय धरै शक्र को निकारि सकै देव सब। लूटे कुवेर घर महा धनवान के॥ बांधि सके मृत्यु को उजारि सकै यम पुर। दास भगवान कोई ताकी न समान के॥ महाँवीर बाँके अति घोर हाँके जाके कोई। असुर न बांचे सो तमाचे हनुमान के॥ पक्ष करै पंडित औ खंडित को भक्ष करै। रक्षा करै वानिन जे अच्छे धर्म वान के॥ जेर करै कायर कपूतन को तेर करै। शेर करै दासन सिखावै हरि ध्यान को॥ कपि सुख रासी उपहासीन को नास करै। दास भगवान आस ओही वलवान के महावीर वाके अति घोर हाँके जाके कोई। असुर न वाँचे सो तमांचे हनुमान के ॥

विषय—पृ० १ से १० तक हनुमान के तमाचे की महत्ता का वर्णन।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रंथ के रचयिता "भगवान" संत अजब दास जी के शिष्य और श्री हनुमान जी के भक्त थे। इन्होंने हनुमान और अजव दास जीकी विनय में एक ग्रंथ "गुरुगैबी" ग्रंथ नाम का बनाया है। ग्रंथकार का कोई विशेष परिचय इस ग्रंथ से नहीं मिलता।

संख्या ३५. गीता वार्तिक, रचयिता—भगवानदास, पत्र—२२४, आकार—११३/४ × ५१/२ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२६८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी; रचनाकाल—सं० १७५६ = १६९९ ई०, लिपिकाल—सं० १९१३ = १८५६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० वैजनाथ ब्रह्मभट्ट; ग्राम—अमौसी; डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ।

आदि—श्री गणेशाय नमः। श्री कृष्णाय नमः अथ गीता वार्तिक लिष्यते ॥ श्री गुर चरण कमलेभ्यो नमः ॥ जब कौरव और पांडव महाभारत के जुद्ध को चले॥ तब राजा धृतराष्ट्र कह्या ॥ कि हौं भी युद्ध का कौतुक देषणो चलो हौं तब ब्यास देव जी तिसकों कह्या॥ कि हे राजा धृतराष्ट्र तेरे नेत्र नहीं ॥ नेत्रौं बिना क्या देषेगा॥ तब राजा धृतराष्ट्र ने ब्यास देव जी को उत्तर दीया॥ कि हे प्रभु जी देषौंगा नहीं तो श्रवर द्वार कर श्रवण तो करौंगा॥ तव ब्यास देव जी धृतराष्ट्र कौ कह्यी ॥ कि हे राजा तेरा जो सारथी है संजय सो मेरा शिष्य है॥ जो कुछ महाभारथ के युद्ध का लीला चरित्र होयगा सों संजय तुमको ह्यां ही बैठे श्रवण करावेगा ॥ तब श्री व्यास देव जी के मुख कमल ते यह वचन श्रवण कर॥ संजय श्री व्यास देव जी के चरण कमलों को सिर कर नमस्कार किया। अंजुल पुट बाँध कर यह विनती करता भया कि हे प्रभु जी महाभारत के युद्ध का चरित्र कुरुक्षेत्र के विषै होयगा। और हौं इहाँ हस्तनापुर के विषै होइंगा ॥ तौ तुम जो यह अज्ञा कृपा करि कही कि हे राजा संजय तुमको ह्याँ ही बैठे श्रवण करावैगा सो हे प्रभु जी हौं हस्तनापुर विषे बैठा तौं अरु युद्ध की लीला कुरु क्षेत्र विषै होयगी सो हौं क्या जानौंगा॥ और राजा कौं किस भांति कहौंगा॥ × × ×

अंत—हे राजा जो यह केशव जी ॥ अरु अर्जुन का संवाद गोष्ट ॥ तिसको सुमर सुमर विचार विचार पर्म हर्ष को प्रापति होता है ॥ अरु जो अर्जुन को हरि जी विश्वरूप दिषाया है ॥ तिस रूप कौं विचार विचार हे राजा जी हौं विस्मै भी होय जातौं ॥ अरु वार वार पर्म हर्ष भी होता है । अरु हे राजा जी मेरी निश्चै कर बात सुण ॥ जिस ओर जोगीस्वरों के ईश्वर श्री कृष्ण भगवान जो विराजमान हैं और जिस ओर गांडीव धनुस का धारणा हारा पारथ अर्जुन है सो तिसी ओर श्री लक्ष्मी है सो तिसी ओर जै है मेरे मत विषैं यह बात निश्चे कर है ॥ और यह बात तुम भी निश्चै कर जाणों ॥ जिन्के हस्त कमल माथे पर श्री कृष्ण भगवान जी पार ब्रह्म विराजमान हैं । ऐसे हैं जो बड़ भागी पाँडव तिनकी जै होवैगी पांडव जीतीहुगे ॥ अरु तुम्हारे पुत्र अधरम हीते हारेंगे । सत्य रघुनाथ जी हैं । अरु सत्य श्री कृष्ण भगवान् पारब्रह्म परमेश्वर जी हैं । इति श्री भगवत् गीता सूपणाषत सू ब्रह्म विद्यायाँ जोग शास्त्रे ॥ श्री कृष्णार्जुन संवादे सूक्ष्म योगोनां अष्ट दशोध्यायः ॥ १८ ॥ इति श्री भगवत गीता संपूर्न दसषत नंदीदास संवत् १९१३ ॥

विषय—गीता का अनुवाद ।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रंथ भगवत् गीता का भाषानुवाद है । इसका गद्य पुराने ढर्रे का है और उसमें कहीं कहीं "श्लोक" हेडिंग देकर कुछ दोहे भी लिखे गये हैं । वे टीकाकार के ही रचित अनुमान किये जाते हैं ॥ टीकाकार के नामादि का कुछ पता नहीं इसके प्रति लिपि कर्ता ने अपना नाम "नंदीदास" बताया है और उसे संवत् १९१३ वि० में लिखा है ॥

संख्या ३६ ए. कार्तिक माहात्म्य, रचयिता—भगवानदास निरंजनी (वारलवैहट), पत्र—३६, आकार—$१४\frac{१}{२}$ × $५\frac{३}{४}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२६८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७४३ = १६८६ ई०, लिपिकाल—सं० १९२६ = १८६९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० लखमीचंद गौड़, ग्राम—चंदवार, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । अथ कार्तिक महात्म्य लिख्यते । दोहा । प्रथमहिं गुरुगोविन्द को, सुमिरन करों बनाई वागर्यात गणपति सहित, कवि जन भलौ मनाय । प्रथम मंगल चरनते सबको मंगल जोइ । कहत सुनत सुख उपजै अरु परमारथ होइ । यह कार्तिक महिमा विपुल, भक्ति धर्म परनाम । रामकृष्ण की सुरति सों प्रगट करौ तुम राम । सत्रह से संवत् सरिस, ब्यालीस पुनि नाम । पौष पक्ष्मी ती प्रापति सहित, आरंभ करौ दिन जान । सतिभामा श्रीकृष्ण कौ नारद प्रभु संवाद । सूत सहित सब रिषिन मिलि, कहि सुनि पायो स्वाद । कहत सुनत सरधा बढ़े पढ़े ढढ़े मन लाइ । अस्नान दान सो सुनियो, जब सागर तरि जाइ ।

अंत—बाल बुद्धि के कारनें, भाषा करी सुअैन । जाको कछु सूझे नहीं ताकौ भाख्यौ नैन । भाषाकृत को नाम यह सबै कहैं भगवान । वैराग वसन प्रगटाई इष्ट निरंजन जानि । तो बालक रोटी कहै माता रोटी देय । समझायो सोई जानवी अर्थ समझि सुख लेय । संवत सत्रह सै प्रगट, तैतालीस पुनि और । फागुन कृष्ण अष्टमी बुधवार सिरमौर । वारल

वहट अस्थान हैं, सुभावि पुनुकौ वास । तहां ग्रंथ पूरण भयौ, निर्मल धर्म विलास । सुनै सुनावै याहि जो, लहै प्रगट फलु होय । भक्ति मुक्ति निज जानीये ईश्वर कृपासु होय । जामें कछु धोषो नहीं, सत्य वचन सो मानि । ईश्वर वामी केद है, कह्यौ लागि भगवान । प्रान ग्रंथसो मूल है सुन्यौ उनतीसै अध्याय । नासे ओरु तिरानवे, भाषा रूपक राय । इति श्री पद्म पुराने कार्तिक महात्मने पृथुनारद संवादे अति लिषी उपाख्या नौ नाम नव विंशोध्याय २९ । षष्ट जुगल नव चद्र मित । विक्रम संवत मानि क्वार कृष्ण तिथि सप्तमी । शुभ गुरुवार वषानि । जैसी प्रति पाई हती, तैसी लिखी सुवास । जोरि पाणि विनती करैं । वैष्णव देवीदास । भूल चूक जो कछू परी, ताको लेउ सुधारि । मो से अधम गरीब कौ सज्जन लेउ उधारि । रवि तनया के तीर पर खैरो है चंदवारि । वैष्णव देवीदास ने यह प्रति लिषि सुधारि । विप्रमथुरियन बीच में सदां हमारो वास । इनकी कृपा पाइके पुस्तक करी सुपास । इति श्री कार्तिक महात्म कथा संपूर्णम् मिती आश्विन कृष्ण ६ संवत १९२६ । लिखितं वैष्णव देवीदास चंदवार मध्ये शुभं ।

विषय—कार्तिक माहात्म्य वर्णन । मंगलाचरण, सत्यभामा के पूर्व जन्म की कथा, सत्यभामा जन्मकर्म कार्तिक की एकादसी, पूजा विधि, वृत—विधान वृत नेम, तुलसी माहात्म्य, इन्द्र अमरपुरी त्याग, जालंधर उपाख्यान, राहुकैलाश आवागमन, देवदानव युद्ध, वृन्दा अनल प्रवेश, जालंधर कथा, तुलसी तथा आंवले का माहात्म्य कलहा उपाख्यान, कलह मुक्ति वर्णन, विष्णुदास भक्ति वर्णन, विष्णुदा चौला राज बैकुंठ सिधारना, जय विजय मोक्ष वर्णन, सुरा गायत्री कृष्णवेना, नदी वर्णन, पाप पुण्य वर्णन, दैव वृक्ष वर्णन, उलिषिमी उपाख्यान ।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रंथ भगवानदास निरंजनी ने संवत् १७४२ में आरंभ करके १७४३ में पूर्ण किया है ।

संख्या ३६ बी. कार्तिक महात्म्य, रचयिता—भगवानदास निरंजनी (बरहल, बैहटा), पत्र—६३, आकार—१०३/४ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११५२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७४३ = १६८६ ई०, लिपिकाल—सं० १९०६ = १८४९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० प्यारेलाल शर्मा, ग्राम—बसई मुहम्मद पुर, डाकघर—बसई मुहम्मदपुर, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—३६ ए के समान । पुष्पिका इस प्रकार है :—

इति श्री पद्मपुराणे कार्तिक माहात्मे प्रथु नारद संवादे अलिपिमी उपख्यानो नाम उनतिसमोध्याय । २९ ॥ मिति माघ वदी ७ भृगौ संवत् १९०६ सम्पूर्ण

विषय-प्रथम अध्याय—मंगला चरण ग्रन्थ निर्माण काल (दे० प्रारम्भिक नमूनां) । सतभामा पूर्व जन्म निरुपण (पत्रा ३ तक)

द्वितीय अध्याय—सतिभामा जन्म वर्णन	प०	६	तक
तृतीय ,, —एकादशी कार्तिक वर्णन	,,	७	,,
चतुर्थ ,, —प्रभु का जन्म कर्म	,,	९	,,
पंचम ,, —पूजा विधि	,,	१२	,,

षष्टम अध्याय	—वृत्त विधि	प०	१४	तक
सप्तम	,, —वृतनेम वर्णन	,,	१७	,,
अष्टम	,, —उद्यापन	,,	१७	,,
नवम	,, —जालंधर उत्पत्ति	,,	२०	,,
दशम	,, —इन्द्र अमरपुरी त्याग	,,	२२	,,
एकादश	,, —जालंधर उपाख्यान	,,	२५	,,
द्वादश	,, —राह कैलाश आवागमन	,,	२७	,,
१३ वाँ	,, —दैव दानव युद्ध	,,	२९	,,
१४ वाँ	,, — ,, ,, सेनाश्रम	,,	३१	,,
१५ वाँ	,, —जालंधर संग्राम	,,	३३	,,
१६ वाँ	,, —वृंदा अनल प्रवेश	,,	३५	,,
१७ वाँ	,, —जालंधर वध	,,	३८	,,
१८ वाँ	,, —तुलसी आमरी महात्म	,,	४०	,,
१९ वाँ	,, —कलठा उपाख्यान	,,	४२	,,
२० वाँ	,, —कलहा मुक्ति	,,	४२	,,
२१ वाँ	,, —विष्णु दास भक्ति वर्णन	,,	४६	,,
२२ वाँ	,, —विष्णु दास का चोला वैकुंठ सिधारना	,,	४८	,,
२३ वाँ	,, —जय विजय का मोक्ष का वर्णन	,,	५१	,,
२४ वाँ	,, —सुरा गायत्री कृष्ण बेना नदी वर्णन	,,	५३	,,
२५ वाँ	,, —पाप पुन्य वर्णन	,,	५४	,,
२६ वाँ	,, —सत्संगति प्रकाश वर्णन	,,	५६	,,
२७ वाँ	,, —धनेश्वर नर्क दर्शन नाम	,,	५८	,,
२८ वाँ	,, —देव वृक्ष वर्णन	,,	६०	,,
२९ वाँ	,, —अलिधिमी उपाख्यान	,,	६३	,,

संख्या ३६ सी. कार्तिक महात्म्य, रचयिता—भगवानदास, कागज—बाँसी, पत्र—६०, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८०, रूप—बहुत प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५२ = १६८५ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री भगवती प्रसाद उपाध्याय, ग्राम—लकावली, डाकघर—ताजगंज, जिला—आगरा।

आदि-अंत—३६ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—इति श्री पद्म पुराणे कर्तिक महात्मे प्रथम नारद संवाद लक्ष्मी उपाख्यानो नाम नव विंशमोध्याय २९ ॥ तत्र वर्षे मार्ग कृष्ण पक्षे तिथौ अष्टाम्या आठ बुधवासरे लिखी हरिदास ब्राह्मणे भवानी प्रसाद पठनार्थ पुजारी राधिकादास जी संवत् १९७३ शाके १७६८।

विषय—कार्तिक माहात्म्य।

संख्या ३६ डी. अमृतधारा ग्रंथ, रचयिता—भगवान 'निरंजनी', कागज—बाँसी, पत्र—१४४, आकार—६ × ३३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—

११५२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७२८=१६७१ ई०, प्राप्ति स्थान—श्री बासुदेव वैश्य हकीम, ग्राम—बसई, डाकघर—तांतापुर, तह०-खेरागढ़ जिला—आगरा।

आदि—अथ अमृतधारा ग्रंथ लिषतं ॥ दोहा ॥ मंगल रूप सरुप मम, निजानंद पद आस। लह्यो मंगला चरन यह सोहं रूप प्रकास। कवित्त—जीव सीव रोक करौ। असी असी भाव भरौ। अहंपास वास हरौ। अमृत प्रमानिये ॥ मरन को भै नसावौ। अब रूप रास पापा। बंदि २ जो लषण। पौ गुरू ग्यान जानियो ॥ मान तजि आन लेरे। तेरो ही सरूप हैरे। सवै अभैदान देरे। रेहे अभी पानिये ॥ भगवान मया मान। मो बिना नल है आन। विषीय लिखै समान विद्वत वखानिये।

अंत—सत्रह सै अट्ठाईसा, संवत सिष्य सुजान। कातिक तृतीयां प्रथमही, पूरन ग्रन्थ प्रमान। यान मुकाम प्रमान यह, क्षेत्र वास सुनान। तहां ग्रंथ पूरन प्रगट यौ भाषै भगवान। अरथनाहि भरम कछु, भ्रममानै भ्रम सोइ। सुध मोसे सो पाइकै, सो सुफल सिधि होइ। छन्द भंग अक्षर कटित, अरथ निरवने होइ दुपन को भूपन कहै, कोविद कहिये सोइ। अहंकार पुनि षंडि कै, देह युधि करि नास। हेस भाव परभाव लहि, तिनको ज्ञान प्रकास। अंकु सपुत्रे जानि यह, सरब ग्रंथ कौ नाम। बाइस अंकते अंक है, पाचौ सन्त परमान। इति श्री अमृतधारा ग्रंथ सकल विवेक ज्ञानी को स्वरुप वर्णनो नाम भगवानदास निरंजनी कथिते चतुर्थौ प्रभाव।

विषय—इस ग्रंथ में ज्ञान वैराग्य का विचार है। ज्ञान का अधिकारी वर्णन, जितेमान को भेद, विवेक वर्णन, अनवरध वर्णन, षट्प्रकार श्रवन वर्णन, लिंग देह, षट्विधि श्रवन, तत्पद वाचि लक्षि के नौ नाम, तत्पद निरूपण, तत्वज्ञान तथा अवस्था भेद, ज्ञान अज्ञान की भूमिका, वासनाओं का वर्णन अष्टांग योग, योग, जीवन मुक्ति, और विवेक तथा ज्ञानी का स्वरूप वर्णन।

टिप्पणी—अपना परिचय कवि ने विशेष नहीं दिया केवल गुरू का नाम अर्जुन बतलाया है, जैसा कि निम्नांकित दोहे से प्रकट है:—दोहा—अमृतधारा ग्रंथ यह, कह्यो वेद परमान। अरजुनदास प्रकास युत, तत सेवक भगवान। साधु संग परताप तें, श्री गुरू ज्ञान प्रकास। सुध निरंजन ग्यान यह, कीनो वचन विलास।

संख्या ३७ ए. शीघ्र बोध सटीक, रचयिता—भगवानदास (बाह आगरा), पत्र—२९, आकार—९ × ६३/४ इंच, पंक्ति(प्रति पृष्ठ)—१३; परिमाण (अनुष्टुप्)—५६६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८५=१८२८ ई०। प्राप्तिस्थान—पं० लक्ष्मीनारायण जी वैद्य, ग्राम—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ श्री लक्ष्मी जी सहाइ ॥ मास यंतं जगद्भाशा नत्वा धास्वंत भव्ययं ॥ क्रियते काशि नाथेन शीघ्र वोधाय संग्रहः रोहिण्यत्तर रे वत्थो मूलं स्याति मृगो मघा ॥ अनुराधा च हस्तश्च विवाहे मंगल प्रदाः ॥ २ ॥ इति विवाह नक्षत्राणि ॥ माघे धनवती कन्या फाल्गुने शुभाग भवेत् ॥ वैशाखेच तथा ज्येष्ठे यत्युरत्यंत वल्लभा ॥ ३ ॥

अंत—कार्तिक की अमावस इतवार मंगलवार सनीचर जो होइ आयुष्मान योग स्वाति नक्षत्र जो होइ तो राजा पशु की क्षय होई इति दीपावली फलं × × × अतीचारे गते सौमे क्रूरे वक्रत्व मागते हाहाकार जगत्सर्वे रुंड मुंडंच जायते ।। ७२ ।। इति श्री काशीनाथ कृतौ सीघ बोध चतुर्थ प्रकरनं संम्पूर्ण समाप्तं संवत् १८८५ मिती द्वतीय असाढ़ शुक्ल ११ भौमे लिखितं मिश्र वाहि मध्ये भगवान दास श्रीराम श्री श्री ।

विषय—शीघ्र बोध की टीका ।

संख्या ३७ बी. शीघ्रबोध की टीका, रचयिता—भगवानदास (बाह, अगरा), पत्र—१७, आकार—१०½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३५७, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० कैलाशपति जी तैनगुरिया पुरोहित, ग्राम—बिजौली, डाकघर—बाह, जिला—आगरा ।

आदि—[पृ० १ से ११ तक लुप्त] च द्वादशो च दिवाकरै विवाह तो वरो मृत्युं माप्नोतत्र संसय । ४३ । टीका । आठें होइ चौथें होइ द्वादश कैपै वारेंह होइ सूर्य होइ तौं विवाह के विसें में मृत्यु जानियें मृत्यु प्राप्ति होइ जामें संसे नही × × × । ४३ जन्म कों होइ द्वितीये वा के ये दूसरे होय पंच में कैये पाचें होइ सप्त में कैये सातें होय दिवानाथ कैये नौंये सूर्य होइ पूजादि के पाणि पीडन विवाह करें । ४४ । एकादश कैपें ग्यारहें तृतीये वाकैयें तीसरे षष्टेवा कैथै क्षठे दसमें पिवाकै दसमें होइ जेवर कौं शुभ कैये जे विवाह के विसें दिन नायक सूर्य हें सों सुभहें जानियें ।

अंत—स्वांति विसें और सतिभिषानि सें वेध जानियें चित्रन सों ओझ पूर्वाभाद्र पदनि सें वेध जानियें जेजोवध है सो वर्जनीक जानियें कोविद जो पंडित हैं सों कहते हैं × × × । टीका । रविकैपै सूर्य को वेध लगे तो विधवा होइ । कुजकैयें मंगल कों वेध लगे तो कुल की क्षय होइ बुध कों वेध लगें तो वंध्या होइ गुरुकैयें बृहस्पति कों वेध लगें तो अवजी होइ । ७३ । मूल अपुत्र शुक्र वेधे च शौरें चांडी च दुषितौ परपुरपर तारा है । कै तौ स्वक्षंद चारिणी । ७४ ।

विषय—काशीनाथ रचित शीघ्रबोध की टीका ।

संख्या ३८. पोथी नासकेत, रचयिता—भगवती दास 'विप्र', पत्र—५२, आकार—१० × ७½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०५, रूप—प्राचीन, लिपि—फारसी, रचनाकाल—सं० १६८८ = १६३१ ई०, लिपिकाल—सं० १९१६ = १८५९ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबू शिवकुमार प्लीडर, स्थान—लखीमपुर, डाकघर—लखीमपुर, जिला—खीरी ।

आदि—पोथी नास केत ।। श्री गनेशायनमः श्री गति पति हैं मति कर दाता । जेहि सुमरे सब पाप निपाता ।। एक दन्त करि शंकर लीना । संतन सदा अभय पद दीना ।। सुर नर मुनि गधर्व मनावे । निर्भर सुमिरत तोवर पावैं ।। सिर सिन्दुर गज वदन विराजा । क्षुद्र घंटिका सुंदर वाजा ।। भुजा चारि सोभित तनुसुंदर । वाहन जात विराजत उर उर ।। कर फरसा अंकुस ध्वज सोहै । गान करत सुंदर सुर मोहै ।। दोहा—मन मोदक दे पुरुप ही । सिद्धि बोध भय लेहि । नास केत गुन वरनौं । जे मति अक्षर देहि ।।

अंत—नास केत संस्कृत जो सुनैं। निस भाषा छाया लै गिनै॥ यहि कर मन अपमान न कीजै। सहज सुभाव मान कछु लीजै॥ मानहु वदरी वरस किदारा। शिव मथि पूजा जल धारा॥ गंगा महा त्रिवेनी कीन्हा। गौएँ सहस दान तहँ दीन्हा॥ काशी परसि गया हुइ आई। पितृ तृप्ति कै श्राद्ध दिवाई॥ पोहकर पुनि कीन्हे असनान। गहन समय कुल क्षेत्र प्रमाना॥ हरिद्वार हरि गाय मनाई। सब तीरथ मन गरम छिराई॥ अमिथा फल पुनि पावहिं सोई। नास केतु श्रद्धा सुनि जोई॥ दोहा—नासकेत अमृत कथा। सुनहि सो होय हुलास। पापविवर्जित सुनहि से। कत भगवती दास॥ इति श्री गरुड़ पुराणे नास केत कथा प्रसंग सकल···सावन वदी १३ संवत १९१६। वन्दे खाम वन्दा रामनारायण कानूनगो परगना काकोरी हस्वईमाम पं० महानन्द दुवे साकिन मैनासी इलाका रामकोट···

विषय—(१) पृ० १ से ६ तक—मंगलाचरण भूमिका तथा कवि परिचय ग्रन्थ निर्माण कालः—सम्वत् सोलह सै अट्ठासी। जेठ मास द्वितीया प्रकासी। शुक्ल पक्ष औ सोमक बारा। मृगसिर नखत कीन्ह उपचारा॥ सन्त भक्ति करि सेवा। हरिचरनन की आस। नासकेत गुन गावहीं। विप्र भगौती दास॥ प्रारंभिक कथा॥

(२) पृ० ७ से १२ तक—चन्द्रावत का वनवास वर्णन
(३) पृ० १२ से १५ तक—उद्दालक सुत का वृत पालन।
(४) ,, १६ ,, २३ ,,—उद्दालक मुनि वा चन्द्रावति विवाह
(५) ,, २४ ,, २७ ,,—नासकेतु का यमपुरी गमन
(६) ,, २७ ,, ३० ,,—नास केतु का मातापिता से मिलना
(७) ,, ३१ ,, ३४ ,,—यमपुरी वर्णन
(८) ,, ३५ ,, ३६ ,,—पापीजन वर्णन
(९) ,, ३६ ,, ३७ ,,—कर्मबखान
(१०) ,, ३७ ,, ३८ ,,—धर्म न्याय वर्णन
(११) ,, ३८ ,, ३९ ,,—जमका भय वर्णन
(१२) ,, ४० ,, ४१ ,,—राजा यम तथा अज्ञान प्रसंग
(१३) ,, ४२ ,, ४४ ,,—पूर्वद्वार दिशि वर्णन
(१४) ,, ४४ ,, ४५ ,,—असन खोह वर्णन।
(१५) ,, ४५ ,, ४५ ,,—धर्म विज्ञान
(१६) ,, ४५ ,, ४६ ,,—यममार्ग विस्तार
(१७) ,, ४६ ,, ४९ ,,—राजा जनक बखान
(१८) ,, ४९ ,, ५२ ,,—ग्रन्थ समाप्ति

संख्या ३९ ए. दर्शन कथा, रचयिता—भारामल्ल, पत्र—३३, आकार—१०¾ × ८½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—९९०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रघुनाथ प्रसाद जी जैन, ग्राम—नहटौली, डाकघर—फंतरी, जिला—आगरा।

आदि—अथ दर्सन कथा लिख्यते—चौपाई। रिषभ नाथ जिन मन में तोय, अजर अमर वह दीजे मोय। अति तजनेश्वर वंदन करौं कर्म कलंक छिन में परि हरो। वंदौ सम्भव जिनके पाँय, अभिनन्दन सुनियै मन लाय। सुमति जिने सनसे करि जोर, भव फांसी जिन डारी तोर। वन्दो परन प्रभु पायँ, जाके सुमिरत पाप नसाय। नमोसि पारस नाथ जिनेश जाकें सुमिरत कटत कलेश। वन्दो चन्द प्रभु जिन देव इन्द्र नरेन्द्र करे नित सेव। बुध दन्त शीतल जिन राय, नमो श्री आ शंजिनेश्वर पाय। नाम पून्य महाराज तुसार, भवदधि तारण तरन जहाज। वन्दो विमल नाम के पांय, तातों जन्म जरा मिटि जाय। नमहुं अन्त जिनेश्वर पायं, सुमिरत कटे कर्म दुख हाय। धर्म नाथ वदो सुखकार, भवदीध पार उतारन हार।

अंत—दर्सन भ्रष्ट महा सुख पावै, यह भव सुष पावै। और कहां लौ कविजन भाषैं, बहु दुप भोगि यही जन साषैं। दरसन कथा जंह पूरन भई भारा मल्ल प्रगट करि कही। भूल चूक अक्षिर जु होइ पंडित सुद्ध करौ सब कोई। मैं मति हीन जु हो अधिकार, छमियो बुधिजन सब सिरदार पढ़े सुनै नर जो मन लाइ जन्म २ के पातक जाइ। दुख दलिद सब जाइ नसाइ जो यह कथा सुनै मन लाइ। पुत्र कलित्र बढ़े परिवार जो यह कथा सुनै नर नारि। इति श्री दर्शन कथा संपूर्ण। मिती आश्वनि सुदी १ ॥ संवत ॥ १९३६ ॥ शुभं भवेत् लिखितं लाला छदामीलाल अटेर के। श्री श्री।

विषय—भगवान तीर्थंकरों के दर्शनों का फल।

संख्या ३९ बी. मुक्तावली व्रत की कथा, रचयिता—भारामल्ल जैन, कागज—देशी, पत्र—४०, आकार—६ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३२ = १७७५ ई०, लिपिकाल—सं० १८५५ = १७९८ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा खरगीराम पुजारी, स्थान—अलीगंज, डाकघर—अलीगंज, जिला—एटा।

आदि—श्री सतिरामायनमः ॥ अथ मुक्तावली व्रत की कथा लिख्यते ॥ रिषिभ नाथ के पद नमौ नाभिराय कुल दीप। मुक्तावलि व्रत की कथा कहौं सुनौ भव जीव ॥ चौ०—जंवू दीप सुदरसन मेर—लवनो दधि ताको रहो घेरि ॥ मगध देश देशन परधान। तामधि राज ग्रह सुभ थान ॥ राज करै जहं श्रेनिक राय। धर्म वंत सवको सुख दाय ॥ चाग्रह नारि चलेना सती। धर्म कर्म साधन गुणवती ॥ इक दिन सेमा सर्ण महवीर। आयो विपुला चल परधीर ॥ सुनि नृप रोम चित तन भयो। परियन सहित सु वंदन गयो ॥ पूजा करि बैठो सुख पाय। जुग कर जोरि सु अरज कराय ॥ हे प्रभु मुक्तावलि व्रत कहौ। कौन कन्यो कहा फल लहौ ॥ तब गौतम वोले हरषाय। सुनो कथा मुक्तावलिराय ॥ जाही जंबू दीप मझार। भरत क्षेत्र दकि वन दिसि सार। अंग देस सो है रमनीक। रथ जू चक्र वीलपुर ठीक ॥ नगर मध्य ब्राह्मण एक बसे। नाम सोम समति सु लसै ॥

अत—श्रीधर राय तहां राजंत। ताके सुत उपज्यो गुन वंत ॥ नाम पदम रथ पंडित दयो। एक दिवस वन क्रीड़न गयो ॥ गुफा मांहिं मुनिवर एक देखि। वंदन करि सुनि धर्म विसेखि ॥ पुनि पूंछे मुनिवर सो सोई। तुमते और वड़ो प्रभु कोई ॥ तब रिषि वोले हे सुत सुनो वांस पूज्य सवके गुरु भुनौ ॥ यह सुनि धर्म विषै चितु दयो। समो सर्ण जिन वर के गयो ॥ नमस्कार करि दिच्छा लई। तप वल मन धर पदवी लई ॥ अष्ट कर्म या विधि पर

जारि । पहुंचो सिवपुर सिद्धि मझार ॥ देखौ भवि व्रत के परभाव । राज भोग करि सिव तिय पाव ॥ जो नर नारि करै वृत सार । सुख संपति पावै भव पार ॥ भाव सहित सो सिव सुख लहै । सखई भारा मल यह कहै ॥ दोहरा—लाभ तीनि वस एक धरि संवत भादौं मास सुक्ल पंचमी वार सुभ करी कथा परकास ॥ इति श्रीमुक्तावली व्रत की कथा संपूर्ण समाप्तः ॥

विषय—मुक्तावली व्रत कथा में मुक्तावलि राय का हाल वर्णन है ॥

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता भारा मल जैन धर्मावलम्बी थे। निर्माण काल संवत् १८३२ वि० और लिपिकाल संवत् १८५५ वि० है। इसको इस प्रकार वर्णन किया गया है—जो नर नारि करै व्रत सार। सुख संपति पावै भवपार ॥ भाव सहित सो सिव सुख लहै। सखई भारामल यौं कहै ॥ निर्माण काल का दोहा इस प्रकार है—लाभ तीन वसु एक धरि संवत भादव मास। शुक्ल पंचमी बार शुभ करी कथा पर कास ॥ संवत् १९३२ वि० लिपिकाल संवत् १८५५ वि० है।

संख्या ४० ए. जुगल सत, रचयिता—भट्टाचार्य (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—५४, आकार—१२ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००, रूप—बहुत प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३६ वि०, लिपिकाल—सं० १९३६ वि०, प्राप्तिस्थान—अद्वैतचरण जी गोस्वामी, स्थान—घेरा श्रीराधारमण जी, वृंदावन, डाकघर—वृंदावन, जिला—मथुरा।

आदि—श्री राधारमण छप्पै कल्पविटप श्रीभट प्रगट कलिकल्मष दुष दूरिकर जेनह आवै शरन तापत्र पतिन की हरहीं। तत्‌दरसी जे होंय हस्त जा मस्तक धरंही गुन निधि रसिक प्रवीन भक्ति दसधाकौ अगर। राधाकृष्ण स्वरूपललित लीला रस सागर कृपा दृष्टि संतन सुखद भक्त भूप दुजवंसवर कल्पविटप श्री भट प्रभैगट कलिकलाष दुष दूरिकर। अथ आदि वाणी श्री जुगल सतलिष्यते तत्र प्रथम सिद्धान्त सुख पद आभा सज्जत राग दारो आभास दोहा। चरण कमल की दीजिये सेवा सहज रसाल। वर जायो मोहि जानिकै चेरो मदन गोपाल पद इक ताला मदन गोपाल शरंन तेरी आयो चरण कमल को दीजियै चेरो करि रापौ घरनापै। टेक धनि धनि मात पिता सुत बंधू धनि जननी जिन गोद षिलायौ। धनि धनि चरन चलत तीरथ को धनि गुर जनहरिनाम सुनायो। जेन रविमुख भये गोए गोविंद सौजन्य अनेक महा दुख पायौ।

अंत—राग विहागटी आभास दोहा। जिंहिं छिनकी बलि जाऊं सखि तिहि छिन वारि लेत लाल विहारी। सामरे गौर विहार निहेत पदताल चंपक गै श्री विहारनि गौर विहारी लाल सामरे जिहि छिन की बलि जाऊं सखी री परत तिहि छिन भावरे टेक कंचन कनि मरकत मनि प्रगटे बसनि नंद गामरे विधना रचित न होय जै श्रीभट राधा मोहन नामरे १।१९।१०० संपूर्ण। दोहा। श्री भट प्रगट जुगल सत पठै कंठ त्रय काल। जुगल केलि अवलोक तैं मिटै विषम जंजाल ।१। राग छप्पै एक दोहरा आदि अंतमधिमान। सत पत आभासनि सहित जुगल शतहद परिमान २ छप्पैं रूप रसिक सब संत जन अनुमोदन याकौ करौ दशपद हैं सिद्धान्त वीस लीला पद सेवा सुख सोलह सहिज सुख एक बीसहद आठ सुरन राक उनत बीस उछव सुखल होय श्री जुत भटदैव रच्यौ सत जुगल सो कहिये निज भजन भाव रुचितें कीये इते भेद वेडर धरै। रूप रसिक सब संत जन अनुमोदन याकौ करौ। इति श्री मतभट्टाचार्य्य विरचितं जुगल सत आदि वाणी संपूर्ण।

विषय—आदि वाणी श्री जुगल सत; बृजलीला के पद; सेवा सुखपद, सुरत सुख पद, उत्साह सुख पद संपूर्ण ग्रंथ में श्री राधाकृष्ण की उपासना, विहार आदि वर्णन है।

संख्या—४१. आदित्य कथा, रचयिता—भाऊ कवि, कागज—सादा, पत्र—८, आकार—५½ × ४ इंच पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८ परिमाण (अनुष्टुप्)—६४ रूप—पुराना। लिपि—नागरी, रचनाकाल—१६७८ वि०, प्राप्तिस्थान—श्री० पं० शिवकुमार जी उपाध्याय, स्थान—बाह, डाकघर बाह, जिला—आगरा।

प्रारम्भ—श्री सुष दाइक पास जिनेस। प्रनवौं भव्य पयोज दिनेस॥ सुमिरौं सारद पद अरविंद॥ दिनकर व्रत प्रगट्यौ सुषकंद॥ मति सागर तहाँ सेठ सुजान। ताकों भूप करै सनमान॥ तासु प्रिया गुन सुन्दर नाम। सातपुत्र ताकैं अभिराम॥ २॥ षट सुत भोग करैं परनीत। वाल रूप गुन पर सुभनीत॥ सहस कोटि सोभित जिनयाम। आयौ जती अंति षंडित काम॥ ३॥ सुनि मुनि आगम हर्षित भए। सबै लोग वंदन कौ गए॥ गुरुवानी सुनिकै गुनवती। सेठनि तवहि करी वीनती॥ ४॥

अंत—मात पिता के परसे पाँइ। अति आनन्द हीयै न समाय॥ विघट्यौ विधना विषम वियोग। भयो सकल परजन संजोग॥ २३॥ आठ सात सोरह के अंक। रवि दिन कथा रची अकलंक॥ थोरे ग्रंथ अर्थ विस्तार। कन्यो काव्य ठयो गुरु सार॥ २४॥ यह व्रत जो वर नारी करै। सो कब हूँ नहीं दुर्गत परै॥ भाव सहित श्रवनन सुव लैह। भानु कीर्ति मुनिवर यौं कहै॥ २५॥ इति श्री इतिवार कथा संपूरानि॥

विषयः—आदित्य वार के व्रत का विधान तथा उसके फलादि का वर्णन।

संख्या ४२. गोपाल सहस्रनाम सटीक, रचयिता—भवानीप्रसाद ब्राह्मण (नौपुरा, आगरा), कागज—बाँसी कागज, पत्र—२८, आकार—१३ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—११७६, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२१ = १८६३ ई०, लिपिकाल—सं० १९२१ = १८६४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० गोविंद राज, ग्राम—हिंगोट खिरिया, डाकघर—बमरौली कटरा, जिला—आगरा।

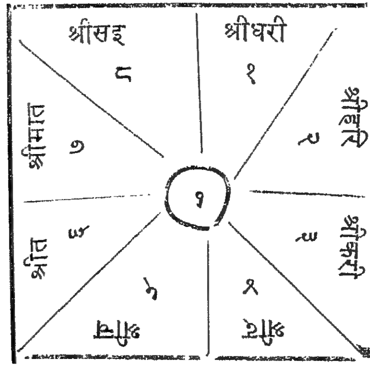
आदि—श्री रामचंद्रायन्मः। कैलास पर्वत है सर्व पर्वतन कै विषै महा सुन्दर है। सहस्र जोजन उचोहे सहस्र जोजन विस्तार है तलै सो नाको है। बीच में नील मणि को है। अपरतै रूपा को है। सोना के बीच नील कमल है। नील मणि कै बीच श्वेत कमल है। तहां सिद्ध मुनीश्वर रिषीश्वर तप करत हैं। श्री कृष्ण को ध्यान करत हैं। तहां अनेक प्रसु हैं। पंक्षी हैं। गंधर्व गान करत है। अपछरा निरत करत है। पार जात कल्प वृछन को बहै। ता वन में काम धेनु चरत हैं। श्लोक—ॐ कैलाशी शिखरे रम्ये गौरी पूछति शंकरं। ब्रह्मांड खिल नाथ स्तवं सृष्टि संहार कारकः॥ १॥ त्वमेव पूज्य से लोके ब्रह्मा विष्णु सुरादिभिः नित्यं पठति देवेश कस्य स्तोत्र महेश्वरः॥ २॥

अंत—श्री वृन्दावन चंद्रस्य प्रसादता सर्व माप्नुयात॥ यहे हे पुस्तकं देवी पूजि तं दैव निष्ठिति॥ ३१॥ न मारी न दुर्भिक्ष तोप स्वर्ग भय क्वचित॥ सर्पादि भूत पक्षा द्यान स्यंते नात्र संसयः॥ ३२॥ हे पार्वती जाके ग्रह में सहस्र नाम की पोथी है तहां कहु असुभ वस्तु प्राप्त न होइ कबहू मही पड़े नहीं भूत प्रेत कोउ डर नहीं होय नहि एक सहस्र नाम सुनिकैं दूर भजि जाहि यामे संसय नहीं॥३१॥ हे पार्वती जो या सहस्र नाम को पठै है सुनै हैं पूजै हैं अस जोक घर में सहस्र नाम की पोथी रह है तहां गोपालजी सदा वसैहै॥३२॥

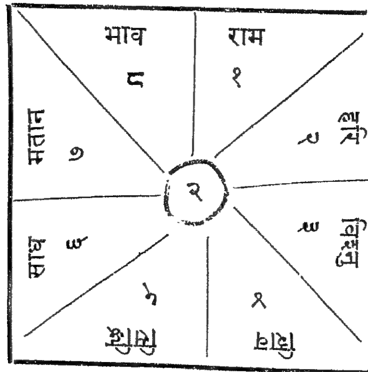
विषय—कृष्ण जी के एक हजार नामों का उल्लेख उनकी स्तुति में कहे गये हैं। यह संस्कृत के गोपाल सहस्र नाम का भाषानुवाद है।

संख्या ४३. चक्र केवली, रचयिता—भेदीराम (आगरा), कागज—देशी, पत्र—१७५, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४९७५, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१६ = १८५९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० भूदेव, ग्राम—सेवापुर, डाकघर—वेसवा, जिला—कानपुर।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ चक्र केवली पंडित भेदीराम आगरा निवासी कृत लिख्यते ॥



गर्भणी के गर्भ है वा नहीं इसकी परीक्षा का चक्र है।



गर्भ रहने व न रहने की परीक्षा का चक्र है ॥

अंत—बया पालने की परीक्षा

१—शौकीनों का काम है तुम्हें दीखै सो करो ॥
२—इसे मत पालो बिल्ली मारेगी पाप होगा ॥
३—बया पालो तो सीखी साखी पालो ॥

४—यह काम बुरा है तुम्हारे कुटुम्ब में नहीं हुआ ॥
५—जो पालने का शौक है तो सुवा पाल ॥
६—क्या जरूर पालो पर सिखाने पड़ेगी ॥
७—इस काम में तुझे दस आदमी नाम धरेंगे ॥
८—क्या मत पाल तुझे जीव की छाजकारी नहीं है ।

इति श्री चक्र केवली चारौ खंड संपूर्णम् शुभम् लिखा वैनी राम सनाढ्य ब्राह्मण आगरा निवासी वलका वस्ती मार्ग शीर्ष कृष्ण नौमी संवत् १९१६ वि० ॥

विषय—इस ग्रन्थ में नाना प्रकार के प्रश्न और उनके शुभाशुभ उत्तर लिखे हैं ।

संख्या ४३ बी. सालिंगा सदा वृक्ष, रचयिता—भेदीराम, कागज—देशी, पत्र—४०, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६०, रूप—प्राचीन, पद्य-गद्य । लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०, प्राप्ति-स्थान—लाला दीपचंद सोनी, ग्राम—शाहपुर मुद्रक, डाकघर—अलीगढ़, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ सालिंगा सदा वृक्ष भेदी राम कृत लिख्यते ॥ दोहा ॥ गौरी श्री गणेश जी सारद मातु मनाय । वाल मीक नारद सुमिरि गुरु चरनन चितु लाय ॥ कवि कोविद गुणजन सकल तिनको सीस नवाय । सालिंगा सदा वृक्ष कौ कथा कहू समझाय ॥ वारता ॥ कहते हैं कि एक दिन गुरु गोरख नाथ चन्द्र नगर में जा निकसे और वहां डेरा वाग में किया कि एक चेला राम गिरि उनकी भिक्षा करने वस्ती में गया परन्तु नगर में उसका सत्कार किसी ने न किया तब एक कुम्हांर कुम्हांरी जो वड़े धर्माता थे उन्होंने राम गिरि को वुलाय के भिक्षा दी । तब राम गिरि को गुस्सा आया कि ऐसा नगर उजड़े तो अच्छा है । अपने मन में विचार उस कुम्हांर से कह दिया कि तुम इस नगर के निकस जाव नहीं तो भला न होगा यह सुनते ही कुम्हांर कुम्हरी दोनों जने चल दिये ॥

अंत—वादशाह का लड़का वोला ऐसी वात क्या है जो अपने प्राण तजोगी उसने कहा कि ऐ शाहजादा जिसके साथ मैं आई हूं उसने मेरा धर्म विगाड़ दिया है अब तुम्हारे पास क्यों रहू इससे वेहतर है कि उसको मरवाय डालो तब मैं अपने प्राण रखू और सिपाही से यह कहला भेजा कि तुमको शाहजादा मरवाना चाहता है इस प्रकार दोनों में अदावट डलवा दी कि पहिले राजा के कुंवर को उसी सिपाही ने मार डाला और सालिंगा ने खबर सुनकर उसी वक्त कैद में डाल दिया और फांसी लगवा दिया दोनों की जान ले सालिंगा मर्दाना भेष कर बाहर निकली और तबेले से दो घोड़े ले और दोनों चढ़के सलै वृक्ष समेत चले अब चलते चलते वहीं पहुंचे जहां सलै वृक्ष की राजधानी थी । वहां पहुंच बड़े आनन्द से रहने लगे ईश्वर अपनी कृपा करै और इस कमवख्त इश्क से वचावै । सत्य है किसी कवि ने कहा है वह ध्यान देकर सुनो ॥ दोहा ॥ पुरुषन ते दूनो छुधा वुद्धि चौगुनी होय । काम सहस हो चौगुनो यहि विधि कहि सब कोय ॥ उसके आने की खबर नगर में सुन कर सब आनन्द मनाने लगे सालिंगा पूरन भयो दोहा अति रस खान । रसिकन के हित यह रच्यो भेदी राम सुजान ॥ इति श्री सालिंगा सदा वृक्ष ग्रन्थ संपूर्ण समाप्तः ॥ दो०—जैसी प्रति हमको मिली वैसी लिखी वनाय ॥ भूल चूक जो होय सो गुणिजन लेहु वनाय ॥ मिती वैसाद सुदी दशमी संवत् १९३० वि० । लिखी रामदास वैश्य नर पुर निवासी ॥

विषय—इसमें सालिंगा और सदा वृक्ष की कहानी वर्णित है।

संख्या ४४. काव्यनिर्णय, रचयिता—भिखारीदास (प्रतापगढ़), पत्र—२४४, आकार—११ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८०६, रूप—प्राचीन, लिपि - नागरी, रचनाकाल—सं० १८०३ = १७४८ ई०, लिपिकाल—सं० १८९९ = १८४२ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० गुरुदेव बक्श सिंह, ग्राम—अइमा मऊ, डाकघर—गोसाईंगंज, जिला—लखनऊ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ काव्य निर्णय लिष्यते ॥ छप्पय। एक रदन द्वै मातु त्रिचष चौ बाँहुँ पंच कर। षट आनन वर वन्धु सेव्य ससार्चि भाल धर ॥ अष्ट सिद्धि नव निद्धि प्रदानि दश दिसि जस विस्तर। रुद्र एगाहह सुपद द्वादशादित्य वोज वर। जो त्रिदश वृंद वंदित चरण चौदह विद्यनि आदि गुरु। तिहि दास पंच दसहू तिथिन धरिय षोड़सी ध्यान उर ॥ १ ॥ दोहा ॥ वूझि सो चन्द्रा लोक अरु। काव्य प्रकास सु ग्रन्थ। समुझि सुरुचि भाषा कियो। लै औरौ कवि पंथ ॥ ५ ॥ वही वात सिगरी कहे उलथो होत एकांक। कवि निज उक्ति वनायहू। रहैं सुकल्पित संक ॥ ६ ॥ याते दुहु मिश्रित संज्यो छमि हैं कवि अपराधु। वन्यो अन वन्यो वूझि कै सोधि लेंहिगे साधु ॥ ७ ॥

अंत—रामको दास कहावै सवै जगदास है रावरो दास निनारो। भारी भरोसो हिये सव ऊपर ह्वै है मनोरथ सिद्धि हमारो ॥ राम अदेवन के कुल घाले भये रहे देवनि कौ रख वारो दारिद घालिवो दीन को पालिवो राम के नाम है काम तिहारो ॥४५॥ क्यों लिये राम के नाम तुम्हैं कहा कागद वैसो पुनीत भैयाऊ। आखर आछे अनूठ तिहारे क्यौं झूठी जुवान सो हौ रह लाऊ ॥ दास जो पावनता भरे पुंज हौ मोह भरे हिय में क्यों वसाऊ। काम है मेरो तमाम इहै सब जामतिहारो गुलास कहाऊ ॥ ४६ ॥ जानौं न भक्ति न ध्यान की शक्ति हौं दास अनाथ के अनाथ के स्वामी जू। माँगों इतो वर दीन दयानिधि दीनता मेरी चितै भये हासि जू ॥ ज्यों चिच नेह को ब्योर है अंतर जामी निरंतर नामिजू। मो रसना को रुचै रसना तजि राम नमामि नमामि नमामि जू ॥ ४७ ॥ इति श्री कलाधर कलाधर वंशावतेश श्रीमन्महाराज कुमार वावू हिन्दु पति विरचिते काव्य निर्नये सदोषे दोपोद्धार वर्नन नाम पंच विंसमोल्लासः ॥ २५ ॥ माघ मासे कृष्णपक्षे सप्तम्यां रविवासरे लिखित मिदं पुस्तकं जवाहर लाल कायस्थेन श्री लालविहारी पठनार्थंवे संवत १८८९ ॥ श्रीराधा कृष्णाय नमो नमः ॥ श्री राम ॥

विषय—(१) पृ० १ से ५ तक—मंगला चरण कवि आश्रय दाता तथा ग्रन्थ निर्माण कालादि वर्णनः—

जगत विदित उदयद्रिलौं। अर वर देश अनूप। रविलौं पृथ्वीपति उदित। तहां सोमकुल भूप सोदर ताको ज्ञान निधि। हिन्दू पति शुभ नाम। जिन्हकी सेवा सो लह्यो। दास सकल सुख धाम ॥ अट्ठारह सै तीन ही संवत्। आश्वनि मास। ग्रन्थ काव्य निर्णय रच्यौ। विजै दशौं दिन दास काव्य प्रयोजन भाषा लक्षण (प्रथम उल्लास)।

(२) पृ० ५ से १७ तक—पदार्थ निर्णय। अर्थ की शक्तियां। लक्षणाभेद व्यंजना शक्ति निर्णय। प्रस्ताव विशेष। देश विशेष वर्णन काल विशेषादि वर्णन (द्वि० उ०)।

(३) पृ० १७ से ३६ तक—(तृ० उ०) अलंकार मूल तथा रसांकादि वर्णन।
(४) ,, ३६ से ४२ तक—(च० उ०) रसभाव के अपरांगादि।
(५-६) ,, ४३ से ५७ तक—(पं० उ०) ध्वनि भेदादि वर्णन।
(७) ,, ५८ ,, ६३ ,,—(स० उ०) गुणी भूत व्यंगादि वर्णन।
(८) ,, ६३ ,, ७९ ,,—(अ० उ०) उपमादि अलंकार वर्णन।
(९) ,, ७९ ,, ८८ ,,—(न० उ०) उत्प्रेक्षादि अलंकार।
(१०) ,, ८८ ,, ९७ ,,—(द० उ०) व्यतिरेकादि अलंकार।
(११) ,, ९७ ,, १०६ ,,—(ए० उ०) अत्युक्ति आदि अलंकार।
(१२) ,, १०६ ,, ११७ ,,—(द्वा० उ०) अन्योत्यादि अलंकार।
(१३) ,, ११८ ,, १२६ ,,—(तृ० द० उ०) विरुद्धादि अलंकार।
(१४) ,, १२७ ,, १३५ ,,—(च० द० उ०) गुण दोष विशेषा अलंकार।
(१५) ,, १३५ ,, १४६ ,,—(प० उ०) समाधि अलंकार।
(१६) ,, १४७ ,, १५३ ,,—(ख० द० उ०) सूक्ष्मालंकार वर्णन।
(१७) ,, १५३ ,, १६६ ,,—(स० द० उ०) स्वभावोक्ति अलंकार।
(१८) ,, १६७ ,, १७० ,,—(अ० द० उ०) दीपिकादि अलंकार।
(१९) ,, १७० ,, १८० ,,—(न० द० उ०) गुण निर्णयादि अलंकार वर्णन।
(२०) ,, १८० ,, १८६ ,,—(वि० उ०) श्लेषादि अलंकार।
(२१) ,, १८७ ,, २०७ ,,—(ए० वि० उ०) चित्र काव्य।
(२२) ,, २०७ ,, २११ ,,—(द्वा० वि० उ०) तुकभेद वर्णन।
(२३) ,, २११ ,, २२७ ,,—(त्र० वि० उ०) शब्दार्थ दोष वर्णन।
(२४) ,, २२७ ,, २३२ ,,—(च० वि० उ०) अदोष दोष वर्णन।
(२५) ,, २३३ ,, २४४ ,,—(पं० वि० उ०) सदोषे दोषोद्धार वर्णन।

टिप्पणी—यह प्रतापगढ़ के सोमवंशी राजा पृथ्वीसिंह के अनुज बाबू हिन्दूपति के आश्रित रहनेवाले प्रसिद्ध कवि भिखारीदास जी, उपनाम, "दास" की रचना है। इसमें प्रायः काव्य के सभी अंगों का वर्णन है। और चन्द्रालोक तथा काव्य प्रकाशादि ग्रन्थों के आधार पर लिखा गया है।

संख्या ४५. सर्वज्ञ बावनी, रचयिता—भीषजन, कागज—देशी। पत्र—१६, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४०, पूर्ण, रूप - प्राचीन। लिपि—नागरी। रचनाकाल—१६८३ वि०। लिपिकाल—१८६६ वि०। प्राप्तिस्थान—लाला माधौराम, स्थान—पोरिया, डाकघर—लखनौ, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ सर्वज्ञ बावनी भीषाजन कृत लिख्यते॥ ॐकार अपार आदि अनादि जगतगुरु। अति अनंद सुष कंद द्वंद दुष हरन सेव सुरे सकल राग सरवज्ञ अगनि अंग अमित अति। दीन बंधु सुष सिंधु ग्रंथ कर प्रेम विमल मति॥ भुत्र नाइक नाहक तिमपुर बुद्धि बांक वरनन करन। वदत भीष जन जग विदित नमो देव असरन सरन॥ १॥ नमो परम गुरचरन सरन तिहि करन बुधि वर अति प्रवीन गुन लीन दीन

पर परम दया कर। गीत गुनग्य वुधि षगि अग्य मति कहा बषानं॥ दधि अथाह को थाह तिर पावे गीह जानं।' वह अति ऊद्यम अगम कहि उद्यम उपजै त्रिया कछु वषानत भीष जन संत दास सत गुर किया॥ २॥

अंत—संवत सोलह सै वरष जव हुते तियासी पोस मास पष सेत हेत दिन पूरन मासी। सुभ नक्षत्र गुन कह्यौ धरयौ अक्षर जो आरिज। कथ्यो भीष जन ग्याति जाति दिज कुल आचारिज॥ सव संतन सूं वीनती औगुन मोह निवारि यह मिलते सु मिलते रहो अनमिल अंक सवारियहु॥ हरिगुन सकल संजुक्त अगम अति वषानू। सर्व अंग गुनद कथी वावनी विवधि परि॥ संतदास सतगुरु प्रसाद भाष्यो रसना ग्यान कर परम वानि जोटै जुगुल सुनन भषि विनती कही इति श्री भीषजन की वावनी ग्रंथ कवित संपूरन भवत इति लिपि कृत राम दास स्व पठनार्थ संवत् १८९६ वि०

विषय—इसमें ईश्वर व गुरु आदि की भक्ति उससे भवसागर पार होने आदि का वर्णन किया है।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता 'भीषजन' साधू थे। निर्माण काल संवत् १६८३ वि० है। इसको इस प्रकार लिखा है संवत् सोलह सै वर्ष जव हुते तियासी। पौष मास पष सेत हेत दिन पूरन मासी सुभ नक्षत्र गुन कह्यो धरयो अक्षर जो आरिज। कथ्ये। भीष जन ज्ञाति जाति द्विज कुल आचारिज। लिपिकाल संवत् १८९६ वि० है ये जाति के ब्राह्मण आचार्य थे।

संख्या ४६ ए. श्रीमद्भागवत (प्रथम स्कंध), रचयिता—भीष्म, पत्र—३५, आकार—१३ × ७$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९२ = १८३५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० ज्वालाप्रसाद वैद्य, ग्राम—सेमरा, डाकघर—सेमरा, जिला—आगरा।

आदि श्री गणेशाय नमः। श्री गुरुभ्योनमः। श्री सरस्वत्यै नमः। श्री राधा कृष्णाभ्यो नमः। श्री छप्पै छंद। परम ब्रह्म चित धारि परम आनंद रुप रस, करिगुर कौं उर ध्यान ज्ञान की जोति होति द्रस। संतनि कौं कर जोरि रहौं'''आगे। तन मन वचन प्रनाम कर भय भ्रम सब भागें। इहि भांति मंगला चरन करि भीषम लघुता भाषियाँ, पंडित प्रवीन मुनि जन गुनी कृपा आपनी राषियों। १। कर्ता की संपदा वर्ननं॥ प्रथम अणंतानंद जानि द्वितीय भावानंद। त्रतीय सुरसुरी नंद चतुर्थ जानि सुवानंद। पंचम नर हरि नंद षष्टम पद्मावति जानों, धना सप्त रैदास अष्टा सैना नव मांनौ। दिगसूर सुरा एकादश कवीर द्वादश पीपागुण लये। श्री रामनंद भागवत भुव सिषि द्वादश असकंद भए। २। भाष्य कर्ता वंश वर्णन—भए कवीर कृपातें नीर जगमध्य उजागर। नीरद यासों जंत्र लोक भए गुन के सागर। जंत्र लोक के ध्यान भए पीतंबर दासा। रामदास गुरध्यान धरि जग भए प्रगासा। पुनि दयानंद जिनके भये, हरीदास लिष तासु कौं, प्रभु स्याम दास उर नित वसौं सुभीषम चेरो तासु कौ।

अंत—मरण समय हमकौ यह ठाहीं, और भांति दरसन कहु नाहीं। जोगेस्वरनिके गुरु तुम आही, उतर प्रश्न को कहो अब गाई। मरन समै को जतनु है सोही, सो विचारि

कहाँ अब सोही । तुमसे पुरिष प्रेहिंने के प्रेहा, गो दोहण सम रहतण येहा । ४५ । दोहा । अैसे मधुरे वैन कहि प्रदान कियौ नरनाह, तब बोले सुक मुनि गुनी, भीस्म हृदय उछाह । ४६ । इति श्री मद्भागवते महा पुराणे प्रथम स्कंधे भीष्मकृत भाषा नाम एकोन विंसाध्याय । १४ । श्री रस्तु । कल्यान मस्तु । मिति आश्वनि शुक्ल चतुर्थ्यां शनि वारायां दसषत देवी प्रसाद ब्राह्मण वासी सेमरा को । जहसे पुस्तकं दया तहसं लिष्यतै भयो । यदि शुद्धं वशुद्धं वमम दोषो न दीयते । संवत् १८९२ । शाके शालिवाहन १७५७ प्रथम स्कंध । श्री ।

विषय—भागवत प्रथम स्कंध का पद्यानुवाद ।

विशेष ज्ञातव्य—कवि ने अपनी संप्रदा और गुरु प्रणाली स्पष्ट रूप से दी है ।

संख्या ४६ बी. भागवत (प्रथम अध्याय), रचयिता—भीष्म, कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—१०$\frac{1}{2}$ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—८१६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—प० जयदेव मिश्र, ग्राम—सरेंधी, डाकघर—जगनेर, तह०—खेरागढ़, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गनेशाय नमः श्री सरस्वतै नमः । श्री गुरुभ्यौन्मः ॥ श्री राम । प्रथम मंगला चरण ॥ छप्पय ॥ पार ब्रह्मा चित्त धरि, परम आनन्द रूप रस । धरि गुरु कौ उर ध्यान ज्ञान की ज्योति होमि अस । सन्तन को कर जोरि हो सन्मुख तिनके । तनमन वचन प्रनाम करत कप भूम सब भागे । इहि भांति मंगला चरण करि भीष्म लघुता भाखियो । पंडित प्रवीन मुनि जन गुनी कृपा, आपनी राखियो ।

अंत—दोहा—अैसे मधुरे वर्ण कहि प्रश्न कीयो नर नाहि । तब बोले शुक मनीगण, भीम सचै उछाहि । इति श्री भागवत महा पुराणे श्री सूत सनकादि संवादे श्री सुक आगमनोनाम प्रथम अध्याय सम्पूर्ण ॥ संवत १९०० वैसाख वदी ३० शनि वासरे दसखत जवाहर मिसुर के सुभ अस्थान सरैंधी ।

विषय—प्रथम अध्याय भागवत का अनुवाद ।

टिप्पणी—"कर्ता सम्प्रदा वर्णन" "प्रथम अनन्ता नन्द जानि । द्वतीय भावानन्द सुर सुरानन्द चतुर्थ है सुखानन्द । पंचम नर हरि नन्द षष्टम पद्य वजानौ । धना सप्त रैदास अष्ट सेना नव मानौ । दिगसुर सुर एकादस कबीर द्वादस लीया गुण लरो । श्री रामानन्द भागवत भुव सिषि द्वादस स्कन्ध मरो ।" "भाषा कर्ता वंश वर्णन" भये कबीर कृपातें नीर जग में पीताम्बर, दास रामदास गुरु ध्यान, धारि जग भये प्रकास । पुनि दयानन्द जिनके भये हरीशा शिष्य तास को प्रभु स्याम दास उर तिन बस्यो । भीषम चेरे तेरे दास को । उपर्य्युक्त अशुद्ध तथा अस्पष्ट भाषा में कवि ने अपना परिचय दिया है ।

संख्या ४६ सी. भागवत (दशमस्कंध), रचयिता—भीष्म, कागज—बाँसी, पत्र—१९८, आकार—१० X ५$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६२५१, खंडित । रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१८ = १८६१ ई०,

प्राप्तिस्थान—श्री जानकी प्रसाद जी, स्थान—बमरौली कटरा, डाकघर—बमरौली कटरा, जिला—आगरा।

आदि—देव वचन की वानी होई। अपने कांन सुनै सब कोई। वाहनी टेर कहे समुझाई। सुन हो वचन कंसादिक राई। ताहि चल्यो परो चावन साथा। तेरी मीच तासु के हाथा॥ आटौ गर्भ देवकी होई महावली जाने सब कोई। सो मेरी बैरी अब तर्यो। असुर दैत्य दानव संहर्यो। तेरी कंस भई मन भंगा। ताहि चल्यो पहोचावन संगा॥ सुनके कंस उर भर हाभयो। देवी को झोंटा जाय पकर्यो। गहि रथ पर से लई उतारी। काटि खड्क नै भरै हकारी। पीसत दसन भई रिसि धजी लीन्ह मीच तवै आपनी। करू उवाच। साषी। ज्योंकर वृहत उखारि कै, ठारै जर तौ खोई॥ पड़े गये पाले नहीं। सो कहा कल फूल फल होई।

अंत—दाने दैत्य असुर संघार। जे मनसा करिके अवतार। आठौ गर्भ अधिकारी भरा। प्रभु ने जन्म ता कारन टारा। तिनि सेवा ऐसी अनुसरी। तिनकी प्रभु ने रछया करी। ते तब संग कृष्ण के फिरै। भोगन संग लीला विस्तरै। जैसी हरि की कीरति जानी। तोरथ तैसे अधिक बखानी। सत्र मित्र को वे गति देहीं ताते नर श्रवनन मुनि लेही। अलख अगोचर है अविनासी। धरि धरि याही ज्योति घघासी। देवै सदा धर्म्म रखवारे। सर्वा चर दुष मेटन हारे। श्री भगवंत कथा जो कहाये। श्रवन सुनत परम सुख भये। कीजो दोस चरित्र अघ हरना, गोपीनाथ तुम्हारे सरना। हरन करन सबही के नाथा। जन बृन्दावन रे हाथा। इति श्री भागवते पुराणे दसमस्कन्ध कृष्ण चरित्रे। अंन्तरध्यान सम्पूर्ण शुभ॥ मिती वैसाख कृष्ण ७ सं० १९१८ श्री श्री।

विषय—कृष्ण भगवान का चरित्र दिया गया है।

संख्या ४६ डी. भागवत दशम भाषा, रचयिता—भीष्म, पत्र—८४, आकार—$10\frac{1}{2} \times 6\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८५६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९५ = १८३८ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० हरीनारायण, ग्राम—चंदवार, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्री राधावल्लभोजयति॥ श्रीपरमात्मने नमः॥ अथ दस्मस्कंध भागवत् लिष्यते॥ छपय छंद॥ परमब्रह्म को ध्यान हृदयमय कीजियै। सत गुरुकौ शीश समर्पि सुदीजिऐं॥ गोकुल मथुरा आदि द्वारिका कीं कथा। है हरि चरित्र अगाध पै वरनौं मति जथा॥ नष शिष सों पुनिय कथा है कौ ऐसो वरने सवै। कहि भीपम गुरु परताप सौभावै अरथ वरनौं अवै॥ राजो वाच॥ रवि शशि वंस विस्तार करि गायौ उभय वंश नृप-चरित सुनायौ॥ १॥धर्मात्मा सील जदुराजा। ताके बंस कों कहौ समाजा॥ तिहि कुल कृष्ण लियो अवतारा। कृष्ण कथा अव करौ विस्तारा॥ जादु के वंस औतरे हरी। कहा कहा लीला तिहि करी॥ सो हमसों विस्तारि कैं कही। जगभावन हरि के गुण गहौ॥३॥ पसु घाती विनु हरि कथा। को विराम ह्वै है पशु जथा। मुक्ति भये गावत चितलाई। भव औषद मन श्रवन सुहाई॥४॥ कौरौं दल सागर सागर की नाहीं। भीष्म द्रोण अहि जिहि माहीं॥ ताहि तरे पुरुषा जु

हमारे गोसुत खोज मनौ उर धारे ॥ हरिके चरण जिहाजहि कीन्हैं। सहजै पार भये रस भीनैं ॥ ५ ॥ द्रोण पुत्र कर अस्त्र जव लीनौ। गर्भ माझ माहि महा दुःख दीनौं। जवनी कुक्षि गत रक्ष्या करी। चक्र चलाय पीर सव हरी ॥ ६ ॥

अंत—धृतराष्ट्र उवाच। जो तुम कही ज्ञान धन वानी। यथा जोग्य सत्य है विनानी ॥ २५ ॥ तथापि मोकौं रुचै नहीं ऐसी। मरण समैं अमृत पुनि तैं सैं ॥ २६ ॥ जदु कुलमश्रीकृष्ण अघहारण। आये भूमिकौं भार उतारण ॥ २७ ॥ जो अपनी माया करि ईश। सकल विश्व को रचै जगदीस ॥ २८ ॥ शुक उवाच ॥ ऐसे सुनी धृतराष्ट्र की वानी। करि प्रणाम उठि चले विनानी ॥ वायु वेग रथ पै चढ़ि धाये। फिरि अक्रूर मधुपुरी आये ॥ २९ ॥ श्री हरि के पग परसि कैं। नमन करी अक्रूर ॥ दोहा ॥ समाचार धृतराष्ट्र के। भीषम कहे भर पूरा ॥ ३० ॥ इति श्रीमद्भागवते महापुराणे दशम स्कन्धे भीपमकृत भाषायां पाण्डवा सासनो नाम उनचासमोध्यायः ॥ ४९ ॥ इति दशम पूर्वार्द्ध समाप्तोयं संवत् १८९५ शाके १७६० मिति श्रावण शुक्ल सप्तमि ७ शनौ लिष्यते मिश्र मोतीलाल द्विज देव भक्त मध्ये चंदवार यमुना तटे श्री रामो जयति ॥

विषय—भागवत दशम स्कन्ध का भाषा पद्यानुवाद—पूर्वार्द्ध (हरिचरित्र से लेकर अक्रूर के व्रज आगमन तक का वर्णन)।

संख्या ४६ ई. भागवत दशम स्कंध, रचयिता—भीष्म, पत्र—४०, आकार—१२$\frac{३}{४}$ × २$\frac{१}{२}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०; परिमाण (अनुष्टुप्)—१८००, खंडित। रूप—बहुत प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—ईश्वरी प्रसाद शर्मा, ग्राम—सेमरा, डाकघर—खंडौली, जिला—आगरा।

आदि—सनकादिक के श्राप ते भये असुर परचंड। जज्ञ धर्म वृत मेटि के जीति लीनि नवषंड। चौपाई। तब ब्रह्मा की सेवा कीन्ही, ब्रह्मा हर्ष आशिका दीन्ही। घर बाहर मरौ नहिं मारा, काटै कटै जरै नहिं जारा। शीत घाम व्यापै नहिं शीसा, निर्भै होउ अवनि छत्तीसा। ऐशो वल हरनाकुश भयौ त्रिभुवन जीति तासु लै गयौ। सुर अरु असुर सकल भुव पाला। छाडि लेक निज भए बेहाला। धर्म जज्ञ नृप करै न कोई, महा प्रचंड पाप छिति होई। चारि पुत्र ताके परमाना, जेठो सुत प्रहलाद सुजाना। राजा मोह बहुत विधि कीन्हा, चारौ पुत्र पढ़ावन दीन्हा। संडा मत कह लियौ बुलाई, तुम प्रहलाद पढ़ावहु जाई। अति सुंदर सब राज कुमारा, पढ़िवे को आये चट सारा। शिव शिव लिखि पाटी पर दीन्हा, वांचत कुंवर महा दुष कीन्हा। शिव अक्षर सब मेटि कुमारा, पढ़िबे को आये चटसारा। लिषे कृष्ण जदुपति सुष दाता, हरि के चरन कमल मन राता। लिषि पांड़े कौ पाटी दीन्हा, वांचत विप्र महा रिस कीन्हा।

अंत—नष सिष से सिंगार करि, सवै सषी यक सारि। मंडप मैं ठाढ़ी भई, राजत राज कुमारि। चौपाई—सब मिलि गावत मंगल चारा, विधिवत सब सब कीन्हौ व्यौहारा। कुंवरि देषि सबही सुष माना, वरनत भाट विरुद अरुवाना। अरघ दे दुलिहिन पहुंचाई, सब बरात कौ डेरा कराई। तब बानासुर चौक झराए। मलया गिरि चंदन छिरकाये। मंडप

आए श्री जदुराई, इंद्र कुवर नृपति वलि भाई। चरन धोइ चरनोदक लीना, जीवन जन्म सुफल मम कीन्हा। गंधर्व गावै गुनी अपारा, बाजे बजै अनेक प्रकारा। दोहा। सिंहासन बैठारि कै, जथा जोग ज्योनार। गारी गावत नारि सब, जो जैसो व्योहार। चौ०-करि भोजन सब डेरन आए, भांवरि को दूलह पहुचाये। वहुत सषी दुलहिन तब गावा, अनुरूध कुंवर देषि सुष पावा। उषा दुलहिन मंडप ठाढ़ी, कनक वेलि रतनन षचि ठाढ़ी। ब्रह्मा वेद पढ़ै सुष चारी, बहु विधि सोगावै नर नारी। इंद्र सहित भूव पति...।

विषय—भागवत दशम (उत्तरार्द्ध) का पद्यानुवाद।

संख्या ४६ एफ. भागवत दशमस्कंध भाषा (उत्तरार्द्ध), रचयिता—भीष्म, पत्र—७२, आकार—१० × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३०४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल – स० १८९८ = १८४१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० हरीनारायण, ग्राम—चंदवार, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला आगरा।

आदि—शुक उवाच ॥ और सुणों श्री कृष्ण की कथा। जुरा संध सौं जुद्ध भयौ जथा ॥ हुती कंस कैं उभै पटरानी। अस्ति प्रास्ति जिहि नाम बखानी ॥ मरौ कंश अति भयौ दुष भारी। अपने पिता पै जाय पुकारी ॥ १ ॥ कृष्ण अनीति करी पुनि जितनी। विथा तात सौं कहि सब तितनी ॥ निज दुहिता विधवा जब देखी। भूपति ने मन में अव रेखी ॥ २ ॥ भूप कहि अवधौं कहा कीजै। निजु द्रव धरणी करि दीजै ॥ ३ ॥ तेईस अक्षौहणी वाहिणी नेरी। रैनी ही में जाय मथुरा घेरी ॥ भयो प्रभात जागे सव लोगा। लिषि विपरीत बढ्यो अति रोगा ॥ ५ ॥ श्री पति जू ने लषी यह वाता। आजु असुर दल करौं निपाता ॥ ६ ॥ हरि जू मनोरथ किये मन भाये। नभ तै उतरि उभय रथ आये ॥ ७ ॥ सहित सारथि इन्द्र ने पठाये। परि पूर्ण सव शस्त्र मन भाए ॥ ८ ॥ तिन्हैं देखि कैं श्री हरिराई। वलि सो वैंन वोले अकुलाई ॥ ९ ॥ द्वै रथ देष्यौ शस्त्र परि पूर्ण। सुर पति भेजे आपके हजूर ॥ १० ॥ जरासंध कौ हनौं क्षिणि मांही। क्षिण ईक ढील कीजियति नाहीं ॥ यहि कहि पहिरे कवच है सोऊ। चढ़े रथनि पर निकसे दोऊ ॥ ११ ॥

अंत—स्वर्गवासी देवता है तेते ॥ प्रगट भयो जउ वंश में तेते ॥ ४४ ॥ ताते वंश बढ्यौ अति भारी ॥ को गनि सकै तास नर नारी ॥ ४५ ॥ सेस महेस विरंचि विनानी ॥ संख्या करण असमर्थ सव ज्ञानी ॥ ४६ ॥ पूरण ब्रह्म कृष्ण है जोऊ ॥ पुनि संख्या करि सकै न सोऊ ॥ ४७ ॥ चित दै सीषै सुनै जो कोई ॥ हरि पद पंकज पावै सोई ॥ ४८ ॥ दिन प्रति सुनौ कृष्ण की कथा ॥ मन मैं ध्यान करै पुनि तथथा ॥ ४९ ॥ जम की फासि कटै छिण माही ॥ फिरि संसार में आवत नाहीं ॥ ५० ॥ प्रवर दसम लीला यह गाई ॥ नर नारिन को सदा सुखदाई ॥ ५१ ॥ दोहा ॥ भीषम दशम स्कंध की कथा सुनौ चित लाय। भव सागर तरि पलक में अमर लोक कौं जाय ॥ ५२ ॥ इति श्री मद्भागवत् महापुराणे पारम हंस संहितायां वैयासिक्यां अष्टादस सहस्रा दशम स्कन्धे भीषम कृत भाषायां लीला चरित वर्णनो नाम नव तितमो ध्यायः ॥ ९० ॥ लीषतं श्री मिश्र पूजारी मोतीलाल मध्ये चंदवार श्री जमुना तटे संवत् १८९८ शाके १७६३ शुभं मस्तूय दर्श पुस्तकं दृष्टा तादृशं

लिखिते मया यदि शुद्धानि शुद्धं गन मम दोषो न दीयते ॥ अथ संवत १८९८ शाके १७६३ अश्वन कृष्ण पक्षे तिथि ५ चन्द्रे पुस्तकऽस्कंध दशम पत्रा संख्या १०७२ ॥

विषय—भागवत दशम स्कंध का पद्यानुवाद (उत्तरार्द्ध) जरासिन्धु की मथुरा पर चढ़ाई से लेकर द्विज बालकों के लाने तथा अन्य लीला चरित्र वर्णन ॥

संख्या ४७ ए. शिवपारवती संवाद, रचयिता—भोलानाथ, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३०, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—ठा० खेजन सिंह, डाकघर—सिकंदरा राऊ, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ शिव पारवती संवाद लिख्यते ॥ दोहा ॥ अमर निकर दोउ सेन कर देखन समर अपार । चढ़ि चढ़ि निज निज वाहनन आये गगन मझार ॥

चौ०—आये यक्ष गुह्य गंधर्वा । किन्नरादि विद्याधर सर्वा ॥ हंसा रूढ़ विधाता आये । ऐरावत पर इन्द्र सुहाये ॥ मकरा रूढ़ देव वारीशा । वली वर्द सोहत गौरीशा ॥ सिंह सोहि गिरि राज कुमारी । जगत जननि त्रिपुरारि पियारी ॥ रामचन्द्र मुखचन्द्र निहारी । जयति जयति सुर वृन्द उचारी ॥ वाद्य वजाय विविधि विधि सुन्दर । करहिं गान विद्याधर किन्नर ॥ आनंद पूरि रहेउ चहुं ओरी । पर क्रोधित गिरि राज किशोरी ॥ दो०—कहन लगीं तव शंभु सों मातुलानि करि पान । व्याल अंग भूषित किये भरमत फिरत मशान ॥

अंत—दो०—शंभु भवानी विवाद सुनि वरपि सुमन सुर वृन्द । रामण मरण प्रतीत करि नृतहिं सहित आनंद ॥ युद्ध राम रामण लखन शोभित देव अकाश । शिव गौरी संवाद यह वरणेउ कवि कृत वास ॥ इति श्री शिव पारवती संवाद संपूर्ण समाप्तः ॥

विषय—शिव पारवती संवाद लिखा है ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता कृत्तिवास (बंगाली) थे । इसका अनुवाद हिन्दी भाषा में भोलानाथ सुत कालीप्रसन्नने किया है । लिपिकाल और रचनाकाल का पता नहीं है ।

संख्या ४७ बी. जोगीलीला, रचयिता—भोलानाथ (जहानगंज, फरुखाबाद), पत्र—४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामदीन गौड़, ग्राम—सिरहपुरा, डाकघर—सिरहपुरा, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ जोगी लीला लिख्यते ॥ रंगत वसीकरन ॥ टेक ॥ अद्भुत लीला ब्रज लगे कृष्ण दर्शाने । धरि जोगी रूप अनूप चले वरसाने ॥ करि मणि माणिक की भस्म वदन में मेली । कानों में मुद्रा पड़ी वदन में सेली ॥ मृग छाला वाला जोग सकल अलवेली । तोवी तुलसी की माल हाथ में लैली ॥ दिलवर के दर पर चले हैं अलख जगाने । धरि योगी रूप अनूप चले वरसाने ॥ १ ॥ दोहरफ नाग के पलटि महा मुनि ज्ञानी । धारा धारा का ध्यान धुरंधर ध्यानी ॥ विद्याधर वेद पुरान कंठ गुन खानी ॥ कहै भूत भविष्यत वर्तमान मृदुवानी ॥ शशि रवि जिनके तप तेज निरखि सकुचाने ॥ धरि

जोगी रूप अनूप चले बरसाने ॥ २ ॥ वृषभान भूप के द्वार महा मुनि चलके। आसन जिन किया यकेल जोग तन झलके ॥ लोचन विशाल सम तुल्य कमल के दलके। खोलैं मूंदैं मुनि वार वार जुग पलकैं ॥ दरसन के जिनके लगे लोग अति आने। धरि जोगी रूप अनूप चले वरसाने ॥ ३ ॥ जोगी ने अपनी जोग जुक्ति फैलाई ॥ बैठे मुनि साधि समाधि भीरि जुरि आई ॥ राधे ने जोगी खबर श्रवन सुनि पाई। दरशन को कीरति सुता सखिन संग धाई ॥ श्यामा लखि साधी मौन कपट बावा ने। धरि जोगी रूप अनूप चले वरसाने ॥ ४ ॥

अंत—ललिता कहै जोगीनाथ वचन कछु वोलो। तुम तौ दर दर पर काज करन को डोलो ॥ औरन सो अति वतरात सुधारस घोलौ। प्यारी जी करत प्रनाम पलक पट खोलौ ॥ दै तीन ताल मुनि किया विसर्जन ध्याने ॥ धरि योगी रूप अनूप चले वरसाने ॥५॥ पूजैं मुनिके पद कमल सकल व्रजनारी ॥ मिसिरी माखन धरि भेंट करैं लाचारी ॥ पूछैं राधे शशि वदन सुनौ ब्रह्मचारी ॥ है कौन जाति क्या नाम जगत हितकारी ॥ है कौन अष्ट का ध्यान हमैं बतलाने ॥ धरि जोगी रूप अनूप चले वरसानें ॥ ६ ॥ है जोगेश्वर मम नाम तपोधनधारी। सरवस योगिन को जाति फिरै दिन चारी ॥ है अचल लोक मम नाम भक्ति है प्यारी ॥ पुनि दो अक्षर का मंत्र परम शुभ कारी ॥ हर दम दिलवर का हमें विमल गुन गाने ॥ धरि जोगी रूप अनूप चले वरसाने ॥ ७ ॥ राधे रानी का हाथ नाथ ने देखा। फल अष्ट सिद्धि नव निद्धि करम सुभ रेखा ॥ प्यारी वर सुन्दर स्याम भाग में लेखा ॥ धावैं विरंचि सुर सनकादिक शिव शेषा ॥ हौ भाग वान सब भांति रूप गुन खाने। धरि जोगी रूप अनूप चले वर्साने ॥ ८ ॥ राधे कहैं मुनि कुछ करामात दिखरावो। जिनसे हमसे अति नेह उन्हें दरसाओ ॥ मुनि कहैं सखी धरि ध्यान समाधि लगाओ। मैं पढ़ों मंत्र तुम दरस प्रान पति पाओ ॥ दृग मूंदि धरौ उर ध्यान सखिन स्यामा ने ॥ धरि जोगी रूप अनूप चले वर्साने ॥ ९ ॥ प्रभु पलट रूप पुनि नटवर भेष धरो है ॥ मकराकृत कुंडल श्रवन मुकुट सिर सोहै ॥ शशि वदन कमल दल नैन सैन मन मोहै ॥ उर में अनूप भृगु चरन चिन्ह दर सोहै ॥ छवि निरखि श्याम घन कोटि काम सरमाने। धरि जोगी रूप अनूप चले वरसाने ॥ १० ॥ धरिं अधर वांसुरी वसी करन झनकारी तिहुं लोक चतुर्दश भुवन मोहनी डारी ॥ राधे राधे धुनि गाय रागिनी सारी ॥ भेंटे पुनि श्यामा श्याम सखिन सुख भारी ॥ वदिश गनेश कहैं भोलानाथ वखाने। धरि जोगी रूप अनूप चले वर्साने ॥ ११ ॥ इति श्री जोगी लीला संपूर्ण समाप्तः लिखा श्याम लाल कायस्थ भोजीपुरा संवत् १९३० वि० श्रावणवदीचौथ ॥

विषय—श्री कृष्णचन्द्र जी ने जोगी का रूप धारण कर राधिका जी को छलने के लिये उनके निकट जाकर वार्तालाप किया राधिका जी ने उनको जोगी ही समझा पर कई कारणों से उन्हों ने श्री कृष्ण जी को पहिचान लिया और उनसे क्षमा प्रार्थना की ॥

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता लाला भोलानाथ जहान गंज जिला फरुखाबाद निवासी थे। जाति के श्रीवास्तव कायस्थ थे। ये संवत् १९०५ में वर्तमान थे। लिपि-काल संवत् १९३० वि० है ॥

संख्या ४७ सी. राधाकृष्ण लीला, रचयिता—भोलानाथ (जहानागंज, फरुखाबाद), कागज—देशी, पत्र—४४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—७३२, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३५ = १८७८ ई०, प्राप्तिस्थान – लाला रामनारायण, ग्राम—भीष्मपुर, डाकघर—जलेसर, जिला—एटा।

आदि—भजन—मेरे मन हरि का नाम संभारो ॥ तीरथ वरत संग संतन का निस दिन नाम पुकारो ॥ दंभ कपट पाखंड विसारौ सो साहिब को प्यारो ॥ मेरे मन हरि० ॥ भजिये राम रमा पति शंकर गिरिजा नाम उदारो। सुत परिवार मित्र स्वारथ के को जम पुर रख वारो ॥ मेरे मन० ॥ गणिका वधिक अजामिल गज नाम लेत निरवारो ॥ ध्रुव को धाम दियो करुणा निधि कूबरि आप सम्हारो ॥ मेरे मन० ॥ कंस मारि नृप उग्र सेन किये काल जनम कियो छारो ॥ भोलानाथ विनय सुनौ कवि जी तुम विन कौन हमारो ॥ मेरे मन० ॥

अंत—वारह मासा ॥ विरह ॥ श्याम सखी मधुपुर को सिधारे को मेरी विपति हरै सजनी रे ॥ मास असाढ़ घटा घिरि आई उमड़ि घुमड़ि घन गरजत है री ॥ दादुर मोर पपीहा वोलैं कोयल कूक रही वन में री ॥१॥ सावन श्याम सखी घर नाहीं रिमिकि झिमिक झर लाग रही री ॥ घर घर में सखि झूलैं हिन्डोला गावैं राग मलार अहोरी ॥ २ ॥ भादौं मास रैन अंधियारी दामिनि दमक रही घन में री ॥ सूनी सेज डसै मानो नागिनि विरह व्यथा तन घालत है री ॥ ३ ॥ क्वांर मास कल नाहीं परत है तल फति मीन नीर विन हीरी ॥ सो गति श्याम विना सखि हमरी दारुण दुख सहो जात नहीं री ॥ ४ ॥ कातिक कामिनि काग उड़ावै विकल भई कल नाहीं परै री ॥ निस दिन याद रहै उन हरि की हरि विन दुख मेरो कौन हरै री ॥ ५ ॥ अगहन अगर अंदेश सखी री पाती न आई कोई मधुवन सेरी ॥ ठाढ़ी मैं हेरों वाट पिया की तन मन की सुधि नाहीं रहो री ॥ ६ ॥ पूस मास अति सीत परति है मीत विना कल नाहीं परै री ॥ पाला जोर मोर तन घालै निस दिन विकल रहौं सजनीरी। ७ माघ मास जव लाग्यो सखी री रितु वसंत की आई गई री ॥ विन पी कैसे वसंत मनाऊ पी विछुरन सह जात नहीं री ॥ ८ ॥ फागुन अविर गुलाल उड़त है ढफ मृदंग धुनि वाजि रहीरी ॥ विन वालम सखी हमैं न सुहावे कैसे कटैं दिन औ रजनी री ॥ ९ ॥ चैत वियोगिन भेष कियो है लट छुट काय फिरौं वैरी री ॥ मैं जोगिन रन वन फिरूं ढूंढ़त नहिं पाय श्याम वृन्दावन में री ॥ १० ॥ मास वैसाख धूप अति लागै विरह अगिन तन जारत है री ॥ निस दिन व्याकुल फिरति वियोगिन वीते मास अवधि गुजरी री ॥ ११ ॥ जेठ मास पूरन भई आसा पिय आवन की मैं जो सुनी री ॥ भोला नाथ सखी पी पाये फूलन सेज विछाय रही री ॥ श्याम सखी मधुपुर को सिधारे को मोरी विपति हरै सजनी री ॥ इति श्री वारह मासा विरह संपूर्ण समाप्तः ॥ लिषतं गंगा राम वैश्य कातिक दीप मालिका अमावश्या संवत् १९३५ वि० ॥

विषय—राधाकृष्ण की लीला लावनी, भजन, वारामासी, मलार आदि में लिखी है ॥

संख्या ४७ डी. वारहमासा विरह का, रचयिता—भोलानाथ (जहांनगंज, फरुखाबाद), कागज—सफेद, पत्र—४, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा नरायणाश्रम, कुटी—मोहनपुर, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ वारह मासा विरह का लिख्यते ॥ टेक ॥ श्याम सखी मधुपुर को सिधारे को मेरी विपत हरै सजनी री ॥ आषाढ़—मास असाढ़ घटा घिरि आई उमड़ि घुमड़ि घन गरजत हैं री ॥ दादुल मोर पपीहा वोलै कोयल कूक रही वन में री। स्याम० ॥ १ ॥ सवन—सावन स्याम सखी घर नाहीं रिमिकि झिमिक झर लाग रही री ॥ घर घर में सखी झूलें हिन्डोला गावैं राग मलार अहोरी ॥ २ ॥ स्याम ॥ भादौं—भादों मास रैन अधियारी दामिनि दमक रही घन में री ॥ सूनी सेज डसै मानौ नागिनि विरह विथा तन घालति है री ॥ ३ ॥ श्याम ॥ क्वार—क्वांर मास कल नाहीं परति है तलफति मीन नीर विन ही री ॥ सो गति श्याम विना सखि हमरी दारुण दुख सहो जात नहीं री ॥ ४ ॥ कातिक—कातिक कामिनि काग उड़ावै विकल भई कल नाहीं परै री ॥ निस दिन याद रहै उन हरि की हरि विन दुख मेरे कौन हरै री ॥ ५ ॥ अगहन अगर अंदेशो सखी री पाती न आई कोई मधुवन सेरी ॥ ठाढ़ी मैं हेरों वाट पिया की तन मन की सुधि नाहीं रही री ॥ ६ ॥ श्याम० ॥

अंत—पूस—पूस मास अति सीत परति है मींत विना कल नाहीं परै री ॥ पाला जोर मोर तन घालै निस दिन विकल रहौं सजनी री ॥ ७ ॥ माघ—माघ मास जब लाग्यो सखी री रितु वसंत की आय गई री ॥ विन पी कैसे वसंत मनाऊं पी विधुरन सहि जात नहीं री ॥८॥ फागुन फागुन अविर गुलाल उड़त है डफ मृदंग धुनि वाज रही री विन वालम सखि हमैं ना सुहावैं कैसे कटै दिन औ रजनी री ॥९॥ चैत–चैत वियोगिन भेप कियो है लट छुटकाय फिरौं वौरी री ॥ मैं जोगिन रन वन फिरौं ढूंढ़त नहिं पाये श्याम वृन्दावन में री ॥ १० ॥ वैसाख—मास वैसाख धूप अति लागै विरह अगिन तन जारत है री ॥ निस दिन व्याकुल फिरति वियोगिनि वीते मास अवधि गुजरे री ॥ ११ ॥ जेठ—जेठ मास पूरन भई आसा पिय आवन की मैं जु सुनीरी ॥ भोलानाथ सखी पीपाये फूलन सेज विछाय रही री ॥ १२ ॥ स्याम सखी मधुपुर को सिधारे को मोरी विपति हरै सजनी री ॥ इति विरह का वारह मासा संपूर्णम् लिखा सिवदीन पांडे चैत संवत् १९३२ वि० ॥

विषय—श्री कृष्ण जी के चले जाने पर श्री राधिका जी का विरह वर्णन।

संख्या ४७ ई. पथरीगढ़ की लड़ाई मलिखान का व्याह, रचयिता—भोलानाथ (फतेगढ़), कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६२५, खंडित, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सन् १८५० ई०, लिपिकाल—सन् १८५६ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला गेंदनलाल, स्थान—सोरों, डाकघर—सोरों, जिला—एटा।

आदि—इतनी सुनिके रानी वोली हो वच्छराज के राजकुवांर मैं हूं व्याह करौं तेरे संग नहिं तो जहर खाय मरि जाऊं ॥ तुमहूं याद रखौ कुछ मेरी भूलि न जै औ

कुवांर ।। इतनी सुनिके मलिखे चलिये अरु घोड़ा पर बैठे जाय ॥ घोड़ा उड़ावो जव वागन से पहुंचे नगर महोवे आय ॥ उत में गज मोतिन चलि दीनों अपने महिलन को चलि जाय ॥ खट पाटी लै परी महल में अन्न जल दिया सब छोड़ ॥

अंत—लाज राख लई परमेश्वर ने पंजा धरौ गुसैयां जाय ।। फतह कराई जग दंवे ने मलिखे व्याह लाये करिवाय ॥ जैसे व्याह भयो मलिखे को भोलानाथ ने दीन्हों सुनाय ।। भूल चूक जो इसमें देखौ भाई लीजौ ताहि संम्हारि ॥ इति श्री पथरीगढ़ की लड़ाई मलिखान का व्याह संपूर्ण समाप्तः तारीख १० नवम्बर सन् १८५० ई० ॥

विषय—विसहन के राजा की पुत्री गजमोतिन और महोबे के राजा परिमाल के पोष्य बालक वीर मलिखान का विवाह वर्णन ॥

संख्या ४७ एफ. श्रीकृष्ण जी का वारहमासा, रचयिता—भोलानाथ (फरुखाबाद), पत्र—८, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई० । प्राप्तिस्थान—पं० रामदीन गौड़, ग्राम—सिरह पुरा, जिला—एटा ।

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ श्री कृष्ण जी का वारहमासा लिख्यते ।। असाढ़ घनघोर घुमड़ि असाढ़ आये मेघ आद्रन गरज हीं ॥ चहुंओर चातक वोल दादुर मोर कुहुक सुनाव हीं ॥ पापी पपीहा पिउ रटति अरु कोयल कूक मचाव हीं ।। सखि श्याम ऐस निठुर जियके मास असाढ़ न आवहीं ॥ १ ॥ सावन ॥ सावन में रिम झिम मेघ वरसैं जोर से झर लावही घर घर में सखियां सांवन गावैं अपने पिउ को रिझावहीं ॥ हम दुइ वियोगिन श्याम विन घर वार कछुना सुहावहीं ।। पीतम विना कल ना परै जिय कौन विधि समुझावहीं ॥ २ ।। ॥ भादौं ॥ भादौं अंधेरी रैनि सजनी जोर दमकै दामिनी ॥ श्री कृष्ण विन मेरी सेज सूनी देपि डरपै कामिनी ॥ काली घटा चहुं ओर छाई पी विना न सुहावनी ॥ सूनी अटारी सेज खाली पी विना मानौं नागिनी ॥ ३ ॥ क्वांर ।। क्वार लागे कांस फूले पंथ जल घट जावहीं ।। पाती न पठई श्याम ने अब कौन खवरि लै आवहीं ॥ पठवौं मैं काके हाथ पतियां कौन पिय को सुनावहीं ।। कुबरि सौति विलमाय राखे हाय हम दुख पावहीं ॥ ४ ॥

अंत—माघ—माघ लागे सुन सखी घर घर वसंत मनावहीं ॥ ओढ़े वसंती चीर सखियां अपने पी को रिझावहीं ॥ मालिन वसंत वनाय लाईं पी विना न सुहावहीं ॥ उन कूवरी सन स्याम रीझे दिल मेरा अकुलावहीं ॥ ८ ॥ फागुन ॥ फागुन में सखियाँ फाग खेलैं अविर धुंधि उड़ावहीं ।। पिचकारिया चलने लगीं केशर की कीच मचा वहीं ॥ डफ झांझ अरु मिरदंग वाजै फाग सखियां गावहीं ॥ हम पी विना मन मार वैठीं राग रंग व भावहीं ॥९ ॥ चैत चैत जोगिन भेष करिके ढूंढ़ने पिय को चली ॥ वन वीच जोगिन केश खोले ढूंढ़ती वन की गली ॥ सखि स्याम को नहिं खोज पाती विरह तन आगी जली ॥ मन मन वियोगिन सोच करती हाय किस्मत ना भली ॥ १० ॥ वैसाख ॥ वैसाष माधव मास लागा आस पी मिलने भई ॥ गरमी अधिक पड़ने लगी फूलन की सेज विछावहीं ।। सखि श्याम मेरे आमिलें तौ तन की तपति वुझावहीं ।। नहिं खाय विष मर जाउंगी सब सोच फिर

मिट जावई ॥ ११ ॥ जेठ ॥ जेठ में सखि स्याम आये सब विथा तनकी गई ॥ फूलों की सेज विछाय सोई खुशी मन कामिन हुई ॥ फूली न अंग समाय गोरी विरह दुख मिटि जावई ॥ यह कहत भोलानाथ हरि जस गावैं ते सुख पावईं ॥ इति श्री वारह मांसी श्री कृष्ण जी की संपूर्ण समाप्तः लिखा गंगा राम वानियां ॥ देवपुर निवासी ॥ मिति जेठ सुदी पूरन मासी संवत् १९३२ वि० ॥ राम राम राम

विषय—श्री कृष्ण जी के वियोग में राधा और गोपियों का विरह वर्णन ।

संख्या ४७ जी. शिव अस्तुति, रचयिता—भोलानाथ (जहांनागंज, फरुखाबाद), कागज—देशी, पत्र—४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३७, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामदीन गौड़, ग्राम—सिरहपुरा, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ शिव अस्तुति लिख्यते ॥ लावनी—भाल ससि चिताभस्म चोला । अगड़ बंम बंम बंम बंम भोला ॥ सीस पर सोहैं जिनके गंग । सुधा सें जाकी सरस तरंग ॥ विराजत शैल सुता अर्धंग । अंग में लपिटे अधिक भुजंग ॥ दो०—जटा मुकुट भृकुटी कुटिल लोचन लाल विशाल ॥ नील कंठ यज्ञो पवीत उर राजत माल कपाल ॥ संग में भरे भंग झोला । अगड़ बंम बंम बंम बंम भोला ॥ धौरि सोहै लिलाट चंदन । वदन दुति अमित प्रगट चंदन ॥ चतुर्भुज भक्तन भय भंजन । मदन मर्दन मुनि मन रंजन ॥

अंत—दो० शिव अस्तुति जो ध्यान धरि कहिहैं प्रेम लगाय ॥ ताके सकल मनोरथ ह्वै हैं कहि हैं गणपति राय ॥ भाल ससि चिता भस्म चोला । अगड़ बंम बंम बंम बंम भोला ॥ इति श्री भोलानाथ रचित शिव अस्तुति संपूर्ण शुभम् संवत् १९३२ वि० राम राम राम ॥

विषय—श्री शंकर जी की स्तुति वर्णन ।

संख्या ४७ एच. ख्याल संग्रह, रचयिता—भोलानाथ (जहानागंज, फरुखावाद), पत्र—२८, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४४, परिमाण (अनुष्टुप्)—७१०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवविहारी गौड़, ग्राम—जैतपुर, डाकघर—पिलवा, जिला—एटा ।

आदि—अथ ख्याल श्री कृष्ण राधिका का लिख्यते । जसोधा दुलरी तेरे कान्ह । लई मन मोहन मेरी जान ॥ मेरी दुलरी लाखन परमान । रतन जड़े कचन मोती खान ॥ चुराई मन मोहन ने आन । वहुत कुछ कियो मेरो नुकसान ॥ कृष्ण ने कियो मेरो अपमान । मांगते हमसे जोवन दान ॥ दो०—ग्वाल वाल डोलत लिये वेरि करैं अपमान । हम व्रज को वसिवो ही तजिहैं । जहां नहीं सनमान ॥ महरि सुन तेरो सुत नादान । लई मन मोहन मेरी जान ॥ जसोदा कहति सुनौ व्रज वाल । घरै आने देउ मदन गुपाल ॥ डाटिहौं मैं उनको ततकाल ।

अंत—माशूक जात वेवफा कहैं संसारी । फिर आशक तौ तड़फा करता हरवारी ॥ अव करो रहम मेरी हालत पर प्यारी ॥ नहिं मिलौ जान तो मरने की अब त्यारी ॥ कहते यह भोला नाथ लावनी ख्याली ॥ तिरछी चितवन की नोक कलेजे साली ॥ ४ ॥ इति श्री

ख्याल लावनी संग्रह भोलानाथ कृत संपूर्ण समाप्तः लिखा भाऊ लाल वैश्य ओमर कटियारी जिला अलीगढ़ तिथि पौष सुदी पंचमी संवत् १९३२ वि० राम राम राम

विषय—दुलरी चोरी चली जाने के कारण श्री कृष्ण राधिका का झगड़ा।

संख्या ४७ आई. बारहमासा लावनी, रचयिता—भोलानाथ (जहानगंज, फतेहगढ़), पत्र—४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान -ठा० विश्रामसिंह, ग्राम—रहीमपुर, डाकघर—बारहद्वारी, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ भोलानाथ कृत वारह मासा लावनी लिख्यते ॥ टेक ॥ मैं तलफति हों दिन रैन चैन नहिं आई ॥ मेरे उठति विरह की आगि सही ना जाई ॥ आया असाढ़ घन घोर घटा रहि छाई। दादुर बोल सखि लगत महादुख दाई ॥ काली कोयल की कूक हूक जिय माई ॥ मोरे उठत विरह की हूक पिया घर नाहीं ॥ सखि बीते मास असाढ़ खबर ना पाई ॥ मेरे उठत विरह की आगि सहीना जाई ॥ १ ॥

अंत—लगि रही आस पीतम की जेठ अब आया ॥ पीतम मिलने की खुशी मनौ मिल माया ॥ आ मिला सनम विरहिन ने पलंग खिचाया ॥ फूलौं की सेज बिछाय. किया मन भाया ॥ यह कहते भोलानाथ मगन मन माई ॥ मेरे उठत विरह की आगि सही ना जाई ॥ १२ ॥ इति श्री बारह मासा लावनी संपूर्ण संवत् १९३६ वि० लिखा भोलैया बनियां, साझी खेड़ा ॥

विषय – विरह वर्णन।

संख्या ४८. सुदामा चरित्र, रचयिता—भूधरदास, पत्र—१२०, आकार—११ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८; परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८०, रूप—प्राचीन, लिपि—कैथी, लिपिकाल—सन् १२३९ (?) प्राप्तिस्थान—पं० रामनारायण, ग्राम—अमौसी, डाकघर—विजनौर, जिला—लखनऊ।

आदि—श्री गनेश जी सहाए नमः ॥ श्री रामजी सहाए नमः श्री पोथी सुदामा चरित्र ॥ औचकई प्रभु शयनमो। टेर सुनाएवो वैन। जागु जागु रे भूधरा। चन्द्र चूड़ पद रैन ॥ चंद्र चूड़ पद जपन कर। जग सपने को ऐन। और कछुक तुव कान धरु। सुधा सर-समा वैन ॥ कलऊ के कवि गन वहुत। वरनौ चरित अनंत। कहा लै सुरस वषानौ। सभै सलोनो संत ॥ तुअ चरित्र मो मित्र को। करु प्रसिद्ध संसार। जासु वाहुरी प्रेम ते। हम कीन्ह्यों उद्धार ॥ उटेउ ततछन सब्द सुनि। भग के रन गुन ग्यान। प्रथम एई उच्चार भौ। गुन पूरन ब्रह्म समान ॥

अंत—॥ छप्पै ३६० ॥ कृश्न कृपा ते दंपति अचल राज वसुधा करै। सुरपुर नरपुर नागपुर तिहुँ पुर नृप कर भरै ॥ दोऊ मूरति के धर्म ते मधुकर लगे मया करन। सप्त दीप नव षंड भरि सदा वृत्त लागे परन ॥ हरि चरित्र हरि मित्र सुनि कह नियरै कवि कौन। जाइ दियौ विधि सहस मुख सोउ समुझि कै मौन ॥छप्पै ३६१॥ महा कीन रवि कृष्ण जस जदपि न कों वापै शारे। जदपि कीन रहुके कहै ग्यान भवन उजिआरे ॥ अस विचारि कहै भूधरा कछुक सुजस वरनन कियो। मानो मधुप समुद्र ते रती भरि जल को छाई लियो ॥ प्रभु

सहस्र शिव विश्नु कुशमा कशुरि पंगु हश । संपूरन पोथी वनी दीन उधारन प्रेमरस ॥ इति श्री पोथी सुदामा चरित्र सम्पूर्णम् ता० १० माह माघे सं० १२३९ सन मुलकी

विषय—(१) पृ० १ से पृ० ३० तक—मंगला चरण एवम् प्रस्तावना और वंदनाएँ । सुदामा की दीन दसा का वर्णन । सुदामा तथा उनकी पतिव्रता स्त्री का संवाद । स्त्री का अपने पति को कृष्ण के पास भेजने का आग्रह और उसका सशंक हो पत्नी को समझाना सुदामा का वहुरी लेकर कृष्ण के पास जाना और भेंट को तंदुल लेना । (२) पृ० ३१—६२ तक—सुदामा का स्त्री को बुरा भला कहते मार्ग लेना । सुदामा का नगारादि के ठाठ को देख कर स्तम्भित हो जाना । कृष्ण की ड्योढ़ी पर उसका पहुँचना । कृष्ण द्वारा उनका हार्दिक स्वागत । पाद प्रक्षालनादि के पश्चात् कृष्ण द्वारा अपने मित्र सुदामा की बड़ाई पूर्वक कथा एवम् हास्य विनोद वर्णन । कृष्ण का वहुरी लेकर खाना । लक्ष्मी आदि का शंकित होना । मित्र का विदा होना ॥ (३) पृ० ६३—१२० तक—सुदामा का संकल्प विकल्प करते निज नगर को गमन । कृष्ण की कृपा से सर्व सुष संपत्ति का होना और उसको देख कर सुदामा का खेद । स्त्री मिलन । प्रमोद । आनन्दपूर्वक कृष्ण की कृतज्ञता प्रकाशन और समोद जीवन व्यतीत करना ।

संख्या ४९ ए. भूधर विलास, रचयिता—भूधरदास, पत्र—११४, आकार—१२३/४ × ७३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८८१, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं १९३४ = १८७७ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रिषभदास जैन, ग्राम—मोहना, डाकघर—इटौंजा, जिला—लखनऊ ।

आदि—ॐ नमः सिद्धेभ्यः अथ भूदलि विलास (भूदर विलास ?) लिष्यते ॥ अस्तुति ॥ कवित्त ॥ ज्ञान जिहाज वैठि गनपत से गुन पयोध जस नाहिं तरे हैं । अमर समूह आइ अविनी सों घिसि घिसि शीस प्रनाम करे हैं ॥ किधों भाल कुकरम की रेखा दूरि करन की वुद्धि धरे हैं । ऐसे आदि नाथ के अहिनिस हाथ जोरि हम पांय परे हैं ॥ १ ॥ कायोत्सर्ग मुद्रा धरि वन में ठाड़े रिखिग रिद्धि तजि हीनी । निह चैल अंग मेरु है मानों दोनों भुजा छोरि जिन दीनी ॥ फंसे अनंत जंत जग चहलें दुखी देखि करुना चित लीनी । काढ़न काज तिन्हें समरथ प्रभू किधौं बांह दीरघ ये कीनी ॥ २ ॥ करनों कछू करन तैं कारज जाते पाँइँ प्रलंव करे हैं । रह्यो न कछू पाइन तैं पै वो ताही तैं पद नाइ टरे हैं ॥ निरखि चुके नैननि सव याते नेत्र नासिका अनी धरे हैं । कानन कहां सुने कानन यो जोग लीन जिन राज करे है ॥ ३ ॥

अंत—॥ ष्याल ॥ अरेहां अव चेतो रे भाई ॥ मानुष देह लही दुलही सुघरी । उघरी सत संगति पाई ॥ १ ॥ जे करनी वरनी करनी नहीं । ते समझीं समझाई ॥ २ ॥ अरहां ॥ यों सुभथान जगे उरग्यान । विष विष पांन अपान वुझाई ॥ ३ ॥ पारस पाइ सुधारस भूधर । भीख न मांगत लाजन आई ॥ अरेहां ॥ राग सोरठा ॥ साधो सो गुरुदेव हमारा है । जो अगिनि में जो थिर राषै यह चित चंचल मारा ॥ साधो ॥ १ ॥ करन कुरंग खरे मदमाते । जप तप खेत उजारा है ॥ सा० ॥ २ ॥ जम डोरि जोरि वस कीनों । औसर

ज्ञान विचारा है ॥ साधो जा लछमी को सब जग चाहैं ॥ दास हुआ जगसारा ॥ साधो सो प्रभु के चरण की चेरी ॥ देखो अचिरज भारा है ॥ ३ ॥ लोभ सरफ के कहर जहर की ॥ लहर गई दुख यारा है ॥ साधो भूधर तारि वरिष के सिष हूजौ ॥ तव कछु होइ समारा है ॥ सोधो सो गुरु देव हमारा है ॥ ४ ॥ पुनः ॥ स्वामी जी शरण तुम्हांरी है समर्थ शांति सकल गुण पूरे ॥ भयो भरोसो भारी ॥ स्वामी ॥ १ ॥ जनम जरा जग वैश जीतिकें ॥ टेव मरन की टारी ॥ हमहूं को अजरा मर करियौ हो ॥ भरिहौ आस हमारी ॥ स्वामी ॥ २ ॥ जनमे मरे धरे फिरि जो ॥ सो साहिव संसारी ॥ भूधर पर दारिद्र कीम । दलिहै जो है आपुभिखारी ॥ स्वामी ॥ इति भूधर विलास सम्पूर्ण ॥ समाप्त ॥ श्री मिती मासोत्तमें मासे शुक्ल पक्षे ॥ वसंत पंचमी ॥ गुरु वासरे ॥ संवत् १९३४ ॥ लिखतं ॥ वृन्द्रावन चंद्र मुदरिंस मदर्सह पारना ॥ इति ॥

विषय—(१) पृ० १ से २७ तक—जैन शतक ॥ आदिनाथ आदि देवों की स्तुतियाँ। कुछ नमस्कार ॥ भोग निषेध ॥ देह निरूपण, संसारी दशा निरूपण । संसारी जीव चिंतन । अभिमानी निज व्यवस्था । वृद्धदशा । कर्तव्य शिक्षा । यज्ञ में पशुओं के वध का विरोध तथा सत व्यसन का वर्णन कुकवि की निन्दा । मन हस्ती । काल समर्थ और अज्ञानता का वर्णन । धैर्य तथा आशादि का वर्णन । चौबीस तीर्थंकरों के चिन्ह तथा अनुभव आदि का निर्णय । ग्रन्थकार परिचयः—आगरे में वालवुद्धि भूधर खडेलवार वाल के ख्याल से कवित्त जे वनाये हैं । ऐसैं ही करत भो जैसिहं सवाई सूवा हाकिम गुलाव चंदर है तिस थान है ॥ हरी सिंह साहि के सुवंध धरम रागी नर तिनि कहैं तैं जोड़ कीनों एक ठाठ है । फेरि फेरि परै मेरे आलस को अंत भौ उनको सहाय यह मेरे मन माने हैं ॥ ग्रंथ निर्माण कालः—सत्रह सौ इक्कीस ये । पौष मास मत लीन । तिथि तेरस बुधवार को । सतक सँपूरन कीन ॥ (२) पृ० २८ से ३२ तक—भूपाल चौबोसी, (३) पृ० ३२ से ३५ तक—दर्शन स्तोत्र (४) पृ० ३६ से ३६ तक—दर्शन स्तवन, (५) पृ० ३६ से ३७ तक—करुणाष्टक, (६) पृ० ३८ से ४१ तक—अष्टक, (७) पृ० ४१ से ४२ तक—विनती जिन राज की, (८) पृ० ४२ से ४५ तक—परमारथ जकड़ी, (९) पृ० ४५ से ४६ तक—शिष्यादि जकड़ी । (१०) पृ० ४६ से ४६ तक—गुरु विनती (११) पृ० ४६ से ७० तक—रिषम देव जीके दशभवांतर । नव कार महात्म्य । हुक्का निषेध । आर्ती । प्रभाती ॥ सोरठ ख्याल तथा अन्य रागों में उपदेशात्मक गीत, (१२) पृ० ७१ से ९८ तक—अष्टक विनती । गुरु विनती । विवाह समय के मंगल । जैन की मंगल । चौबीस तीर्थंकर विद्धि माला । जिन गुरु मुक्तावली । प्रतिहार्य । एकी भाव स्तोत्र । प्रस्तावी शतक । (१३) पृ० ९९ से ११४ तक रात्रि भोजन की कथा । अष्ट चाल धमाल की । देह वृक्ष वर्णन । देह दशा (वृद्धादि) वर्णन तथा कुछ उपदेशात्मक गीत ॥

टिप्पणी—प्रस्तुत पुस्तक में भूधर दास जी की छोटी बड़ी कुछ रचनाओं का संग्रह है । इसमें काव्य तथा संगीत दोनों ही प्रकार की रचनाएँ हैं । प्रायः सभी रचनाएँ

सांप्रदायिक हैं और उनका संबंध जैन धर्म से है। कुछ थोड़ी सी कविताएँ ऐसी हैं जो विशुद्ध साहित्यिक हैं। भूधरदास जी की इन रचनाओं में कुछ तो स्वतंत्र हैं और कुछ अनुवाद हैं। भाषा में यद्यपि कवि का लक्ष्य ब्रज भाषा की ओर झुका हुआ है फिर भी उन्होंने कहीं कहीं स्वतंत्रता से खड़ी बोली का भी प्रयोग किया है। थोड़ा सा प्रयोग गुजराती का भी है। इनकी रचनायें उपदेशपूर्ण हैं।

संख्या ४९ बी. चरचा समाधान, रचयिता—भूधरदास, पत्र—१६४, आकार—$१३\frac{१}{२}$ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९५२, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०४ = १८४७ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रिषभदास जैन, ग्राम—मोहना, डाकघर—इटौंजा, जिला—लखनऊ।

आदि—॥ ६० ॥ ॐ नमः सिद्धं ॥ अथ चरचा समाधान लिख्यते ॥ दोहा ॥ जयौ वीर जिण चन्द्रमा। उदौ अपूरव जाज। कलियुग कारे पाप मैं। कीनो तिमिर विनास ॥१॥ वंदौ वानी भगवती। विमल जौन्ह जगमाहिं। भरम ताप जासौं मिटै। भवि सरोज बिगसाहिं ॥ २ ॥ गौत्तम गुरु के पद कमल। हृदय सरोवर आन। नमौ नमौ हित भाव सौं। करि अष्टांग विधान ॥ ३ ॥ सोरठा ॥ जुगल पानि जुग पाँइ। पंचम सीस स्पर्स भुव। विमल मनोवच काय। यह अष्टांग प्रणाम हुव ॥ ४ ॥ नदुक्तं ॥ हस्तौ पादौ तथा द्वौ द्वौ। शिरो भूमौच पंचम। मनो वक्काय शुद्धिश्च। प्रणामोऽष्टांग उच्यते ॥ आदि मधुर अवसान कटु। काम भोग सब जान। आदि मधुर अवसान मधु। तप कारज परधान ॥ ५ ॥ आदि अंत में विरस है। वैरभाव दुख रूप। आदि मधुर आगें मधुर। मैत्री भाव अनूप ॥ ६ ॥

अंत—सर्व कथन को मथन यह। जिन मन परम पिछान। जैन धरम जग कल्प तरु। सेवौ संत सुजान ॥ १३ ॥ सेवा श्री जिन धर्म की। करै सकल सुभ श्रेय। पय की दाता गाय ज्यौं। दुहत दुग्ध को देय ॥ १४ ॥ चौपाई ॥ जैन धरम दुल्लभ जगमाहीं। विनसै अै सिव दायक नाहीं ॥ समुझि सोचि देख्यौ उर भलै। कोठा धरें धान नहिं फलै ॥ १५ ॥ दोहरा ॥ देव राज पूजत चरन। असरन सरन उदार। चहूं संघ यह मंगल करहु। प्रिय कारिणी कुमार ॥ १६ ॥ इति श्री चर्चा समाधान भूधर दास कृत सम्पूर्णं मिती वैसाष वदी ॥ १ ॥ प्रतिपदा ॥ गुरु वासरे ॥ संवत् १९०४ ॥ लिपितं कन्हीलाल सघई पान्ने मध्ये ॥ शुभं भूयात् ॥ अपर मपीद मस्तु ॥ सुभं रस्तु ॥ आर्या ॥ तैलानल चौरेभ्यो। सद्वेष्टन तोय दायते यस्तु ॥ यत्नेन रक्षणीयं ॥ दुर केन ॥ लिख्यते यस्मात् ॥ यादृशं पुस्तकं दृष्टा तादृशं लिपितं मया यदि शुद्धं विशुद्धं वा मम दोषे न दीयते ॥

विषय—(१) पृ० १ से ६ तक—मंगला चरण। जैन धर्म का महत्व, अध्ययन के भेद। ग्रन्थ चतुष्टय। (२) पृ० ७ से ४० तक—सम्यग्दर्शन का स्वरूप। व्यवहार की परिभाषा। सम्यक्त की उत्पत्ति। लब्धि का स्वरुप। सम्यक्त के भेद तथा उनके स्वरुप। बुद्धिलना तथा विसंजोजना का अन्तर गुण स्थान वर्णन। निर्जरा वालों का स्वरुप। केवली तथा परमोदारिक सरीर का स्वरुप ॥ (३) पृ० ४१ से ९४ तक—केवली तथा परमोदारक का विभेद। वर्णन। वाणी का पसंग। अर्द्ध मागधी का विवरण। सम वसरण का

वर्णन । (अशोक वृक्ष का वर्णन समव शरण के स्तूपादि का कथन) अष्टम पृथ्वी (ईषत्प्रभा) का वर्णन । मोक्ष मार्ग । आचार्य । उपाध्याय और साधु के पदों में किसकी महानता है ? मुनियों के कर्त्तव्य कर्म । आहार दानादि का विधान तीर्थ कणादि का वर्णन । पार्श्व जी के संबंध की कुछ बातें । तीर्थंकरों के प्रतिमाओं के चिन्हों का वर्णन । (४) पृ० ९५ से १४० तक---प्रतिमा के पूजनादि का विधान नंदी श्वरादि के उत्सवों का कथन । द्वीपों के विस्तारादि का वर्णन । पर्याप्त और प्राण का विभेद नरकादि का वर्णन सूक्ष्मवाद जीवनादि की आयु का प्रमाण । नाराच आदि का वर्णन । जाती स्मरण का स्वरुप । उल्का पात । षट कोण । सुमेर पर्वत । और कालादि का भेद । भक्ष्या भक्ष्य का विवरण । (५) पृ० १४१ से १६४ तक---इतिहास धर्म । समाज नीति तथा अर्थ शास्त्रादि संबंधी कुछ शंकाओं का निवारण ग्रन्थ निर्माण कालः---ठारह शत षट होत्तरी माघ मास अवसान । सुकुल पंच तिथि पंचमी ग्रन्थ समापित जान ॥ ग्रन्थ के पठन पाठन का फल । जैन धर्म की महत्ता तथा अवसान मंगल ।

टिप्पणी---प्रस्तुत ग्रन्थ के कर्त्ता कवि भूधर दास ने एक सौ चालीस जैन धर्म संबंधी चरचाओं का वर्णन किया है । प्रत्येक चर्चा के अन्तर्गत कोई न कोई संका उठा कर विविध युक्तियों के साथ उसका निवारण किया है । प्रमाण स्वरूप गोमट सारादि कई ग्रन्थों के वाक्य भी उद्धृत किये हैं । कुछ गाथाओं आदि का उल्लेख करके भी विषय को स्पष्ट किया गया है । प्राचीन विद्वानों के मतों के साथ साथ गो० तुलसीदास जी के समकालीन आगरा निवासी कविवर बनारसी दास जी के मत को भी माना है । ग्रन्थ से जैन धर्म संबंधी अनेक ज्ञातव्य बातों का पता चल सकता है । रचयिता का जैन संसार में अच्छा मान है ।

संख्या ४९ सी. पारस पुराण, रचयिता—भूधरदास (आगरा), पत्र—२२०, आकार—१०¾ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७८९ = १७३२ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रिषभदास जैन, ग्राम—मोहना, डाकघर—इटौंजा, जिला—लखनऊ ।

आदि—६०॥ सिद्धि श्री जिनो जयति ॥ अथ पारस पुराण भाषा लिष्यते ॥दोहरा॥ मोह महात्म दलन दिन । तप लक्ष्मी भर तार ॥ ते पारस परमेस मुझ । होहु सुमति दातार ॥ १ ॥ बामा नंदन कलप तरु । जयो जक्त हितकार । मुनि जन जाकी आसि करि । जाँचें सिव फल चार ॥ २ ॥ छप्पय ॥ भुवण तिलक भगवंत संत जन कमल दिवाकर । जगत जीव बंधन अनंत अनुपम सुन सायर ॥ राग राग गमय मंत दंत उध्थ पन वली अति । रमा कंत अर हंत अतुल जस वंत जगत पति ॥ महिमा अनंत मुनि जन जपत आदि अंत सबकौं सरण ॥ भो परम देव मुझ मन वसो या सन्नाह मंगल करन ॥ ३ ॥

अंत—जो भगवान वषान करी । सो गुणोत्तम नैकर आनी । आपहु आप उदीप । विघन आपदा दुख हरै रोग सोग नहिं जास । प्रीति दान कर यह सुनै ॥ कथा जिनेश्वर पास ॥ २९ ॥ पार्श्व नाथ शिव सुख करै ॥ नाम लेय सुख होय ॥ महिमा यह की को कहै ॥ आनंद मंगल सोय ॥ ३० ॥ अन्तर रुचि की चाह सौं ॥ सुनै जैन वचसम् ॥ उपदेशक

को दान दै । मान करै वहु वार ॥ ३१ ॥ सारा जनम जग मैं यही । सुर में जु जैन पुरान ॥ पूजा साधरमी करै । जय जय मंगल गान ॥ ३२ ॥. इति श्री पार्श्व पुरान भाषा या भगवंत निर्वानो गम वर्नन नाम संधि सम्पूर्ण समाप्त ॥ पत्र एक सौ दस ॥ चौपाई सोरह सै वत्तीस ॥ छप्पै छन्द कवित्त तेईस ॥ सवैया इकतीस ॥ अरिल्ल दोहरा सोरठा चालीस सर्व संख्या सोरह सै वत्तीस ॥ सवैय्या तेईस

विषय—(१) पृ० १ से २० तक—भक्त भूत भव वर्णन । (२) पृ० २१ से ३३ तक—गज स्वर्ग गमन । विद्याधर विद्वत प्रभु देव वर्णन (३) पृ० ३४ से ६३ तक—चौदह रतन नाम । सामान्य नर्क दुख वर्णन । पल्प संख्यक कथन । अंकों की गणना । अहमिंद पद प्राप्त नर्क अवस्था का वर्णन । (४) पृ० ६४ से ९८ तक—क्षुधा आदि वाईस परिसारों । सुर स्त्री वर्णन । आनंद मुनि इन्द्रपद प्राप्त वर्णन । (५) पृ० ९९ से १२० तक—पंच कल्यान सार । प्रात वर्णन । देवांगना । प्रश्न वात उत्तर तथा गर्भावतार वर्णन ॥ (६) पृ० १२१ से १३७ तक—नागदत्त वर्णन । भगवान जन्म । कल्यान का वर्णन ॥ (७) पृ० १३८ से १७४ तक—अष्टसिद्धि प्राप्ति आदि का वर्णन तथा भगवान कैवल्य ज्ञान वर्णन (८) पृ० १७४ से २२० तक—गणधर प्रश्न । सामान्य द्रव्य जात जीव विषै सात संगीन रूप । जीव निरूपण । समुद्र घात वर्णन । सिद्ध वर्णन । अजीव तत्व वर्णन पंच गुनान भेद ॥ धर्म वर्णन । द्रव्य वर्णन । तत्व वर्णन प्रतिमा भेद । द्वादसांग । वाणी । तथा भगवान निर्वाण वर्णन । ग्रन्थ निर्माण काल—संवत सैत्रह सै समै । और नवासी लीय ॥ सुदि असाढ़ तिथि पंचमी । ग्रन्थ समापति कीय ॥ ग्रन्थ पठन पाठन फल ॥

संख्या—५०. महाराजा भरतपूर और लाट साहब का मिलाप, रचयिता—मुल्लन-शेख, (नि० स्था० भरतपुर), कागज—देशी, पत्र—३७, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३००, पूर्ण, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८७६ वि०, लिपिकाल—१८७६ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० शिव कंठ दुबे, स्थान—विगहापुर, डाकघर—खास, जिला—उन्नाव (अवध) ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ मिलाप श्री श्री श्री श्री श्री व्रजेन्द्र महाराजा रणधीर सिंह और लाट साहब का लिष्यते ॥ दोहा ॥ विना कृपा भगवंत की कलम न पकरी जाय ॥ सदा भवानी दाहिनी सुकंठ सुरसती माइ ॥ मिलाप श्री महाराज कौ ॥ हुई सहर में पवरी यह सुक साम से जारी । सरकार से अंगरेज से मिलने की तयारी और सहर भरत पुर में यही सोर है जारी ॥ करते है सबी साथ के लसकर की तयारी ॥ सरकार ने लसकर को हुकुम डेरों का दिया । सेष इनाम विकास कौ उनके साथ कर दिया ॥ दीवान जवाहर लाल और फौजदार मोतीराम ॥ उनपास जो सरकार के रहते हैं सबले काम ॥ महराज का उकील है जानी जी साहूकार ॥ विसका जु लाठ साहेब से जु हैगा बड़ा प्यार ॥ लीक कूं देषा है विसने गवर लाठ कूं ॥ देषा है विसने सवली फिरंगी की जाति कूं ॥ सवसे अव्वल जो राव साहब भिजाये ॥ और गुड़ की मंडी पै डेरे षड़े कराए ॥

अंत—सुदामा के जु हियरा ही थे वे ऐसे कृष्णचंद ॥ एक पल में दल दरके सब काट दिये फंद ॥ मैं उसकी सनै षानी मैं कहता हूं न ये छंद ॥ तुम ऐसे श्री महाराज हो

मेटेगो मेरे दंद ॥ ऐसो मिलाप जग में हमने कहीं न देषा ॥ २७ ॥ जिन पावो में पनही नहीं विनकूं दिये गज राज ॥ करि देव राउ लेहे में में तुम ऐसे हो महाराज ॥ दुनिया जहान खलक के सिद्ध करते होगे काज । हमारी इसी अरज की है आप को यह लाज ॥ ऐसा मिलाप जग में हमने कहीं न देषा ॥२८॥ बुड्ढे जवान लरके दिल भरब यार जानी ॥ राजा अमीर वकसी हो मुलक अवा दानी ॥ कंगाल और अदना यह सवकूं है कहानी वैं सुखी रहैं वे भुल्लन जब तक नहर में पानी ॥ ऐसा मिलाप जग में हमने कहीं न देषा ॥ २९ ॥ इति श्री मिलाप महाराज श्री व्रजेन्द्र श्री श्रो श्री श्री श्री रणधीर सिंह जी भरतपुर और अंग्रेज कौ मिलाप संपूर्णम श्री राधा रमन जी सहाय श्री हरये नमा मिति फाल्गुन सुदी ६ संवत् १८७६ वि० शुभं भावत् ॥

विषय—भरतपुर के महाराजा रणधीर सिंह और अंगरेजों के लाट साहब के मिलाप का वर्णन है।

संख्या ५१ ए. वेदस्तुति, रचयिता—भूपति, पत्र—५, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्) – १२८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३१ = १८७४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामकृष्ण जी, ग्राम—फतेहाबाद; जिला—आगरा।

आदि—श्री परमात्मने नमः। अथ वेद अस्तुत भोपतिकृत लिख्यते ।१। राजा कहैं सुनो रिषि राई हरि अस्तुति जो वेदन गाई। निर्गुन अस्तुति सर्गुण गाहीं, मो मन में आवत कछु नाहीं। तिहि कारन यह पूछत भेवा सो समझाय कहरे सुपदेवा। यह सुनके बोले रिषि राई, राजा सुनौ कथा मन भाई। हरि इच्छा ते सिछा पाई, तब यह अस्तुत वेदन गाई। एक दिवस नारद मुनि ज्ञानी, हरि भक्तन में बड़े निनानी। दोहा। अस्तुत श्री भगवान की वेदन कही सुनाय। सो विधि हौं जानत नहीं कहौं प्रघट समुझाय। चौ०। श्री नर नारायण सुर ज्ञानी, नारद प्रति बोले मृदु बानी। एक दिवस सनकादिक ज्ञानी, सुत विरंच के परम विनानी। बैठे हुते देव पुर माहीं, चारु चंद ज्यों उडगन माहीं। तहां चली यह बात सुहाई किहि विधि अस्तुत वेदन गाई।

अंत—या विधि नारायन सुर ज्ञानी, श्री नारद प्रति कथा बषानी। तवै रिषिन मिलि पूजा कीनी, वेद अस्तुत चित में धरलीनी। श्री नारद वह कथा सुहाई, वेद विग्रास को आय सुनाई। तिनसो सुनी हती हम जैसी तुमकों बरन सुनाई तैसी। यह वेद अस्तुत कथा सुहाई सकल रिषिन को सनक सुनाई। दोहा। यह अस्तुत जो रैन दिन कहै सुनै चित लाय। तिनको पाप रहै नहीं विश्व लोक वोह जाय। इति श्री वेद अस्तुत भोयात कृत सम्पूर्ण। सम्वत् १९३१ लिखतं हरदेव दास चौबे।

विषय—वेद में वर्णित भगवान की स्तुति।

संख्या ५१ बी. वेदस्तुति, रचयिता—भूप, पत्र—६, आकार—८½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—मकसूदन लाल, स्थान—गुड़की मंडी, फतेहपुर सीकरी, डाकघर—फतेहपुर सीकरी, जिला—आगरा।

आदि-अंत—५१ ए के समान।

संख्या ५२. बिहारनदास जी की बानी, रचयिता—बिहारनदास जी (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—१४८, आकार—६ X ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५९, रूप—बहुत प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—अद्वैतचरण जी, स्थान—घेरा राधारमण, वृंदावन, डाकघर—वृंदावन, जिला—मथुरा।

आदि—श्री वृन्दावन सहज सुहावनो। नवलन व नागरि। रानव नागर नेह विधान वनहंवै। होरी खेलन के मतैं न वलन नागरि रावनि वैठ करि ठान वनाहंवे। नवलनि कुंज विराजहीं॥ रा॥ रवितन याकें तीर। व। अंग विहंग कुलाहली। रा। नव। नव २ जुवतिन की भीर। व॥ ३०॥ स्याम ओर की सांवरी। रा। गोरी के गोरे गात॥ उमगि चली चित चोंय सौ। रा। अपनी २ गहि घात। बनाहंवे॥ ४॥ सव सषि मन अनुसारनी। रा। उनि सजिलई लीनी सब सोंज। बनाहंवे। लाल रतन मनकी कुंडी केंसरि की ओंज। वनाहंवे। ५। कस्तूरी कपूर सौं॥ रा॥ साखि कुमकुमा आदि। चंदन मलयो गिरि धरौ गोरामेद जिवादि॥ ६॥

अंत—कृतघन उपगार हिन मानतु रापत तन मन गोई। कपट प्रीति परतीति न उपजै हला भला दिन दोई। काचौ कटुक सुभाव वा कसौ तजैं याजै नीवौ मीठौ होई। आदि मधि अवसान विसुपई रह्यौ विषौ विष भोई। जैसे जरि अग्नि कौं अगनेंसी तलक रेंन तोई। श्री विहारी दास औझन पाउ अब श्री गुरु चरन संजोई। इति।

विषय—कृष्ण भक्ति।

संख्या ५३ ए. बिहारी सतसई, रचयिता—बिहारी लाल, पत्र—५७, आकार—१० X ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०५६, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० कैलाशपति जी सेंगुरिया, ग्राम—विजौली, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—मोहन मूरति श्याम की अति अद्भुत गत जोइ। वसति सुचित अन्तर तऊ प्रति विम्बित जग होइ। तजि तीरथ हरि राधिका तन दुति करि अनुराग। जिहि ब्रज के लिनि कुंज मग पग पग होत प्रयाग। सघन कुंज घन घन तिमिरि अधिक अंधेरी राति। तऊ न डरिये है श्याम यह दीप सिखा सी जाति। सघन कुंज छाया सुखद शीतल मन्द समीर। मनहूं जात अजौं वहै वा जमुना के तीर।

अंत—चित मैं तो कछु चोपसी निवटन लागे नेह। कहूं दुरै देखै कहूं कहूं दिखावै देह। सोरठा—हौं रीझी यह भाव मुदत खुलत हम तीय के। मानौं ठोर तवाव श्रीमति भये पिय जानिकैं। दोहा। मलहम यों वासो रहत वाही सों दुति रंग सनमासों मानिय भयो वाही तिय के संग। होत कहा कहि हे सखी दम्पति की रस रीति। वास मये की देख छबि गयो मदन मोहि जीति। जदपि है शोभा सहज मुकत नीत उस देखि। गुहे ठौर ठौरतें नरमें होत विशेष।

इति श्री विहारी सतसैया सम्पूर्ण शुभमस्तु।

विषय—श्रृंगार रसके ७०० दोहे।

संख्या ५३ बी. सप्तसतिका, रचयिता—विहारीलाल, कागज—बाँसी कागज, पत्र—२८, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—११७६, खंडित, रूप—बहुत प्राचीन, पद्य-गद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री गोविंदराम ब्राह्मण, ग्राम—हिंगोट खिरिया, डाकघर—बमरौली कटरा, जिला—आगरा।

आदि—॥ ११ ॥ नायक नायका को परदेस कैं चलते। व्यंग करि रहबो जनावत है ॥ दोहा ॥ कागद परि लिखितन बनै, कहत संदेस लजात। कहि है सब तेरी हियो, मेरे हिय की बात। राधिका को वचन श्री कृष्ण सौं ॥ दोहा ॥ कुंज भवन तजि भवनकुं, चलिये नंद किशोर, फूली कली गुलाब की, चटकाहट चहुंओर ॥ सखी को वचन सखी सौं ॥ कह तन देवर की कुबत, कुलतिय कलह मरात। पंजिर गत मंजार ढिग, सुक ज्यों सूकत जात।

अंत—॥ सखी वाक्य ॥ होय वदीति सजगन की कुप की लख्यो न जात। पीप तमवारी ये करी मतवारी अखियान। ग्रन्थान्तरे कवि वचन ॥ हुकुम पाय जय सहि को, लहि राधिका प्रसाद। करी विहारी सत सया भरी अनेक संवाद। १६। अर्थ पूर्व पीप का अकारादि वचन ताके ॥ दोहा ॥ प्रथम अकारादि आदि दे, अवरह कार अब सरन ॥ मसि-कत करि एकत्र किय, अति प्रबंध इह जान। जाकों जासु वचन हैं सोई कोई प्रवान ॥ जहां होइ अनमिल कछू, लेहुं सुधारि सुजान॥ इति श्री कवि श्री विहारीदास कृता सप्त सतिका समाप्ताः टकौ कटौरो कागसी, कागद करत कमान। कंताए मति छाड़ियो जब लग छडै प्रान ॥ श्री। श्री। श्री। श्री। श्री।

विषय—इसमें बिहारी के ५०० से अधिक दोहों का संग्रह है।

संख्या ५३ सी. बिहारी सतसई, रचयिता—बिहारीलाल, कागज—बाँसी, पत्र—२०, आकार—१० × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—९१०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं १७६२ = १७०५ ई०, प्राप्ति-स्थान—श्री ललिता प्रसाद जी दीक्षित, स्थान—जगनेर, डाकघर—जगनेर, तह०—खैरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—केनेपट में मिल मिल, भलकत ओप अपार। सुर तरु की मानु सिद्धं में, लसी सपल्लव डारि॥ मारेठोभी गाइ गहीं, नैन बटोही मारि। चनक चोंध में रूप हांसी कांसी मारि। कीनऊ कोरक जतन, अब कहाँ काढ़े कौन। मोमन मोहन रूप मिल पानी में को लौन। लगे सुमन ह्वै हैं सुफल, आतप रोष निवारि॥ बारी बारी आपनी, सींच सुरदता वारि॥ अजौ तरुनाइ रहैं श्रुति सेवति इकरंगि॥ नाक बास बेसर लखो बसि भुगनिन के संग ॥ जम करि मुह नरि हरि परचो इति विधि हरि चित लाऊ॥ विस्वम त्रिखा परि हरि आओ नर हरि के गुन गाऊ॥

अंत—दोहा करउ गई घूँघट करक उसर ऊपर कु करोट। सुख मेटे टूटी ललन लखि ललना की ओट॥ परपन पोधनि लखि रहुहु लगी कपोल के ध्यान। करे लेप्यो पाटलु विमल प्यारी पववन घन॥ तरु कुच कए नो कहा, पावस के अवि सार। जानि परेगी देखियो छामि न धन अधिकार॥ केवा आवन इहि गली। वही चलाई चलेन। दरसन की

साधे रहे सूधो परहित नैन वेसर मोती धन कहीं को चूके कुल जानि । पीवा भेरनि अमौ की रस निधरक दिन रात ॥ निय मुख करब हीर । जरी नरी वेदी बढ़ै विनोद—सुत सनेह मान लियो बुध पोरन विध गोद ॥ इति श्री कृति विहारीकृतं दोहरा सप्त सतकं संपूर्ण ॥ श्री ॥ लिखतं पं० राम विजय गणितं संवत् १७६५ (?) विसाख १ दिन ।

विषय—श्रृंगार रस वर्णन ।

संख्या ५४. रस प्रक्रिया, रचयिता—बिहारीलाल (बाह, आगरा), पत्र—५१, आकार—८ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०६१, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०२ = १७४५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० लक्ष्मी-नारायण वैद्य, स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । अथ रस प्रक्रिया लिख्यते । तत्प्रयोगी पदार्थान्याह प्रथम स्वर्णा दिधातवः स्वर्णातारं नागवं गौ तामुं कान्तं च तीक्ष्णकं मुंडकं त्राणधा लोहं काइयारं वर्तलं त्रिधा उपलौह समाख्यातम् । सोना चांदी सीसा रांग तामौ कान्तिसार पोलादि खेरी ए आठ धातु है कांसी पीतरी तोर ए तीन उप धातु है और गंडूर लोह किटी ।

अंत—अथ जैपाल के संबंधते और हू हत्य को तैल को विधान कहे हैं । आजाहारे के क्वाथ में सिंगिया पीसि के तेल निकासे लाल आजाहारे के क्वाथ में पीसि वकुचि वकुची को तेल निकासे । इति श्री रस प्रक्रिया समाप्तम् । प० विहारीलाल कृत वाह नग्र मध्ये सम्वत् १८०२ । श्री राम

विषय—धातुओं को मारकर सर्वरस तयार करने की शास्त्रीय विधि ।

संख्या ५५ ए. भक्ति विवेक, रचयिता—बोधीदास, कागज—देशी, पत्र—४४, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० परसूसिंह, ग्राम—रामनगर, डाकघर—बारा, जिला—सीतापुर ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ भक्ति विवेक लिख्यते दोहा ॥—श्री गुरु चरण सरोज रज निज मन मुकुर सुधार ॥ वरणों रघुवर विमल जस जो दायक फल चार ॥ चौ०—प्रथमहि वंदौं चरण गुरु देवा । जिनते पाओ साहेब सेवा ॥ साहिब संत और सब देवा । सर्व लोक जाकी करै सेवा ॥ देव दनुज संत अधिकारी । पुरुष संत और सब नर नारी ॥ जीव चराचर चारौ खानी । सब घट पूरण अंतर जामी ॥ गन गधर्व सुर नर मुनि देवा । सब पर अमल करै वसु देवा ॥ सरब लोक जाकी फिरै दोहाई । डर माने ताको जम्ह राई ॥ सब परजा एक पति एह सोइ । इनके ऊपर दूसर नहिं कोई ॥ पर बल सकल स्वामि भगवाना । नहिं कोई इन पर साहेव आना ॥ सब कोई कृतभ आपै पाना । नहिं कोई इतने पुरुष पुराना ॥दो०—नहिं कोइ इनते अचल है नहिं कोई इनते पार । नहिं कोई इनते संत है नहिं कोई इनते सार ॥

अंत—दोहा—यह भगती अनुराग को भक्ति विराग विज्ञान। सो सब नृप पै प्रीति करि कहा वखानि वखानि ॥ छंद ॥ गावहिं वोधी दास जो हिये वसावहीं । होय

विषै भौनास सुनि जो मध्य वसावहीं वाढ़ै उर अनुराग ज्ञान विराग मन भावहीं ॥ कथा सरिस अनूप भक्ति विवेक भेष प्रतात के। हरि सुजस तारन तरन सुनि मिटे दुख जम त्रास। राम जस जाके हिये ताहि सम नहिं जग कोय। कहै वेद पुरान तिहुं लोक महं पावन सोय ॥ महिमा कहं लगि राम जसके कहौं मैं वखानि के॥ सहस्र मुखते शेष न पावहिं पार निर्गुन ज्ञान के॥ सकल सुख जाते मिले अरु अंत हरि पद पावहीं॥ पूजे सब मन कामना दास वोधी गावही ॥ भक्ति विवेक साग्र कथा ज्ञान विज्ञान जोग रस। सुनत वढ़े अनुराग होय जोगी जाहि जस ॥ इति श्री ग्रन्थ भक्ति विवेक समापत सुभ जो देखा सो लिखा मम दोष न दीयते श्री संवत् १९३६ मिती वैसाख सुदी ७ रोज रविवार ॥

विषय—राम नाम महिमा वर्णन।

संख्या ५५ बी. भक्ति विवेक, रचयिता—बोधी दास, कागज—देशी, पत्र—४४, आकार—१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३०=१८७३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० स्याम मनोहर शुक्ल, ग्राम—मानपुर, डाकघर—हरदोई, जिला—हरदोई।

आदि-अंत ५५ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—इति श्री ग्रन्थ भक्ति विवेक समाप्त शुभ जो देखा सो लिखा मम दोष न दीयते श्री संवत् १९३० माघ शुक्ला पंचमी ॥

विषय—राम नाम महिमा वर्णन।

संख्या ५६. मंत्र, रचयिता—ब्रह्मदास (सिकंदरा), पत्र—३, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुम)—३०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—मुंशी जोति प्रसाद, ग्राम—नगला सिकंदर, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशायन्मः॥ कहत वेग जागारि माई जनमइ जिन लियो जादों पति राइ भरि भादौं॥ आए अधियारी रोहनी नक्षत्र जनम अधिकारी लाउ दीपक जोरि मंदिल मुख देखव सक चारि भुज जाके मुकुट माथः राज लहः कंस को सिग आग सेस पाछः जमुना उमगत रनी भइ कृक्ष जव चरन छे पपार गहली॥ हो गइ भइ सुनि वसु देव घर वेटी पकर मागइ नास लपेटी सुन कंस हमः को भारी जिव तुर तेरी मारन हाउस धोबी फिरक अरि उरन को जव मनु हयो वाकी पकरि भुजा उखार ले गई ॥ देखि दाउनिकों हाउ नाँद घरा सुनि कसर हो हमाथा धनक का अस्तुत पूत नाय पाइ आवर विष लगाइ आइ तु मारो जगाइ राज अधिकारी हमतो लाल हिल वन हरि जव दई वताइ वति सीथ चारि षर सग पान पियो पुतन जमुइ सुनि कै कंस के घड़ा के

अंत—हियो कौन पूती को न सूती को न पिंड पान परितुवि नाम मरि मरि गइ मरे कानके सिर को परि महाराज राजा होग राइ के समरि हजा की जंत्र लिपि मेरो कान कवन हरइ वाज वचइ गुल न चकिनिक सुवरन जगरच जाइ भार सोइ मरजाइगो सुदिन वावा नंद का कह गुल हम छोटे मोटे सव संतन मन भाइयो ब्रह्मदास सिकंदरों को जनम ला लगाइः॥

विषय—मंत्र तथा जंत्र।

संख्या ५७ ए. व्रज विलास, रचयिता—ब्रजबासी दास, पत्र—५३२, आकार—१३½ × ७½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—५१८७, खंडित, रूप— प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० लक्ष्मीनारायण जी आयुर्वेदाचार्य, ग्राम—सैगई डाकघर सैगई (फिरोजाबाद), जिला—आगरा।

आदि—ब्रज वीथिन खेलत मन मोहन। हलधर सुवल सुदामा गोहन॥ और गोप वालक वहु वारे। एक वैस सव हरि के प्यारे॥ बाल बिनोद मोद मन दीने। नाना रंग करत रस भीने॥ तारी मारि हाथ सव भाजैं। धावत धरत होड़ कर बाजे॥ वरजत वलि हरि तू मति दौरै। लगि है चोट गोड़ कहुँ तोरै॥ तव हरि कह्यौ दौरि मैं जानौं। मेरौ गात वहुत वलवानौ॥ है श्री दामा जोड़ हमारी। तासौं मारि भजौं मैं तारी॥ वोलि उठ्यौ तवहीं श्रीदामा। तारि मारि भाजहु तुम स्यामा॥ तबहीं स्याम भजै दे तारी। धरयौ धाय श्रीदाम हंकारी॥ तव हरि कह्यौ वच्यौ नहिं तोही। ठाढ़ौ भयो छुवौ तव मोही॥ ऐसें कहि हरि ताहि रिसाने। कहत सखा सव स्याम खिजाने वोलि उठे वलराम तव। इनके माय न बाप। हारजीत जाने नहीं। लरिकन लावत पाय॥ ऐ है तनके स्याम, झूठहिं झगरत सखन संग। रुठि चले हरिधाम। लखि उदास पूछति जननि॥

अंत—विविध भांति करिकै पहुंनाई। नद स्याम की वात चलाई॥ ऊधौ कहो। कुशल दोउ भैया अरू वसुदेव देवकी मैया॥ करत हमारी सुधि कवहुँ। कहु ऊधो वलवीर पुलकि गात गद गद वचन, पूंछत नंद अहीर॥ चूक परी अनजान, कहि पछताने आज के, घर आये भगवान। जाने हमन अहीर करि॥ प्रथम गर्ग मुनि कह्यौ वषानी। भूल्यौ संग दोष हित जानी॥ अव ऊधौं विछुरे गिरिधारी भरियत समुझ शूल सोइ भारी॥ कह्यौ जसोमति दृग भरि पानी। ऊधौं हम ऐसी नहिं जानी॥ सुत कौहित करिकैं हम मानैं। हरि है बासुदेव प्रगटाने॥ जवते हरि मधुपुरी सिधारे। तबते ऊधौ प्राण हमारे॥ तलफन मीन नीर बिन जैसे। देख्यौ स्याम मनोहर तैसें॥ मैं बाते सांची कहियौ ऊधौ। कैसे स्याम रहत वहां सूधौ॥ दही मही माखन नित जाई। खात कौन के धाम कन्हाई॥

विषय—श्रीकृष्ण चरित्र वर्णन

टिप्पणी—यह ग्रंथ आद्यन्त से खण्डित है—आदि के ६४ और अन्त के ५३२ वें पृष्ठ के आगे के सभी पृष्ट नष्ट हो गये हैं।

संख्या ५७ बी. वृजविलास (काली लीला), रचयिता—व्रजवासीदास, पत्र—१७, आकार—१० × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्) – ५५५, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भोजराम शुक्ल, ग्राम—अतमादपुर, जिला—आगरा।

आदि—...राखि को लेही॥ वरु मोहि राखे बांधि भुआला॥ रहे सदन वाले मोहन लाला॥ नंदवचन सुनि सव व्रज वासी। भए दुखित मन परम उदासी॥ काहू पै कछू वात न आई। अति भय गये त्रसित मुरझाई॥ नंदघरनि व्रज नारि विचारे। अति व्याकुल नेननि जल वाढ़े॥ व्रजहिं वसत सब जन्म सिरानौं। या विधि कवहूं न कंस रिसानो॥

अंत—॥ दोहा ॥ लै अधरनि परस वहि। माखन रोटी खात। करत प्रसंसा मधुर कहि। सुनत प्रफुलित मात ॥ सोरठा ॥ जो प्रभु अलष अपार। दुस्तर शिव सनकादि हू। धनि नंद की नारि। ताको सुत करि मानही ॥ इति श्री वृज विलास का लीला दावानल पान लीला संपूर्ण।

विषय—काली नाग नाथने की लीला तथा दावानल पान लीला वर्णन।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रंथ के आदि के दो पत्रे नष्ट हो गये हैं संभवतः यह सुप्रसिद्ध "वृज विलास" नामक ग्रंथ का खंड है ॥

संख्या ५७ सी. व्रजविलास, रचयिता—व्रजबासी दास (आगरा), कागज—देशी, पत्र—६००, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००९६, खंडित। रूप—पुराना, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० शिवकंठ तिवारी, ग्राम—पचलाई, डाकघर—माधौगंज, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ श्री राधा वल्लभो जयति अथ व्रज विलास व्रजवासी दास कृत लिख्यते ॥ सोरठा ॥ होत गुनन की खान जाके गुन उर गनत ही ॥ द्रवो सु दया निधान वासुदेव भगवंत हरि ॥ मिटत ताप त्रय तासु जासु नाम मुखते कहत ॥ वन्दौ सो सुभ राशि नंद सुवन सुन्दर सुखद ॥ अरुण कमल दल नैन गोप वृन्द मुन्डन सुभग ॥ करहु सो मम उर धाम पीतांवर वर वेणु धर ॥

अंत—दोहा—व्रज विलास व्रज राज को को कहि पावै पार। भक्त भाव गावत भगत भजन प्रभाव विचार ॥ सिगरे दोहा आठ सौ और नवासी आहिं ॥ हैं इतने ही सोरठा व्रज विलास के माहिं ॥ दश सहस्र सत सों अधिक चौपाई विस्तार ॥ छंद एक सत षट अधिक मधुर मनोहर चारु ॥ सवको नुष्टप छंद करि दस सहस्र परिमान। खंडित होन न पावई लिखियो जान सुजान। विधि निषेद जानें नहीं कछु व्रज वासी दास। ज्यों जानै त्यों राखिहै नंद नंदन की आस ॥ व्रजवासी गाऊं सदा जन्म जन्म करि नेह। मेरे जप तप व्रत यहै फल दीजै पुनि एह ॥ अपूर्ण कुछ छंद अंत के नहीं ॥

विषय—श्री कृष्ण की व्रज लीलाओं का वर्णन।

संख्या ५७ डी. व्रजविलास, रचयिता—व्रजवासी दास (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—३००, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८०९ = १७५२ ई०, लिपिकाल—सं० १८९४ = १८३७ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवमंगल, ग्राम—शिवगंज, डाकघर—मरहरा, जिला—[illegible]टा।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ श्री कृष्णाय नमः अथ व्रज विलास व्रजवासी दास कृत लिख्यते ॥ सोरठा ॥ होत गुणन की खान जाके गुण उर गनत ही ॥ द्रवौ सुदया निधान वासुदेव भगवंत हरि ॥ मिटत ताप त्रय तासु जासु नाम मुख से कहत ॥ वन्दौ सो सुभ राशि नंद सुवन सुंदर सुखद ॥ अरुण कमल दल नैन गोप वृंद मंडन सुभग ॥ करहु सो मम उर धाम पीतांवर वर वेणु धर। वन्दौं जगत अधार कृष्ण अ्रज वल्देव पद ॥ अभिमत फल दातार नीलांवर रेवति रमण ॥

अंत—दोहा—व्रज विलास व्रज राज को कोकहि पावै पार। भक्ति भाव गावत भगत भजन प्रभाव विचार। सिगरे दोहा आठ सौ और नवासी आहि ॥ है इतने ही सोरठा व्रज विलास के माहिं ॥ दस सहस्र पट सों अधिक चौपाई विस्तारु। छन्द एक शत षट अधिक मधुर मनोहर चारु ॥ सबको नुष्टुप छंद करि दस सहस्र परिमान। खंडित होन न पावई लिखियो जान सुजान ॥ विधि निषेद जानैं नहीं कछु व्रजवासी दास ॥ ज्यों जानैं त्यों राषिहै नंद नंदन की आस ॥ नहि तप तीरथ दान बल नहीं कर्म व्योहार। व्रजबासी के दास को व्रजवासी आधार ॥ व्रजबासी गाऊं सदा जन्म जन्म करि नेह। मेरे जप तप व्रत यहै फल दीजै पुनि एह ॥ इति श्री व्रजविलासे सब सुख रासे भक्ति प्रकाशे कृत व्रजबासी दासे संपूर्णाम् ।। श्रीकृष्णायनमः अथ लिखा गोकरन ब्राह्मण गुजराती आगरा मध्ये मिति जेठ वदी नौमी संवत् १८९४ वि ॥ जैसी प्रति देखी तैसी लिखी व कलम गोकरन ब्राह्मण कृष्ण चंद्र जी को। राधा कृष्णजी की जै ॥

विषय—कृष्ण चरित्र वर्णन।

टिप्पणी—व्रज विलास के रचयिता व्रजबासी दास थे। रचनाकाल संवत् १८०९ वि० और लिपिकाल संवत् १८९४ वि० है।

संख्या ५७ ई. माखनचोरी लीला, रचयिता—व्रजवासी दास, पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५५, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१७ = १८६० ई०, प्राप्तिस्थान—बेनीराम पाठक, ग्राम—मानिकपुरा, डाकघर—बिलराम, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ माखन चोरी लीला लिख्यते ॥ चौपाई ॥ मैया री मोहिं माखन भावै। औ रस छुअतो रुचि नहिं आवै ॥ मधु मेवा पकवान मिठाई। सो मोको नेकहु न सुहाई ॥ व्रज युवती एक पाछे ठाढ़ी। हरि के वचन सुनत रति वाढ़ी ॥ मन मन कहत कबहुं अपने घर। माखन खात लखैं सुनन्द वर ॥ वैठे जाय मथणिया पाही। अपने कर निकारि लै खाहीं ॥ मैं वर देखहु कहूं छिपाई। कैसे मोघर जाहिं कन्हाई ॥

अंत—दोहा–तेरी सौं तोसों कहत मैं सकुचत यह वात। तेरो मुख हरि लखत ही सकुचि तनक है जात ॥ सोरठा—नेकु देखावहु आंखि नहिं अवते ये ढंग भले ॥ कव लगि कहिये राखि करत अचगरो श्याम अति ॥ इति श्री माखन चोरी लीला व्रजवासी दास कृत संपूर्णम् समाप्तः लिखतं गौरीनाथ पांड्यां वृन्दावन निवासी श्रावण कृष्ण पक्ष द्वितीया याम् संवत् १९१७ वि० ॥

विषय—श्री कृष्ण जी की माखनचोरी लीला।

इस ग्रन्थ का लेख बहुत अशुद्ध है। ह्रस्व और दीर्घ का ज्ञान नहीं रखा गया है तथा न मात्रा आदि का ध्यान रखा है ॥

संख्या ५७ एफ. अघासुर बध लीला, रचयिता—व्रजबासी दास (वृंदावन), पत्र—८, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—८०,

लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१७=१८६० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० वेनीराम पाठक, ग्राम—मानिकपुर, डाकघर—विलराम, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ अघासुर बध लीला लिख्यते ॥ चौपाई ॥ तहां अघासुर वन में आयो। कंस राज करि कोप पठायो ॥ ताके एक वहिन द्वै भैइया। मारे प्रथमहिं कुंवर कन्हैया ॥ एक पूतना जो व्रज आई। वत्सा सुर अरु वक द्वै भाई ॥ तिनको वैर असुर उर धारी। कियो गर्व मन मे अति भारी ॥ आज राज कौ कारज कीजै। और बैर भाइन को लीजै ॥ गिरि समान अजगर तन धारी। परो असुर मग बदन पसारी ॥

अंत—दोहा—देखत सुर नर सिद्धि मुनि चढ़े विमान अकाश। लखि कौतुक चकित सबै गये कमल भव पास ॥ सोरठा—कह्यो ब्रह्मा सों जाय कहत जानि पर ब्रह्म तुम ॥ सो ग्वालन संग खाय छोरि छोरि करते कवर ॥ इति श्री अघासुर बध लीला संपूर्ण समाप्तः लिखतं गौरी नाथ पांड्या वृन्दावन संवत् १९१७ वि०

विषय—श्री कृष्ण की अघासुर बध लीला।

संख्या ५७ जी. मान चरित्र लीला, रचयिता—ब्रजवासी दास, कागज—देशी, पत्र—३५, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—७०२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०१ = १८४४ ई०, प्राप्तिस्थान—रामदास गोसाईं, ग्राम— गढ़ी जैसिंह, डाकघर—सिकंदरा राऊ, जिला—अलीगढ़।

श्री गणेशाय नमः श्री कृष्णाय नमः ॥ अथ मान चरित्र लीला लिख्यते ॥ नित्य श्याम श्यामा सुखकारी। करत नित्य नव चरित विहारी ॥ निर्गुण निर्विकार अविनासी। भक्त मनोरथ सदा विलासी ॥ नित वृन्दा वन धाम सुहायो। नित्य रास रस वेदन गायो ॥ सदा भक्त वस कृष्ण कृपाला। दया सिन्धु प्रभु दीन दयाला ॥ सरद रैन सुरास उपायो। युवतिन प्रति निज रूप वनायो ॥

अंत—दोहा—राधा रसिक गुपाल कौ कौतूहल रस केलि व्रजवासी प्रभु जनन कौं सुखद काम तरु वेलि ॥ सोरठा—सुफल जन्म है तासु जे अन दिन गावत सुनत। तिनको सदा हुलास व्रज वासी प्रभु की कृपा ॥ इति श्री मान चरित लीला संपूर्ण समाप्तः संवत् १९०१ वि० लिखा मंगल दीन ब्राह्मण चौबे ॥ श्री राधा कृष्ण की जै ॥

विषय—श्री कृष्ण द्वारा राधिका मान मोचन।

संख्या ५८ ए. मंगल विनोद वेलि, रचयिता—वृंदावन दास (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—३६, आकार—६ × ४ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०१, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१२ वि०, प्राप्तिस्थान—अद्वैतचरण जी गोस्वामी, स्थान—श्रीराधारमण घेरा, वृंदावन, डाकघर—वृंदावन, जिला—मथुरा।

आदि—श्री राधा वल्लभो जयति श्री हरिवंश चंद्रो जयति श्री हितरूप गुरुभ्यो नमः। अथ श्री मंगल विनोद प्रसाद वेली लिख्यते। दुपाई। नामा मिश्र हरिवंश कृपा अंबुद वरवे जग। श्री राधा रस रहसि गूढ़ दरसाइ दिया मग। नमामि राधा चरन सकल मंगल कौ कारनि। नमामि गुरु हित रूप सेव्य गौरंग विहारनि ॥ २ नमामि रसिकानंद प्रिया

आनन अंबुज अलि । नमामि ललिता ललित रूप रस वेलि महाफलि ३ नमामि सहचर वृन्द सदा सेवति राधा पद । नमाभि वृन्दारन्य अपिल कौतुक कौ वेहद ४ नमामि दिन मणि सुत्ता तीर सोभा कौ संघट । नमामि सब सुषनि कर वेली तरुवर वंशीवट । नमामि वृन्दा देवि सुभग कानन अधिकारी नमामि पगकुल वृंद जहां संतत सुख भारी । ६

अंत—हंसहि अली दिस झुकी खकितिन भुजभरि लीनी । मनहुं दामिनी निकरि दमकि दसननि छबि दीनी । ९६ न्याइ रसिक मणिलाल फिरत जैसे कर चकरी । प्रिया रूप गुन मांहि सषी जिनकी मति जकरी ९७ यह मंगल कौ ध्यान तलपते उठत केलिवन छिनक विसरि जिन जाइ सदा सुधि करि मेरे मन ९८ मंगल जुगल विनोद मोद सो सहचरि पायौ । श्री हरिवंश प्रसाद कछुक मैं वरनि सुनायौ । ९९ ठारह सौ गत भयौ वर्ष बारहौं प्रगट जब । पूस सुदी पुनि तीज भयौ पूरन प्रबंध तब ॥ १०० पठन श्रवन मंगल जस राधा रसिक विहारी । वृन्दावन हित रूप भक्ति सरसै हिय भारी ॥ १०१ इति श्री मंगल विनोद वेली वृन्दावन दास जी कृत संपूर्ण ॥

विषय—राधाकृष्ण के श्रृंगार और विहार का वर्णन ।

संख्या ५८ बी. श्री गुरु महिमा प्रसाद वेलि, रचयिता—वृंदावनदास जी (वृंदावन), कागज देशी, पत्र—३८, आकार—६×४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१११, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८२० वि०, लिपिकाल—सं० १८९१ = १८३४ ई०, प्राप्तिस्थान—गोस्वामी अद्वैत चरण जी, स्थान—वृंदावन, डाकघर—वृंदावन, जिला—मथुरा ।

आदि—श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः अथ श्री गुरु महिमा प्रसाद वेली लिख्यते । तूमर छंद । श्री हरि वंश वंदौ चरन । इहि भव सिंधु नौका तरन तिन वद सरन जिन २ लई सब की आसा पूरन भई । अब मो सुमति कौ वर देहु । महिमा कहौं गुरज अछेहु । करता बुद्धि के प्रति पाल । हरता विघन सब कलिकाल २ जड़ता छेदि डारौ दूरि निरवाहि सुबहि उरमै पूरि । विनती सुनौ प्रमित निपति दाइक भजन रक्षिक वली । गुर महिमा जु सिंधु अगाधि । ताकौ तुम कृपा ही साधि । तन कसु इष्ट काजे अहा । काहौ रतन चरित निमाहा । गुर महिमा जुहो यह माला । मोपै हूजिये जू कृपाल जाकै माल उरमह लसौ लोक प्रलोक पूरति जसे ।

अंत—ठारह से संवत जानि । ऊपर बीस वर्ष बखानि । दीनी सुमंत श्री हरिवंश । गुरज सकथ्यौ चुनि गुन गंस । १०९ । कवित्त—गुरु कृपा तोई सौ जू भी ज्यौ रहै हियौ जाकौ जग सौ उदास औत्र न पथ गरूर है । उर दया मुख नाय काहू सौन और काम गुर की दई वैभवैं कौ विल सैर समूर है । उभै भाव रूप की तरंग उठै नाना भांति ताही मांह छक्यो अरि इन्द्री जीतन सूर है । वृन्दावन हित मेरी ताकौ नमो वार वार गुर कृपावल सौं करी माया चूर २ है । ११० दोहा ॥ केलिदास हस्ताक्षरन वेलि लिखी बनाइ । पठै सुनै गुर अत्य जे तिनकी वलि २ जाइ ।१११। इति श्री गुर महिमा प्रसाद वेलि वृन्दावन दास जी कृत सम्पूरणम् । राधाकृष्णाय नमः श्री कृष्णायनमः । गोपालाय नमः । संवत् १८९७ आश्वन शुक्ल पंचम्यो बुधो ॥

विषय—गुरुमहिमा का वर्णन ।

संख्या ५९. श्री रामायनी ककहरा, रचयिता—लाला वृंदावन, कागज—पुराना कागद, पत्र—५, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप)—८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१९ = १८६२ ई०, प्राप्तिस्थान—काशी नागरीप्रचारिणी सभा, बनारस ।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री गनेश जू सहाइ ॥ अथ लिख्यते श्री रामनी ककहरा कक्का कहु नामै रघुबीर कृपाला ॥ अज अविनासी दीन दयाला, सुरहित हरत भूमि को भारा ॥ प्रगट भये रघुवंत कुमारा ॥ षषा-खेलत दशरत आंगन मांही, वाल नय छवि वरनि जाही ॥ लछिमन भरथ शत्रुहन भैय्या ; निरषत जननी लेत वलैया ॥ गंगा गौर श्याम सुन्दर दोऊ जोरी । जो कछु कहौं सो उपमा थोरी ॥ कर धनुही कटि कसे निषंगा । चढ़े नचावन चपल तुरंगा ॥ घघा घरही विश्वामित्र जो आऐ । आदर करि भूपति वैठाये ॥

अंत—सो दिन धन्य घरी शुभ जाना । गुरु वसिष्ट मन में अनुमाना । साजि समाज वेद विधि कीन्ही । राज तिलक रघुराजहिं दीन्हा । सस्सा शोभित कनक सिंहासन राया । बसि बहुकाल गये सुरधामा ॥ इति श्री रामायनी ककहरा समास्मि सु सुभंवते ॥ मिती कुमार बदी ५ सतौ संवत् १९१९ लिपा श्री लाला वृन्दावन पटवारी वरही बैठै ॥

विषय—वर्ण माला के प्रत्येक अक्षर से क्रमशः चौपाई का आरम्भ हुआ है और संक्षिप्त रामायण भी पूरी कही गई है ।

संख्या ६०. विहार वृंदावन, रचयिता—वृंदावनदास (आगरा), पत्र—२३३, आकार—१० × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७७०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० बैजनाथ ब्रह्मभट्ट, ग्राम—अमौसी, डाकघर—विजनौर, जिला—लखनऊ ।

आदि—सत्य नाम सत्य गुरु समरथ दीन दयाल ॥ अथ लिष्यते बिहार वृन्दावन ॥ ग्रन्थ कर्त्ता की राय अर्थात् सिद्धान्त उन विरोधों के विषय में जो शास्त्र और अन्य मतों में वर्त्तमान हैं और संतता के गुण और काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार के अवगुण और दया । धर्म । शील । शन्तोप । उदारता । वैराग्य आदि के लाभ ॥ दोहा ॥ जग विवाद को देख करि । मन में संशय होय । वृन्द्रावन इस जाल से । विरला वाचै कोय ॥ तथा ॥ सब अपने सिद्धान्त को । सही कहत हैं सार । वृन्द्रावन वह और को । भूला जानै वार ॥ कोई यत्न अपने आधीन कहता है कोई ईश्वर के कोई दोनों के आधीन कहता हैं । कोई प्रारब्ध को कोई यत्न को मुख्य कहता है इसके विशेप एक ही मत वाला दस प्रकार के वचन कहिता है एक स्थान पर जगत् और ईश्वर की सत्यता दिखाता है दूसरे स्थान पर असत्य कह देता है । कहीं जप तप पूजा कर्म तीर्थ व्रत मूर्तियों की पूजा नाम का स्मरण ठहराता है कहीं इन सब का अनिश्चय कराता है परस्पर में शास्त्रों का विवाद दीखता है ॥ यही दशा पुराणों की भी है । और फिर सब वेद को प्रमाण करके अपने कहने की अर्थात् सिद्धान्त को निश्चय कराते हैं । कोई किसी देवता की महिमा करता है किसी दूसरे की

निन्दा करता है। विष्णु पुराण में विष्णु की महिमा की है शिव पुराण में शिव जी की महिमा है ॥ देवी पुराण में देवी को मुख्य कहा है। सूर्य पुराण में सूर्य को सवसे बड़ा वताया है। गणेश पुराण में गणेश जी को सवसे वड़ा अधिकार कहा है।

अंत—अंकुर वीज वासना होई। जग उपजावन हेतू सोई ॥ जग को सत्य सत्य जिन माना। दूजे दृढ़ कर इच्छा ठाना ॥ उपजै विनसै सो जग माहीं। आपी अपने हाथ नसाहीं ॥ ज्ञानी बीज वासना नासै। जग भ्रमवत सो ताको भासै ॥ ज्ञानी एक ब्रह्म सव जानै। दूजी दृष्टि नहीं मन आनै ॥ मृग तृष्णा को नीर ज्यों। दरसै जलहि समान। विंद्रा वन वह जल नहीं। कस डूवन की हान ॥ अन्य पुरुष की दृष्टि में। जग व्यौहार लखाय। विंद्रावन जब जग नहीं। कौन व्यौहार वताय ॥ महाराज सत्य है २ विना ब्रह्म ज्ञान के वन्ध की भ्रान्ति दूर नहीं हो सकती और मैंने भली प्रकार विचार के देख लिया कि मैं सजातीय विजातीय सुगति भेद रहित अखंड ब्रह्म हूं। मुझे अब इसमें कोई संसय विपर्यय नहीं रहा। महा राज आप धन्य हो धन्य है महाराज एक यह प्रेमी भी आपसे कुछ पूछा चाहता है अव आप इसकी सुनियै और मेरी तो यह दशा है ॥ सोरठा ॥ भूल तिमिर भयो दूर। भूल भर्म जातो रह्यौ। वृन्द्रावन मैं पूर। आपन लख आपहि रह्यौ ॥ इति श्री वृन्द्रावन समाप्त ॥

संख्या ६१. देवानुराग सतक, रचयिता—वुधजन दास, कागज—देशी, पत्र—१४। आकार—८×६ इंच, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८९७ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० वेनीराम पाठक, स्थान—मानिकपुरा, डाकघर—विलराम, जिला—एटा (उ० प्र०)।

आदि—श्री गणेशाय नमः। अथ देवानुराग सतक लिख्यते ॥ दोहा ॥ सनमति पद सन मति करन वंदू मंगल चार। वरनै वुध जन सतसई निज पर हित करतार ॥ परम धरम करता रहौ भवि जन सुष करतार। नित वंदन करता रहूं मेरा गहि करतार ॥ परूं पग तेरे आपके पांय पग तरे दैन। इस कर्म कूं सब तरे करौ सर्वथा चैन ॥ सव लायक गायक प्रभु घायक धर्म कलेश। लायक जानि नर नमत हैं पायक भए सुरेश ॥ नमूं तोहि कर जोरिकै शिव वनरी कर जोर। वर जोरी विधि की हरौ योवर दीजै मोर ॥ तीन लोक की खवर तुम तीन लोक के तात। त्रिविधि शुद्ध वदन करु त्रिविधि ताप मिटि जात ॥ त्रिविधि शुद्ध वंदन करूं त्रिविधि ताप मिटि जात ॥ तीन लोक पति हैं प्रभू परमातम परमेश। मन वच तन कर नमत हूं मेटौ कठिन कलेश ॥ नमूं जु तेरे पांय को परम पदारथ जान। तुम पूजे ते होत है सेवक आप समान ॥

अंत—परिपूरन प्रभु विसर तुम नमूं न आन कुठौर। ज्यों ज्यों कर मो तारिये विनती करूं निहोर ॥ दीन अधम निरधन रटैं सुनिये अधम उधार। मेरे औगुण जिन लखौ तारो विरद चितार ॥ करुनाकर परगट विरद भूले वनि है नाहि। सुध लीजौ सुध कीजिये दृष्टि धार मो माहिं ॥ यही विरद मो दीजिये जांचूं नहिं कछु और। अनमिष दृग निरखत रहूं शांति छवी चित चोर ॥ याद हिया में नाम मुख करो निरंतर वास। ज्यों लौ वसिबो

जगत में भरिबो तन में सास ।। मैं अज्ञान तुम गुण अनंत नाही आवे अंत । वंदत अंग नमाय वसू जाव जीव परजंत ।। हार गये हो नाथ तुम अधम अनेक उधार । धीरे धीरे सहज में लीजो मोहिं उबारि ।। आप पिछानि विशुद्ध को आया कह्यो प्रकाश । आप आप में थिर तने वन्दे बुध जन दास ।। मन मूरत मंगल वसी मुष मंगल तुव नाम । ये ही मंगल दीजिये परो रहों तुव धाम ।। इति श्री देवानुराग शतक संपूर्णम् लिखा मानिक चंद जैन स्वपठनार्थं । आगरा मध्य संवत् १८९७ वि० चैत्र शुक्ल पक्ष तृतीयायाम् ।।

विषयः—ईश्वर विनय ।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता 'बुधजन दास' थे रचनाकाल का पता नहीं, लिपिकाल संवत् १८९७ वि० है । इसको एक जैनी ने लिखा है ।।

संख्या ६२. क्षमाषोडसी, रचयिता—चक्रपाणि, पत्र—१३, आकार—१०$\frac{3}{4}$ × ७इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८८२ = १८२५ ई०, लिपिकाल—सं० १९०६ = १८४९ ई०, प्राप्ति-स्थान—पं० लक्ष्मीनारायण, वैद्य, स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा ।

आदि—श्री मते रामानुजाय नमः ।। सु कान्य कुब्जाग्र कुलोत्तम श्री सुखाय मिश्रा-न्वय जो बुधाग्राः ।। स्तोत्रं क्षमा पोड्शिकाऽभि धानं व्याखाति सद्विबुध चक्रपाणिः ।। श्री पराशर भट्टाचार्य्य श्री रंगेश पुरोहितः ।। श्री वत्सांक सुतः श्री मान श्रेय से मेसर भूयसे ।। १ ।। श्री पराशर भट्टाचार्य्यः मे भूयसे श्रेयसे अस्तु महेत भद्राय भवतु अत्र श्रेयसो भूयस्त्वंतु स्तोत्र समाप्ति तत्प्रचारादि प्रतिवंधक पुरित प्रशमत्सेन स्तोत्रा ध्येतृ श्रौतृजन क्षेम वाहुल्य वत्वं कथं भूतः श्री पाराशर भट्टार्यः श्री रंगेश पुरोहितः श्री रंगेशः श्री रंग क्षेत्र विराजमानः ।।

अंत—संत्यक्त सर्व विहित क्रिय मर्थ कामश्रद्धालु मन्वह मनुष्ठितनिंद्य कृत्यं ।। अत्यंत नास्तिक मनात्म गुणोय पन्नं मांरंग राज कृपया परयाक्ष मस्वं ।। ९ ।। संत्यक्त सर्व विहित क्रियं संत्यक्त त्याग करि है संपूर्ण विदित स्वधर्म रहित क्रिया जा करिकें ओरू अर्थ जो नाना प्रकार के अर्थ हैं काम जो नाना प्रकार की कामना हें तिनहीं में आठो प्रहर श्रद्धा हे ओर अनुष्ठित करवे के जोग्य नहीं ऐसे करियत भये हैं निंद्य कर्म जा करिकें ओर अत्यन्त नास्तिक जो वेद शास्त्र की निन्दा ताको करण वारों जो हों ओरु अनात्म गुणोप पन्नं आना-त्मा जो देह रे ताही के गुणनि करिकें उप पन्न कहा युक्त हों आत्मस्वरूप को जो सोधन है ताहिं करिकें रहित हों ऐसा जो हों ताके सब अपराध अपनी परम जो कृपा हे ता करिकें क्षमा पन करतु यद्यपि अपना बड़े योग्य हैं तथापि अपनी न्यूनता वर्नन करीं नीचानु संधान जीव को कर्त्तव्य हे ।। तदुक्तं यामुना चार्य्योपि । अम यदि क्षुद्र श्रल मीतर सूया प्रसव भूरि-त्यादि ।। १९ ।। यश्चक्रे रंगिणः स्तोत्रं क्षमा षोडश नामकं ।। पः वेदाचार्य यो वेदाचार्य्य क्षमा षोडशी हे नाम जाको ऐसो रंगीराग स्तोत्रं रंगनाथ स्वामी को जो स्तोत्र हे ताहि चक्रेकरत भए ऐसें जो हैं वेद व्यास के तनय पुत्र वेदाचार्य्य तिनहि हम भजत हें शिष्य कृत श्लोकयं ।। २० ।। यश्च क्रे रंगीणः स्तोत्रं क्षमाषोडशि नामकं ।। वेदव्यासस्य तनयं वेदा-चार्य्य महंस्त्जे ।। २० ।। इति श्री क्षमा षोड़शी सम्पूर्ण ।। दुर्जति दिति विधु संमित विक्र

मार्क भू प्रेदं हाय नवरे द्विप वैरिगेकें मासेनभस्य मल पक्ष रमेश तिथ्यां श्री चक्र-पाणि बुध राट् विदधे सु टीकाम् ॥ १ ॥ इति श्री क्षमा पोड्स्या टीका व्याख्या समाप्ता ॥ संवत् १९०६ ॥

विपय—श्रीरंगाचार्य्यं की क्षमा पोड्षी नामक स्तोत्र की व्याख्या ॥

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रन्थ में सोलह श्लोकों द्वारा श्री रंगाचार्य्य जी की विनय की गई है। अन्तिम श्लोकों से पता चलता है कि मूल ग्रन्थ श्री वेदाचार्य्य रचित है और उसके श्लोकों का अन्वय कान्य कुब्ज कुलोत्पन्न श्री सुख मिश्र द्वारा सम्पन्न हुआ है और भाषा व्याख्या श्री चक्रपाणि जी मिश्र ने की है। व्याख्या विस्तृत और सुबोध है। प्रायः पदच्छेद करके भली भांति समझाया गया है–ग्रन्थ के अन्त में उसका रचना काल भी एक श्लोक में दे दिया गया है "दृगदंति दंति विधु" इससे संवत् १८८२ निकलता है। इसी को टीकाकार ने टीका निर्माण समय बतलाया है।

संख्या ६३. कवित्त रामायण, रचयिता—चंद कवि, कागज—देशी, पत्र—३३, आकार—८ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६० = १८०३ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला बेनीराम, ग्राम—गंगागंज, डाकघर—सलेमपुर, जिला—अलीगढ़।

आदि—पहिले भयो राज रिषि पाछे भयो ब्रह्म रिषि विस्वा मित्र वाको नाम जानते है सबहीं ॥ उन कह्यौ आय मेरी राक्षस बुझावै आगि, राजा तेरे पुत्र बिनु काहू सों न दवहीं ॥ जिनके खिलौना लिये खेलत हू खवासंग, ऐसे प्यारे न्यारे होत नाहि कबहीं ॥ करि उपगार कौन कीनो है विलंब। चंद ते उगे ही वाय दिन भागे मौन जबहीं ॥ २ ॥ आगे आगे रिषि जाय हिय हरष मांहि, पाछे पाछे सुंदर कुंवर रघुवीर हैं ॥ सु पै है ताकी वाय पूंछत है ताहि पाय चल रे निकट राय जहां तेरे घर है ॥ मारग में भयो सोर राक्षस उठे घोर। हंसत हंसत राम लियो एक सरहै ॥ देखो रे या नींच की जु आई है सुकृत बीच, ऐसी ऐसी मीच पाय पुनि नीच सो निडर है ॥

अंत—जाय हाथ धनुष चढ़ाय भये सीता पति। ताही हाथ रावन संघारो लंक जारी है ॥ जाही हाथ तारयो ये उवारयो हाथी हाथ गहि। जाहि हाथ हेम मथि लछिमी निकारी है ॥ जाही हाथ गिरवर धारी भये प्रान नाथ। ताही हाथ नंद कहा नाथ्यो नाग कारी है ॥ हौं तो अनाथ प्रभु जोड़ दोऊ हाथ अब तो। श्री नाथ हाथ गहिवे की वारी है ॥ दो०—ये चरित्र रघुनाथ के वरने हैं कवि चंद ॥ नागर नन्हा पठन को ठाकुर श्याम लिखंत। मुखते जु वाहर चंद के जैसे निकसे वर्ण। तैसे ही श्यामा लिखो सुन्यो जे अपने कर्ण ॥ जो कोई याको वांचे हैं गुरु पंडित कवि यार। सवद सवै सुधि कीजियो मोपै ताना न मार ॥ इति श्री चंद विरिचितायां कवित्त रामायण संपूर्ण ॥ श्री राम संवत् १८६० लिखा ॥

विषय इसमें रामायण सातों कांड के कवित्त लिखे हैं।

टिप्पणी—इस ग्रंथ के रचयिता कवि चंद थे जैसा इनके पदों में आया है:—लिपि काल संवत् १८६० वि० है और कुछ पता नहीं चलता। लिपिकाल से पता

चलता है कि १८६० में चंद कवि वर्तमान था क्योंकि लेखक ने अपने इस दोहे से बतलाया है:—

ये चरित्र रघुनाथ के बरने हैं कवि चंद। नन्हा नागर पठन को ठाकुर श्याम लिखंत ॥ मुखते वाहर चंद के जेसे निकसे वर्ण। तैसे ही श्यामा लिखे सुन्यो जु अपने कर्ण अर्थात् श्यामा ने चंद कवि के मुख से निकलते ही शब्दों को लिखा है अर्थात् लेखक और कवि साथ ही थे।

संख्या ६४. मूहूर्त दर्पण, रचियिता—चंद्रमणि, पत्र—५५, आकार—१३ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप् —१६२६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३९ = १७८२ ई०, प्राप्तिस्थान—शालिग्राम दुबे, ग्राम—नंदगाँव, डाकघर—जैतपुर कलाम, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ मुहूर्त दर्पण लिख्यते सिंदूर कण गज वदन, सुख अंगार निकेत। मंगल मूरति जग विदित, गण पति सज मति देत ॥१॥ दंडकु पंचम प्रवल ॥ महाराज श्री उदोत सिंह, जगमें प्रसिद्ध दिन कर से लसत हैं। जिनके प्रताप अरि तिमिर विलाइ जात, कहू ना दिखात गिरि कन्दरा वसत हैं ॥ विमल सुजस को प्रकास दसौ दिशा होत, मित्रण के मुख पुंडरीक विकसत है। वन्दत सकल कर देवनि के वृन्द सदा, सम्पति समीप कवि वुध विलसत हैं ॥ २ ॥ दोहा महाराज के हुकुम तें, विविध ग्रन्थ मथि चारु, भाषा कीन्हों चन्द्र मणि, सकल संहिता सारु ॥ ३ ॥ अगिनि ब्रह्मा गौरि गनपति नाग षण्ग मुष भानु। शंभु दुर्गा धर्म विश्वे विष्णु कामहि जानु ॥ शिव शशि पे तिथिन के पति प्रति पदा तें मानु। अमावस के पित्र स्वामी, यहै मति उर आनु ॥ ४ ॥

अंत—दोहा—पारस के परसें कहूं, आयस कंचन होत। सुवरन मय जग जग मगै। दरसै सिंह उदोत ॥ ४१ ॥ दंडक ॥ सव जग को अधार सहि सूवा को सिंगार। सब भूप सिर दार जाहि लाजें पर वार ॥ दान जूझ को अँगार अरि दल जेतवार। जासु सोहै भुज गार सदा गुनी को भँडार ॥ जसु उजिल अपार सुर सरि कैसी धार। पार वार हू कौ पार छहौ दिसनि मझार ॥ अति परम उदार सब सुषमा को सार। धनि नृपति उदोत सिंह पृथु अवतार है ॥ ४२ ॥ सवैया ॥ जौ लगि भूमि पुरंदर मंदिर ज्यौ लगि मेरु मंदा किन जो है। जौ लगि इन्द्र फनिंदलिंद सुता उतरंगनि मोहे ॥ ४३ ॥ इति सकल सामंत चक्र चूड़ा मणि मंजरी नी राजित चरण कमल चतुर्दधि वहाय वसुन्धर हृदय पुंडरीक विकास दिन कर श्री मन महा राजा धिराज उदोत सिंह देवो घोजित ज्योति रवि चन्द्र विरचितं मुहूर्त रत्ने वस्तु प्रकरणं ॥ यादशी पुस्तकं दृष्ट्वा तादशी लिखितं मया। यदि शुद्धम शुद्धवा मम दोषो न दीयते ॥ लिषितं पंचम दास सावरण ब्राह्मण उतनु वस्ती मानिकपुर जिला इटावा तथा वासुरस आकर हलते पंचार मे अपने पाठकों उवारी नगर पई में जमुना जी के तट संवत् १८३९ द्वितीय ज्येष्ठ सुदी १३

विषय—(१) शुभा शुभ प्रकरण [पृ० १—११] (२) नक्षत्र प्रकरण [११—२३]
(३) संक्रांति " [२३—२७] (४) गोचर „ [२७—३०]

विषय—(५) संस्कार प्रकरण [पृ० ३०—३२] (६) विवाह प्रकरण [३२—३८]
(७) वधू प्रवेश " [३८—४०] (८) यात्रा " [४०—५०]
(९) वस्तु " [५०—५५]

संख्या ६५ ए. अमरलोक वर्णन, रचयिता—चरणदास (डेहरा, अलवर), पत्र—८, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०१ = १८४४ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा रामदास; ग्राम—जहांगीरपुर, डाकघर—फरौली, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ अमर लोक वर्णन लिख्यते ॥ दोहा ॥ प्रणाम श्री सुख देव को सोहैं गुरू दयाल ॥ काम क्रोध मद लोभ से काढ़े मेरे साल ॥ १ ॥ बाणी विमल प्रकाश दी बुधि निर्मल को तात मोहि मूरख अज्ञान को नहिं आवत है बात ॥ २ ॥ अमर लोक वर्णन करौं वेही करैं सहाय। दृष्टि हिये मम खोलि कर सबही देहु दिखाय ॥३॥ भेद लियो गुरु देव सों अद्भुत रचौं सु ग्रन्थ। साखी वेद पुराण में जानी सुनिये संथ ॥४॥ चौ०-भेद अगोचर कोई कोई जानै। गुरू दिखावै तो पहिचानै ॥ पता कहैं कछु वेद पुराना। ज्यों का त्यों उनहूं न वखाना ॥ कछु कछु मत मारग हू भाषैं। फिरि भूलैं समझैं नहिं साखैं ॥ हरि की कृपा प्रगट में गया। किया उजागर खोलि सुनाया ॥ निराकार तौ ब्रह्म है माया है आकार। दोनो पदवी को लिये ऐसा पुरुष निहार ॥ २

अंत—दोहा—मम हिरदे में आयके तुमहीं कियो प्रकाश। जो कछु कहौं सो तुम कहौ मेरे मुख सो भाष ॥ ५ ॥ आदि पुरुष परमातमा तुमहिं नवाऊं माथ, चरनन पास निवास दै कीजै मोहिं सनाथ ॥ ६ ॥ तुमरी भक्ति न छाड़हूं तन मन शिर क्यों न जाय। तुम साहिब मैं दास हूं भलो वनो है दाव ॥ ७ ॥ गुरु शुक देव कृपा करी मूरख भयो प्रवीन। मम मस्तक पर कर धर्यो जानि निपट आधीन ॥ ८ ॥ कोटि नाम को फल लहै तिरवेनी असनान ॥ शोभा गावै लोक की मूरख होय सुजान ॥ ९ ॥ पढ़ै सुनै जो प्रीति सौं पावै भक्ति हुलास। नित उठकर तू पाठ यह चरण दास कहि भास ॥ १० ॥ प्रेम बढ़ै अघ सब हरै कलह कल्पना जाय। पाठ करै या लोक को ध्यान करत दरशाय ॥ ११ ॥ इति श्री अमर लोक अखंड धाम वर्णन ग्रन्थ संपूर्णम् लिखा नारायन गोसाई जेठ सुदि प्रतिपदा संवत् १९०१ वि०

विषय—अमर लोक की कथा वर्णन है ॥

संख्या ६५ बी. अमरलोक लीला, रचयिता—चरणदास, पत्र—१४, आकार—८३/४ × ५१/२ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१५, रूप—प्राचीन, लिपि—फारसी, प्राप्तिस्थान—बाबू शिवकुमार प्लीडर, स्थान—लखीमपुर, डाकघर—लखीमपुर, जिला—खेरी।

आदि-अंत—६५ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—इति श्री अमर लोक निज धाम निज स्थान परमोत्तम पुरुष विराजमान प्राप्तु निर रुद्र कवुअत श्री सुखदेव जी के दास चरणदास कृत अमर लोक लीला सम्पूर्णम् समाप्तम् वखते नाक़िस बन्दा दीन दयाल

बल्द भगवन्त राम कायस्थ खरे कानूनगो परगने काकोरी सरकार लखनऊ मसाफ सूबे अख्तरनगर अवध।

विषय—(१) पृ० १ से २० तक—अमरपुरी (वैकुण्ठ) की शोभा स्थिति और वहां के निवासियों का वर्णन।

संख्या ६५ सी. अष्टांग जोग, रचयिता—चरणदास (डेहरा, अलवर), कागज—देशी, पत्र—३४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण अनुष्टुप्)—५२०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९६ = १८३९ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा रामदास, ग्राम—जहांगीरपुर, डाकघर—फरौली, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः॥ अथ अष्टांग जोग ग्रंथ लिख्यते॥ गुरु शिष्य संवाद। दोहा॥ व्यास पुत्र धन धन तुम्हीं धन धन यह अस्थान। मम आशा पूरी करी धन धन वह भगवान॥ १॥ तुम दर्शन दुर्लभ महा भये जु मोको आज। चरण लगो आपादियो भये जु पूरण काज॥ २॥ चरण दास अपनी कियो चरणन लियो लगाय। सिर कर धरि सब कुछ दियो भक्ति दई समुझाय॥ ३। बालपने दरशन दिये तबहीं सब कुछ दीन। बीज जु बोया भक्ति का अब भया वृक्ष नवीन॥ ४॥ दिन दिन बढ़ता जायगा तुम किरपा के नीर। जब लग माली ना मिला तब लग हुता अधीर॥ ५॥ अरु समुझाये जोग ही वहु भांती वहु अंग। ऊर धरे ताही कही जीतन विंद अनंग॥ ६॥ अरु आसन सिखलाइया तिनकी सारी विद्धि। तुम्हारी कृपा सों होहिंगे सबही साधन सिद्धि॥ ७॥ इक अभिलाषा और है कहि न सकूं सकुचाय। हिये मुख आय करि फिरि उलटी ही जाय॥ ८॥ गुरु वचन॥ दोहा—सत गुरु से नहिं सकुचिये एहो चरणन दास। जो अभिलापा मन विषे खोलि कहौ अब तास॥ ९॥

अंत—जोग समाधि – दोहा—आसन प्राणायाम करि पवन पंथ गहि लेहि। षट चक्कर को छेद करि ध्यान शून्य मन देहि॥ आपा विसरै ध्यान में रहै सुरति नहिं नाद। लीन होय किरिया रहित लागै जोग समाध॥ तब लगि तत्व विचारि करि कहै एक अरु दोय। ब्रह्म व्रत बांधे रहे ह्यां लगि ध्यानहिं होय। मैं तू यह वह भूलि करि रहै जु सहज सुभाय। आपा देहि उठाय करि ज्ञान समाधि लगाय। ज्ञान रहित ज्ञाता रहित रहित ज्ञेय अरु जान। लगी कभी छूटै नही यह समाधि विज्ञान॥ पूछे आठौ अंग ते जोग पंथ की वात। सुकदेव कहै तामैं चलो गुरुकृपा लै साथ॥ इति श्री अष्टांग जोग ग्रंथ संपूर्ण समाप्तः लिखित स्वामी रामानंद गिरि गोसाईं स्वपठनार्थ जेष्ठ सुदि २ संवत् १८९६ वि० जै राम राम राम राम।

विषय—अष्टांग जोग, समाधि का लक्षण, भेद और क्रिया का वर्णन।

संख्या ६५ डी. बाल लीला, रचयिता—चरणदास (दिल्ली), पत्र—१२, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप् —१००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० चंद्रशेखर त्रिपाठी, स्थान—वाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—...............अनुमान से २–३ पृ० लुप्त॥ न काहु कौ करै अपनै कर लेपै॥ १०॥ महूं पिजैं हौं कहां सव ठौर हमारी। बाट घाट गिरि किंनरागो कुलहि मझारी

इहि विधि बचन रचै अति सुर सखी ज्यौं बोलै ॥ वोठ कंठ लागै नहीं संसै सय खोलै ॥११॥ गोपकुमार सहंसयेक लीये संगी डोलै ॥ व्रज बन जमुन जल थल लीला बहु खेलै ॥ कबहु कै होय महीन टा पटु हाथ वजावै ॥ कवहुं कै दैन सुर धरै संगीत सुनावै ॥ १२ ॥

अंत--बाढ़ी निश सरद देप हरि की नृत्त कारी । गऊ वन तिन छोड़ि दियो वछरन पै नांहि पियो ॥ मुरली धुनि सुनत मोहे मुनि जन वृत धारी ॥ सुषदेव जी गुरु कूं चरन दास वहुप्रणाम करै । रास को विलास दीयो परगट दरसारी ॥ १ ॥ ईति पदं सं० ॥
विषय--श्री कृष्ण के बाल चरित्र वर्णन ॥

संख्या ६५ ई. भक्ति पदार्थ, रचयिता—चरणदास (डेहरा, अलवर), कागज—देशी, पत्र—८०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३८०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९६ = १८३९ ई०, प्राप्तिस्थान--बाबा रामदास, ग्राम--जहांगीरपुर, डाकघर—फरौली, जिला—एटा।

आदि--श्री गणेशाय नमः अथ भक्ति पदार्थ ग्रन्थ लिख्यते ॥ दोहा--प्रणवौं श्री मुनि व्यास जी मम हिरदे में आय । भक्ति पदारथ कहत हूं तुमहीं करौ सहाय ॥ प्रेम पगावन ज्ञान दे जोग जितावन हार । चरन दास की वीनती सुनियो बारंबार ॥ तुम दाता हम मांगता श्री सुकदेव दयाल ॥ भक्ति दई व्याधा गई मेटे जग जंजाल ॥ किसू काम के थे नहीं कोई न कौड़ी देह । गुरु सुक देव कृपा करी भई अमोलक देह ॥

अंत--दोहा--सून्य शहर हम वसत हैं अनहद है कुल देव । अजपा गीत विचारिले चरण दास यहि भेव ॥ भक्ति पदारथ उदय सूं होय सभी कल्याण । पढ़ै सुनै सेवन करै पावै पद निर्वाण ॥ भक्ति पदारथ मैं कही कछु एक भेद वखानि । जो कोई समझै प्रीति सों छूटे जम दुख सान ॥ पाठ करै मन में धरै बहुरो करै विचार । कहैं गुरू शुकदेव जू तुम्हें करू परणाम ॥ तुम प्रसाद पोथी कही भये जो पूरण काम ॥ हिरदे में शीतल भये तपति गई सब दूरि । या बाणी के कहे ते कायर मन भयो शूर ॥ चंदन चरचैं पुष्प धरि वहुरि करै परणाम । कथा वांचि सब ही सुनै कहा पुरुष कह वाम । कहै सुनै जो प्रेम सों वाकूं राखै याद । चरण दास यों कहत है बनिहौ पूरे साध ॥ इति श्री चरण दास कृत भक्ति पदार्थ ग्रन्थ संपूर्ण लिखा शिव दीन पांडे संवत् १८९६ वि० चैत्र वदी ९

विषय--सतगुरु की भक्ति का उपदेश।

संख्या ६५ एफ. भक्ति पदार्थ, रचयिता—चरणदास, कागज—स्यालकोटि कागद, पत्र—५५, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—११००, रूप—कुछ प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९२ = १८३५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० भोजराम शुक्ल, स्थान—ऐतमादपुर, डाकघर—ऐतमादपुर, जिला—आगरा।

आदि--६५ ई के समान।

अंत--जिनको मन विकरल सदा, रहौ जहां चित होय । घर बाहर दोउ एक से, डारी द्विविधा खोय । यह सगरो उपदेश ही में आपन कूं कीन । मोमन कूं आया घना, कहीं होय

आधीन । सत उस सूं मांगू यही, मारी गरीबी देय । दूर बड़प्पन कीजेय । न्हानाहीं करलेय, जनक परम गुरु देव जी, सुन सतगुरु सुखदेव । यही अरज मैं करत हूं, दोहि साध करलेव, चारों युग के भक्तजन, तुम हौ सुख के धाम । चरणदास ही होयके, तुम्हें करूं परनाम, इति इति श्री चरण दास जी कृत भक्ति पदार्थ सम्पूर्ण ॥

विषय—विचित्र प्रकार के ज्ञान का विवेचन ।

संख्या ६५ जी. भक्ति पदार्थ, रचयिता—चरणदास (दिल्ली), पत्र—५४, आकार—८ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२९६, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भोजराज शुक्ल, (अवसर प्राप्त, इंस्पेक्टर, पाठशाला), स्थान ऐतमादपुर, डाकघर—आगरा, जिला—आगरा ।

आदि ६५ ई के समान ।

अंत—तिनसे जग सहजहिं छुटा, कहारंक कह भूप । चले गये घर छोडि के धरि विरक्त का रुप । जिनको मन विरकत सदा, रहौ जहां चित होय । घर बाहर दोउ एकसे, डारी द्विवधा खोय । यह सगरो उपदेश ही, मैं आपन कूं कीन । मो मन कूं आपा घना, कहीं होय आधीन । सतगुरु सूं मांगू यही मोहि गरीबी देय । दूरि बड़प्पन कीजिये न्हा नाही करि लेय । जनक परम गुरु देव जी सुन सतगुरू सुखदेव । यही अरज मैं करत हूं, मोहि साध करि लेव । चारो युग के भक्त जन तुम हौ सुख के धाम । चरण हो दासा होय के, तुम्हें करूँ परनाम । इति श्री चरण दासजी कृत ग्रंथ यह । भक्ति पदारथ नाम । लिख्यो भक्ति अनुराग सों, पूर्ण भये मम काम । भादों शुक्ला पक्ष की, नवमी तिथि रविवार । संपूरण ता दिन कियो, व्याधा सकल निवार । इति शुभम् ।

विषय—भक्ति वर्णन ।

संख्या ६५ एच. ब्रह्मज्ञान सागर, रचयिता—चरणदास (डेहरा, अलवर), पत्र—२०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२५, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०२ = १८४५ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा विष्णुगिरि, ग्राम—शिवनगर, डाकघर—सहावर कस्वा, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ ब्रह्म ज्ञान सागर लिख्यते ॥ दोहा ॥ जैसे है सुकदेव जी जानत सव संसार । भगवत मत परगट कियो जीव किये वहु पार ॥ १ ॥ तिन मोपै किरपा करी दियो ज्ञान विज्ञान । सो सिख तुमसों कहत हौं छूटै सब अज्ञान ॥ २ ॥ शिष्य सुनौ अब कहत हौं परम पुरातन ज्ञान । निगुरे को नहिं दीजिये ताके तप की हान । ३ ॥ कुंडलिया—मोक्ष मुक्ति तुम चहत हौ तजौ कामना काम । मन की इच्छा मेंटि करि भजौ निरंजन नाम ॥ भजौ निरंजन नाम तत्व देह अभ्यास मिटाओ । पंचन के तजि स्वाद आप में आप समाओ ॥ जब छूटै झूठी देह जैस के तैसे रहिया ॥ चरण दास यह मुक्ति गुरू ने हमसे कहिया ॥

अंत—दोहा–जनक गुरु शुकदेव जी चरण दास शिष्य होय । आप राम ही राम हैं गई दुई सब खोय ॥ ब्रह्म ज्ञान पोथी कहो चरण दास निर्वार । समुझै जीवव मुक्त हो लहै भेद तत्सार ॥ ४ ॥ इति श्री ब्रह्म ज्ञान सागर ग्रन्थ से संपूर्ण समाप्तः १९०२ वि०

विषय—इसमें ब्रह्म ज्ञान का वर्णन है ॥

संख्या ६५ आई. ब्रह्मज्ञान सागर, रचयिता—चरण दास (दिल्ली), पत्र—३४, आकार—७ × ३¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—जोरावर सिंह, ग्राम—मीढ़ाकुरा, डाकघर—मीढ़ाकुरा, जिला—आगरा।

आदि ६५ एच के समान।

अंत—अथ ब्रह्म ज्ञान को लछन वरनन। अथ ज्ञान परीछा। निरलंभ १ निहभर्म २ नीर वासीक ३ निरविकार। अथ विचार परीछा। निरमोहत १ निरवंध २ निहसंक ३ निर्सन ४ परम संतोप परीछा। अजाचीक १ अपालीक २ अपछीक ३ अस्थिर। अथ सहज परीछा। नीहप्रपंच निह तरंग २ निरलिप्त ३ निहकर्म ४। निरवैर परीछा। सुहृदै १ सुषदाई २ सीतलताई ३ सुमती ४ अथ सुन परीछा सीतल वत १ सुवुधी २ सतवादी ३ ध्यान समाधी ४ जामो ऐ लछन न होऐ ताको वी टंडो जानी ऐ लछ ग्यानी ए। दोहा। जनक गुरु सुषदेव जी चरनदास सिष होइ। आपा राम ही राम है गई हुई सब षाऐ। १८७॥ ब्रह्म ग्यान पोथी कही चरनदास निरु आर। समुझै जीवन मुक्त होए, लइ भेद ततसार। इति श्री चरनदास जी कृत ब्रह्म ज्ञान सार्गा। समाप्त शुभमस्तु।

विषय—ब्रह्म ज्ञान का वर्णन।

संख्या ६५ जे. ब्रह्मज्ञान सागर, रचयिता—चरणदास (दिल्ली), पत्र ३४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भगवती प्रसाद शर्मा, ग्राम—बरतरा, डाकघर—कोटला, जिला—आगरा।

आदि—६५ एच और अंत ६५ आइ के समान।

संख्या ६५ के. ब्रह्म ज्ञानसागर, रचयिता—स्वा० चरणदास (दिल्ली), पत्र—३२, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० दीनानाथ, अध्यापक, ग्राम—चंद्रपुर, डाकघर—कंतरी, जिला—आगरा।

आदि—६५ एच और अंत ६५ आइ के समान।

संख्या ६५ एल. ब्रजचरित्र, रचयिता—चरणदास (डेहरा, अलवर), कागज—देसी, पत्र—१६, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९६, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८५ = १८२८ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा रामदास, ग्राम—जहांगीर पुर, डाकघर—फरौली, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ व्रज चरित्र लिख्यते ॥ दोहा—दीनानाथ अनाथ की विनती यह सुनि लेहु ॥ मम हिरदे में आय के व्रज गाथा कहि देहु ॥ चारि बेद तुमको रटै शिव शारदा गणेश। औरन शीश नवायहूं श्री कृष्ण करौ उपदेश ॥ कै गुरु को गोविन्द को भक्ती कै हरि दास। सबहुन कै एकै गिनौ जैसे पुहुप अरु बास ॥ नारद मुनि अरु व्यास जू कृपा करिय सुदयाल। अक्षर भूलौं जो कहीं कहौ मोहिं ततकाल ॥ श्री शुकदेव दयाल

गुरु मम मस्तक पर ईश ।। ब्रज चरित्र मैं कहत हौं तुमहिं नवाये शीश ।। सब साधुन परणाम करि कर जोरों शिरनाय । चरण दास विनती करै बाणी देहु बनाय ।। सदा शिव ब्रज में रहै करि गोपी को रूप । मूरति तौ परगट भई आप रहत है गूप ।।

अंत—कवित्त—नन्द के कुमार हौं तौ कहौ वार वार । मोहिं लीजिये उवारि ओट आपनी में कीजिये ।। काम अरु क्रोध काटि डारौं जम वेड़ा प्रभु, मांगौं एक नाम मोहिं भक्ति दान दीजिये । और की छुटायो आश संतन को दीजै साथ, वृन्दावन वास मोहिं फेरिहु पतीजिये ।। कहै चरण दास मेरी होय नाहीं हास, श्याम कहूं मैं पुकारि मेरी श्रौन सुनि लीजिये ।। १ ।। वाही हाथ कुच गहि पूतना के प्राण सोखे, पाय ऊंची पद निज धाम को सिधारी है ।। वाही हाथ श्रीधर की मुख माड़ौ दही, सेती छाती पै पांव दै मरोरि जीभ डारी है ।। वाही हाथ कूवरी के कूवर को सीधो कियो । वाही हाथ मत गज खेंचि मूढ़ मारी है ।। वाही हाथ वांह चरण दास कहै आय गहौ । जाही हाथ जमुना में नाथ्यो नाग कारी है ।। इति श्री ब्रज चरित्र संपूर्ण समाप्तः लिखा रामवली गोला मैदान वाले संवत् १८४५ वि०

विषय—ब्रज की कृष्ण लीलाओं का वर्णन ।

संख्या ६५ एम. चरणदास के शब्द, रचयिता—चरणदास (डेहरा, अलवर), पत्र—१२०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१६०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०२ = १८४५ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा विष्णुगिरि, ग्राम—शिव नगर, डाकघर—सहावर कस्बा, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ।। अथ चरण दास कृत शब्द वर्णन ।। मंगला चरण ।। दोहा ।। ब्रह्म रूप आनन्द घन निर्विकार निर्लेव । मंगल करन दयाल जी तारण गुरु सुख देव ।। १ ।। सतियन में तुम सत्य हो सूरन में हो वीर । जतियन में तुम जती हो श्री शुख देव गंभीर ।। २ ।। राग कल्यान—नमो सुख देव हो चरण पखारणम् । द्वन्द संकट हरन करन सुख मंगल परम आनंद घन पतित के तारन ।। नाव तक त्याग वैराग है मुक्त लौं तीनहूं गुणन ते निर्विकारम् ।। महा निष्काम और धाम चौथे रहौ सिद्धि चेरी भई फिरै लारं ।। ज्ञान के रुप अरु भूप सब मुनिन में दया की नांव किये जीव पारं ।। उदै भागौत मति भान परगट कियो तिमिर कियो दूरि अरु धर्म धारं ।। मोह दल जीति अनि रीति के खंडन भक्ति के दृढ़ करन भव विडारं ।। चरण दास के शीस पर हाथ नित ही रहौ यही मागौं गुरू वार वारं ।। ६ ।।

अंत—कोई जानै संत सुजान उलटे भेद को । पेड़ चढ़ो माली के ऊपर धरती चढ़ी अकास । नारि पुरुष विपरीति भये हैं देखत आवै हास ।। वैल चढ़ो शंकर के ऊपर हंस ब्रह्म के शीस । सिंह चढ़ो देवी के ऊपर गुरु ही की वकसीस ।। नाव चढ़ी केवट के ऊपर सुत की गोदी माय । जो तू भेदी अमर नगर को तौ तू अर्थ वताय ।। चरण दास सुख देव सहाई अब कहा करिहै काल । बांबी उलटि सर्प में वैठी जवसूं भये निहाल ।। २ ।। इति श्री चरण दास कृत शब्द समाप्तः ।। लिखा भैरू नाथ संवत् १९०२ श्रावण सप्तमी ।।

विषय—ज्ञानोपदेश ।

संख्या ६५ एन. धर्म जहाज, रचयिता—चरणदास (डेहरा, अलवर), पत्र—२८, आकार—१०×८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६००, लिपि-नागरी, लिपिकाल—सं० १९०१ = १८४४ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा रामदास, ग्राम—जहाँगीर पुर, डाकघर—फरौली, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ धर्म जहाज लिख्यते ॥ श्री गुरू चेला संवाद ॥ चेलाबचन ॥ दोहा ॥ ठाढ़ा होकर जोरि कै अरज करै चरण दास । ए हो श्री सुक देव जी कछु पूंछन को आस ॥ १ ॥ गुरुवचन-पूछौ मन को खोलि कर मेंटौ सब संदेह । अरु तुम्हरे हिरदे विषै सदा हमारो गेह ॥ २ ॥

अंत—व्यास पुत्र तुम मम गुरु देवा । करूं मानसी तुम्हरी सेवा ॥ मन में तुम्हरी पूजा साज । तुमसो पूंछि करौं सव काज ॥ मेरे ध्यान शितावी आये । जो थे सो संदेह मिटाये ॥ मैं तो ध्यान करत ही रहूं । तुम्हरी मूरति हृदय गहूं ॥ मेरे जीवन प्राण अधारा मैं नहिं रहो चरण से न्यारा ॥ तुम्हरो चरण दास कहा हूं । बार बार तुमपै बलि जाहूं ॥ तुमहीं को ईश्वर करि मानू । पार ब्रह्म तुमहीं को जानू ॥ और न कोई पूजी आसा । मों हिरदे में राखौ वासा ॥ दोहा—अपने चरणहि दास को सव विधि दिया अघाय । अस्तुति करूं तौ क्या करूं तो क्या करूं मोपै कही न जाय ॥ इति श्री स्वामी चरण दास कृत धर्म जहाज गुरु चेला संवाद संपूर्ण समाप्तः लिखा नारायन गोसाईं ॥ जेठ सुदी अष्टमी । संवत् १९०१ वि० ॥

विषय—गुरु शिष्य संवाद के रूप में संसार से तरने का ज्ञान वर्णन ।

संख्या ६५ ओ. षटकर्महठजोग, रचयिता—चरणदास (डेहरा, अलवर), पत्र—१४, आकार—८×६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९६ = १८३९ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा रामदास, ग्राम—जहांगीरपुर, डाकघर—फरौली, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ षट कर्म हठ जोग लिख्यते ॥ शिष्यवचन ॥दोहा॥ अष्टांग जोग वर्णन कियो मोको भई पहिचान । छहौ कर्म हठ जोग के वरणों कृपा निधान ॥ गुरू वचन—पहिले ये सब साधिये काया होवे सुद्धि । रोग न लागै देह को उज्वल होवै वुद्धि ॥ चौपाई—अरु साधै षट कर्म बताऊं । तिनके तोको नाम सुनाऊं ॥ नेती धोती वसती करिये । कुंजर कमर देह सब हरिये ॥ न्यौली किये भजै तन बाधा । देखि देखि निज गुरु सों साधा ॥ त्राटक कर्म दृष्टि ठहरावै । पलक पलक सो लगन न पावै ॥ छप्पय ॥ गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु गुरु देवन के देवा ॥ सर्व सिद्धिफल देन गुरू तुमहीं मुक्ति करेवा ॥ गुरु केवट तुम होय करि करौ भव सागर पारी ॥ जीव ब्रह्म करि देत हरौ तुम व्याधा सारी ॥ श्री शुकदेव दयाल गुरु चरण दास के शीश पर ॥ किरपा करि अपनो कियो सब ही विधि सो हाथ धर ॥ इति श्री षट कर्म हठ जोग ग्रन्थ संपूर्णम् लिखितं रामानंद गोसाईं संवत् १८९६ वि० मिती अषाढ़ सुदी ३

विषय—हठयोग साधन विधि ।

संख्या ६५ पी. जोग, रचयिता—चरणदास (दिल्ली), पत्र—१९, आकार—६½ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८५, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—फारसी, प्राप्तिस्थान—ख्यालीराम शर्मा, ग्राम—खौड़ा, डाकघर बरहन, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः । श्री सरस्वती नमः । अथ श्री सुकदेव जी का दास चरणदास कृत जोग लिष्यते । गुरु जनक को शिष्य तासु कौ दासु कहाऊँ । सदा रहूं हरि सरन और नां शीश नवाऊँ । साधन सों यही चहौं मोहि हरि भक्ति वताओ । माया जाल संसार तासुओं वेग छुटाओं । गुरुदेवन गुरू देव यही सुनि लीजै चरनदास कौं हरि भगति कृपा करि दीजे । छप्पै । गुरू ईश्वर गौरेश रीझि गुर राम वनावें, गुरु वाटैं जम फांस सब अघ नसावैं । गुरू देवन के देव भवभ्रम्य अलगावैं । गुरू भवसागर तार पार उनलोक बसावैं । चरनदास यह जानके सत संगत हरि को भजो, सुखदेव चरण चित लायकें सो झूठ कान दुविधा तजो । नंद राम विन्ती करै सुनो ईश गुरुदेव, तुमही दाता भगति के जोग जुगति कहि देव ।

अंत—अथ चाचरी मुद्रा चौपाई । चांचरीमुद्रामैं मंकारी । अंगुल चारि नासिका अगारी । निरखत रहै नासिका अगारी । दृष्टि वांधि निरखैं तहँ लागी । दीखत दीखत नासलौं आवे, स्थिर दृष्टि तहां टहरावै । जब वहुतक अचरज दरसावै, साधन करै सुनै छकि जावै । पुनि भरकटै को ध्यान लगावैं, बांधै दृष्टि जहां लौं लावै । यह जब साधारन ।

विषय—योग की विधि और मुद्रादि का वर्णन ।

संख्या ६५ क्यू. नासकेतु पुराण, रचयिता—चरणदास (दिल्ली), पत्र—३६, आकार—१० × ७½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—७३६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—वंशीधर जी माथुर वैश्य, ग्राम—बमरौली अहीर, डाकघर—बाह, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । श्री शुकदेवाय नमः । अथ चरणदास कृत नासकेत पुराण लिष्यते । दोहा । जै जै श्री मुनि व्यास जी जै जै गुरु सुपदेव । तुम किरपा सों कहत हों नासकेत कौ भेव । अपु बैठो यो हिरदे विषै मो मुष कहौ वषानि, तुम तो जानत हौ सवै मैं हो मूढ़ अज्ञानि । चरणदास हौ कहत हौं भाषा परम पुनीत । सुनि २ आवै नीति पर छूटै सकल अनीत । नर नारी सुन लीजियो अदभुत कथा सुजान, पाप पुन्य की और सौं जो कोइ होइ अजान । त्रेता जुग की यह कथा सहस कृत्य के माहिं, नासके तही सो वहै मैं भाषत लै छांहि ।

अंत—नास केत की यह कथा जैसा धरम जिहाज । जामें जो कोऊ चढ़े सोई उतरे पार । रहि जावे अभिमान सों सोवे वेत मझार, सत गुरू विन बूढ़े सभी राम भगति नहिं जान । सत संगति आवै नहीं, करिके वे अभिमान । नासकेत की कथा को कहे सुनै चित लाई । पाप तेज तब पुनि करै वेस स्वरग वह जाय । सुपदेव के परताप सों कही नास सो केत । पाप पुन्य के भेद जो सजन करौ नर हेत । इति श्री नासकेत उपाख्यानो नाम अष्टादशमो ध्याय ॥ समाप्त । शुभम् भूयात् ।

विषय—नासकेत की कथा स्वर्ग नर्कादि वर्णन ।

संख्या ६५ आर. नासकेत पुराण, रचयिता—चरणदास (दिल्ली), पत्र—४१, आकार—८ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—११७५, रूप—बहुत प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१० = १८५३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० मुरलीधर मिश्र, ग्राम—बड़ा गाँव, डाकघर—कंतरी, जिला—आगरा ।

आदि—···यन्मः अथ नासकेत लिष्यते । दोहा । जै जै......सजी । जै जै गुरु सुखदेव ॥ तुम क्रपा सें कहतु हूं......ना जेव । × × × × । मेला जुग की यह कथा संस्कृत के माहिं, नासकेत ही नाम हें में भाखूं लै छाहिं । नीव खार के ही विखें, कथा कही जो सूत । सोन कादि रिखी सवै, सुनत भेय मिलि जूथ । सूतौ वाचः । वैस्यं पाइन इक समें बैठे गंगा तीर, अति प्रसन्न उज्जल दिसा, निरखत सुरसरि नीर । राजा जन्मेजय तवै किआ जुतहां सनात मोती सोना आदि वहु दिआ विप्रन को दान । प्राक्षत में टन काज ही नें मलीआ जो अेक । व्रह्म चरज रुपी जु तप, वारह वरस की टेक ।

अंत ६५ क्यू के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—इति श्री नासकेत चरनदास क्रत नाटके...भासु चनिर्वय वर्णनोनाम अष्टदसो अध्याय । १८ । सुभं मस्तू । कल्याण रस्तू संवत् १९१० सुभं जो देष्यो सो लिष्यो ममदोस न दीयते लिष्यते लाला प्यारे लाल । वासी दगसै के । भूल चूक गोपो सुनार की पुस्तक पै ते उतारी ।

संख्या ६५ एस. नासकेत पुराण, रचयिता—चरणदास, (दिल्ली), पत्र—२०, आकार—१३½ × ७½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—७००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१२ = १८५५ ई०, प्राप्तिस्थान—छिंगामल पुजारी, स्थान—राधाकृष्ण मंदिर, फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—अंत—६५ क्यू के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री नासकेत पुपाख्यानो नाम अष्टादसमोध्याय । श्री राम संवत् १९१२ श्रावण कृष्ण ५ पंचमी ।

संख्या ६५ टी. नासकेतु, रचयिता—चरणदास (डेहरा, अलवर), कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०२६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१७ = १८६० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रूपनारायण, ग्राम—भज्जू पुरवा, डाकघर—मल्लावाँ, जिला—हरदोई ।

आदि—६५ क्यू के समान ।

अंत—नास केतु ऐसी कथा जैसे धर्म जहाज ॥ जन्मै जै दाता चढ़े कष्ट गये सव भाज ॥ केवट तहां जो व्यास से वचन वादही वान ॥ जगत सिन्धु सब जा धर्म यही जिहाज वखान ॥ जामें जो कोई चढ़ै सोई उतरै पार ॥ रहि जै है अभिमान से सो बूढ़ै मझधार ॥ सत गुरु विन बूड़े सवै राम भक्ति नहिं जान ॥ सत संगति आवै नहीं करै वहुत अभिमान ॥ नास केतु ऐसी कथा कहै सुनै चित लाइ ॥ धर्म वढ़ै पापै घटै सवै स्वर्ग में जाइ ॥ इति नास केत पोथी समाप्त ॥ संवत उनइस जानियो औ सत्रह परिमान ॥ वैसाखै सुदि

द्वादशी बुध वासर को जान ॥ तादिन लिखि पूरन भये जथा विहारी लाल । जैसी की तैसी लिखी ना जानौ कुछ हाल ॥ जहां जीविका प्रान की ताको करौ वखान । ताहि नग्र में वसत हौ पर सुनियो बुधिमान ॥ सँग सैदस तीर है श्री गंगा की धार । जाको मंजन करत ही हो जावै भव पार ॥ राम राम

विषय—नासकेतु पुराण का भाषानुवाद है ॥

संख्या ६५ यू. पंच उपनिषद, रचयिता—चरणदास (डेहरा, अलवर), पत्र—२४, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप् —४१०, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबा रामदास, ग्राम—जहाँगीरपुर, डाकघर—फरौली, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ पंच उपनिषद लिख्यते (भाषा) दोहा—बंदन श्री शुकदेव को उनको हिय में लाय । छिप्यो भेद परगट कियो परमारथ के दाय ॥ सहंस्कृत भाषा करी ताको यह दृष्टांत । खोलि खोलि सब ही कही समझै छूटै भ्रान्त ॥ ज्यों कूएँ से नीर लै वाहर दियो भराय । विना जतन कोई पियो तिरषा वंत अघाय ॥ पौ दीनी सुकदेव ने मैं जल काढ़न हार । प्यासा कोई न जाइयो टैरौं वारंवार ॥ ब्राह्मण क्षत्री वैश्य जो अरु शूद्रहु जो होय । वह पीवेगा हेत करि वहु प्यासा जो कोय ॥ मुक्ति नीर की प्यास जो काहू ही को होय ॥ और मनुष्य जग प्यास में रहे जु मृत्यक होय ॥ यह जग ऐसो जानिये मृग तृष्णा को नीर । निकट जाय प्यासा कोई कभी न भागै पीर ॥

अंत—अष्टपदी—दुऔ से न्यारा जान जाग्रत अरु स्वप्नन सूं । ऐसा कोई नाहिं न जानैं सत्त हूं ॥ सत का जानत मूल जो ज्ञानी लोयही । दीरघ अरु पर काशी जानै सब को यही ॥ जाको लोभ न होय अविद्या होय ना । भै अभिमान कुकर्म वासना कोय ना ॥ गरमी जाड़ा भूख प्यास व्यापै नहीं । पैइये क्रोध न मोह नेक वामे कहीं ॥ वाहि न इच्छा होय न पूरी चाहही ॥ कुल विद्या अभिमान न उनके माहि ही ॥ मान नहीं अपमान न मनमें लावई । सबसों होय निवृत ब्रह्म को पावई ॥ तेज विन्द उपनिषद संपूरण ही भई । गुरु सुकदेव के दास चरण दासा कही ॥ ताहि सुनै मन राखि विचारा की करै । निश्चय होवै मुक्त जगत में ना परै ॥ दोहा—कही गुरू शुकदेव ने मेरी कछू न वुद्धि । पढ़ो नहीं मूरख महा मोंकू नेक न सुद्धि ॥ १ ॥ मेरे हिरदे के विषे भवन कियो गुरु आय । वेई बिराजत है सदा मेरी देह दिखाय ॥ २ ॥ जब सूं गुरु किरपा करी दर्शन दीनो मोय । रोम रोम में वे रमे चरण दास नहिं कोय ॥ जाति वरण कुल मन गया गया देह अभिमान ॥ अपने मुख सों का कहौं जगही करै वखान ॥ रहे गुरू शुकदेव जी मैं मैं गई नसाय । मैं तें तैं मैं वही है नख सिख रहो समाय ॥ इति श्री पंच उपनिषद भाषा समाप्तः ॥

विषय—पंच-उपनिषदों का संस्कृत से भाषानुवाद ।

संख्या ६५ वी. मन विकृत करन गुटका, रचयिता—चरणदास (डेहरा, अलवर), पत्र—३२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा विष्णुगिरि, ग्राम—शिवनगर, डाकघर—सहावर कस्वा, जिला—एटा ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ मनविकृत करन गुटकासार ग्रन्थ लिख्यते ॥दोहा॥ नमो नमो श्री व्यास जी सत गुरु परम दयाल ॥ ध्यान किये आशा नशै लगै न जगत बयाल ॥ १ ॥ अष्टपदी—नमो नमो शुकदेव तुम्हें परणाम है। तुम किरपा सौं आप मिलै घन श्याम है ॥ तुम्हरी दया से होय जो पूरण जोगा है। तनकी व्याधा छुटै मिटै मन रोग है ॥ तुव किरपा सों ज्ञान पदारथ पावई। उपजै सार विचार असर छुटावई ॥

अंत—दोहा—गुरु समान तिहुं लोक में और न दीखै कोय। नाम लिये पातक नशैं ध्यान किये हरि होय ॥ १ ॥ गुरु ही के परताप सों मिटै जगत की व्याधि। राग द्वेष दुख ना रहैं उपजै प्रेम अगाध ॥ २ ॥ गुरु के चरणन में धरौ चित बुधि मन अहंकार। जब कछु आपा ना रहै उतरै सबही भार ॥ ३ ॥ मन विरक्त के करन को कीनो गुटका सार पढ़ै सुनै चित में धरै भवसागर हो पार ॥ ४ ॥ इति श्री चरणदास कृत मन विकृत करन ग्रन्थ समाप्तः लिखा मैया राम वैद्य मिती जेठ वदी १० मी संवत् १९०० वि० ॥

विषय—ज्ञानोपदेश।

संख्या ६५ डब्लू. ज्ञानस्वरोदय, रचयिता—चरणदास (दिल्ली), पत्र—३३, आकार—७ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४६, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपिकाल—सं० १९१८ = १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—मुंशी जोरावर सिंह, स्थान—मिढ़ाकुर, डाकघर—मिढ़ाकुर, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः। अथ सरोदो चरनदास क्रत प्रारंभः। दोहा। नमो नमो सुषदेव जी करों प्रणाम अनंत। तब प्रसाद सुरभेद को चरन दास वरनंत। पुरुषोत्तम पर मातमा पूरन विस्वा वीस। आदि पुरुष अविचल तुही, तोहि नवावों सीस। कुंडलिआ। आछर ॐ सो कहत हैं अक्षर सो है जानि। तिहि अक्षर स्वासा वहै ताही कौ मन आनि। ताही कौ मन आनि राति दिनि सुरति लगावौ। आपा आप विचारि और ना सीस नवावौ। चरनदास मथि कहत है अगम निगम की सीष यही वचन ब्रह्म ज्ञान कौ, मानौं विस्वा वीस।

अंत—डेरे में मेरो जन्म है नाम रन जीत वषानो। मुरली कौ सुत जानौ जाति धूसर पहिचानो। वाल अवस्था मांहि बहुरि दिल्ली में आयौ। रमत मिले सुषदेव नाम चरन दास धरायौ। योग मुक्ति करि ब्रह्म ज्ञान दृढ़ करी गयौ। आतम तत्त्व विचारि कै अजपानसन्यौं भखौं। ४०। इति श्रीचरनदास क्रत ग्यान सरोदय संपरन समस्तु लीषा नारथीं सालिकराम मार्गक्रस्न चतुरदसी वार बुध सौं जाको ग्यान सरोदय सौं लीषी सो मन उतीम जानौं सः१९१८ मीति आसाढ़ वदी ३ सव थान जीजोनी बीजा से न कै मंदिर में लिपी लछमन पुरोहीत।

विषय—स्वरोदय संबंधी ज्ञान का वर्णन।

संख्या ६५ एक्स. स्वरोदय, रचयिता—चरणदास, कागज—बाँसी, पत्र—२७, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० हरीमोहन मिश्र, ग्राम—सिंगरावली, डाकघर—ताँतपुर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—६५ डब्ल्यू के समान।

अंत—अग्नि तत्व के वहत ही, जुद्ध करनि मत जाय। हारि होय जीते नहीं, और आवे तप छाव। तत्व अकास जो चलत है, तोउ हारो जाय। रन माहीं काया छुटे, धरनी देखो आय। जलपति के जोग में गर्भ रहे सो पूत, वायु तत्व में छै करे, और होय पूत कपूत। पृथ्वी तत्व में गर्भ में बालक होय जो भूप, धन्वन्तो सो जानिये। सुन्दर होय स्वरूप। अग्नि तत्व के चलत ही, जबै गर्भ रहि जाय। गर्भ गिरै माता दुखी, होत मान मर जाय।

विषय—स्वरोदय वर्णन।

संख्या ६६ वाइ, ज्ञान स्वरोदय, रचयिता—चरणदास, कागज—बाँसी, पत्र—२४, आकार—६½ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०० रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० जानकी प्रसाद जी, स्थान—बमरौली कटारा, डाकघर—बमरौली कटारा, जिला—आगरा।

आदि—६५ डब्ल्यू के समान।

अंत—आसन संजम सोधि करि, दृष्टि स्वांस में मान॥ तत्व भेद यो पातने कथ्यो स्वरोदय ज्ञान॥ छप्पै—हिये में मृत्यु जन्मना मरण जीत कहायौ, बाल अवस्थहि माहि, दिल्ली में आयो। पर मस मिले शुकदेव नाम चरणदास धरायौ। चरण कमल उधारि मरि बहुर अति सुयस सुख पायौ॥ जोग सुक्त हरि भक्ति करि, ब्रह्म ज्ञान करि दुठ करि गह्यो। आतम तत्व विचारि कै, अजपा में सम न रह्यो। इति श्री चरनदास कृत ज्ञान स्वरोदय सम्पूर्ण।

अंत—'ज्ञान स्वरोदय' चरणदास का मशहूर ग्रन्थ हैं। इसमें स्वरोदय की परीक्षा का अच्छा दिग्दर्शन कराया गया है।

संख्या ६६ जेड. स्वरोदय, रचयिता—चरणदास, पत्र—२४, आकार—९ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३७ = १७८० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० लक्ष्मीनारायण वैद्य, स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—६५ डब्लू के समान।

अंत–बांये सुरते आइके दहिनै पूछै आई। जो सुर दहिनो वंदहै कारज अफल बताई। जब सुर चालै वाहिर को जो कोई पूछै ताहि। वासो ऐसी भाषिये नहिं कारज विधि कोई। पैज वंधि वासो कहो मंसा पूरी होई। जो कोई पूछे आइके बैठे दाहिनी ओर। चंद चलै सूरज नहीं कारजधि विकोर। जो सूरज में सुर चलै कहै दाहिनी आई। लगनवार अरु तिथि मिलै के कारज हो जाई जो चंदा में सुर चलै वायें पूछे आई। तिथि और अछिते सुरसै अइष्ट सुन ओर जो जइ। जो पूछे प्रसंग वह रोगीन ठहराई। सुन औरते आइके पूछे बहते स्वास। जिह नै है चेष्ठा जानियें रोगी को नहिं नास। सुन और ते आइके पूछे बहते पछि जेते कर जगत। इति श्री सुरोदय चरन दास कृत सम्पूरन शुभम्। श्री लाजी की प्रति सो। उतारी। स० १८३७ फागुन बदी ८।

विषय—स्वरोदय का वर्णन।

संख्या ६६. एकादशी भाषा, रचयिता—चतुरदास, कागज—बाँसी, पत्र—१६०, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६०६ वि०, लिपिकाल—सं० १८७४ = १८१७ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री महंत दातारामदास जी कबीरपंथी, ग्राम—मेवली, डाकघर—जगनेर, तहसील—खैरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशायन्मः। अथ एकादश भाषा लिष्यते। १०। चौपाई—संतदास सतगुरु के चरना। तिनको गहौ सद्दृढ करि सरना। जानै उपजै ज्ञान विचारा। छूटे कर्म मर्म्म व्यवहारा ॥ १ ॥ वऊरयौ जन्मत जन्म नहिं आऊँ। तिनको निजानन्द पद पाऊँ। तिनकी आज्ञा हिरदै धरौ ॥ लोक हितारथ भाषा करौं ॥ २ ॥ श्री भगवान विरंचहि भाष्यो। सो विरंच विनारद सो भाष्यौ। सो नारद व्यासि समुझाये। व्यास व्यास करि शुकहि पठायो। ३ ॥ सो शुक कहयो परीक्षत आगे ॥ छूट्यो द्वैत स्वप्न ज्यों जागे। सोई सूत अजहुं विस्तारै। सहश्र अठासी रिषि मन हरैं ॥ ४ ॥ श्री भगवान आप ही भाष्यौं ताते नाव भागवत राष्यो। आप मिलन को पंथ दिखायो। या मारग बहुत निहरि पायो ॥

अंत—संवत सोलह सै नवा। जेठ शुक्ल षष्ठी कुला दिवा संतनदास गुरू आज्ञा दीनी। चतुरदास यह भाषा कीनी। दोहा—परमज्ञान परगट भयो। मम घट है निज देव। ते मेरे निति उर बसै, संतदास गुरुदेव। ६। इति श्री भागवत पुराणे एकादश स्कंधे श्री शुक परीक्षत संवादे श्रीकृष्ण वैकुण्ठ प्रयाणो नाम एकाकि शोध्याय। ३१। पठनार्थं बावा जी गरीव दास जी। लेखत उदोत सिंह कायस्थ मकान वारी गुमट मै। जागेर के। जो देष्यो सो लिख्यो मम दोस न दीयते। संवत् १८७४ मिती फागुन सुदी १२ ब्रहस्पिति वार सम्पूर्णम्।

विषय—भागवत के एकादश अध्याय का पद्यानुवाद।

संख्या ६७ ए. लग्नसुंदरी, रचयिता—छदुराम (सगौनी), पत्र—५१, आकार—७½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६३२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८७० वि०, लिपिकाल—सं० १९३१ = १८७४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० हरीप्रसाद आचार्य, ग्राम—आँनवल खेडा, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। अथ लग्न सुंदरी लिष्यते। दोहा। श्री गनेस सुमिरन करौ, सरस्वती तोहि मनाय क्षदुराम चरन गुरवंदि के लग्न सुंदरी गाइ। श्री धरनीधर सुत कहे, मंसुष राम प्रवीन, तिनके लघु भ्राता क्षदू, मति अनुसार सुकीन नग्र सगोनी वास है, सुभ धामनि को धाम, सुंदर वाग तड़ाग है क्षदुराम चहुं गाम। अठारह से सतरि १८७०, द्वौज २ फागुन वदि गुरुवार, क्षदुराम तब वरनियौं, लग्न सुंदरी सार ॥ अथ बालक जन्म के बिचार बालक जन्म के भेद सब कहहु सकल समुझाइ, जाके जैसे ग्रह परे, ते फल देतु बताइ। राहु परे जाही दिसा सिरहानों तहा मातु, मंगर दिसि पाओ फटो द्रटो वान सुजान। रवि दीपक तहिये रहे, सनि लोहो तहां होय, गुरू पीतरि जा विधि मिले, लग्न जानिये सोइ।

अंत—अथ संक्राति को वाहन। गजवाहन रवि सौम कहि, जीव तुरंग बताय, भौम बुध मृग जानियै, शुक्र-शनीचर नाय। नाव चढ़े जल बर्षई मृग चढ़ि पमन चलाय, बाज चढ़े रनक्रों करे गज चढ़ि अन्ने षाय। संक्राति कहि मकर की, ताकौ भाव बताय, छदूराम नर समुझि कै दीनौ भेद लषाय। अथ नक्षत्रनिकों वहिन। [1]हय [2]मृग [3]कूर्म [4]गज [5]केहरी, [6]महिषी [7]ससा बषानि, [8]सूकर [9]दादुर [10]विलार [11]झष, छंदराम पहिचानि। मेषलग्न ते मीन लो, प्रथम तुरंग बताय, जाही विधि छंदराम तो, वाहन नषत बताय। इति श्री छंदरामकृत लग्न सुंदरी वर्ननो नाम नवमो अध्याय ९ संपूर्ण संवत् १९३१ शाके १७९६ तत्र वर्षे ज्येष्ठ सुदी १२ वृहस्पति वासरेः लिषिते दुलीचंद पंडित अस्थान नोगुरा में बसई को वासु ॥ ० ॥ ६ ॥ ० ॥ छ ॥ छ ॥ छ ॥

विषय—ज्योतिष।

संख्या ६७ बी. लग्नसुंदरी, पत्र—५३, आकार—१०१/२ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५५०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९३= १८३६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० केशवराम, ग्राम—शमसाबाद, जिला—आगरा।

आदि—पहला पृष्ठ नष्ट······कुंभ सुचारि। धन अरु कर्क सों पाँच कहि। तहँ वैठी है नारि ॥ ९ ॥ मकर सिंह वृक्षिक मिथुन। तीन अस्त्री जानि। कन्या तुमसों सात कहि। नारि तहाँ पहिचानि ॥ १० ॥ पापग्रह जेई परै। तेई विधवा जानि। सौमग्रह अहिवात का। क्रूर सों कन्या मानि ॥ ११ ॥ कुंडरिआ ॥ अहिबाती सुन्दर ललित। पहिरें वस्तर लाल। दहिनी भुज पर तिल कहत। क्षंदुराम लीख वाल ॥ १२ ॥ लगन लछि पहिचानों। तन उतंग सों देषि वचन वहु चातुर जानौं ॥ सोमग्रह गुरु देखिकें लछन दये वताइ। बुध शुक्र के कहत हों। देखि ग्रन्थ समुझाइ ॥ १२ ॥ दोहा ॥ सौम ग्रह जो शुक्र हे। ताके कहत सुभाव। देपि ग्रन्थ प्रिय अंग के। बरनत हों सब भाव ॥ १२ ॥

अंत—शुक्र शनीचर धाम एक। वन फूलहिं पहचान। गुंजा फल शुक्र बुध। रवि मंगल सम जान ॥ ३८ ॥ अस्लोकः तुलसी सौरी भूमश्च। बुध अंबुज द्विसेत। सहज अस्थाने गते सौरी कृस्न पुस्प चमुष्टिकं ॥ ३९ ॥ जीव पंच मै भवन मैं। कमल मुष्टि में जुक्त। भूम फूल कांटे सहित। बाँस पत्र कर मुक्त ॥ ४० ॥ राहु परै कै इन्द्र मैं। पुष्प अरुसे जाम। कपूरवास क्षदुराम कहि। जीवन दृष्टि पहिचान ॥ ४१ ॥ चंदा रवि को देषिई। सुक्र अवीर वताई। चन्द्र जीव की नजरि में हरो रंग कर लाइ ॥४२॥ लग्न मधि ग्रह देषिकै। पंडित करौ विचार। हाथ प्रस्न क्षदु राम कहि। जातु नाम निजु सार ॥४३॥ इति श्री छदुराम कृत लग्न सुंदरी वरननो नाम दसमोध्यायः ॥ १० ॥ संवत् १८९३ ॥ असाढ़ सुदी दुतीया गुरुवासरे ॥ सुभ मस्तु कल्यंन रस्तु ॥ जैसी प्रति येक हजार क्षावन कहे। दोहा छंद कवित्त ॥ तिमिर हरनु को भानु हे पढ़े सुने दै चित्त ॥ कटि ग्रीव औरु नैन कर तन दुख सहत सुजान ॥ लिखी जात बड़े कष्ट सों। सठ जानत आसान ॥ श्री रामजी सहाय ॥

विषय—प्रथम अध्याय		राज जोग वर्णन		१—६
द्वि०	,,	शुभ अशुभ जोग वर्णन		६—१०
तृ०	,,	एकग्रह फल	,,	१०—१६

संख्या ६७ सी. लग्न सुंदरी, रचयिता—छंदुराम (सागोनी), कागज—बाँसी, पत्र—७०, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३६५, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८७० = १८१३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० जानकी प्रसाद, ग्राम—बमरौली कटरा, डाकघर—बमरौली कटरा, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशायन्मः। अथ लग्न सुन्दरी लिख्यते। दोहा—श्री गनेस सुमिरन करौ, सरस्वति तोहि मनाय, धन्वरा चरन गुर बदि के, लग्न सुन्दरी गाई। श्रीधरनी धर सुत कहें, मंसुख राम प्रवीन, तिनके लघु भ्रात धून्दू मति अनुसार सुकीन। नग्र सगोनी वासु है, सुभ धामन को धाम। सुन्दर बाग तड़ाग हैं, छन्दु राम चहुं गाम। अठारह सै सतरि १८७० द्वौज २, फागुन बदि गुरुवार। क्षंदु राम तब वरनियो, लग्न सुन्दरी सार। अथ बालक जन्म के विचार—बालक जन्म के भेद सब, कहत सकल समझाय। जाके जैसे ग्रह परैं, ते फल देत बनाय। राह परे जही दिसा, सिरहनि ताहा मानु। मंगर दिस पाओ फटो टूटे वान सुजान।

अंत—इति श्री छन्दुराम कृत लग्न सुंदरी वरनो नाम महूरत विधि सम्पूरन अष्टमों अध्याय। अथ दुरगा मतो। दोहा—वर्ष एक वा तीन में पांच सात नो जानि। मार्ग औरु वैसाख में फागुन गो नो आनु। तीज पंचमी सप्तमी, आठे दसमी होइ। तेरथ पूनो तिथि कही, अब जानो सुभ सोइ। रवि चन्द्रा वुद गुरू शुक्र, पंचवार पहिचानि। गोन्यो चल्यो भवन को, छन्दूराम शुभ मानि। रोहिनी मृग सिर आद्रा, अनुराधा श्रम नव ताप, चिंता स्वाति सो पूर्वा जे नक्षत्र सुखदाय। मकर मिथुन धन मोहें कन्या तुला बखानि। जे जोंना अप लग्न शुभ सुख कारज को मानि।

विषय—ज्योतिप।

संख्या ६८. विजय मुक्तावली, रचयिता—छत्र कवि, पत्र—१६०, आकार—७ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०१०, खंडित, रूप – प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५७ = १७०० ई०, लिपिकाल—सं० १८९१ = १८३४ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला शंकरलाल पटवारी, ग्राम—मझोला, डाकघर—थाना दरियावगंज, जिला—एटा।

आदि—नृपति सांतन एक दिन गयऊ अखेटक काज। सघन विपिन सरिता निकट लै प्रिय लोग समाज॥ केवट तनया ससि वदन जोजन गंधा नाम। निरषि नृपति लोभित

भयो विज्जुलता सो वाम ॥ अति आसक्त भयो नृपति तब केवट लयो बुलाय। देहु मोहिं अपनी सुता मन बच क्रम सुख पाय ॥ केवटोवाच—तुम पृथ्वी पति भूप हौं नीच जाति मल्लाह। आपुहि कहौ विचारि कै केहि विधि होइ विवाह ॥ तौ विवाह तुमसों करौं जो यह मांगे देहु ॥ नृपता याको सुत लहै करौ आपु करि नेह ॥

अंत—अष्टा दशौ पुराण को सुनै जगत में कोई। सुनत विजय मुक्तावली तितनोई फल होइ ॥ वरणों ग्रन्थ सु छत्र कवि अपनी मति अनुसार ॥ छमियो चूक बुधीस सब कविता समुझन हार ॥ छप्पय-मधु कैटव वकु हत्यो हत्यो हिरणाक्ष अघासुर ॥ हरनाकुश जेहि हत्यो हत्यो धेनकु केसी मुर ॥ वंध सहित दसकंध हत्यो वत्सासुर जेहि वर। नरकासुर जेहि हत्यो हत्यो शिसुपाल अधम धर ॥ सुत धर्म कर्म रक्षत अवनि महिमा नहीं जानी परै। त्रैलोक्य नाथ कवि छत्र कहि सु पढ़त सुनत रक्षा करै ॥ सवैया—व्याल धरै शशि भाल धरै हरि छाल जरै तन भस्म लगाये। गंग धरै अरधंग सिवा ढिग भंग धरै गन भूतन छाये ॥ व्याल धरै सिर माल कपाल धरैं विष कंठ महा सुख पाये ॥ ऐसे सदा शिव होत प्रसन्न सु छत्र विजय मुक्ता वलि गाये ॥ दोहा—मौजा सुन्दर वारी लसै भूपति सिंह कल्यान। पूरन कीनो ग्रन्थ कवि छत्र सो तिहि अस्थान ॥ दयो सु सीस चढ़ाई लै आछी मोतिन हेरि। जापै सुख चाहति लखौ वाके दुषहिं न फेरि ॥ इति श्री महा भारथे महा पुराणे विजय मुक्तावली कवि छत्र विरचितायां राजा जुधिष्ठिर राज्य कर्म वरणनो नाम ४३ प्रभाव संवत् १८९१ वि० असाढ़ मासे कृष्ण पक्षे तिथौ ७ सनि वासरे लिखतव्यं छोटे लाल कायस्थ कुलश्रेष्ठ सारा श्रोनई मध्ये ग्राम नगरा धीर ॥

विषय—महाभारत का हिंदी पद्यानुवाद।

संख्या ६८ बी. विजय मुक्तावली, रचयिता—छत्रकवि (अटेर, भदावर), पत्र—१५५, आकार - ११$\frac{1}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४१०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्ति-स्थान—छेदालाल पाठक, स्थान—टुंडला, डाकघर—टुंडला, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशायनमः। अथ विजै मुक्तावली लिष्यते। दोहा। वृज रछन मजन अनल, रछन गोधन ग्वाल। भुजवर करवर करज पर, गिरवर धरन गुपाल। हरि दीपक मन सदन धरि कपट कपाट उघारि, नसै सकल अघ कालिमा छत्र सुदेषि विचारि। दंडक छंद। झूम २ आये कोपि वासव पठाये नव, धाये दिसि दिसनि सवासर तरज पर। मेघ की मरोर महा पौन की झकोर, नीरद निपट घोर घोष सोज रज पर। ऐसें लषि कृष्ण ने उठायो गिरि गोवरधन, वृज की सहाइ करि कर की करज पर। राषे सुरपाल के कराल क्रोध तें गुपाल, छत्र द्वै दयाल गोपी ग्वाल की लरज पर। सवैया—आनन येक कहै मनु को चतुरानन चारिहु वेद बतावै। जे रिषिवध प्रसिध है सिध सदा मन वांछित सिधि सु पावै। नारद सारद जोवत हैं सनकादि सुकादि सबै गुण गावै। वंदत ये सब शेष सुरेस दिनेस धनेस गणेसहि ध्यावै।

अंत—जान्यो भारत कृष्ण मत तिनहिं सहाइ पाइ। एक छत्र महि भो गई छत्र जुधिष्टिर राइ। भारथ सुनि भाषा कियौ छत्र सुबुधहिं पार। कहत सुनत पातिक नसै अघ दीरघ दुष जाई। चारि वरन मैं जो सुनैं, तरुनी पुरिष जु कोई। प्रगटै हरि की भगति उर मोचन अप्प कौ होई। सवैया। जो फल तीरथ जात कियै अरु जो फल षोडस दान दियै के। ज्ञान कथा नि सुनै फल जो कवि छत्र बढ़ै बहु बुधि हियै ते। जो फल रुद्र प्रसन्न भयें फल सोई युधिष्टिर नाम लियैं ते। श्री कृष्णहि पत्थहि हेत जि सौति सौ फल भारथ श्रोन कियै ते। इति श्री महाभारते पुराणे विजै मुक्तावली कवि छत्र विरंचते राज्य जुधिष्ठिर राज-गादी वरननो नाम। प्रतिय चालीसमो आध्याय। इति विजै मुक्तावली संपूर्ण। शुभंमस्तु। कल्यान रस्तू। दोहा। इंद्रजीत पुस्तक लिषी कौरव पांडव जुद्ध, भूल चूक जो होय पुनि चातुर कीजे शुद्ध। मिति श्रावण वदी। २। दतीया। गुरू वासरे संवत् १९०० शाके १७६५ लेखक मिश्र इंदजीत जाजढ मध्ये रोजे की। श्री श्री श्री श्री श्री रामं रामं रामं रामं रामं रामं रामं रामं रामं

विषय—महाभारत का हिंदी-पद्यानुवाद।

मंगला चरणकवि परिचय—मथुरा मंडप में बसैं देस भदावर ग्राम। उगलत प्रसिद्ध महि, छेत्र बटेश्वर नाम। सुजस सुवास सु निकट ही पुरी अटेरहि नाम। जज्ञ जन हौ मादि वृत रचन धाम प्रति धाम। नगर आहि अमरावती वासी विवुध समान, आखंडल सौलत तहां भूपति सिंध कल्यान। श्री वास्तव कायथ है छत्रसिंह यह नाम, रहत भदावर देस में ग्रह अटेर सुष धाम।

ग्रंथ रचना काल—संवत सत्रह सै बरष सतवादि पंचास, शुक्ल वदि एकादसी रच्यो ग्रंथ नभ मांस। नाम विजय मुक्तावली, हित करि सुनै जो कोइ, अष्टादसौं पुरानकौं ताहि महा फल होई। महाभारत का संक्षिप्त वर्णन।

संख्या ६८ सी. विजै मुक्तावली, रचयिता—छत्रकवि (अटेर, भदावर राज्य), कागज—देशी, पत्र—१३२, आकार—१० × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२५३, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५७ वि०, प्राप्तिस्थान—हनुमान प्रसाद सब पोस्टमास्टर, स्थान—राया, डाकघर—राया, जिला—मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥—थ विजे मुक्तावली लिष्यते। दोहा वृज रक्षक भक्षक अनल रक्षक गोधन ग्वाल—भुजवर करव—जपर गिरवर धान गुपाल। १। हरि दीपक मन सदन धरि कपट कपाट उघारि। नसै सकल अघ कामना छत्र सुदेखि विचार। २। दंडक। भूमि २ आपेको पिवासव पठाये घन धाये दिसि दिसिते सुतौवा सरत रज पर। मेघ की मरोर महा पवन झकझोर जोर नीरद निपट घोर घोष जो गरज थर। राखे स्वरपाल के कराल क्रोध तै गुरु पाल छत्र द्वैदयाल गोपी ग्वाल की लरज पर। हर वराइ धाइ गिरि मूलि ते उठाइ लियौ छाइ व्रज राख्यौ करकि रज पर॥ ३॥ सवैया। आनन एक कहै चतु-रानन आनन चारिहु वेद बतावैं। जे रिषि वध प्रसिद्ध सु सिद्ध सदां मनवं छित सिद्धि सु

पावै। नारद सारद जो बतये सनकादि सुकादि सबै गुन गावै। बंदत ये सब सेस सुरेस दिनेस धनेस गणेसहि गावै।

अंत—इते श्री महाभार्थे कवि विरंचते विजे मुक्तावली युधिष्ठर राज नीत वर्नन नाम तेतालीसो अध्यायइ इती बिजे मुक्तावली संपूर्ण तौटक नृप पविक्रम की पुनि वर्ष गनौ। नभ है नाषु पंक्ति समान भतौ सिव लोचन सेष सबै जु भई पुनिहै प्रति जौ तब हीजु भई २ दोहा। नभ क्रस्ना दसमी गनौ वार दैत्य गुन जांनि ता दिन यह प्रति निर्मरी सुनियौ सवे सुजान २ नग्र धौलपुर मध्य यह नरहरि सन्दम प्रार। लिखी ईसुरी हेत निज लीजौ चतुर सुधार।

विषय—महाभारत का हिंदी पद्यानुवाद।

संख्या ६८ डी. विजय मुक्तावली, रचयिता—छत्र कवि, कागज—बाँसी, पत्र—१०४, आकार—११ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१४६, रूप-प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८४ = १८२७ ई०, प्राप्ति-स्थान—श्री दौलतराम पुजारी, ग्राम—सरैंधी, डाकघर—जगनेर, जिला—आगरा।

आदि—६८ बी के समान।

अंत—जो फल तीरथ जात कीये अर जो फल षोडस दान दीये ते। जो फल सगुम नेम रचे अरू जो फल हैं सत संग कीये ते। ज्ञान कथा न सुनै फल जो कवि छत्र बढ़े बहौ बुधि हीये ते। जो फल रुद्र प्रसन्न हूबै फल जोई जुधिष्ठिर नाव लीये ते। इति श्री महा-भारते पुराणे विजे मुक्तावलि कवि छत्र विरचित पांडव कौरव कुरु क्षेत्र भारत समस्त॥ श्री मस्तु॥ मंगल मस्तु॥ मंगलं लेष कांनांच। पाठकांनाव मंगलं सर्व साधुनां भुमे भुपति मंगलं॥ १॥ पोथि लिखितं लाला बालमुकुन्द हेतराम सुत निज पठार्थ वासी हीमत कौ॥ मीती माघ सुदी ३ संवत १८८४।

विषय—महाभारत का खण्ड काव्य।

संख्या ६८ ई. विजय मुक्तावली, रचयिता छत्र कवि (अटेर, ग्वालियर), पत्र—१५६, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८९६, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५७ = १७०० ई०, लिपिकाल—सं० १८४९=१७९२ ई०, प्राप्तिस्थान—स्यामसिंह सैंगर, ग्राम—बैसपुर, डाकघर—जलेसर, जिला—एटा।

आदि-अंत—६८ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—इति श्री महाभारते महापुराणे विजय मुक्तावली कवि छत्र विरचितायां संपूर्ण समाप्तः संवत् १८४९ अषाढ़ मासे शुक्ल पक्षे रविवासरे॥ जै शंभूनाथ की॥

संख्या ६८ एफ. सुधासार, रचयिता—छत्रकवि अटेर, भदावर), पत्र—७७, आकार—१३½ × ९ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६६०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७७६, लिपिकाल—सं० १८५३ = १७९६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० नरोत्तमदास लक्ष्मीनारायण वैद्य, स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। अथ पोथी सुधासार श्री भागवतु दसमुलिष्यते।

छप्पय। श्री परमानंद परम पुरुष पावन अविनासी। अजर अमर अज अलख अमित सब जगत निवासी। अगुन सहित जग रमत रूप अति अंतर जामी। जल थल मन घन माह सकल तल तल विश्रामी। अति अमल जोति एकै सदा और कोऊ दूजो नसरि। तिनको प्रनाम निसु दिन हरषि सुमन व्रच क्रम जुत छत्र करि। १। सवईया। लेस कलेस के दूरि करै दिन दीननि के दुष षंडन है। देत सदा नव निद्धि सिद्धिनि दीह दरिद्र के कंदन है। जन वाइक पंडन छुद्रन के जन जाल विपत्ति विहंडन हैं। छत्र प्रनाम करौ तिनकौ महिमें महिमा महि मंडन है। दोहा। गिरिजा और गिरीस कों गंगा को सिर नाइ। श्री परमानद पुरुष के कहौं कछू गुन गाइ। सोहत सिंह गुपाल की कीर्ति दिवसि दिसानि। भूतल षल भरि अरिनिकें गहतु षगुं जब पानि। भूपति भानु भदौरीआ किरनि क्रांति जगु छाइ। सहृद सकल नृप के सुषद तम अरि गए बिलाइ। ताके सुषद अटेर पुर मुलकु भदावर मांहि। चारि वर्ण जुत धर्म तह रहत भूप की छाह। श्री वास्तव काइथ कुल छत्रसिंह शहँ नाम। गाइ विप्र के दास नित पुर अघेर सुष धाम। × × × सवत सत्रह सै वरप और छिअतरि तत्र चैत्र मास सित अष्टमी ग्रंथ कियौ कवि छत्र।

अंत—जो फलु सत है जज्ञ करे अरु सागर सागर संगम गंग अन्हाऐं। जो फलु षोडस दान दिये अरु जो फल तीरथ राज सिधाऐं। जो फलु छत्र करैं तपसा अरु रुद्र प्रसंन्न भए वरु पाऐं। जो फलु है जग जोग करें फलु सो भगवान कथान के गाऐं। जथा॥ जो गति ऊर्ध रेतानि की मति जो उर में समता अति आऐं। जो गति है सत साधनि संग जो संतोष महा उपजाऐं। जो गति है बहु जाप जपें भगवंत भजै विधि सों मनु लाऐं। से गति होति है छत्र कहौ दिन भगवंत कथा यह गाऐ। दोहा। अक्षर प्रति फलु जग्य कौ, डारतु अघनि नसाइ। कोटि जन्म के कल्मष कहत सुनत नसि जाइ। इति श्री भागवते महापुराने दस्मसकंधे श्री हरि जल विहार जदुवंस वर्णनं नाम नव्वै अध्याय। ६०। श्री मार्ग मांसे कृष्ण पक्षे अष्टमी कुजवारे। संवत् १८५३। दोहा। दस्म स्कंध कथा अमृत कृष्ण चरित्र रसाल। लिखितं पुस्तक वाहि में मिश्रजु मोहनलाल। श्री

विषय—भागवत दसमस्कंध का पद्यानुवाद।

संख्या ६९. अश्वविनोद, रचयिता—चेतनचन्द, कागज—देशी, पत्र—३६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) २२, परिमाण (अनुष्टुप्) ८००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६१६ = १५५९ ई०, लिपिकाल—सं० १८५० = १७९३ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला शिवदयालु, ग्राम—बरखेड़वा, डाकघर—तड़िया, जिला—हरदोई।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ शाल होत्र लिख्यते॥ दोहा—नमो निरंजन देव गुरु मारतंड ब्रह्मंड। रोग हरन आनंद करन सुख दायक जगपिंड॥ श्री महाराजाधिराज संगर वंश नरेश गुण ग्राहक गुणि जनन के जगत विदित कुशलेश॥ जाके नाम प्रताप को चाहत जगत उदोत। नर नारी सुख मुख हैं कुशल कुशल कुशगोत। नित चातुर चष चातुरी मुख चातुर सुख दैन। कवि कोविद वरगत रहत सुख मुख पावत चैन॥ वाजी सों राजी रहैं ताजी सुभट समर्थ॥ रन सूरे पूरे पुरुष लहैं कामना अर्थ॥ वालापन में शरन

रहि मैं सुख पायो वृन्द । साल होत्र मति देखि कै बरनत चेतन चंद ॥ श्री कुशलेश नरेश हित नित चित चाह लह्यो ॥ अश्व विनोदी ग्रन्थ यह सार विचार कह्यौ ॥ मूल माना साखा सु मधु पत्र सुभग कर साज्ञ । सुवन फूल फलियो सदा कुशल सिंह महराज ॥ दोहा—विजय करन अरु जय करन गावत चारौ वेद । नकुल कहै सहदेव सों रवि वाहन को भेद ॥

अंत—विधि विचार दोहा—सीतल गरम सुभाव ये अरु पुनि द्वन्द जो होय । साल होत्र या विधि कहै जो पहिचानै कोय ॥ चौ०—कुमेत मुसकी और समंद । गरम प्रकृति होइ सुनि चंद ॥ सुरखा सुरंग को हारौ वोज । राउ दिज कहिये लख सोज ॥ नीला अरु चीनी सवजार । सरद प्रकृति होय वेताव ॥ ताकी रंग घोड़ा के जेते । अरुन पीत उदय हैं तेते ॥ है प्रधान सबके अंग पित्त । वात पित्त मिलि होत विचित्र ॥ पहिचाने अंग अंग की रीति । करि औषधि आवै पर तीति ॥ नाड़ी नैन बतावे देखि । प्रकृति स्वभाव सवै अवरेषि ॥ औषधि करै रोग पहिचानि ताके हाथ न आवे हानि ॥ धुरहा पाढ़े गोपा नाथ कान कुविज में भये सनाथ ॥ तिनके सुत चारौं उधिकाइ । इन्द्रजीत लछिमन जदुराइ ॥ चौथे ताराचंद कहायो । जिन यह अश्व विनोद वनायो ॥ हरिपद चित्त नाम की आसा । सालहोत्र वदै परकासा ॥ कुशल सिंह महराज अनूप । चिरंजीव भूपन के भूप ॥ सो०—यहै ग्रन्थ सुख सार जिनके हेतु हीय में ॥ लेउ सुधारि विचारि चेतन चन्द कह्यो यथा ॥ संवत सोलह सै अधिक चार चौगुने जान । ग्रन्थ कह्यो कुशलेश हित रक्षक श्री भगवान ॥ इति श्री अश्व विनोदी नाम ग्रन्थ चेतनचंद कृत संपूर्ण समाप्तः लिखितं देव मिश्र संवत् १८५० वि० ।

विषय—घोड़ों की औषधि, रोग, दोष, उनके ऐब हुनर आदि के वर्णन है ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता चेतन चन्द थे । ये गोपीनाथ कान्यकुब्ज ब्राह्मण के पुत्र थे । इनके ३ भाई और थे । जिनके नाम इन्द्रजीत लचमण और जदुराइ थे । महाराजा कुशलेश के आज्ञानुसार चेतनचन्द ने यह ग्रन्थ रचा इस प्रकार उपरोक्त कथा का वर्णन हैः—धुरहा पाढ़े गोपी नाथ कान कुविज में भये सनाथ । जिनके सुत चारौ उधि काई । इन्द्रजीत लछिमन जदुराइ ॥ चौथो ताराचंद कहायो । जेहि यह अश्व विनोद वनायो ॥ कुशल सिंह महराज अनूप । चिरंजीव भूपन के भूप ॥ संवत सोलह सै अधिक चार चौगुने जान । ग्रन्थ कह्यो कुशलेश हित रक्षक श्री भगवान ॥ मास फालगुण सुकल पक्ष द्वितीया सुभ तिथि नाम ॥ चेतनचन्द सुभाषियत गुरु को कियो प्रनाम । निर्माणकाल संवत् १६१६ वि० लिपिकाल संवत् १८५० वि० हैं ॥

संख्या ७० ए. व्यंजन प्रकार, रचयिता—छोटेलाल गुजराती अवदीच (आगरा), पत्र—४०, आकार—९ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप)—१००६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२३ = १८६६ ई०, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवकुमार मिश्र, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ व्यंजन प्रकार छोटे लाल विट्ठल नाथ के पुजारी अवदीच ब्राह्मण जयशंकर के पुत्र कृत लिख्यते ॥ साग भाजी का वर्णन ॥ प्रश्न ॥ संसार में

साग कितने प्रकार के होते है ॥ उत्तर—साग अनेक प्रकार के इस संसार में होते हैं ॥ प्रश्न—उनमें कितने भेद हैं । उत्तर—चार भेद हैं ॥ प्रश्न—कौन कौन से चार भेद हैं । और उनके नाम का हैं ॥ उत्तर—चारौं भेदों के नाम यह हैं ॥ (१) कंद (२) फल (३) पत्रा (४) फली कन्द किसको कहते हैं । कंद उसको कहते हैं जो धरती के भीतर पैदा होय ॥ जैसे जमीकंद आलू रतालू अरबी सककँद इत्यादि ॥

अंत—मुरब्बे कितने प्रकार के होते हैं—और किन चीजों के वनाये जाते हैं ॥ मुरब्बा तो अनेक चीजों का बनता है पर मेरी याद में तो अठारह प्रकार का है—१. आमका २. अननास ३. सेव का ४. विहीका ५. नासपाती का ६. संतरे ७. अदरख का ८. हड़का ९. गाजर का १०. आंवले का ११. नीबू का १२. पौंड़े का १३. इमली का १४. करौंदे का १५. वेल का १६. पेठे का १७. चिकनी सुपारी का १८. कसेरू इत्यादि का ॥ दोहा—रामनेत्र ग्रह इंदु मित संवत विक्रम जान । चैत्र मास सित सप्तमी सुन्दर ग्रन्थ वखान ॥ कंद मूल फल पत्र की क्रिया दई जु वताय । भूल चूक जो होय सो गुनि जन लेहु बनाय ॥ व्यंजन प्रकार के भाग को पूर्ण कियो जगदीस । छोटेलाल यों कहत है कवि जन पद धरि सीस ॥ इति व्यंजन प्रकार संपूर्ण लिखी शोभा राम संवत् १९३६ वि०

विषय—१. साग भांजी वनाने की रीति । २. अचार बनाने की रीति ॥ ३. मुरब्बा बनाने की रीति ॥

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता छोटे लाल अवदीच ब्राह्मण आगरा निवासी थे। निर्माण काल संवत् १९२३ वि० है । इसको इस प्रकार लिखा है । रामनेत्र ग्रह इंदु मित संवत विक्रम जान ॥ चैत्र मास सित सत्तमी सुन्दर ग्रन्थ बखान ॥ लिपि काल संवत् १९३६ बि० है ॥

संख्या ७० बी. व्यंजन प्रकार, रचयिता—छोटेलाल गुजराती अवदीच (आगरा), पत्र—४२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०१०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२३ = १८६६ ई०, लिपि-काल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—वैद्य राम जीवन, ग्राम—पाचौली, डाकघर—मारहटा, जिला—ऐटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ व्यंजन प्रकार छोटे लाल विट्ठल नाथ के पुजारी जय शंकर के पुत्र अवदीच कृत लिख्यते ॥ साग भाजी का वर्णन ॥

प्रश्न—संसार में साग कितने प्रकार के होते हैं ॥

उत्तर—अनेक प्रकार के साग इस संसार में होते हैं ॥

प्रश्न—उनमें कितने भेद हैं ॥

उत्तर—चार भेद साग भाजी के हैं ॥

प्रश्न—कौन कौन से चार भेद हैं ॥ उनके काका नाम है ॥

उत्तर—उत्तर चारों भेदों के नाम ये हैं ॥ १. कंद २. फल ३. पत्र ४. फली

प्रश्न—कंद किसको कहते हैं ।

उत्तर—कंद उसको कहते हैं जो धरती के भीतर पैदा होय ॥ जैसे जमींकंद आलू, रतालू, अरवी सकरकंद इत्यादि ॥

अंत—प्रश्न—मुरब्बे कितने प्रकार के होते हैं और किन चीजों के वनाये जाते हैं ॥

उत्तर—मुरब्बे तो अनेक वस्तुओं के बनते हैं परन्तु मेरी याद में तो अठारह प्रकार का होता है ॥—१ आम का २. अनंनास का ३. सेव का ४. विही का ५. नास पाती का ६. संतरे का ७. अदरख का. ८. हड़ का ९. गाजर का १०. आंवले का ११. नीबू का १२. पौड़े का १३. इमली का १४. करौंदे का १५. वेल का १६. पेठे का १७. चिकनी सुपाड़ी का १८. कसेरू का इत्यादि ॥—दोहा—राम नेत्र ग्रह इन्दु मित संवत विक्रम जान। चैत्र मास सित सप्तमी सुन्दर ग्रन्थ वखान ॥ कंद मूल फल पत्र को क्रिया दई जु वताय। भूल चूक जो होय सो गुनि जन लेहु वनाय। व्यंजन प्रकार के भाग को पूर्ण कियो जगदीस ॥ छोटे लाल यौं कहत है कवि जन पद धरि सीस ॥ इति व्यंजन प्रकार संपूर्ण लिखी लालू गोकुल वहेठा निवासी संवत् १९३६ वि० ॥ राम ॥

विषय—इस ग्रन्थ में साग भाजी बनाने की और अचार मुरब्बा वनाने की रीति आदि का वर्णन है ॥

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता छोटे लाल अवदीच ब्राह्मण आगरा निवासी थे। निर्माण काल संवत् १९२३ वि० है इसको इस प्रकार वर्णन किया है ॥ राम नेत्र ग्रह इंदु मित संवत विक्रम जान। चैत्र मास सित सप्तमी सुन्दर ग्रन्थ वखान ॥ लिपिकाल संवत् १८३६ वि० है ॥

संख्या ७० सी. व्यंजन प्रकाश, रचयिता—छोटेलाल गुजराती अवदीच (आगरा), पत्र—४०, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०२४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२३ = १८६६ ई०, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—कवि रामजीवन, ग्राम—खसपुरा, डाकघर—रामपुर, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ व्यंजन प्रकाश ग्रन्थ लिख्यते ॥ साग भाजी का वर्णन ॥

प्रश्न—संसार में साग कितने प्रकार के होते हैं ॥

उत्तर—अनेक प्रकार के साग इस संसार में होते हैं ॥

प्रश्न—उनमें कितने भेद हैं।

उत्तर—चार भेद हैं ॥

प्रश्न—कौन कौन से चार भेद हैं उनके काका नाम हैं ॥

उत्तर—चारों भेदों के नाम ये हैं ॥ १. कंद २. फल ३. पत्र ४. फली

प्रश्न—कंद किसको कहते हैं।

उत्तर—कंद उसको कहते हैं। जो धरती के भीतर पैदा होय जैसे ज़मींकंद आलू रतालू अरबी सकरकंदी इत्यादि

अंत—मुरब्बा कितने प्रकार के होते हैं और किन किन चीजों से बनाये जाते हैं।

उत्तर—मुरब्बा तो अनेक वस्तुओं से बनते हैं। परन्तु मेरी याद में अठारह प्रकार का होता है ॥—१. आम का २. अनन्नास का ३. सेव का ४. विहीका ५. नासपाती का ६. संतरे का ७. अदरख का ८. हड़का ९. गाजर का १०. आंवले का ११. नीवू का १२. पौड़े का १३. इमली का १४. करौंदे का १५. वेल का १६. पेठे का १७ चिकनी सुपारी का १८. कसेरू इत्यादि का—दोहा—रामनेत्र ग्रह इन्दु मितु संवत् विक्रम जान। चैत्र मास सित सप्तमी सुन्दर ग्रन्थ वखान। कंद मूल फल पत्र की किया दई जू वताय ॥ भूल चूक जो होय सो गुनि जन लेहु वनाय ॥ व्यंजन प्रकार के भाग को पूरन कियो जगदीस ॥ छोटे लाल यों कहत हैं कवि जन पद धरि सीस ॥ इति व्यंजन प्रकाश संपूर्ण समाप्तः लिखतें रामलाल अत्तार आगरा गोकुल पुरा निवासी। श्रावण सुदी सप्तमी संवत् १९३६

विषय—इस ग्रन्थ में साग भाजी बनाने की और अचार मुरब्बा बनाने की रीति लिखी हैं ॥

टिप्पणी—इस व्यंजन प्रकार के रचयिता छोटे लाल गुजराती अवदीच ब्राह्मण आगरा निवासी थे। निर्माणकाल संवत् १९२३वि० है ॥ इसको इस प्रकार वर्णन किया है ॥ दोहा—राम नेत्र ग्रह इन्दु मित संवत् विक्रम जान। चैत्र मास सित सप्तमी सुन्दर ग्रन्थ वखान ॥ लिपिकाल संवत् १९३६ वि० है ॥

संख्या ७१ ए. गीतगोविंद सटीक, रचयिता—चिंतामनि, कागज—देशी, पत्र—५९, आकार—८ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—६३४, रूप—अच्छा, लिपि—देवनागरी, रचनाकाल—सं० १९१६ वि०, लिपिकाल—सं० १९१६ = १८५९ ई०, प्राप्तिस्थान—हनुमान प्रसाद सब पोस्टमास्टर, स्थान—राया, डाकघर—राया, जिला—मथुरा।

आदि—श्री राधा वल्लभो जयति। अथ गीता गोविन्द सटीक लिष्यते। सुंदर सुभग अंग अलसी कुसम से है नेन कंज अैन कहै बैन मुसक्याऐ है। वांम भाग राधा तिह को धाए क बांह धरैं बधा के हरन रति पति कौ लजाए है। सोभा के निधान सब सुख के विधान जांने देवन प्रधान नर संगा न सरसाऐ हैं। कहै कवि चिंतामनि प्यारी प्यारेलाल सुनौरी पीअैय पहारसिंह यांभै मन भाए हैं। २। मूल मेघैर्मेदुर मेवंरं वन भव स्यामास्तमाल द्रुमे। नंक्र भीरुरयां चमेवतदि मंराधे ग्रहं प्रापयः इत्थंनं इति देश तश्च लतियोः प्रसद्य कुंजद्रुमं ॥ राधा माधव योर्जयंति यमुना कूले रह के लयः १ टीका सवैया। मेघन अंबर छाइ रहयौ सब भूमि तमालिन सौं अतिकारी। रैन उरात गुपाल घनौ गृह जास गले वृष भानु दुलारी। नंद निदेश कौं पाइ चले प्रति वृक्षनि मारग केलि पसारी। कूल कंलिदी बिलास करैं जय राधिका माधव कुंज विहारी।

अंत—इति श्री मत गीत् गोविन्दे सटीक सूचनिकायां स्वाधीन पति कास प्रति पीताम्वरी नाम द्वादसो सर्ग। १२। इति श्री मत्गीत गोविन्दे महा काव्ये संपूर्ण। रस[६] आत्मा[१]

भक्ति[९] स मार्ग द्रग युत वर्ष बिक्रम की गनौ। रितु सरद कातिक शुक्ल अछया नवमि वार भृग भनौं। जयदेव कृत श्री गीत गोविन्द चिंत कवि टीका कीयौ। निज काज कवि ईश्वर सुप्रति निर्मित करी पूरन कीयौ।

विषय--गीत गोविंद का हिंदी में पद्यानुवाद।

संख्या ७१ बी. संगीत चिंतामणि, रचयिता—चिंतामनि, कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६७२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९६ = १८३९ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला देवीराम पटवारी, ग्राम—अगसौली, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्रीगणेशाय नमः॥ अथ सांगीत चिन्तामणि लिख्यते॥ प्रथमहि सुमिरौं गनपती सारद नाऊं माथ करि प्रनाम गुरुदेव की धरैं जो मोपर हाथ॥ चिन्तामणि सांगीत को गुनि गुनि रचै वनाय॥ सुनि हैं पढ़ि हैं करि कृपा छमहिं दोख विसराय॥ भजन राग झंझौटी॥ उठौ लाल प्रात काल प्रान जीवन प्यारे॥ दिनकर कर उदित भई उडगन दुति छीन भई। चकई पिया मिलन गई हेरत सब वोर॥ चिरियां वन चह चहानि पनिहारिन सरति पान। शशि मलीन जगत जानि करत का अवारे॥ पथिकन निज राह लई गाय गोप ग्वाल भई। ठाढ़े सब द्वार दरस दै मुरारी॥ जोग श्याम प्रमुदित मन वलि वलि जाय चिन्ता मणि सुर नर मन हरन प्यारे नन्द के दुलारे॥ १॥ राग झंझोटी—अवधपुरी आनंद कंद जग जीवन जन्म लियो॥ चंद्र वदन सुख सदन मदन राजीव विलोचन आन कियो। तन घन श्याम सलोनो सोहै अरुण कमल करपद मन मोहै। राजत गोल गपोलन अनंदित कच विलोकि अव अवल गयो॥ कंबु ग्रीव भुज वांह विशालन शुभ श्रुति भृगुटी सोहत आनन। पंक्ति दाड़िम यों लखिकर आपुहिं दरकि गयो॥ नासा निरखि कोर उठि भागो लखति नाम भवरन मन त्यागो सुन्दर जंघा निरखि राम को कदली मन भरमाय रह्यो॥ भाल तिलक सोहत शुभ कारी कर शर धनुप तूण कटि। क्रीट मुकुट लखि पीत वसन तन चिन्ता मणि सिर नाय दियो॥

अंत—राग खम्माच—झुकि कारी वदरिया आई विच वीच चमक दुख दाई॥ ऊधौ तुम हूं मोहन सों कहियो पावस अव नियराई॥ दादुर हंस कोकिला वोलत पवन चलै पुरवाई॥ जो तुम हमको त्यागन चहते काहे प्रीति वढ़ाई॥ सुनि सुनि हूक उठत जियरा में कुवरी तुम मन भाई॥ वे वतियां सुधि अउतीं हमको वन विच वेणु वजाई॥ तज दी लोक लाज गुरु जन की तुम संग रहस मचाई॥ फिर फिर इन्द्र देव गोवर्धन चहु दिशि घेरी आई चिन्ता मणि गोपिन की विनती लीजौ व्रजहिं वचाई॥ १॥ दादरा—चलौ सखि वहीं हिन्डोला झूलैं। वंशी वट अरु श्री जमुना तट तेल कदम की कूलैं॥ चिन्ता मणि पिय प्यारी परस्पर झूलत मोमन कूलै॥ २॥ इति श्री सांगीत चिन्ता मणि संपूर्ण समाप्तः लिखा भोलानाथ वनियां। पीपल गांव संवत् १८९६ चैत्र सुदी दशमी को ग्रन्थ संपूर्ण भया॥

विषय—इस ग्रन्थ में राग रागनियों का वर्णन है॥

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता चिन्ता मणि थे। इनका कुछ पता नहीं केवल लिपि काल संवत् १८९६ वि० है ॥

संख्या ७२. वर्णाकर पिंगल, रचयिता—चिरंजीव कवि, पत्र—२०, आकार—७ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०३, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—जयंती प्रसाद शर्मा, स्थान—फतेहाबाद, डाकघर—फतेहाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। ब्रह्मा विष्णु शिवादि सब तिनि चरणनि चितु लाई। संकर सुत चिरंजीव यह वर्णक वृत्त गाई। मो गुरु तीनि धराधर देहि भलो सुख सर्प तथा करि मानों आदिम गोजस चंद परालो जल वंश क फल पाकरि जानों। अन्त गुसो परदेस आकाश सु शून्य तलात बखानौ। मात पिछली आकुरो विन कानै लघु मानि। और मात के वर्ण यह सबै गुरू करि जानि। संयोगादि जु वर्ण हैं विंदु विसर्ग संप्रक्त सोइ गुरू करि मानिये यह मानै कवि जुक्त। कहूं छंद के अन्त में लघु दीर्घ जु होई। दीर्घ लघु करि मानिये लघु दीर्घ कर दोइ। आदिम अवसान में भजसा गुरू जु लेखि। परता लघुता जानिये पिंगल बाका विसेखि। मगन सिधि गुरू तीनि तै नगन तीनि लघु सोई। गौरव लाघव को लहै यह जानत सब कोई।

अंत—शरद उपेन्द्र कवीन्द्र कहै सुमुखि पुनि दोधक छंद महा। शालिनी। श्रीपुनि भका जानिऊ वृत्त रथोद्धत नग कहा। भूपर बिलासित भाषै शेष उपस्थित श्योनि कामिनी तहां। मौक्तिक माला यह छंद सबैस शष्ट सुवर्णहि वृत्त तहां। अथवा दशाक्षर वृत्तः रोन भास गण ये करि सब जो चन्द्र वर्त्म भणि छंद सुख दसो। यथा नीरूप नर या जग रहिहै दुष्ट वाक्य मुख ते नहि कहि है। सत्व मध्य सुख बास करि चरै जाइ धाम सुजन्म जगधरै। चन्द्र वर्त्म ऽ। ऽ॥ ऽ॥। ऽ४२ जतो जरो जानि यथा प्रमानहिं सुछंद वंशस्थ अनंत गावहिं यथा। पढ़ै पढ़ावै अधिका उदारता अनेक विद्या पटुता विवेकता अशेष दोपै जु अदोष जानि है प्रमान भानै समभाव मानिहै। वंशस्थ। ऽ।ऽऽ॥ऽ।ऽ ऽ इति चिरञ्जीव कृत वर्णकर पिंगल समाप्तम् ॥

विषय—आदि में गुरू लघु विचार। पुनः प्रस्तार निरुपण। पश्चात् ४३ वर्णिक वृत्तों के लक्षण उदाहरण सहित।

संख्या ७३. दादू की बानी, रचयिता—दादू, कागज—देशी, पत्र—८७, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१० = १७५३ ई०, प्राप्तिस्थान—चौधरी गंगाराम, ग्राम—इगलास, डाकघर—इगलास, जिला—अलीगढ़।

आदि—साहिब मिला तो सब मिला भेटे भेंटा होइ साहिब रहा तौ सब रहा नहीं तो नाहीं कोइ ॥ सब सुख मेरे साइयां मंगल अति आनन्द। दादू सज्जन सब मिले भेटे परमानन्द ॥ दादू रीझे राम परया अन्त न रीझै मन। मीठा भावै राम रस दादू सोई जन ॥

दादू मेरे हिरदे हरि बसै दूजा नाहीं और। कहौ कहा धौं राषिये नहीं आन को ठौर ॥ दादू एक हमरे उर बसै दूजा मेल्हरा दूरि। दूजा देखत जाइगा एक रहा भरपूर।

अंत—धनासीः—तेरी आरती ये जुग जुग जै जै कार ॥ जुगि जुगि आतम राज जुगि जुगि सेवा कीजिये ॥ जुगि जुगि लंघै पार जुगि जुगि जग पावै कौ मिलै ॥ जुगि जुगि तारण हार जुगि जुगि दरसण देखिये ॥ जुगि जुगि मंगल चार जुगि जुगि दादू गाइये ॥ इति श्री राम सति ॥ दादू जी की वानी संपूर्ण समाप्तः ॥

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या ७४. नेम बत्तीसी, रचयिता—दामोदर दास (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—४ × ३ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६८७, प्राप्तिस्थान—श्री अद्वैतचरण गोस्वामी, स्थान—श्री राधारमण घेरा वृंदावन, डाकघर—वृंदावन, जिला—मथुरा।

आदि—अथ नेम बत्तीसी लिख्यते। दोहा। श्री गुर लाल कृपाल बल यह मेरे निर्धार। श्री वृन्दावन छांड़ि कै भट कौ नहिं संसार। श्री गुरु लाल कृपाल करि दियौ वृन्दावन वास। अब हौ मन निश्चै करौ तजौ अनत्त की आस। कुंज २ निरषत फिरौ जमुना जल न्हाउ। श्री वृन्दावन छांड़ि कै अन तन कित हूं जाउ। वृन्दावन सुखरासि है आनंद ठांव सुठांन। श्री राधा वल्लभ छांड़ि के अन तन कित हूं जांउ। वासी की आसा करौं वासी हाथ विकाउ। श्री वृन्दावन छांड़ि कै अन तन कित हूं न जांउ। रैनि रटौ पानी गियौ पातर सील चुग पांड। श्री वृन्दावन छांड़ि कै अन तन ही कित जांउ।

अंत—भीषम ने प्रन कियो शस्त्र हरि पै जु गहायौ। वेद कह्यौ हरि मेटि भक्ति कौ बोलि जिवायौ। कोली कामी भयौ रूप तिन हरि कौ कीयौ। राषी ताकी पैज सरन अपने कर लीयो। ग्राम नाम की लाज गहि जे नान सके पाछैं फिरैं। लरैं मरैं रक्षा करैं वे भखे पोटे करैं। तुम पूरन सब भांति हौ सबके पुजवौ काम। बुरैं भलैं कोऊ जपैं परम रसीलो नाम। नेम बत्तीसी अधिक रस नित प्रति पाठ कराऊँ। दामोदर जन प्रन कियो निरवाहो वलि जांउ। सत सागर सिधि गनिरस ससि रवि रितु हेम। अघन मास अरु पछि सित एकादस कृत नेम। बुरौ भलौ तुम्हरौ प्रभु तुम्हरे सरन रहाउ। दामोदर कौं स्याम विन और न दूजी ठांउ। इति नेम बत्तीसी संपूर्ण। शुभभूवात

विषय—वृन्दावन की महिमा का वर्णन।

संख्या ७५ ए. मोहविवेक की कथा, रचयिता—दामोदरदास, पत्र—११, आकार—९½ × ९½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७७७ वि०, लिपिकाल—सं० १८६१ = १८०४ ई०, प्राप्तिस्थान—वासुदेव सहाय, स्थान—फतहपुर सीकरी, डाकघर—फतहपुर सीकरी, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। श्री गुरुभ्यो नमः। अथ मोह विवेक की कथा लिख्यते। ग्वालक भाषा। दोहा। सत्रह सै सतहत्तर समौ वैसाष वदि पंचमी शनौथ। प्रेम प्रितनु

के नहीं भक्त भावतिहि कोथ । मेधापति वा तासु पति रूप धार मधु मुर हयौ । वृथानंद को शारथ पंडव सुत सभ कौ जयो । देवन बड़ो कृष्ण सामान सुषन बड़ो संतोष प्रमान । चरन प्रताप तरुनिजा सोइ, सुर समान दाता नहिं कोइ । सभ संतन कूं करूं प्रनाम, पाऊँ पर्म भक्ति निज धाम । गुरू की कृपा चाहिये देव सो तुम अवगति मैं लहौ न भेव । सेस संहसति सकुन निस दिन गावै···। महापुरुष मिलि कियो विचारी, तुम अनंत मौल हौ पियारी ।

अंत—विश्राम निसवासर निरभै रहे, करै विध्न की आस । अब विन्ती मेरी सुनों कहें दमोदरदास । काच पारना झले झले तो कुष्टी होइ । दामोदर ऐसे कहें पाए हे गुण दोय । नाव परम रस पासा कह्यो दीजै प्रेम चित लाइ । उस परे की कुष्टता इस पारसें जाइ । अह पाए विष षान काय पार सुषान । कहे दामोदर दास यों सुनहु संत दे कान । इति श्री मोह विवेक की कथा संपूर्णम् । समाप्त लिपतं पिरान सुपजी । लिष्यतं फिरोजाबाद में १८६१ शुभं भवतु श्लोक १९३ पत्र ११

विषय—मोह विवेक की कथा ।

संख्या ७५ बी. मोहविवेक की कथा, रचयिता—दामोदर दास, पत्र—१०, आकार—८½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—३९०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७७७ = १७२० ई०, प्राप्तिस्थान—मुंशी हुकुम सिंह, स्थान—मिढ़ाकुर, डाकघर—मिढ़ाकुर, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ।। अथ मोह विवेक की कथा लिष्यते ॥ सत्रह सै सतहत्तर समौ । वैस वदि पंचमी शनौथ । प्रेम आतिउ के नहीं । भक्त भाव तिहिं कोथ ॥१॥ मेधा पति तातास पति, रूप धारि मधु मुर हयो । वृथानंद को सारथ । पंडव सुत सभकौ जयो ।। २ ।। देव न बड़ो कृष्ण समान । सुप न बड़ो संतोष प्रमान । चरन प्रताप वरनिजा सोइ । सुर समान दाता नहि कोई ॥ ३ ॥ सब संतनु कूं करों प्रनाम । पाऊ पर्म भक्ति निज धाम

अंत—विमल अजाय भक्ति निसान । सब कोई पावै सुख दान ।. धर्म उदै मन निर्मल आज । सव सुख भयो विवेक के राज ॥ १६९ ।। विश्राम निरभे रहै । करै विष्णु की आसा अब विनती मेरी सुनो । कहै दमोदर दास ।। १७० ।। काच पारना झल झले तो कुष्टी होइ । दामोदर ऐसे कहै पाये यह गुण दोइ ॥ १७१ ।। नाव परम रस पासा कह्यौ पीजै मचित लाइ । इस पेरे की कुष्टता रस पारे सें जाय ।। १७२ ॥ इह पारा विष पानका यह पारा सुपान । कहै दमोदर दास यौं सुनहु संत दे कान ।। १७३ ॥ इति श्री मोह विवेक की कथा समाप्तम ।

विषय—मोह तथा विवेक और उनके कुटुंबादि का वर्णन ।

टिप्पणी—रचयिता ने अपने गुरू का नाम परमानंद दास बताया है ॥

संख्या ७३. वैद्यक, रचयिता—दामोदर, कागज—देशी, पत्र—३२६, आकार—७½ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—८४७६, रूप—प्राचीन,

लिपि--नागरी, प्राप्तिस्थान--श्री चिरंजीलाल जी वैद्य, स्थान--बेलनगंज आगरा, डाकघर—आगरा, जिला--आगरा ।

आदि--श्री धन्वन्तरायन्मः अथ वैद्यक ग्रन्थ लिष्यते अथ दश ज्वर नाम ॥ अजीर्ण ज्वर ॥ १ ॥ अहार ज्वर, पित ज्वर, षेद ज्वर, वायु ज्वर, वृष्टि ज्वर, काल ज्वर, कफ ज्वर, रक्त ज्वर, दृष्टि ज्वर, काहि किद्धि ज्वर ॥ एन दशी ज्वर इथी होय ॥ आसू ॥ १ ॥ भाजि में ॥ २ ॥ वैषाप ॥ ३ ॥ जेष्ठ मे ॥ ४ ॥ पित्त प्रकाश चैत्र ॥ १ ॥ फागुन में कफ प्रकोप ॥ आसाढ़ ॥ १ ॥ श्रावण ॥ २ ॥

अंत--अथ नेत्र प्रतिकार ॥ पीपर टां १ लायची टां १ फिटकरी, विजावोल, हिंग सूक्ष्म बाँट दिन १४ मरदि इनी गोलि चणा प्रमाण दिजै आविद घंसी नेत्र आँजी एक गोली तो तिमिर फूको परज एता रोग जाय ॥ १ ॥ अफीम हर में भीजी गो घृत सी अंजन कीजै करती रहै ॥ समुद्र फेण आँप अंजन कीजै रात्री धो मिटै ॥

विषय--विषय वैद्यक ज्वर लक्षण पृष्ठ ४५ तक पाक बनाने की विधि ७६ तक, भिन्न २ रोगों के नुस्खे ६८ तक, रसादिक प्रयोग ७५ तक, ज्वरा दी उपचार ८५ तक ।

टिप्पणी—प्रत्येक अध्याय में 'इति श्री दामोदर विरचिता' का उल्लेख है। अतः रचयिता का नाम दामोदर है ।

संख्या ७७. जनक पचीसी, रचयिता—दरयावदास 'दौवा', कागज—पुराना कागज, पत्र—२३, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८८१ = १८२४ ई०, लिपिकाल—सं० १९२० = १८६३ ई०, प्राप्तिस्थान—लक्ष्मीप्रसाद त्रिवेदी 'मधु', स्थान—अमर मऊ, डाकघर—सागर, जिला--सागर (मध्यप्रदेश) ।

आदि--श्री गनेस जू सदा सहाय ॥ अथ लिख्यते जनक पचीसी की पोथी ॥ श्री गनेस जी सर सुती, महावीर दलवान ॥ जनक सुता लछिमन सहित, कृपा सिन्धु भगवान ॥ कृपा सिन्धु भगवान हुकुम पाऊ गुन गाऊँ ॥ बैठ रहौ सुख पाय आपनो दास कहाऊँ ॥ कहि दउवा दरयाव नाथ कछु हमें देव उपदेस ॥ दीन जान अरजी सुनों मरजी करो गनेश ॥ जब रघुवर भृगु नाथ पर । तुरत उठै षिस आय । जनक राव व्याकुल भये । सिगरी सभा ससाय ॥ मुनको समझावौ न तुमने मानी ॥ तजो क्रोध परस राम अपनी ठानी ॥ तब जनक मौंह रघुवर नै टेडी तानी ॥ अभमान घटो दिलको सुरत सिव में समानी ॥ जोलों प्रभु चीन्हौ नहीं, तोलो कीन्हों वाद ॥ पवन साध के ध्यान धर संभु वचन फरमाय ॥ सिव के वचन याद कर ग्यान भयौ है ॥ अभमान अटा दिलकौ सब छूट गयो है ॥ परनीत कर त्रलोकीपत जान गयो है ॥ धर अस्त्र सस्त्र अस्तुत करि सरन भयौ है ॥

अंत—दोहा धनुस टोर सीता वरी, धन दसरथ के लाल । व्याह बनौ सिय राम को, इक्यासी की साल ॥ येते श्री जनक जी पचीसी दरयाव दास विरंच ताय ॥ सम्पूरन समा पता ॥ सब देव नाई वसि फीस लै को संपुरन समापत ॥ मुकाम साह नगर ॥ लिखी अजुध्या की जो कौउ बाँचै सुनै ताको राम राम ब्राह्मन को डंडोत चरन छूकै ॥ कही कथा

चित लाय के। अछिर ज्ञान विचार। जहां चूक मोपर परै, कवि कछु लेव सुधार ॥ संवद १९२०

विषय—दोहा, त्रोटक, छप्पय आदि छंदों में सीता जी के विवाह तथा परशुराम संवाद का वर्णन है।

टिप्पणी—उक्त पुस्तक साह नगर निवासी दौंवा दरयाव कृत है। दौवा बुन्देल खन्ड में एक जाति कहलाती है, जो बुन्देला ठाकुरों तथा अहीरों के सम्पर्क से बनी हुई है। पुस्तक में ठेठ बुन्देल खंडी शब्दों की बहुलता है।

संख्या ७८ ए. वैद्यक विनोद, रचयिता—दरियाव सिंह (बीवीपुर, कानपुर), पत्र—१२०, आकार—८ X ३ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८३०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९० = १८३३ ई०, लिपि-काल—सं० १९१० = १८५३ ई०, प्राप्तिस्थान—वैद्य सीताराम, ग्राम—बमनोई, डाक-घर—बमनोई, जिला—अलीगढ़।

श्री गणेशाय नमः अथ वैदक विनोद लिख्यते ॥ प्रारम्भ में मलहम वनाने का उपाव तूतिया हरूनी १ तो० जंगाल हरी १ तो० सौहागा चौकिया कच्चा १ तो० विरोजा ४ तो० फटकरी १ तो० हरदी आंवा १ तो० हरतार तव का ६ माशे इस सव दवाइयों को महीन पीस कर विरोजा में मिलावै और शराव वरंडी या सिरका तेज और गाय का घी २ तोला थोड़ा थोड़ा मिलाकर घाव पर लगावै जव वह घाव लाली पर आवै तव यह मलहम लगावै तेल मीठो ऽ। गरम करके आदमी के सिर की हड्डी दो तोला नीम की पत्ती दो तोला लेकर उसी तेल में डाले खूव जरावै जब दोनों चीजे जर जांय तव निकारि डारै और मोम दो तोला मिलावे मुरदा संख ६ माशे सफेदा कस गरी ६ मासे सेंदुर गुजराती ६ माशे पीस छान के जुदा जुदा उसी तेल में डाले और आंच थोरी थोरी करै जव कवाव पर आवै और तार वंधने लगे तब अफीम ६ माशे मिलावै जव खूव मिल जाय ठंडा कर उस घाव पर लगावै घाव नींक होइ ॥

अंत—गरमी के मौसम में खून अलग अलग होता है और इस मौसम में मुनासिव है कि सांझ की वेरा फस्द खुलवावै जो सवेरे की वेरा खोली जाती है तो उसमें बुराई यह है कि खून कम हो जाता है और खुशकी वदन में हो जाती है इससे सांझ की वेरा अच्छी है और जो वाजे आदमी नहीं माणते तो एक न एक वीमारी पैदा हो जाती है और मौसम वरसात में खून माफिक से होता है फसद खोलना न चाहिये लेकिन जो कोई रोग कठिन आ पड़े और हकीम की राय में आवै तो खुलवावै और जिन दिनों में खून कम होता है तौ वसवव खुसकी के कई वीमारियां हो जाती हैं। और जिन दिनों में खून जादा हो जाता है तौ भी कई वीमारियां पैदा हो जाती हैं और दर्द भी कई तरह का पैदा हो जाता है। जरूरत के समय हर रितु में और हर समय फस्द खुलवाना मुनासिव है ॥ इति श्री वैदक विनोद संम्पूर्ण समाप्तः यह पुस्तक ठाकुर दरियाव सिंह जमींदार मौजा वीवीपूर ने संवत् १८९० वि० में उर्दू फारसी से हिन्दी में किया और लाला अमृत लाल ने सन् १९१० वि०

में लिखा ॥ लिखी रहै सौ वर्ष तक जो न मिटावै कोय ॥ लिखने वाला वावला गल गल माटी होय ॥

विषय—फारसी से हिन्दी भाषा की गई है । इसको दरियाव सिंह ने संवत् १८९० में भाषा किया ॥

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के फारसी से हिन्दी भाषा में अनुवाद कर्त्ता ठाकुर दरियाव सिंह जाति के कुरमी मौजा वीवीपुर तहसील बिल्हौर जिला कानपुर निवासी थे । निर्माण काल संवत् १८९० वि० और लिपि काल संवत् १९१० वि० है ॥

संख्या ७८ बी. वैद्यक विनोद, रचयिता—दरियाव सिंह (बीबीपुर), कागज—देशी, पत्र—८८, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९० = १८३३ ई०, लिपि-काल—सं० १९१७ = १८६० ई०, प्राप्तिस्थान—लाला सीता राम, ग्राम—विनोदगंज, डाकघर—छर्रा, जिला—अलीगढ़ ।

आदि-अंत—७८ ए के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—

यह पुस्तक संवत् १८९० में बनाई गई है और इसको लाला गौरी चरन ने संवत् १९१७ में लिखा है । इसमें दवाइयां और मलहम वगैरा अच्छे अच्छे लिखे हैं । इति श्री वैद्यक विनोद समाप्त हुआ ॥ सीता राम करै सो होय ॥

संख्या ७८ सी. कोक शास्त्र, रचयिता—दरियाव सिंह (बीबीपुर कानपुर), पत्र—२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६१२, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—लाला भोजराज ग्राम—रुद्रपुर, डाकघर—बमनोई, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ कोक शास्त्र भाषा लिख्यते ॥ स्त्रियों के जाति भेद प्रथम लिख्यते पद्मिनी, चित्रनी, संखिनी-हस्तनी । इनके लक्षण लिख्यते ॥ प्रथम पद्मिनी लक्षण मृगा के नेत्र तुल्य लालिमा युक्त नेत्र तथा पूर्णचन्द्र तुल्य प्रमाद गुण युक्त मुष अरु स्थूल अरु उच्च कुच तथा सिरस्त के पाख तुल्य मृदु सरीर होति है ॥ अरु स्वल्प भोजन दक्ष कर्म में काम जलमें कमल की सुगंधि होति है ।

अंत—जिसका पति पर देस में गा होइ तिसका अंग चन्द्रकमल करिकै संतप्त है और वहुत काल में प्राप्त होइ सो प्रोषित पति वा वियोगिनी कहावति है ॥ जिसका पति काम कलोल जानति होइ अन्य स्त्री भोग रहित होइ सद नायका क्रीड़ा करिके पाश्व दें के न छोड़े सो स्वाधीन पति का कहावति है ॥ विथित कुसुम माला भूषण वस्त्र धारण करिके काम लोल होइ कै अपने पति के वास स्थान में प्राप्त होइ बहुत कालान्तर सौं उतकंठिता कहावति है ॥

विषय—नायक नायका भेद और उनके लक्षण आदि का वर्णन है ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता दरियाव सिंह ग्राम बीबीपुर तहसील बिल्हौर जिला कानपुर निवासी थे । संवत् १८६० में विद्यमान थे । ग्रन्थ का निर्माणकाल और लिपिकाल का पता नहीं ॥

संख्या ७९ ए. अजीर्ण मंजरी, रचयिता—दत्तराम या रामदत्त माथुर, निवास स्थान—आगरा, कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६६, पूर्ण, रूप—दीमक खाई, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१९२१ वि०, लिपिकाल—१९३० वि०, प्राप्तिस्थान—वैद्य राम भूषण, ग्राम—जमुनिया, पो० आ०–हरदोई, जिला—हरदोई (अवध) ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ अजीर्ण मंजरी लिख्यते ॥ जिनके हाथ में अमृत का पूर्ण कलश धरा है और जो पीतांवर के धारण करने वाले कमल नेत्र और मणि की माला पहिरे हैं । और आयुर्वेद विद्या के प्रगट करने वाले और रोगों को स्मर्ण मात्र से हरने वाले श्री धन्वंतरि भगवान को हम नमस्कार करते हैं । श्री वृन्दावन विहारी राधिका रमण को नमस्कार करके दत्त राम अजीर्ण रोग कहा गया है क्योंकि जब अन्न का परिपाक यथार्थ नहीं होय तव अनेक ज्वरादि दुष्ट रोग मनुष्य को संतापित करते हैं इसी हेतु अजीर्ण रोग का पूर्वाचार्यों के संमत निदान को कहते हैं अजीर्ण रोग होने का कारण मन्दाग्नि है मंदाग्नि के होने ही से अजीर्ण रोग होता है ।

अंत—शुद्ध सींगिया विष १ भाग पारा १ भाग जायफल २ भाग सोहागा २ भाग पीपल ३ भाग सोठि ६ भाग कौड़ी की भष्म ६ भाग लौंग ५ भाग इन सबको चूर्ण करै इसे महोदधि वटी कहते हैं यह अग्नि को वढ़ाती है ॥ चीता, सोंठि, हींग, पीपलामूरि, पीपरि, चव्य, अजमोद, मिरच सब चीजे एक एक कर्ष दोनो खार, सेंधा नोन काला नोन समुद्र लोन सांभर लोन कचिया नोन प्रत्येक एक एक कोलले सवका चूर्ण करके विजौरे के रस में भावनादि घाम में सुखायले पीछे खाय यह चित्रकादि नाम का चूर्ण है गुल्म ग्रहणी आमरोग इन रोगों को हरता है अग्नि दीप्त करता है रुचि कारक है कफ को नाश करता है । इति अजीर्ण मंजरी संपूर्ण समाप्तः लिखा शिवराम पांडे संवत् १९३० आषाढ़ नौमी शुक्ला ।

विशेष—प्रथम मंगलाचरण के पश्चात् अजीर्ण रोग होने का कारण और उसकी औषधि का वर्णन है ।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता पं० दत्तराम माथुर आगरा निवासी थे निर्माण काल संवत् १९२१ वि० लिपिकाल संवत्—१९३० वि० है ।

संख्या ७९ बी. नाड़ी प्रकाश या नाड़ी परीक्षा, रचयिता—दत्तराम या रामदत्त माथुर–स्थान आगरा, कागज—देशी, पत्र—३६, आकार—१० × ६ इंचों में, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३००, पूर्ण, रूप—दीमक खाई, गद्य, लिपि—नागरी, रचना काल—१९३७ वि०, लिपिकाल—१९४८ वि०, प्राप्तिस्थान—लाला शिवदयाल, ग्राम—वरखेड़वा, डाकघर—टीड़गांव, जिला—हरदोई (अवध) ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ नाड़ी प्रकाश लिख्यते ॥ ग्रंथ के आदि और अंत में मंगला चरन करा कर्ते हैं इसी से नमस्कार आत्मक मंगल ग्रंथकर्ता करता है धन्वंतरि मिति धन्वंतरि वैद्यों के राजा और ज्ञान के देने वाले गुरु को प्रणाम करके मैं नाड़ी प्रकाश ग्रंथ को रचता हूँ ॥

और जो भाव प्रकाश आदि ग्रंथ हैं तिनका मत देख के वैद्यों के हेतु यह नाड़ी प्रकाश ग्रंथ दत्ताराम करके कहा जाता है ॥

नाड़ी के जाने विना जो वैद्य दवा करता है सो वैद्य धन धर्म और जस को नहीं प्राप्त होता है ॥

अंत—सात वर्ष के उपरांत चौदह वर्ष तक एक मिनट में ८५ पच्चासी वार नाड़ी कंपमान होती है ॥ और चौदह वर्ष पीछे ३० वर्ष पर्यंत तक अस्सी ८० वार नाड़ी चलती है और तीस वर्ष से लेकर पचास वर्ष तक एक मिनट में ७५ वार चलती है और पचास वर्ष से ८० वर्ष तक एक मिनट में ६० साठ वार नाड़ी चलती है ये जो पीछे नाड़ी चलने की संख्या कहि आये इसमें कमती चले तो सरदी की ज्यादा चले तो पित्त की नाड़ी जाननी । ऋषि ७ धनंजय ३ नंद ९ शशांकमृत १ अर्थात १९३७ में इस ग्रंथ को रचा विक्रम संवत् आश्विन शुक्ला दशमी बुधवार नाड़ी ग्रंथ समाप्त हुआ इति शुभम् केशव देव संवत् १९४८ वि० ॥

विषय—वैद्यक वर्णन है ॥

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता 'दत्ताराम' माथुर पंडित आगरा निवासी थे निर्माण काल संवत् १९३७ लिपिकाल संवत् १९४८ वि० है ॥ ऋषि धनजय नंद शशोक भ्रत पर मिते विभुविक्रम वत्सरे धर्मानद्या सामगात खल पूर्णताम्

संख्या ८० ए. अष्टयाम, रचयिता—देवकवि, पत्र—२२, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—५१०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८४ = १८२७ ई०, प्राप्तिस्थान—छोटेलाल शर्मा, स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । अथ श्री देवकृत अष्ट जाम लिष्यते । कवित्त । सराहैं सुरासुर सिद्ध समाज जिन्है लषि लाज मरे रति मार । महामुद मंगल संग लसैं विलसैं भव भारनि वारन वार । विराजै त्रिलोक लोनाई की ओक सुवीच मनोहर रूप अपार । सदा दुलही वृषभान सुता दिन दूलह श्री ब्रज राज कुमार । दोहा । दंपति तिनके देव कवि बरनत विविध विलास । आठ पहर चौंसठ घरी पूरण प्रेम प्रकास । २ । अथ प्रथम पहर प्रथम घरी । दोहा । प्रथम जान पहली घरी पहले सूर उद्दोत । सकुचि सेज दंपति तजै, बोलत हंस कपोत । कवित्त । रंग राति उठी अँगिरात प्रभात उठै अंग आलस की लहरैं । तिय सौं पिय पासु तज्यौ न परै विछुरे हिय दोउन के हहरैं । विथुरे यक वारहि वार बड़े छुटि हारन ते मुकता थहरैं । झलकैं छतिया पर है छल कै सो विछोननि पै छहरैं ।

अंत—अथ निशा चतुर्थ पहर अष्टम घरी । दोहा । अरुन उदय तरुनी तरुन होत करन सुष लीन । कछू क्रोध कछु ईरषा, कछू अधिक आधीन । कवित्त । वाचकई सो भयो चित चीतौ चितौति चहूँ दिसि चाय सों नाची । ह्वै गई छीन छपाकर की छवि जामिनि जौन्ह जनौंजम जाँची । बोलत वैरी विहंगम देव सु सौतिन के घर सम्पति साँची । लोहू पियौ जु वियोगिन को सु कियो मुषलाल पिसाचनि प्राची । इति श्री कविदेव दत्त विरचते

अष्ट जामे। अष्टजामो समाप्तम् शुभम्। संवत् १८८४ वि० कार्तिक मासे शुक्ल पक्षे अष्टम्यांम्।

विषय—आठ याम चौसठ घड़ी का नायक नायिका के संयोग का काल-विभाजक-चक्र वर्णन।

संख्या ८० बी. अष्टयाम, रचयिता—देवदत्त (इटावा), पत्र—२०, आकार—६३/४ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—रामाज्ञा जी शर्मा, ग्राम—बड़ागाँव, डाकघर—कंतरी, जिला—आगरा।

आदि-अंत—८० ए के समान।

संख्या ८० सी. अष्टयाम, रचयिता—देवदत्त (इटावा), पत्र—४०, आकार—६३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८५=१८२८ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर चंद्रिका बख्श सिंह, ग्राम—बड़ागाँव, डाकघर—काकोरी, जिला—लखनऊ।

आदि-अंत ८० ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री कवि देवदत्त विरचितं अष्टजामे अष्टजामो समाप्तः शुभमस्तु॥ कार्तिक मास्य शुक्ल पक्षस्य मेकादस्यां चंदवासरे॥ लषकं जीत रैक वारस्य पठार्थं भीम सिंहस्थ सुभं भवेत्॥ संवत्॥ १८८५॥

संख्या ८० डी. अष्टयाम, रचयिता—देव कवि, पत्र—२०, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८३=१८२६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रेवतीराम शर्मा कन्हौवा, ग्राम—कोटकी, डाकघर—जारखी, जिला—आगरा।

आदि-अंत—८० ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री कविदेवदत्त विरचितें अष्ट जामे अष्टजामो समाप्तः शुभमस्तु॥ संवत् १८८३ विक्रमे॥ श्रावण कृष्णपक्षे सप्ताम्यांम लिखितं उजागर लाल शर्मा॥

संख्या ८० ई. भावविलास, रचयिता—देवदत्त (धौलपुर ?), कागज—देशी, पत्र—४२, आकार—८ × १११/२ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—५, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७४६ वि०, लिपिकाल—सं० १९१२=१८५५ ई०, प्राप्तिस्थान—हनुमान प्रसाद, सब पोस्टमास्टर, स्थान—राया, डाकघर—राया, जिला—मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ भाव विलास लिष्यते। छप्पय। श्री वृन्दावन चंद चरण युग चरचि चितु धारि। दलि मलि कलि मल सकल कलुष दुष दोष मोष करि। गौरी सुत गौरीश गौरि गुरु जन गुण गाये। भुवन मात भारती सुमरि भरतादिक ध्याये। कवि देवदत्त श्रृंगार रसु सकल भाव संयुत सच्यौ। सब नायकादिनायक सहित अलंकार वरणनु रच्यौ। १। दोहा—अरथ धरम ते होइ अरु काम अरथ तें जानु। तातें सुष सुष

को सदां रसु श्रृंगार निदानु । ताके कारण भाव है तिनकौ करतु बिचारु । जिनहु जान जान्यौ परै सुषदाइक श्रृंगार ।

अंत—दोहा–७४ अलंकार ये मुख्य है इनके भेद अनंत । आन ग्रंथ के पंथ लखि जानि लेहु प्रतिमंत । ७५ सुभ सत्रह सै छयालीस चढ़त सोरही वर्ष । कढ़ी देव मुष देवता भाव विलास सहर्ष । ७६ दिल्लीपति अवरंग के आजमसाहि सपूत । सुन्यौ सराह्यौं ग्रंथ यह अष्ट जाम सजूंत । इति श्री भाव विलासे देवदत्त कवि विरंचते, अलंकार मुख्य निरूपन पंचमो विलास लिखित बेजान मित्र लिषायतं कबीस्वर दन्त जी । मिती कार्तिक सुदी ९ रविवार संवत् १९१२ वि० ।

विषय—नायिकाभेद, रस और अलंकार वर्णन ।

संख्या ८० एफ. देवमाया प्रपंच नाटक, रचयिता— देव (इटावा), पत्र—४६, आकार—१० × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) - १५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०३५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८३ = १८२६ ई०, प्राप्तिस्थान— श्री गयेशप्रसाद जी गुप्ता, स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा ।

आदि—पहिले चार छन्द लुप्त] जराज कुमारि ॥ सुक नासिका सुकुमारि ॥ ४ ॥ गीतिका ॥ सु रसाल रूप विसाल अद्भुत वाल जोति उजागिरी । उरमाल नील सु जलज लोचन सजल सोभा सागरी ॥ डोलति सडग मगर जनि उडगन पति मुषी नव नागरी ॥ मुद अगन की वह अगन आई सील सोभा सागरी ॥ ५ ॥ अमीय सोभा ताकी ताकि । रहे हैं सबै नर थाकि ॥ नटी मोहनी नाम । बूझत कर गहि वाम ॥ ६ ॥ दोहा ॥ कै देवी कै दानवीं, किधौं मानवी वाल । किततैं आई जाति कित । लोचन सजल विसाल ॥ ७ ॥ वड़रे दग ढारति भरति । फिरि फिरि दीह उसास । किहि कारन वारन गमनि, तू दुष दुषी उदास ॥ ८ ॥

अंत—दोहा ॥ माया भजी प्रपंच लै, छूटे साधन सिद्ध । कलहादिक के मूंड लै, नभ मडराने गिद्ध ॥ ११९ ॥ जय सत संगति देव जै, शांता कृपा निधान । विमल बुद्धि निरमल प्रकृति, मिले ब्रह्म विज्ञान ॥ १२० ॥ इति श्री देव माया प्रपंच बुद्धि विजय परमात्मा स्वरूप नाम्यो पष्टमाङ्कः ॥ ६ ॥ संवत् १८८३ मिती फाल्गुन शुक्ल पंचम्यां गुरु वासरे लिषित गोपी नाथ कायस्थ मौजा पियूने में जैसे प्रति पाई तैसी लिपी मम दोपो न दीयते जो वांचै सुनै ताको राम राम ।

विषय—प्रथम अंक—मंगला चरणादि तथा कलि'प्रवेश वर्णन (१—५) ।

(२) द्वि०—अं०—बुद्धि सत्सङ्गति गृह प्रवेश (५—१२) ।

(३) तृ०—अं०—जन स्तुति प्रयान (१२—२२) ।

(४) च०—अं०—माया पुरुष प्रवेश (२२—२८) ।

(५) पं०—अं०—सप्त शास्त्र पंच प्रपंच श्रीमायास्तुति वर्णन (२८—३७) ।

(६) पं०—अं०—बुद्धि विजय, परमात्मा स्वरूप लाभ (३७—४६) ।

संख्या ८० जी. श्रृंगार विलासिनी, रचयिता—देवदत्त कवि (इष्टिकापुर ?), कागज—देशी, पत्र—१४, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण

(अनुष्टुप्)—३४५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री मुरलीधर केशवदेव मिश्र, स्थान—जगनेर, डाकघर—जगनेर, तह०—खैरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—||अथ शैठा भे देषु सवि प्रभा ॥ सवैया ॥ वर वर्णि निरुप मिदं कथयामि कथं तव सवस्तु सचनं। रसरास विलास रसास विहास विचित्र चरित्र सचे रच नं ॥ मद ज्वर आलि विलोकय तस्तुत तथापि करीति मनः पचनं ॥ यद पाडु मुखच्युत मिन्दु मुखी श्रुणुते ससुधा मधुरं वचनं ॥ इति प्रोढा ॥ अथ मुग्धा दीनां स्वुर तस्व रूपान्युंचन्ते ||

अंत—दोहा—देवदत कवि रिष्ट का पुरवासी सचकार ग्रन्थ में वंशीधर द्विज कुल धुरं वभार. छप्पय—स्वरभूत स्वर भूमिय तेवत्सरे पदार्यं, दिल्ली पतिरव रंग सरहि रज रंस दुपार्यं। दक्षिण दिशि चत देव कंकुणे नाम विदेशे, कृष्ण वेणीना मन दीरुगं प्रवेश श्रावणे वहुल नवमितिथे रेवा नौ रेवती धृति युते कवि देवदत्त उदिते खाव गभाय दहिन सुनि। इति श्री कवि देवदत्त विरचतायां श्रंगार विलासनी नाम सम्पूर्ण

विषय—नायिकाओं के लक्षण आदि वर्णन किये गये हैं।

संख्या ८१ ए. ससुरारि पचीसी, रचयिता—देवकीनंदन (फर्रुखाबाद, मकरंद नगर), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८×६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० राम जीवन कवि, ग्राम—खसपुरा, डाकघर—रामपुर, जि०—एटा (यू० पी०)।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ ससुरारि पचीसी देवकीनंदन कृत लिख्यते ॥दो०॥ रसिक कन्हैया लाल के रस रसाल सव ख्याल। प्रथम मिलन ससुरारि को कहत भरो रस जात ॥ १ ॥ पीउ पाई नव तरुनई भइनव तरुणी नारि। जाइ जु वहु ससुरारि मैं ताकी कहत वहारि ॥ तिय मैहर मिलवो कठिन वैस संधि को जोगु। लाज सरस नहिं मिलि सकत क्यों पावै रस भोग ॥ कवित्तु सवैया ॥ जा दिन ते ससुरारि मैं आपनी लाल जू आये महा रस ठाने। मैं दिन चारिक वात नहीं मैं भुलावत ही रही वै वहकाने ॥ आजु न मागत पानिहि पान भई अधरात परे दुख माने ॥ जाई मिलौ वृषभान लली वै लला घर आपने जात रिसाने ॥

अंत—दोग लाई नीर गुलाव को करवाये असनान सुपवत केशन वाल है। कौतुक लातत कान्ह ॥ ३ ॥ ज्यों ज्यों भरे नीर केश सुष कै उझालि कर त्यों त्यों कुच उघयैं उचकत छवि छाती मैं ॥ देवकी नंदन कई ललको गिरोई परै मनुआं लला को लाड़िली न जानै भेद कौन किहि घाती मैं ॥ पीठि लागो सषी के विलोकै दुरो प्यारी ओर दीठि छाई रही जाइ श्यामरे की छाती मैं। ४॥ इति श्री कविकुल कमल दिवाकर देवकीनंदन विरचिता ससुरारि पचीसी समाप्तः मार्ग शुक्ल दशम्यासोमे लेखिवकसी सुमेण संवत् १८७९ वि०

विषय—ससुरारि का वृतांत वर्णन है।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता देवकीनंदन जाति के ब्राह्मण शिवनाथ कवि के पुत्र थे। रचनाकाल—संवत् १८३२ वि० है। इसको इस प्रकार लिखा है। संवत विक्रम जानियो ठारह सै वत्तीस। आश्विन सुदि तिथि पंचमी कही ससुरारि पचीस ॥ लिपिकाल संवत् १८७९ वि० है ॥

संख्या ८२ ए. लीला, रचयिता—देबीदास (देवीदास का पुरवा, बाराबंकी), पत्र—८२, आकार—८ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०२५, रूप—नया, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री दुर्गादास साधु, ग्राम—हाजी गुर्ज, डाकघर—नगराम पूरब, जिला—लखनऊ।

आदि—अथ लीला साहेब देवी दास कृत ॥ साधो निर्गुन उपजा ज्ञान कहाँ गुन पाइये ॥ निर्गुन शब्द अधार शून्य दृढ़ आसन मारा। जहाँ न दिशा दुआर नाम दीपक तहँ वारा ॥ निर्बानी सो ज्ञान भा मन यह मध्य भुलान ॥ दै उपदेश कीन्ह बश अपनी तेहि का और बयान ॥ १ ॥ गैरी शून्य समान पुरुष वह इच्छा चारी। को जानै को आये कहाँते सृष्टि सँवारी ॥ तीनि लोक विस्तार भो अंश दीन्ह छिटकाय। मरै न जीवै गैवी पुरुष वह नहिं आवै नहिं जाय ॥ २ ॥

अंत—जिहि का जस विस्वास है तेहिका तैसा होइ। देवी दास के प्रभु जगजीवन तुव और न कोई ॥ दोहा ॥ नाम निसानी जाहि के। जहँ भावै तहँ जाइ ॥ देवीदास निह कर्म सों। सुख निधित्य समाइ ॥ इति श्री लीला साहेब देवी दास जी कृत ॥ सम्पूर्ण ॥

विषय—(१) पृ० १ से ८२ तक—गुरु महात्म्य। नाम महात्म्य। सुमिरन। संसार। अभक्तों की निन्दा। भक्त महात्म्य। ज्ञानी कलयुग वर्णन। ईश्वर की वत्सलता। गर्व त्याग। विनय। उपदेश। मन। मिष्ट भाषण। दास जीव तथा आत्मादि निरुपण। दो अक्षरों की महत्ता ॥ चेतावनी। साधु। आर्ती। माया। आज्ञा। पालन। गुरुमंत्र। भावी गुरु उपदेश। काल तथा कर्ता का वर्णन ॥

टिप्पणी—यह ग्रन्थ "सत्य नामी सम्प्रदाय" के साधु देवी दास जी की रचना है। ये जगजीवन दास (जिनकी गद्दी कोटवा बाराबंकी में है) के शिष्य थे। इन्होंने बाराबंकी तथा लखनऊ जिले की सीमा पर जहाँ देवी दास का पुरवा नाम से अपनी गद्दी कायम की अभी तक इनके वंशज गद्दी धर हैं।

संख्या ८२ बी. विनोद मंगल, रचयिता—देबीदास (पुरवा देवीदास, बाराबंकी), पत्र—५७१, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—५७१०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी और कैथी, रचनाकाल—सं० १८३८ वि०, लिपिकाल—सं० १८५० = १७९३ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत पुरंदरदास, ग्राम—पूरे ठाकुर दुबे, डाकघर—जगदीशपुर, जिला—सुलतानपुर।

आदि—चरन गुरु जग जिवन के सत सुकृत अंतर वास हैं। सोइ घरी शुभ दिन भक्ति गुन हिय उदित ज्ञान प्रकाश है। करजोरि मांगौं चरन सिर धरि विनति मेरी मानिए। करि कृपा चित वसि हृदय दाया दास आपन जानिए। उपदेश हृदय दृढ़ाय मत सतमंत्र ते चित लावऊँ करहु मोहिं सनाथ सतगुरू भक्त पदवी पावऊँ।

अंत—छन्द—हमहिं नहि अब और भावै, नाम सुमिरन मा रही। नाम पारस पाय अन्तर, भर्मना अब ना चही। भयउ मन संतोष आपन अटक नाही जो चहा। सदा सतगुरु करत दाया देत जबहीं जो कहा। भइ न निडर निसंक तन मन, काहु का डर ना रहा। नाम कर्ता पुरुष आपुहि कोन सुमिरत निर्वहा। सदा संकट हरत जन के रमित संगति लागि के।

जरे दुख के मरे शंसय आप सरनहि भागि के। गनिन अनगन जाइ मोहिं ते, सरन आए सब तरे। निर्हंग मूरति ध्यानि करि नहि जक्त माया झक मरे। हम भइनि सरन सनाथ तवही, प्रगट करिगोहरायऊँ। जानि सुमिरहि मानि शब्दहिं अलख ज्ञान नेताय हूं।

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या ८३. बालचरित्र, रचयिता—देवीदास, पत्र—३२, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बलवंत सिंह, अध्यापक, ग्राम—विरथला, डाकघर—सयान, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ बाल चरित्र लिखते। गुरू गणेश पग वंदन करि कै संत को सिर नाऊ। बाल विनोद यथा मति हरि के सुन्दर सरस सुनाऊ। भक्तिनि के वत्सल करुनामय तिनकी अद्भुत क्रीड़ा। सुनौ संत हौ सावधान ह्वै श्री दामोदर लीवा। सुन्दर सरस माहावन भीतर बसै अहीर सभागे। जाति अनेक अनेक गोप गन सब ब्रज राजहि लागे। ब्रज के वास वीच अति उत्तिम नन्द भवन सुपकारी। सम्पति कहा कहौ कमलापति जाके अजिर विहारी। सब सुवरन कै सुखद धौर हर पना पिरोजा लागै। वैइरज मरकत मनिहीरा विद्रुम रचित सभागे।

अंत—यह दामोदर लीला क्रीड़ा सीषै सुनैं सुनावै। वंधन छुट्यो दामोदर ताके वंधन वेगि छुटावै। मनि ग्रीव नल कूवर जैसें तारत वार न लाई। त्योंही तरत वार नाही लावै लीला सुनें सुहाई। दामोदर जू की यह लीला देवीदास कही है। संत जननु की चरन रैनु की तन मन ओट लही है। मूल भई जौ होइ कहूँ तौ सुकवि सुधारि सुलीजौ। मधुर मुकुंद नाम के रस कौ मन की रुचि सौं पीजो। इति श्री देवीदास कृत वाल चरित्र संपूर्ण।

विषय—श्री कृष्ण की बाललीलाओं का वर्णन।

संख्या ८४ ए. वारहमासी विरहिनी, रचयिता—देवी प्रसाद ब्राह्मण (बेला, इटावा), कागज—देशी, पत्र—८, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—७२, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०५ = १८४८ ई०, लिपिकाल—सं० १९१२ = १८५५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामसनेही मिश्र, ग्राम—मानिक खेड़ा, डाकघर—फिरोजगंज, जिला—एटा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः। अथ विरहिनी का वारह मासा देवी प्रसाद कृत लिख्यते॥ आसाढ़—तुम जाय ऊधो खवर लावो श्याम विन कल ना परै॥ अव होत व्याकुल सवहिं ब्रज हरि विन कहौ दुख को हरै॥ असाढ़ में घन घेरि आये मेघ जल वरसावहीं॥ दादुर चकोर मलार वोलैं मोर शोर मचावहीं॥ श्याम विन सुख सेज सूनी विरह मदन सतावहीं॥ दिन रैन में तलफत फिरूं नंदलाल सुधि विसरावहीं॥ दो०—परदेशी आये नहीं कीजै कौन उपाय। चेरी के बस में परे रहे मधु पुरी छाय॥ कुछ विथा जी में है सखी अव सोच भंडारे भरे॥ अव होत व्याकुल सवहिं वृज०॥ १॥

अंत—जेठ में वर पूजने आईं सवै ब्रज भामिनी। रोरी औ चन्दन गार के सजि थार लाईं कामिनी॥ वेद विधि पूजा करे धाई सकल गज गामिनी॥ तन होय परम

अनंद कर जाई खुशी से यामिनी ॥ दो०—जेठ सुदी है सप्तमी उनइस सत अरु पांच। देवी प्रभु दर्शन दिये धन्य धन्य दिन सांच ॥ कान दै लीला सुनै संसार सागर से तरै ॥ अब होत व्याकुल सबै ब्रज हरि बिन कहो दुख को हरै ॥ १२ ॥ कवित्त—वेले का—वेले में ज्ञानी जहाँ पांडव महरानी औ, संतन के दरस जहां मंदिर अधिकाई हैं। अस्तल के पास ही कदंब कुंड शोभित अति, पंच मुखी महादेव लीला दर साई है ।। राम रेखा नारो जहां गंगा शिव पधारो अरु, फाटक मदार जहां चर्चिका सुहाई है ॥ भनत है देवी नित विल्लेश्वर दरश होत वाला जी वेद सुने फूल मती माई है ॥ इति श्री बारह मासा विरहिनी देवी प्रसाद कृत संपूर्ण लिखा बेनी दीन संवत् १६१२ वि० ॥

विषय—श्रीकृष्ण जी के वियोग में ब्रज के गोपियों का विरह वर्णन।

संख्या ८४ बी. राग फुलवारी, रचयिता—देवी प्रसाद बनिया (बेला, इटावा), पत्र—३६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्) – ८६४, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०२ = १८४५ ई०, लिपिकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामसनेही मिश्र, ग्राम—मानिक खेड़ा, डाकघर—फिशेरगंज, जिला—एटा।

आदि—अथ राग फुलवारी लिख्यते ॥ दोहा ॥ गणिपति गौर महेश अरु ब्रह्मा विश्नु मनाय ॥ राग रंग देवी कहत सहित ताल सुर गाय ॥ चौमासा रंगत वहार—श्याम बिन नाही पडत मोहि चैन, ऊधौ अब कैसे कटै दिन रैन ॥ टेक—असाढ़ में ग्रीषम रितु जाई। चलै या वैरिन पुरवाई ॥ पिया की खवर नहीं पाई। करैं वे अपनी मन भाई ॥ दो०—मोर शोर कूकन लगे दादुर हंस चकोर। झूम झूम वरसन लगे गरज परी चहुं ओर ॥ और से लगे कृष्ण के नैन ॥ श्याम बिन० ॥

अंत—अस्तुति देवी फूल मती जी की पुष्पवती महिमा अधिक भापै वेद पुरान। तीन लोक चौदह भुवन धरै मात को ध्यान ॥ धरै मातु को ध्यान पाप कोई निकट न आवै ॥ देवी मुख से कहैं रमा सब के घर जावै ॥ लघु मति के अनुसार कही मैं एतिक लीला ॥ आदि शक्ति मन सुमिरि उसी को पाय उसीला ॥ मैं मूरख अति हीन मति नहिं मोको कछु ज्ञान। भूल चूक सज्जन क्षमहु मोहिं जानि अज्ञान ॥ संवत् १९३२ लिखा राम लाल वेला निवासी ॥

विषय—इसमें श्रीकृष्ण की चीर लीला और दान लीला का वर्णन है।

संख्या ८४ सी. राग विलास, देवी प्रसाद (वेला, इटावा), कागज—देशी, पत्र—१२०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१९०, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९६ = १८३९ ई०, लिपिकाल—सं० १९१० = १८५३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामसनेही मिश्र, ग्राम—मानिक खेड़ा, डाकघर—फिशेरगंज, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ राग विलास लिख्यते ॥ कुंडलिया ॥ प्रथमहिं सुमिरि गनेश को दुर्गे सीस नवाय। तुलसी कवि अरु सूर कवि ब्रह्मा विष्णु मनाय ॥ ब्रह्मा विष्णु मनाय रागिनी यह मैं गावौं ॥ विशुन चरन उर धरौं सनै मन आनंद पावौं ॥

कह देवी प्रसाद लौट भव फिरना आई । सबै पाप कटि जाय सुमिरि जो गिरिजा धाई ॥१॥ है महिमा सिय राम की जो जामें चित लाइ । यह सब रंगा राग में बांचत हियो जुड़ाय ॥ बांचत हियो जुड़ाइ राम गुन जो कोई गावै ॥ आदि शक्ति मन सुमिरि पुन्य फल को वह पावै ॥ कह देवी परसाद मोहिं कछु ज्ञान न आई ॥ भूल चूक करि मांफ कि महिमा राम की गाई ॥ २ ॥ पीलू ठुमरी—मुकट की एक लर लटकि रही ॥ तेहि की झोंक नोंक बरछी सम सो हिय मांझ ठही ॥ होंठि समेट भोंह तिरछी करि मुरली में तान कही ॥ पवन मंद पंछी वन मोहे जमुना उलटि वही ॥ मुकट की एक लर लटकि रही ॥ ३ ॥

अंत—शरद शशि निर्मल गगन में निरखो नवल सुपेत । मचलि जात गोदहिं नहिं आवत उड़गन पति के हेत ॥ नित्य नई हरि लीला करि ब्रज ब्रज वासिन सुख देत ॥ कहत है देवी दर्शन देवो मुरली मुकुट समेत ॥ उझकत झुकत झकैइयां लेत ॥ ४ ॥ इति श्री राग विलास संपूर्ण ॥ रस निधि वसु अरु भूमि संवत विक्रम जानिये । माघ मास सुदि नौमि देवी कहत बनाइ करि ॥ भूल चूक जो होइ छमहु सजन सब दया करि । भूल चूक सब खोइ पढ़हु ग्रंथ चित लाइ करि ॥ लिखा बांके लाल कायथ मौजा हसनपुर जिला अलीगढ़ तिथि सावन शुक्ल पक्ष सप्तमी संवत् १९१० वि० ।

विषय—इस ग्रंथ में प्रारम्भ में देवी, ईश्वर आदि की प्रार्थना, पुनः राग रागिनी, मलार ठुमरी झपताल के सरगम और प्रत्येक ऋतु के गाने के पद लिखे हैं ॥

संख्या ८४ डी. संगीत सार, रचयिता—देवी प्रसाद (बेला, इटावा), कागज—देशी, पत्र—४६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५४८, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१९०० = १८४३ ई०, लिपिकाल—सं० १९५२ = १८९५ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रामनाथ गुप्ता, ग्राम—जादव नगर, डाकघर—हाथरस, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ सांगीत सार लिख्यते ॥ दोहा—गण पति गौरि महेश अरु ब्रह्मा विश्नु मनाय । राग रंग देवी कहत सहित ताल सुर गाय ॥ अस्तुति देवी फूल मती जी की—भवानी फूल मती माई । भक्त भय भंजन सुखदाई ॥ सीस पर मुकुट धरो आला । विराजै विकट रूप वाला ॥ गले में मोतिन की माला । हाथ में लिये खंग भाला ॥ दोहा—धूप दीप चंदन चढ़े औ कपूर मिष्ठान । मेवा औ पकवान चढ़त हैं लौंग फूल औ पान ॥ दरश से पापहु कटि जाई ॥ भवानी ॥ १ ॥

अंत—ऊधो जाय खबरि तुम कहियो मन हमरो हर लीना ॥ हमको जोग भोग कुवजा को पाती में लिख दीना ॥ कहौ हम किस विधि कीना ॥ ३ ॥ मधुपुर फाग विहारी खेलें परो सबै ब्रज सूना ॥ कहत हैं देवी मिले हित से हरि राधा को दर्शन दीना ॥ मिलै जैसे जल से मीना ॥ ऊधौ जी० ॥ ४ ॥

विषय—इसमें राग रागिनी लिखी हैं ॥

संख्या ८५. महेश महिमा, रचयिता—देवीसहाय बाबा (बनारस), कगज—देशी, पत्र—१३४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण

(अनुष्टुप्)—१५०८, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबा गोविंदानंद, ग्राम—तांतपुर, डाकघर—सिकंदरा राऊ, जिला—अलीगढ़।

आदि—जो शिव नाम लेत अलसैहैं ॥ तो फिर जन्म जन्म के पातक तेरे कौन नसैहै ॥ है शुभ अशुभ कर्म को मालिक तासो तू का कइहै ॥ सुन्दर वैस ऐस मा खोई अंत आप पछतैइहै ॥ देवी सहाय भजन विन कीन्हे रसना रस ना पइहै ॥ १ ॥

अंत—काहे को विसारे मूढ़ डोलत महेश पद। परम पवित्र छोभ मोह के हरैया हैं ॥ माया की मरोरनि के मोह झकझोरनि के, काम की करोवनि के पल में बरैया हैं ॥ आठौ जाम रक्षन करैया साधु भक्तन के, संकट कटैया उर धीर के धरैया हैं ॥ धर्म के वढ़ैया सुद्धि वुद्धि उपजैया। निज रूप दरसैया भव सिन्धु कै तरैया हैं ॥ इति श्री महेश महिमा श्री बावा देवी सहाय कृत सपूर्ण समाप्तः।

विषय—इसमें महेश (काशी विश्वनाथ) महिमा का वर्णन है ॥

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता बाबा देवी सहाय वाजपेई थे। इनके पिता का नाम माखनलाल वाजपेई था। ये बड़े शिवभक्त साधु थे। शिव की महिमा गाने और भक्ति के सहित पूजा करने से ६ वर्ष के अंधे होने पर भी भली भांति देखने लगे थे। जिन पंडित जी के यहां यह ग्रन्थ मिला उनका कहना है कि पंडित देवी सहाय वाजपेई आनन्द वन काशी में वास करते थे और लगभग १५० वर्ष पहले विद्यमान थे।

संख्या ८६. श्री महाराज देवी सिंह की वारहमासी, रचयिता—देवी सिंह, पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१९ = १८६२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० छेदालाल अध्यापक प्राइमरी पाठशाला, स्थान—खैरागढ़, डाकघर—खैरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। अथ श्री महाराज देवी सिंह जू की वारहमासी लिख्यते। शोरठा। वहुविधि बाढ़ धराइ। पंच सरनि को पंच सर। इने घने उरधाइ। गाढ़ असाढ़ पूरी मुहे। चौपाई—लागत असाढ़ गांड मुहै परी विरह अगिनि अंतर पजेंरी। ज्यों २ पवन चलत चहुं ओरन त्यौ त्यौ जाम रीति झक झोरनि। सब कोऊ धांम धौर हरछावै मोहि सेज निसि निंदि न आवै। हौ तज धाम काम वस भई। कंथ अंत सुधि यो नहीं लई।

अंत—लागौ आषाढ़-घुमरि आये बदरा-विजुरी चमके मेरे आंगन। मेरे चोकि चौकि चहुं वोर निहारो-जैयें मीन फिरे जल मेरे हमको। सामन मास हमपें छल कीनौ प्रीति करी जाइ कुविजासेंरे—दे नंदलाल पिराण तजोंगी नहीं आए सैजामधुवन सेरे हमको। भादों भवन नींद नहीं आवे मोरा वोलै वाई मधुवन मेरे कोइल हैं में वन वनि ढूढ़ों सूरके लाल वृन्दावन करै हमको।

विषय—श्री कृष्ण राधिका सम्बन्धी बारहमासी।

संख्या ८७. चिकित्सासार, रचयिता—धीरजराम सारस्वत, कागज—स्यालकोटि, पत्र—७५, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—

१६५०, रूप—प्राचीन, पद्य औ गद्य । लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१० = १७५३ ई०, लिपिकाल—सं० १८६८ = १८११ ई०, प्राप्तिस्थान—पंडित बालकिशुन जी वैद्य, स्थान—बेलनगंज आगरा, डाकघर—आगरा, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । सोरठा ॥ कमल नयन ससि मारल, नाग वदन इक रदन युत ।। विरद विरद प्रति पाल हरै विघ्न विघ्नादि पति । कर मुरली कर माल सुभट मुकट सिर भृकुटि धीन । सखा संग लिय ग्वाल हरे विघन घनस्याम जू ॥ छप्पै—शून्य चन्द्र गज चन्द्र बर्ष विक्रम शुभ दायक । ज्येष्ट सुदी रवि दूज पूज हरि गुन दीना नायक ॥ पाइ गोविन्द प्रसाद सार ग्रन्थन को लीनो । नाम चिकित्सा सार ग्रन्थ ये भाषा कीन्हो । कृपाराम द्विज लडिता को नंदन धीरज धर । करवो ग्रंथ भली करें देव सुधार वैद्य वर ।

अंत—इति श्री सारस्वत धीर्जराज कृते ग्रन्थे चिकित्सा सारख्ये मित्र का ध्यायोष्टम ।। × × संवत् १८६८ मिती मार्ग शीर्ष ९ रवि वासरे सम्पूर्ण । दोहा ।। धर्म्म काज कीजै तुरत, तासौं सब सिद्ध होय, प्रभू कृपा तें सब बनै रतीराम कहे सोय इदं पुस्तकं लिषतं रतीराम पंडित कोथी मध्ये ॥

विषय—देशी तोल वैद्यक—२ पृष्ठ तक; जड़ी विचार—५ पृष्ठ तक; धातु सोधन ११ पृष्ठ तक; रोगों के लक्षण और उपचार १९ पृष्ठ तक; रोगों का निदान २९ पृष्ठ तक; भिन्न २ चिकित्सा ६९ पृष्ठ तक; पथ्या पथ्य विचार ७२ पृष्ठ तक; अपथ्य विचार ७३ पृष्ठ तक; बाल रोग और उनकी चिकित्सा ७५ पृष्ठ तक ।

संख्या ८८ ए. ध्रुवदास की वाणी, रचयिता—ध्रुवदास, पत्र—२०१, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२२१, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१० = १७५३ ई०, प्राप्तिस्थान—महाराज महेंद्र मानसिंह जी, महाराजा भदावर, स्थान—नौगवाँ, डाकघर—नौगवाँ, जिला—आगरा ।

आदि—श्री हरिवंश चन्द्रो जयति ॥ श्री राजा वल्लभो जयति ॥ अथ श्री ध्रुवदास जी कृत वानी लिष्यते ॥ अथ रस रतनावली लीला लिष्यते ।। दोहा ॥ प्रथम समागम सरस रस, वर विहार के रंग । त्रिलसत नागरिनवल कल, कोक कलनि के अंग ॥ १ ॥ नमित ग्रीव छवि सीव रह, घूंघट पटहिं सँभारि । चरनन सेवत चतुरई, अति सलज्ज सुकुमारि ।। २ ॥

अंत—दोहरा——मोमति तृसल वरेन सम, सोभा मेरु समान । या मन के अवलंब हित, कही कछुक उनमान ।। ५९ ॥ वरषा ग्रीषम नैन सुष, सरद वसंत विलास । लपटिन कौ सुष हिम सिसिर, प्रेम सुषद सब मास ।। ६० रस मय रस हीरावली, पढ़ि हैं ध्रुव जो कोइ । प्रेम कमल तिहि हीय में, तवही प्रफुलित होइ ।। ६१ ।। और न कछू सुहाय ध्रुव, यह जांचत निशि भोर । या ही रस की चटपटी, लगी होय हिय मोर ।।६२।। दोहा कवित्त अरु चौपई, इकसौ साठ और दोइ । जुगल केलि हीरावली, हिय गुन सों ले पोइ ।।६३।। इति श्री हीरावली सम्पूर्ण ॥ इति श्री ध्रुवदास गुसाईं विरचिता लीला ध्रुवदासजी कृष्ण लीला ४२ सम्पूर्ण ॥ लिषितंग वैष्गव शोभा राम मन छा रंग पठनार्थं वैष्णव शोभा रम मनछ राम छे

पत्र २०१ लख्यां छै ॥ संवत् १८१० नावरष्ये भादरवा शुद्ध दवा दसी वार गरेड ॥ अमदा वाद मध्ये रहे छे ॥ हरि वंश चन्द्रो जयति । राधा कृष्ण ॥

संख्या ८८ बी. ब्यालीस लीला, रचयिता—ध्रुवदास, पत्र २५१, आकार—९½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—४५१८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३६ = १७७९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० छोटेलाल जी शर्मा, वैद्य, स्थान—कचराघाट, डाकघर—कचराघाट, जिला—आगरा ।

आदि—श्री राधावल्लभो जयति ॥ श्री हित हरिवंश चंद्रो जयति ॥ अथ श्री ब्यालीस लीला ॥ श्री ध्रुवदास जी कृत लिष्यते ॥ चौपाई ॥ जीव दशा कछु इक सुनि भाई, हरि जस अमृत तजि विष खाई ॥ १ ॥ छिन भंगुर यह देह न जानी, उलटी समझि अमर ही मानी ॥ २ ॥ घर घर नीके रंग यौ राच्यौ, छिन छिन में नटकपि ज्यौं नाच्यौ ॥ ३ ॥ करी न कबहूं भजन संभारी, ऐसे मगन रह्यौ व्यौहारी । ४ ॥

अंत—जो रस उपजत दुहुन में, प्रेम रंग सुकवार । प्रेम रंगीली निज सहचरी, निरषत प्रेम विहार । २१ ॥ निति उठि जो गावै सुनै, यह लीला रस रूप । हित ध्रुव ताके हिय कमल, उपजै प्रेम अनूप ॥ २२ ॥ इति श्री दानलीला संपूर्ण ॥ संवत् १८३६ मिती जेठ वदी ॥ ३ ॥ लिषितं जुगल दास ॥

विषय—

(१३) वृंदावन सत ५८—६६

(१४) श्रृंगार सत ६६—९७

(१५) मणि श्रृंगार लीला ९७—१०४

(१६) हित श्रृंगार लीला १०४—१११

(१७) सभा मंडल श्रृंगार लीला १११—१२८

(१८) रस मुक्तावली १२८—१३९

(१९) रस हीरावली १३९—१४९

(२०) रस रत्नावली १४९—१५२

(२१) प्रेमावली १५२—१६१

(२२) पियाजीकी नामावली १६२—१६३

(२३) रहस्य मंजरी १६३—१६८

(२४) सुख मंजरी १६८—१७०

(२५ रति मंजरी १७०—१७५

(२६) नेह मंजरी १७५—१८४

(२७) बन विहार १८४—१८८

(२८) रंग बिहार १८८—१९२

(९९) रस बिहार १९२—१९४

(३०) रंग हुलास १९४—१९८

(३१) रंग विनोद १९८—२०१

(३२) आनंद दसा विनोद २०१—२०६

(३३) रहस्यलता २०६—२१०

(३४) आनंदलता २१०—२१४

(३५) अनुराग लता २१४—२१८

(६६) प्रेमलता २१८—२२१

(३७) रसानंद २२२—३३२

(३८) प्रथम समागम व्रज लीला २३२—२४२

(३९) जुगल ध्यान २४२—२४४

(४०) नृत्य विलास २४४—२४६

(४१) मान विनोद २४६—२४९

(४२) मन लीला २४९—२५२

संख्या ८८ सी. वृंदावत सत, रचयिता—ध्रुवदास, कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—६ X ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८०, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६८६=१६२९ ई०, लिपिकाल—सं० १७९० = १७३३ ई०, प्राप्तिस्थान—चौबे लोकमन, स्थान—उम्मेद गढ़ी, डाकघर—हरदुआगंज, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री राधा वल्लभो जयति ॥ अथ वृन्दावन सत लिख्यते ॥ प्रथम नाम हरिवंश हित रट रसना दिन रैन ॥ प्रीति रीति तब पाइये अरु वृन्दावन अैन ॥ चरन सरन हरि वंस की जब लगि आवत नाहिं ॥ नव निकुंज निज माधुरी क्यों परसे मन मांहि ॥ वृन्दावन सत करन कौ कीनो मन उत्साह ॥ नवल किशोरी कृपा विन कैसे होत निवाह ॥ यह आशा धरि चित्त में कहत जथा मति मोर ॥ वृन्दावन सुख रंग को काहु न पायो ओर ॥

अंत—ऐसी मति मोपै कहां सोभा निधि ब्रज राज ॥ ढीठ होइ कछु कहत हौं आवत नहिं जिय लाज ॥ मति प्रमान चाहत कह्यो सोऊ कहत लजात । सिन्धु अगम जेहि पार नहिं कै सीप समात ॥ या मन के अवलंव हित कीनी आनि उपाय ॥ वृन्दावन रस कहन कौ अति कसाह उरझाय ॥ सोलह सै ध्रुव छियासिवां पूनो अगहन मास ॥ यह प्रबंध पूरन भयो सुनत होय अघ नास ॥ इति श्री वृन्दावन सत ध्रुव दास कृत समाप्तः लिखतं प्रहलाद संवत् १७९० वि० जै राम जी की सदा सहाय ॥

विषय—वृन्दावन की महिमा का वर्णन ।

संख्या ८८ डी. वृंदावनसत, रचयिता—ध्रुवदास, पत्र—३०, आकार—६½ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६८६ = १६२९ ई०, लिपिकाल—सं० १८५३ = १७९६ ई, प्राप्तिस्थान—पं० भगवती प्रसाद शर्मा, ग्राम—बरतरा, डाकघर—कोटला, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—८८ सी के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री वृंदावन सत संपूर्ण शुभमस्तु ॥ मिति माघ सुदी ८ संवत १८५४ ॥ राम राम राम राम

संख्या ८८ ई. वृंदावनशत, रचयिता—ध्रवदास, पत्र—३२, आकार—५ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६८६ वि० प्राप्तिस्थान—ठाकुर जनक सिंह जी, ग्राम—रुद्रमुली, डाकघर—वाह, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—८८ सी के समान ।

संख्या ८८ एफ. वृंदावनशत, रचयिता—ध्रुवदास, पत्र—३०, आकार—४ × ३ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०३, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६८६ = १६२९ ई०, प्राप्तिस्थान—मुंशी जोरावर सिंह जी, स्थान—कागासोल, डाकघर—कागासोल, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—८८ सी के समान ।

संख्या ८८ जी. वृंदावनशत, रचयिता—ध्रुवदास, पत्र—२१, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६८६ = १६२९ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर प्रतापसिंह, ग्राम—राटौटी, डाकघर—होलीपुरा, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—८८ सी के समान ।

संख्या ८८ एच. वृंदावनशत, रचयिता—ध्रुवदास, कागज—प्राचीन देशी, पत्र—२२, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)— ११३, रूप—प्राचीन, रचनाकाल—सं० १६८६ = १६२९ ई०, लिपिकाल—सं० १८६० = १८०३ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री अद्वैतचरण गोस्वामी, स्थान—घेरा श्रीराधारमण जी, डाकघर—वृंदावन, जिला—मथुरा।

आदि-अंत—८८ सी के समान। पुष्पिका इस प्रकार हैः—

इति श्री वृंदावन सत संपूर्ण। ०। संवत १८६० का फाल्गुणी वदी छ गुरबासरे। लिखितं मिश्र भीषाराम गाहु मध्ये। लिखायतं चिरंजीव धर्म मूरति दीवान पैमस्यंध जी। शुभरस्तु। कल्यान मस्तु।

संख्या ८९. सत हरिश्चंद कथा, रचयिता—ध्यानदास (साहिपुर) कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य। लिपि—नागरी, लिपिकाल—१८९० वि०, प्राप्तिस्थान—रामदास वैरागी, स्थान—कुटी वड़ का नगला। डाकघर—मुरसान। जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ अथ हरिश्चंद कथा। ध्यान दास कृत लिख्यते॥ दो०—गोविंद गुरु को नित नमो नमो भगत सब साध। ता प्रताप जस ऊचरों हरिचंद सत्त अगाध॥ चौ०॥ अवगति अलष अनाहद भारी। उपजत षपत महा सुधि सारी॥ नांव न गांव गांव का अगम अगाध साध संगति लहिए। रूप न रेष भेष न कोई। वानी रहनि षानि नहिं सोई॥

अंत—॥ दो०॥ उदधि द्वोत करि लीजिये। लषण भार अगार, ध्यान दास सब सुधि लिषै भगवत भगति अपार॥ लिषन काज सुरसति लिषै सब पंडित कल माहिं॥ रोम समान न लिषि सकै हरि चरचा मति नाहिं॥ जो उचरै या ग्रंथ को कोऊ सुनै चित लाइ॥ ध्यान लहै सो प्रेम पद पाप ताप त्रय जाई॥ हरिचंद सत को सुनि कोई अैसी टेक समाई। ध्यान लहै सोपरमपद जामे संसय नाही॥ ध्यान तीन या ग्रंथ की धरम कथा विस्तार। हरिचंद सत हिरदै धरै सो जन उतरै पार॥ इति श्री हरिश्चंद सत कथा ध्यान दास कृत संपूर्ण शुभ मस्तु संवत् १८६० वि० जेष्ठ मास शुक्ल पक्षे तिथौ अष्टम्याम्।

विषय—राजा हरिश्चंद की कथा लिखी है।

संख्या ९० ए. संग्रहीत लतिका, रचयिता—दीनादास (चतुरनगर, परगना चाइल, प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—३०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४७२, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—शिवदयाल वाजपेयी, ग्राम—सिंहपुर, डाकघर—ससौढ़ा, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशानयमः॥ अथ संग्रहीत लतिका लिख्यते॥ भजन॥ नरतन पाय कमाया क्या रे॥ कल्प वृक्ष छाया तर आया तःहूं कछू न पाया क्या रे॥ गेह देह लखि कै तू भूला माया में भरमाया क्या रे॥ जो आया सो गया अकेला तू लै जैहै माया

क्या रे ॥ ना हरि भजा न साधु न सेवा जीवन व्यर्थ गमाया क्या रे ॥ गिरिधर दास जो मोहन भूला मनुज नाम कहवाया क्या रे ।

अंत—हट जा सौंहैं से सांवलिया तोसो वहुत जरी ॥ दामिनि दमकै गरजै गगनवां सूने भौन डरी ॥ मैं अल वेली अकेली सेज पर तड़फत भोर करी ॥ कहत रसीले पिया सावन में सौतिन वेर परी ॥ इति श्री संग्रहीत लतिका समाप्तः शुभम संवत् १९३६ वि० ।

विषय—इसमें भिन्न भिन्न कवियों की कविता संग्रह की गई है ॥

टिप्पणी—इस ग्रंथ के संग्रहकार दाता राम उप० दीनादास चतुर नगर निवासी थे। ग्रंथ संवत् १९३० वि० में संग्रह किया गया और संवत् १९३६ में लिखा गया। इनके ग्रंथ संवत् १९३२ के रचित प्राप्त हुए हैं ॥

संख्या ९० बी. मद चरित्र, रचयिता—दीनादास (चतुरनगर, प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)–४८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३४ = १८७७ ई०, प्राप्तिस्थान–पं० शिवदत्त मिश्र, ग्राम—बिलावती, डाकघर—धूमरी, जिला—एटा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ मदचरित्र लिख्यते ॥ दोहा—सिय रघुवीर चरण रज सुमिरौं आठौ जाम ॥ जाकी कृपा कटाक्ष ते नाश होत रिपु काम ॥ सोई रघुवीर कृपा निधी दीनन सदा सहाय ॥ काम क्रोध मद लोभ सब सुमिरत सकल नसाइ ॥ अव रघुवर पद सुमिरि के सुमिरों पवन कुमार ॥ शेष महेश गणेश विधि अगम निगम श्रुति चार। श्री रघुनाथ प्रतापते कहव कछुक कलि धर्म। समुझै सज्जन सन्त जन कटुक वचन कहु नर्म ॥

अंत—दोहा—सब जीवन उपकार हित भाषेउ दाता राम। शुक्ल वंश भौ जन्म मम चतुर नगर है ग्राम ॥ छंद—मद चरित्र दाता राम कृत जोइ नारि नर जग गावहिं ॥ समुझैं पढ़े उर सोच कर त्यागैं सुरा सुख पावहिं ॥ सुमिरैं सदा रघुवीर पद संताप पाप नसावहिं ॥ सब भांति सुख पा लोक में हरि धाम अंत सिधावहीं ॥ सोरठा—भाषउ चरित अनूप सब जीवन उपकार हित। बूड़त सब भव कूप उंच नींच नर नारि जग ॥ १ ॥ सुमिरन करूं सिय राम छांड़ि कपट जंजाल सब ॥ खोवत नाहक दाम अंत जावगे नर्क में ॥ दीना जिनके मुखनते निकसत सीता राम। तिनकर सदा गुलाम मैं सेवक आठौ जाम ॥ इति श्री मद चरित्र संपूर्ण समाप्तः लिखा सिवनाथ ब्राह्मण संवत् १९३४ वि० ॥

विषय—इस ग्रन्थ में नशे बाजों की दशा वर्णन की गई है ॥

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता दीना दास उर्फ दाता राम चतुर नगर निवासी थे। जाति के ब्राह्मण (शुक्ल) थे। यह इस प्रकार वर्णन किया गया है:—सब जीवन उपकार हित भाषेउ दाता राम। शुक्ल वंश भौ जन्म मम चतुर नगर है ग्राम ॥

संख्या ९० सी. प्रेम बिहारी, रचयिता—दीनादास (चतुरनगर, परगना चाइल, प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२०, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई० लिपिकाल—

सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा हरीदास, ग्राम—सरावल, डाकघर—गंजदुड़वारा, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । अथ प्रेमविहारी लिख्यते ॥ कवित्त—कहै जदु पति वीर सुनौ सखा मम धीर, ऊधौ हरौ व्रज पीर लाय जोग हौ लगाय जू ।। वीतत अलप काल प्रलय समान जिन्हैं, तिन्हें ज्ञान को विधान आइये सिखाय जू ॥ कीजिये उरिन हमें गोपिन के रिन वोढ़, आप विन गाढ़े दिन करै को सहाय जू ।। चले सिरनाय श्याम सुरति वनाय । रथ पथ हरषाय गये जहां नंदराय जू ॥ १ ॥

अंत—खेमटा—काहे न धुलायो चुनर भई मैली ॥ नैहरि छांडि ससुर जब जैहौ ऐहै सुदिन उतैली ।। तब तोहि मैलि कुचैलि देखि हैं नगर नारि नर छैली ।। घूंघट पट जब टारि देखि हैं फूटो सुख जिमि पेली ।। नांक मूंदि अपने घर जैहै नगर वात सब फैली ॥ नेक लाज नहिं आवत सजनी क्यों वावरि सी भैली ॥ अमित दुर्गन्ध आवत तेरे तन से निकसि जात जेहि गैली ॥ जहं तहं काटि फांटि के लटकत जैसे गीध की थैली ॥ दीना गंध तबै सब जैहै जरि हैं चिता धरि चैलो ॥ २ ॥ इति श्री प्रेम विहारी ग्रन्थ संपूर्ण शुभ लिखितं शिवदयाल चैत्र सुदी सप्तमी संवत् १९३६ वि० ॥

विषय—श्री कृष्ण और गोपियों का विरह वर्णन ।

संख्या ९० डी. गोपी विरह महात्म, रचयिता—दीनादास (चतुरनगर, तह०, चाइल, प्रयाग), कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला महावीर प्रसाद, ग्राम—बकावली, डाकघर—धूमरी, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ।। अथ गोपी महात्म लिख्यते ॥ दोहा ॥—अकल अनीह अखंड अज निराकार निरधार ।। अस गुरु हृदय वसत मम माया गुण गोपार ।। वन्दौं शेष गणेश हर अगम निगम श्रुति चार ।। रघुनंदन पद वंदिकै वन्दौ पवन कुमार ॥ वोहित तुलसी चरन चढ़ि होत जात मैं पार ॥ अगम सिन्धु संसार यह महा घोर है धार ॥ मैं मति मंद अंध सठ कहं लगि करौं वखान ॥ थोरे महं सब जानिहैं सज्जन संत महान ॥ छंद—अब मैं सबते विनय करत हौं सुनौ सकल मन लाई । कछुक हाल मैं आपन वरनत सबहिं चरन सिर नाई ।। शुकुल वंश भयो जन्म हमारो चतुर नगर है ग्रामा ।। चाइल परगन निकट प्राग के पिता वनायो धामा ।। पिता हमारे सब विधि साधू वदल शुकुल जेहि नामा ॥ मैं मति मंद महा अपराधी लोभ क्रोध वस कामा ॥ फिरौं सदा कपटी क्रूरन संग जानौं धर्म न दाया ॥ कहं लगि अवगुण कहौं आपनो ग्रसेउ मोहिं जस माया ॥ जवते सनमुख भयेउ राम के छोड़ि छाड़ि अन आसा ॥ तब ते सव सुख सिमिटि आय के सदा रहत मम पासा ।।

अंत—आनंद कंद नंद सुत कीरति रही अमित जग पाई ।। गोपी विरह नयी यह कीरति अधिक स्वाद दरसाई ।। दाता राम कामना पूरन ह्वै है जो सुनि गावै ॥ छल बल छांड़ि कपट सब मनको सोई परम पद पावै ॥ कवित्त—जमदूत सुन पाई जमराज ते सुनाई

एक, अद्‌भुत कविताई वैजनाथ जू वनाई ॥ चुप रहे जम राई सोच उर में वढाई, शीस नीचे को नवाई चित्र गुप्त को बुलाई है ॥ नर्क मूंदौ अव भाई अघहु एकौ न आई, सव गोपी विरह गाई वैकुन्ठ को सिधाई है ॥ चित्रगुप्त मुसकाई मसौ लेखनी छुड़ाई, वैजनाथ की दुहाई लोक चौदहौ में छाई है ॥ दोहा—गोपी विरह महातम भाषेउं मति अनुसार। दाता राम विप्रवर रघुपति पद उर धार ॥ इति श्री गोपी विरह महात्म संपूर्ण समाप्तः लिखतं चौवे दान मल्ल संवत् १९३६ वि० ॥

विषय—गोपियों के विरह का माहात्म्य वर्णन।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता दाता राम दीना दास जाति के ब्राह्मण चतुर नगर निवासी थे जो तहसील चाइल जिला प्रयाग में है। इसको इस प्रकार वर्णन किया है:— शुक्ल वंश भयो जन्म हमारो चतुर नगर है ग्रामा ॥ चाइल परगन निकट प्राग के पिता वनायो धामा पिता हमारे सव विधि साधू वदल सुकुल जेहि नामा ॥ मैं मति मंद महा अपराधी लोभ क्रोध वस कामा ॥ संवत् ओनइस सै वत्तिस में कातिक नौमि विचारी ॥ कृष्ण पक्ष तिथि सुन्दर जानौ कृष्ण चरण उर धारी ॥

संख्या ९१. विजयदर्शन, रचयिता—दीनानाथ, पत्र—२३६, आकार—७ X ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४२५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—नौबतराय गुलजारीलाल वैद्य, स्थान—फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—ॐ नमः सिद्धं ॥ श्री शीतल रामो जयति ॥ विजय दरसनय ॥ श्री गुरुभ्यो नमः श्री गणेशाय नमः श्री सरस्वत्यै नमः ॥ श्री परमात्म रामाय नमः श्री शुक्लां वरधरं विष्णुं शशि वर्णं चतुर्भुजं ॥ श्री प्रसन्न वदनं ध्यायेत सर्व विध्नोप शांतये ॥ अथ गुरु स्तुति पारी ॥ ॐ नमः सिद्धं सतगुरु देवा ॥ श्री सत गुरु चरन हृदय मैं राखौं ॥ श्री सतगुरु सुमिरों अमृत चाखौं। २ ॥ सतगुरु सुमिरैं तें आनन्द ॥ श्री सतगुरु सुमिरैं परमानन्द ॥ ३ ॥ श्री सत गुरु सुमिरैं मिटैं उपाधि ॥ श्री सत गुरु सुमिरैं जरिहै व्याधि ॥ ४ ॥ सतगुरु सुमिरि सच्चदानन्दू ॥ सत गुरु सुमिरि श्री गोविन्दू ॥ ५ ॥

अंत—आज्ञा तब यह हमकौं दयौ। सुमिरि ब्रह्म विद्या की पूजा कह्यौ ॥ श्री ज्ञानानन्द विद्या गुन सागर। शिवः स्वरूप वेद मय आगर ॥ ६९ ॥ पूर्ण अभिषेक करिहैं तुम्हरौ। सुश्री विद्या नाम षोड़षी सुमिरौं ॥ ७० ॥ श्री श्री स्याम सरुप श्री दीनी सिछिया ॥ अटन राज्य श्याम प्रसिद्धि प्रगासा ॥ दीना नाथ हरि चरन निवासा ॥ आज्ञा श्री दक्षिण कालिका ॥ यह अज्ञा करि अंतरध्यानी। स्याम सरुप अंतर ज्ञानी ॥ ७१ ॥ ज्ञानानंद गुरु नाथ को ध्यायौ। श्री ब्रह्म विद्या कौ भेदु लखायौ ॥ पूर्ण अभिषेक करैं उपदेसू। श्री राज राजेश्वरी जगत नरेसू ॥ ७२ ॥

विषय—(१) गुरु स्तुती, पर ब्रह्म निर्गुन स्वरुप। ब्रह्मांड वर्णन, सर्गुण निरुपण, सृष्टि, कर्माकर्म, विराट, परम पद। रंग ईश्वरी निज स्वरुप। ब्रह्म विद्या निरुपण, पूजन वारनी व चक्र, शिवपूजन, शक्ति पूजन विधि, पंचमकार शोधन, संपूज्य, पंच कोश पूजन, षट सिंहासनैश्वरी आदि पूजन, सप्त महा योगनी पूजन, अन्य डाकन्यादि पूजन, षट दर्शन

पूजन (समस्त चक्रेश्वरी देवता संपूज्याः) । १—११३ । (२) पात्र स्वीकार लक्षण, गुरु आदि पूजा विधि । पात्र स्वकार लक्षण, वलिदान विधि, शक्ति वीर पूजन विधि उच्छिष्ट चंडालनी । बलिदान, अष्ट कुलांगना पूजन, अमृत मंत्रो धार वर्णन, मृत्युंजय त्रोधा वर्णन, पूजन विधि मूल मंत्रोधार, सहस्र नाम विजय मंत्र, विजय जंत्र, चौवीस पंथ, हवन तथा जंत्र निरुपण, कोष्टवली, जीवोत्पत्ति रज-वीर्य लक्षण तथा भेद, षट दर्शन वर्णन, षट ज्ञानी, आरबी वर्णन, पंच मुद्रा, आत्मज्ञान, महिमा नाम का परिचय उत्पत्ति चतुर्थ वर्णन । चित्र गुप्त काइस्थ । ज्ञान वर्णन परिचय दीना नाथ ॥ ११४–२३६ ॥

टिप्पणी—यह खंडित ग्रन्थ वाम मार्ग से सम्बन्ध रखता है । इसमें वेदान्त के कुछ सिद्धान्तों के साथ ही साथ शक्ति की पूजा और शिव पूजा की प्रधानता रखी गई है । पंचम-कारादि का पृथक पृथक शोधन कराया है । रचयिता ज्ञानानन्द को अपना गुरु मानता है और ग्रन्थ के अन्तिम भाग में उनका कुछ परिचय दिया है । साथ ही उसने अपना भी परिचय दिया है । किन्तु ग्रन्थ के अपूर्ण होने तथा ग्रन्थ के पत्रों के फट जाने और फटे स्थानों पर चिटें लग जाने के कारण दोनों ही व्यक्तियों का परिचय अधूरा रह गया है । विशेपतया ग्रन्थकार का परिचय नितान्त अधूरा है ॥ अन्त में शीतल प्रसाद की महिमा का वर्णन है । ठीक नहीं कहा जा सक्ता कि ग्रन्थकार का नाम क्या है संभव है वह इन्हीं के खानदान का कोई व्यक्ति हो अथवा यही स्वयं ग्रन्थकार हों । क्योंकि उनका नाम ग्रन्थ में बहुत बार आया है । ग्रन्थ के र० का० का छन्द भी पुस्तक के फट जाने से अधूरा रह गया है "शुक्ल पंचमी भयो" इतने से कुछ पता नहीं चलता । दीनानाथ का भी परिचय दिया है किन्तु उसमें भी कुछ विशेप पता नहीं चलता । और न यही कहा जा सकता कि यही ग्रन्थकार था ।

संख्या ६२. अनुभव प्रकाश, दीप कवि, पत्र—६६, आकार—१०$\frac{1}{2}$ = ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्) १४०४, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९५८ = १९०१ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला ऋषभदास जैन, ग्राम—महोना, डाकघर—इटौंजा, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्री परमात्मने नमः अथ अनभौ प्रकाश ग्रंथ लिष्यते ॥ दोहा ॥ गुण अनंत मय परम पद । श्री जिन वर भगवान । ज्ञेय लषत है ज्ञान मैं । अचल सदा निज थान ॥ १ ॥ अथ वचनका ॥ परम देवाधि देव परमात्मा परमेश्वर परम पूज्य ॥ अमल अनूपम आनंदमय ॥ अषंडित भगवान ॥ निर्वाण नाथ को नमस्कार करि ॥ अनभौ प्रकाश ग्रंथ करौं हौं ॥ जिनके प्रकासा द्वै पदार्थ का स्वरुप जानि निज आनंद उपजै ॥ प्रथम मह लोक षटु द्रव्य का वन्या हैं तामैं पंच द्रव्य सौ सहज स्वभावसंत विद आनंदादि ॥ अनंत गुण मय चिदा नंद है ॥ अनादि कर्म संजोग तैं ॥ अनादि ॥ असुद्धे होय रह्या है ॥ तातें परम पद मैं अपना नयर भाव कीये ॥ तातें जन्मादि दुःख सह है ॥ ऐसी दुःख परिपाटी अपनी असुद्ध चित वीन ते पाई हैं ॥ जो अपने स्वरुप की सँभार करै तो एक छिनक मैं सब दुष विलाय जाय ॥

अंत—अनुभव यह शिव पद स्वरुप कौ अनुभव कल्याग अनंत ॥ अनुभव सुख अनंत ॥ अनुभव अनंत गुण निधान अनुभव अविनासी थान ॥ अनुभव त्रिभवन सार अनुभव यहिमा भंडार ॥ अनुभव आतु बौध फल । अनुभव स्वर सरस अनुभव स्व संवेद अनुभव तृपति भाव अनभव अषंड पद सर्वस्व अनुभव सास्वाद ॥ अनभव विमल रुप अनुभव अचल गोति ॥ रुप प्रगटै ॥ करणा ॥ × × × अरिल्ल ॥ यह अनुभौ परकास ज्ञान निज दायक है ॥ करिया को अभ्यास संत सुषषाय है ॥ या में अर्थ अनूप सदा भवि सरध है ॥ कहै दीप अविकार आप पद कौं लहै ॥२॥ इति अनुभव प्रकाश ग्रंथ अध्यात्म संपूर्ण ॥ मिती दुती सावन वदी ॥ १० ॥ सं० १९५८ ॥

विषय—(१) पृ० १ से १६ तक—मंगलाचरण । आत्मस्वरूप के विस्मरण का फल । अनुभव के लाभ । चेतन के अनेक विशेषण पुद्गल के विभिन्न रूप । स्वविचार सिद्धि का उपाय । आत्मा के गोथ स्वरूप के प्रगट होने का उपाय । कैवल्यज्ञान । (२) पृ० १७-५६ तक—अपना स्वरूप साक्षात् होने का उपाय । ज्ञान जान पणा रूप होकर अपने को क्यों न जाने इसका समाधान । माया ब्रह्म और जीव निरूपण । ब्रह्मज्ञान का संगम संसार का स्वरूप ज्ञान । शरीरादि का मिथ्यात्व और ज्ञान का प्रभाव । अन्य मिथ्यात्वों का वर्णन । शुद्ध चेतन स्वरूप का वर्णन । अनुभव का वर्णन मिथ्यात्व में फंसने के कारण सम्यक् ज्ञानादि वर्णन । परमात्मा के साध्य होने का वर्णन । साध्य साधक । निज धर्म की महिमा । (३) पृ० ५६ से ९६ तक—मिश्र धर्म अधिकार । सम्यक गुण सर्वथा । ज्ञानक सम्यक दृष्टि को हुआ है या नहीं ? इसका समाधान । स्वानुभव का वर्णन । देवाधिकार एवम मोक्ष का मूल तत्त्व और अनुभव की प्रधानता । ग्रंथ की महत्ता और फल ।

संख्या ९३ ए. कवितावली, रचयिता—दूलनदास (धर्मे, रायबरेली), पत्र—२७, आकार—९ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१६, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८२७ = १७७० ई०, लिपिकाल—सं० १९८५ = १९२८ ई०, प्राप्तिस्थान—त्रिभुवन प्रसाद त्रिपाठी, ग्राम—पुरवा प्रांणपांडेय, डाकघर—तिलोई, जिला—रायबरेली ।

आदि—नमामि रामभक्त सामरथ्थ पवन नंदनं । कपिर्द तेज पुंज दुष्ट दैत्य दल निकंदनं । प्रचंड वाहु दंड स्वर्ग सैल शोभितंतनं मृगेन्द्र नाद रावना गद्दर्द गर्व गंजनं । शरीर वज्र वज्र नख विपच्छ वपु विदारनं, महा जती नमामि दीन जन लगन सुधारनं । गंभीर बुद्धि जुद्धि धीर वीर वल महा बलं । शुसील ज्ञान गुन निधान चरन ध्यान अस्थनं । सकेस भेस ध्याय तो प्रभावविस्व विद्दितं । हितं परोपकार कीस वंस अंसउद्दितं ।

अंत—कर कंचन से तरह दार वर पंच वार बहु बानी के । चपला से चमकैं चुनी-दार तैसे तबीज उरमानी के । सिर सोहै चिरागोस पेंचजर जरे जराऊ पानी के । अति उर अनंद 'दूलन' गोविन्द तकि तनै जसोमति रानी के दामिन से दमकैं दसन मनोहर पीत बसन कटि बांधे हैं मोहन कोदंड तिलक बर मानहु मदन सुमन सर साधे हैं दूलन

सिरसो है मुकुट मंजुकर लकुट कामरी कांधे हैं। यो विविध भांति मधुवन वीथिनि में खेलत माधो राधे हैं। इति श्री कवित सम्पूरन शुभ मस्तु।

विषय—श्री हनुमान जी, श्री गणेश जी, भक्तों की महिमा, श्री गंगाजी, निर्गुण ब्रह्म स्मरण श्री कृष्ण राधिका की स्तुति। श्री राम नाम महिमा। सन्तों की रहनि गहनि। श्री सिव जी की महिमा इत्यादि अनेक स्फुट विषयों का वर्णन।

संख्या ९३ बी. मंगल गीता, रचयिता—दूलनदास (धर्मे, रायबरेली), पत्र—८, आकार—९ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५४, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३०, लिपिकाल—सं० १९८५ = १९२८ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० त्रिभुवन प्रसाद त्रिपाठी, ग्राम—पुरवा प्राणपांडे, डाकघर—तिलोई, जिला—रायबरेली।

आदि—रामजिऊ दीनदयाल सामरथ सतगुर उत्तिम लगन धराई। राम जिउ निर गुन ब्याह विधान वखानों गुरू कृपा सुधि पाई। राम जिउ कंजन नगर सुहावन पावन हृदय कमल विग साई। रामजिउ रचि रुचि सहज सील गुन आगर सुमति का माड़ौ छाई। रामजिउ बांध्यो पांच पचीस तीन तहँ वंदनिवार लगाई। रामजिउ उलटि पवन तहं वेदी बांध्यो प्रीत के खंभ गड़ाई। रामजिउ चौगुन चाऊ चउक तहं पूरन सोहं मुक्ता मोती। राम जिउ निर्मल नीर प्रेम घट पूरन जग मग मानिक जोती।

अंत—माया तसि कसि निजु तन मन कहँ उलटि पवन चित देहु नाम औराधहु। बाजै निसान अधर धुनि गीति गँगन गढ़ लेहु सत्य युग बांधहुं। सखी मोरे सजन कही रस बतिया। तनिक भनक परी श्रवनन्ह मां, सोवत चौकि परिउ अधि रतिया। पिय की बतिया हिया मोरे जागी प्रीत बेलि हरि भई दुइ पतियां। सुनतहि प्रीतम की रस बतियां मैं भइउँ सुखित जरी है सवतिया। सखि 'दूलन' पिय की रस वतियां गूंधौ हार मैं चुनि २ मोतियां

विषय—मंगल समय में गाने योग्य गीत, नहछुर, बारात, द्वार चार, लहकौरि, चढ़ाव, भंवरी, विनती, मैहर द्वार, गारी, वर परछानि इत्यादि के अत्यंत सुंदर गीत ग्रामीण भाषा मिश्रित सरल हिंदी में लिखे गये हैं।

संख्या ९३ सी. दोहावली, रचयिता—दूलनदास (सैमासी, धर्मे, रायबरेली), पत्र—२२, आकार—९ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७६, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल सं० १८२५, लिपिकाल—सं० १९८५ = १९२८ ई०, प्राप्तिस्थान—त्रिभुवन प्रसाद त्रिपाठी, ग्राम—पूरे प्राणपांडे, डाकघर—तिलोई, जिला—रायबरेली।

आदि—दूलन प्रेम प्रतीत ते, जो वंदै हनुमान। निसु वासर ताकी सदा सब मुश्किल आसान। सांई तेरी सरन हौं अबकी मोंहि नेवाज। दूलन के प्रभु राखिये यहि बाना की लाज। दूलन दाता राम जिव सबका देत अहार। कैसे दास विसारि हैं आनहु मन अति वार।

अंत—सरवस दूलन दास के आसु तोप तुम्ह राम। तुम्हरे चरनन सीस दे रटौं तुम्हारो नाम। कर्ता हर्ता राम जिनु 'दूलन' कीन्ह विचार पेट प्रपंच के कारने, बूड़ि मुवा संसार। सरवस दूलन दास के केवल नाम प्रसाद। यह सत सिद्धि औ सर्व शुभ सुफल आदि औकाद।

विषय—योग, ज्ञान, भक्ति, संसार की असारता, ईश प्रेम राम नाम महिमा आदि विषयों का वर्णन।

संख्या ९४ ए. वाराह पुराण, रचयिता—दुर्गाप्रसाद (हमजापुर, अलवर), पत्र—३१८, आकार—१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—७२८०, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२७=१८७० ई०, लिपिकाल—सं० १९२८=१८७१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० हरीविष्णु, ग्राम—पुरवा बहादुर पुर, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ वाराह पुराण लिख्यते ॥ सोरठा ॥ सिद्धि बुद्धि के धाम हरण अमंगल विघ्न के ॥ बारंबार प्रणाम गणनायक शुभ सदन के ॥ श्री नारायणहिं प्रणाम सुर सेवित नर वर सहित ॥ चतुर वर्ग के धाम असुर निकंदन देव हित ॥ श्री शारदहिं प्रणाम हंस बाहिनी जो सदा ॥ बसै सो मम उर धाम निर्मल मतिहि प्रकाशनी ॥ प्रथम अध्याय—एक समय नैमिषारण्यवासी रिषियों ने श्री सूत जी के मुखार विंद से परम पावन श्री विष्णु जी का नाना औतार चरित्र सुन परम प्रेम में मग्न हो श्री वाराह औतार की कथा सुनने की वांछा से अति हर्षित हो श्री शौनक जी सूत जी से प्रश्न करते भये कि हे सूत जी हम संपूर्ण अहोभागी हैं जो आपके मुखार विंद से परम पावनी हरि कथा दिन दिन प्रति नाना औतार चरित सुनते हैं और आपभी धन्य हो जो श्री परमेश्वर के परम पावने गुणानुवाद रूपी अमृत से अनेक जन्म की तृष्णा हमारी दूर कर रहो हो ॥ जो इस कथा को प्रातः काल उठ करके अथवा किसी पुन्य दिन में श्रवण करै वे सव पापों से मुक्त हों हमारे धाम को निज पितरों के साथ जायं हे धरणि जो तुमने प्रश्न किया सो सो हमने वर्णन किया अव क्या सुना चाहती हो। इति श्री वाराह पुराण संपूर्ण समाप्तः लिषा शिव विष्णु पंडित हमजापुर निवासी संवत् १९२८ वि० कार्त्तिक शुक्ल नवमी ॥

विषय—बाराह औतार का कथा का वर्णन।

टिप्पणी—इस ग्रंथ के रचयिता दुर्गाप्रसाद-पिता का नाम ब्रज लाल-अलवर राज, ग्राम हमजापुर निवासी थे। निर्माण काल संवत् १९२७ वि० लिपिकाल संवत् १९२८ वि० है।

संख्या ९४ बी. वाराह पुराण, रचयिता—दुर्गाप्रसाद (हमजापुर, अलवर), पत्र—३१०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—७१७२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२७=१८७० ई०, लिपिकाल—सं०१९२९=१८७२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामनाथ शास्त्री, ग्राम—रामनगर डाकघर—सोरों, जिला—एटा।

आदि–अंत—९४ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार हैः—इति श्री वाराह पुराण संपूर्ण समाप्त लिखा गंगा दीन गंगा पुत्र ने ३ मास में स्वपठनार्थ संवत् १९२९ वि० फाल्गुन सुदी ११ राम राम राम राम।

संख्या ९४ सी. लीला नरसिंह औतार, रचयिता—दुर्गाप्रसाद, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२६ = १८६९ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रामनरायन, ग्राम—भीषमपुर, डाकघर—जलेसर, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ लीला नरसिंह औतार लिख्यते दोह—जहां सांच तहं आप हैं जहां आप तहं सांच ॥ चाहौं ज्वाला में वसौं तहूं न लागै आंच ॥ टेक—प्रहलाद भक्त हरि भये प्रेम हितकारी। नरसिंह भयो औतार असुर को मारी ॥ देखी जब प्रभु की शक्ति अवा में जाके। विल्ली ने वच्चे धरे अवा में जाके ॥ दीन्हीं जब अगिन लगाय कुम्हार ने जाके। प्रभु की दाया से वचि गये हैं वच्चे वाके ॥ प्रभु लीला अगम अपार जक्ति संसारी ॥ नरसिंह भयो औतार असुर को मारी ॥ १ ॥

अंत—इतिनी सुनि श्री भगवान रूप नरसिंघ धर। प्रगटे खंभा को फारि भक्त पर हित कर ॥ पकड़ो हरना कुस धूरी सांझ जंघा धर। नखों से तव फारो उदर वने नरसिंह हर ॥ कहते दुर्गा प्रसाद ख्याल त्रिपुरारी। नरसिंह लियो औतार असुर को मारी ॥३॥ इति श्री नरसिंह औतार लीला संपूर्ण समाप्तम् संवत् १९२६ वि० जेष्ठ सुदी नौमी लिखा भिखू वनियां गढ़ी हरनोमल ॥ राम राम राम राम ॥

विषय—प्रहलाद भक्त की लीला।

संख्या ९५ ए. तत्वज्ञान वारहमासी, रचयिता—द्वारिकादास (मोहम्मदपुर, कानपुर), कागज—देशी, पत्र—८, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, पद्य लिपि—नागरी। रचनाकाल—१९३१ वि०। लिपिकाल—१९३१ वि०, प्राप्तिस्थान—बाबा रामदास जी, ग्राम—दहीनगर, डाकघर—टेवा, जिला—उन्नाव (उ० प्र०)।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ तत्वज्ञान की वारहमासी लिख्यते ॥ कवित्त ॥ न गहै कर माल न मुख से करै गढ़ि गढ़ि पाहन की मूरति न पुजै ॥ सकार हकार मिलाय कहै तेहि आदि में आदि को अक्षर दीजै। सूरज चंद्र के मध्य वसै तेहि आदि में आदि को अक्षर दीजै ॥ सूरज चंद्र के मध्य वसै तेहिका गहिकै चढ़ गवन करीजै द्वारिका पतित पावन पावन कहैं संतो समझ वूझ मन लीजै ॥ तत्व ज्ञान की वारह मासी ॥ चैत। चिन्ता सोच वाढ्यो मोह माया वस रह्यो सखि आस तिसुना में फस्यो दिन रात दुवधा में गयो ॥ हूँ लोभ वस कहुं कुजन के फिरि आनि के सेवक भयो ॥ जिन गर्भ में रक्षा करी तेहि नाम धोखे ना कह्यो ॥

अंत—कवित्त—वृत कर्म ना छुटावै नाहक इंद्री तलफावै मरे पूजि पूजि पाहन भूलि कथनी के ज्ञान में। तीरथ को धावै। पै साहव को न पावै घर सतगुरु का न खोजे रहै दान के गुमान में ॥ मन चित्त कर लेख्यो वहु खोजि खोजि देख्यों इस सतगुरु के

समान केहि दाता ना जहान में ॥ पतित पावन को चेरा इक द्वारिका विखैला ताहि दुनियां से उबारि कै बसायो अलष धाम में ।

विषय—ईश्वर के नामकी महिमा जिससे ज्ञान प्राप्त हो, वर्णन है ।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता द्वारिकादास थे मुहम्मपुर कानपुर निवासी । यह बारहमासी अपने मित्र शुकदेव की आज्ञा से रची । निर्माण काल संवत् १९३१ वि० और लिपिकाल संवत् १९३१ वि० हैं।

संख्या ९५ बी. ज्ञान का बारहमासा, रचयिता—द्वारकादास, कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी । लिपिकाल—१९३७ वि०, प्राप्तिस्थान—ठा० भैरव सिंह राठौर, ग्राम—गंगापुर । डाकघर—बारहद्वारी, जिला—एटा (उ० प्र०)।

आदि-अंत—९५ ए के समान ।

संख्या ९५ सी. तत्त्वज्ञान की वारामासी, रचयिता—द्वारकादास, कागज—देशी । पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६०, पूर्ण, रूप—प्राचीन सड़ी गली, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१९३१ वि०, लिपिकाल—१९३४ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० रामदयाल दुबे, ग्राम—नगरा वग्गा, डाकघर—जैथरा, जिला—एटा (उ० प्र०) ।

आदि-अंत—९५ ए के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—इति श्री तत्त्वज्ञान की वारामासी संपूर्ण लिखा रामनाथ त्रिपाठी अलीगंज बाजार संवत् १९३४ वि०

संख्या ९६ ए. रस मंजूषा, रचयिता—द्वारकाप्रसाद, कागज—देशी, पत्र—१६०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५००, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—वैद्य रामजीवन मिश्र, ग्राम—लालामऊ, डाकघर—तालाबबक्सी ।

आदि—कफ केशरी रस-विष २५, अभरख २५, वंग २५, सोहागा २५, गुजराती १२, लौंग १२, अकर करा १२, अजवाइन १२, मिर्च १२, सब अदरख के अर्क में गोली मटर बराबर करै । अदरख में खाय तौ कफ ज्वर जाय खोखी नासै ॥

अंत—हरि गौरी रस—जो पक्ष हीन, वल हीन, वीर्य हीन, मलहीन होय तौ पारा लेने से मनुष्य अजर अमर होय घिकुवार से घोटै तब छानि लेइ, चीत से वहेरा के क्वाथ से वाइन सबके रस से चार पहर घोटै । तब पारा सब काम में जोजित करै । पारा १ गंधक २ भागले खरल में घोटै कजरी करै घीकुवार के रस से घोटै तब वरगद के जटा में घोटै कजिरी करिकै आतिशी शीशी में कपरौटी करै तब झुरै कै कजरी शीशी में भरै मुहरा में डाटै दे तब एक खपरी की पेंदी में आंगुर भरि चौड़ा छेदकरै उसपर शीशी धरै तब वारू भरै शीशी का मुंह खुला राखै तब २७ पहर आंच दे तब शीशी फोरि रस निकारि ले लाल वर्ण हो तब २ रत्ती रस मिश्री दूध के साथ दे तो प्रमेह स्वांस कास क्षीण पन अल्प वीर्य ये सब दूर होइ यह हर गौरी रस जुदा जुदा अनोपान से अनेक रोग दूर होइ ॥

विषय—रस बनाने की विधि का वर्णन ।

संख्या ९६ बी. रस मंजूषा, रचयिता—द्वारका तिवारी, कागज—देशी, पत्र—१६०, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं १९०७ = १८५० ई०, प्राप्तिस्थान—वैद्य रामनाथ शर्मा, ग्राम—मीरपुर, डाकघर—मल्लावां, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशाय नमः। अथ रस मंजूषा लिख्यते ॥ दो०—श्री गुरुचरण प्रणाम करि हिये धरौं निज ध्यान। रस मंजूषा रचन को मोको दीजो ज्ञान ॥ १ ॥ संस्कृत जो ग्रंथ हैं और जे भाषा जानि तिनकी आशय मैं कहौं रस मंजूष वखानि ॥ २ ॥ चरकादिक जे ग्रंथ है सो हैं नृपति सुजान। तिनकी सेवा करन को भाषा कीन्हौं जान ॥ ३ ॥ अथ नाड़ी परीक्षा—भूषे से प्यासे से सोय से तेल लगाये से तुरंत अस्नान से राह के चले से नाड़ी का ठीक ज्ञान नहीं होता। तासों चतुर वैद्य नाड़ी ठहर सों देखैं ॥

अंत—जो मुहैं आवै तो कट सरैया की जड़ खैर सार त्रिफला के काढ़ा कोवा दूध को कुल्ला करै पथ्य दूध भात देय। इति कपूर रस। इति श्री रस मंजूषायां रस स्थाने सर्व रोग चिकित्सायां द्वारिका त्रिपाठी कृत नवमोध्याय संपूर्णम् ॥ लिखतं श्री निवास संवत १९०७ वि० शाके १७७२ चैत्र शुक्ला राम नौमी श्री राम राम राम राम।

विषय—रस रसादिक बनाने की विधि।

टिप्पणी—इस ग्रंथ के रचयिता द्वारिका त्रिपाठी ब्राह्मण थे।

संख्या ९७ ए. शब्द होरी, रचयिता—बाबा फकीरादास (नरोत्तमपुर, बहरायच), पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८३१ ई०, लिपिकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०, प्राप्तिस्थान— पं० शिव महेश, ग्राम—विशुनपुर, डाकघर—अलीगंज, जिला—एटा।

आदि—अथ ज्ञान की होरी (शब्द होरी) लिख्यते ॥ दोहा—पथम गुरु की वंदना तिमिरि दृष्टि मिट जाइ। साहेब सब घट भीतर नैनन में दरसाय ॥ १ ॥ ऊँकार मूल श्री भाल मुकुर मनि रवि सीस कुंज विहार। दास फकीर के हिरदे बसौ धुनि उपजै नाम तुम्हार ॥ २ ॥ दृष्टि दरसा जो देखिये सो पाये तत सार। दास फकीर प्रगट कहि समुझै सो उतरै भव पार ॥ ३ ॥ नाम रटनि जेहि साधु की रसना रटनि अनुराग। आठ पहर चौसठ घरी तब आवै वैराग ॥ अथ शब्द होरी लिख्यते ॥ डर लागै पिया को कैसे मैं खेलौं होरी ॥ एइ नैहरवा में आनि भुलानि वह सुधि विसरी पिय तोरी ॥ औगुन वहुत नहीं गुन एकौ रहींउ मैं विषय रस घोरी ॥ १ ॥ पांच पचीस रंग होरि हर वातिन संग निकर न पाऊंरी ॥ कैसे रंग पिया पर डारऊं अलप वैस वुद्धि थोरी ॥ २ ॥ पिया मोरे ऊंचे अटा पर वैठे रहि वउं मैं नजरिया जोरी ॥ पल छिन कल न परै विन देखे जगत जेठनियां की चोरी ॥ ३ ॥ अव की निहोर कोर भरि चितवउ छूटै ना दिढ़ डोरी ॥ दास फकीर दरस पिय फगुवा मांगत हौं करजोरी ॥

अंत—समुझौ मन आपन ज्ञाना ॥ झूंठ प्रसंग छोंड़ि देउ मनुआं सांची प्रीति लगावोना ॥ झूंठ है यह जगत जहां लगि ज्यो रवि कीनि वखानि। धाए मृग प्रान गलावोना

॥ १ ॥ झूंठै पांच तत्व पर कीरति झूंठै ग्राम गुमाना ॥ झूंठ न मिलेउ झूंठ घर थापेउ रचि पचि याही में खपना ॥ नेक नहीं गुरू घर पावोना ॥२॥ या जग फंदि रहा जग फांदा गंदा गांदि लोभाना ॥ ज्यों सुगना ललनी पर लोभा उलटि पंख लपटाना ॥ आनि फिरि अंत तुलाना ॥ ३ ॥ जस मरकट गागर कर मेलेउ भरि मूंठी कसि लेना ॥ छुटत नहीं सो कोऊ जतन से ताही में फंस वध वोना ॥ घरै धूर भीख मंगाना ॥ ४ ॥ ए मनुवां सुन बात हमारी थिर है बैठ अलाना ॥ धूर भीषम दास फकीरा दया सत गुरु कै हरदम रहौ सयाना गाफिल नेक न आना ॥ ५ ॥ इति श्री होरी के शब्द समाप्तः संवत् १९३० वि० ॥

विषय—ज्ञान की होरी के शब्द ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता बाबा फकीरा दास नरोत्तम पुर जिला बहरायच निवासी थे । निर्माण काल सन् १२३८ फसली । लिपिकाल संवत् १९३० वि० है ॥

संख्या ९७ बी. वानी बाबा फकीरादास, रचयिता—फकीरादास (नरोत्तमपुर बहरायच), कागज—देशी, पत्र—११२, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९१२, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१२२५ = १८१८ ई०, लिपिकाल—संवत् १९३० = १८७७ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा रामदास, स्थान—हरसूपुर, डाकघर—नानपारा, जिला—बहरायच ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ बाबा फकीर दास की वानी लिख्यते ॥ प्रथम करौं गुरु बंदना तिमिरि दृष्टि मिटि जाइ । साहेब सब घट भीतर नैनन में दरसाइ ॥ ॐ कार मूल श्री भाल मुकुर मनि रवि ससि गुंज विहार ॥ दास फकीरे के हृदै बसौ धुनि उपजै नाम तुम्हार ॥ दृष्टि दरस जो देखिये सो पाये तत सार । दास फकीर प्रगट कहि समुझौ सो उतरै भव पार ॥ नाम रटनि जेहि साधु को रसना रटनि अनुराग ॥ आठ पहर चौसठ घड़ी तब आवै वैराग ॥ भव सागर दरिआव है तामें नाम जहाज । दास फकीर संगति चढ़ि गुरु पूरै कै लाज ॥ पुरुष है नाम मे मिलै तौ दिख लावै सैन । अयन वैन के पार है दरसैये वोरी नैन ॥ वानीः—जपु नाम हरि नाम को फिकिरि सब छोड़िके सोवता क्या भव जाल माहीं ॥ माया औ मोह पर वार दिन चारि को छूटि सब जाय कछू हाथ नाहीं ॥ जोगना ध्यान औ ज्ञान नाहीं नेम आचार नाहीं ॥ सहज एक प्रीति वहि नाम से लायके खेलु संसार के बीच मांहीं ॥

अंत—नैन झलकै जोगी अवल चढ़ब ॥ तन धन देखि जनि बवरावो करौ भजन अस पै हौंन दांव ॥ आसन अधर पवन पर भाव आवत जात सो हंगम गांव ॥ उनि मुनि आगे अग्र अगोचर त्रिकुटी में बैठि के ध्यान लगाव ॥ तन तकिया मन ताल वजायो पांच पचीस का घेरि लै आव ॥ सुखमन सोधि समुझि घर आवो सूने महल लै सेज विछाव ॥ उनि मुनि अगर भई मोह छाही दास फकीर तहं बैठि जुड़ाव ॥ इति श्री वानी बाबा फकीरा दास (आनंद वर्धनी) संपूर्ण समाप्तः संवत् १९३४ वि० ॥

विषय—ईश्वर की महिमा और ज्ञान वर्णन ।

संख्या ९७ सी. शब्द कहरा, रचयिता—फकीरादास (नरोत्तम पुर, बहरायच), पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) ३२, परिमाण (अनुष्टुप्) ३८८,

रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—भौरूदास, स्थान—रामकुटी (भीशमपुर), डाकघर—जलेसर, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ शब्द कहरा लिख्यते ॥ कहरा शब्द १ ॥ काया की नगरिया से गगरिया भरि लावरे ॥ गगन इंदर वाले सुरतिया डोरी लावरे ॥ नौ नारी पनिहारी लागी लागा पूरा दांवरे ॥ १ ॥ पांच पचीसौ रंगे चंगे माते मत के भावरे। प्रेम कै इंडुरिया धैके हौले हौले आवरे ॥२॥

अंत—हिंदू तुरक दोइ दीन सबन में रह्यो समाई ॥ हिंदू भूले वेद में तुरक भूले पढ़ि कुरान । ई दूनौ दुइ राह ते साधौ पचिगे जाति अभिमान ॥ ऐजी दुइ अछर ततसार सोइ अंतर लौ लावै। देखौ उलटि निहारि और कछु नजरि न आवै ॥ दास फकीर विश्वास ते रहे चरन तर सोइ। जेहि जस दाया सत गुरु करि हैं तिनका तस फल होइ ॥ ५ ॥ इति श्री सबद कहरा समाप्तः लिखा राम दास ॥

विषय—निराकार परमात्मा के विषय के शब्द ।

टिप्पणी—इस ग्रंथ के रचयिता बाबा फकीरा दास जाति के मुराऊ थे। ये नरोत्तम पुर जिला बहराइच के निवासी थे। इनके छोटे छोटे अनेक ग्रंथ रचे पाये जाते हैं जो निराकार परमात्मा के विषय में उपदेशार्थ लिखे हैं ।

संख्या ९८. ज्ञान उद्योत, रचयिता—श्री फकीरे दास (ठाकुर दूबे का पुरवा सुल्तानपुर), पत्र—१३३, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९३२, रूप—अच्छा, लिपि—कैथी, रचनाकाल—सं० १८५२ = १७९५ ई०, लिपिकाल—सं० १८९२ = १८३५ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत पुरंदरदास जी, ग्राम—ठाकुर दूबेका पुरवा, डाकघर—जगदीशपुर, जिला—सुल्तानपुर ।

आदि—सत गुरु साहेब दानिया, देहु जनहिं वरदान। मन यहु कछु मांगा चहै देहु राखि मनमानि। सुमिरउँ गनपति आदि सुर, शुभ करता के दानि। जो कोउ मांगे जवन फल, देहिं ताहि हित मानि। सत्य नाम सत गुरु सही, कहै सत्य जो कोय। वंदौ ताके पद कमल, जाते मम हित होय। वंदौ सतगुरु पदकमल, सत्य नाम जिन दीन। ज्ञान उदोत होत जेहि कीर्ति कहँ जन लीन ।

अन्त—दो०—उराम कुल सन्दर सु तनु, लक्षन सब गुन होय राम नाम विन हीन कस, लाल इंदारनि सोय। सकल कलते हीन जो राम नाम धरि हीक भोजन कवनिउ भांति खा, करै नोन सब नीक। चौपाई—राम नाम जब तेहि उर होई, अवगुन तजि तेहि सब गुन सोई। जीव ब्रह्म वसि कवनेव जामा, नाम जपत जुग २ विश्रामा। दास फकीर मनहि समुझाई। भक्ति विना मिथ्या दुनियाई गुरु की कृपा जस मति मोहि आई। तस कहि राम चरित चित लाई। निज स्वारथ लगि कहेउँ वखाना बन अनवनरे नहि मन आना तन मन वानि, करन हित पावन, तेहि हित प्रभु कहि कथा सुहावनि ।

विषय—ग्रंथ में गुरु की वंदना सर्व प्रथम करके पश्चात् ज्ञान और भक्ति उत्पन्न होने के हेतु अनेक कथाएं लिखी गई हैं ।

टिप्पणी—श्रीफकीरेदास जी का जन्मस्थान ठाकुर दुबे का पुरवा, तहसील मुसाफिर खाना, जिला–सुल्तानपुर में सरयू पारीण कुंडवरिया दुबे गार्गेय गोत्रीय ब्राह्मण वंश में हुआ था। कहते हैं ये एक फकीर के आशिर्वाद से पैदा हुए थे इसी कारण इनका नाम फकीरदास रखा गया। बड़े होने पर श्री जगजीवन स्वामी का नाम सुनकर शिष्य होने की इच्छा से गए। परंतु इनके मन में यह दुविधा आ गई कि मैं ब्राह्मण हूँ और ये क्षत्री हैं। इस कारण स्वामी जी ने इन्हें शिष्य नहीं बनाया परंच अपने शिष्य माधौदास के पास भेज दिया और ये इन्हीं के शिष्य हो गये। आपका बनाया हुआ एक ग्रंथ ज्ञान उद्योत और बहुत से स्फुट भजन आदि देखने में आए हैं। कविता साधारण है परंतु ज्ञान और भक्ति शान्त रस से पूर्ण है। भाषा ग्रामीण मिश्रित अवधी है। आपका शरीरांत ६५ वर्ष की आयु में सं० १८५७ चैत्र शुक्ल ८ शनिवार को हुआ। आपके वंशज महंत का परिवार उसी स्थान पर अब भी वर्तमान है।

संख्या ९९. इजुल पुरान, रचयिता—हकीम फरासीस नाम सुत हकीम, कागज—देशी, पत्र—१४६, आकार—११ × ७ इंच, पंक्ति प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२४५, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८९७ = १८४० ई०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत देवीलाल जी आयुर्वेदाचार्य, तहसील—खैरागढ़, डाकघर—जगनेरा, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय न्मः श्री सरस्वत्यै न्मः अथ ईजुल पुरान लिष्यते। अथ मूत्र परीक्षा। गुर कैसौ रंग होय तो गरमी जानिये। सुरष रंग होय तो पित्त जानिये। सुपेत्र रंग होय तो सीत जानिये। जरद रंग होय तो कफ जानिये॥ इति मूत्र परीक्षा॥

अन्त—मही के गुण मही रहे तामें अढ़ाई गोहूं २॥ डारि राखे॥ दिन २॥ तब निकारिकें खाइ गोहूं मासे २ मिरच मासे २ मिलाय खाय दिन २९ तौ आमवात सो जो संग्रहणी अतिसार जाय एते गुन करे। इति श्री ईजुल पुरान वैद्य शास्त्रे हकीम फरासीस नाम सुत विरचतायाम सर्व क्ली वरननो नाम त्रिदसमो अध्याय॥ १३॥ संपूरण स्माप ताम् जथा प्रति देखी तथा लिखी मम दोषो न दीयते मिती पौष सुदी ६ भौम वासरे समत १८९७ दसकत लाला सिवलांके वाचें सुने तिनको राम राम। श्री ३.

विषय—१, मल मूत्र परीक्षा २, भिन्न प्रकार के त्रिदोषों का विवेचन। ३, महा-दीर्घ सन्निपात के लक्षण ४, ज्वरों के लक्षण ५, लोहू विकार ६, प्रमेह, जलंधर का निदान ७, नेत्र परीक्षा। ८, सर्बत बनाने की विधियां। ९, आसव तथा गुटिका बनाने की रीति। १०, अर्क बनाने की रीतियां ११, वफारा देने की तरकीब १२, विविध काढ़े। १३, चूरन बनाने की विधि १४, विविध प्रकार की गोलियां १५, लेपन विधि १६, चटनी विधि। १७, पाक विधि। १८, तैल विधि। १९, मलहम बनाने की विधि। २०, घी बनाने की क्रियायें।

संख्या ९९ बी. वैद्यक फरासीसी, रचयिता—हकीम फरासीस, कागज—देशी, पत्र—१०४, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप)—

२३४०, खंडित । रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८४७ = १७९० ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर हरनामसिंह, स्थान—दाईपुर, डाकघर—अतरैब, जिला—हरदोई ।

आदि—मुरहठी कौ सरबत ॥ मोरहठी तोला १ आध पाव पानी में छान लेइ तामें मिरचे मासे १ मिश्री मासे ५ डारि पीवे कमल सन्निपात नासै ॥ नेम सिराइ ॥ उचकि हड़ फूटन नासै ॥ १ ॥ जाठौ की सरबत ॥ जाठौ तोला १ आध पाव पानी में वांटि छानि पीवै ॥ लपट जुरताई दाह जाइ पेसाव की चिनग जाइ ॥ २ ॥

अंत—ये सब पीस कपर छन करै तब ए वस्तुए मिलाइ कै सहत दो सेर जोस दैकै सब वस्तुऐं मिलावै तब सिधि के मासे ४ की गोली वांधे खाइ रोज ४० तो नामर्द मर्द होइ विंद कुसाद सुक्रत पर मेह सोजाक चित्तौरी टांकी दूरि होइ वाइ के विकार नासै सब रोग जाइ ॥ इति श्री भाषा फरा सीसी संपूर्ण समाप्तः संवत् १८४७ वि० ॥

विषय—वैद्यक का ग्रन्थ ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता हकीम फरासीस थे। लिपिकाल केवल संवत् १८४७ वि० है ॥

संख्या १००. गदाधर भट्ट की वानी, रचयिता—गदाधर भट्ट (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—११२, आकार—१० × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—३००, खंडित। लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबा बंशीदास जी, स्थान—गोविंद कुंड, वृंदावन, डाकघर—वृंदावन, जिला—मथुरा ।

आदि—श्री श्री गौर नित्यानंदौ जयति श्री निकुंज विहारिण्यै नमः अथ श्री गधाधर भट्ट जू की बानी लिख्यते सिद्धांत के पद राग विभास कवै हरिकृपा करि है। सुरति मेरी और न कोऊ काटन कौनेहवेरी । काम लोभ आदि ये निर्दय अहेरी । मिलिकै मनमति मृगी इन चहुधा घेरी । रोथी आय आस पीसि दुरासा केरी । भटकि देत वाही में फिर फिर फेरी । परी कुपथ कंटक घनेरी । नेक ही न पावति भजि भजन सेरी । दंभ के आरंभ रही सत संगति डेरी । करै क्यों गदाधर विनु करुना तेरी ।

अंत—गुनिन कर गदाधर भट्ट अति सविहत कौ लागे सुखद सज्जन सुहृद शुसील वचन आरज प्रति पालै । निर्मत्सर निष्काम कृपा करुना का आलै । अनन्य भजन दृढ़ करन धर्यौ वपु भक्तन काजै । परम धरम कौ सेतु श्री वृंदावन गाजै । श्री भागवत सुधा वरषै वदन काहु को नाहिन दुखद गुननि कर गदाधर भट्ट अति सविह्न को लागै सुखद । श्री गदाधर भट्ट जू की छप्पय श्री नाभा जू महाराज कृत संपूर्ण ।

विषय—राधाकृष्ण भक्ति विषयक पद ।

संख्या १०१ ए. होली संग्रह, रचयिता—गौरी शङ्कर (मसवानपुर, कानपुर), पत्र—१२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९३० = १८७३ ई०, लिपिकाल—संवत् १९३० = १८७३ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर हरविलास सिंह, स्थान—रानीपुर, डाकघर—जैथरा, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ होली संग्रह ग्रन्थ लिख्यते ॥ जंगल्ला थारे करूंगी कपोलन लाल जी म्हारी अंगिया न छूओ ॥ यह अंगिया नहिं धनुष जनक को छुवत टूट ततकाल । म्हारी नहिं अंगिया गौतम की नारी छुवत उड़ी नंदलाल ॥ म्हारी कहा विलोकत भृकुटी कुटिल कर नहीं पूतना खाल ॥ म्हारी यह अंगिया काली मत समझो जा नाथ्यो पाताल ॥ म्हारी गिरिवर उठाय भयो गिरधारी लाल नहीं जानौ व्रज वाल ॥ म्हारी इतनी सुनि मुसकाय सांवरो लीनो अविर गुलाल ॥ म्हारी सूर स्याम प्रभु निरषि छिरकि अंग सखियन कियो निहाल ॥ म्हारी० ॥

अंत—काफी पीलू—वीती जात वहार री पिय अवहूं न आये । कैसे के मैं दिन वितवों आली जोवन करत उभार री ॥ पिय अवहूं न आये ॥ कहा करूं कित जाऊं वताबो यह समयो दिन चार री ॥ पिय अवहूं न आये ॥ अली माधवी पिय विन व्याकुल कोऊ न सुनत पुकार री ॥ पिय अवहूं न आये ॥ इति श्री होली संग्रह गौरी शंकर भट्ट संग्रहीत समाप्त संवत् १९३० वि० ॥

विषय—राधाकृष्ण की भक्ति और क्रीड़ा का वर्णन ।

संख्या १०१ बी, काव्यामृत प्रवाह, रचयिता—गौरीशंकर भट्ट, (मसवानपुर, कानपुर), कागज—सफेद, पत्र—२०४, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४४८, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९३९ = १८८२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० श्यामलाल भट्ट, स्थान—गंगाखेड़ा, डाकघर—माल, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ काव्यामृत प्रवाह लिख्यते ॥ श्री रघुनाथ सतक ॥ मंगलाचरन ॥ एक रदन करिवर वदन विघन हरन सुख कंद ॥ सिद्धि सदन मंगल करन जै जै गिरिजा नंद ॥ सवैया—एक ही दंत अनंत लिये छवि चंद लिलार में धारन हारे । गौरी के गोद विनोद करै चहुं कोद नसे के पसारन हारे ॥ मोदक लै हितकै नितही ललिते के सुकाज संभारन हारे ॥ होहु सहाय गजानन जू जे घने विघने के विदारन हारे ॥ × × × श्री जग वंदन वंदन भाल गुलाल भरो मानो हाथ रती को । नामहिं ते लछिराम गनेस के पाप पहार नसै धरती को ॥ दानियां तीनहुं लोकन में वरदानियां वेद विरंच जती को ॥ शंभु को वारो सवारो प्रताप दुलारो दयानिधि पारवती को ।

अंत—फूलि रहे कचनार अनार हजार सो रंग विरंग अवास है ॥ मंजुल मंजु दली कदली बनी भौंर थली रुचि मैं न मवास है ॥ सो मदनेसजू सीतल मंद सुगंधित पौन हू गौन प्रकाश है ॥ वाग घनो है । घनी वनी कुंज विदेशी तुम्हें सव भांति सुपास है ॥ हरिजस रसिक सुजान हित कियो ग्रंथ चित धारि । होय शब्द जो दोष जुत लीजौ सुमति संभारि ॥ इति श्री काव्यामृत प्रवाह समाप्तम शुभम् मिती चैत्र वदी नौमी संवत् १९३९ वि० लिखी चैनू वनिये ने—

विषय—इस ग्रंथ में प्रथम मंगला चरन पुनः गणपति वंदना और रामजी के रूप आदि के कवित्त सवैया वर्णित हैं । फिर श्री कृष्ण जीकी लीला, सुंदरता और षट् ऋतुओं का वर्णन है ।

टिप्पणी—इस ग्रंथ के रचयिता गौरीशंकर भट्ट मसवान पुर जिला कानपुर निवासी थे। इनके पिता का नाम ललता प्रसाद था। इसको इस प्रकार वर्णन किया है:—सुरसरि रविजा मध्य की भूमि महामुदि दानि। जाको अन्तर वेद कहि सब जग रह्यो वखानि॥ तेहि थल में मसवान पुर सुभग सोभ सरसात। भट्ट सदावर्ती वसत अट सेला विख्यात॥ तेहि कुल मन्नालाल में भट्ट सवै गुण धाम॥ परम प्रीति सिय राम पद करै सदा सुभ काम॥ तनय भये तिनके चतुर अति लालता प्रसाद। सुमति सराहन जोग जे करत सदा प्रियवाद॥ गौरीशंकर नाम मैं तिनको तनय अपान॥ सुमति कविन को देखि पथ कीन्हों कछुक वखान॥ इस कवि ने संग्रह भी किया और स्वयं कवि भी था। लिपिकाल संवत् १९३९ वि० है।

संख्या १०१ सी. ऋतुराज शतक, रचयिता—गौरी शङ्कर (मसवानपूर, कानपुर), कागज—पतला, पत्र—३२, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८४, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९३९ = १८८२ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर दीनपाल सिंह राठौर, स्थान—झाझामऊ, डाकघर—उमरगढ़, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः॥ अथ ऋतु राज शतक लिख्यते (वसंत वहार)॥ मंगला चरण दोहा॥ फूलि उठत अंग अंग सु तरु लै सुपमा सुप साज। आय जात हिय में जवै स्याम चरण ऋतु राज॥ १॥ डोलत कोकिल मद भरे चलत भौंर चहुं ओर। विहरत अपर विहंग वर ऋतु पति आगम जोर॥ २॥ मन हरन॥ द्रुमन लपेटे लता तनत वितान मानौ फूलना झरत महि फरस परै लगी॥ चातक न होंहि वंदीजन गुन गान कर तीतर चकोर चमूंचटक चरै लगी मोर नहि बोलें या वसंत रितु आगम की वन में गंभीर बीर नौवत झरै लगी॥ ३॥

अंत—लीला अद्भुत लोक हित करत अलौकिक आप। वसहु जुगुल प्रभु मो हिये हरि मन की संताप॥ ७॥ रंग भीने पट सो सदा रहहु हृदय लपिटाय। प्रेम दास की आस वस प्रिय पूरन ह्वै जाय॥ ८॥ सोरठा—सव चैतन्य सरूप भूमि लता द्रुम गुल्म तृण। धारि रहे जड़ रूप सुन्दर स्याम विहार हित॥ इति श्री ऋतु राज शतक संपूर्ण लिखा राम अधार मिश्र स्वपठनार्थं आश्वनि शुक्ला नौमी संवत् १९३९ वि०॥

विषय—वसंत बहार वर्णन।

संख्या १०१ डी. संगीत की पुस्तक, रचयिता—गौरीशङ्कर भट्ट, मसवानपूर (कानपुर), कागज—देशी, पत्र—४४, आकार—६ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला गूजरमल, स्थान—गढ़हिया, डाकघर—उमरगढ़, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः॥ अथ सांगीत ग्रंथ लिख्यते॥ रात्रि के गाने योग्य॥ समय सूर्य अस्त॥ वनते आवत कुंवर कन्हाई॥ वंसीवट की मग में सजिनी वंशी तान वजाई॥ भई सांझ उड़नाथ उदित भये गोरज अंवर छाई॥ ऐंता पैंता मना मन सुखा संग

राजत वल भाई ॥ श्यामल गौर मनोहर जोरी विधि निज हाथ वनाई ॥ कटि नीलो पीरो पट राजत उर वनमाल सोहाई ॥ सुनत सखी इनहीं सों लागी या ब्रज की ठकुराई ॥ जसुधा मात आरती साजी उर आनंद अधिकाई ॥ सिंह जुझार जुगुल पद पंकज छवि उरमाहिं समाई ॥ १ ॥

अंत—(गजल धुनि परज ताल गजल) छोड़ि सब भ्रम जाल तुम नंदलाल को ध्याया करो ॥ और श्यामा श्याम के पूरे चरित गाया करौ ॥ सोहवते वद छोड़कर यह गौर करके देख लो। जो हैं सेवक श्याम के उनके निकट जाया करौ ॥ तुम नसीहत सज्जना की दिल लगाकर नित सुनौ ॥ सिर्फ सुनने से है क्या कुछु काम में लाया करौ ॥ जो सनेही वन्दौं के उनकी सुलह में मत रहौ। मक्र दुनियां छोड़ हरि चरनन में शिर नाया करौ ॥ वैठते उठते हमेशा ऐश और आराम में। नाम श्यामा श्याम का तुम भूल मत जाया करौ ॥ दास सिंह जुझार प्रभु का नास अपरंपार है। नाम लेकर श्याम का आनंद उपजाया करौ ॥ छोड़ि सव जंजाल० ॥

विषय—इस ग्रन्थ में सूर्य अस्त से रात्रि के ३ से ३॥ तक के राग रागिनी लिखी हैं।

संख्या १०१ ई, संगीत रत्नाकर द्वितीय भाग, रचयिता—गौरीशंकर मसवानपुर (कानपुर), कागज—देशी, पत्र—२६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३१, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—कवि विश्राम सिंह, स्थान—भवनियापुर, डाकघर—सरौढ़ा, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ सांगीत रत्नाकर लिख्यते ॥ रात्रि समय गाने योग ॥ ध्वनि गौरी वृन्दावनी ॥ ताल धीमा ॥ समय सूर्यास्त ॥ वनते आवत कुंवर कन्हाई ॥ वंशीवट की मग में सजिनी वंशी तान वजाई ॥ भई सांझ उडुनाथ उदित भये गोरज अंवर छाई ॥ ऐंता पैंता मना मनसुखा संग राजत वलभाई ॥ श्यामल गौर मनोहर जोरी विधि निज हाथ वनाई ॥ कटि नीलो पीलो पट राजत उर वनमाल सोहाई ॥ सुनहु सखी इनहीं सों लागी या व्रज की ठकुराई ॥ जसुधा मात आरती साजी उर आनंद अधिकाई ॥ सिंह जुझार जुगुल पद पंकज छवि उर मांहिं समाई ॥

अंत—नाम श्यामा श्याम का तुम भूल मत जाया करौ ॥ दास सिंह जुझार प्रभु का नाम अपरंपार है। नाम लेकर श्याम का आनंद उपजाया करौ ॥ छोड़ि सव जंजाल तुम नंद लाल को जाया करौ ॥ इति श्री सांगीत रत्नाकर संपूर्ण समाप्तः

विषय—प्रत्येक धुनि व ताल व समय के गाने वर्णन हैं।

संख्या १०१ एफ. संगीत विहार, रचयिता—गौरीशंकर, (मसवानपुर, कानपुर), कागज—विदेशी, पत्र—१२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२४=१८६७ ई०, लिपिकाल—संवत् १९३६=१८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर जवाहरसिंह, स्थान—खेतूई, डाकघर—मुरादाबाद, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ सांगीत विहार लिख्यते ॥ ध्वनि प्रभाती ॥ ताल इक ताल (समय प्रातःकाल) ॥ जय जय गण राज देव भक्तन सुखकारी ॥ शंकर सुत सिद्धि सदन सुन्दर गज राज वदन । दीन वन्धु एक रदन कोटि विघन हारी ॥ शोभित शशि वाल भाल राजत गल मुकुत माल । शुंड दंड वल विशाल संतन हित कारी ॥ वंदत नित प्रति सुरेश गावत गुण गण महेश । ध्यावत तव नाम शेष ब्रह्मा मुख चारी ॥ मोदक प्रिय मोद करण सुयश भरण विपति हरण ॥ तुव उदार चरन शरन शंकर वलि हारी ।

अंत—जमुना के तीर भीर बीर लै अहीर की । रोकै गली छली भली चली न नीर की ॥ जोरैं मरोरि भौहैं सोहं सोहे वीर की ॥ राखै न नेक धीर कौन हीर पीर की ॥ ललिते जु लोभ सोभ सोभं अटक रही ॥ तैसी तनी० ॥ इति श्री सांगीत विहार संपूर्ण समाप्ता लिखतं राम लाल वनियां शिव गंज सावन मास शुक्ल पक्ष दशमी संवत १९३६ वि०

विषय—समय समय के एवं ऋतुओं के अनुकूल गाने योग्य पद लिखे गये हैं ॥

संख्या १०१ जी. वीरविनोद, रचयिता—गौरीशङ्कर, (मसवानपुर कानपुर), कागज—देशी, पत्र—२८, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३६, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९४०=१८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर रतनसिंह, स्थान—कुटी चन्दसेन, डाकघर—रहीमाबाद, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ वीर विनोद लिख्यते ॥ मंगला चरन ॥ दोहा ॥ सुभग चरन गिरजा ललन मलन खलन के झुन्ड । विघन सघन तरु दलन को वलन फिरावत सुन्ड ॥ मेघ वरन तन रतन गन चन्द्र भाल भुज चारि । प्रन पालौ घालौ सदा श्री काली रिझ वारि ॥

अंत—जहां सुजन तहं प्रीति है प्रीत तहां सुख ठौर ॥ जहां पुष्प तहँ वास है जहां वास तहं भौर ॥ चारि वेद कर सार यह सुनि राखहु सब कोय । ढाई अक्षर प्रेम के पढ़ै सो पंडित होय ॥ इति श्री वीर विनोद संपूर्ण लिखतं चैनू वनिये फाल्गुन कृष्ण पक्षे शिवरात्री संवत् १९४० वि० ॥

विषय—वीरता के कवित्तों का वर्णन है ।

संख्या १०२ ए. चीरहरन लीला, रचयिता—गौरीशङ्कर (कपन सराय, जि० शाहजहांपुर) कागज—देशी, पत्र—२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—नारायणाश्रम कुटी, डाकघर—मोहनपुर, जिला—एटा ।

आदि—अथ काव्य चीरहरन लीला गौरी शंकर कवि कृत लिख्यते—कवित्त—एक समय उठि के सजनी जमुना जी नहान चली व्रज वाला । चीर उतारि धरे तट ऊपर कोउ नारि उतारत शाल दुशाला ॥ केलि करैं मिलि गोप सुता उत कन्ह चले उठि के ततकाला ॥ गौरी शंकर श्याम गये फिर चीर चुरावत भये नंदलाला ॥ १ ॥

अंत—दोहा—अरज हमारी सुनौ प्रभु कृष्णचन्द्र महराज । लज्जा मेरी राखिये गोपिन के सिरताज ॥ सोरठा—भूल चूक जो होय लीजौ सवै सुधारि तुम । मैं विनती कर जोरि वुद्धिहीन जानत नहीं ॥ दोहा—विप्रन को प्रनाम करि संतन को करि जोरि । दोहा—

विप्रन को प्रनाम करि संतन को करि जोरि। कृपा दृष्टि करिये सबै मति मोरी है थोरि॥ इति श्री चीर हरनलीला गौरीशंकर कृत लिख्यते। राम राम।

विषय—श्रीकृष्ण की चीरहरण लीला का वर्णन।

संख्या १०२ बी. गोवर्द्धन लीला, रचयिता—गौरीशंकर (कपन सराय, शाहजहांपुर), पत्र—२, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) १२, परिमाण (अनुष्टुप)—२४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९३० = १८७३ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा नारायणाश्रम कुटी, डाकघर—मोहनपुर, जिला—एटा।

आदि—अथ काव्य गोवर्धन लीला लिख्यते॥ कवित्त—एक समय व्रज गोप सबै मिलि इंद्र के पूजा को साज सम्हारो॥ कान्ह कहै गिरि पास चलौ सब खाइगो भोजन आज तुम्हारो॥ सो वरदान दिहौ सबका फिरि नाहिं करै कछु इंद्र हमारो॥ गौरी शंकर पास गये हरिश्याम तहां दोऊ रूप सम्हारो॥ १॥

अंत—आरत वैन कहै घनश्याम सों माया के जाल में भूलि परोजू॥ नाथ उतारि धरौ गिरि को जव इंद्र दोउ कर जोरि खड़ो जू॥ जो भव सागर पार चहौ मन क्यों न गोविंद को ध्यान धरो जू॥ गौरी शंकर टेरि कहै उर स्याम सदा मेरे वास करो जू॥ इति गोवर्धन लीला संपूर्ण लिखा गुरु वकस लाला नगरा धीर मिती मार्ग शीर्ष वदी तिथि अष्टमी संवत् १९३० वि०॥

विषय—श्री कृष्ण की गोवर्द्धन लीला का वर्णन॥

संख्या १०२ सी. मनिहारिन लीला, रचयिता—गौरीशङ्कर (कपन सराय शाहजहांपुर), पत्र—४, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३१ = १८७४ ई०, लिपिकाल—संवत् १९३४ = १८७७ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर राम सिंह, स्थान—दीनाखेड़ा, डाकघर—सारोन, जिला—एटा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः॥ अथ मनहारिन लीलालिख्यते॥ कवित्त—है विछुआ दोऊ पायन में अरु नूपुर ने अति शोर कियोरी॥ श्याम के सीस पै सारी लसै अरु पैधति घांघर लाल हरोरी॥ है दुलरी तिलरी नकवेसरि नौलख हार जड़ाऊ जड़ोरी॥ देखो सखी अनरीति करै हरि ने मनहारी को रूप धरोरी॥ १॥ नख सों सिख लौं सिंगार किये जब सुन्दर नारि को भेष कियोरी॥ कांच के जोरे अमोल डला विच कान्ह सम्हांरि के भेष कियोरी॥ नारि की चाल पै चाल चलैं मुसक्याय मनोहर चित्त हरोरी॥ वृषभान पुरा विच शोर कियो हरि ने मनहारी को रूप कियोरी॥ २॥

अंत—दीजै हमैं वकसीस प्रिया चलि जाऊं घरै नहि वेर करोरी॥ आजु की रैनि वसो सजनी हरि ने सुनि के, निज भेष करोरी॥ श्याम गये छलि के नंद ग्राम सो प्यारी महा उर सोच करोरी॥ गौरी शंकर टेरि कहैं हरि ने मनहारी को रूप धरोरी॥ ५॥ इति श्री मनहारी लीला संपूर्णम् समाप्ता लिखा राम चरन संवत् विक्रमादित्य १९३४ फागुन सुदी तीज॥ राम राम राम॥

विषय—श्री कृष्ण जी का मनिहारिन का रूप धारण कर श्री राधिका जी के यहां जाना।

संख्या १०२ डी. रहस पचासा, रचयिता—गौरीशङ्कर (कपन सराय, शाहजहां पुर), कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिव बिहारी गौड़, स्थान—जैतपुर, डाकघर—पिलवा, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ रहस्य पचासा लिख्यते ॥ कवित्त ॥ सांझ समय जमुना तट मोहन कुंज लता औ कदंब फरोजू ॥ आस भरो सब गोपिन को फिर आजु की रैनि में रास करोजू ॥ यों कहि श्याम लिये मुरली उत में शशि आय प्रकाश करौजू ॥ गौरीशंकर फूंकि वजावत कन्ह जबै ब्रज शोर परोजू ॥ १ ॥ कान अवाज परी ब्रजबाल के श्याम जबै कर वेनु धरोजू ॥ या वंसुरी नहिं धीर धरै घन श्याम सुनाय के प्रान हरोजू ॥ टेरि कहै सब गोप सुता घर छांड़ि सबै वन धाम करोजू ॥ गौरी शंकर होत विहाल सिंगार सबै ब्रज नारि करोजू ॥ २ ॥

अंत—चीर चुराय दियो वरदान सो स्याम कहैं सुनु गोप कुमारी ॥ जो अभिलाख हती ब्रजबाल के कान्ह सबै करि केल उवारी ॥ आनंद सों हरिरास कियो निज धाम गईं ब्रज वृषभान दुलारी ॥ गौरी शंकर भक्ति करो क्यों न श्याम सहाय करेंगे तुमारी ॥ ५ ॥ दोहा—रास करो गोपाल ने देखत होत अनंद। प्रात गईं सब निज भवन उर राखे ब्रज चंद ॥ इति श्री रहत पचासा संपूर्ण समाप्तः संवत् १९३६ वि० ॥

विषय—श्री कृष्णजी की रास लीला के पचास कवित्त लिखे हैं ॥

संख्या १०२ ई. श्यामविलास, रचयिता—गौरीशङ्कर (कपन सराय, शाहजहांपुर), पत्र—२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५७०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९३३=१८७६ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला भगवती प्रसाद, स्थान—जैलाल के नगरा, डाकघर—नदरई, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ श्याम विलास लिख्यते ॥ दोहा ॥ प्रथमहिं सुमरि गणेश को शारद को शिर नाय। राधा कृष्ण विलास में चित्त दीजे मन लाय ॥ १ ॥ शहर शाहजहां पूर में कपन सराय सर नाम। ब्राह्मण कुल में जन्म है गौरी शंकर नाम ॥ २ ॥ कवित्त—सांझ समय जमुना तट मोहन कुंज लता औ कदंब परोजू ॥ आस भरो सब गोपिन को फिरि आजु की रैनि में रास करोजू ॥ यों कहि श्याम लिये मुरली उत में शशि आप प्रकाश कियो जू ॥ गौरी शंकर फूंकि वजावत कान्ह जबै ब्रज शोर परोजू ॥ ३ ॥

अंत—काम सतावत मोहि पिया जब आनि खड़ी हम होहिं दुवारे। हार हमेल गरे बिच सोहत भामिनि नयन दिये कजरारे ॥ अकुलात हृदै चहुंओर चितै जब कंथ विना सखि खात पछारे ॥ गौरी न मानत है पपीहा घर पीउ नहीं पिउ पीउ पुकारे ॥ ५ ॥ इति श्री श्याम विलास संपूर्णम् लिखतं गौरी हेलवाई कटरा शाहजहां पूर बीच माघ मासे शुक्ल पक्षौ तिथौ दश्याम संवत्सरे विक्रमादित्ये १९३३ राम राम राम ॥

विषय—कृष्ण चरित्र संक्षेप से लिखा है।

संख्या १०३ ए. मंगल आरती, रचयिता—गल्लू महाराज (व्रन्दावन), कागज—देशी, पत्र—६२, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८७७ = १८२० ई०, प्राप्तिस्थान—अद्वैत चरण जी गोस्वामी, स्थान—घेरा राधा रमन, डाकघर—व्रन्दावन, जिला—मथुरा।

आदि—अथ मंगल आरती लिष्यते। राग भैरव मंगल आरती कीजै भोर। मंगल राधा जुगल किसोर। मंगल जनम करम गुन गुन मंगल मंगल जसोदा माषन चोर। मंगल मुकट वेण बन माला मंगल रूप रम्यौ मन मोर। जन भगवान जगत में मंगल मंगल मूरत नंद किशोर ॥ १ ॥ मंगल आरती कीजै प्रात मंगल गोपी मंगल ग्वाल मंगल नंद जसोमत मात मंगल बृज वृंदावन यमुना मंगल मुरली शब्द रसाल रामहरी मंगल नंदलाल मंगल राधा सपिन सुहात। २। मंगल आरती बृज मंगल की करिये मंगल रूप निहारि। मंगल बृज मंगल वृन्दावन मंगल दायक जमुना वारि मंगल गोपी गोप धेनु हित गिरि गोधन मंगल विस्तारि। मंगल मुरली धुन आनंद घन मंगल गुन लीला उरधारि।

अंत—राग पमाच। वोन दस दन भूल जिन जाय तो सों रही समझाय। वो तेरी य बात चलत घर घर मैं रही पै सकल बृज छाय। वह रसिया रिझि वार रूपकौ तु सुंदर वर अति हीं सहज सुधाय। ईछाराम गिरधर चित बन में लेहै चित्त चुराय। राग विहागरौ। कासौ कहिये यह बात नंद नंदन बिन देषे सजनी वोन महा अकुलात। बदन सरोज बड़ी बड़ी अखियां सुभग सांवरे गात। कोट्य कंद्रप अंग अंगमा वरनत वरनी न जात लागी लगन सकुच गुरजन की कैंसे भयै दिन रात ईछाराम गिरधर मुष निरषत मेरे युगन अघात। राजिव नैंन ललोही तेरी चितबनि पर हरिबस कीनी। दीरघ जमला विलोलकता छन तिन मधिक जरा दियो। भोहं धनुष चंद सो बदन कूंचन सो गात तेरी हीयो। कमल कलीसी मानो अति छबि राजत तानसेन के प्रभु रीझि बूझकर बोलवे कौनि मलीयो २ राग माल कोस चौताल। काधे कामर कारी प्रीत पिछोरी ओर कटि सेली वाधें मोर मुकट कर मुरली विराजत टोना से पढ़ पढ़ सखी विरह रूप आराधे २ मिती वैशाष शुक्ल ३ संवत् १८७७।

विषय—श्री कृष्ण की मंगला आरती संबंधी पदों का संग्रह।

संख्या १०३ बी. सुरमावारी, रचयिता—गल्लू महाराज (वृंदावन), कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—७ × ५ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—५८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९१० = १८५३ ई०, प्राप्तिस्थान—अद्वैतचरण जी गोस्वामी, स्थान—घेरा राधारमन जी, डाकघर—व्रन्दावन, जिला—मथुरा।

आदि—अर्थ छदम लिख्यते। दोहा। भये केउ दिन प्रिया को गये बाप के धाम। नैना तरसत लालके छिन न लहत विश्राम। सुरमा वारी वेष सजि गये भानु के गाम। झोरी कंधा डारि के बनी छवीली बाम। भूप द्वार की गली में फेरी देत पुकारि। सुरमा मिस्सी मधुर धुनि मनु कोकिल झंकारि। पुरवासी छकि जकि कहैं नषशिष छबिहि निहारि।

रूप छलावा है किधौं सुरमा वारी नारि। प्यारी धुनि सुनि मोहनी खिरकी झांकी आइ। ललिता सों मुसकनि कह्यो याको लेहु बलाइ।

अन्त—ललितादिक सब बैठिकैं करत छदम की बात। डोरी पंखा खचैया की गहि खैंचत जात। अहो विशाषे लाल को नेहन बरन्यो जात। एक प्राण ह्वै रहे थै देह न दोइ सहात। छिन कवि छुखो क्यों सहैं जिनकी श्रैसी प्रीत। तन मन हारै परस्पर यह करि मानी जीत। इनको सुष हम सबिन को जीवन प्राण अधार। अलि दंपति के प्रेम पै तन मन जिय बलिहार गौर पछकी पंचमी भृगुवासर वैसाष। संवत् नभ ससि पंड जुग फली चित्तन रुसाष। इति सुरमा वारी संपूर्ण पदराग।

विषय—श्री कृष्ण की छद्म लीला।

टिप्पणी—पुस्तक में ग्रंथकर्ता का नाम नहीं है। परंतु खोज से पता चला कि इसके रचयिता वृन्दावन के एक प्रसिद्ध कवि और गोडीय संप्रदाय के आचार्य थे। उनका नाम गल्लू जी महाराज उपनाम श्री गोस्वामी गुण मंजरी दास जी था। इनका वर्णन नवभक्तमाल नामक ग्रंथ में श्री गोस्वामी राधाचरणजी ने किया है। ये (गल्लू जी महराज) गोस्वामी राधा चरण जी के पिता थे।

संख्या १०४ (इस संख्या का विवरण-पत्र लुप्त हो गया है)।

संख्या १०५ ए. परतत्व प्रकाश, रचयिता—गणेश (सूहे की गली, आगरा), कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० शिव शर्म्मा, पूर्व हेडमास्टर मारहरा, ग्राम—धूमरा, डाकघर—सरोद, जिला—एटा उ० प्र०।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ परतत्व प्रकाश लिख्यते॥ दोहा—ब्रह्मादिक सब देवता जिनको करत प्रनाम—सो शिव सुत मेरो करौ सवही मनके काम॥ १॥ जाके गुण गण गणत हू शेष न पावत पार। सो शिव सुत परब्रह्म है सब देवन को सार॥ २॥ सस्कृत शब्द अपार लषि भाषा कहूं बनाइ। जेहि सुनि कै जिय समुझि कै भव सागर तरि जाइ॥ ३॥ जगन्नाथ जाको गुरु ताको नाम गणेश रामचन्द्र सुत परम जड़ सो प्रसिद्ध सब देश॥ ४॥ ताने मन में यह रच्यो नत्थामल के हेत। ताहि प्रसिद्धि करयो चहै जासों जीव सचेत॥ ५॥ माथुर जाति सुबुद्धि अति सांवलदास प्रसिद्ध॥ ताके त्रय बेटा भयें जाके अतिहि रिद्धि॥ ६॥ ताको मध्यम पुत्र शुभ नत्थामल जेहि नाम सो गणेश पति के चरण शरण गयो सुप धाम॥ ७॥ जैसे व्यवहारी सकल निसि दिन निज व्यवहार॥ मन लगाइ के करत है तिमि तुम ब्रह्म विचार परम आत्मा ब्रह्म निज एक अषंड अपार। ताके विन जाने कोऊ नहीं होत भवपार॥ ९॥

अंत—जैसे सैनहिं जान है परै अंध भवकूप। झूंठ छाड़ि सच ग्रहण करि जथा रीति है सूप॥ १०॥ ग्रंथ अलौकिक यह रच्यो परको तत्त्व प्रकास। पूरण कृपा जापै भई सो जानै हरिदास॥ ११॥ सहे वाली जो गली नगर आगरे वीच। तहा वैठ कै यह रच्यो खोटा कहि है नीच॥ १२॥ इति श्री परतत्व प्रकास ग्रंथ संपूर्ण समाप्तः लिखा शिव वालक विद्यार्थी आगरे का रहने वाला॥ माघ सुदी पंचमी संवत् १९२० वि० राम राम राम।

विषय—इन्द्रिय-ज्ञान उपदेश किया है ।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता गणेश जी आगरा निवासी थे । लिपिलाल संवत् १९१० वि० है ।

संख्या १०५ बी. परतत्व प्रकाश, रचयिता—गणेश (आगरा), कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—६ X ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१९२१, लिपिकाल—१९३२ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० रामदत्त ज्योतषी, ग्राम—नील का पुरा, डाकघर—सिदपुटा, जिला—एटा, (उ० प्र०)

आदि—१०५ ए के समान ।

अंत—नाम रुप ये द्वार हैं मंद बुद्धि अनरुप । जैसे सैनहिं जान है परैं अंध भव कूप । झूठ छाड़ि सच ग्रहण करि जथा रीति है सूप ।। ग्रंथ अलौकिक यह रच्यो परको तत्व प्रकाश पूरण कृपा जापै भई सो जानै हरिदास । सूहे वाली जो गही नगर आगरें वीच तहां बैठि के यह रच्यो खोटो कहिहै नीच ।। संवत् विक्रम जानिये उनइससै इक्कीस । आश्विन सुदि की पंचमी कृपा करी जगदीश । भूल चूक याकी सबै लीजौ चतुर सुधारि । कविराजन की रीति यह रहैं सदा उर धारि ।। इति श्री परतत्व प्रकाश गणेश कृत संपूर्ण समाप्तः लिखा शिव गोपाल सारस्वत ब्राह्मण आगरा नमक मंडी का रहने वारा मार्ग शीर्ष संवत् १९३२ वि० ।

विषय—परब्रह्म का विचार संसार में मुख्य माना है ।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता गणेश जी थे । इनके गुरु का नाम जगन्नाथ और पिता का नाम रामचंद्र था । इन्होंने वह ग्रंथ सावल दास जो जाति के माहुर थे, पुत्र नत्थामल के हेत यह ग्रंथ रचा । गणेश जी आगरा किवासी थे । निर्माण काल सं० १९२१ वि० और लिपिकाल सं० १९३२ वि० है । इसको इस प्रकार लिखा है ।

जगन्नाथ जाको गुरु ताको नाम गणेश रामचंद्र सुत परम जड़ सो प्रसिद्धि सव देश ताने मन में यह रच्यो नत्था मल के हेत ताहि प्रसिद्धि कन्यो चढ़े जासो जीव संवत माहुर जाति सुबुद्धि अति सावल दास प्रसिद्धि ताके भय वेटा भये जाके अति ही रिद्धि ।। ताको मध्यम पुत्र शुभ नत्था मल जेहि नाथ । सो गणेशपति के चरण शरण गयो सुष धाम । सूहे वाली गली नगर आगरे वीच ।। संवत् विक्रम जानिये उनइस सै इक्कीस । आश्विन सुदि की पंचमी कृपा करी गण ईश ।।

संख्या १०६, सत्यनारायण की व्रत कथा भाषा, रचयिता—गणेशदत्त, पत्र—२४' आकार—८ X ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—पंडित बिहारीलाल शुक्ल, स्थान—गड़ही, डाकघर—अमेठी, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्री गणेशायनमः ।। लिष्यते सत्य नारायण की कथा भाषा ।। दोहरा ।। बन्दे गणधिप गुरु गिरा । हरि हर दिज सव सन्त । सत्य देव की यह कथा । भाषा करि बृतन्त ।। चौपाई ।। एक समय नैमष के माहीं । सौनिक कही सूत के पाहीं ।। नाथ कथा

तुम बहुबिधि वरनी। जप तप जोग कठिन अति करनी ॥ लघु श्रम किये महाफल होई। अब कहि कथा वखानहु सोई ॥ कहा सूत कहिये मुनि ज्ञानी। शौनिक प्रति विष्णु बखानी।

अंत—छन्द ॥ पावै सकल फल करै जो मन लाय वृत पूजन करै। धन हीन सुष संपति लहै निश्चय दुख दारिद को हरै ॥ जो कहै पुलिकित हरि कथा। नित सुवृत नासत अघ सही। महिमा अमित है याहि वृत करि कौन मुख से हम कही ॥ इति श्री पं० गणेश दत्त विरचिते श्री रेवा खंडे सत्य नारायण वृत कथा भाषा सम्पूर्णम् ॥ संवत् १६४० कौ साल भादों वदी अष्टमी ॥

विषय—सत्य नारायण की कथा का भाषा पद्यानुवाद।

संख्या १०७ ए. बारह मासा विरहिनी, रचयिता—गणेश प्रसाद (फरुखाबाद), पत्र—९, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६, रूप – नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९२५ = १८६८ ई०, प्राप्तिस्थान–कीसन सहाय, स्थान—झाझांनी, डाकघर—जलाली, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ विरहनी का बारा मासा लिख्यते करै रो रो के यादगारी, तसब्बर में पीतम प्यारी ॥ लगा जबसे असाढ़ माई, गजब गम की वदली छाई ॥ चले वन वैरिन पुरवाई; दमकि रही दामिन दुखदाई ॥ दोहा—मोर शोर कोयल करैं रही कोकिला कूक। पिया पिया रट रहा पपैया उठत कलेजे हूक ॥ रहै चश्मों से अश्क जारी। तसब्बर में पीतम प्यारी ॥ १ ॥ शुरू सामन धड़के छतियां। याद आवैं उनकी वतियां ॥ लिखों किन सौतिन को पतियां। भई पिय बिन वेरिन रतियां ॥ दोहा—कर सिंगार झूलै सखी पहिर कुसुंभी चीर। कंचन थार संजोय गुजरियां चली वीर के तीर ॥

अंत—वहुत कुछ करी मजेदारी तसब्बर में प्रीतम प्यारी ॥ जेठ कुल करी ऐश आराम फंसे दिल दो उल्फत के दाम ॥ फरुखाबाद शहर सरनाम मका है कूचा सालिक राम ॥ दोहा—लेख राज राजी हुए कर मालिक की याद। वारह मासा मदन मनोहर कहैं गनेश परसाद ॥ मिहर भगवान कलम जारी तसब्बर में प्रीतम प्यारी ॥ इति श्री वारह मासा विरहिनी संपूर्ण समाप्तः जेठ सुदी नौमी संवत् १९२५ वि०।

विषय—विरहिनी का बारह मासा लिखा है ॥ आसाढ़ से फाल्गुन तक विरहिनी अपने पति के विरह में दुखी रही। चैत्र में पति को परदेश में जाकर जोगन बनकर ढूँढ़ा फिर आनंद से रही।

टिप्पणी—इस ग्रंथ के रचयिता गणेश प्रसाद फरुखाबाद निवासी थे इनके पिता का नाम लेख राज था। ये १९०० वीं शताब्दी के अंत में हुए हैं। इन्होंने अपने निवास स्थान के लिए इस प्रकार लिखा है—फरुखाबाद शहर सरनाम मका है कूंचा सालिक राम ॥

संख्या १०७ बी. भ्रमरगीत संवाद, रचयिता—गणेशप्रसाद (फरुखाबाद), कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण

(अनुष्टुप्)—६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पण्डित छीतनमल मुदर्रिस, स्थान—पिथौरा, डाकघर—सिकन्दरा राऊ, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—अथ भ्रमर गीत ऊधौ गोपिन कौ संवाद लिख्यते ॥ कुछ कपट प्रीति की रीति कही ना जाती ॥ लिखि लिखि पाती में जोग जरावति छाती ॥ सुनि सुनि ऊधो के वैन नयन भरि आये ॥ किस कारन तजि हरि हमें द्वारिका छाये ॥ तजि लोक लाज कुल कान भवन विसरावे ॥ कुब्जा के कीने काज कृष्ण मन भाये । दिन रैन चैन ना पड़े नींद ना आती । लिख लिख पाती में जोग जरावति छाती ॥ हरिमाखन चाखन हार छाछ कुविजा सी । कैसे मन मानी कृष्ण की दासी ॥ इत राधा वल्लभ नाम लेत व्रज वासी । उत कुबरी कृष्ण कहाय करावत हांसी ।

अंत—सखा तुम समझी मन माहीं । डरिन हम गोपिन से नाहीं ॥ परी ऊधो पर परछाहीं । भक्ति गोपिन की चित चाही ॥ दो०—निरत करन ऊधो लगे निरखि सखिन की रीति । लघु गनेश परसाद भनत यम भ्रमर गीत नव नीति ॥ मदन मोहन मन वसत मुदाम सखिन की कहियो सीता राम ।

इति भ्रमर गीत ग्रन्थ संपूर्ण ॥

विषय—राग रागनियों में ऊधो गोपी संवाद वर्णित है ।

संख्या १०७ सी, दानलीला, रचयिता—गणेश प्रसाद (फरुखाबाद), कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९२२ = १८६५ ई०, प्राप्तिस्थान—छीतरमल, स्थान—पिठौरा, डाकघर—सिकन्दर राऊ, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ दान लीला लिख्यते ॥ मेरी लूटि लूटि दधि खाई हटकौ मनमोहन माई ॥ मैं गई आज दधि वेचन माई वंसीवट वृंदावन ॥ मेरे निकट आय मनमोहन लगो बहियां पकरि झकझोरन ॥ छंद—कहा खूब कितना समझाया नहिं मानत हटकी ॥ चीर फार चोली मसकाई पकड़ बांह झटकी ॥ ग्वाल बाल आ गये मेरी पट खोली घूंघट की ॥ लपक लपक के उछल उछल के फोड़ दई मटकी ॥ टूट जिकर जैहैं वंशीवट की हकीकत सुन नागर नटकी ॥

अंत—छंद—सीस मुकुट मकराकृत कुंडल वैजंती माला । नंदनदन छवि निरख पड़ी चरनों में व्रजवाला ॥ देने लगी असीस जिये तेरो माई गोपाला ॥ लेखराज फरजंद चंद ये सांचे में ढाला ॥ टूट ॥ करी वंदिश गनेश प्रसाद वतन है शहर फरुखाबाद ॥ हरि चरन भक्ति जिन पाई हटकौ मन मोहन माई ॥ इति श्री दानलीला संपूर्णम् लिखा कालिका प्रसाद नेरा निवासी संवत् १९२२ वि० ।

विषय—श्रीकृष्ण की दानलीला का वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता गणेश प्रसाद फरुखावाद निवासी थे। इसको इस प्रकार लिखा है :—देने लगी असीस जिये तेरी माई गोपाला । लेखराज फरजंद छंद ये सांचे में ढाला ॥ करी वंदिश गनेश परसाद वतन है शहर फरूखाबाद ॥ लिपि काल संवत् १९२२ वि० ।

संख्या १०७ डी. देवस्तुति संग्रह, रचयिता—गणेश प्रसाद (फरुखाबाद), पत्र—१२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९१८ = १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—किसन सहाय, स्थान—झाझानी, डाकघर—जलाली, जिला—अलीगढ़।

आदि—ॐ श्री गणेशाम्बिकाभ्यांनमः ।। श्री देव अस्तुति ग्रन्थ लिख्यते ॥ श्री दुर्गा अस्तुति ।। भवानी भजौ महम माई भक्त भय भंजन सुख दाई ।। ताप त्रय मोचनि लोचन तीन । वदन लखि रवि शशि लगत मलीन ॥ चतुर भुज सोहै प्रवल प्रवीन सकल जिन खल खंडन कर दीन ॥ दोहा—श्याम केश सुन्दर मुकुट तिलक मृगा मद भाल ।। अंकृत आभूषण अंवर तन उर मणिमाल विशाल ॥ सिंह वाहन सुंदर ताई भक्तभय भंजन सुख दाई ।। प्रथम नरसिंह रूप धारो हिरना कश्यप को संघारो ।। वली वावन वलि छल डारो राम हुइ रामन को मारो ।।

श्री गंगा जी की अस्तुति ॥ भव तरनी कलि मल दुख हरनी जग जय सुर सरिता सुख दाई ॥ दरस प्रताप ताप त्रय मोचनि पाप आप ते जात नसाई ॥ × × × खातो खतम करो जमपुर को पुनि पापिनि की वही वहाई।। करि व्यौहार विष्णु ब्रह्मा पुर शिवपुर में हुन्डी भुगताई ॥ शोभा अमित जाय नहिं वरनी कीरति लोक लोक में छाई ॥ मागे दास गणेश देहु वर राधा कृष्ण भक्ति मन भाई ॥ इति श्री देव अस्तुति संग्रह ग्रन्थ संपूर्ण समाप्तः लिखत राम औतार दुवे ग्राम वेदी पुर परगनो सिकंदरा राऊ जिला अलीगढ़ माह महीना शुक्ल पक्ष त्रयोदशी संवत् १९१८ वि० ॥ राम राम राम जै भगवती माई की ॥

विषय—इसमें देवी, गणेश, शिव, राम, कृष्ण, हनुमान, सूर्य आदि की स्तुतियाँ लिखी हैं।

संख्या १०७ ई. गायन संग्रह, रचयिता—गणेश प्रसाद, कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२४, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला गूजरमल, स्थान—गढ़िया, डाकघर—उमरगढ़, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ गायन संग्रह गणेश कृत लिख्यते ॥ ख्याल रंगत वंशी करन ।। नर्गिस चश्म गुल वदन उमर है वाली घूंघट की ओट कर चोट मोहनी डाली ॥ अलवेली बांकी अदा दार भामिनि है करके सोलह सिंगार खड़ी कामिन है ।। जोवन मिसाल दम दमक रही दामिन है दिल है मेरा मुश्ताक खुदा जामिन है ॥ क्या फवत है गुंचे दहन पान की लाली घूंघट की ओट कर चोट मोहनी डाली ।। १ ।। इस कदर तेरे रुखसारो पर जोवन है जिस कदर फलक पर झलक माह रोशन है ।। क्या मदन की आमद वदन में नाजुक पन है मखमली मुलायम शिकम जिसम कुंदन है ॥ क्या अदा से काली नट नागिन लट काली ॥ घूंघट की० ॥ २ ॥

अंत—राग कालंगड़ा—दधि वेचन कुंजन आज गई सुनरी सजनी इक वात नई ।। जमुना निकट खड़े मन मोहन अजव अचानक भेंट भई ॥ वार वार वरजो नहिं मानत मटुकी

पटकि कर झटक दई ॥ चूमि चूमि मुख मदन मनोहर मौज भरी लपटाय लई ॥ दास गणेश निरखि नयनन छवि पूरन परमा नंद भई ॥

इति श्री गणेश कृत राग रागिनि संग्रह संपूर्ण लिखा मैयाराम खड़ैचा फागुन सुदी संवत् १९३६ वि० ॥

विषय—ज्ञानोपदेश वर्णन ।

संख्या १०७ एफ. हिन्डोला राधाकृष्ण, रचयिता—गनेशप्रसाद (फरुखाबाद), कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६×४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०, रुप—प्राचीन, लिपि— नागरी, लिपिकाल—संवत् १९१८=१८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—छीतरमल, स्थान—पिथौरा, डाकघर—सिकन्दराराऊ, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ हिंडोला राधा कृष्ण लिख्यते–पिया संग हिंडोला गोरी झूलैं वृषभान किशोरी ॥ सजि सजि सिंगार पिय प्यारी वनि चलीं व्रज की नारी ॥ यह पहिरि चूनरी सारी छवि अंग अंग उजियारी ॥

अंत—छंद–पूरन परमा नंद अधर मुख वंशी झन कारी ॥ मन मोहे चर अचर भनक सुनि शिव समाधि हारी ॥ लखि छवि हित हरि वंश परस पर सुख समाज भारी ॥ लेख राज सुत सदा जुगुल चरनन के हित कारी ॥ टेक ॥ मदनमोहन सुंदरताई रागिनी कथ गनेश गाई । टेक ॥ अति ललित छंद जिन कोरी झूलै वृषभान किशोरी ॥

इति श्री हिंडोला राधा कृष्ण संपूर्णम् लिखा मैकू लाल वनियां हाथरस निवासी चेला गणेश परसाद जू का ॥ राम श्रीकृष्ण राधा

विषय—राधा कृष्ण का हिंडोला वर्णन ।

संख्या १०७ जी, मलका मुअज्जम का दरबार देहली, रचयिता—गणेश प्रसाद (फरुखाबाद), कागज—देशी, पत्र—६, आकार—१०×८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९२४=१८६७ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला दीनदयाल पटवारी, स्थान—सराय रहीम, डाकघर—हबीबगंज, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ सहंसाही मलका मुअज्जम कैसर हिंद दरबार लिख्यते रंगत मोहनी राग विहाग ॥ खुदा ने दी जिसने पाई मिली मलका को सहंसाई ॥ मुल्क में किया वखूवी राज अदल हो रहा जहां में आज ॥ सजे सरपर सोने का ताज ताज ताजों की आप सरताज ॥ दो०—करें कोर नसकुल खड़े वड़े वड़े सरदार ॥ वैठी लंदन साह तखत पर लगे रहे दरवार ॥ चलन जिसका चेहरे साही मिली मलका को सहंसाही ॥१॥ लाट जंगी को वुलवाया हुक्म मलका ने फरमाया ॥ ताज दिहली को भिजवाया चला साहव जिहाज आया ॥ दो०—कलकत्ते से रेल में हुआ लाट असवार । चार पहर दस मिनट में देहली गया ताज सरकार ॥ लई राजों ने पेशवाई मिली मल्का की साहंसाही ॥ वदल पोशाक वरक रंगी चुरट साहव सवार जंगी ॥ रिसाला चला संग संगी लिये तलवार हाथ नंगी ॥ दो०—अंगरेजी वाजा वजा सव साविक दस्तूर ॥ गरर गरर गर गर गर गर गर वजै संग तंवूर ॥ सवारी कंपू में आई मिली मलका को सहंसाही ॥ मेम टिम टिम

सवार आतीं परी आलम को सरमाती ॥ झलक चेहरे की झलकाती चली डाले नक़ाव जाती ॥ दो०—सजी सेज गाड़ी बड़ी बेशुमार इकरंग। वैठे बाबा लोग माहरू अंगरेजों के संग ॥ विलायत नजर पड़ी भाई मिली मलका को सहंसाही ॥

अंत—जितने थे दरबार में खैर खाह सरकार। वे कीमत पोशाक वदन में तरह दार हथियार ॥ खिलत राजों को पहिराई मिली मलका को सहनसाई ॥ लेम्प रोशन चिराग वाले चले गोले औ गुब्वारे ॥ फलक में झलक रहे तारे ॥—दो०—अंगरेजी आला किला पेड़ खड़े मेदान। घन चक्कर चरखी महतावी छूटै जंगी वान ॥ कैद कैदिन की छुड़वाई मिली मलका को सहंसाही ॥ कैसरे हिंद छंद जोड़ा किला जिन भरतपूर तोड़ा ॥ जहां में जवरदस्त कोड़ा मुकाविल उदू नहीं छोड़ा ॥ दो०—शहर फरुखाबाद में कूंचा सालिक राम। कहै गणेश परशाद वल्द है लेख राज सरनाम ॥ मदद पर है गंगे माई मिली मलका को सहंसाई ॥ इति श्री ख्याल सहंसाही मलका मुअज्जमा कैसर हिंद दरवार देहली रंगत मोहनी राग विहाग संपूर्ण समाप्तं संवत् १९३४ वि०।

विषय—मलका मुअज्जमा कैसरे हिंद (महारानी विक्टोरिया) के समय में जो दरबार दिल्ली में हुआ था उसका वर्णन किया है।

संख्या १०७ एच. प्रेम गीतावली, रचयिता—गणेशप्रसाद फरुखावाद, कागज—देशी, पत्र—४०, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४००, रूप—अच्छा नहीं, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९२४ = १८६७ ई०, प्राप्तिस्थान—मौलाना रसूल खां काजी, स्थान—गांजीरी, डाकघर—सलेमपुर, जिला—अलीगढ़,

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ प्रेमगीतावली लिख्यते श्री शिवस्तुति राग भैरवी ॥ बारंबार पुकारत आरति मैं शिवशंकर सरन तिहारी ॥ पूरन ब्रह्म देव देवन के वृषपति चरन कमल वलिहारी ॥ जहं जहं भीर परी भक्तन पर तुम सहाय कीनी भय हारी ॥ लोचन तीन सकल भय मोचन सुख सागर सबके हितकारी ॥ सीस गंग अर्द्धंग उमा छवि सोभित मुंडमाल विषधारी ॥ नील कंठ तन भस्म चिता की ओढ़े नाग चर्म त्रिपुरारी ॥

अन्त—श्री गंगाजी की अस्तुति—राग विलावल—भवतरनी कलिमल दुख हरनी जय जय सुर सरिता सुखदाई ॥ दरस प्रताप तापत्रय मोचनि पाप आपते जात नसाई ॥ तारन को परवार भगीरथ आये विपुन समाधि लगाई ॥ × × खातो खतम करो यमपुर की फिर पापिन की वही वहाई ॥ करि व्यौहार विश्नु ब्रह्मापुर शिवपुर में हुन्डी भुगताई ॥ शोभा अमित जाइ नहि वरनी कीरति लोक लोक में छाई ॥ मांगे दास गणेश देहु वर राधा कृष्ण भक्ति मन भाई ॥ इति श्री गंगा अस्तुति संपूर्ण। इति श्री प्रेमगीतावली गणेश प्रसाद कृत संपूर्ण लिखा राम दास वैश्य ओमर फरुखावाद संवत् १९३४ वि०

विषय—देवी देवताओं की स्तुतियां एवं श्रीकृष्ण लीला।

संख्या १०७ आई. रागमनोहर, रचयिता—गणेशप्रसाद, फरुखाबाद, कागज—देशी, पत्र—३४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२; परिमाण (अनुष्टुप्)-

८५४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत्—१९२२ = १८६५ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा मेरूदास रामकुटी, स्थान—भीशमपुर, डाकघर—जलेसर, जिला—एटा।

आदि—अथ राग मनोहर लिख्यते ॥ ठुमरी भैरवी ॥ ढलेजात जुवनवां रे दिन दिन। उनहीं पर निसदिन ध्यान लगायो श्याम सुन्दर पर जियरा गमायो॥ दिनहीं रैन मोहिं तरफत बीती रात कटे तारे गिन गिन ॥ १ ॥ जो चाहे तरुवर की छैयां गौना लेन नहिं आये सैयां ॥ याही सोच मोहिं रहत है पलपल बीती जात बैस छिन छिन ॥ रूप सरूपके स्वांग उतारे विना वताये गुरू कर डारे॥ मान नहीं काहू को राखे गर्व किये चाहे जिन जिन ॥ ढले ॥ १ ॥

अंत—है रतन जड़ित कर कंचन की पिचकारी भर भर के मारै रंग अंग हरि नारी ॥ वंदिश गनेश परसाद कलम है जारी हैं शहर फरूखा वाद बसत व्रज नारी॥ देहु अमर भक्त वरदान ज्ञान अनमोली वृन्दावन वरसत रंग रची हरि होली ॥ लिखा रामचरन स्वपठनार्थ संवत् १९२२ वि० जै कृष्ण कन्हैया लाल की ॥ शिव शिव शिव ॥

विषय—इस ग्रन्थ मे ठुमरी, होली, गजल आदि राग रागिनियों का वर्णन है।

संख्या १०७ जे. राग रत्नावली, रचयिता—गणेश प्रसाद फरुखाबाद, कागज—अंग्रेजी, पत्र—२६०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९०५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९२० = १८६३ ई०, प्राप्ति-स्थान—पण्डित राममनोहर, स्थान—माधौगंज, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ राग रत्नावली दशावतार लिख्यते मंगला चरन ॥ लखनी रंगत मोहनी ॥ विदित लम्वोदर जगवन्दन। भजो गणपति गिरिजा नन्दन ॥ सीस राजत मणि मुकुट विशाल तिलक केशर को शोभित भाल ॥ कुटिल भृकुटी जुग नैन रसाल लसत उर नव रतन की माल ॥ दो०—गज आनन कुंडल श्रवन अरुण अधर छवि अंग ॥ एक दंत शोभा अनंत लखि लजत अनेक अनंग ॥ अंग राजत विभूत वन्दन भजो गणिपति गिरिजा नन्दन ॥ कपोलन पर घूंघट वारी जुगुल अलकै झलकै कारी ॥ फवन पीताम्बर की प्यारी मुदित मन चारि भुजा धारी ॥

अंत—काल करि लोचन विशाल गोपी नाथ जव, भीम सेन काल सो कराल ह्वै के लसै गो ॥ रथ ते उतरि वड़े गथ की गदा लै, रण पथ पै सवेगि डाटि तोदल में धसेगो ॥ दीरघ उदंड और दंडनि चपल करि, मंडल मही को धन ध्वनि करि निकसै गो ॥ थर थर धराधरा धर तवह्वै है। घर कौन को नसैगो अव कौन को वसैगो।

विषय—इस ग्रन्थ में दश औतारों की लीला का वर्णन है।

संख्या १०७ के. राम कलेवा, रचयिता—गणेशप्रसाद, (फरुखाबाद), कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९२६ = १८६९ ई०, प्राप्तिस्थान—पण्डित रामदत्त, स्थान—रायपुर, डाकघर—गोनमत, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः। अथ राम कलेवा लिख्यते ॥ रंगत वे नजीर-मुनि संग

मनोहर माई । सोहैं समाज रघुराई ॥ मणि मुकुट चमक चपला सी । छवि कोटि काम उपमा सी ॥ लखि श्याम गौर सुख रासी गये मोहि जनक पुर वासी ॥

अंत—छंद—नाग सुता गधर्व सुता अरु पक्ष सुता सारी ॥ राज वधू सुरं वधू वधू मिथला पुर की प्यारी ॥ लै लै नाम राम दशरथ को गाय रहीं गारी ॥ लेखराज सुत सदा चरन रघुवर की वलि हारी ॥ टूट ॥ मदन मोहन सुन्दर संवाद वंदिश गणेश परसाद ॥ अति ललित रागिनी गाई सोहै समाज रघुराई

इति श्री राम कलेवा संपूर्ण संवत् १९२६ वि० जेष्ठ सुदी ११ दशमी लिखी राम भरोसे ॥

विषय—धनुष भंग और राम सीता का विवाह वर्णन ।

संख्या १०७ एल. रुक्मिणी मंगल, रचयिता—गणेशप्रसाद (फरुखाबाद), कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण अनुष्टुप्)—४८, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८२४ = १८६७ ई०, प्राप्तिस्थान—पण्डित रामदत्त, स्थान—रायपुर, डाकघर—गोनमत, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ रुकुमिनी मंगल लिख्यते ॥ अथ लावनी रुकुमिनी मंगल रंगत वसीकरन राग भैरवी लिख्यते ॥ सुन सुन नारद के वचन परम सुख पाती । दुलहिन दुलहा को लिखत प्रेम की पाती ॥ कुंदन पुर भीशमक सुता सुंदरी माया । ताको मुख चंद निहारि चंद्र सरमाया ॥ तेहि वर विवाह शिशु पाल संग ठहराया ॥ धरि मौर सभा पति धूम धाम से धाया ॥ लखि दुख वरात रुकमिनी दुखित हो जाती ॥ दुलहिन दुलहा को लिखत प्रेम की पाती ॥ १ ॥ जो जन मंगल रुकमिनी प्रेम से गावैं । संसार सकल सुख पाइ मोक्ष फल पावैं ॥ लखि लेख राज आनंद सरन हो जावैं ॥ वंदिश गणेश प्रसाद भक्ति मन भावैं ॥ नैनन में नंद किशोर वसौ दिन राती ॥ दुलहिन दुलहा को लिखत प्रेम की पाती ॥ इति श्री रुकमिनी मंगल संपूर्ण समाप्तः ॥ संवत् १९२४ लिखी रामदास वैश्य ओमर फरुखाबाद ॥

विषय—कृष्ण रुक्मिणी का विवाह वर्णन ।

संख्या १०८. गंगपचीसी, रचयिता—गंग कवि, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८६० = १८०३ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर पीतम सिंह, स्थान—बेहना की नगरा, डाकघर—अलीगंज, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । भूत नाथ भव भीति विदारण भव भुजगाधिप हारं ॥ जटा जूट गंगाधर राजत धराधर विलसद गारं ॥ कलित कलाधर कलहा लाहल गल कलि कलुष विदारं ॥ शंभू शांभु सदा शिव शंकर भजुरे वारं वारं ॥ १ ॥ काशीनाथ चरण शरणांगं जनि मृत दुख विदारं ॥ शशि शेखर शिव शिवद शिवावर समदन दमन मुदारं ॥ भैरव भुजग विभूषित भूविद भुवनाधिप भव दारं ॥ भवानंद भव तारण शंकर भजुरे वारं वारं ॥ २ ॥ गंगपचीसी—गंगपचीसी मैं कहौं गौरिगनेसै ध्याय । सिव विरंचि को

सुमिरि कै रघुनंदन चितु लाइ ॥ भूषन वरनन मैं करौं सव सुनियौ चितु लाइ ॥ धर्म विराजै अंग मों सकल पाप कटि जाय ॥ अर्ज करौ महराज सों चरन पकरि सिरनाइ ॥ भव सागर मोहिं पारकर अपनी नांव चढ़ाय ॥ छंद—पायन पति पाय पोसि कटि कंकनी हीरा जड़े । जामा दुसाला पीत धोती रंग कुंकुम के परे ॥ दोऊ हाथ पहुंची मुद्रिका भुज नग लगे सव जगमगे ॥ एक हाथ भामिनि विराजै माल मोतिन की गरे ॥ मोती जजीरे छटा छूटैं जुलफैं कपोलन के तरे ॥ लाल अविर गुलाल सोभित स्याम सिर चीरा परे ॥ सुर सिद्धि की यह संपदा है असुद सब देखत मरे ॥ एक कर ललित को कर गहे एक कर राधे गरे ॥ सेस छवि नहिं जात वरनत काम लज्जित हैं वड़े । अव गंग साहेव सरनि आये सस जन्म के पातक हरे ॥ ४ ॥

अन्त—सीखे नहीं तुम्हरे उर मोहन वोलि कही अपने जियकी ॥ तुम नेकऊ नहीं उर लावत हो बिगरी वनता वृषभान पुरी की ॥ बोलाय सुनार गढ़ाय देहौं औ लगाय देहौं वहि तेन ठानी की ॥ पाई हती सो हिराय गई अब दाम कहौ सों धरौं दुलरी की ॥१॥ दो०—तव मन मों दाया करी विहंसे कृष्ण मुरारि। दुलरी अपने फेंट से लीन्हीं श्याम निकारि ॥ राधे जू के कंठ में वांधी अपने हाथ । तेहि पाछै मुरली मिलै चलौ हमारे साथ ॥ प्रभु पीतांवर से छोरिके राधे दोऊ कर लीन्ह । एक सखी सों मांगिके प्रभु को मुरली दीन्ह॥ उन दुलरी पाई आपनी उन मुरली पाई आप । कहत सुनत पातक हरै कटे अंग के पाप ॥ इति श्री गंगपचीसी संपूर्ण संवत् १८६० आषाढ़ मासे शुक्ल पक्षे बुध वासरे ॥

विषय—प्रथम शंकर स्तुति पुनः राधाकृष्ण का दुलरी-मुरली का झगड़ा वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता कवि गंग थे । इनका पता इस ग्रन्थ से कुछ नहीं चलता ॥ लिपिकाल १८६० वि० है ॥

संख्या १०९. नागलीला, रचयिता—गंगाधर, कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६०, अपूर्ण, रूप—पुरानी फटी दीमक खाई, पद्य, लिपि—नागरी, तीसरा पृष्ठ नहीं । रचनाकाल—सं० १८६० = १८०३ ई०, लिपिकाल—१९०६ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० रामभरोस गौड़, ग्राम—वीघापुर, डाकघर—टप्पल, जि० अलीगढ़ (उ० प्र०) ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ नाग लीला गंगाधर कृत लिख्यते ॥ दो० ॥ चरातन गौवन को धाये चलत प्रभु काली दह आये । गोप जल पिये और प्याये । पियत जल सब ही मुरझाये । दो० ॥ पीछे से आये कृष्ण जी सवही लिये जिवाय । निर्मल आज करु यमुना जल ग्वालन लेउं वचाय ॥ गेंद खेलत को प्रभु आये ग्वाल सव मिल करके धाये ॥ भेद काहू ने नापाये चरित गंगा धर ने गाये ।

अंत—निरनय जन पाता । वसत है जमुना में काली । नाथ के लाये वन माली । महीना फागुन का आया । कृष्ण के मन में अति भाया द्वादसी काली को जानो अठारा सै संवत् मानौ । दो० । ताके उपर ६० धरि गुनि लेउ चतुर सुजान । गंगाधर ने कथि गायो है संवत् का परमान । कृष्ण की कृपा भई भारी । सुनौ सव व्रज के नरनारी ॥ इति श्री नागलीला गंगाधर कृत संपूर्ण सुभम् ।

विषयः—श्री कृष्ण की नागलीला का वर्णन।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता गंगाधर थे। रचनाकाल १८६० वि० है इसको इस प्रकार लिखा है महीना फागुन का आया कृष्ण के मन में अति भाया। द्वादसी काली को जानौ अठारा सै संवत मानौ ॥ दो० ॥ ताके उपरि सठि धरि गुनि लेउ चतुर सुजान। गंगाधर नें कथि गायो है संवत का परमान। कृष्ण की कृपा भई भारी। सुनौ सब व्रज के नरनारी ॥ लिपिकाल संवत् १९०६ वि० है ॥

संख्या ११० ए. वटेश्वर महात्म, रचयिता—गंगाप्रसाद माथुर वैश्य (बाह, आगरा), पत्र—७६, आकार—७३/४ × ६१/२ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—११४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १६०३ = १८४१ ई०, लिपिकाल—संवत् १९१० = १८५३ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबू रामबहादुर अग्रवाल रईस, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ वटेश्वर महातम लिखते ॥ श्लोक ॥ नंद हस्त मवलेव्य ॥ पगर्ण नां मंद मंद मरविदं लोचन ॥ संचलत्कनक किं लीखै संततं तव करोतु मंगलं ॥ १ ॥ दोहा ॥ खटरस भोजन संस्कृत। सज्जन पाक प्रधान। भासा पन वारे विना। भोजन करत न कान ॥ २ ॥ शिव सुत पद प्रनवौ सदा। ऋद्धि सिद्धि नित देई। कुमति विनासन सुमति धरि। मंगल मुदित कोइ ॥ ३ ॥ पार ब्रह्म शिव सरस्वती। गिरवर गुरु गनेश। इनको ध्यान हृदै धरौ। करत बुद्धि उपदेश ॥ ४ ॥ दंडक ॥ वक्र तुंड धारी जाको पित त्रिपुरारी तासु भाइ ताड़िका मारी मातु शैल कुमारी है। एक दंत भारी दृग निपावक निहारी है गज वदन विचारी औरु मूसे सवारी है ॥ भाल चन्द्रभारी मणिनन मुकुट धारी प्रथम पूजा तुम्हारी श्रुति वेदन विचारी है। गंगा प्रसाद ग्यान हृदै में निवास करौ अरजी हमारी नाथ मरजी तिहारी है ॥ ५ ॥

अंत—त्रिपुरारि मनसा करहिं पूरी नारि कर जो गाव हीं, तेही नित्ताप मिटाइ तनु तजि विष्णु लोक सिधार हीं ॥ गंगा प्रसाद प्रसाद पावत आमरे तन जाइकै ॥ उर राखि राधा कृष्ण दृग भरि शंभु चरित सिहाइ कैं ॥ २५ ॥ इति श्री सूर्य सेन स्थले श्री मथुरा मंडलांतर्गते श्री वटेश्वर महात्म् गनेश नन्दी गग संवादे कवि गंगा प्रसाद विरचिते यथा रुचि पुराने नाम द्वादशमो अध्याय ॥ १२ ॥ इति श्री वटेश्वर महात्म संपूर्ण समाप्त ॥ लिखित लाला भवानी प्रसाद बिजौली के कायस्थ ॥ जैसी प्रति देखी तैसी लिखी ॥ अक्षर मात्र की भूल होइ सो सम्हार लीजौ ॥ मौजे होली पुरा में लिखी ॥ मिती असाढ़ सुदी १२ संवत् १९१० वाचै सुनै ताको राम राम सीताराम जी सदा सहाय ॥

विषय—(१) मंगला चरण, नन्दी गण और गणेश के संवाद के व्याज से सूर्य सेन के क्षेत्र [वटेश्वर का महात्म] वर्णन—ग्रंथकार परिचयः—वाहि नगर में वसत है माथुर वंस वैश्य। गोत जान मुखारिया गनि ये विस्वे वीस ॥ १४ ॥ प्रगट कहौ कहँ ते भये दौरी मन की दौरि। श्री मथुरा की मधि मैं। विदित महौली-पौरि ॥ १५ ॥ परम सषा श्रीकृष्ण को ऊधव भक्त सु साध। तिनके सुत के जुगल सुत लघु गंगा पर साद ॥ १६ ॥ पूजत नित गिरिराज कौं। इष्ट राधिका श्याम। जुगल मंत्र हिरदै जपै। श्री वृंदावन धाम ॥ १७ ॥

तिन कछु भाषा चरित वनायौ । गुरु प्रसाद सौ गाइ सुनायौ ग्रन्थ निर्माण कालः—प्रथम अंक करि एक कौ । नोपै सुनहुँ सुजान । ताके ऊपर तीनकौ । संवत् कह्यो वखान ॥ १९ ॥ मास दमोदर सरद ऋतु । राका पूरन चंद । दरस वटेश्वर कौ करौ । अति जिय वढ़ौ अनंद ॥ २० ॥ कमल वदन सुख के सदन । श्री महेन्द्र के राज । भूप रुप कुंजर चढ़े । सेना साज समाज ॥ २१ ॥ सुनि गन नाथ दयाल है । कवि कुल आयसु दीन । भद्र देस के भूप कुल । वरनौ राज प्रवीन ॥ २३ ॥ भदावर राज के नृपति कुल का वर्णनः—कवि कुल कमल अनेक रंग फूले निज निज रुप । अव कुल विमल दिनेस सम भद्र देस के भूप ॥ २४ ॥ चारिइ सम छत्री प्रगट सुनियत श्रवण प्रसंग । जज्ञ करे धरि ध्यान हरि कुल वसिष्ट के संग ॥ २५ ॥ अनल कुंड ते प्रगट में हंस वंस चौहान । तिनके कुल के विमल जस अब कबि कहत वषान ॥ २६ ॥ नाम कर्न विधि वस कहे वाढ़े कृपा अपार । जासौं सूक्ष्म ही कहौं अगिन वंश अवतार ॥ २७ ॥ गाहा दोहा चौपई छप्पै टोटक छंद । प्रथम राज महाराज नृप पूरण परमानंद ॥ २८ ॥ चौ० ॥ आसलि वीसलि सलिल सुजाना, रखत रज राव भल माना ॥ उदै राज राजा महाराजा, मदन सिंह सुख साज समाजा ॥ रतन सिंह कीरति करि लीनी, जैत सिंह धर नीव सकीनी ॥ चन्द्र सेन कुल करण कन्हाई, मानहु निर्मल सरद जुन्हाई ॥ प्रवल प्रताप रुद्र भूपाला, भूप मुकुट मणि वीर विसाला ॥ विक्रम वल दल अमित अनंता, भोज भूमि भरतार गनंता ॥ कृष्णसिंह भये कृष्ण समाना, तेज पुंज जस जाहर जाना ॥ जे सब भूप पाच दस गोय, सुमिरि संभु कैलाश सिधाये ॥ २९ ॥ दोहा ॥ वदन सिंह महराज की, कीरति सुजसि अपार । पूरब सों पच्छिम करी, श्री जमुना की धार ॥३०॥ छप्पै ॥ सो राजा वर मांगि शक्ति शिव पै मन भायो । भये विदित अवतार सुजस दिसि विदिसिन छायो ॥ सूर समर रण धीर वीर मन मरद अमानै । तिन वाँधी विसरांति वटेश्वर जाहिर जानौ ॥ गंगा प्रसाद नृप त्यागि तन भये चतुर्भुज भेस । चढ़ि विमान सुर पुर गये श्री वदनेश नरेश ॥ ३१ ॥ ता पाछे महा सिहे नृप तेग त्याग रण सूर । प्रजा पालि वैरी दले करौ राज भर पूर ॥ करौ राज भर पूर क्षौर दक्षिण दल भेजे । दीन देख दये छांड़ि फेरि अपने करि रंजे ॥ कहि गंग प्रसाद नृपति तन त्यागि वहोरी । इष्ट देव गुरु चरण ध्यान धरि जुगलि किसोरी ॥ ३२ ॥ होत उदोत के कादर चले पराइ, जिमि प्रकाश रवि तेज ते तिमिर तेज नस जाइ ॥ × × ॥ कुल भूषण रवि तेज तन वदन मनोज समान । कन्यो राज महराज नृप भुअ पति सिंह कल्यान ॥ × × ॥ तिन के सुत सिंह गुपाल भये ॥ × × ॥ ता पाछे मह राज धिराजा, श्री अनुरुद्ध सिंह भये राजा ॥ × × ॥ हिम्मंत हिम्मत सिंह की अव कवि कहति सराहि ॥ × × ॥ श्री महराज धिराज नृप सुनै श्रवन वख तेरा ॥ दोहा ॥ जे राजा श्रवणानि सुनै, कही कथा सवहित ॥ अव प्रताप पूरन कला भूप भूमि सुख देत ॥ × × ॥ श्री महेन्द्र महा राज श्री प्रताप सिंह देव जी की शोभा अति प्यारी है ॥ ४६ ॥ × × राज काज महराज के शिवनंदन मुखत्यार ॥ (सिरने ससिहं) महेन्द्र के पुत्र उत्पत्ति की कथा । सिरनेस की वीरता तथा वैभव का वर्णन । महेन्द्र महा राज का वर्णन । घाटों की रचना का वर्णन (पृ० १ से १३) तक प्रथम अध्याय (२) पृ० १३—७६ तक वटेश्वर की अन्य रचनाओं तथा महात्मादि वर्णन—

संख्या ११० बी. रामाश्वमेध, रचयिता—गंगा प्रसाद माथुर वैश्य (बाह, आगरा), पत्र—२९, आकार—७×७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६९६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पंडित लक्ष्मी नारायण वैद्य, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्री मते रामानुजाय नमः ॥ श्री थै नमः ॥ दीर्घ छंद राग काफी ॥ हे गुरु चरन दयाल दया तुम कीनी जैसी। तैसी ही अब कृपा चरन करियो तुम अैसी ॥ १ ॥ मो विचार संसार गुरु सेस अचारी के पद विमल पद्य मन पान रस कीन्ह महा मद ॥२॥ श्री निवास आचारीय सुनु तिन के प्रभाव बल रचत जानुकी विरह दुष्ष सुनि कौन धरै कल ॥ ३ ॥ कीजौ कठोर मम हृदय कहत फाटे न महा जड़ ॥ फिरि मेटो अग्यान ग्यान की सीम करो गढ़ ॥ ४ ॥ ह्वै गये नौका श्री रामानुज भजिरे मन घाट कचौरा नग्न तहां जहां कृपा कीन्ह गुरु वासु देव मम पूज्य कहन को सीप दई उर ॥५॥ वाहि मध्य स्व स्थान जानि माथुर पवित्र कुल "गंगा प्रसाद" अस नाम लजत लाजत न ओर तुल ॥ ६ ॥ वात्स्यायन मुनि प्रश्न सेस जी कीन पराकृत व्यास देव इहां कहीं नारद सो देव संस्कृत ॥ ७ ॥ अश्वमेध किया जाय पद्म जह जानि पुराणह ॥ सो अब भापा रचतु हौं न अब कैसी जानह ॥

अंत—॥ सीता उवाच तोटक जै जमंती राग ॥ वे तो रघुनायक ईश्वर हैं जो करै न करै विनु अंकुस हैं। मो साधि कहा पठवायो तुम्हें अप कीरति मैं हो न कीरति में ॥ ७९ ॥ कुल नारिन के जो धर्म नहीं पति के मन दोस धरैं जु कहीं ॥ वह मूरति ध्यान वसी जबसे विसरे न कहूं जिय में तवतै ॥ ८० ॥ दोउ पुत्र भए उनि अंस तें कुल माह सुजानिये अंकुरतें। वीर पराक्रम जानि इन्हें पितु पास ले जाउरे आपु इन्हैं ॥ ८१ ॥ वहु लाउ सो साध न जानीयो जे वलवीर हेसि........(शेष लुप्त)

विपय—मंगला चरण, रजक द्वारा कलंक, सीता त्याग की आज्ञा, सीता वनवास, वशिष्ट मिलन, लवकुश जन्म, अश्वमेध अश्व का पकड़ा जाना, युद्ध वर्णन एवम् सीता के बुलाने की आज्ञा।

संख्या ११० सी. खत मुक्तावली, रचयिता—गंगाप्रसाद माथुर (वाह, आगरा), पत्र—५३, आकार—१०×६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९०८, रूप—प्राचीन, गद्य और पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९०० = १८४३ ई०, लिपिकाल—संवत् १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—पण्डित लक्ष्मीनारायण नरोत्तम दास, स्थान—बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्री रघुवीर जी सहाय। दोहा। रघुवर चरण सरोज मणि मधुकर लै मकरंद। मुदित मनोरथ सुफल कर भजत नरेश्वर चन्द्र। विश्वनाथ प्रभु संहिता खता भेद बहु जानि दुखित प्रजा लखि सुखित हित खत मुक्तावलि मानि। एकादश विश्राम करि फोरा सत्रह जाति-भेद जानि सों सबनि के अंतर २ भांति। ३०। सुलभ वचनिका रीत करि ग्रन्थन को मत आनि-अगम पंथ वैद्यक हतौ सुगम निगम जहं जानि। अथ खत मुक्तावलि की अनुक्रमणिका। वाह्या भ्यंतर विद्धि-व्रणशोथ शरीरा गंतुव्रण-भग्न व्रण-भगन्दर-उपदंश

फिरंग-विस्फोटक-थूक दोष-विसर्परो - स्नायुगुण - विसूरिका - शीतला - इति खत मुक्तावली अनुक्रमणिका ।

अंत—कातिक वीद तीरसि दिना वार शनीश्चर जानि। रीवां नगर हजार अरु नौ सै सम्वत् मानि। खत मुक्तावलि गृन्थ की सुदिन समाप्त बखानि। रघुवर चित रघुवर हिये विश्वनाथ हित जानि। रहत सदा मंगल जहो ग्रंथ विनोद प्रकाश। रचना भूषण भाष्य की होत सदा प्रभु पास। श्री शुभ श्री शुभ जानिये श्री शुभ २ धाम। श्री सीता रघुवर जहां करत तहां विश्राम। श्री शुभ मस्तु चिरायुरस्तु। श्री।

खता ग्रंथ अदभुद् बनो खतहनिकों उपकार। विना जानि की जो मती ग्रंथ पुजीहत चार।

विषय—सत्रह प्रकार के फोड़ों का निदान और चिकित्सा वर्णन।

संख्या १११. विक्रम विलास, रचयिता—गंगेश मिश्र, पत्र—१०, आकार—९ x ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १८६१ = १८०४ ई०, प्राप्तिस्थान—कुंजीलाल भट्ट, ग्राम—औंड़ेला, डाकघर—किरावली, आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। श्री गुरूभ्यो नमः। गलित गंड मद मिलित गात कुंडलित सुंडि मुषनलित वाल विधु कलित भाल दल मिलित दास दुष। चलित चारु लोचन विसाल सुर नर मुनि। वदित करि कपोल मधु गंध नोल मधुकर झुल नंदित। गुनईस गनेस गजेस मुष गौ रस तात दाता सुमति। करियै कटाक्ष करुना कलित करि वरनो भाषा जगति। १। सोरठा। हरन अमंगल जाल, मंगल करन मनंग मुष। धरन वाल विधु भाल, विघन हरन विघनहिं हरहु। २।

अंत—चौ०। बहोत भांति वह वातें कहैं जो तु बोलहुगे तो जैहै है। निसंक चितु एकत करिकें सबकों लैयौ कांधे धरिकैं। वहु भांति जो छल दिखरावै डरियौ मति यह प्रेतु सुभावै। नदी तीर में बैठो जाइ सबकों लैयौ तहां उठाई। करघुनामु राजा चलो वीर थान समुझाइ। मानो हरि क्रीड़ा करन, जात मसान सुभाइ। इति श्री गंगेश मिश्र विरचितां विक्रम विलासे पीका ध प्रमद्ध सुं। श्री गुरूं प्रणम्य। मिति अस्वनि शुदि ११ चंद्रवार। संवत् १८६१ लिष्यतं पुस्तकं मिदं। पुस्तक विक्रम पचीसी समाप्ता लिष्यतं पिरान सुष। पठतं वाचतं रहस लिषो रहत है सौ वरस। जो लिपि जानै कोइ। लेषन हारो वावरो सो लिपि लिषि मांरा होइ। मिदां।

विषय—संस्कृत ग्रंथ वैताल पच्चीसी का पद्यानुवाद।

संख्या १११ बी. विक्रम विलास, रचयिता—गंगेश कवि, पत्र—१२१, आकार—८¾ x ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७२३, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सवत् १८२० = १७६३ ई०, प्राप्तिस्थान—पण्डित श्री लक्ष्मी नारायण नरोत्तमदास वैद्य, जिला—आगरा,

आदि—१११ ए के समान।

अन्त—जब लग सूरजचंद मेरुमंदिर गिरि सागर। जब लग नीर समीर छीर निधि छिति पर सोहै। जबलग उड़गन भीर अमल अंवर में रोहै। जबलग प्रवाह गंगा जमुन, जबलग वेदन को कहों। विक्रम विलाश गंगेशकृत तब लग या जग थिर रहो। ४३।

इति श्री मिश्र गंगेश विरचिते विक्रम विलासे पंच विंशति कथानकं। २५। सं १८२० वैसाष सु. २ बुद्ध दिने। दोहा। पुस्तक यह षंडितहुती विक्रम नाउ विलास। सो संपूरण करि दई, वैष्णव वालक दास। रविजाजू की कृपातें पायो मथुरा वास। विक्रम विलास पूरन कियो, वैष्णव वालकदास।

विषय—उज्जैन नगर के राजा विक्रम से संबंधित कहानियों का वर्णन।

संख्या ११२ ए. श्रंगार मंझावली, रचयिता—श्री गौरगनदास (व्रन्दावन), कागज—देशी, पत्र—३०, आकार—१० × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—५९, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबा बंशीदास जी, स्थान—गोविन्द कुंड, डाकघर—व्रदावन, जिला—मथुरा।

आदि—श्री श्री गौरांग नित्यानंदौ जयता। श्री निकुंज विहारण्यै नमः। श्री सद् माध्व मत मार्तंड कलिजुग पावनावतार श्री श्री कृष्ण चैतन्य महाप्रभु चरनार विंदंम करद आस्वादन परायन श्री श्री रूप सनातन चरन कमल भजन परायन श्री गौरगन दास कृत सिंगार मंझावली लिख्यते पूर्व भाग प्रारंभ ॥ छप्पै ॥ कबहूं तौ मोतन हंसि हेरो गर्व गुमान रहेगी कबलौं। अंतर पट न खुलै संग विसरै। पर्व गुमान रहैमोगों जब लौं ॥ पीड़ित ताप विनातन किरपा सर्व अज्ञान बहैगो तबलौं। जन कर गहौ हिये में जागै सर्व सुज्ञान लगै हेगो अब लौं। इति वंदना संपूर्ण-अथ माझ लिख्यते। वैसा ही रूप सजा दिलवर हम ग्राहक हुस्न परस्ती के। देखत ही मुझे निकाव किया हो इस्क परस्तां मस्ती के। हम भी कदमों के चेरे हैं तुम हो महरम इस बस्ती के। इश्क मेव का अमर कठिन तुम हौ खेवा इस किस्ती के। इति वंदना संपूर्ण।

अंत—अथ श्री वृंदावन की मांझ। प्रेम सिंधु माथे काठि सुधा छबि उज्जल सारस रूप रचा। तेज पुंन गुन शक्ति भरा सा मुक्ति मार्ग का भूप रचा। उपमा रमापति जो सब नायक तिनके परे अनूप रचा। यह रसिक राज का चमन बगीचा क्या मीन केतु का रूप रचा। इति श्री वृंदावन की मांझ संपूर्ण अथ ध्यान की माझः निसि दिन मोमन में वास करै यह छबी सुधा आनंद भरी। तब रूप शील गुन उदय होय शर प्रेम नीर की पीर भरी। वह छबि श्रंगार घटा दामिनी सी विहंसि मधुर कछु भाव भरी। जनु स्याह चश्म अरविंद खिले फिर हाथ गुलंस्तां फूल छरी। इति श्री श्रंगार मंझावली उत्तर भाग संपूरण श्री राधाकृष्णार्पण नमस्तुः।

विषय—श्री गौरांग महाप्रभू श्री चैतन्य भगवान की वंदना। वृंदावन ध्यान और राधाजी की मांझ।

संख्या ११२ बी. गौराङ्गभूषण विलास, रचयिता—गौरगनदास जी (वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—४६, आकार—१० × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण

(अनुष्टुप्)—९३, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबा बंसीदास जी, स्थान—गोविन्दकुण्ड, डाकघर—वृन्दावन, जिला—मथुरा।

आदि—श्री श्री गोरांगभूषण विलास मंझावली लिख्यते श्री श्री गौर गन दास जी कृत। अथ मांझ छप्पै। रस भूषित गौरांग प्रेम वपु उज्वल नीके। रस भोजन रस सैंन वैंन रसविन सब फीके। रस विलसन कुंज कोलि रस पगे अमी के। ठाकुर परम रसाल चसक रस बस जु भलीके। रस उमगै निस याम सहचर गन रसहीके। बिन लखे गौर विलास रचै का भूषण जी के। इति छप्पै अथ मांझ। श्री गौर रूपको लषा नहीं तो प्रेम स्वाद विपरीत लषै। मनसिज विलास सरस पगा नहीं तौ कहा मधुर रस रीत लषै। भावभेद गति लषी नहीं पावक कपूर सम प्रीति लषै। गुरु मार्ग को लषा नहीं तौ ईस इष्ट विपरीत लषै। जोगी सश्वेत छीरोद पती गर्भोद परे कछु और कहा। ता परे मधुर छवि रूप लषा पुनि लोक अनेकन और कहा। कारन पति उज्जल रूप लषासा पुज्य ब्रह्म परे और कहा।

अन्त—दोहा—द्वैताद्वैत विचारि कै बहुरि विशिष्टा द्वैत। वृह्मा द्वैतै शोधि कै सौधहिं शुद्धाद्वैत। भेदाभेद जाकै कहै सोई अचिंता भेद गौररूपनिर्देश करि यहि प्रतिपाद्यो वेद योग हीन पूरन नहीं करैं तौ लक्षन होय। चिंता चिंत लखाइयै पूरन तम है सोय ३ ध्येय ध्यान युत धारना मध्य लखै जो ईश। चिंता चिंत विलासि सो पूरन तम जगदीश।४। श्री गुरु कृपा निर्देस करि भूषन विशद विलास। दीन गौर गन निरखि छबि प्रमुदित मोद उलास ॥ ५ ॥ पुनरावृत्ती दोष जो काव्य मध्य नहि सोय ॥ ध्यान भाव रस रूप यहां नितनूतनता जोय। ६। इति श्री गौरांक भूषण विलास काव्य श्री गौरगनदास कृत संपूर्ण।

विषय—सिद्धांत और श्री गौरांग महाप्रभु यश वर्णन।

संख्या ११३. भजनावली, रचयिता—गयाप्रसाद कायस्थ (दौदो, तहसील-गंजअली, जि० एटा), कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९४६ = १८८९ ई०, प्राप्तिस्थान—पण्डित रामशंकर गौड़, स्थान—रती का नगला, डाकघर—हाथरस, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशायनमः॥ अथ भजनावली लिख्यते॥ भजना निर्गुण—श्री रघुनाथ से प्रीति करोरे॥ टेक॥ पार ब्रह्म पुरुषोत्तम से पट घट के खोल मिलोरे॥ १॥ जीवन मरन हानि लाभ में नित क्यों सोच करोरे॥ झूठे झगड़े या जगके में बिगड़े क्यों न बनो रे॥ २॥ एक दूसरे की निन्दा में नाहक देह तजो रे॥ यामें बुद्धि नष्ट हुइ जइहै प्रभु को क्यों न भजो रे॥ ३॥ हरिजन में हरि व्यापक जानौ हिय में दरश लखोरे॥ गया प्रसाद भक्ति चरनन में प्रभु के ध्यान धरोरे॥

अंत—धन दौलत सबही रहि जइहै होतहि जात सकारो॥ गया प्रसाद कोइ नहिं साथी जइहै हंस बिचारो॥ जबहिं दै चलि हैं नगारो॥ ४॥ इति श्री भजनावली गया प्रसाद कृत समाप्तः लिखतं रामलाल वैश्य जबलपुर निवासी संवत् १९४६ वि०॥

विषय—निर्गुण भक्ति विषयक ज्ञानोपदेश।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता गया प्रसाद जाति के कायस्थ थे उन्होंने अपने लिये इस प्रकार लिखा है:—कायस्थ कुल भूतेह दाऊद ग्राम वासिना ॥ स्थिति लब्धवते दानी जब्बलपुर पत्तने ॥ अर्थात् ये दाऊद ग्राम जिला एटा तहसील अलीगंज निवासी थे और जिस समय इसकी रचना की जब्बलपुर सी० पी० में रहते थे ॥ लिपिकाल संवत् १९४६ वि० है ॥

संख्या ११४. सुरजपुरान, रचयिता—गेंदीराय, कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पण्डित हरिमोहन मिश्र, ग्राम—सिंगरवली, डाकघर—तंतपुर, तहसील— खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। अथ सूरज कथा लिष्यते। दोहा—बन्दौं आदित निरंजन, सीस नाय करि जोरि। सकल कामना सिद्धि करि, दीन नाथ प्रभु मोर। गन पति फन पति देव पति, रवि ससि पवन कुमार। गुरू गोविन्द उदार दार, विनती करौं सुधारि। शुभगुन देहु मोहि प्रभु, करौं कथाकर गान। ता कारन विचारि कै, भासौं सूरज पुरान। एक समय गिरजा सहित, शम्भु रहे कैलास, उपजा अति अनुराग दृढ़, सूर्ज कथा परगास ॥

अन्त—साम को तन्दुल सुन लेहु। मुढ़ि जुगल कुँवार मन देहु। पंडन दुबरन ही भाषा। कातिक मास यहै मत राषा। तुलसीदल पायेऊँ जो दो पाती। अगहन मास पाइ की छाती। दोहा—मास जुगल दस नेम जो रहे उम मन लाय, सफल होय मन कामना, कह देव गेंदीराय। कथा पुनीत प्रसंग तो सब मैं गाई। जो विधान पूजा करै और सुनै मन लाई इति श्री सूर्ज महात्म महापुराणे सम सत नवमोध्याय समाप्तं।

विषय—सूर्य की कथा।

संख्या ११५ ए. प्रीति पावस, रचयिता—आनंदघन, पत्र—८, आकार ८ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महाराज महेन्द्र मानसिंह, महाराजा भदावर, ग्राम—नौगवां, जिला—आगरा।

आदि—अथ प्रीति पावस लिष्यते ॥ वन विहरत मोहन घनस्याम। गिरि गोधन समीप सुषधाम ॥ १ ॥ ऋतु वरषा हरषी व्रजवसि कै। जित नित वसतु स्याम घन लसिकें ॥ २ ॥ उमह असाढ़ वढ़ि यै रहै। चोप चटक आगम ही चहै ॥ ३ ॥ भयो करति कौ धनि सी हियें। देषि जिय चट पटी तियैं ॥ ४ ॥ सावन रूप महा रस धावन। व्रज लोचन हरियारौ सावन ॥ ५ ॥ मन भावनहि वरस झूमि रिझावन। व्रज मोहन है व्रज सुष सावन ॥ ६ ॥ नित ही हित झुलान झुकि वरसै। नित वृज मोहन सावन सरसैं। ७॥ सो विलसतु वरिषा सुष वनमें। उनए नए नेह के पन में ॥ ८ ॥ घिरि घटानि जब झुकत अँध्यारी। वन भींजत डोलत वनवारी। ९ ॥ सुमिलि सखा-समाज संग सो हैं। मन लेषनि अभिलाषनि दो है ॥ १० ॥

अंत—पावस वन-वन घूमत डोलै। जोवन छक्यो छैल गति वोलै ॥ ९८ ॥ व्रज रस भिजै रिझै इन राख्यो। व्रज रस सार सोधि इन चाख्यो ॥ ९९ ॥ चातक अतुल प्रीति पावस कौं। जस रसि में चसकौ व्रज रस कौ ॥ १०० ॥ भीजो रहत प्रीति पावस रस। पावस सुष विलसत भीजनि वस ॥ १०१ ॥ यौंही भींजत भिजवत रहौ। व्रज रस सुष सवाद नित लहौ ॥ १०२ ॥ गोप दुलारे जसुदा जीवन। अति रस प्यावन अति रस पीवन ॥ १०३ ॥ पावस प्रीति पपीहा दरसै। तोषै पोषै पीव तरसै ॥ १०४ ॥ घन चातक कौ मरम न परसै। व्रज प्यासनि आनँद घन वरसै ॥ १०५ ॥ इति श्री प्रीति पावस प्रवंध संपूर्ण ॥ श्री जान राय ॥

विषय—पावस की शोभा, कृष्ण की क्रीड़ा, वनकी छटा तथा गान-विधानादि का वर्णन।

संख्या ११५ बी. सुजानहित प्रबन्ध, रचयिता—आनन्दघन, पत्र—१५७, आकार—८ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०४१, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—महाराज महेन्द्र मानसिंह, महाराजा भदावर, स्थान—नौगवां, जिला—आगरा।

आदि—अथ सुजान हित प्रबंध प्रारंभ ॥ रुपनिधान सुजान सषी जवतें, इन नैननि नेकु निहारे डीठि थकी अनुराग छकी, मति लाज के साज समाज विसारे ॥ एक अचंभो भयो घन आनंद, हैं नित ही पल पाट उघारे। टारे टरैं नहिं तारे कहूं, सुलगे मन मोहन मोह के तारे ॥ १ ॥ आँषिही मेरी पै चेरी भई लषि, फेरी फिरै न सुजानकी घेरी। रूप छकी तितही विथकी अर, ऐसी अनेरी पत्यात न नेरी ॥ प्रान ले साथ परी पर हाथ, विकानि की वानि पै कांनि वषेरी। पाइनि पारि लई घन आनंद, चाइनि वावरी प्रीति की वेरी ॥२॥ रूप निधान सुजान लबै विन, आंषिन डीठिहि पीठि दई है। ऊषिल ज्यौं षरकै पुतरीनि मैं, सूल की मूल सलाक भई है ॥

अंत—नाद कौ सवाद जानैं वापुरो वधिक कहा, रूप के विधान कौ वषान कहा सूर सौं ॥ सरस परस के विलास जड़ जानैं कहा। नीरस निगोड़ो दिन भरै भकि भकि कूर सौं चाह की चटक तैं भयो नहियें घोप जाकैं। प्रेम पीर कथा कहैं कहा भक भूरि सौं ॥ चाहै प्रान चातक सुजांन घन आनंद कौं। दैया कहू काहू कौं परै न काम कूर सौं ॥४९६॥ नेह सौं भोइ संजोइ धरी हिय दीप दसा जुभरी अति आरति। रूप उज्यारे अजू व्रज मोहन सोंहन आवनि और निहारति ॥ रावरी आरति वावरी लौं घन आनंद भूलि वियोग निवारति। भावना थारु हुलास कै हाथनि यों हित मूरति हेरि उतारति ॥ ४९७ इति सुजानहित प्रवंध ॥

विषय—प्रेम, राधिका का सौंदर्य, दूती का उपदेश, वंशी, प्रीति की अनीति, प्रेम दुहाई, विरह व्यथा, अभिलाषा, वसंत, विनय, नैन सौंदर्य्य, रति, पावस, मान, अंगों की शोभा, उन्माद तथा संयोगादि शृंगार परिपोषक अनेक छन्दों का संग्रह।

संख्या ११५ सी. वियोगवेली, रचयिता—घनानन्द, पत्र—६, आकार—८ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—७८, रूप—प्राचीन, लिपि—

नागरी, प्राप्तिस्थान—महाराज महेन्द्र मानसिंह जी, महाराजा भदावर, जिला—आगरा। स्थान—नौगवा, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ।.वंगाली विलावल ॥ अथ वियोगवे ली लिख्यते ॥ सलोने स्याम प्यारे क्यों न आवो, दरस प्यासी मरैं तिनकों जिवावो ॥ कहाँ हो जू कहाँ हो जू कहाँ हौ, लगे ये प्रान तुमसों हैं जहाँ हौ ।। २ ।। रहौ किन प्रान प्यारे नेंन आगैं। तिहारे कारने दिन रैन जागैं ॥ ३ ॥ सजन हित मानिकै ऐसी न कीजै । भई हैं वावरी सुधि आय ली जै ॥ ४ ॥ कही तव प्यार सों सुख दैन वातैं। करौ अव दूरि तै दुष दैन घातैं ।। ५ ।। वुरे हौ जू वुरे हौ जू वुरे हौ । अकेली कै हमैं अैसे दुरे हौ ॥ ६ ॥ सुहाई है तुम्हें यह वात कैसें । सुषी हौ साँवरे हम दीन ऐसे ॥७॥ दिषाई दीजिये हा हा अमोही । सनेही ह्वै रुखाई क्यों बसोही ॥८॥ तुम्हैं विन साँवरे ये नैन सूनै । हिये में ले दिये निरहा अझूनै ॥९॥ उजारौ जो हमैं काकौं वसैहौ । हमैं यौं रुआय कैं औरै हँसैहो ॥ १० ॥

अंत—हमैं तुमतो लगौ सव भांति नीकै । करौ किरपा हरौ ये साल ही के ॥ ७० ॥ कहा वारैं निछावरि ह्वै रही है। कहै कोलौं कही है जु कही है ॥ ७१ ॥ रसिक सिर मौर हौ रस राषि लीजै । तनक मन नाम के गुन वीच दीजै ॥ ७२ ॥ धरै अव नाव कौ अव नाव अैसे । दुहाई है सुहाई परै कैसे ॥ ७३ ॥ सदा तैं रावरी विना मोल चेरी। घरनितैं काढ़ि वन वंसीनि घेरी ॥ ७४ ॥ किये कि लाज है व्रज राज प्यारैं । विराजौ शीस पैं जगमैं उज्यारैं ॥ ७५ ॥ सदा सुख है हमैं तुम साथ आछैं । लगी डालै छवीले घाट पाछैं ॥ ७६ ॥ तुम्हैं देखैं सदा भेटैं भले ही । जगैं सोयैं औरु वैठें चलें ही ॥७७॥ न न्यारी है न न्यारी है व न्यारी । भई है प्राण प्यारे प्राण प्यारी ॥७८॥ हमारी ओ तिहारी येक वातैं । रंगीले रंग रातैं द्यौस रातैं ॥ ७९ ॥ सदा आनंद के घन स्याम संगी । जियौ ज्यावौ सुधा पावौ अभंगी ॥ ८० ॥ इति वियोग वेली सम्पूर्ण ॥

विषय—कृष्ण के वियोग में व्रज बालाओं के दुःख का वर्णन

संख्या ११५ डी. कवित्त, रचयिता—घन आनन्द, कागज—बाँसी, पत्र—१६, आकार—४½ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री श्रवणलाल हकीम, ग्राम—बसई, डाकघर—ताँतपुर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—सवैया । देषिधौ आरसी लै बलि नेकु लसी है गुराई में कैसी ललाई । मानो उदोत दिवाकर की दुति दरशन चन्दहिं भेंद नशाई । फूलत कंज कमोद लषै घन आनन्द रूप अनूप निकाई । तो मुखलाल गुलालहि लायकै कैसो तिनके हिय होरी लगाई । रूप धरैं धुनिलौ घन आनंद सूझति की दीठि सुतानौ । लोपत लेत लगायके संग अनंग अचम्भे की मूरति मानौ । हौं किधौं नाहीं लगी अलगीसी लषी न परै कवि क्यों कुप्रमानौं । तो कटि भेद है किंकनी जानत तेरी सौं राधे सुजान हों जानौ ।

अंत—सुनि आरति पपीहा निकूकनि करयो करै । अथिरे उदेग गति देषि कै आनन्द घन पान विकरयौ सौ बन वीथि बचरयौ करै । बूंदन परै मेरे जान प्यारी तेरे विरही को

हेरि मेघ आंसु निकर्यौ करैं। तपति उसास औध रूंधी पै कहां लौ दई बात बूझै सैन निहीउतर विचारियै। उकि चल्यो रंग कैसे रापीये कुलका मुख आन लेखैं कहांलौं न घूंघट उप्पारियै। जरि वरि छार ह्वै न जाय हाय अैसीन वैसैंचित चढ़ीमूरति सुजान क्यों उतारियै। कठिन कुदाव आय घिरी ही आनन्द घन रावरी बसायतौ बसाइन उजारियै।

विषय—श्रृंगार रस तथा भक्तिरस के स्फुट सवैया और कवित्त हैं।

संख्या ११६. हरिभजन, रचयिता—दास गिरन्द (रामपुर नबाब की), कागज—बिदेशी, पत्र—३२, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—९००, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—लाला जैनारायण (नगला राजा), डाकघर—नौकेड़ा, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ हरिभजन दास गिरंद कृत लिख्यते ॥ भजन ॥ १ ॥ सिंध काफी ॥ राखियो मोय चरनन में भगवान ॥ भजन भाव कछु जानत नाहीं मैं मूरख अज्ञान। आस लगी रैन दिन प्रभु चरनन ही सों ध्यान ॥ राखियो० ॥ कथा भागवत ना सुनी पग तीरथ ना दान। लाज तुम्हरे हाथ स्वामी हौं पापन की खान ॥ २ ॥ राखिये मोय० ॥ तीन लोक में सुजस प्रगट प्रभु गावत वेद पुरान ॥ दास गिरंद चूकत ही औसर जमघट घेरैं आन ॥ ३ ॥ राखियो० ॥

अंत—दुर्गादास जी कहै पहिले तकदीर मुकद्दम है भाई ॥ फिरते ही तकदीर करै तदवीर भी उसकी हमराई ॥ सत्य वचन कहै जुगुल देह से पहिले किसमत वनाई ॥ राम सरूप कहै तदवीरों की क्यौं करते हो वड़ाई ॥ गिरंद सिंह यों कहैं नहीं किसमत का कोई साथी है। तदवीरें समझो वजीर तकदीरहि शाह कहाती है ॥ इति हरि भजन संपूर्ण समाप्तः ॥ राम राम कहो राम राम ॥

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

टिप्पणी—इस ग्रंथ के रचयिता गिरिंद सिंह रामपुर राज्य जिला, मुरादाबाद के निवासी थे।

संख्या ११७. श्याम श्यामा चरित्र, रचयिता—गिरिधारी, पत्र—११०, आकार—१० × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२१, परिमाण (अनष्टुप्)—१७५०, अपूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१९०४, लिपिकाल—वि० १९०४ (१८४७ ई०), प्राप्तिस्थान—पं० वैजनाथ जी ब्रह्मभट्ट, स्थान—अमौसी, डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ (अवध)।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ कवित्त ॥ एकई रदन गज वदन विराज मान। मदन कदन सुत सदन सुकामा को। कहै गिरिधारी गिरिराज नंदिनी को नंद। आनंद को कंद जगवदंवर वामा को ॥ शुण्डा दण्ड कुण्डलीको मोहै मनु। भाल चन्द्र मण्डली विलास गुन ग्रामा को। ऐसे गन नायक के वुद्धि वर दायक के। पाँव वंदि कहत चरित श्याम श्यामा को। १ ॥ इति मंगलाचरण ॥ शुभ संम्वत् १९०४ श्री गणेशाय नमः ॥ यमुना निकट एक मथुरा नगर वसै। तहा महाराज कंस राज वर जोरे मैं। कहै गिरिधारी ताके

अघ को न वारापार । असुर अपार बहु चोट चहुँ वोरे मैं ॥ पाप की कलापन ते पृथी गरु आनी नाहिं । एती गरु आई गिरिगजरथ घोरे मैं । देवकीके कारन अदेव की अदल देषि । देवकी के दया भये देवकी के कोरे मैं ॥

अंत—भेजी हम चीठी ना बसीठी मन मोहन को । आपु ही ते कीन्हीं कृपा जानि निजु दासिनी ॥ कहै गिरिधारी भाग प्रगटी हमारी ताको । कहा करै नारी केउ तेह कीने वासिनी ॥ अवै तेन जाय लै मनाय हरि आपने को । मनै करती ना हम होती ना उदासिनी । काहा करती है देह दाहक वचन उधो । नाहक हमारे वैर परी व्रज वासिनी ॥ ३३२ ॥ अंग की मलीनी अकुलीनी हम आपु ही हैं । ऊधो आपुही को वै कुलंगना कुलीनी हैं । काहे गिरिधारी वैर परी व्रज नारी सव । जवते विहारी मोपै कृपा कोर कीनी है । वारि वारि मोहि चेरी चेरी कै चितावती हैं । मेरई चवावन सों चवावन प्रवीनी हैं । चैरी हैं तो कान्ह की कमेरी हैं तो कान्ह की न, काहू गोपिकान की ववाकी मोल लीन्ही हैं ॥ ३३३ ॥

विषयः—१—पृ० १ से ४२ तक—मंगलाचरण । कृष्ण जन्म । पूतना वध, शिवदर्शन, बालस्वरूप, यशुदा की कामना, बाल विनोद, मिट्टी खाना, गोचारण, दधि लीला, गोरस ढरकाना, गोपियों का उपालंभ । उखल बंधन, दानलीला, नागलीला, गोबर्धन धारण, ब्रह्मामोह, गौ चरावन वर्णन, मुरली वर्णन । २—पृ०—४२–८४ तक—प्रेम दृढ़ करना, चीर हरण, रासलीला, पनघट लीला, राधिका दृष्टि, सखी का उपालंभ राधा-मान, राक्षस वध, कृष्ण मथुरा गमन, मथुरा प्रवेश । ३—पृ० ८५—११० तक—गोपी विरह वर्णन, उद्धव व्रज गमन, गोपिका उद्धव संवाद, गोपियों का उपालम्भ, उद्धव का नंद यशोदा को कृष्ण का संदेश । वात्सल्य रस प्रदर्शन, उद्धव का मथुरा को लौटकर गोपियों का संवाद देना । कृष्ण का प्रेम-प्रदर्शन । कृष्ण का व्रज के प्रेम में व्याकुल होना, कुब्जा की उक्ति । गोपियों के रोष से दुःखी होना ।

विशेष ज्ञातव्यः—प्रस्तुत ग्रंथ में कवि ने कृष्ण चरित्र का संक्षिप्त वर्णन बड़ी उत्तमता से किया है । उसमें प्रायः मन हरण छंद ही उपयोग में आये हैं जिनका पद-लालित्य सराहनीय है । अर्थ गांभीर्य को भी कवि ने हाथ से जाने नहीं दिया है और काव्य के अंग व्यंग्य, अलंकारादि का भी सदुपयोग किया है । ग्रंथ का नाम उसके आदि में नहीं दिया गया है । एक छंद में प्रस्तावना के प्रसंग में "श्याम-श्यामा चरित्र" लिखा है, अतः वही ग्रंथ का नाम मान लिया गया है । ग्रंथ के अंतिम छंद की क्रम संख्या के पश्चात् दो छंद हनुमान जी के विषय में और रामकृष्ण के विषय में लिखे गए हैं किंतु, उनका ग्रंथ से कोई संबंध नहीं है ।

संख्या ११८. पिङ्गलसार, रचयिता—गिरिधारी लाल (आगरा), पत्र—५३, आकार—७ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—७९५, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १७६६ = १७०९ ई०, प्राप्तिस्थान—पण्डित छोटेलाल शर्मा, स्थान—कचराघाट, जिला—आगरा ।

आदि—प्रारम्भ...नाम गुरु मध्य में ॥ ऽ ॥ रक्षस गुरु मुषवंत ॥ ऽ ॥ ॥ ६० ॥ विप्र नाम लघु चतुर जिहि ॥ पंच रूपड़ गनेहु सुनि षगपति इमि उचरों वचन सर्व जानेहु ॥ ६१ ॥ गन नाम कथनं ॥ उरगण लहु गुरू जानियो सरवर गुरु लघु जोइ ॥ सोई नगन षगेस सुनि ॥ तीन गंध जव होइ ॥ ६२ ॥ रग गन नाम कथनं ॥ एक नाम दीर सुन्यो दूजो विलंहु जानि दीरघ नाम अनेक हैं ते सब कहौं वषानि ॥६३॥ अघ दीर्घ नाम कथनं ॥ ताटक हार सुकंकन नहिं नेवर केवर जानि, दूज चंद चामर उरग अंकुस कह्यौ प्रमान ॥ ६४ दीर्घ दीह अरु कुंचिका अ॒ किंसुक अहि जान। ये गुरु नाम वखानिये खग राजा सज्ञान ॥ ६५ ॥

अंत—भयो ग्रंथ पूरण सकल, छंद तीन सै आठ। सोधो सुवुध सुधारि कै, जहाँ असुध कहुँ पाठ ॥ ५० ॥ यह विनती मन आनियो सुकवि सुजान सुभाव। जो ढिठई गिरिधर करी, छमि यहु प्रेम प्रभाव ॥ ५१ ॥ षट ग्रंथनि को मत सुन्यौ, हृदयहि उपज्यौ चाई। नगर आगरे में प्रगट करे, चारि अध्याइ ॥ ५२ ॥ वस चगता चक्कवै आलमगीर प्रचंड। राज्य मध्य गिरिधर कह्यौ पिंगल सार अषंड ॥ ५३ ॥ जो इहि पिंगल सार कौं पढै गुनै चित लाइ। छंद ज्ञान आवै सकल, गिरधर लाल वनाइ ॥ ५४ ॥ इति श्री गिरि धारी लाल विरचिते वर्न वृत्त छंदादि वर्ननं नाम चतुर्थो ध्यायः ॥ ४ जैसो देष्यौ ग्रंथ मैं तेसौ लिष्यौ बनाइ ॥ समझौ ताहि विचारि कछु लीजौ सुकीव सुधाइ ॥ संवत् १७६६ वर्षे पोष कृश्न पक्ष तिथौ षष्ठी रवि वासरे लिषितं मिश्र कुंज मनि सकल गुण सम्पन्न श्री गोर धन दास पठ नार्थम् शुभं रास्तु

विषय—(१) गणा गण भेद तथा काव्य दोषादि वर्णन (प्रथमोध्याय) पृ० १—१३ तक (२) मात्रादि वर्णन (प्रस्तारादि) द्वि० अ० १३—२६ (३) मात्रिक छन्दौं के लक्षणादि (तृ० अ०) २६—४१ (४) वर्ण वृत्त के लक्षणादि (च० अ०) ४१—५३

संख्या ११९. अश्वचिकित्सा, रचयिता—गिरिधारीलाल (कोटला, आगरा), पत्र—१३, आकार—८ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८६, रूप—अतिप्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९२७ = १८७० ई०, लिपिकाल—संवत् १९२७ = १८७० ई०, प्राप्तिस्थान—मास्टर रामप्रसाद जी, स्थान—कटला, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अश्वचिकित्सा लिख्यते। अति घोरा वैस्व वर्न। अथ घोरा के अंग भौरी लक्षन वैस्व वरन घोरा। चौपई। कल्ललुडार नैन अनियारे। थुथरी लघु अधर नुक्यारे। कंथ मिली ग्रीवा अस्थूल छाती चौड़ी होय समूल। सूधो सूत्तममास न होई कर पग मृग के से सन होई ग्रीवा पुक्ष उचास बतावै करि लघु चौरी पीठ लखावै। छोटे करन श्याम सुभ भारे, लम्बोदर कोखा फुलवारे। चारो चौका आंठौ बंद। जो पावे या विधि सोचंद। भूरि भाग जा नरके आवे, जो घोरा या विधि को पावै अथ मौरी लक्षन। चौपई। अब मौरी वरनौ तिहि अंग। जो सुभ राखि अंग तुरङ्ग। जो माथे पै मौरी लइये गुनलों सुभ ओगुन नहिं कहिये। कंधा पर मौरी जो होई उत्तम कहत सयाने लोई।

अंत—सोरठा। भार तत चेतत चंद्र साल होत को मत निरख. सुख पावै मुनि वृंद कुशलसिंह महराज प्रभु। घोराकी छाती होय भारी टलै नहीं तो दीजे टारि हफत दाम षोले पैंतीस। करै सकल रोगनको नास। जो छाती से लोहू लीजै तो विचारि या विधिते कीजै॥ प्रथम घरी एक राह चलावे ता पीछे रम सीर खुलावै। गरम मसाला दीजै ताह। कमसे दावा दीजे वाय। उष्म नीर अष्टक नव दीजे छाती खुलै मान मह लीजै। छाती बंदकी दवा। सालमहल्दी सोंठ सुहागा। सौंफ सावन सज्जी परागा। गुरु सो मिले वजन सम लेहु टंक सुहागा तामे देहु। देवै छाती खुलै बनाय बंद २ जो जिकरो आय। इति सालहोत कुशलसिंह महाराज कृत समाप्तम्। मिती सावन सुदी ७ बुधवार सः १९२७ व कलम गैरलारी वारी शुभभीके।

विषय—शालिहोत्र।

टिप्पणी—पुस्तक अश्व चिकित्सा पर है। वास्तव में इस विषय पर यह पुस्तक इतनी पुरानी है कि सम्भवतया इसको हम पहली पुस्तक कह सकते हैं। लेखक कोटला के रहने वाले थे किसी रियासत में काम करते थे उनके प्रपौत्र अब भी वर्तमान हैं। पुस्तक उपादेय है। मुझे यह भी ज्ञात हुआ है कि पुस्तक के बहुत से नुसखे आजमाये जाने पर बड़े लाभप्रद प्रमाणित हुए हैं।

संख्या १२०. माप मार्ग, रचयिता—गिरधारी लाल (समायू), कागज—देशी, पत्र—३६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६७६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९३० = १८७३ ई०, लिपिकाल—संवत् १९३१ = १८७४ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रामदयाल पटवारी, स्थान—गूदरपुर, डाकघर—विलराम, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः॥ अथ माप मार्ग लिख्यते॥ पर ब्रह्म निराकार सर्व शक्तिमान जगदीश्वर के गुणानुवाद के पश्चात् विदित हो कि इस ग्रंथ को पंडित गिरधारी लाल समायूंवासी ने अपनी अल्प बुद्धि के अनुसार रचा है इससे छोटे छोटे बच्चों का हित हो औ गणितज्ञ लोगों से यह प्रार्थना है कि इस ग्रंथ को कृपा दृष्टि से देखें। माप मार्ग समकोप त्रिभुज का समकोण-त्रिभुज में समकोण की बनानेवाली रेखाओं में आड़ी रेखा भुज वा भूमि और खड़ी रेखा कोटि व लंब कहलाती है। और तीसरी रेखा जो समकोण के सामने है उसे कर्ण कहते हैं और लंब के भूमि के दो भाग हो जाने से प्रत्येक भाग अबाधा कहलावेंगी। अथवा समकोण त्रिभुज में तीन रेखायें हुआ करती हैं। उनमें से एक रेखा भुजग कहलाती है उसको रोकने वाली जो लंब रूपरेखा होती है कोटि कहते हैं। यह कोटि सम कोण त्रिभुज वा सम चतुर्भुज में होती है और भुज कोटि के सिरे से बंधा हुआ सूत्र होता है उसे कर्ण कहते हैं। इन तीनों रेखाओं में से कोई दो रेखा जान कर तीसरी जान सक्ते हैं॥

अंत—कला और वल्ला के क्षेत्र के कर्ण √५०√ २८८ गट्ठे हैं तो अब लल्ला के क्षेत्र का भी कर्ण बताओ॥ उत्तर १८·३६॥ वृत क्षेत्र के अंतर गत समकोण त्रिभुज

जिसकी कोटि कर्ण से २ गट्ठे कम है और वृत क्षेत्र का क्षेत्रफल २६६·९८०६ है जो समकोण त्रिभुज की भुज कै गट्ठे होगी ॥ उत्तर भुज ८ गट्ठे ॥ इति ॥ लिखा भवानीप्रसाद तालिब इल्म दर्जा ४ मदर्सा कासगंज जिला एटा संवत् १९३१ वि० सन् १८७४ ई० ।

विषय—पृथ्वी के क्षेत्रों को मापने की रीति लिखी है ॥

संख्या १२१ ए. गोवरधननाथकी प्रगटन समय की वार्ता, रचयिता—गोकुलनाथ (वृन्दावन), पत्र—६०, आकार—१० × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९२५ = १८६८ ई०, प्राप्तिस्थान—विश्वेश्वरदयाल हेडमास्टर, डाकघर—जैतपुरकला, जिला—आगरा ।

आदि—श्री कृष्णाय नमः ॥ श्री गोपीजनवल्लभाय नमः ॥ अथ श्री गोवर्द्धन नाथ जी के प्रगटनकौ प्रकार तथा प्रगट होइकैं जो जो चरित्र किये हैं सो श्री गोकुलनाथ जी के वचनामृत के समूह में ते ऊर्द्ध करिकें न्यारे लिषे हैं ॥ अब नित्य लीला में श्री गोवर्धन नाथ जी ॥ श्री गिरिराज की कंदरा में अपने भक्तन सहित अखण्ड विराजमान हैं, तथा श्री आचार्य जी महाप्रभू सदा सेवा करत हैं ॥ सो जब देवी जी जीवन के उद्धारार्थ ॥ आपु धरिणी मंडल में प्रादुर्भाव भये ॥ तर आप सर्वस्व ॥ श्री गोवर्द्धननाथ जी ॥ अखिल लीला सामग्री सहित ॥ आप ब्रज में प्रादुर्भाव भये ॥ संवत् १४६६ श्रावण सुदी तृतीया ॥ आदित्यवार ॥ सूर्योदयकाल समय ॥ श्रवन नक्षत्र में ॥ श्री गोवर्द्धननाथ जी की उर्द्ध भुजाकौ दरसन भयौ ॥ जा समैं ॥ भूलोक में बड़ो आनन्द भयो ॥

अंत—तब गंगाबाई ने जाइकें । श्री गोवर्द्धननाथ जी के दर्शन किये तब श्रीगोवर्द्धन नाथ जी आप गंगाबाई को मुसकान सौं दरसन दीये ॥ पाछे श्री गोवर्द्धननाथ जी यह आज्ञा श्री दाऊ जी महाराज सों कीये ॥ जो यह गहने को बंटा सैया मंदिर में स्थापन करौ ॥ तब ऐसेई श्री दाऊ जी महाराज कीये वह गहने को बंटा श्री गोवर्धननाथ जी कें सैया मंदिर में स्थापन कीये ॥ सो ऐसें ऐसें श्री गोवर्द्धननाथ जी के अनेक चरित्र हैं जो कहां ताईं लिखिवे में आवैं । श्री आचार्य जी महाप्रभून की कृपातें स्वकीयन कें अनुभव में आये ॥ इति गोवर्द्धननाथ जी के प्रगटन समै की वार्ता संपूर्णम् ॥ संवत् १९२५ भाद्रपद सुदी ११ शुक्रवार शुभं श्रीः

विषय—श्री गोवर्द्धननाथ के प्रकटन का प्रकार और चरित्रों का वर्णन ।

संख्या १२१ बी. वनयात्रा परिक्रमा ब्रज चौरासी कोस की, रचयिता—गोकुलनाथ, पत्र—५६, आकार—१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल संवत् १८७० = १८१३ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर हरनाम सिंह, स्थान—दायीपुर, डाकघर—अतरौली, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री कृष्णाय नमः ॥ अथ वन यात्रा परिक्रमा ब्रज चौरासी कोस की लिख्यते प्रथम श्री गोसाई जी ने करी सो श्री गोसाईं जी अपने सेवकन सों कहत हैं संवत् १६०० भाद्र पद कृष्ण द्वादसी को सैन आरती करके पाछे श्री गोसाईं जी मथुरा पधारे ॥ ब्रज की परिक्रमा करवे को सो तहां प्रथम श्री मथुरा जी

में श्री कृष्ण जी को जन्म भयो है तहां कारा ग्रह की ठौर है तहां श्री मथुरा जी में विश्रांत घाट है तहां कंस को मार के श्री कृष्ण और वलराम ने विश्राम कियो है तहां श्री आचार्ज जी महाप्रभून की वैठक है तहां श्री ठाकुर जीने स्नान करि श्रम निवारण कियो है ।

अंत—व्रज के ८४ कुन्डविमल कुंड, धर्म कुंड, जग्य कुंड, पंच तीर्थ कुंड, मणिकर्णिका कुंड, जसोदा कुंड, निवास कुंड, लंका कुंड, मन कामना कुंड, सेत वंध रामेश्वर कुंड, महोदधि कुंड, क्षीर सागर कुंड, जल विहार कुंड, प्रयाग कुंड, पुस्कर कुंड, द्वारिका कुंड, घोष राना कुंड, गोपी कुंड, काशी कुंड, मोती कुंड, नृसिंह कुंड, सरस्वती कुंड, परम हरा कुंड, अभिमत कुंड, रुद्र कुंड, सूकरा कुंड, गुलाल कुंड, सेकेत कुंड, सुरभी कुंड, सीतल कुंड, रंगीला कुंड, छवीलो कुंड, दवीलो कुंड, संत कुंड, सूर्य कुंड, विसाषा कुंड, विश्राम कुंड, भोग कुंड, संकर्षण कुंड, मानसी कुंड ब्रह्म कुंड, मानव कुंड, वद्री कुंड, केदार कुंड, दोहनी कुंड, मोहनी कुंड, किशोरी कुंड, अपक्षरा कुंड, कृष्ण कुंड, राधा कुंड, जुगुल विहार कुंड, शांतन कुंड, नारद कुंड, हरिद्वार कुंड, अयोध्या कुंड, चरण कुंड, वामन कुंड, ऋण मोचन कुंड, पाप मोचन कुंड, धर्म रोचन कुंड, गोरोचन कुंड मत्स कुंड, वाराह कुंड; वलभद्र कुंड, रोहिनी कुंड, वंदी कुंड, भामिनी कुंड, रतन कुंड, गोविंद कुंड, गया कुंड, देह कुंड, श्याम कुंड, रुक्मिनी कुंड, सत्यभामा कुंड, जमुना कुंड, गोमती कुंड, नैमिषारण्य कुंड, आवंती कुंड, गरुण कुंड ब्रज वल्लभ कुंड ये ८४ कुंड हैं । इति श्री वन यात्रा ब्रज ८४ कोस की गोकुल नाथ कृत संपूर्ण समाप्तः ।

विषय—व्रज की ८४ कोस की वन यात्रा की परिक्रमा ।

संख्या १२२. भड़ई विलास, रचयिता—गोपाल (फतेपुर, आगरा), पत्र—६४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८९६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९०२ = १८४५ ई०, लिपिकाल—संवत् १९२७ = १८७०, प्राप्तिस्थान—सुरजी राय, ग्राम—दुर्गपुरा, डाकघर—नौखेड़ा, जिला—एटा ।

आदि—अथ भड़ई विलास लिख्यते ॥ आरंभ में पहिली नकल ॥ अकवर वादशाह ने वीरवल से कहा कि चार उल्लू जो पक्के उल्लू हों उन्हें मेरे सामने हाजिर करो ॥ वीरवल ने कहा चार उल्लू कहां से लाऊं ॥ निरास हो उठकर ढूंढ़ने चल दिया । जब जंगल में पहुंचे क्या देखते हैं, कि एक लकड़ी वेचने वाला ऊंचे पेड़ पर बैठकर मोटे गुद्दे को जड़ से काट रहा है और उसी पर बैठा है वीरवल वोले इससे अधिक उल्लू और कोई नहीं है । उससे वीरवल ने कहा अवे इसी डार को काटे है तू गुद्दे समेत नीचे गिरेगा । वोला मुझे उतरने में देर न लगेगी इसके साथ ही उतर आऊंगा और मेरे वोझ से डार भी जल्दी कट जावेगी । वीरवल ने जाना यह उल्लू है एक तो पाया । उससे कहा तुझे वादशाह ने वुलाया है । इतने ही में एक घासवाला घोड़े पर सवार सिरपर सवा मन का घासका गट्ठा रखा है । वीरवल वोले अवे सिर पर घासका गट्ठा क्यों रखा है उल्लू वोला वाह वाह कैसे आदमी हैं । मेरी घोड़ी गाभिन है इसपर वोझ नहीं लादूंगा ॥ वीरवल वोले आपको

वादशाह ने वुलाया है कि चार अक्लमंद लावो सो तुम मिले हो तुमसे जादा कहां पाऊंगा ॥ दोनों वीरवल के साथ हो लिये। वादशाह के दरबार में पहुंचकर वीरवल ने कहा कि सरकार उल्लू हाजिर हैं। वादशाह ने कहा मैंने चार उल्लू वुलाये तुम दोही लाये। वीरवल वोले सरकार उल्लू चारौं हाजिर है वाहशाह ने कहा कहां हाजिर है वीरवल वोले दो तो ये हाजिर हैं तीसरे आप चौथा मैं वादशाह वोले तुम और हम क्योंकि आपने ये याद किये और मैं लाया जिससे मैं हुआ। वादशाह खुश होके वीरवल को खिलत दी और विदा किया ॥

अंत—राजा वोला क्यों झगड़ते हो साधू वोले वैकुन्ठ का दरबार खुला है सो मैं कहता हूं मुझे वैकुन्ठ जाने दो कोतवाल वोला तुमको हुक्म नहीं है मुझको। राजा वोला सव हट जाओ दिया हुक्म मेरा है मैं वैकुन्ठ जाऊंगा जव फांसी पर चढ़ने को हुये तभी साधू वोले बस अब वखत नहीं रहा किवाड़ वैकुन्ठ के बंद हो गये जिस वख्त किवाड़ खुलैंगे फिर कहदेंगे अव फांसी मत चढ़ो राजा वोला फिर खुलें वता देना चेला से कहा जितना भागा जाय उतना भागो साधू ने सबको बचा दिया। अपना जीव लैके भागे। यह राजा उल्लू था। इति श्री भड़ई विलास गोपालकृत संपूर्ण लिखा रामदीन पांडे संवत् १९२७ पौष शुक्ल एकादशी ग्राम वेथर ॥

विषय—इस ग्रन्थ में भाड़ों की नकलें और तमाशे लिखे हैं ॥ इस ग्रन्थ के रचयिता गोपाल, जाति के ब्राह्मण, फतेपुर (जिला आगरा) के निवासी थे। निर्माणकाल संवत् १९०२ वि०, लिपिकाल संवत् १९२७ वि० है। निर्माणकाल इस प्रकार लिखा है:—
संवत् विक्रम जानिये नेत्र व्योम अरु सिद्धि। तापर भूमि वढ़ाय के ग्रन्थ कियो है सिद्धि ॥
जेठ दशहरा जानियो सुन्दर सुखद सुठाम। जिला आगरा मों वसत फतेपूर है ग्राम ॥

संख्या १२३ ए. मुहम्मदराजा की कथा (मोहमर्द राजा की कथा), रचयिता—गोपालनाथ, पत्र—५, आकार—९ × ६इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२५, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री रामचन्द्र, ग्राम-बेलनगंज, जिला—आगरा।

आदि—अथ मोहम्मद राजा की कथा लिखतं ॥ गुरु गोविन्द की आज्ञा पाऊँ। संत समागम वरनि सुनाऊँ ॥ सुणौ एक महा कहौ पूरण ॥ नदि विष्णु भयो वाषण ॥ वैकुण्ठ लोभ विष्णु की वास ॥ आये सकल तहां हरिदास ॥ सनक सनंदन आए ईसा ॥ इन्द्र देवते तेतीसा ॥ वाण आदि रिषीश्वर आये ॥ वड़े मुनीश्वर और सवाए ॥ परसन कै के कथत हैं ग्याना। सवही करैं विष्णु को ध्याना ॥ ब्रह्मादिक अरू आये शारद। तिहि अवसर आये मुनि नारद ॥ नारायण को पायो दरसन। कर जोरे अरु वूझे प्रश्न ॥ ४ ॥

अंत—वो हरि जी अैसी है राजा। ताके न्याइ संवारो काजा ॥ जिन तन मन क्रम लेखे लाया। पुत्र कलित्र समरथी भाया ॥ राजा नारद आनंद पायो। व्यास नृप को वरनि सुनायो। जो मानवी सीषै अरु गावै। नाराइण के अति मन भावै। गुरू गोविन्द का आज्ञा

पाई। सन्त समागम कथा सुनाई। मोहम्मद हरि जी की गाथा। तिनि प्रति गावै जन गोपाल नाथा ॥ इति मुहम्मद राजा की कथा ॥

विषय—मोहमर्द राजा की कथा का वर्णन।

टिप्पणी—प्रथम विवरण में यह आ चुका है।

संख्या १२३ बी. ध्रुवचरित्र, रचयिता—जनगोपाल, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८०६ = १७४९ ई०, प्राप्तिस्थान—रामदास बैरागी, ग्राम—बड़का कुटी नगला, डाकघर—मुरसान, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ ध्रुव चरित्र लिख्यते ॥ दो०—सिव विरंचि सनकादिक सुक नारद मुनि प्रहलाद। ध्रुव की कथा वरनन करूं तुम सव के परसाद ॥ चौ०—या भागवत कथा है भाई। चतुर्थ स्कन्ध सो गाई ॥ सुक रिसि निरपति सूं परीषत सूं गाई। नीका कहिये सुनाई ॥ गुरु गोविन्द परनाम करीजे। मन वच कर्म चरण चित दीजे ॥ राम भगति को प्रारंभ होई, गुपत वात समझाऊं सोई ॥ सत जुग त्रेता द्वापर गाइया। कलि-जुग आवा गवन जु भइया ॥ पांडव राज परीक्षित दियो। कलि प्रवेश पृथ्वी पर कियो ॥

अंत—वसुधा सब कागद करूं सारद लिखत वनाइ ॥ उदधि घोरि मसि कीजिये तौ ध्रुव महिमा न समाइ यै अजान मति आपनी कही जु घटि वधि वात। वकसत सुत अपराध कूं जन गोपाल पितु मात ॥ इति श्री जन गोपाल कृत ध्रुव कथा संपूर्ण समाप्तः लिखतं वैजनाथ मिश्र स्व पठनार्थं आश्वनि मासे कृष्ण पक्षे चतुर्दसी संवत् १८०६ वि० राम राम राम

विषय—इसमें ध्रुव चरित्र का वर्णन है।

संख्या १२३ सी. ध्रुवचरित्र, रचयिता—जन गोपाल, पत्र—२०, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) १३, परिमाण (अनुष्टुप्)—३९०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० हरिप्रसाद जी, ग्राम—जौनाई, डाकघर—टेकुआ, जिला—आगरा।

आदि-अंत—१२३ बी के समान।

संख्या १२३ डी०, प्रह्लाद चरित्र, रचयिता—जनगोपाल, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०६ = १७४९ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर रामसिंह पवार, ग्राम—दौदापूर, डाकघर—सलेमपुर, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ प्रहलाद चरित्र लिख्यते ॥ चौपाई ॥ प्रथम सीस हरि गुरु को नाऊं। कहूं कथा जो आज्ञा पाऊं ॥ भगवत भगत को जस विस्तारूं। करि आलोकन ध्यान विचारूं ॥ चारि जुगुन के चारों भेदू। रुग युग स्याम अथर वेण वेदू ॥ वावन अक्षर कूं ऊंकारा। तीन लोक वहु विधि विस्तारा ॥ चारि वरण चारों आसरमा। तिनमें कहिये नाना धरमा ॥ एक जोग एक जुगति दृढावै। इक तीरथ वरतन सूं चित लावै ॥

अंत—॥दोहा॥ अपनी जानै आप गति और न जानै कोइ। जन गोपाल फल वीज में फल से वीज कहेइ ॥ सात समंद की मसि करै। वसुधा कागज सोइ ॥ महिमा भगत भगवंत की। क्यों करि वनरैं कोइ॥ सारद लिषत न अंत हूं कहै सुनै जो कोई। तेहि भजि निज पद पाइये पार कहां सूं होइ ॥ अमृत रस प्रहलाद जस कहैं सुनै जे कोइ ॥ अभय अमर पद पाइये भगति मुकति फल होइ ॥ सुनै सुनावै प्रीति जुत हरि जन हरि जस एह। कहै गोपाल उर धारि के राम भगत सूं नेह ॥ मैं मति मारूं आपणी कही जु घटि वधि वात ॥ जन गोपाल सुत हेत कौ नीकै समुझै मात ॥

विषय—प्रहलाद चरित्र वर्णन।

संख्या १२४. चारदिशा के सुख दुख,रचयिता—गोपाललाल, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)–१६, परिमाण(अनुष्टुप्)—३०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८९६ = १८३९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामसेवकमिश्र, ग्राम—चीतामऊ, डाकघर—कादरगंज, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ चारो दिशा के सुख दुख लिख्यते ॥ पूर्व दिसाके सुख-पुरुष वाच—रूप विशेष विशेष धन भूमि सुहावन देश। जाय करौ याते आवै पूरब को परदेश ॥ कवित्त—ताफ तारु वाफता मुस्सजर श्री साफ, मखमलरु सुकेसी पटनाना सुख दाइये ॥ सरस कृपाण तरकसरु कमान वाण, जरकसी चीरा हीरा जहां जाइ लाइये ॥ सुकवि गुपाल फुलवारी धाम धाम अंव, श्रीफल कदंव वीड़ा पानन को खाइये ॥ वड़े होत केश मिलै तंदुल अशेष प्यारी पूरबके देशमें विशेष सुख पाइये ॥ पूर्व दिशाके दुख स्त्री उवाच खंडन ॥ सोरठा—लगै चोर ठग वाइ पेट चलै पानी लगै कीजै कवहुं न जाइ पूरब के परदेस को ॥ १ ॥

अंत—उत्तर दिसा के दुख—स्त्री उवाचा खंडन–दोहा—सदा सीत भय भीत नर व्याघ्र सिंह वृष घोर। कीजै नहीं पयान पिय उत्तर दिशि की ओर ॥ कवित्त—विकट पहार झार घने सिंह स्यार निरवाह नहीं होत रथ वहल को जामे है ॥ गिलटी अरु गिल्लर अनेक रोग होत जहां। चारिहु वरन जीव हिंसक हरामे हैं ॥ सुकवि गुपाल सदा सीतमय भीत लोग। वरफ के मारे दुरे रहत गुफा में हैं ॥ राह में न गामे चल्यो जात ना निशा में, याते वहु दुख पावैं जात उत्तर दिशा में हैं ॥ इति श्री चारों दिशा के सुख दुख वर्णन समाप्तः लिखा मयाराम सारस्वत ब्राह्मण आगरा वीच संवत् १८९६ वि० ॥ सियराम लखन की जै ॥ राधारमण विहारी की जै ॥

विषय—पुरुष स्त्री के संवाद के रूपमें पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण दिशाओं के सुख दुःख वर्णन किये गए हैं।

संख्या १२५ ए. कलिजुगलीला, रचयिता—गोविन्द लाल, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिव विहारी मिश्र, ग्राम—जैतपुर, डाकघर—पिलवा, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ कलजुग के कवित्त लिख्यते ॥ कवित ॥ राजन की नीति गई मित्रन की प्रीति गई, नारी की प्रतीत गई यार मन भायो है ॥ शिष्यन को भाव गयो पंचन को न्यांव गयो, सांच को प्रभाव गयो झूंठ ही सुहायो है ॥ मेघन की वृष्टि गई भूमि सब नष्ट भई, सकल संसार में विस्तार 'हर सायो है ॥ कीजिये सहाय जू कृपाल श्री गोविन्द लाल, कठिन कराल कलिकाल चढ़ि आयो है ॥ १ ॥

अंत—भूलि करि मानें नहीं भले की जमानो नाहिं, धर्म ही को थानो अधर्म को उठायो है ॥ धर्म दया शील संतोषादिक दूर धरे, काम क्रोध मोह मद लोभ सर सायो है ॥ चोर ठग फांसी असाध भये ठौर सब नये, ऐसे में अपनपौ छिपायो है ॥ कीजिये सहाय जू कृपाल श्री गोविन्द लाल, कठिन कराल कलि काल चढ़ि आयो है ॥ इति श्री कलिजुग लीला के कवित्त संपूर्ण फागुन सुदी तेरस संवत् १९३६ में लिखा

विषय—कलियुग की दशा का वर्णन है।

संख्या १२५ बी. कलियुग के कवित्त, रचयिता—गोविंदलाल, कागज—देशी, पत्र—६६, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२००, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९३०=१८७७ ई०, प्राप्तिस्थान—मौलाना रसूल खां काजी, ग्राम—गांगीरी, डाकघर—सलेमपुर, जिला—अलीगढ़।

आदि—१२५ ए के समान।

अंत—कीजिये सहाय जू कृपाल श्री गोविन्द लाल, कठिन कराल कलि काल चढ़ि आयो है ॥ भूल कर मानें नाहिं भलो को जमानो नाहिं, धर्म ही को थानो अधर्म ने उठायो है। धर्म दया शील संतोषादिक जो दूरि देर, काम क्रोध लोभ मद मोह सरसायो है ॥ चोर ठग फांसी गर असाधू भये ठौर ठौर, सबन ने ऐसे पै आपनपौ छिपायो है ॥ कीजिये सहाय जू कृपाल श्री गोविन्द लाल, कठिन कराल कलि काल चढ़ि आयो है ॥ जेते भोग विषय वियोग होय सबन को, विना ज्ञान अज्ञ जन दौरि दौरि गेह हैं ॥ सुत नासे वित्त नासे नारि हू को नेह नासे, महा शोक मन वासे तीनों ताप दहे हैं ॥ विषवत विष छोड़ि ज्ञान के खंग खांड़, उत्तम भगति मांड़ि सुधि गति रहें हैं ॥ विषया वियोग त्यागे महा मोक्ष मन लागे, भगवान रस पागे नित्य सुख लहै हैं ॥ इति श्री संपूर्णम् मिती आश्वन शुक्ला ६ सनौ संवत् १९३० वि० ॥

विषय—इसमें कलि काल के उलटे कृत्यों के संबंध के कवित्त लिखे हैं।

संख्या १२६. नैमिषारण्य महात्म्य, रचयिता—गोकरननाथ, पत्र—८८, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—११६०, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९११=१८५४ ई०, लिपिकाल—सं० १९१८=१८६१ ई०, प्राप्ति-स्थान—लाला छीतरमल, ग्राम—रायजीत का नगला, डाकघर—लखनऊ, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ नैमिषारण्य महात्म्य लिख्यते ॥ दोहा—गुरु गणपति अरु शारदा श्री पति गौरि महेश ॥ सिद्धि करहु कारज सकल यशुदा तनय हमेश ॥

नैमिषार महात्महिं भाषा करत प्रचार ॥ निज वल वुद्धि भरोस नहिं केवल आस तुम्हार ॥ चौ०—मोरे चित अति वढ़ो हुलासा । भांति अनेक कथा इतिहासा ॥ काव्य संहिता कोष पुराना । देखे प्रथक प्रथक धरि ध्याना ॥ सहजहिं हृदय एक दिन आई । नैमिष वारता कहौ कछु गाई ॥ जो कछु मिलो जतन करि भारी । लिखेहुं तौन सुमति अनुहारी ॥ पढ़ि करि हहिं सज्जन अभ्यासा । खल वहु भांति करै उपहासा ॥ सो संदेह नहीं उर मेरे । दुष्ट सदा हरि माया प्रेरे ॥ पर गुण हरण विघन दिन राती । जिने हृदय रहैं बहुभांती ॥

अंत—शीश शशि ग्रह अरु चंद्रमा संवत् विक्रम भूप । पौष शुक्ल तिथि द्वैज यह विरच्यो ग्रन्थ अनूप ॥ इति श्री नैमिषारण्य महात्म कथा संपूर्ण समाप्तः लिषतं शीतलप्रसाद वैश्य संवत् १९१८ वि०

विषय—इस ग्रन्थ में नैमिषारण्य (मिश्रिख) तथा हत्याहरणादि तीर्थों का माहात्म्य वर्णन किया गया है ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता गोकरण नाथ नैमिषार (नैमिषारण्य) निवासी थे । निर्माणकाल संवत् १९११ वि० है । लिपिकाल संवत् १९१८ वि० है । निर्माणकाल ऐसा लिखा है:—शशि शशि ग्रह अरु चन्द्रमा संवत् विक्रम भूप । पौष शुक्ल तिथि द्वैज यह विरच्यो ग्रन्थ अनूप ॥

संख्या १२७. शगुनपरीक्षा, रचयिता—गोकुलचन्द, कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४७०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२७ = १८७० ई०, प्राप्तिस्थान—लाला दिलसुखराय, ग्राम—नगरा भगत, डाकघर—पटियारी, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ शगुन परीक्षा गोकुल चन्द कृत लिख्यते ॥ अथ शगुन परीक्षा रंभः ॥—जो मनुष्य अपने घर से किसी कार्य को चले उसको मार्ग में पानी से भरा घट मिले अथवा निर धुन्ध या धुआं से रहित अग्नि मिले अथवा मछिली की डलिया मिले अथवा कोई रोटी लिये आगे से आता होय व दूध आगे से लिये आता होय तो ये शगुन शुभ है ॥ जिस काम को जाता होय तो कार्य सिद्धि होगा । और किन्तु रोगी के निवृतार्थ दूत वैद्य को बुलाने जाता हो मिले तो मध्यम हैं और वैद्य को मिलैं तो शुभ हैं ॥

अंत—जो ऐसे कुशगुन होय तो अगर घर को न लौट सके तो वहीं ठहर जाय और स्नान आदि पूजन भजन करके किसी मंदिर में ठहर जावे अथवा सूर्य नारायण को जल चढ़ाइ गुरु मंत्र का जाप करैं और उस समय श्रद्धानुसार जो कोई आजाय पुन्य करके देवे तो ऐसे खोटे शगुन का प्रभाव जाता रहे ॥ और कार्य भी सिद्धि होगा ॥ इतना उपाय अवश्य करना योग्य है ॥ संवत् १९२७ ई० ॥

विषय—शकुन विषय वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता गोकुल चन्द जिला मथुरा निवासी थे । इनके पिता का नाम हकीम रामचन्द था । लिपिकाल संवत् १९२७ वि० है ॥

संख्या—१२८. सुकमाल चरित्र, रचयिता—गोकुल (गोला पूरब), पत्र—१५०, आकार—१०½ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५५०,

रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १८७१ = १८१४ ई०; लिपिकाल—संवत् १९५४ = १८९७ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला ऋषभदास जैन, ग्राम—महना, डाकघर—इटोजा, जिला—लखनऊ।

आदि—॥ ६० ॥ ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥ अथ सुकमाल चरित्र भाषा लि० ॥ नमः श्री विश्वनाथाय पंच कल्यान भागिनें ॥ महंते वर्द्धनाय निल्या नंत गुणाठवे ॥ १ ॥ टीक—ग्रन्थ कर्त्ता ग्रन्थ के आदि विषैं निर्विघ्न के सिद्ध रे अर्थ इष्ट देव के निमित्त नमस्कार करै है ॥ श्री विश्वनाथ श्री वर्द्धमान तीर्थं कर के निमित्त नमस्कार करै है ॥ श्री विश्वनाथ श्री वर्द्धमान तीर्थ करके निमित्त नमस्कार होहु ॥ कैसे हैं विश्व कह तांतीनों लोकों के स्वामी हैं। फिर कैसे है पंच कल्यान करि विराजमान हैं। फिर कैसे हैं महन्तु कहता देव मनुष्यन मैं सर्वोत्कृष्टि है फिर कैसे हैं नित्य कहता सास्वते जे अनंते गुण तिन्ह के समुद्र समान हैं ॥ १ ॥

अंत—प्रकार इहि शास्त्र की भाषा का संक्षेप रूप मंद वुद्धि के अनुसार गोला पूर्व गोकल ने करी ॥ जो या विषैं प्रमाद के जोगतैं पदस्वर व्यंजन ही काधिक होय तो हे वुद्ध जनहौ हम पै क्षमा करके सोध लेनौं ॥ मिति कार्तिक वदी परमा ॥ १ ॥ संवत् १८७१ ॥ अठारह सै इकहत्तर की साल में टीका संपूर्ण करौ ॥९५॥ इति श्री सुकमाल चरित्रे भट्टारक श्री सकल कीर्ति विरचिते यसोभद्रा जसोभद्र सुरेन्द्र दत्त वृषभाष कन वध्व मोक्षगमण सुकुमाल सर्वार्थ सिद्धि अहमिद्रं विभूति वर्णनो नाम नमः सर्गा ॥ संपूर्ण ॥ समाप्तं ॥ मिती मार्ग सुदि ॥ १ ॥ संवत् १९५८ ॥

विषय—पृ० १ से २१ तक—वीर नाथ जू श्री ऋषभ देव तथा गोतम गुणधरादि की स्तुति। कथा का आरंभ। नाग श्री कन्या कौ मुनि सूर्य मित्र और अग्नि मित्र द्वारा धर्मोपदेश की प्राप्ति (२) पृ० २१ से ३४ तक—नाग श्री के पिता का पुत्री से कष्ट होना और जैन धर्म संबंधी वृत त्याग का आदेश और पुत्री के अनुरोध से निजपुत्री सहित व्रत त्यागने के लिये उन्हीं मुनियों के पास जाना। हिंसा से दुःख की प्रत्यक्ष प्राप्ति का उदाहरण (३) पृ० ३४ से ४४ तक—अब्रह्म परिग्रह। गात प्रत्यक्ष दोष दर्शन तथा नाग श्री के भवांतर संबंधी प्रश्न करन वर्णन (४) पृ० ४५ से ६१ तक - सूर्य मित्र से द्विज नागसी के पिता का दीक्षा ग्रहण करना। जिन धर्म की प्रशंसा और पौराणिक धर्म की अवज्ञा। (५) पृ० ६२ से ७६ तक—नाग श्री के भवान्तर की कथा। (६) पृ० ७७ से ९३ तक—नाग श्री तथा नाग शर्मादि का तपः स्वर्ग गमन वर्णन ॥ (७) पृ० ९३ से ११० तक—सुकुमारीत् पति सुख वर्णन ॥ (८) पृ० १११ से १३४ तक—वारह अनुप्रेक्षाओं का वर्णन तथा सर्वार्थ सिद्धि का गमन। (९) पृ० १३५ से १५० तक—यशोभद्रा। जसोभद्र। सुरेन्दु। दत्त तथा व्रप भाष और कनक ध्वज का मोक्ष गमन ॥

टिप्पणी—यद्यपि प्रस्तुत ग्रन्थ में 'सुकमाल' के चरित्र का वर्णन किया गया है किन्तु यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तो उक्त विषय बिलकुल गौण जँचेगा। इसमें जैन धर्म के सिद्धान्तों को स्पष्ट करना ही ग्रन्थ कर्त्ता ने लक्ष्य में रक्खा है। इसके साथ ही "ब्राह्मण"

धर्म का खंडन भी किया गया है ॥ यही नहीं प्रत्युत एक ब्राह्मण कन्या को जैन धर्म की दीक्षा दिला कर उसके पिता को बड़ी युक्ति के साथ जैनी बना दिया गया है। इस प्रकार जैन सम्प्रदाय के अनुयायियों को अपने धर्म में दृढ़ बनाया गया है। इस का गद्य कथा वाचक व्रजवासी पडितों जैसा है ॥

संख्या १२९. भागवत दशम पूर्वार्द्ध (भाषापद्यानुवाद), रचयिता—गोपीनाथ द्विज (दिहुली मैनपुरी), पत्र—४१, आकार—१३½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—११२७, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १६३९ = १५८२ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर शिवलालसिंह, ग्राम—पिपरौली, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ पूर्वार्धं लिष्यते ॥ चौपाई। प्रथम चरण सुमरौं भंग वंता। करन हरन जे आदि अनंता ॥ अवगति रुप आदि है तासू। घट घट सव ही मध्य प्रकासू ॥ १ ॥ बृह्मा बुद्धि नभितै नयौ। रुद्र ते जवर दाइक ठायो ॥ जाके मुख सारद नित रहै। अगम निगम वानी सव कहै ॥ २ ॥ ता सारद कों करों प्रनामू। जो मन करै बुधि विश्रामू। वसति तिनन मे सदा भवानी। बरदाइक सव लोक वखानी ॥ ३ ॥ हृदय लक्षिमी सदा निवासू। नैन सूर ससि होत प्रकासू। रिधि सिधि गणपति हैं संगा। सब देवता तासु के अंगा ॥ ४ ॥

अंत—रथ तै कनक डंड लै परै। टूटि मुकुट कुंडल रज भरै ॥ दोऊ चरण रहे गहि हाथा। चारयो मुख लोटहि लटि माथा ॥वहै नैन जल सो पग धोवै। मनकी मनहु कालिमा खोवै ॥ ५३ ॥ इति श्री भागवते महापुराणे दसम स्कन्धे बृह्मा मोहननो नाम त्रयोदशमोध्याया ॥ १३ ॥ श्री शुकौ वाचा ॥ चतुर्देशेद्भुतं दृष्ट्वा पूर्वागंतुक निश्चयं अनीशः कर्तुमस्तौषी कृष्णं ब्रह्मा विमोहिताः ॥ १ ॥

विषय—श्री मद्भागवत दशम स्कन्ध का भाषा में पद्यानुवाद। पृष्ठ २ में ग्रन्थ निर्माण काल सोरह सै उनताला भयो, श्रावण सुदि दशमी दिनु लयो। रवि अनुराधा भयो उछाहू। कीजहु सारद कथा निवाहू ॥ सम्राट वर्णनः—निरभय राजु अकवर तनो। तीनि लोक जाको जसु घनों ॥ स्थानादि वर्णनः—नगरु आगरो उत्तिम थानू। सुने पुरान भयो मन ज्ञानू। मिश्र चतुर भुज गुरु मन ध्यानू। जो विधि विधा पूरण ज्ञानू ॥ प्रेम भक्ति जिन ईश्वर जान्यों। प्रेम रुप जग प्रगट वखान्यौ ॥ कविवंश परिचयः—कहै विजन सुत जन भगवानू। वंस बरन में विप्र सुजानू ॥ पुरिषा गति दिहुली में वासू। प्रथम भागवतु वंदी दासू ॥ पोषि दूरि कीजै अघ हरना। गोपीनाथ तुम्हारे सरना ॥

टिप्पणी—यह ग्रन्थ प्रसिद्ध मुगल सम्राट अकबर के समय में गोपी नाथ द्विज ने रचा है। यह अपने पूर्वजों का निवास स्थान दिहुली बतलाते हैं। यह ग्राम मैनपुरी जिले की करहल तहसील में है। रचयिता अपने गुरु का नाम चतुर्भज मिश्र बतलाते हैं और ग्रन्थ का रचना काल संवत् १६३९ ठहराते हैं। इन्होंने दशम स्कन्ध का पद्यानुवाद प्रायः सरस और उत्तम भाषा में किया है।

संख्या १३०. शीघ्रवोध, रचयिता—गुलाबदास, पत्र—१६०, आकार—८ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९२०, रूप—प्राचीन, पद्य और गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १८०२ = १७४५ ई०, लिपिकाल—संवत् १८२३ = १७६६ ई०, प्राप्तिस्थान—उमादत्त जी टीचर, ग्राम—फिरोजाबाद, डाकघर—चाऊ, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। भाशयतं जगद्भाशं 'नत्वा' भाशंतमव्ययं। कृयते काशिनाथेन। शीघ्रवोधायसंग्रहं। १। टीका। अवयपुरुष के ध्यानतें, पातक तिमिर मिसाइ। जैसे सूर प्रकास तें निसातिमिर मिटि जाय। १। रोहिण्युत्तर रेवत्यो मूलं स्वाति मृगो मघा अनुराधा च हस्तश्च विवाहे मंगलप्रदा। २। टीका। रोहिनि उत्रा तीनि। रेवे हस्त अरु स्वाति मृग मघ अनुराधा तीन। पानि ग्रहन गनि मूलमें। २। अवागमन्वि वाहश्च कन्या वरणकेवच। ववंते सर्व वीर्जंच सुंण्य ग्रामवसायते। ३। अर्थ, रोहिणी तीन्यों उत्तरा। रेवती मूल स्वाति म्रग सिरम्रगा अनुराधा··क्षत्र ग्यारह।११॥ विवाह को उत्तिम लए हैं।

अन्त—जो पडित संशार मै सबसूं विनती ऐह। छिमा कीजो चूक मों ज्यो पिता पुत्र जा नेह। काशीनाथ अगाधक्रत कोनलहै ता पार। गुलाबदास भाषा रची बुधिसारथो विसतार। १। अठार सैर दुहोतरा माघमास रविवार, कृष्णपक्षकी दसैक कीयो समापित सार। मोमे चूक परी जहां पंडित लेहु सुधारि। संस्कृत समभ्यो नहीं बुधि सारयो उरधारि। ३। संस्कृतकी सक्ति न होइ, जो पंडित सीषो सब कोइ, पर उपगार्जा बिज्यो ऐह, सुधौ अर्थ जानियो तेह। ४। इति श्री भाषा शीघ्रवोध समाप्तं। शुभमस्तु। संवत् १८२३। वर्षे चैत्र द्वितीया मास मैं। वदी १३ तेरसि सोमवासरे। लिखितं गोपाल दास वा प्रेम दास पठतर्थ्यं पाडे धर्मदास ब्राह्मण। दोहा। स्वारथसौं राच्यौ रहै, साध न देखि उलास। ताको अषरि होतु है क्रम माझ परकास॥ १। साधन सतसंगति भए कटत सकल जंजाल। पापपहार विलात ज्यौ, उदित सूर ततकाल। १। पंडित पटत मर्म नहिं जानै। अर्थ विनासव जाही। दीसतु जलजु प्यास नहीं जाती कूवामधि लषि झांही। रामजू है।

विषय—काशीनाथकृत शीघ्रवोध की भाषाटीका।

संख्या १३१. रसीले तरंग, रचयिता—गुलजारीलाल रसीले (नरवल, कानपुर), कागज—देशी, पत्र—२८, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४२, परिमाण (अनुष्टुप्)—५८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १९२८ = १८७१ ई०, लिपिकाल—संवत् १९३२ = १८७५ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर रामसिंह, ग्राम—देवपुरा, डाकघर—सोरों, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ अथ रसीले तरंग लिख्यते दोहा—श्री लम्बोदर तुव चरण वंदि कहौं सति भाव। कर गहि पार लगाइये मेरी अनाथ की नाव॥ अनपढ़ हौं मति मंद अति नहिं अक्षर को ज्ञान। कविन को जूठन वीनि कै कीन्ह इकट्ठा आन॥ भूल चूक

छमिये सकल तुम्हें कहौं कर जोरि। राम चरित कछु कहत हौं सारद तुम्हे निहोरि॥ है गुलजारी लाल पुनि नाम जात परधान। रावल देबी की शरण नरवल शुभ स्थान॥ अहो शारदा आइये मम कुबुद्धि के हेत। दोष न देवैं मोहिं कोउ प्रणवो विनय समेत॥ विन विचार गण अगण के निज मति कर अनुमान। चरित सिया रघुनाथ के करै निरंतर गान॥ प्रेम सहित जो गाइहै करि प्रभु पद अनुराग॥ मन वांछित फल पाइ है विना जोग जप जाग॥

अंत—सिया रघुवीर वसंत खेलत आजु वजै निसान सब सुरन एकरी॥ चहत भिंगोवन लषन सिया को पट देत छुवाई सो तिनै न केरी॥ छूटन लाग रंग दुहु दिशि से हंसि हंसि कुम कुम मारै फेंकरी॥ करत विदूषक स्वांग विविधि विधि छांडि लाज अरु तजि विवेक री॥ निचुरत पीत वसन तन लिपटे मलैं अबीर मुख करन टेक री॥ देवर जेठ गिनत नहीं कोई तहं गावत नाचत राग अनेक री॥ सुख समूह रहियो छाय रसीले मानो दई विधि रेख छेकरी॥ इति श्री रसील तरंग गुल जारी लाल रसीले कृत संपूर्ण समाप्त लिखतं बाबू दयाल वनियां स्थान सरैयां जिला एटा संवत् १९३२ वि० फागुन शुक्ल पक्ष त्रयोदसी संपूर्ण ग्रन्थ॥ राम राम राम

विषय—राग रागनियों में रामचन्द्र जी की लीला लिखी है॥

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता गुलजारी लाल जाति प्रधान ग्राम नरवल जिला कानपुर निवासी थे। निर्माण काल संवत् १९२८ वि० लिपिकाल संवत् १९३२ वि० है॥ इसको इस प्रकार लिखा है:—है गुलजारी लाल पुनि नाम जाति परधान। रावल देवी की शरण नरवल शुभ अस्थान॥

संख्या १३२. रामचरित्र, रचयिता—गुरदीन, कागज—देशी, पत्र—३५, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४७८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १८७८ = १८३१ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा खरगीराम पुजारी, स्थान—अलीगंज, जिला—एटा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः॥ श्रीरामचरित्र लिख्यते। भाल लालरी है वंदन कै अलिगण मंडित गंड अपार। एक रदन मिलि जनु वहि निकसी कुंजर वदन त्रिवेनी धार॥ १॥ लगी कचहरी रघुनंदन कै वैठे महा महा महिपाल। मध्य मंडली रिषि राजन कै जिनकै गिरा तीनहू काल॥ २॥ सूर सिरोमनि जे सेनापति सूरज पुत्र वालि का वाल। वालि विभीषन पति रीछन कौ मारुत नंद काल कौ काल॥ ३॥ भरत लछिमन औ रिपु सूदन भूषन पूषन यह संसार स्वामी रघुपति वर सिंहासन जिनके सीस जगत कौ भार॥४॥

अंत—सो सुख आये पुर रघुवर के कहि श्रुति सेस गनेस न पार। सो सुख पूरन परितापन कहं गाये राम सुजस एक वार॥ ऐसी भारी भौ सागर मा जीवन जिन उपाय नहिं कीन। तिनके तारन हित सरनी सम वरनी राम कथा गुर दीन॥ इति श्री रामास्व मेद समाप्त लिखतं रामसेवक कंपनी एक छावनी। इटाये संवत् १८७८ वि०॥ राम राम राम॥

विषय—रामचरित्र वर्णन।

संख्या १३३ ए. कविविनोद, रचयिता—गुरुप्रसाद, पत्र—८६, आकार—१० X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—संवत् १७४५ = १६८८ ई०, लिपिकाल—संवत् १८९१ = १८३४ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री नौबतराय गुलजारीलाल वैद्य, स्थान—फिरोज़ाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ आदि मंगलाचरण कवित्त ॥ उदित उदोत जगि मगि रह्यौ चित्रभानु ऐसे ही प्रताप आदि रिषभ कहत हैं। ताको प्रतिविम्ब देषि भगवान रूप लेषि ताहिन मो पाय पेषि मंगल चहत है ॥ अैसी करो दया मोहि ग्रन्थ करौ टोहि टोहि धरयौ ध्यान् तव तोहिं उमग गहत है। वीचन विघन कोऊ अछर सरल दोऊ नर पढ़ै जोऊ सोऊ सुष को लहत हैं ॥ १ ॥ दोहा—परम पुरुष परगट वहुल, त्रिभुवन रवि सम वीर। रोग हरन सव सुष करन, उदधि जेय गंभीर ॥ २ ॥ सेवत जाके चरन जुग, जाकौ रिधि सिद्धि देइ। जो धोवे मन में सदा, मंगल ताहि करेइ ॥ ३ ॥ गन पति दाता बुद्धिकौ, तातै कहियै तोहि। यही वीनती आपनी, सरल बुद्धि दै मोहि ॥ ४ ॥ गुरु प्रसाद भाषा करी, समझि सकै सवु कोइ, ओषदि रोग निदान कछु, कवि विनोद यह होइ ॥ ५ ॥ घटि वढ़ि आछिर होइ जौ, पंडित करियो सुद्ध। रचना मेरी देषि कै, करो न कोइ विरुद्ध ॥ ६ ॥ वानी अगम अनेक रस, कह्यौ न जाइ जग माहि। गुरु विन प्रगटन होइ सव, गुरु विन अछिर नाहिं ॥ ७ ॥ संस्कृत अरथ न जानई। सकति न पूरी होइ। ताके वुद्धि परकास को भाषा कीनी टोइ ॥ ८ ॥ संमत सत्रह से समै, पैंतालें वैसाष। सुकुल पक्ष पाँचैं सुदिन, सोमवार वैसाष ॥ ९ ॥

अन्त—तैसे वैद्य समुद्र यह, वलवत होइ कनार ॥ ९८ ॥ कह्यौ ग्रन्थ में अल्प मति, गुरुप्रसाद मैं कीन्ह। घटि वढ़ि अक्षर होइ जौ, ताहि सुधारि प्रवीन ॥ ९९ ॥ षर तर गछ महिमा अमित, सुमति मेरु गुरुजान। ताकौ शिष्य सव मैं प्रगट, कह्यौ ग्रन्थ मुनि मान ॥ १०० ॥ पुण्य कथन—सास्त्र दान है ज्ञान बहु, दान अभय निरवाह। भोजन दै तो सुष अधिक, भेषज निर व्याघाह ॥ ६ ॥ रोग हरण तातैं अधिक, लोभ छाड़ि कै देह। वधै सुजस संसार मैं, पर भव सुष का गेह ॥ ७ ॥ इति श्री षर तरग छीय वाचना चार्य्य वर्य्य धुर्य्य श्री सुम्मति मेरु शिष्य मुनि मान जी कृत कवि विनोद नाम भाषा निदान चिकित्सा पथ्या पथ्य समान सप्तम खंड समाप्ता ॥ ७ ॥ कविविनोद सम्पूर्ण संवत् १८९१ चैत्र कृष्ण १२ गुरुवासर लिषतं दमीलाल काइस्थ श्रीवास्तव।

विषय—(१) मंगलाचरण, नारी परीक्षा, रक्त निकालन, मात्रा कथन, पंचमाल कथन औषधि लेने की भूमिका, विधि, साध्या साध्य, नक्षत्र निर्णय, मूत्र परीक्षा, दूत लक्षण, रोगी लक्षण, कफ प्रतिकार, वात पित्त कफ मास कथन इनका कोप कथन, ज्वर व्यवहार, मिथ्याहार, ज्वर उत्पत्ति, लंघन निषेध भेषज काल, दस ज्वर, शीतोष्ण जल, सप्तक्वाथ नाम मर्यादा। अति लंघन हीन लंघन और शुद्ध लंघन लक्षण, वात पित्त कफ द्वंदज निदान, वात ज्वर चिकित्सा [पृ० १ से १३] (२) पित्तज्वर, कफ ज्वर क्वाथ, विषम ज्वर लक्षण, षोड़षांग चूर्ण सुदर्शन चूर्ण, लाक्षादि तैल, सन्निपात निदान, नेत्र अंजन विषेस सन्निपात १३ भेद, आनन्द भैरव रस, अतीसार निदान चि० ग्रहणी चिकित्सा

[१४—२८] (३) अर्स निदान चि० मंदाग्नि, अजीर्ण, कृमि, पांडुरोग, पित्त, रक्त, नासा रक्त, हिचकी, यक्ष्मा, कासश्वास, हिक्का, स्वरभंग, रोचक छर्दि, तृषा, मूर्छा, अपस्मार, वात व्याधि [२९—४३] (४) अर्दित ग्रन्धसी, वातरक्त, उरु स्तम्भ, आम-वात सूल करण, उदावर्त्त, अनाह, गुल्म स्थान पंचक, गुल्म, हृद्रोग, मूत्र कृछ्र मूत्र घात, पथरी मेह, वीस प्रमेह भेद, उदर शोथ, अण्ड वृद्धि गल गंड, व्रण, भगंदर, उपदेस, कुष्ट, विस्फोट, मसूरिका, सथंभ, मुख रोग [४४–६०] (५) कर्ण, नासा, नेत्र, सिर, प्रदर, सोम रोगों का निदान तथा चिकित्सा, योनि शुद्ध करण, सूति का रोग, भग संकोचन, लिंग दृढ़ करन, स्तंभन, दुर्गन्धी हरण, वालक लक्षण, विष चिकित्सा वृश्चिक चिकित्सा, भल्लात् की चिकित्सा, निघंट, परिपाक घृत, स्वेदाधिकार, वमन रेचन, फारसी रेचन, वमन विरेचन द्राक्षासव, मधु पक्का हरड़, शत भेद, हरीतिकी, लेखक विन्ती पोथी कथन [६१–८६]

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रंथ संस्कृत में था । उसका पद्यानुवाद किन्हीं गुरु प्रसाद जी ने किया है । मूल ग्रन्थकार सुमति मेरु के शिष्य मुनिमान जी कोई जैन साधु थे ।

संख्या १३३ बी. वैद्यकसार संग्रह, रचयिता—गुरुप्रसाद, पत्र—२४, आकार—७३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५७६, खंडित । रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—नौबतराय गुलजारीलाल, स्थान—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ गुरुभ्यो नमः धनवन्तराइ नमः अथ संग्रह सार लिषते ॥ १ ॥ एक दंत गज आनन लम्बोदर भुज चारि । वुधि विद्या के दाता सुमिरौ तोहि विचारि ॥ २ ॥ सकल सिधि के दाता । नन्दन उमा महेश । वुद्धि वल विद्या वानी या...सुमिरत नाम गनेस ॥ ३ ॥ आचारज कृत पाठजे । पढ़ै सुनै उपदेश । गुरु ग्रन्थन शिर नाइकै । भाषा कथौ सुदेस ॥ ४ ॥ धन्वतरि के पाठ वहु । वहु विधि वहुत विचारि । ···की कवि कहौं वखानु कछु । सूक्षम करौं संचारि ॥५॥ पाठ पुरा तन जे सुने । रोग चिकि-त्सा जानि । ताको वियननि मानि कैं । भाषा कहौं वखानि ॥ ६ ॥ चौपाई ॥ प्रथम कहौं रोग विचारा । पुनि मैं कहौं तिनके उपचारा ॥ मुनि विचारि...ग्रन्थन कहौ । गुरु प्रसाद ते भाषा लहौं ॥

अंत—अथ मूत्र परिच्छा ॥ दोहा ॥ आदि धारा परित्याजः जैम धारा समा धरः ॥ षट तेलं परि खनं ॥ साधु आसाधंत रोगः ॥ मूत्र मध्ये जथा तैलं यास्थिने वल लोपीयाः । साधू भवेत रोगः असाधु विन्दुरंग तुरंग ए तू ॥ वाते न बिस्तं छयः साकेन वन्गोयः मिश्रं से वुधई ॥ सेत धारा वलं श्रष्टं पित्त धारा चिमध्येमः ॥ सरोगी रक्त धारा चः कृष्ण धारा भवैं मिती ॥ ऐसी मूत्र परीक्षा समायां ॥......

विषय—(१) ज्वर के लक्षण भेद तथा चिकित्सादि वर्णन १–५ (२) अतीसार तथा संग्रहणी वर्णन ५–६ (३) सर्व विकार वर्णन कृमिरोगादि चिकित्सा तथा रक्त पित्त चिकित्सा ९–१७ (४) यक्ष्मा रोग । छर्ई रोग श्लेष्मा तथा सन्नपातादि वर्णन और मूत्रादि परीक्षा १७–२४

संख्या १३४. याज्ञवल्क्य स्मृती भाषा, रचयिता—गुरुप्रसाद पण्डित, पत्र—१५०, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) – १४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९३० = १८७७ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर परसूसिंह, ग्राम—रामनगर, डाकघर—बारा, जिला – सीतापुर ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ याज्ञ वल्क्य स्मृति भाषा लिख्यते—किसी समय सोम श्रवस आदि मुनियों ने जोगियों में श्रेष्ठ याज्ञ वल्क्य मुनि को भली भांति पूजकर पूंछा कि महाराज ब्राह्मण आदि वर्ण ब्रह्मचारी आदि आश्रम और दूसरे अनुलोमज प्रति लोमज संकर जातियों का संपूर्ण धर्म हमसे कहिये ॥ मिथिला नगरी में रहने वाले उस जोगीश्वर ने क्षण भर ध्यान कर मुनियों से कहा जिस देश में काले हिरन होते हैं उसके धर्म सुनो ॥ अठारह पुराण न्याय मीमांसा धर्म शास्त्र और व्याकरण आदि छः अंकों के सहित चारों वेद ये १४ विद्या के अर्थात् पुरुषार्थ ज्ञान के और धर्म के कारण हैं मनु १ अनि २ विष्णु ३ हरीत ४ याज्ञ वल्क्य ५ भृगु ६ अंगिरा ७ यम ८ आपस्तम्ब ९ संवर्त १० कात्यायन ११ बृहस्पति १२ पराशर १३ व्यास १४ संख लिखित १५ दक्ष १६ गौतम १७ शाता तप १८ और वशिष्ठ १९, इतने धर्म शास्त्र के मुख्य बनाने वाले हैं ।

अंत—जो पंडित इस धर्म शास्त्र पर एक पर्व में द्विजों को सुनावै उसको अस्वमेध यज्ञ का फल होता है । इन सब बातों की भी अनुमति आप करै ऐसा मुनियों का कहना सुनकर यज्ञ वल्क्य जी ने भी प्रसन्न हो और परमात्मा को नमस्कार करके कहा कि ऐसा ही होवै ॥ इति श्री याज्ञ वल्क्य स्मृति भाषा पंडित गुरु प्रसाद कृत संपूर्ण समाप्तः संवत् १९३० वि० ॥

विषय—याज्ञ वल्क्य स्मृति का भाषानुवाद ।

संख्या १३५ ए. गोपी पचीसी, रचयिता—ग्वाल कवि, पत्र—१४, आकार—७३/४ × ५१/२ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०५, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० बैजनाथ ब्रह्म भट्ट, स्थान—अमौसी, डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ ।

आदि—अथ गोपी पच्चीसी प्रारम्भ जैसे कान्ह जान तैसे उद्धव सुजान आये । हैं तो महिमान पर प्राननि निकारें लेत ॥ लाख बेर अंजन अँजाये इन हाथन तें । तिनको निरंजन कहत झूठ धारें लेत ॥ ध्यान पर चेरी पर चेरी संग पर चेरी । योग परचे ह्याँ भेजि परचे हमारे लेत ॥ अपनी ही सूरति को साजिके सिंगार सर्व । भेजो सखा सेद्दुआ कुमंत्र अति भारा है ॥ जानी ही की मैरि है अँदेस दै सँदेश यह । लायो सो अँदेस के बिचारन नगारा दै । ग्वाल कवि कैसे व्रज वनिता वचैंगी हाय । रचैंगी उपाय कौन द्वारन किवारा दै ॥ चौगुनी दवागनि ते जोर विरहागिनि ही । सो तौ करी सौगुनी ये योग व्रत धारा दै ॥

अंत—ऊधौं वाक्य श्री कृष्ण सों ॥ रावरे कहे ते हों गयो हो व्रज बालन पै । देखति ही मोहिं कियो आदर अपारा है ॥ कहतै तिहारी वात गात ते भभूके उठे । परत वरुद की जमाँति ज्यों अंगार है ॥ ग्वाल कवि कहै लागी लपट दवागिन सी । दौरो मैं तहाँ ते तौऊ झरसो दुबारा है ॥ गोपी विरहागिन में जोग उड़ि गयो ऐसें । जैसे उड़ि जात परैं पावक में पारा है ॥ इति श्री गोपी पच्चीसी ॥

विषय—गोपी उद्धव संवाद ॥

संख्या १३५ बी. कविहृदय विनोद, रचयिता—ग्वाल कवि, पत्र—८१, आकार—७¾ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६४८, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० बैजनाथ ब्रह्मभट्ट, स्थान—अमौसी, डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ।

आदि—श्री गणेशाय नमः। कवि हृदय विनोद लिष्यते कवित्त चंडी को—दंडी ध्यान ल्यावै गुनगावै है अदंडी देव। चंड भुज दंडी आदि केत कवि हंडी है ॥ कीरति अखंडी रही छाय नव खंडी खूब। चौभुज उदंडी वरा मै असि मुशंडी है ॥ झंडी करुना की ब्रह्ममंडी कहै ग्वाल कवि। छंडी नही पैज भक्त पालन घुमंडी है ॥ मंडी जोति जाहिर घमंडी खल खंडी दंडी। अधिक उमंडी बल वंडी मातु चंडी है ॥ १ ॥

अंत—चौसर चमेली चारु चाँदी के चंगेरन लै। चंदन कपूर पूर करि डार्‌यो सास त्रास ॥ गेह तजि आई नये नेह में बिकाई हाय। देह में अदेह दुखदाई यो खास खास ॥ ग्वाल कवि मंजुल निकुंज में बुलाई हाय। आपन दिखाई खूब सूरत विलास भास ॥ आस में विसास दै विलासी रस रास प्यारे। करी में निरास पास अबहूं न आस पास

विषय—(१) पृ० १ से ११ तक चंडी, गंगा जी, जमुना जी, त्रिवेणी जी, कृष्ण जी और रामचन्द्रजी के विषय के कवित्त। (२) पृ० ११ से १५ तक—गजोद्धार और सान्त रस के छन्द। (३) पृ० १६ से १८ तक—ब्रज भाषा, पुरंबी, गुजराती तथा पंजाबी भाषा के कवित्त। (४) पृ० १८ से ४० तक—षट ऋतु के कवित्त। (५) पृ० ४० से ४८ तक—कलियुग के कवित्त और प्रस्तावक। (६) पृ० ४८ से ५२ तक—नेत्र तथा कुच संबंधी कवित्त (७) पृ० ५२ से ८१ तक—फुटकर श्रृंगारादि के कवित्त।

संख्या १३५ सी. नखशिख बृजराज श्री कृष्णचन्द्र जी, रचयिता—ग्वाल कवि (मथुरा), पत्र—१२, आकार—१३ × ७¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८८४ = १८३७ ई०, लिपिकाल—सं० १९१८ = १८६१ ई०

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ नष सिष श्री''' घृजराज कृष्णचन्द्र जू को लिष्यते ॥ कवित्त ॥ वीन करवर हंस कलित वषानियत कीरति तनै या सुरगा मत मुनीसरी ॥ पुनि रुप मुष चंद प्रसिधि प्रमानियत जलजन माल मृदुलता विसै बांसुरी ॥ ग्वाल कवि निगम पुरान की अधार कहै सुंदर तरंग करि सकै को कवीसुरी ॥ वरनै विसेस कवि पावत नहीं है थाह संपति मरैया महाराजा जगदीसुरी ॥ १ ॥ दोहा ॥ श्री गुरु श्री जगदंबिका, श्रीपितु दया सुभाय। तिनके चरण सरोज कों, वंदत शीस नवाय ॥ २ ॥ कृष्णचंद महाराज के तनको सोभ अपार। सेस महेस गनेस विधि, नारद व्यास विचार ॥ ३ ॥ श्री राधा वाधा हरी, माधा सास्त्र प्रकास, वासी वृंदाविपिन के श्री मथुरा मुष वास ॥ ८ ॥ विदित विप्र वंदी विसद, वरनें व्यास पुरान, ताकुल सेवाराम को, सुत कवि ग्वाल सुजान ॥ ९ ॥ वेद[४] सिद्ध[८] अहि[८] रैनिकर[१] संवत आस्वनमास, भयो दसहरा कौं प्रगट नष सिष सरस प्रकास ॥ १० ॥

अंत — सम्पूर्ण मूर्त्ति वर्णन ॥ कोक नद पद कंज कोस से जुलफ गोल जंघ, कदली लंक केहरी विसाल सों ॥ पान सों उदर नाभि कूपि सी गंभोर गुरु, उर नवनीतिपानि पल्लव रसाल सों ॥ ग्वाल कवि लसित लतान सी भुजा है वेस, कंवु सों गलो है मुख नील कंज जालसों ॥ चौर स्याम केस जो नगजसों सुगंध वरो, सीस सो मुकट सव तन है तमाल सों ॥ ६५ ॥ ग्रन्थ पूर्नार्थं—सेवत नर आसभरन निवित पर सेवे क्यों न, जाहि जो रची सभा सुरेस की । तिमिर अग्यान को विनास्यौ चहे दीपन तै। ध्यावै क्यों न ताहि जाते दुति है दिनेस की ॥ ग्वाल कवि जाके गुनगन को कहै सो को कहै, सो कौन मौन वृत धारी व्यास हारी मति सेस की ॥ त्यागी जग विषमन सिष सिष सिष मेरी लिषि दिषि न सिषि छवि रिष केस की ॥ ६६ ॥ इति श्री व्रजराज महाराज श्री कृष्णचंद जू को नष सिष सम्पूर्णम् ॥ सुभमस्तु ॥ सर्व जगतां ॥ श्री रामायन्मः ॥ संवत् १९१८ मिती चैत वदी ५ गुरुवासरे ॥

विषय—श्री कृष्णका नष सिख वर्णन ।

संख्या १३६ ए. कासिदनामा, रचयिता—हैदर, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५, पूर्ण, रूप—पुस्तक की भांति, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१९०० वि०, प्राप्तिस्थान—लाला-वेनीराम, स्थान—गंगागंज, डा० सलेमपुर, जि० अलीगढ़ (उ० प्र०)।

आदि—श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ कासिदनामा लिख्यते ॥ जो हो कासिद तेरा दिल्ली को जाना । खवर उस केसरी प्यारे की लाना । कई दिन से उसे देखा नहीं है, कि हम मथुरा चले और वो कहीं है । नहीं है ताव खत लिखने की मुझको । जवानी हाल कह देता हूं तुझको ॥ य कहना उस मेरे प्यारे से नागाह । तेरा आशक मिला था वर सरेराह ॥ चला जाता था वह सहरा भटकता । कि हर जा हर कदम पर सर पटकता ॥ कभी वो नातवां खाता था ठोकर । कंभू सहरामें यों कहता था रोकर ॥ कि यारव को मेरा प्यारा मिलादे । गमेहिजरां जल्दी अब छोड़ादे ॥

अंत—गया वो नागहां दिल्ली शहरमें । दिया हर एक का खत हर एकके घरमें । मेरा पैगाम जव वह याद करके । गया नजदीक उस महरू के घरके । लगा कहने व एक से वो सखुन वर । मिया यहां केसरी रहता कहां पर । कहा उसने कि उसका है यही घर । वले घरमें नहीं है वो सितमगर ॥ यदा दम ले कुछ आराम करले । तु आया जिस लिये वो काम करले ॥ यह कासिद की और उसकी गुफतगू थी । वो आया आप जिसकी आरजू थी ॥ लगा कहने वो मुह से देके दुशनाम । वता तू कौन है किसका है पैगाम ॥ कहा कासिद ने मैं तो वेगुना हूं । जवानी तेरे आशक की सुना हूं ॥ मुझे पैगाम यह उसने दिया है । कि जिसका दिल तूने टुकड़े किया है ॥ उसे सव यार समझाते हैं हरदम । मियां तू किस लिये खाता है हरदम । मगर देवेगा फुरसत दूर मुझको । मिलेगा कोई परीरू और तुझको ॥ यह सुन कर वो लगा कहने पियारा । हुआ था किसलिए आशक हमारा ॥ अकेला अगर उसको मैं पाऊं । मजा हम चाह का उसको चखाऊं ॥ भला रूखा किया

दिल्ली शहर में। गली कूंचेमें औ बाजार घरमें ॥ एवस हैदर फिकर दिलसे उठादे। नया मजमून और पढ़कर सुनादे ॥ संवत् १९०० आश्विन सुदी १२ द्वादसी ॥

विषय—आशिक ने माशूक को अपना जबानी हाल दिल्ली शहर में भेजा ॥

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता हैदर थे इनका और कुछ पता नहीं मालूम है।

संख्या १३६ बी. कासिदनामा, रचयिता—हैदर, कागज—देशी, पत्र – ६, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) – १२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५, पूर्ण, रूप—पुस्तक की भांति, पद्य, लिपि – नागरी, लिपिकाल—१९०० वि०, प्राप्तिस्थान—लाला वेनीराम, स्थान—गंगागंज, डाकघर—सलेमपुर, जि०—अलीगढ़ (उ० प्र०)।

आदि—अंत—१३६ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

संवत् १९०० आश्विन शुक्ल पक्ष १२ लिखी गंगाराम ब्राह्मण मथुरा निवासी ॥

संख्या १३७ ए. सनेहसागर, रचयिता—हंसराज, पत्र—१८, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९४ = १८३७ ई०, प्राप्तिस्थान—नाथूदास बनिया, स्थान—पुरानी बस्ती, कटनी, डाकघर—कटनी, जिला—कटनी (मध्य प्रदेश)।

आदि—श्री गणेश जू ॥ अथ लिष्यते सनेह सागर ॥ छंद इतने प्रात होत परकन ते, गिरधर गैयें मेली ॥ उततैं अपनी गई राधिका, मिलने चलीं अकेली ॥ कान्ह कुँवर सब सषन संगलै ठाढ़े जुरे रहावन ॥ देषी जौलौ कुवर लाड़िली, और सषियन की आवन ॥ कान्ह कुँवर सौं कहत सुदामा, सुनै बात इक मोरी ॥ तुमतै वह तिरछी अषियन सौं, चितवत कुँवर किशोरी ॥ वेइन कोथै उनको हित सौं ठाढ़े इकटिक हैरे ॥ मानहु चतुर चित्र लिख कढ़े पलकन पल सौ कैरे ॥ ठाढ़े लषत परस पर-दोउ लोक लाज नहिं मानी ॥ अति चंचल अपिया सफरी सीं सागर रुप समानी ॥ २ ॥

अंत—इनकौ उन उनकौ इन कीन्हों, नैनन नैन प्रनामू ॥ चले डगर पै इत वे उत कौ, जपत परसपर नामू ॥ घर को मुरक चली इत राधा, कान्हा गये बहोरी। लोक लाज वाटी सलिता भमति हि कानन की होरी ॥ मुरकि मुरकि दोउ जुहुन को, फिर फिर निरषत जाई ॥ आगे जाई आगे जात निशान चलै जनु, पीछे को फह राई ॥५५॥ इते सनेह सागर लीला सम्पूरन ॥ जेठ वदि १२ वुध वासरे संवत १८९४ मुकाम छत्रपुर

विषय—राधा कृष्ण का प्रेम संवाद

संख्या १३७ बी. सनेहसागर लीला, रचयिता—हंसराज बख्शी, कागज—पुराना मोटा कागद, पत्र—८२, आकार—९ × ९ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६६५, खंडित रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६१ = १८०४ ई०, प्राप्तिस्थान—राममनोहर विचपुरिया, स्थान—पुरानी बस्ती, कटनी, डाकघर—कटनी, जिला—कटनी (मध्य प्रदेश)।

आदि—श्री वृष भान कर्म्म कुल उच्च, तिहि छिन तहं पग धारे ॥ बाबा नंद बरोठे होकरि आदर कर बैठारे आपने अपने गोपिन बालक तुरतहिं बोल पठाये करि सिंगार करन कौतूहल घर घरते उठि धाये ॥२४॥ कोऊ बाँधि लाल सिर चीरा कोऊ बाधैं फैंटे ॥ आपुस में

सब ही सौं हिल मिल करि अंक भरि भैंटैं ॥ कोऊ मोर लिषा सिषोंसें कोउ बैन बजावै । कोऊ लाल कांछनी काछै कूदत तट से आवै । २५ ॥

अंत—या सनेह सागर की लीला केसरी कैसो कंदु ॥ तातै सुनैं श्रवण पावत हैं पूरन परमा नन्दु ॥ जो सनेह सागर की लीला जो जन जानौ वातै ॥ मन रंजन है ईस लगन की कान्ह मिलन्ह की घातैं ॥ ७३ ॥ श्री राधा वर विमल गुनन कौ निसुदिन सुनै सुनावै ॥ आनंद उदित होई अंतर मन बांछित फल पावै ॥ ७८ ॥ इति श्री सनेह सागर लीलायां श्री वगसी हंसराज विरंचतायां श्री राधा जु सखा भेष्य वर्ननो नाम नम तरो ॥९ दोहा—कविता को पर नाम है लिषि ताको मनुहार । भूलो बिसरो होई जहें लीजौ मित्र सम्हार ॥ १ ॥ या सनेह सागर की लीला वाचै अस सुनै ताकौ श्री राधा कृष्ण सहाई ॥ श्री राधा कृष्ण विलास अनुलीला वाचै अरु सुनै ताको राम राम लिषतय चैनसुष अगरवारे कुवर बदि १० सुक्रे को संवतु १८६१ मुकाम नागौध ॥ रत्नषान ॥ राम ॥ राम ॥ राम

विषय—चौथे पत्र से नौवें तक कृष्ण का गैया चराने बन को जाना और यशोदा का आकुल होना । बीस पत्र तक सखियों से कृष्ण की छेड़छाड़ करना ललिता आदि सखियों से कृष्ण का सम्मेलन है । २० से २७ तक राधा कृष्ण की जान पहचान होना, मुन्दरि की चोरी, राधा की कृष्ण पर तीखी प्रेमभरी फटकार, दोनों का विस्मृत परिचय तथा प्रेम में फंस जाना है । २७ पन्ने से ३२ तक राधा का कृष्ण के वियोग में व्याकुल होना, उनके दर्शनों के लिये तरसना, दूध दही बेंचने के बहाने कृष्ण से मिलना और उन्हें बिना मूल्य मन आना दूध दही देना, अन्त में राधा कृष्ण का धूम धाम सहित—खूब मंगल चार, बारात भोजनों के साथ प्रेम विवाह मधुर छन्दों में वर्णन किया गया है । ३२ से ४८वें पन्ने तक वृषभान का होरी तथा फाग मनाने के लिये नंद को निमन्त्रित करना, सब वृजबासियों का उनके घर साजो समाज से गाते बजाते जाना, खूब फाग खेलना रंग और गुलाल की पिचकारियाँ और झोरियाँ और मुट्ठियाँ मारना, कृष्ण और सखियों का झगड़ा, ललता और कमलादि सखियों का बीच पड़कर झगड़े को रफ़ा दफ़ा करना, कृष्ण का जोगी-वेष धर कर सखियों के सम्मुख जाना और ललिता को जोगी से नाम धाम, गाम, पन्थ और आराध्य देव पूछना इस पर कृष्ण का अपने को ही निर्गुन रूप में कथन करना, और अपना इष्ट देव एक "किशोरी" को बतलाना अगम अगोचर अपनी शाला तथा प्रेम का पंथ बतलाना ललिता सखी का निर्गुण, सगुण तथा ब्रह्म रूप से भी परे प्रेम का बतलाना, कमला सखि का कृष्ण को पहिचान जाना और उनकी बातों का भंडा फोड़ कर देना, व्यंग से सखियों का योगी को रोकना और भोजन प्रसादी फूलों सब प्रकार से सन्तुष्ट करने को कहना, सब सखियों सहित कृष्ण का बरसाने से आमोद प्रमोद करते हुए नंद गाँव को जाना वृषभान का नन्द को सत्कार पूर्वक घर को विदा करना । ४८ पत्र से सखियों का यमुना तट वंशीवट को जाना—सखियों के रूप की सुन्दरता का अत्यन्त ललित एवं मनोहर छंदों में वर्णन, उनका कृष्ण के प्रेम में आकुल व्याकुल होना आपस में सखियों का वार्तालाप कृष्ण का सखियों के बीच आना और भांति २ के विनोद पूर्ण खेल करना ५६ पत्रे तक है ५६ से ६१ तक सखियों को पूजा करने में कृष्ण का दर्शन देना

है। ६१ से ६९ तक कृष्ण जी के सखी भेष धारण करना है ६६ पत्रे से ७८ तक राधा जी का सखी भेष धरने का वर्णन है यह भेष कृष्ण को छलने के लिये, उनके सखी भेष धरने के बदले में राधा जी ने कन्हैया का रुप धरा।

टिप्पणी—उक्त पुस्तक की चर्चा मिश्र बन्धु विनोद में आ चुकी है पुस्तक हंस राज वगसी की बनाई है इसमें आद्योपान्त ललित पद नामक छंद है एवं कविता तो इतनी ललित है कि वास्तव में ललित पद ही है।

संख्या १३८. हरनाम का वारामासा, रचयिता—हरनाम, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—६×४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१९१० वि०, प्राप्तिस्थान—लाला भोलानाथ हकीम, ग्राम—जगरावां, डाकघर—कादरगंज, जिला—एटा (उ० प्र०)।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ हरनाम का वारामासा लिख्यते ॥ दोहा ॥ लगा असाढ़ सुहावना घन गरजत चहुंओर। पी पी करत पपीहरा सो बोलत दादुर मोर ॥ १ ॥ छंद ॥ अब तो सखि असाढ़ आया मेरी सुधि पिया ने ना लई। घन गरज वैरन वादरी मेरी नींद नैनन की गई किस्से कहूं अपना मरम सखि रुत अगम वालम नहीं। क्यों कर जिऊं विन पी मुझे वरषा की रुत वैरन भई ॥ विधना ने मेरे कर्म में पिय की जुदाई लिखदई। चकवी की जागत पत विना सखि सोई मत मेरी भई ॥ सूना भवन हरनाम विन पी पी पपैहा कर रहा। गई भूल सब सुख देख दुख पापी पिया ना घर रहा ॥ १ ॥

अंत—गई विधना के हाथ। जब तक मिले न पी मुझे दिन सुझे ना रात ॥ लगा जेठ उड़ती सीख पर प्यारे की आ कही एक एक में झटपट मैं उलट किवाड़ के पट से लिपट गई देखने ॥ फरकी भुजा बाई मिल साई चले परदेस सो चल देखो सखी आये पिया प्यारे रगीले भेष से ॥ सुखिया भई हैं मुझको भारी नौवते वजने लगी। जिसका पिया जिससे मिले खैरात सव वटने लगी ॥ सुवस वसो वो नगर घर जहा वारामासी हो रही विछड़े पिया हरनाम मिले प्यारे के बल वल मैं गई। इति श्री हरनाम का वारामासा संपूर्णम संवत् १९१० श्रावण शुक्ल नौमी रचा हरनाम दास वैश्य ॥

विषय—इसमें विरहनी ने अपना विरह का दुख बारह महीनों वर्णन किया है।

संख्या १३९. राधिका जी की बधाई, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—६×४ इंचों में, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—चौबे जीवनराम, ग्राम—धौरहरा, डा०—सोटो, जि०—एटा (उ० प्र०)।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ राधिका जी की वधाई लिख्यते ॥ सुनत जनम वृष भानु ललीकों उठिधाई व्रज नारि हो। मंगल साज लिये कर कंगन पहिरे रंग रंग सारी हो। जो जैसे तैसे उठिधाई सुनतहि स्वामिनि नामा हो ॥ भादौं नदी सास उमगहिं चहु दिशि व्रज की वामा हो ॥ वेणी शिथिल खसितक चक्षु मुस न लुलित पीठ पर सोहै हो ॥ काजर नयन श्रवण चलत रे वन देखत ही मन मोहै हो ॥ झुम झुम मंडित मुख शशि शोभित वेंदी हीर जड़ाई हो ॥ अधर तमाल रंग सो भीने गावत सरस वधाई हो ॥

अंत —सब व्रज को श्रृंगार रुप रस भाग सुहाग सुहायो हो ॥ मोहन की सरवस संपति संग मिलि वरसाने आये हो ॥ को कहि सकै कहा कहि भाषै कवि पै कहि नहिं जाई हो ॥ जो सुख शोभा ताक्षण वादी अनुभव नयन लखाई हो ॥ नंद भवन ते वढ़ि सुख तेहि क्षण क्यों प्रगटायो हो ॥ हरिचंद वल्लभ पद वलते केवल हरि लखि पायो हो ॥ इति श्री हरिचंद कृत राधिका जी की वधाई संपूर्ण समाप्तः लिखतं रामू बढ़ई कागारोल वाले जिला आगरा की चैत्र वदी प्रति पदा संवत् १९०३ वि० जे राम राम सीताराम लछिमन ।

विषय—श्री राधिका जी के जन्म की वधाई वर्णन है ।

संख्या १४० ए. हरिप्रकास, रचयिता—हरिदास, पत्र—१५०, आकार—१२ × ७½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४१२५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बनवारीदास पुजारी, बामन थोक मंदिर, ग्राम—समाई, डाकघर—एतमादपुर, जिला—आगरा ।

आदि—श्री कृष्ण चंद्रायनमः । दोहरा । बंदौ बारहिं बार गुर चरण कमल रज सीस । पुनि पुनि बंदौ प्रभु चरण जासु सरण अजईस । कृष्ण चरण की सरण गाहे श्री अनंत जुत ध्याइ । जिहि पदरज अज अज शिव धरहिं तासु नाम गुण गाइ । दीन वन्धु कृपाल प्रभु तुम सर्व प्रिय सुचीन्ह । अैसे प्रभु को जान करि चरणनु मे चित दीन्ह । मोहि दीनि प्रभु जानि कै कीनों परम सनेह । याते मो मन में वसौ, कृष्ण चरण सों नेह । प्रभु के चरण सरोज गहि भाषा चाहहु कीन । श्री हरिचरण प्रताप ते, चरण शरण गहि लीन । चौपाइ । कृष्ण चरण पंकज चित धरऊँ, जीव हितारथ भाषा करऊँ । परि बुधि हीन दीन मति मोरी, हरि गुन कठिन अनंत करोरी । पूरि पूरव जे कवि जन भयेऊ, ते हरि गुण गावत नित नयेऊ । पारु न काहू पायो भाई, सहसानन सारदं थकि जाई । व्यास आदि जे कविवर भयेऊ, प्रभु गुण गावत नित नयेऊ । परि काहू नहिं पारहिं पावा अपनी जथा जोग मति गावा । याते मो मन परम हुलासा हरि गुण गाऊँ मैं हरिदासा । हरि कौ दास नाम की आसा और न मेरे कछु अभिलाषा । या मैं सुनाम गुन गावा, जाको काहू पार न पावा । लोष्ठ रुमेरु सु येक प्रमानों, बूड़त सिंधु माह सम जानो ।

अंत—सोरठा—हरि प्रकास इहि नाम यामें हरिदासहिं प्रघट । रमें रमा करि धाम तत्त्व गहे वसुद्वै कहै । क्रिया कर्म सब धर्म तजि चरण शरण गहि लीन । तुम सर वश्य कृपाल प्रभु करी कृपा लषि दीन । चौपाई । दोहा अरु सोरठा नीके गावत गुण गन हरि जी के । पांचै सतै पंध्रै गनि लीनें, हरि रस मग्न चरण चित दीनें । त्रोदस छंदरुपांच कवित्ता हरि के चरन कमल वसि चित्ता । कै सहस चौपाई गाई पांच सतै हरि रग रस छाई । अरु अठानव्यै लेहु मिलाई, हरि पद पद्म करियसिवकाई । परि अनन्यता चित ठहराई, चरण कमल रस अमलहि पाई । दोहा—दोहा छंद कवित्त करि कृष्ण नाम गुण गाइ । चौपाई अरु सोरठा पंचामृत रस प्याइ । पापी पाषंडी अधम गुर द्रोही मति हीन । अधिक नून इहि मिलव कोइ सो हरि विमुष मलीन । इति श्री रामायण प्रकासे भक्ति कांडे श्री कृष्ण चरित्रे प्रभु नाम गुण वर्णनो नाम दस सतत मस्तरंगः ॥ ११० ॥ रामजी सहाय रामजी ।

विषय—राम कृष्ण चरित्र, नाम माहात्म्य और भक्ति का वर्णन ।

संख्या १४० बी. वर्षोत्सव, रचयिता—हरिदास, पत्र—३४, आकार—१२ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२७५, रूप—बहुत प्राचीन, लिपि—नागरी; लिपिकाल—सं० १८४७ = १७९० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० बाँकेलाल जी अध्यापक, स्थान—फिरोजाबाद, मोह० हंडावाला, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः। अथ वसंत रितु के पद। मधुरितु वृन्दावन आनंद न थोर। राजत नागरी नवल किशोर। जूथिका जुगल रूप मंजली रसाल। विथकित अलि मधु माधकी गुलाल। चंपक नकुलकुल विविध सरोज केतुकी मेदिनी मद मुदित मनोज। रुचिकर चिर वहै त्रिविध समीर, मुकलित नूतन नंदित पिकंकीर। पावन पुलिन घन मंजुल निकुंज, किसलै सयन रचित सुषपुंज। मंजीर मुरज डफ मुरली मृदंग। वाजत उपंग वीना नर मुष चंग। मृगमद मलयज कुंकुम अवीर, वंदन अगर सत सुरंगीत चीर। गावत सुंदर हरि सरस धमारि, पुलकित षग मृग वहत न वारि। जै श्री हित हरिवंश हंस हंसन समाज, अैसे ही करो मिलि जुग जुग राज।

अंत—षिजरी जेमत जुगल किसोर नित रागे अनुरागे दंपति उठै उनीदे भोर। १। अंग २ की छबि अवलोकत ग्रास लेत मुष सुषनि निहार जै श्री रुपलाल हित ललित त्रिभंगी विवि मुषचंद चकोर। इति श्री महा हरि भक्त्याभिलाषी हरिदासानुकृत वर्षोत्सव संपूर्णम्। संवत अठारह सौ अधिक कहिये सैंतालीस कार्तिक नवमी कृष्ण मैं वार विदित रा······॥ पोथी पूरन भजन हित मनमैं भयो हुलास। चंदिरपुर मैं वसत है नाम नराइन दास।

विषय—वसंत, फाग तथा हिंडोले एवं जन्मोत्सव संबंधी वधाइयों का वर्णन।

संख्या १४० सी. गुरुनामावली, रचयिता—स्वामी हरिदास, पत्र—२, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—रेवतीराम चतुर्वेदी, स्थान—मोहल्ला दुली, फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः। श्रीजी सहायः। श्री गुरुनामावलि लिष्यते। दोहा। श्रीगुरुघर परम पद विधि हरि सनकादि। सेवत सहचरि भावनित, नित्य विहार अनादि। दिव्य धाम वृंन्दा विपिन दिव्य गौर तन स्याम। दिव्य केलि क्रीड़ित सदा, दिव्य उपासक वास। चो०। स्वयं प्रकास कृपा करि धाम। सनि कुमार जानि निह काम॥ महल टहलनी धर्म दृढ़ायो सो नारद भागिन पायौ॥ आचारज नारद वपु धायौ पंच रात्रि करि मन विस्तारयौ। तामें गुरु पद राधा स्याम, दिव्य रूप तन वन अभिराम। ४।

अंत—परमानंद परम पद दरसी श्री भागौति रीति रस परसो। जन भगवान भजन मन छीनैं, कृष्णदेव रसवस करि लीनैं। १७। परसोत्तम परसोत्तम भऐ, नंदलाल अपने वपु ठऐ। श्री हरिदेव भगत की माम, आस धीर भजि स्यामा स्याम। आचारज हरिदास प्रकास, वीठल विपुल विहारिनि दास। सरसदेव राजैं तिहि गादी, श्री नरहरि स्वामी भक्तिजु गादी। दोहा। आचारज गुरु हरि प्रिया, सहचरि संमत कीन्ह। श्रीरसिक

चरन सुष करन जुग श्री पीतांवर सिर दीन्ह। रसिक सेव चाहत रहै श्री भगवान दास सुषलीन तिनके भये परमानंद जी, परम प्रेम आधीन।

विषय—गुरु परम्परा का वर्णन।

संख्या १४० डी. रस के पद, रचयिता—स्वा० हरिदास, पत्र—५, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—रेवतीराम चतुर्वेदी, स्थान—दुली मुहल्ला, फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्री विहारी जी। अथ रस के पद। राग कान्हरो। माई सहज जोरी प्रगट भई-रंग की गौर स्याम घन दामिनि जैसे प्रथमहूं हती अबहूं आगेहू रहि है। न टरि है तैसे अंग अंग की उजराई, सुघराई चतुराई सुंदरता ऐसें। श्री हरिदास के स्वामी स्यामा कुंज विहारी सब वैस वैसें। १।

अंत—प्यारी अव क्यों हूं क्यौंहूं आई है, तुम इत श्रमित अधिक मन मोहन, मैं क्यौंहूं समुझाई है। इत हठ करत बहुत नव नागरि, तै सिये नई ठकुराई है। श्री हरिदास जू के स्वामी स्यामा कुंज विहारी कर जोरि मौन है दूवरी की रांधी पीर-कहो कौने पाई है। २१।

विषय—राधा कृष्ण के शृंगार रस संबंधी पद।

संख्या १४० ई. वानी, रचयिता—स्वा० हरिदास, पत्र—२, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—रेवतीराम चतुर्वेदी, ग्राम—दुली मुहल्ला फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—अथ स्वामी हरिदास जू की वानी लिष्यते। राग विभास। ज्यौंही जौंही तुम राखत हौ त्यौंही त्यौंही रखियतु है हो हरि। और तो अचरिजैं पाइ धरौ सुतौ कहौ कौन पैंड भरि। जदपि कियौ चाहौ आपनौ मन भायौ सो तौ कहो क्यों कर रासौ हों पकरि। कहि श्री हरिदास पिंजरा के जानवर ज्यों फटफटाय रह्यौ उड़वे को कितोऊ करि। काहू को वस नाहीं कृपा ते सब होइ विहारी विहारिन। और मिथ्या प्रपंच काहे कौ भाषिये सो तौ है हारनि। जाहि तुम सौ हित तासौ तुम हित करौ सब सुप कारनि, श्री हरिदास के स्वामी स्यामा कुंज विहारी आननि के आधारनि।

अंत—जौलों जीवे तोनो हरि भजि रे मन, और बात सब वाछि। द्यौस चारि के हला भला मै तू कहा लेइगो लादि। माया मद गुण मद जोवन मद भूल्यो नगर विदादि। कहि श्री हरिदास लोभ चरपट भयो, काहे की लागे फिर यादि। १९। प्रेम समुद्र रूप रस गहरे, कैसे लागें घाट। वेकारयौदे जान कहावति जानि पन्यौ की कहा परी चाट। काहू को सर सूधो न परै, मारत गाल गली हाट। कहि श्री हरिदास जानहु ठाकुर विहारी तकत ओट पाट।

विषय—भक्ति के पद।

संख्या १४० एफ. पद नामावली, रचयिता—हरिदास जी, पत्र—१, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—रेवतीराम चतुर्वेदी, स्थान—दुली मोहल्ला फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्री कुंज विहारी लाल की जै। श्री पद नामावली श्री स्वामी हरिदास जू की लिष्यते। श्री हरिदास गाँउ श्री हरिदास गाँउ, श्री हरिदास गाइ विपुल प्रेम पांऊ। श्री हरिदास गुन रूप तन राऊँ, श्री हरिदास प्रानिकर प्रान जिवाऊँ। श्री हरिदास लेना श्री हरिदास देना, श्री हरिदास गाऊँ भैया कछू मैना। श्री हरिदास दयौ से श्री हरिदास रातौ, श्री हरिदास विहार श्री हरिदास वातौ।

अंत—श्री हरिदास ग्याने श्री हरिदास ध्याने। श्री हरिदास नाम कर कोट ऽ स्नाने। श्री हरिदास मेरे मंत्रमाला, श्री हरदास नाम मुद्रा तिलक माला। श्री हरिदास सेवा श्री हरिदास पूजा। श्री हरिदास भजन विन भाअ नहीं दूजा। श्री हरिदास भक्त रित श्री हरिदास परम गत। श्री हरिदास जस गावत भये सुदिढ़ मत। श्री हरिदास वृज रीति श्री हरिदास रस गीत। श्री हरिदास नाम लिये सकल साधन जीत। श्री हरिदास निज दरस श्री हरिदास रस परस। श्री हरिदास सुप देत श्री हरिदास हित हेत। अनंन श्री स्वामी हरिदास निज दास। जे श्री-वर विहारन दास विल सत विलासा। श्री शुभं भवत्।

विषय—कुछ भक्ति के पद।

संख्या १४० जी. हरदास जी का पद, रचयिता—हरिदास, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—५६, परिमाण (अनुष्टुप्)—७२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबा हरिदास जी, ग्राम—छर्रा, डाकघर—छर्रा, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ अथ हरदास जी का पद लिख्यते। राग टौड़ी—औधू सव सुख की निधि पाई रे। विपले उलट अमीरत हुवा जोतिहि जोति मिलाई रे॥ टेक॥ निसि वासर रटिये रसना रुचि अधिक अधिक ल्यौ लाई रे॥ सतगुरु सवद गगन जब गरजै मृदु वचनन चतुराई रे॥ सुनि प्रीतम के वचन मनोहर मनसा कै होइ वधाई रे॥ परलै पड़ी जायथी जड़ वुधि कोई न सकै भर माई। दिया सुहाग सकल सखियन में सील सांच तै भाई॥ हिल मिल हेत अधिक अति आतुर उमंगि उचित मुकुलाई॥ कहै हरदास सवनि सिर ऊपर वांह दई राम राई॥ १॥

अंत—घनाश्री—माई री अपनो पतिव्रत कीजै॥ कमल नैन के गुन किन गावो, जव लगि जग में जी जै॥ टेक॥ विषय मूल वात तजि औरे; चित चरण तन दीजै॥ गाठी न वीचे ग्रन्थ न लागै; सत्य सुधा रस पीजै॥ सुणिले सीष समझि मति मेरी। आव घटै तन छीजे॥ कहै हर दास अवधि दिन आवै; राम रटण करि लीजै॥ इति श्री हरिदास जी का पद संपूर्ण समाप्तः लिखतं केसौ दास स्वामी माधव दास का शिष्य॥

विषय—इसमें स्वामी हरिदास जी के ज्ञान, उपदेश एवं भगवत भजन संबंधीपद हैं।

संख्या १४० एच. हरिदास जू की वानी, रचयिता—हरिदास जू, पत्र—२०, आकार—९ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० गंगाधर शर्मा, ग्राम—गोछ, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—१४० ई के समान।

अंत—परस्पर राग जम्यौ समेतं किन्नरी मृदंग सो तार। तिनहूँ सुर के तान वंधान धर धर पद अपार॥ विरस लेत धीरज न रह्यौ तिर पलाग डांट सुरमोर निसार। श्री हरिदास के स्वामी स्यामा कुंज विहारी जै जै अंग की गति लेति प्रति निपुन अंग अंग अहार॥ ८८॥ तोकों पीऊ वोलत हैरी लाल ठाढ़े कदंव तर। अब को असौ ज्यौं किये कहां होत हैरी मारि रही कुसमसर॥ कुंज विहारी अपनो अंस तासौं क्यौं कीजे छदंम वर॥ श्री हरिदास के स्वामी........

विषय—स्यामा कुंज विहारी के संबंध के कुछ भक्ति रस पूर्ण पदों का संग्रह॥

संख्या १४१. कवित्त रामायण, रचयिता—श्री हरिदास या सूर्य वख्श ससई (जायस, रायबरेली), पत्र—१९८, आकार—१२½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, रूप—साधारण, लिपि—फारसी, रचनाकाल—सं० १८९६ = १८३९ ई०, लिपिकाल—सं० १८९६ = १८३९ ई०, प्राप्तिस्थान—राजकिशोर भगवानदयाल जी, ग्राम—जायस, डाकघर—जायस, जिला—रायबरेली।

आदि—सवैया—सनकादिक सारद नारद पांय मनाय सप्रेम विनय बहु गाऊँ। पद-पंकज श्री गुरु के शुभ रेणु हृदय निज लाय महा सुख पाऊँ। अवधपुरी मिथिलापुरी लोग सबै कर जोरहुँ शीश नवाऊँ रुचि मोरि पुरावहु जानि के दीन अहौं बुधि हीन हृदै पछिताऊँ। दो० वालमीकि वंदहु चरण, प्रेम सहित सति-भाय। बुद्धिदेहु वरणहुं सुयश कृपा सिंधु रघुराय। पुनि रुचि पाप सुहावनी, तुलसिदास उरलाय। कहा चहौं हरि यश सुखद जेहि कलि कलुष नसाय।

अंत—सवैया—द्वै दुई पुत्र भये सब भ्रातन, बीर धुरीण स्वरूप निधाना। महिमा पुरि वासिन कौन कहै अवलोकि सिहाहिं सुरेस सुजाना है ब्रह्मनिरंजन है जहँ भूप कहैं महिमा जेहि वेद पुराना जसि वुद्धि रही हरिदास कह्यो कविता हीनहीं न अहै वल ज्ञाना।

विषय—राम चरित्र वर्णन।

टिप्पणी—इस पुस्तक की भाषा पूर्वी अवधी है जो मलिक मुहम्मद जायसी की भाषा से मिलती जुलती है। भाषा सरल और सुबोध है।

संख्या १४२ ए. रंगभाव माधुरी, रचयिता—हरिदेव भट्टाचार्य (गोकुलगाँव, मथुरा), कागज—देशी, पत्र—१७८, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७३ = १८१६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवकंठ दुबे, ग्राम—बिहगापुर, डाकघर—बिहगापुर, जिला—उन्नाव।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ श्री राधा वल्लभो जयति ॥ अथ श्री रंगभाव माधुरी लिख्यते दोहा—रस मय तिन आनंद निधि परम प्रेम के फंद। वसौ सदा हिय दरस के गिरधर गोकुल चंद ॥ १ ॥ चौ०—चौपई रस हे आगा धुरी। कके दुख वाधुरी देखौ सव साधुरी ॥ दो०—भाव चारि विधि केन में सबको अंतर भाउ। वीरे राते सेतु फुनि स्यामहिं अधिक गिनाउ ॥ २ ॥ भोग राग सिंगार में इनहिं को संजोग। रसिक दास अनुभव करौ जे भावन के जोग ॥ ३ ॥

अंत—देषत अति सुख होत है भाव माधुरी रंग। दरस इहै विनती करत सदा रहौ ही संग ॥ रंग रंग के रूप लखि सब विधि पायो रंग। रंग दरस को दीजियो सव रंगनि को संग ॥ इति श्री करंज्योपनाम गोकुलस्य ज्योतिर्वित हरि देव भट्टात्मज हरिदेव भट्टेन गुंफिता रंग भाव माधुरी वर्णने केलि दरसन नाम दशम उल्लास संपूर्ण लिपि कृतं व्रजलाल ब्राह्मण पठनार्थं महारानी श्री श्री लक्ष्मी जी श्री श्री राजा बृजेन्द्र श्री रणधीर सिंह राजतव्यं संवत् १८७३ मिती असाढ़ वदी १३ रविवार शुभं ॥

विषय—रंग, भाव, रस, शृंगार आदि वर्णन है।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता हरिदेव उपनाम दरस है जो इस प्रकार लिखा है:- "दरस इहै विनती करत सदा रहौं ही संग। देषत अति सुख होत है भाव माधुरी रंग ॥ रंग रंग के रूप लखि सब विधि पायो रंग ॥ रंग दरस को दीजियो सव रंगनि को संग ॥ दरसन यों संग्रह करो अपनो मति अनुसार सुहृद होइ चित देइ के कीजो रसिक विचार" ॥ ये गोकुल ग्राम निवासी थे। लिपिकाल संवत् १८७३ वि० है।

संख्या १४२ बी. केशवजसचंद्रिका, रचयिता—हरिदेव, पत्र—११५, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०३५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८६६ = १८१२ ई०, प्राप्तिस्थान—महाराजा महेंद्रमान सिंह (महाराजा भदावर), स्थान—नौगवाँ, डाकघर—नौगवाँ, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री हरदेव जी सहाय ॥ अथ केशव जस चन्द्रिका लिख्यते ॥ दोहा ॥ प्रथम वन्दि हरि गुरु चरण, मन मापन के चोर। एक नाम अरु एक वपु, श्री मन्नंद किशोर ॥ १ ॥ श्री गुरु नंद किशोर पद, वंदौं करि मन चाव। छिप्यो जानि जिन प्रगट किय, केशव हिय कौ भाव ॥२॥ वृंद्रावन विहरहि सदा तिहिं पदकज मकरंद स्वाद विषै लम्पट सदा, श्री केशव सुष कंद ॥ ३ ॥ आचारज वपु धारिकैं, प्रगटे जनु अनुकूल। तिहिं पद रज वंदौं सदाँ, सव मंगल कौ मूल ॥ ४ ॥ सोरठा ॥ कीनों चंद्र प्रकाश, मोद करन जन मन कुमुद। मो हिय करौ उजास, श्री केशव जस चन्द्रिका ॥ ५ ॥

अंत—दोहा—सो श्री केशव जस लिषन, मो मग भयो उछाह। कन कन अपनी उक्ति दे, रसिकन कियो निवाह ॥ तिन रसिकन के ग्रंथ तें, कन कन भिक्षा लीन। ताकरि केशव चन्द्रिका, प्रगटी नित्य नवीन ॥ ज्यौं ज्यौं जुग सखि जूथ मिलि, केशव करत विलास। त्यौं त्यौं हीं जस चन्द्रिका नित नित करत प्रकास ॥ सोरठा—केशव रति मन गूढ़, को जाने विन जुगल वर। मो हिय कै आरूढ़, आपुन जस आपुनि कह्यौ ॥ दोहा—श्री

केशव जस चन्द्रिका, जद्यपि कियो प्रकास। तदपि न सेवत मंद मैं, सहस अविधि भव वास ॥ जो जन केशव चन्द्रिका, कहि सुनि करै विचार। ता हिय जुगल प्रसाद तैं, प्रगटै नित्य विहार ॥ संमत सकल पुराण के, रस नव ऊपर सारु। हिय हरिवोध प्रवोधिनी, भई चन्द्रिका चारु ॥ इति श्री मत्सकल जनांत करण मल तिमिर निकर निरस नानु शील सीतल रसिक लोचन कुमुत्प्रकासन परा पर प्रेम पीयूष पूर करा पूर्ण श्री केशव चन्द्र चन्द्रिका नुरज्यताँ इति श्री केशव जस चन्द्रिका संपूर्ण—

विषय—(१) मंगला चरण, मिश्र मोहन लाल की कृष्ण भक्ति—उनकी स्त्री भागवती तथा उनका पुत्र कामना—अपूर्व कृष्ण भक्ति तथा व्रत पूजादि, स्वप्न, पुत्रोत्पत्ति, वधाई पुत्र की वाल्यावस्था और किशोरावस्था वर्णन, उसका स्वाभाविक कृष्ण प्रिय होना—[१-२०] (२) माता पिता का विवाह-प्रस्ताव, पुत्र की अस्वीकृति और भक्ति की प्रधानता का वर्णन माता-पिता का प्रस्ताव वापिस लेना और प्रसन्नता प्रगट कर भक्ति में अद्वितीय होने का उपदेश देना वालक केशव का कृष्ण की शोध में निकलना और भक्तों के योग्य मिलने पर नाना प्रकार की सेवाओं की कल्पना करना [२०—६७] (३) थकित होकर केशव का रुदन गुरु कृष्ण स्वामी का प्रगट होकर मंत्र देना, कुंजों की शोभा वर्णन कर उनको दिखाना और अपने निवास स्थान पर लाना, वहां पर उनको विविध सखियों को देखकर संतोष लाभ करना, गुरु द्वारा अष्ट सखियों का वर्णन, [६७—८२] (४) गुरु द्वारा गुरु धर्म वर्णन तथा सखी सम्प्रदाय की सब बातें बतलाना, गुरु परम्परादि वर्णन, भगवान की आज्ञा से एक राजा द्वारा मन्दिर बनाया जाना और केशव का विवाह करना, दम्पति केलि, विष्णु भक्ति केशव की रचना का सार व वंश विस्तार ग्रन्थ पूर्ति एवम् निर्माण काल [८२—११५]।

संख्या १४३. लघुतिब्बनिघंट, रचयिता—हरिप्रसाद, कागज—देशी, पत्र—९०, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८१०, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८६० = १८०३ ई०, लिपिकाल—सं० १९०२ = १८४५ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रामदयाल निगम, ग्राम—शिवगढ़, डाकघर—टप्पल, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ लघु तिब्बनिघंट हरि प्रसाद कृत लिख्यते ॥

	नाम वस्तु	अवगुण	निवारण	गुण
१.	अदरख	गरमप्रकृति वाले को	वादाम तेल	गरम खुश्क है भोजन को पचाता अफारे को वादी को उदर की तरी को दूर करता है ॥
२.	अखरोट	—	—	गरम खुश्क है वीर्य को उत्पन्न करता है मैथुन शक्ति को वल देता है। प्रकृति को नरम करता है दस्त उदर हृदय गुर्दे और कलेजे को वल देता है।

३.	अफीम	बुद्धि को	केशरदाल चीनी	सर्द खुश्क है नींद लाती है पीड़ा को शान्ति करती है वायु को खोती उदर में अफरा लाती और नजले को भी गुणदायक है।
४.	अनन्नास	—	नोन खटाई मसाला	ठंडा और तर है पित्त की गरमी को दूर करता है उदर को वल देता है।

अंत—४. हींग—अवगुण—मस्तक कलेजा। निवारण—अनार गुण—गरम खुश्क है सर्दी के रोगों को गुण करती है वादी को हरती भोजन को पचाती कामदेव को बल देती। ५. हरफा खेड़ी—अवगुण निवारण-शहद गुण—सर्द तर है पित्त को शान्ति करती है। उदर को वल देती है वात तथा कफ को उत्पन्न करती है इति श्री लघु तिब्ब निघंट हरि प्रसाद कृत संपूर्ण समाप्तः लिखा गंगू राम कुरमी वैद्य रामपूरा संवत् १९०२ वि० ॥

विषय—इस ग्रन्थ में १२३६ वस्तुओं के नाम और उनके गुण अवगुण लिखे हैं ॥

संख्या १४४. मृगया विहार, रचयिता—हरिराम, पत्र—६, आकार—७३/४ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०३, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९१५ = १८५८ ई०, लिपिकाल—सं० १९१५ = १८५८ ई०, प्राप्तिस्थान—महाराजा महेंद्र मानसिंह, महाराजा भदावर, स्थान—नौगाँव, डाकघर—नौगाँव, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ मृगया विहार लिष्यते ॥ गौरी सुत गौरी गवरि, गोपति गोधर गाइ। पद वंदन करि सबन के, कहियत नृप जस गाइ ॥ १ ॥ सुनि सुनि जस रसदान प्रति, जोजन प्रगट पचीस। चलि गृहते हरिराम जू, आये जहँ नृप ईश ॥ २ ॥ नव गार्यें में नवल नृप, श्री महेन्द्र हरि नाम। दरसि परम आनन्द भयो। मदन रुप अभिराम ॥ ३ ॥ पाँडु पुत्र[५] प्रति चन्द्रमा,[१] भूमिखंड[९] पुनि एक। संवत में मृगया रची, हरीराम करि टेक ॥ ४ ॥

अंत—दंडक—चहकति महि महाराज श्री महेन्द्र सिंह, सहज सवारी में सुरेश शीश लटकत ॥ मटकत वीर धीर हींसत सुंहस गज सुंडनि फुहारिन सौं भींजि रेणु अटकत ॥ कवि हरि राम जू जहान के प्रवल पर देषि सु प्रताप पौन चक्र ऐसे भटकत ॥ सटकत दुष्ट हृदे खटकत भार फणी। फेरि फेरि लेत फण कूर्म पृष्टि पटकत ॥ ५९ ॥ चंचला ॥ श्री महेन्द्र सिंह जू महावली पराक्रमी। काम रुप काम दानि शुद्ध संजमी ॥ छमी तस्य पूर्ण मोद सौ विहार जो सिकार की। सो हरी रची सु सुछत्रि वंस धर्म सार की ॥ ६० ॥ इति हरि राम का वर्णन कृत मृगया विहार समाप्त शुभम् सं० १९१५ ॥

विषय—भदावर (नौगवाँ-आगरा) नरेश महाराजा महेन्द्र सिंह की मृगया का वर्णन।

संख्या १४५. शिक्षापत्र, रचयिता—हरिराय (झालरा पाटन), कागज—देशी, पत्र—३७०, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—५९२०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२३ = १८६६ ई०, प्राप्तिस्थान—चौबे जमुनालाल, स्थान—घंटाघर, अलीगढ़; डाकघर—अलीगढ़, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ श्री कृष्णाय नमः ॥ श्री गोपी जन वल्लभाय नमः श्री हरी राय जी कृत शिक्षा पत्र लिख्यते ॥ प्रथम पत्र शिखा पत्रः—अव श्री हरिराय जी शिक्षा करते हैं जो लौकिक वैदिक कार्य के में आवै सबसे मनको उद्वेग करके तथा लौकिक वैदिक कार्य कैसे हू करिके श्री कृष्ण के दर्शन को जैये तो प्रभु तो सदा आनंद रूप है सो जीवन को संमुष क्लेश रूप देषिके उदासी न होय। ताते लौकिक कार्य सिद्धि न होय अथवा विगर जाय परन्तु मन में क्लेश न करिये तैसे ही वैदिक कार्य सिद्धि न होय अथवा विगार होय तहां वा समै मनमें क्लेश नाहिं करिये।

अंत—अव श्री हरि राय जी कहत हैं तिनको हे नाथ तुम छोड़त नाहिं निश्चय प्राप्त हुइ रहत है तिनकी प्रसंसा ही करी अपने जानत हौ जद्यपि जीव भगवत नाम हूं नाहिं लेत कछू धर्म नाहीं है तब तुम अपने प्रति जा केलि रौकौ अंगीकार किये हैं ताते हे नाथ हमहूं श्री वल्लभाचार्य जी के आश्रित है ऐसे के ऊपर प्रसन्न होय नाथ हमकूं खोटे जानि दोष देषि छोड़ेंगे। तुम्हारी प्रतिज्ञा भंग होयगी निश्चै ताते कृपा करौ काहे ते तुम श्री आचार्य जी से प्रतिज्ञा करी है निज ब्रह्म संबंध कराओगे तिनके सकल दोष दूरि होयगो तिनको अंगीकार करेंगे सो शिक्षा दो तरह में कही है ॥ ब्रह्म संबंधे करणात्सुर्वेषां देह जिवयो सर्व दोष निवर्तहि दोषापंच विधास्मृत। इत्यादि वचन ते तुम्हारे दोष देखेंगे तो तुम्हारी प्रतिज्ञा जायगी ताते अपनी प्रतिज्ञा के लिये श्री महाप्रभू जी के आश्रितम को जानि कृपा करौ इति श्री हरि राय जी कृत शिक्षा पत्र संपूर्ण मासान मासे कार्तिक मासे कृष्ण पक्षे तीज संवत् १९२३ वि० लेखक भवानी राम श्री द्वारिका धीस जी के मंदिर के मुखिया पन्नालाल जी के पठनार्थ झालरापाटण स्थान गनेश वारी ॥ श्री द्वारिकाधीश जी की जै ॥

विषय—इस ग्रन्थ में ४१ शिक्षाप्रद पत्र हैं जो हरि राय जी ने अपने भाई को लिखे थे तथा जिनमें श्री कृष्ण भक्ति का वर्णन है।

संख्या १४६. सुंदरी तिलक, रचयिता—भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र (काशी), पत्र—४०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४९६, खंडित रूप—पुराना, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० विष्णु भरोसे, ग्राम—देवीपुर, डाकघर—मरहटा, जिला—एटा।

आदि—जाहिरे जागति सी जमुना जब वूड़ै वहै उमहै वह वेनी। त्यो पदमाकर हीरा के हारन लाय के गंगनि से सुख देनी ॥ पापन के रंग सों रंगि जात सी भांतहि भांति सरस्वति सेनी। पैर जहांई जहां वह वाल तहां तहां ताल में होत त्रिवेनी ॥ १ ॥ आई हुती अन्हवावन नाइनि। सोधैं लिये कर सूधे सुभाइनि ॥ कंचुकी छोरि धरै उबटैवै को ईंगुर से रंग की सुख दाइन ॥ देवजू रूप की राशि निहारत पांय ते शीश लौं शीश ते पाइनि ॥ ह्वै रही ठौरहि ठाढ़ी ठगीसी हंसै कर ठोढ़ी दिये ठकुराइन ॥ २ ॥

अंत—धुरवान की धावनि मानो अनंग की तुग ध्वजा फहरान लगी ॥ नभ मंडल ह्वै क्षिति मंडल ह्वै छन जोति छटा छहरान लगी ॥ मति राम समीर लगे लतिका विरही वनिता थहरान लगी ॥ परदेश में पीतम पायो संदेश पयोद घटा घहरान लगी ॥ २ ॥ सजि सोहै दुकूलन विज्जु छटा सी अटा में चढ़ी घटा जोवती है ॥ रंग रांती सुनै धुनि मोरन की मदमाती संयोग संजोवती हैं ॥ कहि ठाकुर वै पिय दूर वसे हम आसुन ते तन धोवती हैं ॥ धनि वे धनि पावस की रतियां पति की छतियां लगि सोवती हैं ॥ ३ ॥ भूमि हरी भई गैलैं गईं मिटि नीर प्रवाह वहाव वहा है । कारी घटा ने अंधेरो कियो दिन रैनि में भेद कछू ना रहा है ॥ ठाकुर भौन ते दुसरे भौन लौं जात वनै न विचार महा है । कैंसें के आवैं कहा करै वीर विदेशी विचारे ने दोष कहा है ॥

विषय—इस ग्रन्थ में अनेक प्राचीन कवियों की कविताओं का संग्रह है ॥

संख्या १४७ ए. भगवद्‌गीता, रचयिता—हरिवल्लभ, कागज—देशी, पत्र—११२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—८९६, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७७१ = १७१४ ई०, लिपिकाल—सं० १८२४ = १७६७ ई०, प्राप्तिस्थान—काशीराम ज्योतिषी, स्थान—रिजौर, डाकघर—रिजौर, जिला—एटा ।

आदि—श्री भगवद्‌गीता जिसमें श्री कृष्ण और अर्जुन का संवाद है लिख्यते ॥ धर्मक्षेत्र कुरु क्षेत्र में मिले युद्ध के साज । संजय मोसुत पांडवनि कीने कैसे काज ॥ संजय-उवाच ॥ पांडव सेना व्यूह लखि दुर्योधन ढिग आइ । निज आचारज द्रोण सों वोले ऐसे भाइ ॥

अंत—जोगेश्वर श्री कृष्ण जू अर्जुन हैं जेहि ठौर । तहां विजय अरु जीत है अटल संपदा और ॥ यह गीता अद्‌भुत रतन श्री मुख कियो वखान । वार वार निरधार करि परा भक्ति को ज्ञान ॥ × × हरि वल्लभ भाषा रच्यो गीता रुचिर वनाइ । सदाचार वरनन कियो अष्टादश अध्याय इति श्री भगवद् गीता सूपनिषत्सु ब्रह्म विद्यायां योग शास्त्रे श्री कृष्ण अर्जुन संवादे मोक्ष सन्यास जोगो नाम अष्टादशोध्याय इति श्री भगवतगीता संपूर्ण लेखक राम विलास पाठक शिव गंज संवत् १८२४ वि० राम राम ।

विषय—भगवत् गीता का भाषानुवाद ।

संख्या १४७ बी. भगवगीता, रचयिता—हरिवल्लभ, पत्र—७८, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—८१९, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३३ = १७७६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० हरिप्रसाद आचार्य, स्थान—आवलखेड़ा, डाकघर—आवलखेड़ा, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—१४७ ए के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री भगवद्‌गीता सूपंनिषत्सु ब्रह्म विद्यायां योग शास्त्रे श्रीकृष्ण अर्जुन संवादे मोक्ष संन्यास योगो नाम अष्टादशो अध्याय । १८ । संवत १९३३ सुखसरा माघसुदी श्रीमीजी । रामकृष्ण इति श्री ।

संख्या १४७ सी. भगवद्गीता, रचयिता—हरिवल्लभ, पत्र—७५, आकार—७३/४ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०३१, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२६ = १८६९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० दाताराम जी दीक्षित, ग्राम—जयनगर, डाकघर—डोहकी, जिला—आगरा।

आदि-अंत—१४७ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री भगवद् गीता सुप निषत्सु ब्रह्म विद्याया योग शास्त्रो श्री कृष्ण अर्जुन संवादे मोक्ष संन्यास योगो नाम अष्टा दशोऽध्याय। १८। इति श्री भगवद्गीता संपूर्णम् शुभं भूयात् संवत् १९२६ शाके शालवाहनस्य १७९१ मिती मार्ग सिर सुदी प्रतिपदा १ शनिवासरे को लिषी लिष्यतं ब्राह्मन तुलसीराम वाड़े मध्ये शुभं मस्तु श्री राधा कृष्ण जी सहाइ। श्री श्री—राम राम।

संख्या १४७ डी. श्री मद्भगवद्गीता, रचयिता—हरिवल्लभ, पत्र—२४, आकार—८३/४ × ५१/२ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—८६०, रूप—बहुत प्राचीन, लिपि—फारसी, प्राप्तिस्थान—ठाकुर हुक्मसिंह, अध्यापक, ग्राम—करहारा, डाक घर—मिढ़ाकुर, जिला आगरा।

आदि-अंत—१४७ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री भगवद् गीता सूप निपद् सो ब्रह्म विद्याया योगशास्त्रे श्री कृष्ण अर्जुन संवादे मोक्ष सन्यास जोगो नाम अष्टदशोऽध्यायः सम्पूरन समास श्री भगवद् गीता हरि वल्लभ कृत महा कहा। श्लोकः—अति अंत कोपं कटुकाचि वानी; दारिद्र वंधं सुजनस्य वैरं। नीचप्र प्रसंगा प्रदार सेवा नरः स चिह्नं नर्क वसंति॥

संख्या १४७ ई. भगवद्गीता, रचयिता—हरिवल्लभ, पत्र—४४, आकार—९ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—८५७, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८४४ = १७८७ ई०, प्राप्तिस्थान—राधाकृष्ण, बुकिंग क्लर्क; स्थान—मथुरा कैंट, डाकघर—मथुरा, जिला—मथुरा।

आदि-अंत—१४७ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री भगवद् गीता सूपनषत्सो ब्रह्म विद्यायां योगशास्त्रे श्री कृष्णार्जुन संवादे मोछ सन्यास योगो नाम अष्टऽदशमोध्याय। १८। श्री संवत्सरे। १८४४। मासोत्तमे मासे सित पक्षे पुन्य तिथौ। ११। बुधवासरे श्री प्रति लिषितं मिश्र परस राम वासी सादूपुर मध्य श्री राम राम राम।

संख्या १४७ एफ. भगवद्गीता भाषा, रचयिता—हरिवल्लभ, पत्र—४९, आकार—१० × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—७८४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री महंत भजनदास जी, ग्राम—चित्रहाट, डाकघर—नौगवाँ, जिला—आगरा।

आदि-अंत—१४७ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्म विद्यायां जोग शास्त्रे कृष्णार्जुन संवादे मोक्ष सन्यास जोगे ममष्टदशोध्याय ॥ १८ ॥ शुभं ॥ इति श्री गीता भाषा संपूर्णं ॥ संवत् १९०० लिषितं लाला वलदेव पठनार्थे लाला नंद किसोर जी ।

संख्या १४७ जी. राधानाम माधुरी, रचयिता—हरिवल्लभ, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—९ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७३ = १८१६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवकंठ दुबे, ग्राम—बिहगापुर, डाकघर—उन्नाव, जिला—उन्नाव ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ श्री राधारमन जी सहाय ॥ अथ राधा नाम माधुरी लिख्यतेः—वृन्दावन रानी श्री राधा । मोहन मन मानी श्री राधा ॥ जय नित्य विहारनि श्री राधा । वृज सुख विस्तारनि श्री राधा ॥ कीरति की कन्या श्री राधा । सबही विधि धन्या श्री राधा ॥ जय रास विलासनि श्री राधा । नित कुंज विहारनि श्री राधा ॥ हरि उर वनमाला श्री राधा । गुन रूप रसाला श्री राधा ॥ श्री दामा अनुजा श्री राधा । वृष दिन मनि तनुजा श्री राधा ॥

अंत—वृन्दावन सोभा श्री राधा । क्रीड़ा तरु गोभा श्री राधा ॥अति सुघर सरूपनि श्री राधा । माधुरीय अनूपनि श्री राधा ॥ कमनीय कुमारी श्री राधा । हरिवल्लभ प्यारी श्री राधा ॥ श्री कृष्ण कर्षनि श्री राधा । दिव्या सु केशी श्री राधा ॥ अति मंजुल केशी श्री राधा । अभिसार प्रयत्ना श्री राधा ॥ अत्यंत प्रसन्ना श्री राधा । कल केलि परावधि श्री राधा ॥ रस रीति रही सुधि श्री राधा । इति श्री राधा नाम माधुरी संपूर्णम् संवत् १८७३ वि०

विषय—श्री राधा जी का गुणगान किया गया है ।

संख्या १४७ एच. गीताका पद्यानुवाद, रचयिता हरिवल्लभ, पत्र—१०६, आकार—७¾ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—८७५, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२२ = १८६५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० गंगाविश्नु अवस्थी, ग्राम—पुरहिया, डाकघर—निगोहां, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ दोहा ॥ अंगी कृत या ग्रन्थ की । ऋषि जु पराशर नन्द । कृष्ण देव परमात्मा । छंद अनुष्टप छन्द ॥ १ ॥ प्रज्ञावाद कहत हैं । अनु सोचन को सोच । यहै वीज या ग्रन्थ को । याको सोच न मोच ॥ २ ॥

अंत—भक्त वश्य श्री कृष्ण जू । यहै कियो निरधार । करैं भक्ति इच्छा सवैं । यहै वेद को सार ॥ ८२ ॥ इति श्री भगवद्गीता सूप निपत्सु व्रह्म विद्यायां योग शास्त्रे श्री कृष्णार्जुन संवादे मोक्ष सन्यास योगो नामाष्टादशोध्यायः ॥ १८ ॥ समाप्तः ॥ शुभं ॥ संवत् १९२२ ॥ चैत्र कृष्ण ११ गुरुवार ॥

विषय—गीता का पद्यानुवाद ।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रन्थ श्री मद्भगवद् गीता का पद्यानुवाद है । इसमें केवल एक ही छन्द—दोहा—का व्यवहार हुआ है । कुल दोहे ७१३ हैं ।

संख्या १४७ आई. श्री मद्भगद्गीता, रचयिता—हरिवल्लभ, पत्र—५४, आकार—७½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—८८५, रूप—प्राचीन,

लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० शालिग्राम जी, ग्राम—महुवा, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि-अंत—१४७ एच के समान।

संख्या १४७ जे. भगवद्गीता, रचयिता—हरिवल्लभ, पत्र—१६, आकार—४ × ३ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भोलानाथ शर्मा, ग्राम—फतहाबाद, डाकघर—फतहाबाद, जिला—आगरा।

आदि-अंत—१४७ एच के समान।

संख्या १४८ ए. रसिकविनोद, रचयिता—हरिवंश, कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—५०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३२ = १७७५ ई०, लिपिकाल—सं० १८४० = १७८३ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० जवाहर सिंह, ग्राम—खेलई, डाकघर—मुरादाबाद, जिला—हरदोई।

आदि—श्रीगणेशाय नमः—चाहत पंगु पहार चढ़यो विन पावन होति है रीति जो ताको ॥ नाउं न सूधो कहै मुख सों चहै बावरो बात न की बहुताको ॥ जात हंसेई सबै जगमें यह जानि कछू न भयो डरु ताको ॥ भापत हों शिसुता को अयान पै न्यान निवाहिवो शैल सुता को ॥ वरन नायका नायकनि लच्छन लच्छ समेत। देपि मतो सब कविन को भेद कछुक कहि देत ॥ नाइका लच्छन—सोभा जाकी देपि की अनद हिए से होइ। रस सिंगार वाढ़े तहां कही नाइका सोइ ॥ उदाहरण ॥ केस छुटे छहरै चहुंओर मनोहर तूल नहीं मखतूल सों। अंग की रंग निहारत हीं उमगै अति आखिन में सुख मूल सों ॥ देखत मोह वढ़यो हरिवंश भयो कछु और को औरई सूलसों ॥ आनन प्यारो लसै छवि भौर भौरन घेरयो गुलाव को फूलसों ॥

अंत—लाजनि सों न कहै तिया पियहि मिले हू बैन। विहत हाव भापत तहां जे कवि रसको अैन ॥ उदाहरणः—केलि के भौंन में आलिन आइ मिलाइ दई करिके हित नीके। नैंन निचोहैं भये हरिवंश निहारत ही मुख चंदहिं पीके ॥ भावते सो भई भेंट जऊ न भये तउ एकऊ नेकऊ जी के ॥ जात न लाज न दैन कहे रहे गात नहीं अभिलाष हैं तीके ॥ सज्जन लखिके ग्रन्थ को करि हैं मनमें मोद। रसिकन की हरिवंश कवि कीन्हों रसिक विनोद ॥ रामनयन वसु इंदु के कातिक पहिले पाख। दशमी मंगर को रच्यो पूरन रस को दाख ॥ इति श्री रसिक विनोद समाप्तः शुभ मस्तु ॥ संवत् १८४० चैत्र मास कृष्ण पक्षे तृतीयां।

विषय—नायक नायिका भेद और रसादि का वर्णन।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता हरिवंश कवि थे। निर्माण काल संवत् १८३२ वि० है। इसको इस प्रकार लिखा हैः—रामनयन वसु इन्दु के कातिक पहिले पाख। दसमी मंगर को रच्यो पूरन रसकी दाख ॥ लिपिकाल संवत् १९४० वि० है।

संख्या १४८ बी. रसिकविनोद, रचयिता—हरिवंश, कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४८, परिमाण (अनुष्टुप्)—९००, रूप—

प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८२३ = १७६६ ई०, लिपिकाल—सं० १८४५ = १७८८ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला शिवराम पटवारी, ग्राम—विशुनपुर, डाकघर—जलेसर, जिला—एटा।

आदि—१४८ ए के समान।

अंत—दो०—सज्जन लखि है ग्रन्थ को करि हैं मन में मोद। रसिकन को हरि वंश कवि कीन्हों रसिक विनोद ॥ राम नयन वसु इन्दु कै कातिक पहिले पाख। दसमी मंगर को रच्यो पूरन रस को दाख ॥ इति श्री रसिक विनोद समाप्तं शुभं मस्तु। संवत् १८४५ आश्वनि मासे कृष्णपक्षे तिथौ सप्तम्या चंदवासरे लिखतं इन्द पुस्तक।

विषय—नायक नायिका भेद और रस एवं हाव भाव वर्णन।

संख्या १४८ सी. रसिकविनोद, रचयिता—हरिवंश, कागज—देशी, पत्र—२८, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४४, परिमाण (अनुष्टुप्)—८४०, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८२३ = १७६६ ई०, लिपिकाल—सं० १८५६ = १७९९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवदयाल ब्रह्मभट्ट, ग्राम—मोहम्मदपुर, डाकघर—बेनीगंज, जिला—उन्नाव।

आदि—१४८ ए के समान।

अंत—दोहा—सज्जन लखि के ग्रन्थ को करिहैं मनमों मोद। रसिकन को हरिवंश कवि कीनो रसिक विनोद ॥ रामनयन वसु इन्दु को कातिक पहिले पाप। दसमी मंगर को रच्यो पूरन रस को दाप ॥ इति श्री रसिक विनोद समाप्तं शुभ मस्तु संवत् १८५६ वि० श्रीगणेशाय नमः ॥ राम राम श्री सीता राम नमः ॥

विषय—नायक नायिका लक्षण और रसों का वर्णन।

संख्या १४८ डी. सुनारिन लीला, रचयिता—हरिवंश, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२६ = १८६९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० स्याममनोहर शुक्ल, ग्राम—मानपुर, डाकघर—हरदोई, जिला—हरदोई।

आदि—श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ सुनारिन लीला लिख्यते ॥ तन सामरी सुघर सुनारी ॥ रतन जटित के विछिया लाई नाद परम रुचिकारी ॥ टेक ॥ इनको शब्द जू परेगो प्रीतम के जब कान। मनको खैंचि जु लाइ हैं इनमें सुयंत्र बलवान ॥ बड़े नगर हौं वसति हौं मो में बड़ो गुमान। राज भवन ही बेचिहौं जहां बड़ो पाइहों मान ॥ सवहीं सो यों है वैठी पनघट वाट। ये विछियां सोइ लेइगी विधि ऊंचो रच्यौ लिलाट ॥

अंत—पन डब्बा सौरभ धरे भाजन धरि रस पान। चरण पलोटत रूप हित अलि कोउ रिझवत रस गान ॥ श्री हरि वंश प्रसाद बल बरणी विविधि पलाग ॥ वृन्दावन हित वारने सुख भीने जुगुल सुहाग ॥ कौन गुरू पै ये पढ़े वचन चातुरी लीक। सबकी बुद्धि परोड़ि कै कहै बात ठिक ठीक ॥ ललिता इन बीथिन में मोचित पावत चैन। चले अधिक अकुलाइके यह घर सुख देखन नैन ॥ इति श्री सुनारिन लीला हरिवंश प्रसाद कृत संपूर्ण समाप्तः ॥

विषय—श्री कृष्ण जी का सुनारिन का रूप धारण कर राधिका से प्रेम सहित मिलना ॥

संख्या १४८ ई. सुनारिन लीला, रचयिता—हरिवंश, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—८८, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—परसू सिंह ठाकुर, ग्राम—रामनगर, डाकघर—बारा, जिला—सीतापुर ।

आदि-अंत—१४८ डी के समान ।

संख्या १४८ एफ. अनंतव्रत कथा, रचयिता—हरिवंश, कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३४ = १७७७ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला राजकिशोर, ग्राम—जाहिदपुर, डाकघर—अतरौली, जिला—हरदोई ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ अनंतव्रत कथा भाषा लिख्यते ॥ सवेरे के समय गंगा आदि नदियों में स्नान कर और अपने नित्य कर्म को पूरा कर अनन्त भगवान का अपने मनमें ध्यान एक चित्त हो के बैठे । और चिकने कलस को दो वस्त्रों से लपेट कर धरै और मूंठीभर कुश लै के शेषजी वनावै उस कलश के आगे भाग में शेष जी को वनावै और फिर अनंत देव का ध्यान धरै । चतुर पुरुष एक गोचर्म के वरोवर पृथ्वी को गोवर से लीपै और उसमें आठपत्तों का कमल वनावै और कलस में आमके पत्ते धरै और फिर उस कमल के ऊपर धरै फिर प्राणायाम करके तिथि आदि का नाम लेकर संकल्प करै ॥ पृथ्वी ति० । इस मंत्र से आसन विधि को करके कलश० सर्वे सिता० मंत्रों सें कलस और वरुण की पूजा करै फिर संख और घंटा की भी पूजा करै ।

अंत—ब्राह्मण ने चौदह वर्ष में जिस फल को पाया उस फल को इस व्रत के करने से और कथा सुनने से प्राणी एक ही वर्ष में प्राप्त हो जाता है हे राजन यह व्रतों में उत्तम व्रत हमने तुम्हें सुनाया जिस व्रत के करने से प्राणी सव पापों से छूट जाता है । और जो इस कथा को सुनते और पढ़ते हैं वे सब पापों से छूट कर विष्णु लोक को चले जाते हैं । श्री कृष्ण भगवान वोले हे युधिष्ठिर जो पवित्र प्राणी संसार सागर की गुफा में सुखसे विचरने की इच्छा करते हैं वे अनंत देव का पूजन करके अपने दाहिने हाथ में अनंत का उत्तम डोरा वांधते हैं इति श्री अनंत वृत कथा रघुवंश कृत संपूर्ण समाप्तः संवत् १८३४ आश्वनि सित पक्ष नौमी—

विषय—अनंत भगवान के व्रत की कथा वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के भाषा कर्त्ता हरिवंश थे । इस ग्रन्थ से इनका और कुछ पता नहीं चलता ।

संख्या १४८ जी. पंछी चेतावनी, रचयिता—हरिवंश, कागज—पुराना, पत्र—१०, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५०, खंडित, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० गोविंद प्रसाद ब्राह्मण, ग्राम—हिंगोट खिरिया, डाकघर—बमरौली कटारा, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेस जू सदा सहाय । अथ लिखाते पंछी । दोहा—साउनके दम लाठड़े, दाउन दमकत जोर । नंदनवल कैसी सय छाजत, नाचत मोर । कहा हो मेरी सखी कैसे दिल समझाय । आधी रात पपीहा दिलमें खटकत आय । खेलत चौर स्याम संग राधा प्यारी आय । सुख पायौ सव सखिन नै मुरगा बोली आय ।

अंत—मौतिन की माला कटकाछनी विराजै औढे पिधारी तन केसर के बोरिकी । हाथके लुकुट लियौ चन्दन की पौरकी दियै धैज जरकीस पैंच तन मरोर की ।......जोति लगी हरिवंस जू विचारी हर सींच कै मोर की । मोर के तो आज विन्द्रावन पोर पोर करके तो जैने जुगल किसोर की (कवित्त अत्यन्त अस्पष्ट है) दोहा—कुच कठोर कर लरम है, पिय पकरत है धाय, मैं डरपति हौं हे सखी, अनी० पैठ न जाय ।

विषय—पक्षी वर्ग में भी नायक तथा नायिका व्यवहार बतलाया गया है ।

संख्या १४९ ए. रागसार, रचयिता—हरिविलास, कागज—देशी, पत्र—३६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३४, परिमाण (अनुष्टुप्)—९७२, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० शिवमहेश, ग्राम—विशुनपुर, डाकघर—अलीगंज, जिला—एटा ।

आदि—अथ गाने की पुस्तक लिख्यते ॥ श्री गणेशाय नमः राग रागिनी प्रारंभः ॥ राग कालंगड़ा ॥ देखि सखी छवि नंदन की । निरखत झलक पलक नहिं लागै भेदि गई उर चोट मदन की ॥ १ ॥ मुकुट लटक कुंडल की आभा भाल विराजै खौर चदन की ॥ २ ॥ सुख मुसक्यान विलोकत सजनी भूलि गई सुधि अपने सदन की ॥ ३ ॥ कटि पट पीत माल वैजंती नूपुर धुनि राजीव पदन की ॥ ४ ॥ हरि विलास हरि अंग अंग सोभा गिरा थकी कह सहस वदन की ॥ ५ ॥ राग रामकली—रामकली बोलन वन लागी, जीवन प्रान प्रिया नहिं जागी ॥ मंद मंद हरि बीन बजावत, रस भरी राग रागिनी गावत ॥ पुनि सरोज पद चापि जगावत, उठो भामिनी आलस त्यागी ॥ राम कली० ॥ सारस हंस मोर महि डोलै गुंजत भृंग कुंज दिल खोलैं । नाना भांति विहंगम बोलै कोक लोक मेंटत अनुरागी ॥ रामकली० ॥ पवन सुगंध वहै सुख दाई कुसुम लता झुकि झुकि महि आई । जागि प्रिया लखि पिय मुसकाई हरि विलास प्रीतम रस पाई ॥ रामकली० ॥

अंत—राग जै जै वंती—सुन री सखी कोऊ वंसी वजावै । कैसी करूं मोहिं नींद न आवै ॥ १ ॥ वैरिन अब प्रगटी दुख दायन सोवत रजिनी मोहिं जगावै ॥ २ ॥ तीछन तान लगत उर मोरे राग रागिनी गाय सुनावै ॥ ३ ॥ या व्रज रहत बनै कहौ कैसे वसुरी मनमथ वान चलावै ॥ ४ ॥ सासु ननद की त्रास कठिन अति सो दई मारी व्याज छुड़ावै ॥ ५ ॥ जवते भनक परी सुनि मोरे तवते मोहिं कछू नहिं भावै ॥ ६ ॥ हरि विलास हरि वेणु रसीली लै लै नाम पुकारि वुलावै ॥ ७ ॥

विषय—राग रागिनी वर्णन ।

संख्या १४९ बी. रागसार, रचयिता—हरिविलास, कागज—देशी, पत्र—४८, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२११, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला भजन-लाल पटवारी, ग्राम—रानीपुर, डाकघर—मारहरा, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ राग संग्रह लिख्यते ॥ श्री गणपति के सुमिरि के शारद को शिर नाय । राग सार रचना करूं राग रागिनी गाय ॥ राग रामकली —रामकली बोलन वन लागी । जीवन प्रान प्रिया नहिं जागी ॥ मंद मंद हरि बीन बजावत । रस भरी राग रागिनी गावत । पुनि सरोज पद चापि जगावत । उठो भामिनी आलस त्यागी ॥ १ ॥ सारस हंस मोर महि डोलैं । गुंजत भृंग कुंज दिल खोलैं ॥ नाना भांति विहंगम बोलैं । कोक लोक मेंटत अनुरागी ॥ २ ॥ पवन सुगंध वहै सुखदाई । कुसुम लता झुकि झुकि महि आई ॥ जागि प्रिया लखि पिय मुसकाई । हरि विलास प्रीतम रस पाई ॥ रामकली बोलन वन लागी ॥ ३ ॥

अंत—राग जै जै वंती—सुन री सखी कोऊ वंशी वजावे । कैसी करूं मोहिं नींद न आवै ॥ बैरिन अब प्रगटीं दुख दायन, सोवत रजिनी मोहिं जगावै ॥ तीछन तान लगत उर मोरे, राग रागिनी गाय सुनावै ॥ या व्रज रहत बनै कहौ कैसे, वंसुरी मन मथ वान चलावै ॥ सासु ननद की त्रास कठिन अति, सो दई मारी लाज छुड़ाई ॥ जबते भनक परी सुनि मोरे । तबते मोहिं कछू नहिं भावै ॥ हरि विलास हरि वेणु रसीली, लै लै नाम पुकारि बुलावै ॥ इति श्री हरि विलास कृत राग सार संपूर्ण समाप्तः लिखतं वैजनाथ मिश्र स्व-पठनार्थ आसौज मासे कृष्ण पक्षे द्वितीयां संवत् १९४० वि० राम राम राम राम ॥

विषय—राग रागिनियों का वर्णन ।

संख्या १४९ सी. राग ज्ञान संग्रह, रचयिता—हरिविलास, कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२८, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, प्राप्तिस्थान—चौधरी गंगासिंह, ग्राम—विशुनपुर, डाकघर—भूमरी, जिला—एटा ।

आदि—१४९ ए के समान ।

अंत—राग खम्माच—मोहि देखि अचानक रोकि डगर हरि लिपट चिपट गयोरी ॥ आवत ही जमुना जल भरि के औचक आय गयो छल करिके । घट पटक्यो भइ कींच धरनि मम चरन रपट गयो री ॥ १ ॥ पट उघारि सब अंग उनि हारयो वरवस पकरयो हाथ हमारो ॥ सवरी हरि हरि लाज भाजि रवि तनया तट गयो री ॥ २ ॥ जसुमति पूत अनोखो जायो चलत पंथ मोहिं कंठ लगायो । हरि विलास दिन रैन खटकि उर नागर नट गयो री ॥ ३ ॥ इति श्री राग रागनी संग्रह ग्रन्थ संपूर्ण लिखा मैया राम फाल्गुन वदी चौदस संवत् १९३२ वि० ॥ नारायण नारायण जय जगदीश हरे ॥

विषय—राग रागिनी वर्णन ।

संख्या १४९ डी. रोगाकर्षण ग्रंथ, रचयिता—हरिविलास (लखनऊ), कागज—देशी, पत्र—६०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९१९ = १८६२ ई०, लिपि-काल—सं० १९३० = १८७३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० दालचंद गौड़, ग्राम—राजगढ़, डाकघर—छर्रा, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ।। अथ हरि विलास कृत रोगाकर्षण ग्रन्थ लिख्यते ।। दोहा—जय जय गुरू पद पद्म रज वन्दौं बारंबार । भव भेषत वर रुज समन दमन शोक संसार ।। पुनि वन्दौं सिंधुर वदन शंभु सुनु गण राज । विघन हरन सब शुभ करन राखत जन की लाज ।। वंदौं धन्वन्तर चरण औ अश्वनी कुमार । विश्व रोग भव हरण कौ लीने जिन औतार ।। सकल सुरनि वन्दौ वहुरि विधि महेश घन श्याम । कवि कोविद पुनि विप-गण सवको करौं प्रणाम ।। गात ताप हिम कर हरत भव भय हारक राम । सब गद गंजन ग्रन्थ यह रोगाकर्षण नाम ।। सारंग धर माधव सहित लोलिम राज समेत । इन सवको मत लै रच्यो हरि विलास जग हेत ।। नाड़ी परीक्षा—हस्त अंगूठा मूल थल धमनी धाम प्रधान । दामोदर सुत जिमि कह्यो सो मैं करत वखान ।। वात नाटिका गति प्रथम द्वितीय पित्त की होय । कफ की नाड़ी तीसरी हरि विलास करि सोय ।।

अंत—जो यह भेषज खात ता न रहत तम कोइ विथा । ज्यो द्विज धर्म नसात पियत वारुणी वार इक ।। छंद—भुज सहस भंजन भुज शिरोमणि कनक कश्यप नर हरी ।। तन ताप ग्रीषम विधु असुर हरि तम रवि अघ सुर सरी ।। रुज अखिल मत्त मतंग केहरि ग्रन्थ यह भेषज खरी ।। कृत हरि विलास निवास तट सुचि गोमती लक्षण पुरी ।। दोहा—अंक चन्द्र ग्रह काक दृग वर्ष मार्ग तम जीव । रिषि तिथि पूज्यो ग्रन्थ वर जग सुख हेत अतीव ।। इति श्री रोगाकर्षण नाम ग्रन्थ हरि विलास कृत संपूर्ण समाप्तः लिखा रामदास चैत्र पक्ष कृष्ण द्वितीया संवत् १९३० वि०

विषय पृ० १ से २ तक—वंदना नाड़ी परीक्षा व उसके भेद लिखे हैं । २ से १३ तक—जलवायु परीक्षा उसके लाभ हानि ज्वर परीक्षा उसकी औषधियां ।। १४ से २६ तक आंख कान नाक मुख रोग व उनकी अनेक औषधियां वर्णन हैं । २७ से ४० तक पुरुष स्त्रियों के गुप्त रोग और उनके लक्षण एवं उनकी औषधियां समयानुकूल लिखी हैं । ४०से५५ तक तेल व भस्म धातुओं के फूकने की विधि लिखी है । ५६ से ६० तक विविध प्रकार के रोग फोड़ा फुन्सी इत्यादि की औषधियाँ लिखी हैं ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता हरि विलास थे । पिता का नाम दामोदर था । निर्माण काल संवत् १९१९ वि० और लिपि काल संवत् १९३० । लखनौ गोमती तट निवासी थे ।

संख्या १५०. शब्दसागर, रचयिता—हजारीदास (उरेरमऊ, बाराबंकी), पत्र—४०, आकार—७½ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३६, खंडित, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९५ = १८३८ ई०, लिपिकाल—सं० १९६७ = १९१० ई०, प्राप्तिस्थान—महंत चंद्रभूषण दास, ग्राम—उमापुर, डाकघर—मीरामऊ, जिला—बाराबंकी ।

आदि—सुमिरन नाममत भूपाल । अवरमत जत सकल रैय्यत, समुझि दीख हवाल । जोग जप मख दान नेम आचार दीपकमाल । नाम भानु प्रकाश लखि दुरि जात दुति ततकाल । श्रुति कहत जहँ लगि कर्म शुभ ग्रसि रहे सब कलि काल । निर्बाध केवल

नाम वर परताप परम विशाल। नहिं निकट आवत समन गण उरपंत कृतंत कराल। सुमिरो हजारी नाम सत मत छोड़ि सब भ्रम जाल।

अंत—आए मेरे जग जीवन के प्यारे। सुमिरन सत्य नाम दम दम प्रति, निसु दिन रहत संभारे। वेद तात स्वर प्रथम हेत रवि, तिलक विभूति सँवारे। सेत स्याम जुग वरन मंत्र मनि चिह्न प्रकट कर धारे। सेल्ही से सनसत उर अदभुत, अति विचित्र छबि सारे। ताखी तत्त सीस छबि देवत, मंगल प्रद भ्रम हारे। सुमति मनहुँ कर पहिरि सुमरनी, कुमति कुचाल नेवारे। मानहु घड़ी छिपा कर धारन, पांच पचीस विरारे। गहे दीनता भाव निरंतर अहमित गर्व विदारे। पियत सुधा छबि नयन अयन मुद रोम २ मतवारे। सपनेहु अवर भावनहिं जेहिं मन, नामहिं नाम पुकारे जन हजारि उन्ह चरन कमल रज, जीवन प्रान हमारे। दो०—सब नामहिं दुगुना करै, सप्त जोरि गुन तीन। दुइ के भागे सेप यक ररंकार जग भीन। दोहा नाम निरगुनो तीनियुत, पुनि त्रैगुन त्रैभाग। जिमि नाहीं कछु शेष रहि तिमि जग मिथ्या त्याग

विषय—निर्गुण भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १८१. उपदंश चिकित्सा, रचयिता—हजारीलाल (इटावा), कागज—देशी, पत्र—३८, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२७, परिमाण (अनुष्टुप्)—५००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१६ = १८५९ ई०, प्राप्तिस्थान—नानकचंद श्रीवास्तव, ग्राम—कमलागढ़ी, डाकघर—वजीदपुर, जिला—अलीगढ़।

श्री गणेशाय नमः॥ अथ उपदंश चिकित्सा नाम ग्रन्थ लिख्यते॥ अथ आतशक रोग की उत्पत्ति के लक्षण॥ संसार में गर्मी को उन नामो में वोलते हैं कोई आतशक कहता है कोई उपदंश कोई फिरंग कोई चीतौरी इन नामों से प्रसिद्ध है। यह आतशक रोग वायु का भेद है सो बहुत गर्मी वाली स्त्रियों के संग से अथवा उसका संग किसी और ने किया हो वह पुरुष जहां मूंते वहां पर यह भी मूंते अथवा उसका किसी तरह भोजन या पानादि में संग करै तो वायु अपने कारण से क्रोध को प्राप्ति होकर इस रोग को प्रगट करती है अथवा जो क्षीण पुरुष होय और मैथुन वारंबार करै तब वह अत्यंत क्षीण होय तब इसके वंधेज नहीं रहे और वायु की नाना प्रकार की शरीर में पीड़ा होय तब इसके वायु पित्त कफ ये सब अत्यंत कोप को प्राप्त होंय और यह आगंतुक नाम फिरंग वायु को करै सो फिरंग वायु तीन प्रकार की है शरीर के मध्य नसों में धस जाय॥

अंत—मरहम–छोटी इलायची, कत्था पापड़ी, शीतल चीनी सुपारी जली हुई ये सब बराबर ले परन्तु शीतल चीनी ड्योढ़ी हो इन सबको वारीक पीस कपड़ छान करै फिर गाय के मक्खन को कांसे की थारी में २१ वार धोवे फिर उस पिसी हुई दवा को इसको मिला के चोटों पर लगावे तो विलकुल आराम होगा कैसा ही घाव हो सब तीन रोज में सूख कर साफ हो जावेंगे॥ पुनः॥ अजवाइन दोनों मिलाये टोपी दूर किये हुए गरी पुरानी पारा, गुड़ पुराना वाय विड़ंग ये सब एक २ तोला ले पहिले इन सबको पीस छान गुड़ में मिला पीछे पारे को मिला दो पैसा डवल भर की गोलियां वांधे। एक गोली सुवह दही के

साथ खाय आतशक जाय। पथ्य उर्द की धुई दाल आम का अचार गेहूं की रोटी मूंग की दाल और दूध नहीं खाय ॥ औषधियों की तौल परमान ॥

तौल—वहलोल—१४ माशेका। वाकला—डेढ़ मासे का

टंक—३ व ४ माशे का। दाम—१ तोला आठ माशे का

वांक दवांक—३॥ रत्ती तीन चावल का। दिरम ३ या ३॥ माशा का

दिरहम—४८ जौंका

माशा—८ रत्ती का

मिस्काल—३ माशा ६ रत्ती ॥

विषय—उपदंश की चिकित्सा।

संख्या १५२. आल्हाखंड (अल्हानिकासी), रचयिता—लाला हजारीलाल (फरूखाबाद), पत्र—३२, आकार—९$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६४, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—ठा० रामलाल सिंह, ग्राम—शेरपुर लबल, डाकघर—निगोहा, जिला—लखनऊ।

आदि—सुमरन कीजै राम नाम को। जासों कोटिन पाप विलाय ॥ कितनेउ पापी भये दुनियां में। अन्त में लेइ राम को नाम ॥ चारिव पदारथ सो वह पावै। चढ़ि वैकुंठ धाम को जाय ॥ अजामिल पापी भयो जगमें। ताकी कथा कहौं कछु गाय ॥ पाप करत सब वैस गवांई। वेश्या घर में लीन्ह विठाय ॥ ऐसो पापी भयो अजामिल। ताकौ हाल सुन्यौ चितलाय ॥ व्याहता त्रिया को दुःख देवै। नित वेश्या को करै पियार ॥ देश अजामिल कन वज कहिये। तहँ पर पापी को निज धाम ॥ एक दिन साधू आये कनवज में। हरि जन को घर पूछन लाग ॥

अंत—इतनी सुनि कै तव ऊदल ने मनमें सुमिर सारदा माय। भाला मारौ एक हाथी के हाथी पैठ जिमीं पर जाय ॥ हाथी गिराय दियो ऊदन ने अव दूसरे का सुनो हवाल ॥ दंत पकरि के फिर ऊदल ने औ साहू को दीन्ह गिराय। देखि वहादुरी ये ऊदल की जैचंद वहुत खुशी हुइ जाय ॥ वाँहि पकरि फिर आल्हा को औ दरबार में गये लिवाय। खातिर दारी करि ऊदल की औ रिजगिरि में दीन्ह वसाय ॥ करन वास रिजिगिर में लागे यारो सुनियो कान लगाय ॥ ऐसी निकासी भई आल्हा की सो मैं गाय के दीन्ह सुनाय ॥ मास महीना सावन कहिये आल्हा में कीन्हौं तैयार ॥ नाम हजारी लाल हमारौ जानत हमकों सव संसार ॥ इति श्री फरुखावाद निवासी हजारी लालकृत अल्हा निकासी सम्पूर्ण ॥

विषय—(१) पृ० १ से ३२ तक—पृथ्वी राज का माइल के उकसाने पर चंदेल राजा से घोड़े मांगना, बनाफरों (आल्हादि) का घोड़े न देना, उनका राज्य से निकाले जाने पर जयचंद के यहाँ पहुँचना, जयचंद का आश्वासन न देना, बनाफरों का उसके राज्य में लूट खसोट करना और युद्ध छेड़ देना। फलस्वरूप एवं थक कर कन्नौज के राजा का उन्हें रिजिगिर में वास देना ॥

संख्या १५३ ए. सर्व संग्रह वैद्यक, रचयिता—हीरालाल (डोड़वा, कानपुर), कागज—देशी, पत्र—११२, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५२०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, लिपिकाल—सं० १९२४ = १८६७ ई०, प्राप्तिस्थान—वैद्य रामचरन गौड़, ग्राम—मूसागढ़, डाकघर—मेंडू, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ सर्व संग्रह वैद्यक लिख्यते ॥ अथ सर्व धातु फूकने की विधि लिख्यतेः—अमिल नास की छाल लेइ जराई के भस्म करै हाड़ी में भस्म भरिके परत दै कै धातु धरै जो धातु चाहे सो धरै चूल्हे पर रखिके आंच करै वही धातु भस्म होइ जाइ ॥ पारा भस्म करने की विधि—जल नीम को वांट कर दो टिकियां वनावै तिसमें पारा और ईंगुर दोनों को छीताफल में रखकर कपरौटी करै फिर गज पुट में फूंक देइ तो पारा की सफेद खील हो जाइ ॥

अंत—वंधेज का इलाज—अकर करा तीन मासे तुकमलंगा ३ माशे सुराजाम सफेद २ माशे सुराजाम मीठी सिंघाड़ा की तरह होती है ये सव महीन पीस दोपहर को रोटी खायके शाम को न खावे और जमाय के पेश्तर आधा घंटा ये सव एक ही खुराक है फांक कर आध सेर दूध पिये ॥ इति श्री सर्व संग्रह समाप्तः लिखी रामदास संवत् १९२४ वि०

विषय—अनेक वैद्यक ग्रन्थों से औषधियाँ छाँट कर लिखी गई हैं।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के संग्रहकार हीरालाल जाति के हलवाई डोड़वा जिला कानपुर के निवासी थे। इनको हुए १०० वर्ष हो गए हैं। यह ग्रन्थ १९०० सं० में रचा गया था। बाबा जी जिनके यहां ये रहते रहे हैं इन्हें गद्दी धारी चेला बतलाते हैं। लिखने का संवत् १९२४ वि० है।

संख्या १५३ बी. सर्व संग्रह, रचयिता—हीरालाल, कागज—बाँसी, पत्र—६४, आकार—६ × ३½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री वासुदेव वैश्य हकीम, ग्राम—बसई, डाकघर—तांतपुर, तह०—खैरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—श्री राधा कृष्णाय नमः निज उपाय सर्व संग्रह लिप्यते सार सही। रस नादिक काढ़ौ। काकरा सींगी, भारंग, हरडै, जीरो, पीपलि, चिरायतो, पित्तपापरो, देवदार, वच, कुठ जवासौ, सुठि, नागर मोथा ॥ धनाकुट की इन्द्र जौ पाढ़ रेनु कागज, पीपलि, अंधाकारौ, पिपला मूरन, चित्रक नीम, छालि किरवौला त्रयमण, इन्द्रारनी, वावची, विरंग, हरद, दोउ अजवाइन ॥ मोथागी १ नवै ॥ दस वोषदि दसमुल की समभाग लिजै हींग सम ॥ भाग लिजे काढ़ो पिवती वेर। आदा कोउ सनि चौबे।

अंत—श्री राम श्री सहाय। श्री राम जी सहाय करो पारो १२ ॥ सीसो २४ ॥ सुरमा २५ आंजन की विधि त्रिफला की पुट दीजे ॥ ३० ॥ सुंठी के ॥ ३ ॥ खटाई न खाय ॥ सुभ सरजु ॥ नानी गराय पलाण डेड़ा मध्ये पठनार्थ श्री बावा जी श्री प्रहलाद दास जो सुभंमस्तु। श्री राम × × ।

विषय—सब प्रकार के रोगों के लक्षण तथा उनके शमन के अर्थ भिन्न भिन्न प्रकार की दवाइयाँ दी गई हैं। ज्वर के इलाज की ग्रंथ में बहुलता है।

संख्या १५४. रुक्मिणीमंगल, रचयिता—हीरामणि, पत्र—२१, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७३, रूप—प्राचीन, लिपि—कैथी, लिपिकाल—सं० १८७८ = १८२१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० विश्वेश्वर दयाल, ग्राम—होलीपुरा, डाकघर—होलीपुरा, जिला—आगरा।

आदि—सिधि श्री गनेशायनमः ॥ अथ रुक्मिणी मंगल हीरा मनि कृत लिषते ॥ छंद ॥...वासिर रुक्ष कुंभ सिन्दूर होय दल सुभग कुंड कुंडालित विघन भो हरन कुवल सेतु दंतु झल कंत कंध सहिता विषधर फरस पनि सुभ दनि जइ जये नर हेत डरु हीरा मनि गन पति सरन अति उदार असुभन हरन माग राजु मन सिधि बुधि निधि सोत अगनेस वंदौचरन ॥ दोहा ॥ गन पति मन सुमिरि के। सारद विनऊँ तोहि। वरनों कछु गुन कृश्न के। जही सुमति दे मोहि ॥ शिव विरंचि सनकादि सुक। नारदादि (२) व्यास। नमस्कार सवको करौं। धरौं सुमति की आस ॥ ३ ॥ सोरठा ॥ कुंदन पुर सुभग अति प्रसिद्धि जग जानिये। तहाँ भीषम नय नाथ। वसत सदा मिलि धर्म सों ॥

अंत—दोहा—सुकवि रुकम दिय छाँड़िकै। चले निसान वजाइ। रुकमिन लै हरि द्वारिका। पहुँचे हरि सुष पाइ ॥ १२० ॥ आयो देवनि संग लै। कमला सनु तेहि ठौर। छवि छाई तिहूँ लोक की। बची नहीं केहु ओर ॥ भवन भवन में है रही। बंदी धुनि झनकार ॥ विविध बाजे सब बजे। लोक उचित कीयो तेहु सबै। मंगल सुभ गये हीरामनि हरनि। कहे सवे मंगन जन आए ॥ छुंये दान मान जुत करहि चरहि गे थिद ध्यान उर जनि भोग। इस रहहि तयज पहि पर मगुर सगि सु उर व्रत नम जाप तीरंथ फन पावे रुक मिनि चित्र कहंत सुनंत चितहिं जें त्यामे लघु बुधि हीरा मनि कहा कही हरि गुन रुप अनूप अव पंडित सुकवि सुबुधि नर लीजे चूक सम्हारि ॥ इति श्री रुकमिनी मंगलु लिषते संपूरन समापति संवतु १८७८ के साल मिती चैत्र वदि १० चन्द्र वासरे को दुरजन के हेत लिषी मो० नाउली में श्री राम राम राम

विषय—रुक्मिणी-कृष्ण के विवाह का वर्णन।

संख्या १५५ ए. प्रेमलता, रचयिता—हित हरिवंश, कागज—देशी, पत्र—३६, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६४८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८२४ = १७६७ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० दीनानाथ पाठक, ग्राम—पचौली, डाकघर—जलेसर, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री राधा वल्लभो जयति अथ प्रेमलता हित हरिवंश चंद्र जू कृत लिख्यते ॥ राग विभास ॥ जोई जोई प्यारो करै सोइ मोय भावै भावै मोय जोई सोई सोई करै प्यारो ॥ मोको तो भामिती ठौर प्यारे के नैनन में, प्यारो भयो चाहै मेरे नैनन के तारे ॥ मेरे तो तन मन प्रान प्रान हू ते प्रीतम प्रिय, अपने कोटिक प्रान प्रीतम मोंसों हारे . जै श्री हित हरिवंश हंस हंसनी, सांवल गौर कहो कौन कहैं जल तरंगनि न्यारे ॥ १ ॥

अंत—आजु जब देखियतु है हौ प्यारी रंग मेरी ॥ मोपै न दुरत चोरी वृषभानु की किशोरी । शिथिल कटि की डोरी, नन्द के लाल सों सुरति हौंरी ॥ मोतिन लर टूटी चिकुर चन्द्रिका छूटी रहसि रहसि लूटी गंडन पीक परी ॥ नैननि आलस वस अधर विंव निरसि पुलक प्रेम परस जै श्री हित हरिवंश री राजत धरी ॥ इति श्री गोसाई हरिवंश जी कृत प्रेम लता चौरासी पद समाप्तम् सं० १८२४ लिखा स्वपठनार्थं वावा विनय ॥ राभ राम राम ॥

विषय—हित हरिवंश के ८४ पद ।

संख्या १५५ बी. चौरासीपद, रचयिता—हित हरिवंश स्वामी (वृंदावन), पत्र—३०, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—चौबे श्री कृष्ण जी, स्थान—पिनाहट, डाकघर—पिनाहट, जिला—आगरा ।

आदि—श्री हरिवंश चन्द्र जयति श्री वसुनन्दनौ जयति ॥ अथ श्री हरिवंश जी ॥ कृत चौरासी पद लिख्यते: । अथ राग ललित ॥ जोई जोई प्यारो करै सोई मोहिं भावै ॥ भावै मोहिं जोई सोई सोई करै प्यारो ॥ मोकों तो भावती गेर घारे के नैननि के तारे ॥ मेरे तन मन प्रान प्रानहूं तें प्रीतम प्रिय अपने । कोटिक प्रनि प्रीतम मोसो हारें ॥ जै श्री हित हरिवंश हंस हंसनिवास लगौर कहौ कौन करैं जल तरंगति न्योंर ॥ १ ॥

अंत—आजु वदेषियत है हौ प्यारी रंग भरी, मोपै न दुरित चोरी ब्रषभानु की किसोरी सिथिल कटि की डोरी नंद के लालन सों सुरत लरी ॥ मोतियन लर टूटि चिकुर चंद्रिका छूटी रहसि रसिक लूटी गंडन पीक परी ॥ नयन आल सरु वस अधरविंव निरस पुलकि प्रेम परस जै श्री हित हरि वंसरी राजति खरी ॥ ८५ ॥ इति श्री चौरासी पद श्री हित हरिवंश गुरु कृत सम्पूर्ण ॥ इति ॥

संख्या १५५ सी. चौरासी पदी, रचयिता—हरिवंश, पत्र—३३, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० वासुदेव सहाय, स्थान—फतहपुर सिकरी, डाकघर—फतहपुर सिकरी, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः । अथ चौरासी पदी लिख्यते । जोई २ प्यारो करै सोई २ मोहि भावै, भावै मोंहि जोई २ सोई करै प्यारे । मोको तो भावती ठौर प्यारे के नेंननि में प्यारो भयों चाहं मेरे नेंननि के तारे । मेरे तो तन मन प्रान हते प्रीतम प्रिय अपने कोटिक प्रीतम के सों हारे । जै श्री हित हरिवंश हंस हंसिनी सांवल गौर कहो कोन करे जल तरंगनि न्यारे । प्यारे बोली भामिनी आजु नीकी जामिनी । भेंटि नवीन मेघ सों दामिनी । मोहन रसिक राइ री माई तासों जु मान करै ऐसी कौन कामिनी । जै श्री हित हरिवंश श्रवन सुनत प्यारी राधिका रवन सो मिली गज गामिनी ।

रहसि रहसि मोहन पिय के संगरी लड़ैती अतिरस लटकति । सरस सुधंग अंग में नागरि थेई थेई कहनि अवनिपगपटकति । कोक कलाकुल जान शिरोमनि अभिनय कुटिल

भृकुटियनि मटकति ।··· ···भये प्रीतम अलि लंपट निरषि करत नासापुट चटकति । गुन गन रसि कराइ चूड़ामनि रिमवति पदिक हार पट झटकति । जै श्री हित हरि वंश निकट दासी जन लोचन चष करसा सव गटकति । वल्लवी सुक नक वल्लरी तमाल स्याम संग लागि रही श्रंग अंग मनोभिरामिनी । वदन जोति मनो मयंक अलक तिलक छवि कलंक छपति स्याम अंक मनोजल दामिनी । विगत वास हेम षंभ मनो भुवंग वेनी दंड पिय के कंठप्रेम पुंज कुंज वामिनी । जै श्री शोभित हरिवंश नाथ साथ सुरत अलसवंत उरज कनक कलसरा ।

विषय —श्री कृष्ण राधिका प्रेमसंबंधी पद ।

संख्या १५६. वैद्यविलास, रचयिता—हुलास पाठक, पत्र—५२, आकार—८ × ४, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—७२८, रूप—बहुत प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पंडित हीरालाल वैद्योपाध्याय, ग्राम—पचवान, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ श्री धन्वंतराय नमः ॥ अथ वैद्यविलास लिष्यते ॥ चौपाई ॥ प्रथमहिं गनपति चरन मनावौं । तेहि प्रसाद बुधि वल सुप पावौं ॥ पुनि वानीके चरन हृदय धरि । जेहि उर सुमति देहि माया करि ॥ पुनि श्रवै हुलास सुष वानी । त्रिपुर सुन्दरी आदि भवानी ॥ रक्त वसन उर हार विराजै । पग नूपुर किंकिन कटि भ्राजै ॥ नगन जटित कुंकुम कर मरवा । कुम कुम कलित सुचर्चित वलया ॥ अरुन किरिनि सम आस्य प्रकासा । भृकुटी कुटिल मनोहर नासा ॥ षङ्ग त्रिसूल चक्र को दंडा । बान संख कर गदा प्रचंडा ॥ औ भुसुन्डि कर वज्र सवाँरे समर जीति जिन्ह निसिचर मारे ॥ एह सरुप उर जो नर आनै । सुष सोभा वेरी करि जानै ॥ वैद्य कर्म भाषा करौं । गावत हौं अव तोहि । मातु मुदित मन दीजियै ॥ त्रिपुर सुन्दरी मोहि ॥ सुस्रत चरक निदान जो । कीन्हौं ग्रन्थ विलास । सो प्रसाद तुव ग्रन्थ मथि । भाषा करत हुलास ॥

अंत—ताँवा अविली पत्र सम । कीजै पत्र वटोरि । गंधक चूरन पत्र भरि । सरवा संपुट जोरि ॥ गध पुट कै सीतल करै । नेक मुषनि सो डारि ॥ जौपनिछा मुष मो छुटै । तौ पुनि ताहि सवाँरि ॥ चौपाई ॥ कसौंधी गंधक सोषलै । कै कुमारि रस सो षलि मलै । कै अर्क दुध सोषलै बनाइ । कीजै गज पुट सुद्ध वनाइ ॥ दोहा ॥ तौ औषध मिश्रित करै । बरी वांधि कै षाइ । कुष्ट छुई अरु पांडुता रीसा सूल नसाइ ॥ इति श्री हुलास पाठककृत वैद्य विलासे धातूनांमर्ध्य ताम्र मारन विधि ॥

विषय—वैद्यक वर्णन ।

(१) नाड़ी परीक्षा—प्रथम प्रकाश—	पत्रा	१ से	४	तक ।
(२) काल ज्ञान—द्वितीय प्रकरण—	,,	४ ,,	७	,,
(३) धातु आम्रषादि कारणविधि तृतीय प्रकरण	,,	८ ,,	१२	,,
(४) गर्भाधानादि विचार चतुर्थ प्रकरण	,,	१३ ,,	१८	,,
(५) नेत्र रोगादि उपचार पंचम प्रकाश	,,	१८ ,,	२३	,,

(६) समुद्रफल के गुण—षष्टम प्रकाश	,, २३ ,, ३२ ,,		
(७) छर्दि उपचार सप्तम प्रकाश	,, ३२ ,, ४० ,,		
(८) कंठ कुब्ज लक्षणादि अष्टम प्रकाश	,, ४० ,, ४४ ,,		
(९) धातु मारणादि नवम प्रकाश	,, ४४ ,, ५२ ,,		

संख्या १५७. गोविंद चंद्रिका, रचयिता—इच्छाराम, पत्र—१८३, आकार—९३/४ × ६१/२ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण,(अनुष्टुप्)—४५२९, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६८४ = १६२७ ई०, लिपिकाल—सं० १९१७ = १८४० ई०, प्राप्तिस्थान—मोतीलाल जी, (सुपुत्र रायबहादुर मुंशी कन्हैयालाल डिप्टी कलक्टर), स्थान—इतमादपुर, डाकघर—इतमादपुर, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशायनमः। श्री सरस्वत्यै नमः। अथ गोविंद चंद्रिका लिप्यते। श्लोक। लक्ष्मी नाप्यंदया सिंधु समर्थकं पुण्डरी विशालाक्ष वंदे प्रणत पालकं। १। तू णिनौ स्याम गौरांगौ विश्वामित्र पदानुजौ। चाप वाण धरौ पाणौ वंदे दशरथात्मजौ। २। वासुदेवं देव देवं गोविंदे ज्ञान दे गुरुम्॥ रुक्मिणी कान्तं स्यांमांग वन्देहं देवकी सुतम्। ३। सर्वा भिप्राय तत्त्वज्ञं वेदांग पारगं मंगलानच कर्ता रे वंदे वेदान्त देशिकम्। ४। सर्व सास्त्रार्थ तत्त्वज्ञं अव्यक्ताच्युत रुपिणं सर्व मंगल दातारं रामाचार्य महं भजे। ५। चतुर्भुजं चक्रायुधं नारायणं नमामि। हरि केशवं माधवं श्री राघवं भजामि। दोहा। वंदौं श्री वेदांत गुरू जिन पायौ वेदांत। अपिल भ्रांत के अंसकृत जासु वचन सिद्धांत।

अंत—हरिगोत ॥ हरि पतित पावन सरन समरथ सकल अनरथ गंजनं। स्वान स्वपच गनिका चर्मकार अपार षल गन तारनं। जल राज मैं पसु कोटि कोटिन द्रावनाथ उतारनं। पठ वाठि नट कस्तागुकादि विवेक नति छित छानकं। यह होति इक्ष्याराम को प्रभु वेद विधिन प्रमानकं। गिरिधरन वारेक रजकी अब सरन हो सुष दायकं। प्रणयामि पारथ सारथी सब भांति प्रभु सब लायकं। दोहा—भारी भव के सिंधु में, बोझी अधन जहाज, आरत इक्ष्याराम की, रामानुज की लाज। वपुषादिक मोर सब, मन वच क्रम जो होइ। हरि हरि विधि हरि वस्तु सोइ, हरिपद अर्पित होइ। जो में जो मोते कछु, सो सब प्रभु की वस्तु। को मैं का अर्पन कियो भयो समझि सुभ मस्तु। ३६।

इति श्री मद्गोविंदं चांद्रिकायां इक्ष्याराम विरचितायां पंचत्वारिसातम प्रकास ४५ अठे ग्रहे चंद्र नवेन्दु माधवे पक्षे सिते सप्तम चंद्रवासरे। गोविन्द्र चंद्र जस चारु चंद्रिका लिषे जगन्नाथ जथोक्त पुस्तककं। १। सं० १९१९ वैसाख मासे शुक्ल पक्षे तिथौ सप्तम्यां चंद्र दिने गोविंद चंद्रिका समाप्त मस्तु। श्री कृष्ण। श्री कृष्ण। श्री राम। श्री राम। राधाकृष्णाय नमः। राम। राम।

विषय—मंगलाचरण तथा ग्रंथ निर्माण काल, उद्धव बद्रिकाश्रम आगमन। कृष्ण का गोकुल आगमन, पूतनावध, कृष्ण नाम करण, बाल विलास, वत्स हरन, कालिय दमन, वृन्दावन दावानल वर्णन, नंद विमोचन, वैकुंठ दर्शन, रहस्य लीला, वृषभ केशी वध, मधुपुर प्रवेश, अनुभंग वर्णन, कंसवध, उद्धव मधुपुर प्रवेश, अक्रूर हस्तिनापुर आगमन, कृष्ण

द्वारिका आगमन, कृष्ण कुंदन नगर प्रवेश, रुक्मिणी विवाह, कृष्ण विवाह, कृष्ण विवाहप्रवेश, अक्रूर आगमन, मित्रविंदा विवाह, कृष्ण अवधि आगमन, सत्या विवाह कृष्ण विलास, सत्य भामा वर्णन, रुक्मिणी विवाह. अनिरुद्ध विवाह, नृग उद्धार, काशीदाह वर्णन, शिशुपाल वध, सुदामा चरित्र, कुरुक्षेत्र वर्णन, कुरुक्षेत्र यात्रा, वेद स्तुति, भगवत् प्रताप वर्णन। ग्रंथ समाप्ति।

संख्या १५८ ए. भक्ति रत्नमाला, रचयिता—ईश्वर कवि (धौलपुर), कागज—देशी, पत्र—५७, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—९, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०।

आदि—श्री राधा कृष्णाय नमः॥ अथ भक्ति रत्न माला लिष्यते। मः सूः सौनकं प्रति। सवैया। श्री पति श्रेय पती सुधीया पति लोक पती रू धरापति भारी। ईस्वर यज्ञपति सु प्रजापति सर्वपती बिपतीनि बिहारी। सात्वक अंध कवि कुश्न पति गति दायक लायक हैं सुषकै की। १ ते सब दासनि के रस तांगति मोपर होउ प्रसन्न मुरारी॥ सोरठा। उत्पति लयथिति होत। जा रक्षा अभ्दुत अकथ तास नाम नव पोत। भव बारिध तारन तरन ॥ २ ॥ गजमुष सुष जल रासि बंदहु करि मो पर कृपा॥ बिघन बिपति सब त्रास। निर्भय हरि गुन गन गनहु

अंत—अवलोकि कवि हरिवर द्वजाति सुकीन भाषा भाषिकै। पुर धवल मद्धि निवास राधा रवन पद उर रापिकै। नभ राम भक्ति गनेश रद मधु सुक्त गुर दसमी भई। तिह द्यौस करि उन साइ भगति सु रत्न माला निरमई। दोहा। भक्ति सुकवि जग मैं जिते ते मो क्रतइ निहारि। दोस न देहु असुद्ध जहां सुद्ध करौ निरधार। इति श्री मत्पुरुषोत्तम चरनार विंदु निर्मित श्री मन्भागवत्ता मृताधि मंथित भक्ति रत्नमालायां कवि ईश्वर गुंफत प्रबंध बंधनो प्राम संपूर्ण।

विषय—भक्ति और सत्संग आदि का वर्णन तथा पूजन अर्चना का निरूपण।

संख्या १५८ बी. भक्ति रत्नमाला, रचयिता—ईश्वर कवि (कीठवई, मथुरा), कागज—देशी, पत्र—५७, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबू हनुमान प्रसाद पोद्दार सब पोस्टमास्टर, स्थान—राया, डाकघर—राया, जिला—मथुरा।

आदि-अंत—१५८ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री मत् पुरुषोराम चरनार विंद निर्मित श्री मत्भागवता मृताथि संथिन भक्ति रत्न माला यां कवि ईस्वर गुंफित प्रबंध बंधनो नाम संपूर्ण॥

विषय—भक्ति और सत्संग माहात्म्य।

संख्या १५८ सी. मनप्रबोध, रचयिता—ईश्वरी कवि (कीठवइ, मथुरा), कागज—देशी, पत्र—२६, आकार—७ × ५¾ इंच. पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२११, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१२ = १८५५ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री हनुमान प्रसाद, सब पोस्टमास्टर, स्थान—राया, डाकघर—राया, जिला—मथुरा।

आदि—श्री राधा माधवो जयति राधा माधा सुमरि बाधक सकल विरोध। मन प्रबोध हित करत हैं निज मनि सुमन प्रबोध। १ गन नाइक धाइकहुरि तमन भाइक फल दानि यस संपति सम्हृद्धि कर करत बिघन की हानि २ वाग वादिनी वाग मम बसहु दास निज करन चहत इक ग्रंथ। कर तुव प्रसाद उर आनि ३ वत्सर भुज रविचक्र गृह आतम मधु मास। सुकल मदन तिथि ता दिवस की नौ ग्रंथ प्रकास। मन प्रबोध या ग्रंथ कौ नाम धरयौ सुख कंद याके अवलोके गुने मिटै सकल जग दंद।

अंत—ईस्वर कवि निज बुद्धि वल भाष्यौ सुमन प्रबोध राधा माधव के चरन उर धरि नासि विरोध २६ सनैश्मन बस करै कामा दिक परित्याग राग द्वेस करिकै प्रगट मन वच क्रम हरि पागि २७ मन प्रबोध भाष्यौ सु इह ईस्वर मति अनुसार सुहृद संत हरि जन जिते तेइह कीजौ प्यार। २८ इति श्री मन प्रबोध ईस्वर कीव विरंचिते। नवधा भक्ति वरननं नाम नव मोर तांत ९ इति श्री मन प्रबोधे ईश्वर कवि विरंचित संपूर्ण।

विषय—भगवद्‌भक्ति वर्णन।

संख्या १५९. ग्रहफल विचार, रचयिता—ईश्वरदास कायस्थ (आगरा), पत्र—११, आकार—१० × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३०, खडित, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५६ = १६९९ ई०, लिपि-काल—सं० १९०२ = १८४५ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबू केदारनाथ अग्रवाल, स्थान—वाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—···भ थान ॥ मात्र पछ को कलह मन, सत्र रहै भै मान ॥ ८३ ॥ सप्तम बुध जो अस्त नहिं हैम वरन धन वान। स्त्रिन सौं वहु प्रीति कहि सुक्र अल्प तिहि थान ॥ ८४ ॥ अष्टम बुध मत अहि कहु; अंतर दिस सुष नाम। राजा सौं अति लाभ कुल, विलसै सुष पुनि भाम ॥ ८५ ॥ नौ मैं बुध सुसील धर्म, जाय तीरथ न प्रीति। राज समीपी कुल तिलक, दुष्टन कौं भय भीति ॥ ८६ ॥ दसम सोम सुत होइ सो, सुंदर द्युतवान। × × ×

अंत—पुत्र लोक मनि दास कौ, ईश्वर दास प्रसस्त। काइथ सकसैनौ खरो, आस्रम में ग्रह सस्त ॥ ४६ ॥ नगर आगरे मैं वसै, जमुना तीर सुभ थान। सव ग्रन्थन कौ सार लै, भाष्या भाष्यौ आन ॥ ४७ ॥ संवत् सत्रह सै गये षट ऊपर पंचास। गोपा गिरि के मध्य यह पूरन करी स विलास ॥ ४८ ॥ इति ग्रह फल विचार ॥ सम्पूर्ण शुभ मस्तु। संवत् १९०२ फाल्गुण सुदि १३ भौम वासरे कौ सम्पूर्ण ॥ जैसी प्रति देषी तैसी लिषी मिती कार्तिक वदी ९ चन्द्र वासरे कौ संपूरण भई लिषत रघुवर दयाल श्री राधा कृष्णः ॥

विषय—ग्रहों के फलों का विचार।

टिप्पणी—ग्रन्थकार ईश्वर दास जाति के खरे सकसेना कायस्थ थे। वह अपने पिता का नाम लोकमणि दास और अपना निवास स्थान आगरा बतलाते हैं। साथ ही उनका यह भी कथन है कि उन्होंने प्रस्तुत ग्रन्थ गोपाचल (गवांलियर) में रचा था। ग्रन्थ के प्रति लिपि कर्त्ता ने नकल करने में इतस्ततः अनेक स्थलों पर अशुद्धियाँ की हैं। कहीं तो पद के पद छोड़ दिये गये हैं। ग्रन्थ आदि से खंडित है।

संख्या १६०. सत्यनारायण की कथा, रचयिता—ईश्वरनाथ, कागज—बाँसी, पत्र—१४, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९११ = १८५४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० जयदेव मिश्र, ग्राम—सरहैंदी, तह०—खेरागढ़, डाकघर—जगनेर, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशायन्मः श्री सरस्वते न्मः। श्री गुरूभ्यो न्मः। अथ सत्यनारायण जी की कथा लिख्यते। दोहा। राजै गणेश जू सारदा, जैह नमन गुन गान। करहु कृपाजन जानियो, जै जै श्री भगवान्। श्री प्रभु सत्य नारायन, जसु गावत हों तो तोर। फेर तुवै माराज दहौं, पार लगैयो मोर। तुम्हरे जसको बरनि हों, पार न पावै राम। लोभ मोह मद जै तजै, और तजे सब काम। जिनके जे लछिन जु है, है रघुपति पद प्रीति। ते नर कलि में धन्य हैं लयो सुनि गति न जीति। जापर तुम कृपा करो, नर देवनि सब जोय। मन में वजुर करै सही, जानतु है सब कोय।

अंत—दोहरा—कह ईश्वर सादर ये भजौ करौ सब लोग। दुःख भंजै जिन विप्र को हों को सुनै न जोग। जाना रामन कौ रुद्रा भजन ब्रह्म और इसि। इति श्री सत्यं नारायणं कथा विरंचि तांया ईश्वर नाथ हते सूत सौनक संवादे साह रुंघ वरननो नाम चतुर्थोध्याय। संवत् १६११ मार्ग सिर सुदी १५ पूरनमासी लिखतं मिश्र जवाहिर पठनार्थ बाल बद्रीप्रसाद हरि प्रसाद सुभं भवत, मंगल वस्तु। श्री रामचन्द्र जी।

विषय—सत्यनारायण की कथा का वर्णन।

संख्या १६१ ए. रामविलास रामायण, रचयिता—ईश्वरीप्रसाद (पीरनगर, लखनऊ) पत्र—३००, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९१६ = १८५९ ई०, लिपिकाल—सं० १९२५ = १८६८ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामभजन शर्मा, ग्राम—हरिआवाँ, डाकघर—पिहानी, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ राम विलास रामायण लिख्यते॥ कवित्त—लहत सकल रिद्धि सिद्धि सुख संपदहू, विद्या वुधि सुमिरि गणेश गौरी नंदनै॥ सिंधर वदन सुठि सोहत तिलक लाल। चन्द्रवाल भाल नैंन देत हैं अनंदनै॥ एक दंत भुजग विभूषण परशु पाणि। चारि भुज अभय करत दास वृन्दनै॥ सुन्दर विशाल तन ईश्वरी संभारु मन। दया घन हरण विघन दुख द्वंदनै॥ १॥ अरुण कमल दल दुति पद तल कल। पदजं लखहु जन नखत सुभावते॥ विमल तुषार सम सोहत शरीर सुठि। आनन अनूप नैन खंज ते सुभावते॥ धवल मराल पै सवार स्वेत पट्ट सजि। अंग अंग भूषण अमित छवि छावते॥

अंत—वरना शिवा प्रति शंभु सकल चरित्र पावन रामको। जो सुनै गावै पाइ है सो परंपद अभिराम को॥ को कहे कोटिन जन्म जेहिके पाप चय संचय रहैं। ते अघन सुनतें प्रेमसो श्री राम यस पावक दहे॥ जेहि हेतु रामायण सुनै सो हेतु निश्चै पाइहै॥ सुत दार भू भंडार लक्ष्मी सुख सकल सरसाइ है॥ यह कथा रघुनाथ की श्री वालमीक जू गायउ॥ व्यासादि मुनि वहु भांति कहि शिव शिवा सों समुझायऊ॥ तेहि वरणि भाषा

छन्द मैं कश्यप कुलो हूत द्विज वरे। ईश्वर त्रिपाठी वसत सारावती सरि तट सुख भरे॥ लक्षिमण पुर ते पंच जोजन पीर नगर निवास है। वरणि रामायण कलषु हर नाम राम विलास है॥ रस चंद नव शशि अब्द मधु सुदि राम नौमी मानिकै। हरि प्रेरन ते प्रगट कीनी जक्त निज हित जानिकै॥ इति श्री मद्रामायणे उमा महेश्वर संवादे संपूर्ण समाप्ते॥ संवत १९२५ वि० कार्तिक पूर्णिमा॥

विषय—राम कथा का वर्णन।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता पं० ईश्वरी प्रसाद पीर नगर निवासी थे। निर्माण काल संवत् १९१६ वि० लिपिकाल संवत १९२५ वि० है। इसको इस प्रकार वर्णन किया है:—यह कथा श्री रघुनाथ की ऋषि वालमीक जु गायऊ। व्यासादि मुनि बहु भांति कहि शिव शिवा सो समुझायऊ॥ तेहि वरणि भाषा छन्द मैं कश्यप कलोद्भव द्विज वरे। ईश्वरी त्रिपाठी वसत सारावती सरि तट सुख भरे॥ लक्ष्मण पुर ते पंच जोजन पीर नगर निवास है। वरणि रामायण कलषु हर नाम राम विलास है॥ रस चंद नव शशि अब्द मधु सुदि राम नौमी मानिकै। हरि प्रेरन ते प्रगट कीनी जगत निज हित जानिकै॥

संख्या १६१ बी. रामायण रामविलास, रचयिता—ईश्वरीप्रसाद (पीरनगर, लखनऊ), कागज—देशी, पत्र—२९६, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९१६ = १८५९ ई०, लिपिकाल—सं० १९२७ = १८७० ई०, प्राप्तिस्थान—पं केदारनाथ, ग्राम—भगौता, डाकघर—सोरो, जिला—एटा।

आदि—१६१ ए के समान।

अंत—तेहि वरणि भाषी छन्द नै कश्यप कुलोद्भव द्विज वरे॥ ईश्वर त्रिपाठी वसत सारावति सर तट सुख भरे॥ लखन पुर ते पंच जोजन पीर नगर निवास है। वरणि रामायण कलषु हर नाम राम विलास है॥ रस चन्द नव शसि अब्द मधु सुदि राम नौमी मानिकै। हरि प्रेरन ते प्रगट कीनी जक्त निज हित जानिकै॥ इति श्री राम विलास रामायणे उमा महेश्वर संवादे संपूर्ण समाप्तः संवत् १९२७ वि० मार्ग शीर्ष सुदि सप्तमी॥ श्री शंकर कैलाश पती की जै॥

संख्या १६१ सी. रामविलास रामायण, रचयिता—ईश्वरीप्रसाद (पीरनगर, लखनऊ), पत्र—२८०, आकार—१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४८०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२० = १८६३ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० आगमसिंह परिहार, ग्राम—नगला झम्मनसिंह, डाकघर—पिलखना, जिला—अलीगढ़।

आदि–अंत—१६१ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री रामायण राम विलास ईश्वरी त्रिपाठी कृत संपूर्ण समाप्तः संवत् १९२० वि०।

संख्या १६१ डी. रामायण रामविलास, रचयिता—ईश्वरीप्रसाद (पीरनगर, लखनऊ), पत्र—२९६, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण

(अनुष्टुप्)—५४६०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९१६ = १८५९ ई०, लिपिकाल—सं० १९१८ = १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—रामकिशन कूर्मी, स्थान—अतरौली, डाकघर - अतरौली, जिला—अलीगढ़ ।

आदि-अंत—१६१ ए के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—

संवत् १९१८ वि० लिखा रामप्रसाद भट पुरा वाले ने अपने गुरू राधा वल्लभ के पठनार्थ ॥ जै राधाकृष्ण मुरारी राम चन्द भय हारी ॥

संख्या १६२ ए. मनपूरन, रचयिता जगजीवन स्वामी (कोटवा, बाराबंकी), कागज—मोटा पीला कागज, पत्र—४५, आकार—१३½ × ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्) —६३०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१४ = १७५७ ई०, लिपिकाल—सं १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरुप्रसाद दास, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगेसरगंज, जिला—सुलतानपुर ।

आदि—दो०—कथा प्रगट मनपूरन, सुनिमन पूरन होय । जगजिवन दाससति मूरति, शब्द कहै निजु सोय । चौ०—दाया करिए मोहिं, कीर्ति तुम्हारी गावऊँ, कहौं विनय करि तोहिं तुमते ध्यान लगावऊँ । चौ०—मनहिं विसारौं तुमका नाही, चित राखो मैं चरनन माहीं । दाया जब तुम्हारि मोंहि होई, तब तुम्ह जिना जानौ कोई । बिन दाया मोहि कछु न होई, कृपा करहु तव जानौ सोई । करुदाया अब दीनानाथ, नाय कहौं तुम चरनन माथा । होऊँ दास तब कीरति गाऊँ, जब तुम्हारि प्रभु आज्ञा पाऊँ, आज्ञा करहु कृपाकरि मोंही, तब मैं ध्यान धरौं प्रभु तोही ।

अंत—रहौ सूरन वहि नामकी, भर्म फांस ते फूटि । अमर भए निर्वान ह्वै, ताहि सरन नहिं छूटि । सो०—नाम सरन मिलि जाय, दियो भर्म तब त्यागि कै । निरखि रहे टकलाय अमल ज्योति निरखति रहे । चौ०—रटहिं नाम निरखहि निर्वानी, भरम छूटि रहि ज्याति समानी । निर्गुन निर्मल सो निरंकारा, बिरले कोउजन निरखन हारा । दो० जग जीवन दास शब्दते, सुनिमानै विस्वास, मनकी दुविधा जाय सब, सदा सत्य मा बास । सो० सदा सत्यमा बास, समुझि कथा मन पूरना । कहि जगजीवनदास, संतहेतु परगट करयो।

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश ।

संख्या १६२ बी. बुद्धि वृद्धि, रचयिता—जगजीवन साहब (कोटवा, बाराबंकी), कागज—मोटा, पत्र—२, आकार—२३½ × ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०, रूप —नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७८५ = १७२८ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरुप्रसाद दास, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगेसरगंज, जिला—सुलतानपुर ।

आदि—यहि नगर क अंत न पायौं, मैं केहि विधि मन समझायौं । कहां ते दहुं मैं आवा, कछु अंत जानि नहिं पावा । मैं कोदहुं आऊँ अनारी, मैं कहं भूलेउ संसारी । कहँ दहूँ रह्यौ स्थाना, मैं तब अवनाही जाना । कवने ग्रह रहि बांसा, अब भूलेउ झूंठी आसा । को मैं आऊं कहं आयौ, मैं बात सबै बिसरायौं ।

अंत---मैं आदि जोति महमाया, ब्रह्मा शिव विष्णु बनाया। चांद सूर्य भयो तारा, सब परे कर्म के जारा। पसु पंछी नर नारी। परि मोहम सबै बिगारी। जग जीवन दास विचारा, जिन्ह आपनि सुरति संभारा। निर्गुन राम कहाए, दुइ अक्षर जन मन भाए, तिन्है परै कछु जानी, जिन्ह प्रीत नाम ते ठानी। सत गुरू मिलि अन्तर माहीं, तिन्ह ते छपा कछु नाहीं। जगजीवन दास वे न्यारे, जे गंगनम आसन मारे।

विषय---जीव और संसार की उत्पत्ति का तथा किसी योनि में जन्म लेने के प्रथम जीव किस दशा में था और कैसे उत्पन्न हुआ और महा प्रलय के पश्चात् संसार की उत्पत्ति कैसे हुई, आदि का वर्णन।

संख्या १६२ सी, दृढ़ ध्यान, रचयिता---जगजीवन स्वामी (कोटवाँ, बाराबंकी), कागज---पुराना मोटा, पत्र---३, आकार---१५३/४ × ११ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)---४१, रूप---नवीन, लिपि---नागरी, रचनाकाल---सं० १८१० = १७५३ ई०, लिपिकाल---सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान---महंत गुरुप्रसाद दास, ग्राम---हरिगाँव, डाकघर---जगेसरगंज, जिला---सुलतानपुर।

आदि---कहत सो अहौं पुकारि, सुनि साधो लेहु बिचारि। का पढ़ि गुनि पंडिताई, जो ज्ञान न हिए समाई। का पढ़े वेद पुराना, जो राम नाम नहिं जाना। विद्या बहुत अधिकारा, ताते बहुत अहँकारा। करहिं वेवाद जहिं ताहीं, ते पंडित भरम भुलहीं। ते पंडित पर बीरा, जे दीन नाम ते लीना। त्यागि कपट चतुराई, धन्य सो कहौं सुनाई। कविन्ह का कहौं बखाना, जे जिभ्या करहिं बयाना। निपुन बहुत अधिकारी, छिन अच्छर जोरि सुधारी।

अंत---जग जिवनदास विस्वास, मन बैठ सतगुरु पास। भाग्यते अस होय, कहि संत भाखैं सोय। असकहि विवेक विचारि असमनै गहै संभारि। जगजीवन तेहि का दासा। जब ज्ञान तत्व विस्वासा। जगजीवन जस परतीती। तिन तैसी राखी प्रीती। दृढ़ ध्यान कथा बयान। मन मगन रहि मस्तान। जगजिवन दास, सत गुरू कीन्ह प्रगास।

विषय---ईश्वर में ध्यान दृढ़ करने का उपाय वर्णन।

संख्या १६२ डी. विवेकमंत्र, रचयिता---जग जीवन साहब (कोटवाँ, बाराबंकी), कागज---मोटा पीला, पत्र---३, आकार---१३३/४ × ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)---१८, परिमाण (अनुष्टुप्)---४५, रूप---नवीन, लिपि---नागरी, रचनाकाल---सं० १८१० = १७५३ ई०, लिपिकाल---सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान---महंत गुरुप्रसाद दास, ग्राम---हरिगाँव, डाकघर---जगेसरगंज, जिला---सुलतानपुर।

आदि---मैं कहौं ज्ञान पुकारि, सुनि साधो लेहि विचारि। ज्ञान कहौं ततसार, जो समुझि करै विचार। तस परै तेहिका जानि, जो लेहि तत्तहि छानि। बिन भर्म भक्ति न होय, मन बूझि देखै कोय। मन बूझि समुझि डेरान, तब आइ उपज्यो ज्ञान। तब चल्यो मन यह भागि मैं रहौं केटि ते लागि। मैं ढूढ़ सब कहुं आई केहुँ राखि नहिं सरनाइ। तब करै लग्न विचार, जग कौन है अधिकार। मैं ताहि सरनहिं जाऊँ, जो जानि पाऊँ नाउँ सत सब्द मिलिगे राउ, तोइ मोरि सरनहि आउ।

अंत—मन भा सतगुरु का चेल, वह सांई अलख अकेल। बैठेउ मन ठहराई, सत गुरु कि बंदगी लाई। चमक झलंक जहं होई, तहँ गुरु मुख मन भा सोई। कहूँ जो मन फिरि धावै, तौ जाय कहूँ फिरि आवै। काहुक मन भा बंदा, कोउ भरमि पराभा गंदा। कोउ रहा गंगन ठहराई, कोउ परा है भर्म भुलाई। ते गुरु मुखी कहाए, ढिग रहे अनतन धाए। बहुतक करहिं बयाना कोउ विरुला जन ठहराना। विवेक मंत्र कहि गावा, जस गुरु मोहि लखावा। अस करै काल ते बांचै, सो निरभै होइ के नाचै। जग जिवनदास भे सोई, असि युक्ति भक्ति करै कोई।

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १६२ ई०. कहरानामा, रचयिता—जगजीवन साहब (कोटवाँ, बाराबंकी), कागज—मोटा पीला, पत्र—४, आकार—१३½ × ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५७, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१० = १७५३ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरुप्रसाद दास, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगेसरगंज, जिला—सुलतानपुर।

आदि—(ॐ) वो वह साहब समरथ आहि जिन रुव साज बनावारे। पहलि एकमा सब रचि लीन्हा नहिं विलंब लगावारे। १। नाना विधि सबही मा नाचै, धरि २ रंग सुवांगा रे। कहुं भूलत कहुं राह बतावत, कहूं रहत रस पागा रे। २। (य) या माया यह नाच नचावै मन मानै तस करई रे, आवत जात सो नाचत आपुइ जस भावै तस फिरई रे॥ ३॥ (ल) सीसिर विना नाम वह आहै, पुष्ट न कैसेहु होई रे। यहि माया रसमाति भुलानेउ, चले सरबसौ खोई रे।

अंत—(ए) ए एकहि ते यहु मन राखहु, कबहु विसारौ नाही रे। जगजीवनदास धन्य वे प्रानी तेहि समान कोउ नाही रे। कहेऊँ ककहरा कहरानामा, समुझै विरला कोई रे, समझै बूझै संत होइ निपटै, अन्तर ध्यानी होई रे। संत के वचन प्रमान करै जो, समुझि ताहि कछु परई रे। जगजिवनदास तब ज्ञान होइ कछु, समिरन मन महं करई रे।

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १६२ एफ. कहरानामा दोसरा; रचयिता—जगजीवन साहब (कोटवाँ, बाराबंकी), कागज—मोटा पीला, पत्र—१३, आकार—१३½ × ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१२ = १७५५ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरुप्रसाद दास, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगेसरगंज, जिला—रायबरेली।

आदि—समरथ साहब तुम ही सब हहु करहु सो होई रे। सरब मई मा बास तुम्हारी और दूजा कोई रे। नाचत आप नचावत सब कंह अंत न कोऊ जानै रे। जानतु आपु जनावत सब कहं जस जानै तस मानै रे। दूजा नहीं तुम ही साहेब कहु मूरख कहुं ज्ञानी रे। कहु पंडित भाषत परमारथ कहुं विवाद रचि ठानी रे। इत हारत उत जीतत आपुहि उत विवेक जप ध्यानी रे। कबहुं कवाद चुप्प रस राते कहुं न अँत बिलगानी रे।

अंत—जेहिं सरुप निज ध्यान धराजस, तैसे तिनही पायो रे। कहुं निर्गुन कहुं सर्गुन जल महं कहूँ परवान लखायो रे जहं जस बास विस्वास के दीन्हेउ तहंतस मंत्र द्दढ़ायोरे। अनगन कला कृपा ते सुमिरै अन्तन काहू पायो रे। जेहि चाहै भरमाय देय जेहि चाहै ध्यान द्दढ़ायोरे। सो अन्यास कृपा भैजेहि दिसि सो द्दढ़ भक्त कहायो रे। जगजीवन दास धन्य वे साधू जेहि आपन करि लीन्हेउरे। ते जग आय विदित जग जाना चरन कंमल चित दीन्हे करे। सोइ साधु साधन जिन कीन्हा पोढ़ि डोरि मन लयउरे। टूटत अहै फेरि कै जोरन जक्त सबै बिसरायउ रे। निरखि निहारि देखि मनि मूरति चरनन्ह सीस लगायउरे जगजीवन दास साधन कै महिमा परगट कहिकैं गायउरे।

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १६२ जी. कहरानामा तीसरा, रचयिता—जगजीवन स्वामी (कोटवाँ बाराबंकी), कागज—मोटा पीला, पत्र—१$\frac{1}{2}$, आकार—१३$\frac{1}{2}$ = ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१४ = १७५७ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरुप्रसाद जी, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगेसरगंज, जिला—सुलतानपुर।

आदि—सतगुरू साहब तुम समरथ हहु, देहु ज्ञान गुन गावौ रे। बूझि बूझि तव आवै मोहि कहं, चरनन ते चित लावौं रे। सीसनाय कर जोरि कहौं मैं, आपन करिकै जानहु रे। औगुन क्रम भ्रम जो हहिं मोहिमा मेटि सो सरनहिं आनहु रे। सरन आइकै मन सुख पावौं नैन ते सुरति निहारौं रे। अव दयाल हो विनती करत हों कबहुं नांह विसारौं रे। ध्यान भजन मंह मगन रहौं निसु बासर दर्सन पावौं रे। सुर मुनि गध्रप तुम सबके पति यहै जानि मै गावौं रे। मन मूरति सत सूरति साईं, सुनिये अरज हमारी रे। अपथ पंथ इत उतनहि भरमै सुरति निकट ते न टारी रे। जो तकि देखौं सब जग नैनन्ह, भूल सब भव माहीं रे। सांचु कहत झूंठे का हितकरि, कोउ काहू कर नाही रे।

अंत—अपनी २ करिनी करिकै, जेइं जस कीन्ह कमाई रे। कहने सुनने की कछु नाहीं जेहि के भाग्य तस पाई रे। बड़े भाग्य वैराग्य जाहि के, जेहि मन मूरति लगारे। जगजिवनदास तेहि सम नहि कोउ नेग कर्म भ्रम भागा रे। रसना के रस जे जन राते, माति रहत दिन राती रे। चारि वरन षट दरसते न्यारे उन्हके जाति न पाती रे। जग जिवनदास अम्मर तेई में जुग २ जीवहिं सोई रे। अंतर अलख अमूरति वसि जिन्ह सूरति सत्य समाई रे।

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १६२ एच. चरण वंदगी, रचयिता—जगजीवन साहब (कोटवाँ, बाराबंकी), कागज—मोटा पीला, पत्र—४, आकार—१३$\frac{1}{2}$ × ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८११ = १७५४ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरुप्रसाद दास, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगेसरगंज, जिला—सुलतानपुर।

आदि—साधो करहुँ वंदगी चरन कमल की, रहौं चरन लपटाई हो। साधो अव दाया मोहि जनकहं कीजै परगद कहौं सुनाई हो। साधो विधि ने उत्तम नगर वनायौ,

तेहिका अंत न पाई हो। साधो अंध धुंध वह दुनियाँ आहै, सब कोइ परेउ भुलाई हो। साधौ तब न नगर मंह बास कियो है, तेहिका अंत न पाई हो। साधौ सबै विदेशी सोवत आहैं जागत नहिं गाफिलई हो। साधो जागे कोइ २ चौंकि जक्तमा, तिनही सुरति संभारी हो। साधो आपु तरे औ औरन्ह तारिन्हि, तिनकी मैं बलिहारी हो।

अंत—साधौ हिन्दू मुसलमान सब एकै, एक ब्रह्म एक काया हो, साधौ अपने ज्ञान न बूझै कोई, सब निर्गुन कै माया हो। साधौ गौस कुतुब और पीर औलिया, पैगम्बर परमाना हो। साधौ साइ सुल्तान औवली कलंदर देवान हाफिज मस्ताना हो साधौ सब सांई के आहहिं प्यारे, सद का करहु बखाना हो। साधौ सबै एक कै जानै, सबकै बंदगी आना हो दो०—दुइकर शीश चरनन दियो, छूटै नहि दिन राति, जग जिवनदास, यहि विधि भजै, सोई संत कै जाति।

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १६२ आई. सरन बंदगी, रचयिता—जग जीवन स्वामी (कोटवाँ बाराबँकी) कागज—मोटा, पत्र—१½, आकार—१३½ × ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१४ = १७५७ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८७ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरुप्रसाददास, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगैसरगंज, जिला—सुलतानपुर।

आदि—साधौ अहै अथाह थाह कछु नाही देखा ज्ञान विचारी हो। साधौ जेहिका जैसी दाया कीन्हेउ तेइ तस कहा पुकारी हो। साधौ तीन चौथ रचि काया कीन्हेउ तेहिका बड़ विस्तारा हो। साधौ दसौ बास दस करि दृढ़ होई नौ महं नाहिं केंवारा हो साधौ दीप सात नव खंड बनायो सात समुद्र नेवासा हो। साधौ यह बनाउ सब है काया को विन है तीर निरासा हो। साधौ निर्गुन टूटि फूटि कै आयो, सरि खेलत घरि माही हो। साधौ नेगन्ह रंग तरंग रसहिते वह सुधि पाछिल नाही हो। साधौ सर्व अंग मा बेधि रहेउ है लिप्त काहु मा नाही हो। साधौ जब चाहै उड़ि जाय तहां को कोउ न तके परछाई हो। साधौ यह माया है महा अपर बल तीनि लोक महं नाचे हो। साधो देखै अलख खेलु सौ खेलै जब चाहै तब खांचै हो।

अंत—साधों विरले साध भये हैं जग में जेहि ते अन्तर नाहीं हो। साधौ जग जिवनदास वै पास रहत हैं कबहुं विसारत नाहीं हो। साधौ सतगुरू पास बास करि रहे हैं जग आहैं विसराए हो। साधौ युग २ आहिं सदा संग वासी वै दुनियां नहि आए हो। साधौ लगि पागि अन्तर धुनि लागी साधु भयो मस्ताना हो। साधौ मिलि सतसंग रंग रस राते जग जीवन करहि बखाना हो। साधौ अन्य साधु जो जोतिहिं मिलिगे जो आहै सो आहीं हो। साधौ जगजीवन दास विस्वास कै जानै और दोसरो नाही हो।

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १६२ जे. विवेक ज्ञान, रचयिता—जगजीवन साहब (कोटवाँ बाराबंकी), कागज—सफेद, पत्र—४, आकार—८ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८११ = १७५४ ई०,

लिपिकाल—सं० १९८७ = १९३० ई०, प्राप्तिस्थान—त्रिभुवन प्रसाद त्रिपाठी 'विशारद', ग्राम—पूरे प्राणपांडे, डाकघर—तिलोई, जिला—रायबरेली।

आदि—कहत सों अहौं पुकारि, सुनिसाधो लेहु विचारि। शब्द कहौं परमाना, जिन्ह प्रतीत मन आना। शब्द कहै सो करई, विन बूझे भर्म मा परई। शब्द कहै विस्तारा, शब्दै सब घट उजियारा शब्द बूझि जेहि आई, सहजै मा तिनही पाई। सहज समान न आना, सहजे मिले कृपा निधाना। सहज भजन जो करई, सो भव सागर तरई। भव सागर अपरम्पारा, सूझत वारन पारा। रहै चरन सरनाई, तव भवसागर तरि जाई। भव सागर तरि पारा, तब भयो है सबते न्यारा।

अंत—भेष बहुत अधिकारी, मैं तिनकी कहौं पुकारी। भसम केस बहु भेषा, ते भ्रमत फिरहिं सब देसा। वहु गुमान अहंकारी, इन्ह डारेउ सकल विसारी। बहुत फिरहिं गफिलाई, करि आसा अरु भाई, केहू तपस्या ठाना, कोइ नगन भयो निर्वाना। कोइ तीरथ बहुत अन्हाई, कोई कंद मूरि खनि खाई। केहू कर घी चहिं तूरा, केहु सतगुरु मिलहि न पूरा। झूले मुख अगिनि झुंकाहीं, कोई ठाढ़े बैठे नाहीं। भूले करि देखा देखा, है न्यारा नाम अलेखा। कोटि तिरथ यह काया, तेहि अंत न केहू पाया। पांचौं जिन्ह घर जानी। जग जीवन सो निर्वानी। राम अछर जेहि माही, जग तेहि समान कोउ नाहीं।

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १६२ के. उग्र ज्ञान, रचयिता—जगजीवन साहब (कोटवाँ, बाराबंकी), कागज—मोटा पीला, पत्र—१, आकार—१३$\frac{1}{2}$ × ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८११ = १७५४ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरूप्रसाद दास, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगेसरगंज, जिला—सुलतानपुर।

आदि—मैं सीस चरन तर धरऊँ, मैं कैसे बंदगी करऊँ। जब तुम ध्यान दृढ़ायो, मैं जानि परखि तव पायों। दृष्टि देखि तब आई, तब जोतिहि जोति मिलाई। सतगुरु मोहि आपन जाना, तुम तजि भजौं न आना। अव वसि काहु कि नाही होइ चहहु मनमाहीं साधो कोइ नहीं करै गुमाना, गुरु करै सो होय प्रमाना।

अंत—नाम रटत रटि रहेऊ, तब मगन मस्त मन भयऊ। जग जिवनदास जिन जाना, सतसब्द सोई परमाना। सतगुरु अन्तर मिलि गयऊ, उग्रज्ञान तब भयऊ। तब आदि अंतकी कहेऊ, जौनी विधि जहां मैं रहेऊ। सुन्य सब्द ह्वै आयो, तब निर्गुन आनि कहायो। निर्गुन तकि विलगाना, तव भै महमाया निर्वाना। तीनि चौथ तव भयऊ, जहां तहां सो रहेऊ। भा माया का विस्तारा, करि को मन सकै विचारा। जग जिवनदास जहं जागा, तहँ उलटि लगायो धागा।

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १६२ एल. छंद विनती, रचयिता—जगजीवन स्वामी (कोटवाँ, बाराबंकी), कागज—सफेद मोटा, पत्र—२, आकार—१३$\frac{1}{2}$ × ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८११ =

१७५४ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरुप्रसाद दास, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगेसरगंज, जिला—सुलतानपुर।

आदि—मोंहि नाहीं है कछु ज्ञाना, कैसे धरौ अन्तर ध्याना। छंद—सुनहु दीनानाथ करहु सनाथ तुमहिं सुनावऊँ। दास आपन जानि निसु दिन कबहुं नहि विसरावऊँ। अनत चित्त न जाय प्रीति लगाय रहि चरनन महीं। आस जक्त निरास राखौ दूसरो जानों नहीं। कठिन है भवसागरं सो देखि डर लागत मोहीं। हाथ है निर्वाहु तुम्हरे नहि छिपावत हौं तोहीं। जाय नहि इत उत चितं नैन निरखत ही रहौं। पास बास निस्वास करिकै, भेद नहि परगट कहौं। नेग जन्म के कर्म अघ जेहि कृपा करि दूरहिं करी। वुध्य सुध्य भजन हीनं हितंकरि अव धर धरी। मातु सुतहिं पियाय पय कछु रोस नाहीं मन करी। ऐसे आपन जानि विसराइये नहिं छिन घरी। चहौं निर्मल नाम निरखौं जोति कबहूं नहिं टरै। जग जिवनदास प्रगास सतगुरु सीस चरनन्ह तर धरै।

अंत—छंद—अगम अजित अपार अविचल अचल पिय तुव दरस है। बार बार होइ दास दासं प्रगट निजु कीरति कहे। यह किरति मोंहि पियारि जगत सदा चरनन्ह तर रहौं। देहु ज्ञान प्रगास निर्मल दीप्ति जेहि तुम्हरी लहौं। ज्योति यक रस उदित देखौं अनत नहिं मन राखऊँ। आस परसं रहौं जुग जुग सत्यवानी भाखऊँ। करै जो विस्वास मनमाँ, ताहि सदा उवारईं, जगजिवन दास कहत सोई जो सत्य नामहिं जानई।

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १६२ एम. बारहमासा, रचयिता—जगजीवन साहब, (कोटवाँ बाराबंकी), कागज—पीला मोटा, पत्र—२, आकार—१३½ × ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१२ = १७५५ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरुप्रसाद दास, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगेसरगंज, जिला—सुलतानपुर।

आदि – कनक नगर विधि नीक बनाई, तहां आय मै परउ भुलाई। मोरे जिय मां भयो अंदेसा मोर पिय विछुरि गयो केहि देसा। कातिक कर्म परऊँ मैं आई, पिय मोर डारा सुधि विसराई। सुधि बुधि मोरि उनहि हर लीन्हा, मैं पापिन कछु चेत न कीन्हा। अगहन आस प्यास भै मोही, इन्ह नैनन्ह कव देखिहौं तोहीं। आवत समुझि नैन वहै नीरा, उन्ह हमारि नहिं जानेउ पीरा। पूस पुन्य मैं का दहु कीन्हा, मोरि वपुरी कै सुद्धि न लीन्हा। कलपौं दरस तकै का तोरा, हियरा आनि जुड़ावहु मोरा। माघ मनहि मोंहि मिलिहैं नाहा, सतसुख सेज सूति गहि वाहां। वहि चौं महल टहल रहौं लागी, चरन सीस दै रंग रस पागी।

अंत—सावन सांई मोहिं दासी जानी जुग २ कबहु न होउ बिरानी। मन और जीव पीव परवारी, आदि अंत कै आऊँ तुम्हारी। भादौं भरम करहिं मोर दूरी, पावौं मैं दरस इच्छा भरि पूरी। बड़े भाग्य तब जानहुं मोरे चेरि मैं चरनन विसरहिं तोरे। क्वार कूर तजि दे कुटलाई, यहि मन रहौ चरन लपिटाई। कबहुं न आपक जानहु ऊँचा, रहहु

नीच तौ होइ हौ ऊँचा। बारह मास एक करि गाई, संत विवेक कहहिं गोहराई। जग जिवनदास मन बूझै कोई ए साखि सत्य सुहागिनि होई।

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १६२ एन. स्तुति श्री महाबीर जी की, रचयिता—जगजीवन स्वामी (कोटवाँ, बाराबंकी), कागज—मोटा पीला, पत्र—७, आकार—१२$\frac{1}{2}$ × ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०५, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१२ = १७५५ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरुप्रसाद दास, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगेसरगंज, जिला—सुलतानपुर।

आदि—कछुक कही कृपाते जनम कर्म गाऊँ, पै महिमा समुद्र की कहां पार पाऊँ जबै सिव असुर को कंगन दान दीन्हेउ, धरै करि पहिरि सिर चहै भस्म कीन्हेउ। उठी मन तरक सक्ति पायौ सुरारी, करौं भस्म हरको हरौं दिव्य नारी। भगेभव भभरि अमिसती हे लुकाने, सकारे आनत साम औरे ठेकाने। महादुःख पायौ फिरैं शिव दुराने कृपा सिन्धु हित जानि चितमें छोहाने। तबै नारि कृतकै नरोत्तम नचायो, करत हाथ ऊपर अपन कृश पायो। लीयो हाथ कंगन सिवहि आनि दीन्हेउ, कहा लेहु आपन बहुरि ऐस कीन्हेउ। सुखी भे महादेव कहा कैसे पायो अखिल विश्व मोहन कला कै देखायो।

अंत नमः डंकिनी संकिनी भय विनासं नमः खेचरं भूचरं व्याधि नासं। नमः दुष्ट सुरवीर बैताल हारी नमः वज्र तन युद्ध मुष्टिक प्रहारी। कृपा छत्र सोहै महातेजरूपं नमः सिद्धिदा बुद्धिदा भक्त भूपं। न रहतं भूत प्रेतं पिसाचादि दोषं, नमः संयुगे लंक रूपे सरोषं। रोगे रणे संकटे रिपु विनासे, कृपा पात्र कैलास पति पाप नासे। चाहै जु विद्या पठिते पुराने। भजने सो ज्ञानं मांगे जो ध्यानं जगजिवनदासं विनै हनुमानं, विलम्ब न कीजै दै करौ सनौ मानं॥

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १६२ ओ. स्तुति महाबीर स्वामी की, रचयिता—जगजीवन साहब (कोटवाँ, बाराबंकी), कागज—पीला, पत्र—१, आकार—१२$\frac{1}{2}$ × ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१२ = १७५५ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरुप्रसाद दास, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगेसरगंज, जिला—सुलतानपुर।

आदि—अरुनं अनूपं रूपंक ध्यानं, जगजीवनदासं कथितं सो ज्ञानं। पापं विनासं संतं मगासं, संतंसुचितं ज्ञानं निवासं हनिमंतं नमस्ते चरनं विस्वासं, दीनं सुलीनं करो सीस वासं तनं पीड़ खंडं नामं तु वानं दासं विस्वासं सुबुध्यं निर्वानं। तापं संतापं विनासं तुनामं जरे कर्म नेकं सुविध्यं विश्रामं। लालं लंगूरं विराजित अंगं, दया दरस्यं सर्व व्याधि भंगं दैत्यं अनेकं करतं विनासं सतं सुरक्षं सुक्खं विलासं वीरं गंभीरं समीरं समानं त्रयीलोक चौथं करतं पयानं।

अंत—चरनं की सरनं मैं दासत्य दासं देहु उग्र ज्ञानं करौं मैं प्रगासं तीर्थं सरूपं दरस नाय नीरं नेत्रं निरखिभे निर्मलं सरीरं उदितं ज्यों भागं समानं सरूपं, संतं सुतंतं

पीतं अनूपं सदा पास दासं वासं तुम्हारी, व्रत भंग होवे न लीजे संभारी। सदा करो रक्षा सुनो वजू अंगी, रामं पियारे अहो संत संगी भरमं विनासं कर्तव्यं निहसंकं, सदावर्त धारी अक्षरं द्वै अंकं। सायं वर दीजे अहो हनोमानं, जग जीवन चाहै दृढ़ अंतर को ध्यानं। जग जीवन नमस्ते चरनं विस्वासं, स्तुति सम्पूर्णं सुमति सिद्धि बासं।

विषय—श्री हनुमान जी का गुणगान।

संख्या १६२ पी. परमग्रंथ, रचयिता—जगजीवन साहब (कोटवाँ, बाराबंकी), कागज—मोटा पीला, पत्र—४०, आकार—१३½ × ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६०, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८१२ = १७५५ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरुप्रसाददास, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगेसरगंज, जिला—सुलतानपुर।

दो०—परनाम यह ग्रंथ है, पढ़े ते सुमिरन होय। साधुकरै परसन्नमन, योग ध्यान दृढ़ सोय। साहेब मैं सेवक अहौं, कृपा करहु जन जानि, सूझि ज्ञान ते सब परै, कीरति कहौं बखानि। वंदौ सब सुदेव मुनि, अलख वास सब मांहि। सो सुमिरौं मन जानि मैं, अवर दूसरो नाहिं।

अंत—सो०—सुमिरहु सतगुरु नाम, परम गरंथ विचारि मन। पावहु सुख विश्राम, कलियुग उतरहु पारभव। प्रभु दायाते ध्यान चरन कमल ते लग दृढ़। तब करि कहा बखान, सुनहु सकल संसार जन। दोहा—संवत अठारह सौ बारह, लिखि सम्पूरण कीन्ह, परम गरंथ सुनाम अस, सोइ कहि परगट दीन्ह। मास परम वैसाख हित, सुदि नौमी सुमवार। जग जिवनदास यह ग्रंथ लिखि, समुझि करहु एतवार। सो० सुमिरहु केवल नाल, दुइ अक्षर परमान करि। तबहूं अब सोइ राम, संतन के अंतर बसहिं।

विषय—संत मतानुसार भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १६२ क्यू. महाप्रलय, रचयिता—जगजीवन स्वामी (कोटवाँ, बाराबंकी), कागज—पीला, पत्र—१३, आकार—१३½ × ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८२, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१३ = १७५६ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरुप्रसाद दास, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगेसरगंज, जिला सुलतानपुर।

आदि—कहत सुनत विस्वास करि, दुविधा मन ते त्यागि जगजीवन दास धनि प्राणि सो, जागे तेहि बड़भागि। छंद—अठाया जपु दइ अक्षर घरमा, जिह्वा नाहिं डोलवहु रे। देवं उपदेस मंत्र यहु सांचा सोई मन महं गावहुरे। साधो समुझि बिचारि गहहु मन, अवरि सबै विंसरावहु रे। रहहु सुचित्त मित्र वहि जानहु दुविधा दूरि वहावहु रे। १। परि दुविधा दुहुं दिसि ते जैहो, एक हिते मन लावहुरे। लइ रहहु कहि प्रगट न भाषहु तबही तौ सुख पावहु रे। जन्म पार विन समझे सुख है, समुझे ते दुख होई रे। सुख परि सुधिगै जहां ते आए, चलेउ सर वसौ खोई रे।

अंत—राम के दर्सन कोइ नहिं पावे, राम है भक्त सनेही रे जो कोइ कहे राम सबही मा है सब ही मा वाही रे। न्यारे रहत अहैं सब ही ते, रहत हैं सन्तन्हँ माहीं रे। जग जिवनदास के सांई समरथ, दियो चरन तर माथा रे। अपनी शरन राख मोहि लीजे कीजै मोहि सनाथा रे। दो० मन दृढ़ है सुमिरत रहौ अनते चित न चलाउ। जगजिवन दास सब भक्त हैं तिनका अलख लखाउ। जो कोई जी से होत है, ताहि न मानै कोय, पापी कुटिल कुकरमी, मुक्ति ताहि नहि होय।

विषय—संतमतानुसार भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १६२ आर. ज्ञान प्रकाश, रचयिता—जगजीवन साहब (कोटवाँ बाराबंकी), पत्र—१८, आकार—१३½ × ११ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५२, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१३ = १७५६ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरुप्रसाद दास, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगेसरगंज, जिला—सुलतानपुर।

आदि—सतगुरु सत समरथ्थ तुव, दाया जब तव होय। जनका ज्ञान होय तब, कहि भाषौं तब सोय। चौ०—सतगुरु अहैं सिद्धि के दाता, आपुइ करता आपुइ विधाता। आपुइ सत्तक भजन करावत, आपुइ संतन मन ते गावत। आपुइ सत्य लेत अवतारा, आपुइ आप रहत है न्यारा। आपुइ कीन जिमीं असमाना आपु आय तिहुं लोक समाना। आपु करत हैं दिन औ राती, दोसर कौन कहै केहि भांती। दोसर आपु आपु पहिचाना, स्याम सेत मां आपु समाना। दो०—सेत होत है बीतत, होत स्याम फिर सेत जगजीवन ख्याल अगम तब, ज्ञानी गम कहि देत।

अंत—दो०—दिया तन प्रेम क तेल करि, ज्ञान की बाती डारि शब्द अनल टेमी बरै, करै सत्य उजियार। चौ०—छीर प्रसंग घृत करे पसारा, ऐसे रहत सबहि ते न्यारा। जुगुत पाय मथि लिय वहि स्याई, ताहि युक्ति जन नामहिं पाई। ऐसी युक्ति करछानै कोई, पाप के तत्व अमर भा सोई। सो०—अमर भए जन सोय, तत्व सो राम का नाम भजि यहि सम मंत्र न कोय, कहत हौं प्रगट पुकारि के।

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १६२ एस. दृष्टांत की साखी, रचयिता—जगजीवन साहब (कोटवाँ, बाराबंकी), पत्र—१६, आकार—८ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६०, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५० = १७९३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवनंदन, ग्राम—गोसाईंगंज, डाकघर—जयगंज, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ अथ जगजीवन दास जी की साषो लिख्यते॥ परमार्थ मुक्त फल पा पाहन लिया विकास। रामरतन धन नीक श्यामु कहि जगजीवन दास॥ हंस हंसनी पै पीवै धन्यौ धन्यौ की आस। राम रतन धन प्रगट्यौ सुकहि जग जीवनदास॥ सिर चढ़ाई धरि गुहा में परगट किया सुथान। कहि जग जीवन दरिद्र दूरि किया गुरु ज्ञान॥

अंत—कहि जगजीवन दलिद्र शाहि गह्यौ सत राषि। सत की दासी लछिमी साध कह्यौ गुर ताषि ॥ मोली को वतवो गयो गयो प्रेत के वास। राम कृपा तै वाहुड्या सु कहि जगजीवन दास ॥ छित्राणी छित्री मिले मंत्र शक्ति परकास। यौ राम कहति हरिजन मिले सु कहि जगजीवन दास ॥ इति श्री जगजीवनदास कृत दृष्टांत की साखी संपूर्ण समाप्तः ॥

विषय—गुरू और ईश्वर की महिमा का वर्णन।

संख्या १६३ ए. गुरुमहात्म, रचयिता—जगन्नाथ, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७७८ = १७२१ ई०, लिपिकाल—सं० १८०८ = १७५१ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा जीवनदास, ग्राम—भेरू जी का मंदिर, टूचीगढ़, डाकघर—अलीगढ़, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्रीगणेशाय नमः श्री मतेरामानुजाय नमः। दोहा—आठ अंग सो दंडवत प्रथम कीन परनाम। जगन्नाथ गुरु करि हैं सब विधि पूरण काम ॥ चौ० श्री गुरुदेव चरण चित लावो। हृदय ध्यान धरि शीश नवावो ॥ करि अस्तुति परिक्रमा दीजै। तन मन धन समर्पन कीजै ॥ गुरु है ब्रह्मा सुर तैंतीसा। गुरु विन को जानैं जगदीसा ॥ गुरु है नेम धर्म सब केरा। गुरु है आवा गवन निवेरा ॥

अंत—गुरु महिमा को पार न पावै। जगन्नाथ जन कछु इक गावै ॥ संवत सत्रह सै सत्तर अरु आठै। माघ मास उजियारी आठै ॥ भरनी रवि अरु मंगल वारा। गुरु चरित्र भाषा विस्तारा ॥ दोहा—भूल होइ जो हरिजन मात्रा विन्दु विचारि। हाथ जोरि बिनती करौं लीजौ सकल सुधारि ॥ स्वामी तुलसी दास के सेवक अति ही हीन। जगन्नाथ भाषा शरन गुरु चरित्र गुन कीन ॥ जलतै थलतै राषियो ढीलो वंधन पारि। मूरख हाथ न दीजियो कहै चरित्र पुकारि ॥ इति श्री गुरु महिमा संपूरन संवत् १८०८ वि० अश्विनि शुक्लदशमी ॥

विषय—गुरु की महिमा का वर्णन।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता जन जगन्नाथ थे। निर्माणकाल संवत् १७७८ वि० है। इसको इस प्रकार लिखा है:—संवत सत्रह सै सत्तर अरु आठै माघमास उजियारी आठै ॥ इनका एक ग्रन्थ मोह मर्द राजा की कथा संवत् १७७६ का है इससे गुरू की महिमा का संवत् १७०८ जो पहिले नोट है अशुद्ध है १७७८ शुद्ध है। लिपिकाल संवत् १८०८ वि० है।

संख्या १६३ बी. गुरुमहिमा, रचयिता—जगन्नाथ, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—८४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७०८ = १६५१ ई०, लिपिकाल—सं० १७८६ = १७२९ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० जवाहरसिंह, ग्राम—खेतुई, डाकघर—मुरादाबाद, जिला—हरदोइ।

आदि—१६३ ए के समान।

अंत—संवत सत्रह सै अरु आठै। माघ माघ उजियारी आठै ॥ भरिनी रवि अरु मंगल वारा। गुरु चरित्र भाषा विस्तारा ॥ दोहा—भूलि होइ जो हरिजन मात्रा विन्दु

विचारि । हाथ जोरि विनती करौं लीजौ सकल सुधारि ॥ स्वामी तुलसी दास के सेवक अति ही हीन । जगन्नाथ भाषा सरन गुरु चरित्र गुन कीन ॥ जलतै थलतै राखियो पोढ़िलो वंधन पारि । मूरख हाथ न दोजियो कहैं चरित्र पुकारि ॥ इति श्री गुरु महिमा संपूर्ण समाप्ता संवत् १७८६ वि० भादों मासे कृष्ण पक्षे द्वादस्याम ॥

विषय—गुरू का महत्व वर्णन किया है ।

संख्या १६३ सी. मोहमर्द राजा की कथा, रचयिता—जगन्नाथ, पत्र—३२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७७६ = १७१९ ई०, लिपिकाल—सं० १८७५ १८१८ ई०, प्राप्तिस्थान—दुलारेलाल मिश्र, ग्राम—फतेहपुर, डाकघर—बांगरमऊ, जिला—उन्नाव ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ मोह मर्दन राजा की कथा लिख्यते चौ०—गुरु चरन वंदि वंदू सिधि संत । सुनी साखि त्यो गाऊं मित ॥ जा सुनि मोह द्रोह नहिं व्यापै । होइ निर वंध राम कूं जापै ॥ कहौं जु परम पुरान की साखी । जो श्री पति नारद सो भाषी ॥ वैकुन्ठ लोक सव सुख को धाम । तहँ विष्णु विराजै पुरवन काम । तेहि धाम गये ब्रह्मा सनकादिक । रुद्र रिषि सुर इन्द्र हू आदिक ॥ तैंतिस कोटि देवता तहां । गंगा आदि तीर्थ सव जहां ॥ सर्व सुरपती तहां शारदा आई । तहां चलत प्रसंग ज्ञान अधिकाई सर्व ध्यान विष्णु लौ लीना । ता समय आये नारद लिये वीना ॥ सर्व देव ऋषिन म सक्तित कीन्हों । आदर वहु नारद को दीन्हों ॥ नारद श्री पति को सिर नायो । कर जोरि अग्र भाग ह्वै प्रसन्न करायो ॥

अंत—यो हरि सो नारद मोहँ मरद कथा प्रगटाई । सो व्यास सुक सों सुक नृप को समझाई ॥ ये कथा जे कहैं अरु गावैं । ते नर नारी मोक्ष पद पावैं ॥ हम सुनी सापि कही त्यों गाई । ता सुनि गुनि वहु आनंद होई ॥ संत समागम को मत गाई । ता सुनि मोह द्रोस नसि जाई ॥ श्री तुरसीदास जु धन्यो सिर हाथ । यह मोह मरद कथा कही जन जगन्नाथ ॥ परम संत मत हम कह्यौ विचारी । पुरातम कथा परम सुख कारी ॥ संवत सत्रह सै छयोत्रा वृष यह भाषी करि वहुत करि हरष । कातिक वदी द्वादशी दिनै सोमवार यह गिनो तर गिनै इति मोह मरद राजा की कथा संपूर्ण समाप्ता लिखतं शिव दीन संवत् १८७५ जेठ सुदी दशमी ॥

विषय—मोह मर्दन राजा का वृत्तान्त वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता जन जगन्नाथ थे । निर्माणकाल संवत् १७७६ वि है जैसा इस ग्रन्थ से जाना गयाः—संवत सत्रह सै छयोत्रा वृष । यह भाषो करि वहुत हरष ॥ कातिक वदी द्वादसी दिनै । सोमवार यह गिनोतर गिनै ॥ लिपिकाल संवत् १८७५ वि० है ॥

संख्या १६३ सी. मोहमर्द राजा की कथा, रचयिता—जन जगन्नाथ, कागज—देशी, पत्र—६०, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—

६००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७७६ = १७१९ ई०, लिपिकाल—सं० १८६० = १८०३ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला छीतरमल, ग्राम—रायजीत का नगला, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—१६३ सी के समान ।

अंत—श्री तुरसी दास जु धन्यो सिर हाथ । यही मोह मरद कथा कही जन जगन्नाथ ॥ परम संत मत हम कह्यौ विचारी । पुरातम कथा परम सुख कारी ॥ संवत सत्रह सै छयोत्रा वर्ष यह भाषी वहु विधि करि हर्ष ॥ कातिक वदी द्वादिसी दिनै । सोमवार यह गिनोत्तर गिनै ॥ इति मोह मर्द राजा की कथा संपूर्ण लिषतं वंशी त्रिपाठी कैला पुरवा सामन वदी द्वादशी संवत् १८६० वि० ॥ राम राम राम राम ॥

विषय—मोहमर्द राजा की कथा का वर्णन ।

संख्या १६३ ई. मोहमर्द राजा की कथा, रचयिता—जन जगन्नाथ, कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिणाम (अनुष्टुप्)—८००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७७६ = १७१९ ई०, लिपिकाल—सं० १८६० = १८०३ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा रामदास, ग्राम—रामकुटी सिकंदराराउ, डाकघर—अलीगढ़, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—१६३ सी के समान ।

अंत—श्री तुरसी दास जू धन्यो सिर हाथ । यह मोह मरद कथा कहो जन जगन्नाथ ॥ परम संत मत हम कह्यो विचारी । पुरातम कथा परम सुख कारी ॥ संवत् सत्रह सै छयोत्रा व्रष । यह भाषी करि बहुत हरष ॥ कातिक वदी द्वादशी दिनै । सोमवार यह गिनोत्तर गिनै ॥ इति मोह मरद राजा की कथा संपूर्ण लिखी शिवदास संवत् १८६० वि० जै भगवान की ॥

विषय—मोह त्यागी राजा की कथा ।

संख्या १६४ ए. सार चंद्रिका, रचयिता—जगन्नाथ भट्ट, पत्र—४३, आकार—११¾ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—९४६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८७ = १८३० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० सीताराम शर्मा, ग्राम—बहरामपुर, डाकघर—इतमादपुर, जिला—आगरा ।

आदि—श्री राधा कृष्णै जयतां । अथ सार चंद्रिका लिख्यते । मंगला चरन । सोरठा । जय जय भानु कुमारि जय राधा असरन सरन । अपनो विरद विचारि, प्यारी पालहु दीन जन । कीरति ललित उदार, करुणा निधि जस रावरो, छायो जगत अपार, वंशी अलि की स्वामिनी । गोरी रूप निधान, श्री प्रीतम की प्राणेश्वरी । तुम हौ परम सुजान, करिय कांन जिन वीनती । जप कृपा कीरति जयति निकुंज विहारिणी । कीजै निज पद दास, कुंवर किसोरी अली को । स्वामिन सुजस प्रकास छाहि रह्यौ तिहि लोक मैं । अब श्रीवन कौ वास, लली अली कौ दीजिये ।

अंत—गीता में कही हरि मुख वानी, सो यह लिखौ भक्ति निधि दानी । ऐसी बुद्धि देउँ मैं जातैं, अनायास मोहि पावत तातैं, या सिद्धांत सौं यही जानिये, गुरहि साध्यात

कृष्ण मानिये । गीतायां । श्लोक । तषां सतत युक्तानां, भज़ तां प्रीति पूर्वकं । ददामि बुद्धि योगंते । ये नमां सुपयातिते । १६७ । कवि प्रार्थना गीतं सर्व पुराणैः सन्माहात्म्यं वेदतकः। सर्व स्वल्पैः पुराण वाक्यं किं चित्कं चिन्मयय्युक्तम् । १६८ ।

इति श्री वैष्णव महिमा प्रतिपादक श्लोक्ता पुरखोक्ता भट्ट जगन्नाथेन संगृहीता । संपूर्ण । इदं पुस्तकं लिखितं । संवत् १८८७ । छाया वलदेव जी की । ग्राम समांइ । तालुका आगरा । वैसाख वदी छठि रविवार । कृष्ण पक्षे । सुभमस्तु ।

विषय—संतों की महिमा सत्संग का प्रभाव तथा नवधा भक्ति आदि का वर्णन।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रंथ स्वतंत्र रचना नहीं है । किंतु कुछ वैष्णव संप्रदाय के कवियों की भक्ति आदि संबंधी कविताओं का संग्रह मात्र है । कवि प्रायः सभी सखी संप्रदाय के हैं। संग्रहकर्ता ने प्रमाण के लिये वैष्णव धर्म की महिमा के संबंध के अनेक प्रमाण यथास्थान उद्धृत कर दिये हैं । परंतु रचना कालादि के संबंध में कुछ नहीं लिखा है ।

संख्या १६४ बी. सार चंद्रिका, रचयिता—जगन्नाथ भट्ट, पत्र—४४, आकार—१० X ६१/२ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—९५०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० मिट्ठूलाल जी मिश्र, स्थान—फिरोजाबाद मोहल्ला पीपल वाला, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—१६४ ए के समान ।

संख्या १६५ ए. धर्मगीता, रचयिता—जगन्नाथदास, कागज—देशी, पत्र—३०, आकार—८ X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, सं० १८७२ = १८१५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० राममोहन वैद्य, ग्राम—बलभद्रपुर, डाकघर—मेरची, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ धर्मगीता लिख्यते ॥ ऊँ द्वापर विषे कथा होत भई । नगर जुहै हस्तनापुर दिल्ली के पास ति विषे गुरु को पूंछत भया ये राजा जन्मेजय राजा परीक्षित का वेटा पांडव का पौत्र । हे वैशंपायन जी राजा धर्म और पुत्र युधिष्ठिर इनका मिलाप किस प्रकार होइ है सो तुम कृपा करि के कहौ वैशंपायन ऊवाचः—राजा का वचन सुन कर श्री व्यास देव जी के शिष्य जु वैशंपायन है सो कथा कहत भये हे राजा तुम सुनू ॥ एक समय जु है देवता और इन्द्र अरु मुनीश्वर अरु ब्रह्मा अरु रिष्य अरु विष्णु अरु सूरज अरु चन्द्रमा अरु विनायक अरु शरस्वती अरु गंगा जी अरु जमुना जी अरु गधर्व अरु वनस्पत ये सव एकत्र वैठे थे । तहां जाइ प्राप्त भये नारद जी जो रिषी हैं जाकर के नमस्कार करते भये अरु वचन करने लगे ॥

अंत—जुधिष्ठिरो वाच—आज मेरा जन्म सुफल है आज मेरी तपस्या सुफल है आज मेरा जन्म भी धन्य है तेरा दर्शन किया है मैं पाप ते मुक्त होइया और जितने लोभ कर्म हैं तिनते मुक्ति हुइया ॥ धर्मो वाच—हे राजा तेरी आरबल वहुत होवे संवाद करके अरु राजा धर्म देव लोक विषे जाइया धर्म करके शत्रु भी दूर होता है धर्म करके ग्रह भी दूर होता है । जहां धर्म तहां दया है । इति श्री धर्म गीता धर्म संवाद संपूर्ण समाप्तः लिखा ज्ञानी राम संवत् १८७२ वि०

विषय—इस ग्रन्थ में धर्म द्वारा युधिष्ठिर को धर्मोपदेश किया गया है।

संख्या १६५ बी. देवी पूजनादि मंत्र, रचयिता—जगन्नाथ (फैजाबाद), कागज—देशी, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८८; रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल— सं० १९३२ = १८७५ ई०, प्राप्तिस्थान—राम भरोसे गौंड़, ग्राम—बीघापुर, डाकघर—टप्पल, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ देवी पूजनादि मंत्र लिख्यते ॥ प्रति पदा में घृत से देवी की पूजा करै और घृत ब्राह्मणों को देवै जो मनुष्य रोग हीन हो जाता। द्वितीया में शर्करा से पूजै और शर्करा विप्र को देवै तौ मनुष्य दीर्घ आयु होता है ॥ तृतीया को दुग्ध से पूजा देवी की करै और ब्राह्मण को दुग्ध देवे तो सब दुखों से पूजक छूट जाता है। चतुर्थी को पुवों से देवी की पूजा करै और पुआ विप्र को देवे उसके कोई विघ्न नहीं होवै।

अंत—फिर पुष्पादि से गुरु की पूजा कर कृत कृत्यत्व को प्राप्त होवे जो जो कोई श्री मद्भवने सुन्दरी देवी को पूजा करता है तिसको कहीं कहीं कुछ दुर्लभ नहीं है और देहान्त में हमारे मणि द्वीप को जाता है इस प्रकार देवी जी ने हिमालय से वर्णन किया है।

विषय—देवी के पूजा के मंत्र, उसकी विधि।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता पंडित जगन्नाथ शुक्ल ब्राह्मण फैजाबाद के निवासी थे। मुख्य जन्म भूमि बिल्हौर, जिला कानपुर थी। लिपिकाल संवत् १९३२ वि० है ॥

संख्या १६५ सी. वैद्यक मंत्र तंत्र, कागज—देशी, पत्र—४०, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—लाला दीनदयाल पटवारी, ग्राम—ससराय रहीम, डाकघर—हबीबगंज, जिला—अलीगढ़।

आदि—छेवड़ा की डाल से अमावस्या के दिन हवन करने से क्षयी रोग नाश होता है। कौड़िल्ला के फूलों से होम करने से कोढ़का रोग मिटता है। लह चिड़चिड़ा के बीजों से होम करने से अपस्मार रोग जाता है। क्षीर वृक्षों की लकड़ियों के होमसे उन्माद रोग मिट जाता है। गूलर की लकड़ी के होम से अति प्रमेह रोग मिट जाता है मधुवा शर्वत के होम भी प्रमेह मिटता है। मधु त्रितप जो दूध घृत दधि हैं इनके हवन से जो पैरों में मसूरिका रोग होता है मिट जाता है।

अंत—प्रथम मंत्र को सिद्धि करलेना चाहिये। ४१। दिनमें सवा लक्ष मंत्र जपै जंत्र का पूजन आवाहनादि षोड़स प्रकार से करै और हल्दी से चौका लगाय पीले पुष्प चढ़ावे। पीले लड्डू का भोग धरै। पीताम्बर पहिन कर पीला आसन कर उस पर बैठे केसरानि घृत दीपक में भरकर थाली में हल्दी से षटकोण यंत्र बनावै मध्य में केशर से (ह्रीं) लिखे छवो कनों में ॐ लिखे उसका पूजन करै। सवा लक्ष प्रयोग न कर सकै तो ३६ दिन में ३६००० मंत्र जप कर दशांश होम तर्पण ब्राह्मण भोजन करावै तो मंत्र अपना चिमत कार देखावै ॥ परन्तु पूरा प्रयोग १२५००० यानी सवा लक्ष का है। यह मंत्र बड़ा चमतकारी है परीक्षा योग है षट कोण यंत्र—

दूसरा यंत्र अष्ट दल है वहुधा पंडितों से मिल सकता है और उसकी पूजन विधि भी पंडितों से मिल सकती है जब उस मंत्र का पूजन किया जाय तब इस जंत्र पर दीपक धरा जाय ॥ अपूर्ण ।

विषय—इसमें नाना प्रकार के जंत्र, मंत्र और तंत्रों का वर्णन है ।

संख्या १६६ ए. जैमिनी पुराण, रचयिता—जगतमणि, पत्र—९६, आकार—१२३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४५६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५४ = १६९७ ई०, लिपिकाल—सं० १८६८ = १८११ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० नारायन सिंह, ग्राम—जारुवा कटरा, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ।। दोहा ॥ संघ दलन हरिनाक्ष हर । मधु मर्दन मधु आरि । सकल जगत पोषत भरण । श्री जदुपति सुष कारि ।। १ ॥ सकल लोक लौकीक रचि । चतुर्वेद मुख बैन । जगत प्रसंसित देव जितु । सुमिरौं श्री वसु नैन ।। २ ॥ लोक आरि त्रिपुरारि जे । मदन कदन सुख कंद । चितु चेत्यौ तुव चरन निजु । विमल भाल युत चंद ।। ३ ॥ वाहन वलित विहंग जे । त्रिकुचा भूषन नाम । राम पुरी प्रनवत तिन्हैं । जासु साल पी वाम ॥ ४ ॥ सत्रह सै चौवन समय । कृष्ण पक्ष बुध वार । माघ मास तिथि पंचमी । कियो कथा विस्तार ॥ ८ ।। बुद्धिवंत दातग् गुरु है । गुह लौत गह मीर । महा सिद्धि सुत धर्म युत । नाम जगत मनि धीर ।। ९ ॥

अंत—चौपाई ।। जे मुनि सुनै समापति कीजै । दान अनेग पंडितहि दीजै ॥ जै मुनि कथा सकल सुनि लीजै । पुनि पंडित की पूजा कीजै ॥ सुवरन सहित गऊ दस साथा । वस्त्र रुकुम वासन वर गाथा ।। अलंकार आभूषन दीजै । यथा शक्ति धर्म सव कीजै ॥ पंडित की पूजा करि जातै । कथा सुनै फल पावै तातैं ।। पूरन कथा होइ यह जवै । वृह्मभोज कीजै नृप तवै ॥ वुद्धि प्रकाश कही मति यथा । चौदह पर्व सुनाई कथा ।।२०८२।। दोहरा ॥ सुनी कथा तुम एक मन । कही यथा मति एक । रामपुरी पावन कथा । ताको पुन्य अनेक ॥ २०८३ ॥ इति श्री जगत मनि विरचितायां महाभारते अश्वमेध के पर्वने जैमुनि कृते सर्व कथा बर्णनो नाम सप्तमोध्यायः ६७॥ संवत् १८६८ वर्ष जेष्ठ मासे कृष्ण पक्षे तिथौ चतुर्दिस्यां भौम वासरे समाप्तं सुभ मस्तु ।।

विषय—पाण्डवों के अश्वमेध यज्ञ करने का वर्णन ।

संख्या १६६ बी. जैमुनिपुराण, रचयिता—जगतमुनि, पत्र—२८६, आकार—१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८८८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५४ = १६९७ ई०, प्राप्तिस्थान—कुँवर उजागरसिंह जमीदार, ग्राम—ललितपुर, डाकघर—कोटला, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । दोहा । संघ दलन हरि नाक्ष हर मधुमर्दन मधु आरि । सकल जगत पोषन भरण श्री जदुपति सुखकारि । १ । सकल लोक लोकीक रचि चतुर्वेद मुख बैन । जगत प्रसंसित देव जितु सुमिरौ श्री वसुनैन । २ । लोक आरि त्रिपुरारि जे मदन कदन सुख कंद चितु चेतो तुव चरन निजु विमल भाल जुत वंद । वाहन वलि त विहंग जे त्रिकुया भूषन नाम । राम कृष्ण प्रनवत तिन्हें जासु सालया वाम । ४ । सत्रह से चौवन

संवत् कृष्ण पक्ष बुधवार । माघ मास तिथि पंचमी कियो कथा विस्तार । ८ । बुधिवंत दातार गुरु है गुह लेत गभीर । महा सिद्धि सुत धर्म जुत नाम जगत मनि धीर ॥

अंत—सुवर्ण सहित गऊ दस साथा वस्त रुक्म वास नर नाथा । अलंकार आभूपन दीजे यथा शक्ति धर्म कीजै । पूरन कथा होइ यह जवे ब्रह्मन भोजन कीजे तवै । दोहा । सुनि कथा तुम एक मन कहिय यथामति एक राम कृष्ण पावन कथा ताको पुन्य अनेक । २०८३ इति श्री जगत मुनि विरचितायां अस्वमेध के पूर्वनि जैमुनि कृत सर्व कथा फल वर्णनो नाम सप्त षष्टो ध्याय = ६७ । संपूर्णम् शुभमू

विषय—पांडवों के अश्वमेध यज्ञ का वर्णन ।

संख्या १६६ सी. जैमिनीपुराण, रचयिता—जगतमणि, पत्र—१४०, आकार—१० × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०८०, रूप—प्राचीन लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५४ = १६९७ ई०, लिपिकाल—सं० १८८२ = १८२५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० छेदालाल पाठक, ग्राम—टुंडला, डाकघर—टुंडला, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—१६६ ए के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—इति श्री जगत मनि विरचितायां महा भारत अश्वमेध के पर्व ने जैमुनि कृते सर्व कथा फल वरणनो नाम सप्त षष्टोध्याय = ॥ ६७ ॥ संपूर्ण संवत् १८८१ वर्ष जेष्ठ मासे शुक्ल पक्षे तिथौ अष्टम्यां भृगुवासरे । सुभं भूयात् । लिष्यतं मनोहर सावेन । टीकराम पाठार्थं । दोहा । कटि ग्रीवा अरु नयन वहि अति दुष सहै सुजान । लिषी जानि अति कष्ट तै सठ जानत आसान ।

संख्या १६७. धर्म सवाद, रचयिता—जन दयाल, पत्र—१३, आकार—८ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०७, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० बाबूराम जी वैद्य, डिस्ट्रिक्टबोर्ड डिस्पेंसरी, ग्राम—कोटला, डाकघर—कोटला, जिला—आगरा ।

आदि—(पृ० १ से ६ तक लुप्त; पृष्ठ ७ से आरंभ) भरतार की सेव कराई । अतीत सेवा सोधि रहाई । धरम दया सक्ति उनमांना; सौंचि सनात सदारत जाना । द्विज अतीत हरि सेव कराई, सो त्रिया सुषी स्वरग रहाई । साल वरन सम वरतन कोई, तीरथा गंगा सम और न कोई । विष्ण नाम सम और न धरमा पवित्र तीन लोक यह करमां । विषय त्यागी वाला वणी राष्यौ दिढ़वर वसो उत्तम भाष्यौ । तीन लोक महि मुक्ति कहीजे पंडवनंदन यह सुषि लीजे । ताके त्रिया सबही माता उत्तिम लषिण महासुप राता । सुध आत्मां सदा अनंदा । परम गति सो जाइ सुछंदा । षट दोष वनिता कौं लागत, दिन दिन प्रति उठि पुनि सो भागत । अतीत भोजन पावत ताकै पापमुचै कहत हैं जाकैं ।४४।

अंत—प्रसूत एक नाई कै होई, स्वांनी सपत सूकरी सोई । सुकरी कुकरी जातक भाई । अधरम पहलै जात फुलाई । गऊ जनैं इक सोई वालक । यौ धरम वधै कोई नहिं तालक । धरम पाप कौ निरनय कह्यौ........कहैं जुधिष्ठिर जपौ । ५५ । धरम संवाद सुणै चित लाई मुचै पाप सत सहजि वधाई । परलोक नर पावै सोई मुकति

होइ न सांसो कोई । ५६ । दोहा । पिता पुत्र की सुन कथा मुदित होंहि सब कोइ । जन दयाल सहजै मिलै चारि पदारथ सोइ । धरम संवाद सुनत ही सब तीरथ फल होइ । सूरम वधे अरु पाप षै हरिदरस दिषावत सोइ अपनौ सरवर लै धरै, बुरौ न कहिये कोइ । जो मानत नहिं आग लौ तौ कावस याकौ होइ । इति श्री महाभारथे जग्य प्रवेधरम जुधिष्ठिर संवादे चतुर्थोध्यायः । ४ । दोहा । तेरह दिन में तीन सौ चौपई जोड़ि बुधि अणसार वखाणीयौ पंडित छौंह जि षोड़ि । १ । इति श्री धर्म संवादग्रंथ जोग साम्र......। संवत् १९४१ फागण सुदि । २ । सुकुल पक्षि । वार सुकरवार लिषतं राम पाली मध्ये स्वामी जी रतनदास जीतत शिक्ष सोभाराम लिष्यतं स्वपठनारथ ग्रंथ । ४ ।

विषय – चांडाल और युधिष्ठिर का धर्म विषयक संवाद ।

संख्या १६८ ए. भाषावैद्य रत्न, रचयिता—जनार्दनभट्ट, पत्र—१६८, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९८४, रूप—प्राचीन, लिपि – नागरी, लिपिकाल—सं० १८८७ = १८३० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० लक्ष्मीनारायण वैद्य, स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । श्री सरस्वत्यै नमः । अथ भाषा वैद्य रत्न लिख्यते । नारदादि सेवत जिन्हें पारद विसद प्रकास । सारद विधु वंदन करो हिय सारदा वास । वैद करत आलस लखत बड़ो ग्रन्थ अभिराम । तिनको यह छोटो करो वैद्य रतन यह नाम । अथ नारी परीक्षा । भूखौ प्यासौ सौन जुत तेल तछए कोई । जैये न्हाये तुरत ही नारी ज्ञान न होई । हाथ अंगूठा निकट ही नारी जीवन मूल । तोसों पंडित देखकौ जानत सुख दुख मूल । नर को कर पग दाहिनो तिय को कर पद वाम तहां वैद्य जानै निरखि नाड़ी को परि नाम । संप्रदाय पोथिनी सों अरू अनुभव सों भानि । जैसे परखत पारखी रतन जतन करि एन । नारी निरखै वैद्य जन भली भाति सकुचैन ।

अंत—सात वार तातो करै सोनो फेरि बुझाई । यह पानी पीवें तबै नीर अजीरन जाई । जब सोने के नीर को फेरि अजीरन होई । चाटें तो मोथा सहित मुनि जन को मत जोए । गुन अजीर्न खंडन कह्यो मुनि सुनियो सब कोए । भली भांति जानौ यहै वह नर दुखी न होइ । इति श्री गोस्वामी जनार्दन भट्ट विरचिते भाषा वैद्य रत्न ग्रन्थ अजीरन खंडनम नाम सप्तमो प्रकासः इति वैद्य रत्न ग्रन्थ सम्पूर्णम् । शुभं भवतु । संवत् १८८० ज्येष्ठे मासे कृष्ण पक्षे अमावस्याय शनि वासरे लिखितम वाहि नग्र मध्ये मिश्र भगवत्दास । श्री राम ।

विषय—नाड़ी परीक्षा, जीभ परीक्षा, नेत्र परीक्षा, ज्वराधिकार, प्रत्येक रोग का निदान, पूर्व रूप उसकी चिकित्सा, आसव, अरिष्ट, अवलेह, गुटिका, रस, धातु मारण, शोधन आदि समस्त वैद्यक सम्बन्धी विषयों का विस्तृत वर्णन है ।

संख्या १६८ बी. वैद्य रत्न, रचयिता—जनार्दन भट्ट, कागज—देशी, पत्र—९२, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२००४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८८ = १८३१ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर ज्ञानसिंह, ग्राम—चौपड़िया, डाकघर—पिहानी, जिला—हरदोई ।

आदि १६८ ए के समान।

अंत---छाया लच्छन भानु की काल ज्ञान मत देखि। धूम वरन जब भानु लखि तादिन मृत्यु विसेख ॥ प्रतिमा पूरन जो लखै ता कहं साध्य वखान। अंग हीन नर देखिये सो असाध्य पहिचान ॥ इति काल ज्ञान---दर्पन घृत जल तेल में छाया लघु नर नारि। विना सीस तन मरन है पंडित लेहु विचारि ॥ इति अंग परीक्ष्या---इति श्री गोस्वामी कृत भट्ट जनार्दन नाम वैद्य रत्न भाषा ग्रन्थ सकल वैद्य परकास विप्र वरन सत संवत् अट्ठासी शेष पृष्ठ चपका है। लेखक नाम काशी पठनार्थ सुवादास कायेथ कोटवा ग्राम निवासी ॥

विषय---नारी परीक्षा, मूत्र परीक्षा, साध्य असाध्य रोग परीक्षा, रोगों के लक्षण और औषधि वर्णन।

संख्या १६८ सी. वैद्यरत्न, जनार्दन भट्ट, पत्र---१८४, आकार---८¾ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)---१८, परिमाण (अनुष्टुप्)---२०७०, खंडित, रूप---प्राचीन, लिपि---नागरी, प्राप्तिस्थान---ठाकुर शिव परशन सिंह, ग्राम---राज शिवगढ़, डाकघर---अमेठी, जिला---लखनऊ।

आदि---तवहिं सन्निपात बुध जन चीन्ह ॥१॥ पहिला पित गत होई वात गति होई वहुरि वहु ॥ कफ गति नारि होई भेद कह दियो सुबुध यह ॥ चक्र चढ़ी सी फिरै थान नाड़ी अपनो तजि ॥ वहुत भयानक कहौं मोर गति चलै वहुरि सजि ॥ होई जानि सूक्षम वहुरि जानि परै नहिं कियैं परख ॥ इहिं भाँति होइ नारी जवहि तब असाध कहिये निरखि ॥ २ ॥ दोहरा ॥ नारी फरकै मास मधि। वह गंभीर वखान। नारि जोर के जोर ते। कुपित उष्ण अति ज्ञान ॥ ३ ॥

अंत---अथ अभयादि मोक्षक विरेचन ॥ चप्पैया ॥ हर्रे मिरच अरु सोंठि आँवरे पीपरि लीजै ॥ पिपरा मुरच विडंग और तज पत्र दत्त दीजै। ए सब लेइ समान तिगुन दातौ रुष षातौ ॥ आठगन लेइ निसात छह गुनी मिश्री यातैं ॥ यह सब लै चूरण करै मधु सों गोली बाँधि वह। उठि प्रात खाइ यह कर्ष भर सीतल पीवैं ॥ सुवहा ॥ दोहरा ॥ ज्यौं ज्यौं जल सीतल पियौ। त्यौं त्यौं लागै डार। जब हित लता तौ पियौ। तब छुड़ाइ निरधार ॥

विषय---(१) पृ० १ से ७८ तक---नाड़ी परीक्षादि। ज्वरादि लक्षण। ज्वर भेद। उनके लक्षण और उपचार। चूर्ण। वटी। रस। तथा अन्य रोग ॥ (२) पृ० ७९ से १४२ तक---स्त्री रोग बालक रोग। बाजी करण पाक। रस। कुत्ते काटने आदि का उपाय। तथा कक्ष रोगादि वर्णन। (३) पृ० १४३ से १८४ तक---धातु मारन विधि। धातुओं के गुण। सेन्दूर आदि सोधन और सारस्वत चूर्ण ॥

संख्या १६८ डी. वैद्यरत्न, रचयिता---जनार्दन भट्ट, कागज---बाँसी, पत्र---४३, आकार---५ × ४ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)---२२०, खंडित, रूप---प्राचीन, लिपि---नागरी, प्राप्तिस्थान---स्यामसुंदरलाल अग्रवाल, स्थान---जगनेर, तह०---खैरागढ़, डाकघर---जगनेर, जिला---आगरा।

आदि—श्रीराम जी । श्रीगणेशाय नमः । अथ वैद्यरत्न गुटिका लिष्यते ॥ अथ मंत्र ॥ ॐ नमो सहाय ह्राँ श्री ह्री श्री क्वीं क्वीं क्रीं सं सं सं स्वाहा ॥ अथ पारामारण मंत्र विधि ॥ शिववीर्जं महातेजं, बलपराक्रम दायक, उमामहाश्वर प्रसादेनः सिधि भवती पारदः यह मंत्र पाठि षरल में डारि जै ॥ अथ षरल मंत्र ॥ ॐ नमो पारावाध्योः सर्वं सवाध्यौः शिव शक्ति पारा वाध्यौ उडैपुडे गागै भाजै पारौ जानतौ श्री गोरषलालै गुरुकी शक्ति मेरी भगति फुरौ मन्त्र ईश्वरोवाचः ॐ नमो पारो वाध्यौ सारो वांध्यौ ॥ अधीमुष पर जलंत वांध्यौ फिरै फिरावै भाजै जाय तौ रछा करै ।

अंत—अथ प्रमेह की दवा ॥ असगंधी नीली स्वंड मिलाइ । सौंठि समगुल लीजे षड़ आनी औषधि लीजै । घृत मिलाइ षई किवा ७ वर प्रमेह मिट जाइ । अथ वाइको चूरन । दोहरा भागाः सामलुः भंगारी मंडिताइ मिलाइ चूरन दीजै टंक २ वाइ वाइ रोग जरते । अथ गुटिका वाइ को । पिपरी असगंध चित्रक तामें चाव काविरंग सौठि आज वाइन अली करौजीः पिपरामूल समान लीजै । गोली करै टंक २ प्रमान षइ । वाइ रोग कि भाजि जाइ । अथ क्वाथ वाइ कौ । सोठ इलायची रसदेवदारी मिलाइ क्वाथदि प्रात उठि रोगानि ।

विषय—भिन्न-भिन्न मंत्र पृ० ५ तक । पुष्टि गर्मी की दवा—पृ० ९ तक । गर्भवती की दवा १२ तक । गर्भधारण की दवा १५ तक । सरस्वती चूर्ण १६ तक । मूसली आदिके गुण १९ तक । निर्गुण्डी के कल्थ आदि पृ० २४ तक । मंत्र तंत्र—३० तक । वंध्या की दवा ३५ तक । मरती की दवा ३८ तक । जंत्र तथा ज्वर के नुसखे ४५ पृ० तक ।

संख्या १६९. संगीत गुलशन, कागज—देशी और भूरा, पत्र—४०, आकार—१०×६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३०८, रूप—प्राचीन; लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९९ = १८४२ ई०, लिपिकाल—सं० १९१८ = १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—रामगौरी गौड़, ग्राम—स्थानपुर, डाकघर—जलेसर, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ संगीत गुलशन लिख्यते ॥ ठुमरी दादरा—गई वीति रैन नहिं आये पिया । सखी कैसे समुझाऊं मै अपना जिया ॥ कवहूं न हमने नेह लगाया.अवजो लगाया तो दाग उठाया ॥ सैयां निरमुहिया ने ऐसा जलाया जला जला के खाक किया ॥ गई वीति ॥ इतनी अरज है तुमसे शाहिद । हरि तुम्हरे मिल जावें शाविद ॥ हमरी ओर से यह कह दीजो । क्या उसको आजाद किया ॥ गई वीति० ॥

अंत—राग झंझौटी राग कव्वाली—हरि का भेद न पाया साधू । हरि का भेद न पाया आप ही माली आपही खाली कली कली में जोहै रे । कच्चे पक्के की सार न जाने मन माने सो तोरा रे ॥ कुछ वांटे कुछ मुख में डारै भक्त जनौ की ओरी रे ॥ कुदरत तेरी रंग विरंगी । तू कुदरत का माली रे ॥ आपही वोवे आपही सींचे आप करे रखवारी रे ॥ हरि का भेद न पाया साधू हरिका भेद न पाया रे ॥ इति श्री सांगीत गुलशन समाप्तः ॥

विषय—इसमें नाना प्रकार की राग रागिनी लिखी हैं ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के संग्रहकार लाला जसवंतराय जाति के सकसेना कायस्थ थे। ये एटा खास के निवासी थे। निर्माणकाल संवत् १८९९ वि० और लिपिकाल संवत् १९१८ वि० हैं।

संख्या १७०. भाषाभूषन, रचयिता—जसवंतसिंह (जोधपुर), पत्र—४५, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—ठा० प्रतापसिंह, ग्राम—राटौटी, डाकघर—होलीपुरा, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। विघन हरन तुम हौ सदा गण पति होउ सहाई। विनती कर जोरे करूँ दीजै ग्रन्थ बनाई। जिति कीनी पर पंच यह अपनी इच्छा पाइ। ताको हों वंदन करौं हाथ जोरि सिर नाई। करुना करि पोषत सदा सकल सृष्टि के प्रान। ऐसे ईश्वर को हिये रहौ रैनि दिन ध्यान। मेरे मन में तुम रहौ यह कैसे कहि जाय। ताते यह मन आपु सों लीजै क्यों लगाय। रागी मन मिलि स्याम सो भयो न गहरो लाल यह अचरज उज्जल भयो ज्यों मैल निहि काल। चतुर्विध नायक ॥ इक नारी सों हित करै सो अनुकूल वखानि। वहु नारि सों प्रीति सम ताको दक्षिण जानि। मीठी बातैं सठ कहैं करिके महा बिगार। आवति लाज न धृष्ट को दीये कोटि धिक्कार।

अंत—भाषा भूषन ग्रंथ को जो देखे चितलाइ। विविध अर्थ सहित रस समझै सबै इति श्री भाषा बनाई। २०९। भूषन सम्पूर्णम्। लिखितम भवानो सिंह राम पठनार्थं शुभ मस्तु। आसाढ़ मासे शुक्ल पक्षे तिथौ ९ अर्क वासरे सं० १८५२

विषय—आदि में नायक नायिका भेद पुनः ११० अलंकार लक्षण उदाहरण सहित समझाये हैं। अन्त में मधुरा, कोमला परुषा रीतित्रय का विशद उल्लेख है।

संख्या १७१. महापद, रचयिता—जवाहरदास (फिरोजाबाद, आगरा), पत्र—५७, आकार—६½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—६४१, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८८१ = १८२४ ई०, लिपिकाल—सं० १८८९ = १८३२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० बाँकेलाल, अध्यापक, स्थान—फिरोजाबाद, हुंडेवाला, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्री मद गुरूभ्योनमः। प्रथम श्री गुरू चरन रज लै सीस अपने पै धरौ। ताते प्रताप विचारि कछु मैं भनत भाषा करौं। पर्व्रह्म परमातम हियै धरि ज्ञान कौ कछु भेद। लिषौं जो हरि सांचौ साषि ताकी संतवेद। निजु जीव के समझाइबे कों प्रथम कछु निर्वेद कहि बहुरि हरि की गूढ़ गति और पिरापति कौ पंथ तहि। सो कहत निजु जीव सों सब जीव यामें समझियौ। सुनि जीवरे उर धारिकें संसार में मत उरझियो। अज्ञान में मति फंसै रे जिय मांनि मेरी कही। संसार तें जो छुटै चाहै समझि सोचौ यही। जग यह मिथ्या सुप्न है धोषे में हे मति भूल रे। नारि सुत संपत्ति पदारथ राज सब अति सूल रे।

अंत—तर्क कर्त्ताहू सों मेरी विनती अति दीन है। कीजियो जो होय सांची संत संमत लीन है। ज्ञान जाकौं होयगो नहीं जानि है वक वाद भेद के जाने विना किमि लखि

परगो स्वाद। संत पंडित वेद वक्ता कों भवित यह मैं सुनाय। सवनि नें सुनि वांचि के अरु साखि आगम की बलाय। गीता पुरान प्रमान है संतन सराही भाउ सों। भयो निश्चै हृदै मेरे सुख भयो बहु चाउसों। हरि की कृपा हरि संतकी सें जो पढ़ेगो चित लगाय। ज्ञान करसो भेद याको पाय हरि पद जाय। अट्ठासीया दस अष्ट संमत पुनीत पूस मास अरू तिथि अमावस चंद विनीत। निजु जीव के समुझाइबे कों कियो पूरन गीरंथ। आशक्ति जग की छोड़िकैं यह चलै हरि के पंथ। हरिदास के जे दास हैं तिनको जवाहर दास। वासी फिरोजाबाद को लघु वरन सूद्र उदास। पापी पतित अति कुटिल कामी अधम मोसो है न होय अधम उधारन पतित पावन हरिहू सों नहीं कोय। इति श्री महापद जवाहिरदास कृत निजु हस्त लिखते संपूर्न मिती जेठ बदी ७ रोज भूम वार संवत् १८८९ अस्या श्री विरह वनटोली श्री महाराज सतगुरू बाबा श्री श्री श्री श्री श्री रामरतन जी के।

विषय—निर्वेद कथन, नाम महात्म्य, भक्ति उपदेश, गुरु महात्म्य, निर्गुण, सगुण निरूपण, काल धर्म गृही तथा विरागी धर्म, विविध शास्त्र समन्वय, ब्रह्म ज्ञान तथा वेदांत संबंधी प्रारंभिक बातों से लेकर सप्त भूमिका तक का संक्षिप्त वर्णन।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रंथ के रचयिता जवाहरदास फिरोजाबाद जिला आगरा के निवासी अपने को शूद्र वर्ण का भूषण बतलाते हैं—उन्होंने अपनी जाति या उपजाति बताने की कोई आवश्यकता नहीं समझी। इससे विदित होता है कि वह केवल वर्ण व्यवस्था को ही महत्त्व देते थे। अपने गुरू का नाम बाबा रामरत्न लिखते हैं। इनका कथन है कि मैं पढ़ा लिखा नहीं और न मुझे काव्य कोष तथा व्याकरणादि का बोध है। किंतु उनकी रचना को देखते हुए यह बात केवल उनके विनीत भाव को ही प्रदर्शित करती है। अन्यथा उनकी प्रौढ़ विषय प्रतिपादन शैली, भाव गांभीर्य, सरल शब्द योजना तथा पदलालित्यादि गुणों को देखते हुए किसी भी विचारवान की यह धारणा नहीं हो सकती कि ये पढ़े लिखे न थे और बिना प्रगाढ़ अध्ययन के केवल संत संगति मात्र ही से उन्नतावस्था को प्राप्त हो गये थे। काव्य की दृष्टि से चाहे यह ग्रंथ उत्कृष्ट भले ही न समझा जावे, किंतु इसमें संदेह नहीं कि रचयिता ने भक्ति तथा ज्ञानादि के संबंध में बड़े रुचिकर भाव से उदाहरणों आदि के द्वारा पाठकों को उपदेश देकर सजग किया है। और इस प्रकार उनकी रचना लोक तथा परलोक दोनों ही की दृष्टि से हितकर सिद्ध होगी। यह प्रति स्वयम् रचयिता के हाथ की लिखी हुई है।

संख्या १७२ ए. प्रेमसागर (विज्ञानखंड), रचयिता—जयदयाल, पत्र—६, आकार—१४ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०६ = १८४९ ई०, लिपिकाल—सं० १९०९ = १८५२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामस्वरूप उपाध्याय वैद्य, स्थान—फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। दोहा। श्री गुरु चरण सरोज को हित से सीस नवाय। कहत खण्ड विज्ञान को हम पर होहु सहाय। सोरठा। जनक राय हरषाय नारद सों पूछत भये। कहो मुनि मोय सुनाय प्रेम लक्षण भक्ति शुभ। चौपाई। नारद मुनि बोले

हरषाई श्री द्वारिका दिव्य अति गाई । उग्रसेन की कथा सुहाई नंद नंदन बैठे तहँ जाई । मोर मुकुट सिर दिव्य विराजै श्रवनिनि कुंडल अति दुतिराजे । अलकनि की शोभा अति न्यारी मुखि पर झूम रही मतवारी । केसरि तिलक अनूप विराजे, लखि भृकुटी मन मथ मन भागे । कटि किंकनी अनूप सुहाई मानो श्याम वेद धुनि छाई ।

अंत—दोहा—गऊ अलंकृत रत्न बहु—भूषन बसन समेत । अति हित सों दै भुसूरन नंद नदन के हेत । चौ० । गऊ लोक विन्द्रावन गायो । गोवर्द्धन माधुर्य्य सोहायो । मथुरा द्वारा बति सुखदाई, बिश्व जीति की अति प्रभुताई । श्री वलभद्र खंडमन भावन पुनि विज्ञान खंड पनि पावन । यह विधि सो नव खंड सोहाये, शोनक प्रति मुनि गर्ग सुहाये । शौनक जू को विदा कराई गर्गा॰चतृ गये मुनि सुखदाई । सम्वत उन्नीसै सुखदाई तापर ऋतु सोभा अधिकाई । पुनि रितु राजसमय अति पावन । फागुन मास अधिक सुख पावन । राधा पक्ष अधिक सुखदाई भौमवार पूनौं छबि छाई । महा प्रभू कौ जन्म सुहायौ तब ही कीर्तन गाय सुनायो । श्री कृष्ण प्रेम सागरे नारद जनक संवादे गर्गा चार्य शौनक संवादे नवमोतरंग । श्री शुभ मस्तु । श्री संवत् १९०९ । मासो तमे श्रावण मासे कृष्ण पक्षे तिथौ पचम्यां । लिखितं पुस्तकं गंगा प्रसाद अग्रवाले हिसामपुर ग्रामे वसति । या दृशं पुस्तकं दृष्ट बात्ता दृशं लिखितं मया यदि शुद्धं अशुद्धं बा मम दोषो नदीयते । श्री राधा कृष्ण श्री हरयनमो नमः । श्री राम कृष्ण ।

विषय—प्रेम लक्षणा भक्ति का वर्णन ।

संख्या १७२ बी. प्रेमसागर (वलभद्रखंड), रचयिता—जयदयाल, पत्र—६, आकार—१४ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९८, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०६ = १८४९ ई०, लिपिकाल—सं० १९०९ = १८५२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामस्वरूप जी वैद्य उपाध्याय, स्थान—फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—१७२ ए के समान ।

अंत—बोल्यो जनक प्रेरि हरषाई, मुनि कह्यौ वेगि मोहि समुझाई । नागिन कन्या कहा तप कीन्ह्यौ, कौन भांति हलधर कौं चीन्हों । सुनि नारद बोले हरिषाई भली कथा पूछी नृपराइ । एक दिन गर्ग ऋषेश्वर आये—सब गोपिन हित सों बैठाये । तिनसौं अपनो भेव जनावो—मुनिहल धर पंचागव तायो । ताको उन सब सेवन कीन्हो, तब बलराम उन्हें सुष दीन्हों । यह विधि राम कथा मैं गाई जो सुनि है चित दै हरषाई । ताको अधिक तेज बल होई, वाको जीति सकै नहिं कोई । अति आनंद सहित उर माहीं । श्री वलिराम लोक को जाहीं । श्री हलधर पंचाग सुहायो गर्ग संहिता में शुभ गायौ । दोहा । आग्विपाक यहि भांति कहि, गये अपने स्थान । सो सगरो इतिहास मैं तुमसों कहों बषान । इति श्री कृष्ण प्रेम सागरे वलभद्र खण्डे नारद जनक संवादे समाप्त शुभ ॥

विषय—वलभद्र के विवाह और उनके निस्सन्तान रहने का इतिहास ।

संख्या १७२ सी. प्रेमसागर (विश्वजितखंड), रचयिता—जयदयाल, पत्र—२०, आकार—१४ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६०, रूप—

नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०६ = १८४९ ई०, लिपिकाल—सं० १९०९ = १८५२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामस्वरूप जी वैद्य उपाध्याय, स्थान—फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्री धाम जी सदा सहाय श्री गणेशाय नमः श्री श्री राधा रमण के चरण कमल सिरु नाय, अति आनंदव ठाइ उरकर हत कथा सुभ गाय। १। हाय अपनो सेवक जानिकै कहौं कथा हरषाय। गुरू चरणन को धरे हिये श्लोक अज्ञान तिमिरा धस्य ज्ञानां जन सला क्या या चक्षु रुन्मी चिते येन तस्यै श्री गुरुवे नमः। ३। कोटि मलिउ शंका संरत्न भूषण भूषितं सेवितं सर्वं सिद्धानां तं न मामि गुरुं परं। ४। हत कथा सुभ गाय हाय अपनो सेवक जानि रु चरणों के धर हिये ऊँनमो भगवंते तुभ्यं पंवासु देवाय साक्षिणे, प्रद्युम्नायं निरुद्धायनमः संकर्षणायच। ५। कह्यौ गर्ग मुनि सौनकपाही का इक्षा है मन माही। पंड द्वारिका तुम्है सुनायों जो सब तीर्थन कौ फल गायौ।

अंत—नंदिन सहित गंगा तहं आई—उपवन सहित वसंत सुहाई। लैदिक पाल संग सब देवा—इंद्र आयत हंकीनी सेवा। यह विधि दिव्य रुप धरि आये सप्तसिंधु नव खंड सुहाये। गऊ रूप धरि पृथ्वी आई—ताकी शोभा कहत न जाई। १८५। वृन्दावन के तीर्थ शुभ गोबर्धन लै साथ। वृज जन सब आये तहां दधि माषन लै साथ। १८६। यह विधि जग्य कथा सुषदाई सो मैं तुम सौं गाय सुनाई। गावे सुनौ जवन चितु लाइ। विस्व विजय जस सो नर पाइ। काटनि जग्यन कौ फल पावै अंत समय गोलोक सिधावे। जहाँ परिपूरण तम सुखदाई तहां कौन सुषमिलतन भाई। १९१। नारदजनक संवादे कृष्ण प्रेम सागरे जैदयाल कृते विश्व जित खंड समाप्तोयमः ॥ सप्तमो ७ ॥ शुभ मस्तु। श्री संवत् १९०९ कुवार मासोत्तमे कृष्ण पक्षे तिथौ नवम्यां गुरुवासर पुस्तक लिखते गंगा प्रशाद अग्रवाले हिसामपुर ग्रामे श्री सरजू निकटे शुभंम पात श्री राधाकृष्णायन मोनमः श्री गोविंदो मोनमः।

विषय—श्री कृष्ण की कृपा से राजा उग्रसेन का राजसूय यज्ञ करने का वर्णन।

संख्या १७२ डी. प्रेमसागर (द्वारकाखंड), रचयिता—जयदयाल, पत्र—१५, आकार—१३३/४ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—४७६, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०६ = १८४६ ई०, लिपिकाल—सं० १९०९ = १८५२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामस्वरूप जी उपाध्याय वैद्य, स्थान—फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—सोरठा—जै जै जै गुरुदेव कृपा सदन आनन्दमय। वेद न पावै भेवप्रभु मोपै कीजै कृपा श्लोक—श्लोक—वंसे वास मु पासते शिव इति ब्रह्मेति वैदांतिनौ वौद्धाः। वुद्धि इति प्रमाण पटवः कर्तेति नैया किकाः। अहलिप्तय जैन सासन रताः कमेति मीमांसाकाः। सोयन्नो विद धातु वातछिफलं त्रैलोक्य नाथ हरिः। १।

अंत—चौपाई—सर्पन मांझ सेस कौ जानौ पक्षिन मैं जो गरुड़ वषानौ। देवन मध्य विधाता तैसे, देत्यन मांहि भयो वलि तैसे। भक्तन मुंह जौ शंभु सुजाना, दासन मैं प्रहलाद वपाना। विद्यामान ब्रहस्पति जैसे नदी मांझ गंगा है ऐसे। गृहन मध्य सूरज कौ जानौ

वृक्षन मह पीपर का मानौ। गिरिन के मांझ सुमेर है जैसे, सब दीपन में जंबू ऐसे। षंडन मैं सुभ भरत सुहायो, लोकन मैं वेकुण्ठ गनायो पुरनि मध्य द्वारावति जैसे, तीर्थन में पिंडारक तैसे। × × × इति श्री कृष्णप्रेम सागरे द्वारका खंडे नारद जनक संवादे जेदयाल-कृते द्वारिका खंडे समाप्तमः श्री संवत् १९०९ कुवार वारे शुक्ल पक्षौ तिथौ चतुर्दश्या भौमवासरे। लिखिते गंगा प्रसाद अग्रवाले हीसाम्पुर ग्रामे वसति श्री सरजू निकटे। जो प्रति देषा सो लिषा। श्री हनुमते नमो नमः।

विषय—श्री कृष्णजी के द्वारिका जाने का कारण, उनके विवाहों तथा चरित्रों का वर्णन, द्वारिका का महत्त्व तथा उसके दर्शनादि का फल वर्णन।

संख्या १७२ ई. प्रेमसागरे (मथुराखंड), रचयिता—जयदयाल, पत्र—२०, आकार—१३$\frac{1}{4}$×७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०६ = १९४९ ई०, लिपिकाल—सं० १९०६ = १८५२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामस्वरूप जी उपाध्याय वैद्य, स्थान—फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः श्री राधारमण जी सदा सहाय। श्री गुरुचरण सरोज रज अभिमत फल दातार। ताको प्रथम मनाइओ मंगल करत अपार। श्लोक। वसुदेव सुतं देवं कंसे चणूर मर्दन, देवकी परमानंद कृष्णं वंदे जगद्गुरुं। सोरठा। यक दिन श्री नदनंद मन में कियो विचार यह। कसं सुरन आनन्द सब दुष्टन कौ मारिकै। सोरठा। सुनु राजा वहुलास नारद मुनि यह विधि कह्यौ, मैं गयौ सहित हुलास कंसराज की सभा में। स्याम करुणहय लषि ललचायो चढ़वे को मन मतो उपायो। दोहा। अति पापी मोहि जानि के दीन सक्र मोहि श्राप। हय पर चाहत चढ़ो सठ धरि हय वपु आप। यह विधि कथा सुनाय कै कृष्ण चरण सिरुनाय। चलो विष्णु के लोक कौ दुंदुभि दीयो बजाय।

अंत—दोहा—राजवंश श्रेय लोक को जो कोउ रारत मार। मथुरा वसि सुभ गति लहै यह सिद्धांत अपार। चौ०। उनके करण मुहा सम जानौ, जिन मथुरा महात्म न जानौ उनके चरण वृथा जग माही। जे चलि मथुरा को नहिं जाहीं। नेत्र सोसिपी पक्ष सम कहिये जो मथुरा दरशन नहि लहिये। जो मथुरा को भामन जानो मुष को घट की तुल्य बषानो। श्री मथुरा हित जो उन दीनो वेकर वृथा विधाता कीनो। वृथा सीस परवत सम सोई—श्री मथुरा हित जीवन जोई। पंच तत्व की देह वृथा ही—वृज रज मैं लोटी नहिं जाई। जीव सो वृथा कृष्ण नहिं जाने सो मन वृथा जो भक्ति न माने। यह विधि सो सब जानि के निश्चे कियो विचार, औरु वस्तु सब वृथा है हठ है कृष्ण विहार। इति श्री कृष्ण प्रेमसागरे मथुरा खंडे समाप्त संवत् १९०९

विषय—केशी वध तथा उसके पूर्व भव की कथा, अक्रूर का व्रज आगमन, कृष्ण बलराम का मथुरा प्रवेश और कंसवध। वसुदेव तथा देवकी कृष्ण मिलाप। उग्रसेन का बंधन-मुक्त होना, संदीपन से कृष्ण का पढ़ना तथा मथुरा की अन्य लीलाएं, एवं गोपी उद्धव संवाद, मथुरा महात्म्य।

संख्या १७२ एफ. प्रेमसागर (माधुर्यखंड), रचयिता—जयदयाल, पत्र—१२, आकार—१३½ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०६ = १८४९ ई०, लिपिकाल—सं० १९०९ = १८५२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामस्वरूप जी उपाध्याय वैद्य; स्थान—फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशायनमः। श्लोक। अतसी कुसुमोप मेय कांतिर्यमुना मूलकदंव मध्यवर्ती। नव गोप वधू विलास शाली वनमाली वित्तनोत्त मंगलानि। पर करी कृत पीत पटं हरि सिखि किरीटनटी कृत कंधरं। लकुट वेण्ड करं चल कुडलं पटुत्तरं नट वेष धरंभजे। सोरठा। मुनि बोल्यो वहुलास नारद सौ कर जोरि के। कहो सबै इतिहास श्रुति रुपा कह्यौ करि मिली। चौपाई। नारद मुनि बोले हरषाई राजा सुनो कथा चित लाई। श्रुति रुपा गोपी वृज माई। शेष सापि के वरते आई। देषत मोहन रुप लुभानी। वरिवे की इक्षा मनमानी। वृंदा देवी को सब ध्यावै। करि पूजा गहि भांति मनावै। पावै वर सुंदर नंद नंदन। रुप रासि रस गुण अभिनंदन।

अंत - चढ़ि विमान निज धाम सिधायो, शुभ माधुरी खंड में गायो। हित करि याहि जो गावे कोई, मन वांछितफल पावे सोई। पुनि यह लोक भोग सुष भारी अंत समै गोलोक सिधारी। इति श्री कृष्ण प्रेम सागरे नारद जनक संवादे गर्गा चार्य सौनक संवादे जै दयाल कृते माधुर्य षडे चतुर्थ। समाप्त। शुभमस्तु। श्री संवत् १९०९। भाद्र मासे कृष्ण पक्षे सप्तम्यां रविवासरे। पुस्तिकं लिखिते गंगा अंगुवाले हिसारपुरे। श्री राधा स्यांम सुंदरोज पति। श्री गोविंदाय नमो नमः। श्री सीता राम।

विषय—श्रुतिरूपा के कृष्ण को मिलने, गोपिका दुर्वासा मिलन, चीर हरण लीला कौशलपुर की स्त्रियों का तपोबल के प्रभाव से नहुं में आगमन और गोपों से उनका विवाह। कृष्ण तथा भीष्म की पुत्रियों का विवाह, एकादशी व्रत महात्म्य तथा कृष्ण के आनंद विलास और मथुरा के ब्राह्मणों के यज्ञ का वर्णन।

संख्या १७२ जी. प्रेमसागर (गोवर्द्धनखंड), रचयिता—जयदयाल, पत्र—९, आकार—१४ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६७, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०६ = १८४९ ई०, लिपिकाल—१९०९ = १८५२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामस्वरूप जी उपाध्याय वैद्य, स्थान—फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्री राधा रमण जी सदा सहाय। श्री गणेशाय नमः। श्लोक। अज्ञानु लंवित भुजौ कनकाव दातौ संकीर्त्य नैक पित्त रोक मलाय ताक्षौ। विश्वम्भरौ द्विजवरौ धर्म पालौ वंदे जगत्प्रिय करौ करुणावतारौ। (१) दोहा—शीश मुकट केशरि तिलक वांके नयन विशाल, पीतांबर कटि किंकनी उर राजत वन माल। कर लकुटी मुरली अधर, घूंघर वाले वाल। छिन २ प्रति रक्षा करौ, सदा लाडिली लाल। (३) सोरठा—फिरि बोल्यो बहुलास, अहो मुनि स्वर धन्य। तुम मम हिय अधिक हुलास सुन्यो चरत गिरिवर गहन। (४) दोहा-नारद हृदय अनंद कै साधु साधु कहि तात। सुनौ कथा वृज चंद की मेटत

सब उतपात । (५), चौपाई—वर्षा ऋतु वीती सुषदाई । घर घर वजी अनंद वधाई । इन्द्र जग्य हित सब वृजवासी, करत तियारी अति सुखरासी ।

अंत—यहि विधि सौ गिरि कथा सुहाई, गावै सुनै कथा चितु लाई । कोटि पाप-भैरति जो होई मन वांछित फल पावै सोई । पुत्र पौत्र धन धान्य सुपावै, अन्त समय गोलोक सिधावै । गोवर्धन मुखते उच्चारै सो सदेह वैकुण्ठ सिधारै । वर्ष वर्ष प्रति पूजत जोइ नन्द समान मनोरथ होई । (७४) इति श्री कृष्ण प्रेम सागरे जै दयाल कृत नारद जनक संवादे गर्ग सौनक संवादे गोवर्धन खंडे तृतीय तरंग समाप्त सुभ मस्तु श्री संवत् १९०९ मासोत्तमे कुवारमासे शुक्ल पक्षे तिथौ पंचमा रविवासरे लिषिते गंगाप्रसाद अगरवाले ।

विषय—श्रीकृष्ण की गोवर्द्धन लीला का वर्णन ।

संख्या १७२ एच. प्रेमसागर (वृंदावनखंड), रचयिता—जयदयाल, पत्र—२१, आकार—१३३/४ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—६९३, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०६ = १८४९ ई०, लिपिकाल—सं० १९०९ = १८५२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामस्वरूप जी उपाध्याय वैद्य, स्थान—फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । श्लोक । अनर्पित चरी चिरांत् करुण यावत्तीर्णः ॥ कलौ समर्पयित्तु मुलत्तोज्वलर सांस भक्ति श्रियं हरिः । पुस्ट सुंदर धुतिक दंव संदीपत्ति । सदा हृदय कद रेस्फुरत्तुनः सची नंदनः । १ । सोरठा । जिहि सुमिरत आनंद राधा रमण अनंद मय । भक्त के हित चंद किये प्रकास उज्जल विमल । दोहा । विहरत है राधा सहित श्री जमुना के तीर । ते निसि दिन मंगल करैं संकरषण के वीर । २ । सोरठा सुनौ सवै चितु लाइ श्री वृन्दावन सुभ कथा । उर आनंद बढ़ाइ नारद बोले जनक प्रति । ३ । चौपाई । येक दिन बैठे नंद अथाई पठये तहं उपनंद बुलाई । पुनि सगरे वृषभान हंकारे । आये सवै हर्ष उर धारे । सवै जोरिय कम तो उपायो । निसदिन इहां उपद्रव आयो ।

अंत—यह सुनि मोहन गये निज धामा । क्रुस क्रोध बोलयौ श्री दामा । राधा कह्यौ असुर हुई जाई । संष चूड़ दानव भायो आई । श्रीदामा तब कह्यौ सुहाई एक सत्त वरष हो विलगाई । १८७ । दोहा । तेहि छिन प्रगटे प्रभू तहां कह्यो दोउन समुझाई । अहो प्रियाजन सोचकर छिन सम वरष विहाइ । सोरठा । कह कुवेर घर जाव श्री दामा सौह रष प्रभु । रास समै मै आवत वनिज गति को पाइ हौ । दोहा । वृज विहार अद्भुत अधिक अधिक हृदय हरषाइ । अधिक चित्त दे सुने जो अधिक अधिक फल पाइ । १ र्ण० । इति श्री कृश्न प्रेम सागरे नारद जनक संवादे वृन्दावन षड़े समाप्तः ।

विषय—नंद आदि का गोकुल से वृन्दावन को प्रस्थान करना, सब तीर्थों के वहां प्रति वर्ष आकर चार मास सेवा करने का वर्णन, श्री कृष्ण भगवान के रास विहार तथा अन्य लीलाओं का वर्णन ।

संख्या १७२ आई. प्रेमसागर (गोलोक खंड), रचयिता—जयदयाल, पत्र—२४, आकार—१४ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—७९२, रूप—

प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०६ = १८४९ ई०, लिपिकाल-सं० १९०९ = १८५२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामस्वरूप उपाध्याय वैद्य, स्थान – फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः। श्री राधागोविंद जू, तुमहौ परम दयाल। दास जानि किरपा करौ हरौ सकल जंजाल। उमा सहित गणनाथ को वार वार सिरनाय। कृष्णकथा चाहत कह्यौ हम पर होहु सहाय। बंदौ प्रथमहि गुरु चरण, सुंदर सुख की षान। सकल अमंगल अघ हरन देत विमल विग्यान। तिनके सेवत सुलभ सुभ होत पदारथ चार। ज्यौं दिनकरके उदयते, मिटत जगत अंध्यार। सोरठा। पुनि वंदौ पदरेनु, जासौं उज्जल होय हिय, करौ सो मम उर अैन सुंदर मोहन जस कहौं। गौर अंग राजत विमल विधु अकलंक अछीन। सो मम हिय आकास मै कियो प्रकास नवीन। तासौं सूझ्यौ जो कछू सो मैं कहौं सुनाय। सुनिहै सज्जन संत जन अधिक हृदय हरषाय।

अंत—सोरठा—माटी षान अनूप सो विधिवत तुमसों कह्यौ। सुनौ चित्त दे भूप वालकेलि लीला वहुरि। जमुना के तट मोहन पेलै, बाल सषा सब लागे डोलै। ताही छिन दुर्वासा तहं आये लीलादेषत अति श्रम छाये। X X X गऊ लोक प्रभु रास कियो जब प्रान पियारी हेतु।……कहिउ तव अब इक्ष्या काहै मन माहीं। सो वहु लास कहौ मो पांही। तुरत जनक मुनि चरनन गहि, बोलेउ हित हरपाय, और चरित्र जो किये प्रभु विधिवत कहि समुझाय। सोरठा। गऊलोक निजधाम, सो वैभव तुमसौं कह्यौ सुनौ सकल तजि काम श्री वृन्दावन गूढ़ रस। इति श्रीकृष्ण प्रेम सागरे जै दयालकृत नारद जनक संवाद गोलोक षंडे सप्तमोध्याय।

विषय—कृष्णावतार का कारण, नंद व उपनंदादि शब्दों की व्युत्पत्ति, कृष्ण के सखा-सखी तथा माता पितादि संबंधियों के अवतार का विवरण और कृष्ण बाल लीला का संक्षिप्त वर्णन।

संख्या १७३. ब्रह्म वैवर्त पुराण, रचयिता—जैजैराम अग्रवाल मित्तल (मेंडु, अलीगढ़), पत्र—७३०, आकार-१०$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)-९, परिमाण (अनुष्टुप्)—११५००, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८६७=१८१० ई०, प्राप्तिस्थान—श्री भारती भवन, स्थान—फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला-आगरा।

आदि—श्री कृष्णाय नमः॥ अथ ब्रह्म वै वर्त्तपुराणे कृष्ण खंड भाषा लिख्यते॥ सोरठा॥ गननायक वरदेव सुमरत दायक सिद्धि के। मन बच कर्म के सेव जो प्रेरक हे बुद्धि के॥ दोहा॥ अरुण वरण भूषन अरुण अरुण वसन जुत हंस॥ कृपा करौ सो शारदा कंदन करत प्रसंस॥ २॥ पीत वसन भूषन विविधि दीरघ द्रग भुज चार॥ कमला प्रति सब जगत पति मो मन करौ विहार॥ ३॥ इन्दु बरन वाहन बरद चंद भाल ईशान। उमा सहित वंदन करौं कृपा करौ भगवान॥ ४॥ तिमर हरन मंगल करन तत सत चित भगवान॥ ४॥ विश्व रूप सब विश्व को आदि मध्य अवसान॥ ५॥

अंत—ताते जल सहित करि जोगा। मम कीर्त तो नास संजोगा॥ गिद्ध कोटि सहस्र परमाना। जन्म स्वें करन सूकर आना॥ स्वापद जन्म सतन परिमांना। कुठू भोजन

निकरत जु आना ॥ विप्र अदी छित है जो कोई । संख चिह्न जुत सुक सो होई ॥ वृष वाही दुज होत सुजानो । राज हंस निश्चे कर मानो ॥ चित्र वस्त्र चुरावत जोई । तीन जन्म मयूर सो होई ॥ तेज पात जो हरत सुजानो । सो कारंड जोन्ह पहिचानो ॥ [शेष लुप्त]

विषय—(१) पृ० १ से पृ० २४ तक--मंगला चरण, ग्रन्थ निर्माण काल:—एक सहस्र औ आठ सत सठ संवत पाइ । करौ अरंभ या ग्रन्थ कौं, कीजो गिरा सहाइ ॥ नृप कुल वर्णन:—सोम वंस में प्रगट भो, जदुकुल परम उदार । प्रगटे ताही बंश में श्रीपति कृष्ण मुरारि ॥ तिनके सुत भए प्रद्युमन तिनके सुत अनुरुद्ध । वज्र नाभ तिनके भए जे है जगत प्रसिद्ध ॥ जिन प्रतिमा श्री कृष्ण की थरपी करि सनमान । तिनके जस सब जगत मै ज्यों प्रसिद्धि ससि भान ॥ उपजे तिनके वंश में । भवरा जो कुस राज । वसत करौली नगर में । सुख के सबै समाज । एक समय मन में कियो विद्या पढ़न विचार ॥ गये तहुण गड़ नगर में प्रोहित ग्रेह मझार ॥ तहां विरोहित नृपति सों । उपज्यौ कछुक विगार ॥ बढ़त बढ़त अति बढ़ि गयो । मन में बढ्यों विकार ॥ राजा बहुदल साथ लें । चढ़ि आयो वा धाम । प्रोहित सौं औ नृपति सों । भयो बहुत संग्राम ॥ दोनों भ्राता मन विखे । छत्री धर्म बिचार । प्रोहित संग ह्वै नृपति सों । कीनौ जुद्ध अपार ॥ तब प्रोहित मारे गये । जुद्ध करत दोऊ बीर । चलत चलत आये निकट तरन तनूजा तीर ॥ जमुना को जल उतरि कै । जहँ तहँ करत निवास । आये देश निज छाड़ि कै । कियो साइपुर वास ॥ ताही समै सहावदी (?न) । दिली को सुल्तान । जुद्ध करत हाथु रस सों । वीते बहुत विहान ॥ तिनके संग को भाट इक । लस गर गयो सुभाय ॥ बैठि सभा में शाह की । उठि आवे नित जाय ॥ एक द्यौस ता शाहने । अैसे कह्यो सुभाय ॥ उमरायन सो नृपन सों । वोल्यो बचन सुनाय ॥ जो या राजै मारि कैं । मो पर ल्यावै सीस । ताकों मैं या देश को । राज करौं वकसीस ॥ भाट उठो या बात सुनि । पहुँचो निज ग्रह आइ । दोऊ भ्रातन सो कह्यौ । सबै संदेश सुनाइ ॥ —सोरठा—दोऊ राज प्रवीन सुनत बात यह भाठ की ॥ करि घोरन पर जीन चले बहुत उत्साह सौं ॥ गढ़ देखौ तब जाइ फेरि अश्व चहुँ ओरि तैं ॥ एक ओर लषि पाइ कोरा दीने अश्व के ॥ तब वह कोरा खाइ घोड़ा वाढ्यो क्रोध में ॥ दोऊ पाँय उठाइ उड़ि कूदो गढ़ मध्य में ॥ जाति धाक कौ अति वली महा पालथा नाम ॥ दिली के सुलतान सों नित्त करत संग्राम ॥ ताको यही सुभाय एक पहर लौ प्रात ही । देवी के ग्रह जाइ पूजा करैं विधान सौं ॥ घर को चलौ समाइ राजा पूजा करि तहां । तबहीं पहुँचै जाइ घोरा के असवार ए ॥ करिकैं क्रोध अपार खड़ग कादि कैं कमर तें ॥ राजा के गल डारि लीनों सीस उतारि कें ॥ रहितौ मुकुट सुभाइ सा राजा के सीस पर । लीनो तुरत उठाइ पटका में बांधौ तवै ॥ फेरे अस्व सुजान आये वाही ठाम में ॥ कोरा दियो निदान उड़िकै गढ़ बाहिर परे ॥—दोहा— तब दोऊ भ्राता साथ ही आइ गए निज धाम । आइ नग्र खोली कमर कीन्हौं घर विश्राम ॥ यहां भाट आयो सभा तहां सुनी यह वात । राजा को मारो कहैं आप न आप लजात ॥ भाट कह्यो सुलतान सों लखौ साह मो ओर । जिन मारो राजा वली सो है कोऊ और ॥ तबै भाट तहां आइकैं इनको गयो लिवाइ । दोनो भ्रातन साथ ही दीनों जाइ

मिलाइ ॥ तब पूंछौ सुलतान ने तुम डारौ नृप मार । पटका खोलौ कमर तें दीनौ मुकुट निकार ॥ दिल्ली पति इनको तबै महा सूर जिय जानि । राजा कहि मन सब दियो कियो वहुत सनमान ॥ पचासी और पांच सत ग्राम राज विख्यात ॥ बांटे धरनी करि कहे पोरच बांगर जात ॥ भ्राता भौ वड़ राज हे छोटे कुश विख्यात ॥ पोरच भये भवराज ते कुंश ते बांगर जात ॥ गद्दी के मालिक भये राजा पोरच जात । तावेदार ह्वै के रहैं तिनके बांगर भ्रात ॥ और तिन देस लियो बहुत कियो राज जसमंड । तबते तिनको देस सब कहियत पूरन खंड ॥ ता राजा तहँ वसि करे जैसे करत उदार । ते मैं वरनन ना करे होहि ग्रन्थ विस्तार ॥ उपजे तिनके वंश में द्रवे सिंघ बलवान तिनके तनय बहुत भये नगर वसे वहु ज्ञान ॥ वाहन सिंह तिनके भये बुद्धि वान रनधीर । तिनके जमुनी भानु सुत प्रगट भये रन वीर ॥ अमर सिंघ तिनके भए राजा परम उदार । तिनके गुन अद्भुत सकल जानत सब संसार ॥ सोवर गढ़ के जाठ ने कीनौ कछू विरोध । दिल्ली के सुलतान को तापर वाढ़ो क्रोध ॥ फौज कसी तापर भई उतरे औ फरमान । हुकुम पाइ कै चढ़ि गए राजा मुगल पठान ॥ तब राजा अमर सिंघ को उतरा यह फरमान । सोवर गढ़ कों जाइकैं मारों वेगि सुजान ॥ राजा सुनिके हुकुम कों इक वेर गए वराय । फिरि अहिदी आये तहां दीनों हुकुम सुनाय ॥ औरंग जेब महावली दिल्ली को सुल्तान । ताको हुकुम न मानई ऐसो को हिन्दु आन ॥ राजा तब दल साथ ले पहुंचे सोवर तीर । डेरा कीने जाइके सूर बीर अति धीर ॥ प्रात होत हल्ला करौ राजा जुद्ध उदार । सूर बीर पहुँचे तहां गढ़ कौ लीनो मार ॥ गढ़ भीतर के जात हीं वढ़ो जुद्ध घम सान । अमर सिंह राजा तबैं रन में छोड़े प्रान ॥ सोवर पै मारे गए अमर सिंह विख्यात । पात साह निज श्रवन सुनि राखी यह वात ॥ तिन के सुत अनिरुद्ध सिंघ राजा बुद्धि विचित्र । राज नीति जानत सकल अद्भुत तिनके चरित्र ॥ पात साह ने सुधि करी कछु कारज कौ पाइ । राजा सिंघ अनिरुद्ध को लीनो पास बुलाइ ॥ राजा तब दिल्ली गए मिले तबैं सुल्तान । खिलअत देके मुहमदई कियो अधिक सनमान ॥ ता राजा ने कविन सों नेह कियो दै दान । दान दछि तिनके भए घासी राम सुजान ता राजा को राइ सों बरनो कवि बहु भांति ॥ ताही में सब लिखो है जैसो है विरतांत ॥ भूख नादि कवि आइकै पायो बहु सनमान ॥ जस वरनन जिनको कियो वहुकवि जानत जान ॥ औ कवि देस विदेस के आये सुनि नृप दान । तिनके वर षासन करे और दये वहु दान ॥ ता राजा के गुन वहुत क्यों करि वरने जांय । वलि दधीच औ करन करि उन मानों कलि मांहि ॥ मैंड भई अवाद तब ता राजा के राज । बाढ़ों ता अति नगर में सुख कों सर्व समाज ॥ हाट बाट सुन्दर अधिक सेन धाम ग्रह भूप ॥ बाग ताल सोहत सुखद मनकों मोहत रूप ॥—कवित्त—जिन अनरुद्ध गहलौतन कौं सर कीन्हों । प्रबल पुंढीर बीर मारे हैं वितारि कैं ॥ भालन कों मारौ चौहान कौं मीडि डारौ । बरौली को राउ जुद्ध जुरैं गयो हारि कैं ॥ जै जै राम भने जाट जातिन कों कौन गिनै । नृपति अमेड़ी डारे देस के सिंघार कैं ॥ माहन मई कों छिन एक ही में लूट करि । बीजापुर ऐसों कुर संडा लीनों मारि कैं ॥ × × × × नगर की सोभा तथा कुन्डा ताल का वर्णन ॥ अनिरुद्ध सिंह की विजय तथा बीरता का वर्णन ॥ राजा सिंह अनि-

रुद्र के बेटा सिंह कल्यान राजा को मरनो भयो बाढ़ी मनहिं गिलान ॥ करी प्रतिज्ञा प्रगट तिन भोग दये सब त्याग ॥ एटा को मान्यो जबै तब सिर बाधौं पाग ॥ × × × × × उक्त राजा की वीर ताई का वर्णन राजा किसुन सिंह एटा पति (मैंन पुरी में शरणास्थ) पर कल्यान सिंह की विजय का वर्णन अर्थात् पिता का वैर ले लेने का वर्णन—तिनके सुत प्रगटे जगत राजा सिंह अजीत। जुद्ध जुरे न मुरे कहूं रन में रहे अजीत ॥ तिनके सुत प्रगटे प्रवल दाता बुद्धि उदार ॥ रतन सिंह राजा तिन्हे जानत सब संसार ॥ बहुत राज कीन्हों विमल बाढ़ौ सुजस अपार ॥ द्वै प्रताप सूरज तपो पोरच खंड मंझार ॥ उपजे तिनके मित्र सिंह राजा परम उदार। राजनीति जानत सकल तिनकौ सुजस अपार ॥ ता राजा को राज अब प्रगटहसायन माह। चारि बरन निज धर्म रत सोवत जाकी छांह ॥

× × × ×

सोरह सुत ता नृपति के जद्यपि वहु परिवार। सौंप्यो सुत जसवंत कौं सबै राज को भार ॥ राजा जसवन्त के दान का वर्णन।

कवि का निज कुल वर्णनः—बैंस बरन जो तीसरो बेदन कर विख्यात। अगरो हेते प्रगट है अग्रवार यह जात ॥ मीतल गोत में प्रगट भए गेला साह सुजास। उपजे तिनके वंश में गिरिधर अति बुधवान ॥ तिनके भोपत राम सुत तिनके केसो राम। सीलवंत बुधिवंत अति जिनके गुन अभिराम ॥ तिनके सेवा राम सुत गुन निधि बुद्धि समुद्र। बालक हीतें जिन विविध पूजे श्रीमनि रुद्र ॥ तिनको राजा रत्न सिंघ बहुत कियो सनमान। राज काज में अति निपुन कीनौं राज दिवान ॥ तिनके मैंडू नगर में वाग कूप औ धाम। सब ही देस प्रसिद्ध है जिनको जस अभिराम ॥ तिनकी रुचि अति धर्म में औ हरि भक्ति निदान। तिनके जै जै राम सुत प्रगट भयो जग जान ॥ देव गिरा पारस गिरा विद्या पढ़ी अपार। देस गिरा में करत जो कविता चित्त विचार ॥ कवित्त बनियां बरन हौं कहावतु हौं अग्रवार। मैडूंपुर बासी हूँ हौं कहति समुझाइकैं ॥ सेवाराम सुत जाको जस देस देसनि में। सहर अनूप में निवास करो जाय कैं ॥ गंगा तट बास अब आयो हौं हसायन में। राजा मित्र सिंह पास रहौ सुख पायकैं ॥ जै जै राम सोई जाकी कविता मधुर होई। सब कोई कान दै सुनत मन लाइकैं ॥ × × × बीते बरष चालीस तब संवत गंगा नीर। बहु धन खरच करौ तहां आयो जहँ नृप वीर ॥ राखौ तब बहु मानदे दै दफ्तर कौ काज। श्री जसवंत कुमार सौं बाढ़ौ धर्म समाज ॥ तिनकी आज्ञा यों भई पर्म धर्म मय चार। जुगल चरित कहियै कछू निज मति के अनुसार ॥

हसायन के नगर, ताल, बाग, हरिमंदिर, दुर्ग तथा सभा का वर्णन। ग्रंथ परिचयः—

दोहा—ब्रह्म वैं वरत पुरान के, खंड कहे हैं चार। तामें कृष्ण खंड यह, सब बेदन को सार ॥ श्री जसवंत कुमार की आज्ञा मन में राषि। कृष्ण खंड के सार सब बरनत भाषा भाषि ॥ जैसो कछु रिषि व्यासने कीन्हों है इतिहास। सोई सब भाषा विषै कीनों सुमति प्रकास ॥ अनुवाद के विपय में कवि का कथनः—नहिं विस्तार समास नहीं जो पुरान को रूप। सोई भाषा में कियो जै जै राम अनूप ॥ अश्लोकनि को अर्थ लहि तद्वत रूप

विचार । भाषा में सोई कियो ताही के अनुसार ॥ (२) पृष्ठ २५ से पृष्ठ ७३० तक--वैवर्त पुराण का हिंदी भाषा में पद्यानुवाद । श्री कृष्ण के विविध चरित्र तथा भक्ति की विविध रीतियों आदि का वर्णन । कुछ राम चरित्रों का भी वर्णन ॥

टिप्पणी-- ब्रह्म वै वर्त्त पुराण के चार खंडो में से श्री कृष्णजन्म खंड नामक खंड का यह पद्यानुवाद है । अनुवादक जै जै रामजी मीतल गोत्रीय अग्रवाल वैश्य मैंडू (अलीगढ़) के निवासी थे । वहां से जाकर इन्होंने कुछ दिन अनूप शहर (बुलंदशहर) में निवास किया । तदुपरांत वह हसायन (अलीगढ़) के राजा जसवंत सिंह के यहाँ नौकर हो गये । इस राजा से इनका पैतृक संबंध था । इस कवि के पिता सेवाराम राजा रत्न सिंह के दीवान थे । इनकी कविता अच्छी है । इन्होंने अपना तथा अपने आश्रयदाता का वंश परिचय दे दिया है । जो यथास्थान उद्धृत कर दिया गया है । यह अनुवाद उन्होंने व्यास कृत ब्रह्म वैवर्त पुराण के श्लोकों के आधारपर किया है । अनुवाद अनेक प्रकार के छंदों में लिखा गया है । यद्यपि इनके छंद अच्छे हैं फिर भी कहीं कहीं उनमें गति भंग दूषण पाया जाता है । कवि अपने को फारसी तथा संस्कृत भाषाओं का ज्ञाता बतलाता है ।

संख्या ६७५ ए. गर्भ चिंतामणि, रचयिता—जैलाल, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०४ = १८४७ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला श्यामसुंदर पटवारी, ग्राम—सराय रहमत खान, डाकघर—विजयगढ़, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ गर्भ चिंतामणि लिख्यते ॥ क्यों जनम गमावो रटो राम रघुराई । मानुष देह बहुरि सहज नहिं पाई ॥ नरनारी संजोग गर्भ में आयो । मल मूत्र मास को पिंड होय हिय रायो ॥ पग ऊपर तल में सीस रहे लटकायो । दुख गर्भ वास को देख बहुत घबरायो ॥ पड़ते ही पिण्ड में जीव तनिक सुधि आई ॥ मानुष ॥ १ ॥ अग्नि जहर तहं तपे पवन नहिं आवै । रहै जीव कैद में जरा चैन नहि पावै ॥ करता सों वारंवार अरज गुद रावै । इस फंद से वाहिर जो कोई भांति करावै ॥

अंत--हरि विमुषन की यह दशा होत दोजख में । जै लाल रटो नित राम नाम हरदम में ॥ गुरु पुरुपोत्तम कर याद गर्भ प्रण घट में । कट जाय आगमन फंद तेरा चट पट में ॥ है तारक मंत्र यही वेद श्रुति गाई । मानुष देह वारंबार सहज नहिं पाई ॥ ५० ॥ इति गर्भ चिंता मणि संपूर्ण शुभ मस्तु लिखतं शिवदास गोकुल पुरा आगरा मध्ये संवत् १९०४ वि० ।

विषय--जीव की गर्भ वास की दशा का उसके पापों के प्रायश्चित सहित वर्णन है ॥

टिप्पणी—इस गर्भ चिंतामणि ग्रंथ के रचयिता जै लाल थे । इनके गुरु का नाम पुरुपोत्तम था । लिपिकाल संवत् १९०४ वि० है ।

संख्या १७४ बी०. गर्भचिंतामणि, रचयिता—जयलाल, पत्र—८, आकार—६ X ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० लक्ष्मीनारायण आयुर्वेदाचार्य, ग्राम—सैगई, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि-अंत १७४ ए के समान ।

संख्या १७४ सी. संग्रह, रचयिता—जैलाल, कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—६ X ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०१ = १८४४ ई०, प्राप्तिस्थान—कवि विश्राम सिंह, ग्राम—भवनियापुर, डाकघर—सरौढ़ा, जिला—एटा ।

आदि—अथ राम नाम की महिमा लिख्यते ।। श्री गणेशाय नमः । है रामनाम सिरनाम जगत जो गावै । कट जाय काल फंद फेर जन्म नहिं पावै ॥ है रामनाम का बड़ा महातम भारी । वेदन का सार गीता में कहै विचारी ॥ सुर रिषि मुनि जपते नाम अटल जुग चारी । है सकल लोक विख्यात जपें नरनारी ॥ जमराज कांपता रामनाम को ध्यावै । कटजाय काल फंद फेर जन्म नहि पावै ॥ यह वाल्मीक मुनि भये जगत विख्याता । जिन मरा मरा जप पाय त्रिलोकी नाथा ॥ भये ब्रह्म लीन जप उलटा नाम सुहाता । रह गया नाम संसार सकल जस गाता ।। जयराम नाम जो जीव मुकुत को चाहे । कट जाय काल०।। X X X हों हाथ जोड़ जैलाल तेरा जस गावै । कट जाय काल फंद फेर जन्म नहिं आवै ॥

अंत—त्रिलोचन नील कंठ देवा । भूत वैताल करै सेवा ॥ वजाये गाल मिलै मेवा । त्रिशूली खप्पर धर देवा ।। सीस पुजै शिवलोक में मृत्यु लोक में लिंग । चरण पुजै पाताल में उमा पती अर्द्धंग ॥ गंगा रहै संग सदा दासी । महादेव० ॥ चढ़े सिर कस्तूरी चंदन । दिगंवर वाघंवर अंगन ॥ करैं सुर तेंतीसो वंदन । धतूरा आक भोग व्यंजन ।। वंभोला पद वीनवैं हाथ जोड़ जैलाल । पलक खोल प्रभु दर्शन दीजै कीजै मोहिं निहाल ।। काट देव जमपुर की फांसी । महादेव कैलासीवासी ॥ इति महादेव जी की विनती संपूर्ण संवत् १९०१ वि०

विषय—इसमें शंकर और श्री कृष्ण जी की विनती आदि के अनेक ख्याल लिखे हैं ।।

टिप्पणी—इसके रचयिता जैलाल थे । इनके गुरु पुरुषोत्तम थे । इन्होंने अनेक ख्याल बनाये हैं । लिपिकाल संवत् १९०१ है ।

संख्या १७४ डी. सग्रह, रचयिता—जैलाल, कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—८ X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१२ = १८५५ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला दिलसुखराय, ग्राम—नगराभगत, डाकघर—पटियाली, जिला—एटा ।

आदि—१७४ सी के समान ।

अंत—सिय रामचन्द्र बुलवावो जी गुरु वशिष्ठ वोल पठावो जी ॥ रामचन्द्र गादी वैठारो राज तिलक गुरु करसों धारो ॥ करैं कौशिल्या आरती वर्षे फूल विमानन जै

जै त्रैलोक्य उचारो रे ॥ रंग रचनी केशर लावोरे ॥ ४ ॥ इन्द्रादिक ध्यावन आवे जी ब्रह्मादिक ध्यान लगावे जी ॥ इंद्रादिक सुर ध्यावन आवै रिषि मुनि अस्तुति निज गुद रावै ॥ दास जैलालकी वीनती महा मूढ़ पापी ॥ रति डूवत नाव वचावोरे, रंग रचनी केशर लावोरे ॥ इति श्री रामचन्द्र जी का राज तिलक संपूर्ण समाप्तः संवत् १९१२ वि०

विषय—इसमें रामनाम की महिमा, श्री कृष्ण जी की विनती, श्री रामचन्द्र जी का राजतिलक, शिवजी की विनती और पारवती की विनय आदि का वर्णन है ।

संख्या १७४ ई. ख्याल, रचयिता—जयलाल, कागज—देशी, पत्र—६०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०१ = १८४४ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा जीवनदास, भेरूजी का मंदिर, ग्राम—टूचीगढ़, डाकघर—अलीगढ़, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । अथ ख्याल जैलालकृत लिख्यते ॥ श्री रामचन्द्र को राज तिलक । रंग रचनी केशर लावोरे । दशरथ सुत तिलक चढ़ावोरे ॥ चोवा चंदन केशर लावो कुंकुम अरगज सुगंध मंगावो ॥ ढोल पखावज बांसुरी वीन मृदंग घनासुरी । नृत्यकी युक्ति वनावो रे ॥ रंग रचनी० ॥ १ ॥

अंत—मैं कहलग वर्णन करूं तेरी चतुराई । है नभ मंडल पाताल तेरा यश छाई ॥ हूं अधम नीच अज्ञान पूर्ण कुटि लाई । शरणागत वत्सल जान वीनती गाई ॥ हौं हाथ जोड़ जैलाल तेरा जस गावे । कट जाय काल फंद फेर जन्म नहिं पावै ॥ इति श्री ख्याल जैलालकृत संपूर्ण सुभ मस्तु । लिखतं वनवारी भैया आश्वनि वदी सप्तमी संवत् १९०१ वि०

विषय—इसमें रामनाम महिमा, रामचन्द्र का राजतिलक, जुगुल विहार, शिवजी की विनती आदि का वर्णन है ।

संख्या १७४ एफ. कठिन औषधि संग्रह, रचयिता—जयदयाल गौड़, कागज—देशी, पत्र—६०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३८०, रूप—प्राचीन, पद्य गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५ = १७९८ ई०, प्राप्तिस्थान—वैद्य जगजीवन लाल, ग्राम—नौनेरा, डाकघर—हाथरस, जिला—अलीगढ़ ।

आदि— श्री गणेशाय नमः अथ कठिन औषधि संग्रह लिख्यते अथ संग्रहनी निदान—कटुक तिक्त कसायला रूषा सीतल खाइ । अतीसारहः पुनि कहौं संग्रहनी हुइ जाइ ॥ संग्रहनी लक्षण - उदर दुषै अपच अन्न कंठ सूषै छुधा त्रिषा रहित ॥ औषध ॥ धनियां मोथा उसीर चंदन अतीत सोंठि नेत्र वाला जवाइन सालि पर्णी वेल सम चूर्ण प्रात पाइ । अन्न अपच संग्रहनी जाइ ॥

अंत—पेशाब वंद होइ औ दरद करत होइ ताकी दवाई ॥ सिलाजीत सोधा टका १। पीपरि १२५ लघु इलायची १२५ सव मैदा करि गुड़ पुरान टका २ कूटि कै झरवेरा के प्रमान की गोली बांधै पाइ ऊपर चौरेहन जल पीवै दुप मिटै अथ कठिन रोगों की औषधि संग्रह संपूर्णम् । लिखा जमाहर लाल संवत् १८५५ वि०

विषय—वैद्यक ।

संख्या १७४ जी. श्रीकृष्ण जी की विनती, रचयिता—जयदयाल, कागज—देशी, पत्र—४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०४ = १८४७ ई०, प्राप्तिस्थान—रामलाल गौड़, ग्राम—बादलपुर, डाकघर—हाथरस, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ श्री कृष्ण चन्द्र जी की विनती लिख्यते ॥ श्री कृष्ण चन्द्र महराज वेष नटवर धारी । वंशी वारे श्याम मुरारे लाज अव हाथ तेरे मथुरावारे गिरवर लियो उठाय राख ली लाज । विरज की मतवारे ॥ सव मेघ विचारे हार चले इन्द्र लोक में पुकारे ॥ आदि पुरुष अवतार सांतरो इनसे तो हम सव हारे ॥ खाली कर डारे नीर जल वरस रह गई छारे ॥ जव इन्द्र गयो घव राई । कहाँ कीजै कौन उपाई ॥ मैं करी वहुत लरकाई । सब बात हाथ विगराई ॥

अंत—सीस मुकुट पीताम्बर बांधे कानो कुंडल कृत वंसुरी ॥ खड़े कदंव तर सखा संग ग्वाल वाल खेलैं हंसरी ॥ है अपार, लीला जग तोरी को गावै कवि मति थोरी ॥ है गुरु पुरुषोतम दास जेलाल कहैं यों कर जोरी ॥ मैंहुं मति मंद अभागी निश दिन कुकर्म सों लागी ॥ अव करौ कृपा वर मांगी दो वुझा पांप की आगी ॥ नाश कर दुष दरिद्र दोषा रे ॥ श्याम मुरारे लाज अब हाथ तेरे वंसी वारे ॥ ३७ ॥ इति श्री कृष्ण चन्द्र जी की विनती संपूर्ण समाप्तः लिषतं शिव दास नागर आगरा मध्ये गोकुल पुरा संवत् १९०४ वि०

विषय—श्री कृष्ण की वृज लीला ।

संख्या १७४ एच. श्रीकृष्णचंद जी की विनती, रचयिता—जयलाल, कागज—देशी, पत्र—८, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१४ = १८५७ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला चंपतराय, ग्राम—अलीगंज, डाकघर—अलीगंज, जिला—एटा ।

आदि-अंत—१७४ जी के समान ।

संख्या १७५. नरसी मेहता की हुंडी, रचयिता—जेठमल, (नागपुर) पत्र—१२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७१० = १६५३ ई०, प्राप्तिस्थान—विसेश्वरदयाल चतुर्वेदी, ग्राम—पुरकनेरा, डाकघर—होलीपुरा, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ नरसी मेहता की हुंडी लिख्यते ॥ चौपाई ॥ श्री गणपति को पहिले ध्यावौं । जब नरसी की हुंडी गावौ ॥ परम भक्त म्हेता है नरसी । राम भजन को वुधि है सरसी ॥ १ ॥ निशि दिन रामकृष्ण चित धरै । झूंठी दंतकथा नही करै ॥ जाको है जूनागढ़ बास । राम भजन में रहै हुलास ॥ २ ॥ जहां आये साधू जन दोय । वासो लेकर रहिया सोय ॥ प्रात जाग पूछत है तहां । कौन लिषत है हुंडी यहां ॥ ३ ॥ एक मसखरै कीनी हांसी । सुण ज्यौं ही तीरथ के वासी ॥ घर मेहता नरसी के जाओ । चाहे जितनी हुंडी लिखावो ॥ ४ ॥ उनके धन को छेड़ो नाहीं । बहुतेरी लक्ष्मी घर माहीं ॥ जब साधू पूछत घर आये । नरसी जी घर वैठे पाये ॥ ५ ॥

अंत—इस विधि करी भक्त की साह । हुंडी सिकारी सांवल साह ॥ कबीर के घर वाल दल्याये । धना भक्त के खेत निबाये ॥ ७४ ॥ राणै विष को प्याला भरो । चरणा मृत को नामजु धरयौ ॥ मेल्यो दासी हाथे जबै । मीराबाई पी गई तबै ॥ ७५ ॥ सुष उपज्यो पीवत पर मान । सहाय करी जब श्री भगवान ॥ षीच अरोग्यो श्री यदुराय । नरसी की हुंडी सिकराय ॥ ७६ ॥ सोरठा ॥ नगर नाग पुरवास, नाम जेठ मल जानिये । हरि भक्तन को दास । संवत् सतरा सौ दस ऊपरै ॥ ७७ ॥ समौ बैठ गुरुवार । जेठ शुक्ल पख अष्टमी ॥ हरि गुण कियो उचार । जो गावै सीखै सुणै ॥ ७८ ॥ इति श्री नरसी मेहता की हुंडी समाप्तम् ॥

विषय—नरसी भक्त की द्वारका पति श्री कृष्ण के द्वारा हुंडी सकारने का वर्णन ॥

संख्या १७६. नेमीनाथ जी के छंद, रचयिता—झुनकलाल (शिकोहाबाद, मैनपुरी), पत्र—२०, आकार—७३/४ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) — ६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८४३ = १७८६ ई०, लिपिकाल—सं० १९१३ = १८५६ ई०, प्राप्तिस्थान—जैन मंदिर, ग्राम—नगला सिकंदर, डाकघर—नारखी, जिला—आगरा ।

आदि—अथ श्री नेमनाथ जी के रथ की अति सै सोभाछंद । गीत लिखते । दोहा । प्रथमोनमो श्री अरहंन को दूजो सरस्वति माहिं । तीज गुरु को प्रणाम करि छंद रचो हरि माहिं । जंबू दीप सुहावनो लखि जो जन विस्तार भरत क्षेत्र दक्षिण दिशा सोरट देश मझार । नगर द्वारका जादव वसै लसे सुरग समान । अब वारह जोजन वनो विस्तार जाको जान । छप्पन कोट जादव तहां वसै महावलवान । ताही वसं विषे भरेवल नारायण आन । समुद्र विजे के नंदवर भओ जगत विख्यान । वासुदेव वसुदेव को भये सुवल अवदाल ।

अंत—भूल चूक अक्षर अमिल कीजौ सुद्ध प्रवीन । महा विचछन चतुर जे तिनसों विनती कीन । छंद । कलिकरी विनती महादीनती सुनहु विचक्षन परवीन । लघुदीर्घ भाषा वहि जानों आसी मोमें वुधिहीन । बहुत अपनी करी सयानी ताते अरज सु मैं कीनी । जिन गुन धारन वारन पारा भुजवल लरि नहिं कर खीनी । २१६ । इति श्री नेमनाथ जी के छंद संपूर्ण मिती चैत्र वदी ८ गुरुऊवार संवत १९८३ वि० ।

विषय—नेमिनाथ जी के रथ आदि की शोभा का वर्णन ।

संख्या १७७. छंद रत्नावली, रचयिता—जुगतराय (आगरा), कागज—देशी, पत्र—६४, आकार—११ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—७, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७३० = १६७३ ई०, लिपिकाल—सं० १९०८ = १८५१ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबू हनुमान प्रसाद, सब पोस्टमास्टर, स्थान—राया, डाकघर—राया, जिला—मथुरा ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ छंद रत्नावली लिख्यते । दो । श्री बांनी करता पुरस कर्यौ जु प्रथम उचार । आगम निगम पुरान सब तामै ताइ जुहारि । पिंगल आगै

गरुड़ के रच्यौ कला प्रस्तार। यह चेरो आपु समुद्र करि छंद समुन्द्र अपार। २। जुगतराइ सौं यौ कह्यौ हिमंत पांन बुलाइ। पिंगल प्राकृत कठिन है भाषा ताइ बनाइ। ३। छंदो ग्रंथ जिते कहे करि इक ठौरे आनि। समझि सबनि के सार लै रतनावली बखानि। ४। नाम छंद रतनावली यही कहै सब कोइ। लाइकहैं प्रभु सबन कौ कवि हिय राषन सोइ। ५। सप्तध्याय रत्नावली कन्यौ ग्रंथ मनसूर। प्रथम ध्याय कर्मरु क्रिया गुरु लघु गन इमपूर। ६। असम मात्रा छंद द्वतीया है सम कलत्र तृयिक जानि। चौथी सम वरन जु कही असम वर्न पचमांनि। ७। छठैं ध्याय छंद पारसी सप्तम तुक कौ भेद। करु पंडत या ग्रंथ कौ मनक्रम वचन सौ षेद। ८। अथ गुरु लघु लक्षण। संजोगा दिसि विंदु सुनि कहूं होइ चरनंत। दीरघ ऐ गुर जानीअै और लघुनामल हंत। ९। जथा। उजुल जस जस अंवर कन्यौ दिस २ हिम्मत षांन। मुक्ता तजि सुर सुंदरिन भूषन कीनो कांन। १०।

अंत—अथ बस्तुनिर्देस। संवत सहस सात सततीस। कार्तिक मास सुकल पक्ष दीस भयौ ग्रंथ पूरन सुभ थान। नग्र आगरौ महा प्रधान। ६१। दान मान गुन मान सुजान दिन २ बाढ़ौ हिम्मत पान। जुगुत राइ कवि यह जस गायौ। पढ़त सुनत सब ही मन भायौ। ६२। जो कछु चूक मोहिते होई। सो अपराध छमौ सब कोई। बिनती सबकी करौ अपार। पंडित गुन जन लेइ सुधार। ६३। ऐते श्री जुगत राइ विरंचिते छंद रत्नावली तुक भेद सप्तमोध्याय। ७। ईते छंद रत्नावली समाप्तं॥ सम्पूर्ण॥ मिती अगहन सुदी २ संवत १९०८ शुभं मस्तु श्री रस्तू।

विषय—पिंगल।

संख्या १७८ ए. अखरावट, रचयिता—कबीरदास (काशी), पत्र—५०, आकार—१० × ७½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७४ = १८१७ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० भगवतीप्रसाद शर्मा, ग्राम—बरतरा, डाकघर—कोटला, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः श्री ग्रन्थ अखरावती लिष्यते॥ दोहा॥ सत्य नाम निज सार है। सत गुरु कै उपदेश। सुनदु संत सत भावते। यहै मुक्ति संदेश॥ सोरठा॥ काग कुमति गति परि हरो। नाम सनेही होय। हंस होय सत गुरु मिलै। कुलका क्रम सव खोय॥

अंत—विनु अक्षर सब झूठ है। नहिं अक्षर मांहि समाय। अक्षर भेद जो पावही। सो हंसा मा जग होय॥ सोरठा॥ कहै कबीर गुरु नाहि। संत वचन प्रतीत करु। गहु हंस राज की वाह। निश्चै जग भौजल तरे॥ इति श्री अपरावति ग्रन्थ सम्पूर्णम् श्री मुख वानी जो प्रति देखा सो लिखा मम दोषो न दीयते॥ संवत॥ १८७४ साल में लिखा साधू सन्त दास ने।

विषय—शब्द माहात्म्य, नाम माहात्म्य, आत्म निरूपण तथा ब्रह्म ज्ञान आदि का वर्णन।

संख्या १७८ बी. अखरावती, रचयिता—कबीरदास (काशी), पत्र—५०,

आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४०, रूप–प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—रेवतीराम, ग्राम—सनकुता,डाकघर—आगरा, जिला–आगरा।

आदि–अंत—१७८ ए के समान।

संख्या १७८ सी. अखरावती, रचयिता—कबीरदास (काशी), पत्र—४८, आकार—६ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० चंद्रशेखर तिवारी, स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि-अंत—१७८ ए के समान।

संख्या १७८ डी. कबीर बीजक, रचयिता—कबीरदास, कागज—बाँसी, पत्र—२९४, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—८८२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८५=१८२४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० दाताराम महंत श्रीकबीर जी की शाला, ग्राम—मेवली, डाकघर—जगनेर, तह०—खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि–कबीर गुंसाई की दया। साधु गुरू की दया। श्री गुरवें नमः। अथ रमैनी लिष्यते। अन्तर जोत सब्द एक नारी हरि ब्रह्मा ताके त्रिपुरारी। तेहि तिरिया भग लिंग अनन्ता। तेहु न जाय नल आदि अस अन्ता। वाखरि येक विधैता कीन्हों। चौहद ठौरि पाटि सो लीन्हों। हरि हर ब्रह्मा महंतों नाऊँ। तेई पुनि तीनि बसाव लगाऊँ।

अंत—कहिये काह कहा नहिं माना। दास कवीर सोई पहिचाना। बहते कौ जिनि बहन दे। गरि पकिरा जो ठौर। कहा सुना माने नहीं। देऊ धका एहु ओर। विप्र मतीसी संपूर्ण। संवत। १८८५। कातिक मासा। कृश्न पक्ष। एकादसी। सोमवार। बीजक समपूरणं समासं। श्री गुरवें नमः

विषय—इसमें ब्रह्म, विद्या, माया और जीव विषयक कबीर साहब के भजन हैं।

संख्या १७८ ई. बीजक रमैनी, रचयिता—कबीरदास (काशी), पत्र—३०२, आकार—६¾ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० वेदनिधि जी चतुर्वेदी, स्थान—पारना, डाकघर—पारना, जिला—आगरा।

आदि—लिषते बीजक रमैनी। जीव रूप इक अंतर वासा, अन्तर जोति कीन्ह परगासा। इक्षा रुप नारि अवतारी, तासु नाम गायत्री धरी। तेहि नारि के पुत्र तीन भएऊ ब्रह्मा विष्णु महेश्वर नाऊ। तब ब्रह्मे पूछत महतारी कै, तोर पुरुष कैकर तोह नारी। हम तुम तुम हम और न कोई, तुमहि से पुर्ष हमहि तोर जोइ। सापी। वाप पूत कै एकै नारी एकै माय बिआये। ऐसा पूत सपूत न देषा जो बापहि चीन्हें धाए। १।

अंत—देषी सव कोउ कहत है अनदेषी कहै न कोइ। अनदेषी सोई कहै जो भीतर बैठा होइ। चिरिआ तो तिल भर नहीं देना नौहे हाथ। वकुटा भरि मास परोसौ पलरि

अनरह हाथ। चिऊंटी निकली हाट मैं नौ मन कज्जल लाइ। हाथी लीहिस गोद मैं ऊँट लिहिस लटकाए। तीनि लोक लीटी भया गोधर नीऐ मंडराऐ। मैं तोहि पूछौं पंडिता कौन वृक्ष चढ़ि धाये। आंगन बेलि अकास फला, अन ब्यानी का दूध ससा सिंघ को धनुष करि बांझ पूत को सूध। इति बीजक साषी संपूरणम्।

विषय—साखी, चेतावनी, कहरा, शब्द तथा विरहुली द्वारा ईश्वर, जीव और माया का वर्णन।

संख्या १७८ एफ. बीजक रमैनी, रचयिता—कबीरदास, पत्र—१४६, आकार—७ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०७ = १८५० ई०, प्राप्तिस्थान—मुंशी शिवनारायण श्रीवास्तव, स्थान—धौलपुर, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि-अंत—१७८ ई के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—इति श्रीबीजक सम्पूर्णम् संवत १९०७ चैत सुदी दौज॥

संख्या १७८ जी. दत्तात्रय की गोष्ठी, रचयिता—कबीरदास, पत्र—६०, आकार—८½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—६००, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० बैजनाथ ब्रह्मभट्ट, ग्राम—अमौसी, डाकघर—विजनौर, जिला—लखनऊ।

आदि—सत नाम कबीर साहब की दया सूं लिषितं ग्रन्थ दत्तात्रय की गोष्ठी समथै जोगी जोग कहत हैं॥ साधे कहत हैं साये॥ इन दोनों में थिर रहै॥ जाके मते अगाधे॥ समेनी॥ हिंगर लाज ते काशी आये। ज्ञान हेत कोई संत न पाये॥

अंत—रमैनी॥ दत्ता त्रेई मन मातौ उपावा॥ देह धारि अवनीस आवा॥ तुम ही हौ हमरे अविनासी। तुम ही काटी जम की फाँसी॥ जेहि कारण हम भयौ सन्यासी। जेहि कारन मैं वन खंड वासी॥ जेहि कारन हम भेष बनावा। जेहि कारन हम ध्यान लगावा॥ जेहि कारन हम जप तप कीन्हा। जेहि कारन हम भये अधीना॥ जेहि कारन हम तीर्थ अन्हाये। जेहि कारन हम काशी आये॥ जेहि कारन हम साधु मनाए। साध ध्यान ते साहिब पाए॥

विषय—दत्तात्रय और कबीर का संवाद।

संख्या १७८ एच. वशिष्ठ गोष्टी, रचयिता—कबीरदास (काशी), पत्र—१०, आकार—७½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० दालचंद जी अध्यापक, ग्राम—खांड़ा, डाकघर—बरहन, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशायनमः। श्री गुरुभ्यो नमः। सत गुरू कवीर की दया। धर्मदास की दया। लिष्यते वशिष्ठ श्रेष्ठ। राय बंकेज सुनो उपदेसा। कर्म जीव काल के भेसा। गुरु वशिष्ट वृषन के मांही। गुसाइ को म काल जग नेहा। गुरू वशिष्ट रिषन के राउ। मोसे दोले सत्य सुभाउ। मोसो सवद धरो जिन भोई। कैसे मुकत जीव की होई। निवसार पाय

के अस्थाना। मोसोहु सवद कहो निरवाना। रामचंद्र को कौन बन कराउ, ताके प्रभु तुम गुरू कहाउ। कौन मंत्र तुम ताहि सुनायो। दोहरा। बेटा हे महमंत के राचे अपने रंग। परमानंद से गुरू करे करि काल सुजंग। भगत दिलावर उपजी ल्याये रामानंद। सप्त दीप नव षंड में परगट करी कवीर।

अंत—जीवत सुम्मेरनु जो चितु लावै। जम औघट नही तिहि बजउवे। जो फर लिषै जीवन कर पाना, सो सुमिरन है अधर अमाना। दोहा—सुमिरन पांच अणंम है सुमिरन लगन पचीस। पांचं तत्तुक पिंड है तामंही सब दीस।

सत गुर कवीर की दया। इति कथा वशिष्ट गोष्ट संपूर्ण समापता। सत गुर कबीर धनी धरमदास की दया। श्री राम जी।

विषय—जीव, माया तथा ब्रह्म और शब्दादि का वर्णन।

संख्या १७८ आई. कबीर साहिब और गोरख की गोष्टी, रचयिता—कबीरदास (काशी), आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—९०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री वासुदेव हकीम वैद्य, ग्राम—बसई, तह०—खेरागढ़, डाकघर—तांतपुर, जिला—आगरा।

आदि—सन्त नाम सन्त सुकृति आदि अलली अजर अचिंत पुर्समुनीन्द्र करुनामय कबीर साहिब और गोरख की गोष्टी लिख्यते॥ गोरप वचन॥ कौन देश कौन दरवेषा। कौन गुरू ने मुडे केसा॥ कौन पुर्स को सुमरो नामा। कौन शब्द से मांगा गाया। कवीर वचन। अब दिल दरीयाव मन दरवेसा। ज्ञान गुरूने मुंडे केसा। अलष पुर्ष का सुमिरौं नामा। गुरु का सब्द लै मांगौ गामा। गोरप वचनं। स्वामि कौन साछरि कौनसा पानि। मुडे गुरूने कौन की बानी। कबीर वचन। अनुध अनंछुरीनि रंजन पानि॥ गुरू मुडे अनहद की बानी।

अंत—कबीर वचन—सिधा अंतन धरती मंडा न अकास। चार दिशा चारपुरी। जीव को कहा निकास। चन्द्र सूरज दोय कान। गोली मात्रा आनु को, सन्त गुरू की आन। गोरख बचन—स्वामि धरती तो हांहि भई, परई भई अकास। तीन लोक ईंधन भये हम सन्त पुर्सके पास॥ टोपी कोपीन कुरबो। गोलि कंडा हाथ। जी तीस सत कबीर। उत्तर दीनी गोरपनाथ। कबीर गोरष की गोष्ठी सम्पूर्ण।

विषय—कबीर और गोरष का आध्यात्मिक वाद विवाद।

संख्या १७८ जे. झूलना, रचयिता—कबीर दास (काशी), पत्र—५, आकार—८ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—९०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० बाँकेलाल शर्मा, स्थान—हुँडावाला, फिरोजाबाद; डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—कबीर सत झूलना। तषत बना हाड़ चाम का बेंदाना पानी को भागलगामता है। मलिमंत करे लोर मास वेठ आप आपकों अंस बंटाउता है। नाद विंदके बीच किल्लोर करें सो तो आत्मा राम कहलाउता है। अस्थान इही कही ढूढ़ते हो दया देष कबीर

बताउता है । १ । कादर करीम रहम कीया घट षोलि के वाजी नटलाई । षाष वाद आव आतस में आप सना सब घट वना षाएक ताई । घट पटमें वेद वेदान ब्ढ़ा कर तार झूला आई दुचिताई । दुप दुंद अपार अधर कहा सब भूलि परे नहीं सुधि पाई । दया दान दोज का दुष मिटा काँइम कबीर की रोसनाई । १ ।

अंत—लोमस रुसी के स्रापसें जी देषो विप्रसें हो गये कँक्वरे । कपिल मुनि कलपना रहया जीतिन भी सागर के पुत्र जारे । वसिष्ट अविद्या को नास किया देपो पुत्रकी पीरते भी पुकारे । सनकादि को बैराग दोस नाहीं कवीर कहै इजे विजै टारे ।

विषय—निर्गुण उपदेश संबंधी झूलने ।

संख्या १७८ के. झूलना, रचयिता—कबीरदास (काशी), पत्र—७७, आकार—६½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८५, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० बैजनाथ ब्रह्मभट्ट, ग्राम—अमौसी, डाकघर—विजनौर, जिला—लखनऊ ।

आदि—सत नाम । सत सुकृत आदि अदति अजर अचिन्त्य पुरुष । मुनिन्द करुना मय कवीर जोग सतामन धनी धर्मदास चूरामनी नाम सुदर्शन नाम कुलफति नाम प्रमोद, गुरूवाला पीर कमाल नाम अमोल नाम श्रुति सनेही नाम साहेव हक नाम साहेव वेस बियालीस की दया से लिख्यते ग्रंथ झूलना ॥ गुरु प्रेम को अंक पढ़ाये दियौ तब पढ़िवे को कुछ नहिं वाकी ॥ वावन से तीर जराय दियौं पेट पोलि महल मैं देई झांकी ॥ चारि वेद तख्त आस पास वने हैं सुसम वेद आसन जाकी ॥ १ ॥

अंत—अधर आसन की ये वंक प्याला पीये जोग जुगित पाये पंथ न्यारा ॥ पंथ वीच ली गये सहर वे मगपरी देव की दृष्टि तहाँ सहज ॥ आइ ध्यान धरि पेपो ये नैन विनु देषिये ॥ अगम अगाध सव कहत जाई ॥ कहै कवीर कोइ भेद विरला लहै गहै सो कहै यह भेद भाइ । × ×

विषय—निर्गुण उपदेश संबंधी झूलने ।

संख्या १७८ एल. ज्ञान स्थित ग्रंथ, रचयिता—कबीरदास (काशी), पत्र—७०, आकार—७ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—७४८, रूप—प्राचीन, लिपि नागरी, लिपिकाल—सं० १८७४ = १८१४ ई०, प्राप्तिस्थान—मुंशी शिवनारायण श्रीवास्तव, स्थान—धौलपुर, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—जय श्री सत गुरुजी की दया । लिख्यते ग्रंथ ज्ञान स्थिति ॥ चौपाई ॥ आदि वचन मैं कहौं विचारी । सुनो धर्म दास यह कथा अपारी ॥ यह तो कथा बहुत अवगाहा । ग्यान गम्य जाको नहिं थाहा ॥ वहुत ग्रन्थ कहा वहु बानी । याको गाम्य सुजन वहु जानी ॥ यह गम्य काहू जान न पावा । सो धर्म दास मैं तुम्हैं जनावा ॥ ज्ञान स्थिति मैं कहौं वखानी । जाते विनसै भय की खानी ॥ ज्ञान स्थिति विनु मुगति न पैहौ । देह छुटे घरले हर जैहो ॥

अंत—आदि ब्रह्म को जाय जगाया । मनौ काम ब्रह्म तर लाया ॥ गुप्त नाम पूरुष

तव भाषा। तीनि भाव ब्रह्म करि राखा ।। आदि आलय कै माथ जो दीन्हा । पुरुष लै कै नरियर कीन्हा ॥ × × × कोटि ग्रन्थ कल्पांतर । धर्मन कह्यौ पुकार । ज्ञान स्थिति भंडार दै । आदि पुरुष को सार ॥ इति श्री ज्ञान स्थिति ग्रन्थ सम्पूर्णम् शुभ मस्तु ॥ मिती माघ सुदी ६ संवत् १८७४ विक्रमी ॥ जय श्री सत गुरु की ॥

विषय—संतमतानुसार ज्ञानोपदेश ।

संख्या १७८ एम. ज्ञानस्थित ग्रंथ, रचयिता—कबीरदास, पत्र—१३६, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—७२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७० = १८१३ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री तिलकचंद महाबीर प्रसाद, ग्राम—कोरियानी, डाकघर—गोसाईंगंज, जिला—लखनऊ ।

आदि-अंत—१७८ एल के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति ज्ञान स्थिति ग्रन्थ सम्पूर्ण समाप्तः संवत् १८७० वि० ॥

संख्या १७८ एन. कबीर जी का पद, रचयिता—कबीरदास (काशी), पत्र—३०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—५४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२००८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १६९६ = १६३९ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा हरिहरदास, ग्राम—छर्रा, डाकघर—छर्रा, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री रामजी सति हैं कबीर जी का पद लिख्यते ॥ राग गौड़ी—दुलहिन गावो मंगल चार हम घर आये राम भरतार ॥ टेक तन रत करि मैं मन रत करि हौं पंच तत्त बरियाती । रामदेव मोरे पहुना आये मैं जोवन मै माती ॥ सरीर सरोवर वेदी करिहौं ब्रह्मा वेद विचार । राम देव संगि भांवर लैंहौ धन सो भाग हमार ।। सुर तैतोसौं कौतिग आये मुनिवर कोटि अठ्यासी । कहैं कवीर हम व्याहि चले हैं पुरिष एक अविनाशी ॥

अंत—हज कावे ह्वै ह्वै गया केती वेर कवीर । मेरा मुझ में क्या खता मुखना बोलै पीर ॥ कवीर सेष सवूरी वाहिरां क्या हज कावे जाइ । जिसका दिल सावित नहीं तिसकूं कहा खुदाइ ॥ इति कवीर जी की पद साखी समाप्तः लिखतं केशो दास संवत्१७१० आसाढ़ पूनो कृष्ण पक्ष आसाढ़ श्री राम सति है ॥

विषय—कबीर जी के पद ज्ञान संबंधी ।

संख्या १७८ ओ. रमेनी, रचयिता—कबीरदास, पत्र—१०, आकार—८ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाँके लाल जी शर्मा, स्थान—हुंडावाला, फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—अथ रमेनी लिख्यते । काम वानते सब अकुलाते । अब सुन लेहु क्रोध की बातें । काम ते क्रोध अधिक पर चंडा । ताके उर त्रासें, नोऊ षंडा । कूकरि कुवुधि क्रोध के संग विना विवेक मिटै नहीं आंग। जबही उर में प्रगटे आई । कंपे देह थरथरें पाई ।

अंत—वृक्ष एक जु लगा अकासा, नहीं फुल फले न वाके पासा विनु जड़ मूल रहे वह ठाढ़ा, तिहि तर हाट राम की लागा । लोग दुनी सब सोदे आया, सुप थोरा दुख बहुत

विकाया। कबीर पाप पुनि को वनिजाउ। घटि उघटि सबु देइ। लोगनि लोग सब ठगोरी सरत विसाइन लेइ।

विषय—कबीर के उपदेश संबंधी पद।

संख्या १७८ पी. रेखता, रचयिता—कबीरदास (काशी), पत्र—२०, आकार—८×५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाँकेलाल शर्मा, ग्राम—हुंडावाला, फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—अथ रेषता लिष्यते। गुरू देवकी नारि सोतो हरि लई चंद्रमा कोता कुवारे संजोग कीना। परासर गमन वुआसों जो कीया। तब गंग में कोप मंछोदरी स्राप दीना। अहिल्या ब्राह्मणी छल कियो इंद्र पति कृष्ण गोपिन के रंग भीना। सुग्रीव की नारि सो तो छींड़ि लई वालि ने पाप और पुन्य दोऊ घोर पीना। कहै कबीर ए देव सब अन्यायी इनो को कह्या सब सृष्टि कीना। सांच और झूठ की तान कैसे मिले रैनि और द्योस का फरक भारी।

अंत—कहैं अली अल्लाह बिल्कुल है कोई अल्लाह जुदा गावै। कोई कहै कर्म कर्तार परधान हे कोई निर्गुन निराकार धावै। कोई कहै जानकी कंथ करतार है कोई लाड़िली लालै मनावै। सतिराम आसिक कबीर के इस्म पै दुसराइ संमन में न आवै।

विषय—ज्ञानोपदेश संबंधी कुछ रेखतों का संग्रह।

संख्या १७८ क्यू. साधु महातम, रचयिता—कबीरदास, पत्र—५६, आकार—६×४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—७००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—कुंजीलाल भट्ट, ग्राम—औंड़ेला, डाकघर—किरावली, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। अथ साधु महातम को अंग। साधू आवत देषि कैं लीजै कंठ लगाइ। ना जांनू या भेप में साहिब ही मिलि जाइ। साधू आवत देषि के मिलियौ मस्तिक मोरि। मानौं तीर्थ सब किये न्हाये गंग झकोरि। साधू आवत देष कैं हंसी हमारी देह। माथे के ग्रह ऊतरे नैननु बढ़े सनेह।

अंत—हम तौ पंथी पंथ फिर, हस्यौ चरैगो कौं न। कबीर नाव जर जटी कूढा खेवनहार। हलुके हलुके तिर गये बूढ़े जिन सिर भार। या पुर पहन राउ है पाच चोर दस डार। जम राजा गढ़ तोरसी, सुमिरि लेहु करतार।

विषय—संत मतानुसार ज्ञानोपदेश।

संख्या १७८ आर. सुरतिशब्द संवाद, रचयिता—कबीरदास (काशी), पत्र—८, आकार—९×४¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२८, रूप—नवीन, लिपि—फारसी। प्राप्तिस्थान—पं० बैजनाथ ब्रह्मभट्ट, ग्राम—अमौसी, डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ।

आदि—सत नाम । श्रुति शब्द सम्वाद लिख्यते ॥ शिष्योवाचः ॥ साखी ॥ ज्ञान भेख दो रूप है नरायन करूँ सुनाय । निर गुण सर गुण वहु विधि परख भेद समझाय ॥ गुरुवाचः ॥ मन की सोभा ज्ञान है । तन की सोभा भेष । साहव एक मन समझिये । चहुं जग ऐसा रेष ॥ प्रथमें जगमें गुरु वड़े । जिन दीन्हा यह भेष । फिर पीछे उपदेश है । तन मन भयो अशेष ॥ त्रिदेव से जो भये । आदि अंत सब कोय । मुक्ति होय यक ज्ञान से । तन मन साँचा जोय ॥

अंत—॥ सोरठा ॥ मिटे करम को अंक । जव सत्य नाम धाय है । तव जीव होय निसंग । सत्य वचन सत गुरु कहैं ॥ विना नाम धर खाय कोई । जम से वाचा नाहिं । तिनको देषि डरायँ । जो जन विरही नाम के ॥ कोई एक सूरा जिव जी ऐंसे करनी करे । ताहि मिलैंगे पिउ । कहैं कवीर पुकार के । इति श्री सुरति शब्द सम्वाद संपूरणम् ।

विषय—सुरति शब्द संवाद वर्णन ।

संख्या १७८ एस. कबीर सुरतियोग, रचयिता—कबीरदास (काशी), पत्र—२१, आकार–८ × ६$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री दुर्गादास साधु, ग्राम—हाजीगुर्ज, डाकघर—नगराम पूरब, जिला—लखनऊ ।

आदि—आदि अदिली अजर अचिंत पुरिस पुरंदर करुना मय कवीर सुरति योग सतायानि गुरु धनी तौ धर्म दास ॥ धर्म दास का वचन ॥ चौपाई ॥ धर्म दास चरनन सिर नावा । दोउ कर जोरि विनय दृढ़ि लावा ॥ द्वापर माहिं युधिष्ठिर राजा । कैसे कीन यज्ञ कर साजा ॥ तिनके कर्म कटे की नाहीं । श्री कृष्ण की सेवा करहीं ॥

अंत—पाण्डव केर कीन्ह अपमान् । और भक्त की चतुर सुजान ॥ मम बूझौ धर्मन अस वाता । तुम सम और कोऊ नहीं ज्ञाता ॥ दोहा ॥ कृष्ण केर परसंग अति । बूझे हंस हमार । कहै कवीर धर्म दास सों । पहुँचै लोक मँझार ॥ इत्यलम् ॥

विषय—कृष्ण युधिष्ठिर के संवाद में ज्ञानोपदेश ।

संख्या १७८ टी. कबीर के वचन, रचयिता—कबीरदास, पत्र—२६, आकार—८ × ५$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० जवाहरलाल जी, ग्राम और डाकघर—आदत नगर, जिला—आगरा ।

आदि—कवीर सतिः—झूलनाः—तषत वना हाड़ चाम कावें दाना पानी कों भाग लगाम ताहे । मलमंत्त करे तोहू मास बढ़े आप आप को अंस बटाउता है । नाद विंद के बीच किलोल करै सो तो आत्माराम कह लाउता है । अस्थान इही कहा ढूढते हों दया देष कँवीर बताऊता है । १ ।

अंत—छप्पै—चौरासी में निष्ट भक्ष कूरम ओतारा । तिनहू ते वाराह तासु विष्टा सु अहारा । नर सिंहो वराह भक्षे दोऊ पक्ष मेटें । व्राह्मन क्षत्री वैस सूद्र किंने कोऊ भेटें ।

कबीर चतुर ए हीन कुल इन ते नीच न कोइ है। जो वरण भेद भगवान के तोरन मद्धे क्यों होइ है। छप्पै छंदम सम्पूर्णम्।

विषय—ईश्वर की सत्ता, भक्ति तथा आत्मोपदेश।

संख्या १७८ यू. कुरम्हावली, रचयिता—कबीरदास (काशी), पत्र—५०, आकार—८½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० बैजनाथ भट्ट, ग्राम—अमौसी, डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ।

आदि—सत नाम। सत सुकृत आदि अदली अजर अचिंत्य पूरन मुनीन्द्र करुणामय कबीर सुरत जोग संताएन धनी धर्म दास की दया चूरामनी नाम कुल पत नाम प्रमोध गुरु वाला पीर कवल नाम अमोल नाम सुरत सनेही साहव वस प्रताप की दया सों लिष्यते ग्रन्थ कुम्हावली ॥

अंत—॥ साषी ॥ सक सुरत एकै भयो। तव को टोरै आऐ। काके झोरै टूटि है। सो कोई देव वताए ॥ चौपाई ॥ ग्रन्थ कहेउ कुम्ह वलिसारा। पहुँचै हंस पुर्स दरबारा ॥ समझ विचार ज्ञान मत संता। रह नीर है सोई मत वंता ॥ इति श्री ग्रन्थ कुम्हावली संपूर्ण ॥

विषय—संतमतानुसार ज्ञानोपदेश।

संख्या १७८ व्ही. स्वांस गुंजार, रचयिता—कबीरदास (काशी), पत्र—२५४, आकार—८½ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० बैजनाथ ब्रह्मभट्ट, ग्राम—अमौसी, डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ।

आदि—सत नाम—सत सुक्रति आनंद अदली अजर अचिंत्य पुरुष मुनिवर करुणा मय कवीर सुरत जोग संतापन धनी धर्मदास चूरामनी नाम सुदरसन नाम कुलपत नाम प्रमोध गुरु वाला पीर कवँल नाम अमोल नाम सुरत सनेही साहव वंस प्रताप की दया सो लिष्यते श्री ग्रन्थ स्वाँस गुंजार ॥ सतनाम सुक्रति गुन गाऊं ॥ अविचल पाँय अभय पद पाऊं ॥ जासों रहत अमर पुर गऐऊ। सील रूप सवही के भएऊ ॥

अंत—सत सुक्रति के वाहेर ॥ जो चितवै कर जोरी डीठ ॥ ताजन भोरो चौहटै ॥ गुन गार की पीठ ॥ जी आ कहौ तौ जग तरै ॥ प्रगट कही नहिं जाय ॥ प्रवाना लेहौ हौं धर्मदास ॥ राखहुँ सिरहि चढ़ाय ॥ हंस तुम जिन डरपसि मोरी प्रतीत ॥ सात दीप नौ खंड मैं लै जै है भव जल जीत ॥ ऐते श्री ग्रन्थ स्वास गुंजार संपूर्ण ॥ सुभ मस्तु समाप्त ॥

विषय—श्वास संबंधी ज्ञानोपदेश।

संख्या १७९ ए. कृष्णक्रीड़ा, रचयिता—कालिकाचरण, कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२० = १८६३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० दुलारेलाल, ग्राम—फतेहपुर, डाकघर—बाँगरमऊ, जिला—उन्नाव।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ कृष्ण क्रीड़ा लिख्यते ॥ बसंत तिलक छन्द—मातंग मौलि मन होमि किरीट भारी। श्री खंड खौरि शशि वदन बुंध धारी ॥ अंभोज अग्निरज विध्न समूह हारी। जै वक्र तुण्ड जन मंगल मोद कारी ॥ विद्या विवाह श्रुति नारद विलास लोके। विरची वीना विचित्र कर पुस्तक जुक्त कीन्हे ॥ चन्द्र प्रभा वसन भूषण भूरि गाता। हरिधर हर धर धरनि धर श्रुति विहीन। सहस वदन वंदौ पदन प्रभु गुन वदन प्रवीन ॥ कवि कोविद सुर असुर नर सकल वंदि कर जोरि। करौ कृष्ण क्रीड़ा कथन बुधि विवेक रस वोरि ॥

अंत—वार न टेर सुनी जबही तब कीन्हीं न देर न लीन्हीं सवारी। भूप सुता हित चीर वने दुर वासा की साप गरे गहि डारी ॥ फेरि लये गुरु वालक ज्यों अरु मीत सुदामा की प्रीति संभारी। कालिका चरन कृपा करिके हरि तैसे हरो हिय पीर हमारी ॥ ५ ॥

इति श्री कालिका चर्न कृते कृष्ण क्रीड़ा नाम ग्रन्थ समाप्तं संवत् १६२० वि० जेष्ठ शुक्ला ११ ग्यारस ॥

विषय—इस ग्रन्थ में श्री कृष्ण जी की लीला और उनकी महिमा कवित्त, सवैया, दोहा आदि छंदों में वर्णन की है।

संख्या १७९ बी. कृष्ण क्रीड़ा, रचयिता—कालिका चरन, कागज—देशी, पत्र—३०, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—८९४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९११ = १८५४ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० अजमेरसिंह, ग्राम—नगरा रामू, डाकघर—सरार अगत, जिला—एटा।

आदि-अंत—१७९ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री कालिका चर्न कृते कृष्ण क्रीड़ा नाम ग्रन्थ संपूर्ण समाप्तः संवत् १९११ वि० राम राम राम श्री गणपताय नमः ॥

संख्या १८०. नरक के पापी, रचयिता—काली प्रसन्न, कागज—देशी, पत्र—६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—ठाकुर विश्रामसिंह, ग्राम—राहीपुर, डाकघर—बारह-द्वारी, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ ब्रह्मवै वर्त पुराण के नरक और उनके पापियों के नाम लिख्यते ॥ कौन कौन पाप से मनुष्य कौन कौन नरक को पाता है ॥

नरक कुंड—	पापियों के नाम
१. वह्नि कुंड—	जो बांधवों को कटु वाक्य कहता है ॥
२. तप्त कुंड—	जो अतिथि को अन्नदान नहीं करता है ॥
३. क्षार कुंड—	निषिद्ध दिवस में जो रजक को वस्त्र धोने को देता है ॥
४. विट कुंड—	ब्रह्म के वृत्त का हरने वाला ॥
५. मूत्र कुंड—	पर तड़ाग खनित्वोत्सर्जक ॥

६. श्लेष्म कुंड—	एकाकी मिष्ट भोजी ॥
७. गर कुंड—	जो पिता माता का पालन नहीं करता है ॥
८. दूषिका कुंड—	अतिथि दर्शन से जो विरक्त होता है ॥
९. वसा कुंड—	विप्र अर्पित दान को पुनराय जो अन्य को दान करता है ॥
१०. शुक्र कुंड—	पर स्त्री गामी अथवा पर पुरुष गामिनी ॥
११. अस्टक कुंड—	गुरु जन का ताड़न कारी ॥

अंत—

१. शूल पीत कुंड—	शिव लिंग पूजन द्रोही ।
२. प्रकंपन कुंड—	विप्रों का दंड दाता व भय दिखाने हारा ॥
३. उल्का मुख कुंड—	स्वामी से कटु भाषिणी स्त्री ।
४. अकूप कुंड—	शूद्र भोग्या ब्राह्मणी ।
५. वेधन कुंड—	वेश्या ।
६. दंड ताड़न कुंड—	घुंगी ।
७. जाल बद्ध कुंड—	महा वेश्या (अष्टाधिक पुंगामिनी)
८. देह चूर्ण कुंड—	कुलटा ।
९. दलन कुंड—	स्वैरिणी ।
१०. शोषण कुंड—	पुंश्चली ।
११. कष कुंड—	सवर्ण पर पत्नी गामी ।
१२. सूर्य कुंड—	ब्राह्मणी गामी क्षत्रिय वैश्य ।
१३. ज्वाला मुख कुंड—	मिथ्या सपथ कारी, विश्वास घाती मिथ्या साक्षी ॥
१४. जिस्म कुंड—	नित्य क्रिया हीन कुत्सित उपहास कारी ॥
१५. धूमान्ध कुंड—	देव व विप्र धन हारी ।
१६. नाग वेष्टन कुंड—	जो ब्राह्मण वैश्य दैवैज्ञ वृत्ति ग्रहण अथवा लाक्षा लोह रसादि द्वारा वेंचकर जीविका निर्वाह करे ॥

इति श्री नरकों और पापियों के नाम संपूर्ण समाप्तः

विषय—ब्रह्मवैवर्त पुराण के अनुसार ८६ नरकों और उनके पापियों के नाम ॥

संख्या—१८१ ए. भृगुगण (गोत्र), रचयिता—कमलाकर भट्ट, कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—६ X ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्) १६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२६ = १८६९ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रामलाल, ग्राम—रती का नगला, डाकघर—हाथरस, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ भृगु गण गोत्र प्रवर लिख्यते ॥ भृगुगण कहते है ॥ आर्ष्टि षेण नैरथि ग्राम्यायण काणायन चांद्रायण पौठ कुलायण सिद्ध सुमनारायण योराभि रभिये वौधायना चार्य ने कहे हैं नैक शिर उपस्तम्बि भाल्वि कादम्वायनि गार्दभि

अनूप मात्स्य सूत्र में और भी कहे हैं। भृग्वन्दीय मार्ग पथ चटायिनि कवि आश्वायनि ये आर्ष्टिपण गण हैं और इनके प्रवर ये हैं कि भार्गव च्यावन आप्रवान आर्ष्टिषण अनूप ये जो वत्सगण और विद गण आर्ष्टिषेण गण हैं। इनका परस्पर विवाह नहीं होता है क्योंकि इनके दो तीन प्रवर तुल्य होने से यद्यपि तीन प्रवर वाले जो आर्ष्टिषेणगण हैं इनका ऐसा नहीं है तथापि वत्स गण विदगण अष्टि षेण गण इनका परस्पर विवाह नहीं होता है। ये पांच अवतिन है ऐसा मंजरी में वौधायनाचार्य के कहने से परस्पर विवाह नही होता है ॥

अंत—वत्स और पुरोधस के पांच प्रवर हैं। भार्गव, च्यावन, आप्रवान वात्स, पैरोधस ॥ इति ॥ वेजि वनि मथित इनके पांच प्रवर हैं इति प्रवर मंजिरीकार केन लिखने से मूल ढूँढ़ना चाहिये इसके अनंतर यस्क गण कहते हैं। यस्क मोन, मूक, वाद्ध॑ल, वर्ष मूष्य, भागलेप, राजि नायिन, भाग विग्रेय, दुर्गदंन भास्कर देवतायन वार्क लेप, माध्य मेय वासि कौशांबेय, कौविल्य सत्यकि, चित्र सेन, भास्क भागति, वार्कश्वीक शौस्थ्य ऊर्क चिति, भागुरि, अनूप, ये बोधायना चार्य ने कहा है वीन हव्य चराउपोदन जीवत्यायन मौसलि पिलि खलि भागुलि, भाग चिति, काश्यपि वालेपि समादा गेपि सौरि ज्वरि भागति सातुष्टि मदायनि मादायनि स्तोक प्रावरेय शार्क राक्षि कौटिल्य विलेभि वाल्हि हालय दीर्घ चित्त गौजिग वालोदर ये मात्स्य सूत्र में कहे हैं। माधुलोऽर्थ लाष्ट काश्महिः मदोकिः चारेय यं रिक्षित दैर्घ चितः पंचाल बः पारायवतः पाल्लावतः गोदायन इति ॥ भृगुगण गोत्र प्रवर समाप्तः लिखतं राम भरोषे पाठक संवत् १९२६ वि०।

विषय—भृगुगण के गोत्र प्रवर आदि वर्णन।

संख्या १८१ बी. गोत्रप्रवर प्रकाशिका, रचयिता—कमलाकर भट्ट, कागज—देशी, पत्र—६८, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६३२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२७ = १८६० ई०, प्राप्ति-स्थान—दुर्गाप्रसाद मिश्र, स्थान—एटा, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ गोत्रप्रवर प्रकाशिका श्री कमलाकर प्राचीन कविवर कृत लिख्यते ॥ श्रीपरमात्मने नमः ॥ अब गोत्र प्रवर लिखते हैं। कि समान गोत्र के निमित्त कन्यादान न पूंछे क्योंकि असमान प्रवर वालों के साथ विवाह करना चाहिये। ऐसा आपस्तंब व गौतमादि आचार्यों ने कहा है विवाह के कामों में समान गोत्र और समान प्रवर वाले वर्जित है। अब समान गोत्र क्या है उसको कहते है। प्रवर मंजरी संज्ञक पुस्तक में वौधायनाचार्य ने विश्वामित्र जमदग्नि भरद्वाज गौतम अत्रि वसिष्ठ कश्यप ये सात रिषी हैं अगस्त सहित आठ ऋषियों का पुत्र होना उसको गोत्र कहते है। उक्त रिषियों के जो रिषी रूप पुत्र पौत्रादि रूप है वे व्यतीत हुए और आगे होने हारे जो गोत्र हैं ऐसा कहा जाता है। भृगु जी के गण में मिलने से जमदग्नि के नाम से और अंगिरा के गण में अंतरगत होने से गौतम और भरद्वाज के नाम से गोत्र होना ठीक है ॥

अन्त—माता भगिनी के वरावर पर स्त्री को समझ के पर स्त्री गमन व गर्भ

दूषण न करै यह कश्यप और बौधायन जी का वचन है और जो चंडाली स्त्रियां हैं तिनके संग ज्ञान से गमन करै तो द्विगुण अज्ञान गमन से प्रायश्चित होय है अज्ञान से एक चन्द्रायण और ज्ञान से दो चन्द्रायण व्रत करै जो गुरू की स्त्री के गमन के समान प्रायश्चित है इससे ३ वर्ष व ६ वर्ष तक चन्द्रायण व्रत करै यह मिताक्षरा में लिखा है और स्मृत्यर्थ सार में भी लिखा है कि विवाह के योग्य जो सगोत्र की व संबंध की कन्या के संग गमन करै तो जितना गुरू की स्त्री के गमन में प्रायश्चित है उतना ही कन्या के गमन में भी होय है ॥ फिर चन्द्रायण आदि व्रत करके भोग छोड़की उसकी माता के समान रक्षा करै और कश्यप जी का वचन है कि अज्ञान से जो कन्या गमन करै तो तीन वार जन्म लेकर के और तीनों जन्मों में व्रत आदि करता जावे तो शुद्ध होवै और वेदान्ती की पतनी गमन में आचार्य की स्त्री गमन समान ही प्रायश्चित जानना चाहिये। इति श्री गोत्र प्रवर प्रकाशिका प्राचीन कविवर कमलाकर भट्ट कृत संपूर्ण । लिखा शिवनाथ सामन वदी अष्टमी संवत् १९२७ वि० ॥ जैरामजी की ॥

विषय—इस ग्रन्थ में ब्राह्मणों के गोत्र, प्रवर, शिखा और सूत्र आदि का वर्णन है।

संख्या १८२. दशमस्कन्ध भाषा, रचयिता—कनक सिंह, कागज—देशी, पत्र—२४९, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४७८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५५ = १७९८ ई०, प्राप्तिस्थान—रामनाथ वैद्य, डाकघर—सलेमपुर, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ पोथी दशमस्कन्ध भाषा कनक सिंह कायस्थ कृत लिख्यते ॥ श्लोक—शिव सुत उमया प्रम निवास एक दंत सुंडा हस्रत गजमुख तुदीयणत ईश ॥ चंदन धुंधर वदन शीश ललाट छवि दुनियां सीस ॥ मूसे वाहन भाल वईस। दूजें कर फरस हथियार तीजैं कर मोदक अहार। चौथे हाथ कमंडल नीर गले जनेऊ वास सरीर ॥ सुर तैतीस तणा अगवानू पुस्तिग सकल जु करै वखानू ॥ गज वदन सेंदुर चढ़न उदर सिन्धु बुधिपति मान। सुमिति संचन हर लच्छन इच्छा पूरन कामः ॥ कवि ॥ कनक सिंह विनवै वहु भाई ॥ टूटत अच्छर देहु वनाई ॥

अन्त—अरिल्ल—ऐसे प्रभु की कथा प्रीति करि जो सुनै। जनम सुफल सो मालि धन्य आपहिं गनैं ॥ कर्म सबै छुटि जाहि जु ताहि कर्महि गनै। परि हां प्रभु लीला अनुसारि जुता रूपहिं सनै ॥ कुंडलिया—निस वासर प्रभु की कथा प्रानी सुनै जु निरा। भवसागर को वह तिरै ह्वै हरि जू को मिरा ॥ ह्वै हरि जू को मित्त कीर्त्ति प्रगटै जु आपनी। तिनसे दुर दुख जाहिं अघन लागति है कपनी ॥ राज तजत नर देव राखि मन भव दुख को रिस। तप इच्छा चित धारि नींद नहिं निभै अहरि निस ॥ इति श्री भागवते महापुराणे दशम स्कन्धे भाषा कनक सिंह कायथ कृते संवत १८५५ आश्वनि मासे शुक्ल पक्षे तिथौ १२ रवि वासरे पुस्तक लिप कृतं पाठक व्रज लाल ॥ राम राम राम ॥

विषय—भागवत दशमस्कन्ध की भाषा टीका।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता कनक सिंह जाति के कायस्थ थे। निर्माणकाल का पता नहीं। लिपिकाल संवत् १८५५ विक्रमी है। कवि का वर्णन इस प्रकार लिखा है:—

कनक सिंह विनवै वहु भाई । टूटत अच्छर देहु वनाई ॥

संख्या १८३. रसरंग नायिका, रचयिता—कान्ह कवि वृन्दावन, कागज—देशी, पत्र—१३८, आकार—११ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८९, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८०४ = १७४७ ई०, लिपिकाल—सं० १८८१ = १८२४ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री अद्वैत चरण जी गोस्वामी घेरा श्री राधारमण जी, वृन्दावन ।

श्री राधा रमनो जयति अस रस रंग नाइका भेद कौ कान्ह कवि कृत लिख्यते ॥ छप्पय । येक दंत मति वंत संत संतत सुषदायक । कमल सुंड पर चारू मुंड पर चंद कलायक । अंकुसमस्तक हाथ साथ सिधि अष्टक विराजैं । लंबोदर मुनि ईसि सेस सुर असुर निवाजैं । भव भय विघन विनासक खानी अगम अपार तुव गण नायक जगदीश सुअ शुभ-दायक जै शंभु सुअ । १ । गिरजा नन सिंगार चारु रति मधि करुणामय । करयै मदन विध्वंस वीर वीवस्न अस्थि चय । अहि भूषण भय रूप तीनि लोचन अद्भुत कहि रुंड माल सिर जटा करण कुंडल जग मग अहि । सम निरषत संसार सब सांति करत कवि जन लदा । भस्म अंग सिर गंग जय नव रस मय श्रृंगार रस सबते विशेष । तामें नीकी नाइका वरणत चित अवरेषि । अथ नाइका लक्षन ॥ जाको रूप विलोकि कैं उपजतु है अति हेतु । सोई कहिये नाइका वरनत बुद्धि सुचेत ।

अन्त—जा दिन विछोह कै विदेस कौं पधारे तुम जादिन वियोग आगि वहु भूनि हैं । काहू न पिछानैं आषि आगै किन ठाढ़ी रहौं बूझत न बैन टेरौ कान पर रून हैं ॥ हलति न चलति न मुप ते कहति कछु दुष सुष एक करि षैंचि रही धून है । कान्ह चलि देषौ वाकै प्राण हैं कि नाहीं पंच वान तन कीनों पचवातन की तून है । दोहा । जाकी रचना देषिकै वाढ़ै प्रेम तरंग । मन में अति सुष पाइकै कियो कान्ह रंग । संमत धृति सत जुग वरष कान्हा सुकवि प्रसंग । क्वार सुदी तेरसि ससी रच्यो ग्रंथ रस रंग । इति श्री कान्ह कवि विरचितायां रस रंग नाइका भेद कौ संपूरण समाप्त ॥ संमत् ॥ १८८१ । मिती आषाढ़ सुदी रथ जात्रा सोमवार लिखी गुपाल राय श्री वृन्दावन ।

विषय—नायिका भेद ।

संख्या १८४. निज उपाय, रचयिता—करमअली, कागज—बांस का, पत्र—९४, आकार—६ × ३½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४५२, रूप—प्राचीन, पद्य गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सन् हिजरी १०९८, प्राप्तिस्थान—श्री वासुदेव वैद्य हकीम, ग्राम—बसाई, डाकघर—तांतपुर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । श्री रामाय नमः । श्री गोपालाय न्मः आदि सुमङ्ग अलष कुछोर महमद नाव । उनहीं कौ कलमा पढ़ु निस दिन आठो याम । मानस होगी करनैं, औषध रचै अपार । सीत रसित गरम पुनि, रक्ति को दीजौ भेद विचार । चार तत्व पैदा किये, आदम के मन मांहि । षाक अग्नि पानी पवन, सबसै मैं परछाहिं । षलताती मजू कहत हैं जाने होत बिगार । गर्मी तै पीत रक्त है, सीत पीव न कफ वार । षट रस है ससि सूर तै, ताकौ भाषत रीत ।

अन्त—मानस रोगी कारने, भाखै सुभग उपाय। कर्म अलि कीनो अही, निज गिरन्थ चित लाय। छाड़ि बहुत विस्तार को सूक्ष्म औषध लखिलीन। चूक कछू जो पाइये, लेव संवारि प्रवीन। सब वेदन विन्ती करी कर्म्म आलिमो कीन। दुख न धरौ या बात को, जो मैं अति बुध हीन। सन हजार अठानमे हुतो मद्दा सावन ग्रन्थ सम्पूर्ण॥ पौष मंगलवार तीतान (?) इति श्री निज उपाय ग्रन्थ सम्पूर्ण॥

विषय—प्रकृति वर्णन, पित्त कफ वात के लक्षण, खांसी, आंख, धुन्ध, फूली, परवाल, जाला, रतौंधी, नासूर माँस वृद्धि, कर्ण पीड़ा, कृमि रोग, मृगी, जुखाम, दन्त पीड़ा। सर्दी, हिचकी, संग्रहणी, पथरी, मूत्र बंध, अजीर्ण, अतिसार, कुष्ठ, रक्त विकार, सन्निपात, नख रोग, पेट वाय, सुदर्शन चूर्ण, जोगराज गुग्गुल चन्द्रप्रभावटी सर्व फोड़ादि के उपाय।

संख्या १८५. विड़द संगार, रचयिता—करणीदान चारण (जोधपुर), पत्र—२०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल - सं० १८२८ = १७७१ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर रामसिंह सिपाही, ग्राम—नारागांव झावर, डाकघर—छर्रा, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ विड़द संगार चारण करणी दान कृत लिख्यते॥ श्री गणपति सुर सति नमस्कार। दीजिये मुझे वर बुधि उदार॥ अव साण सिद्धि रह माण अंस। वाषाण करूं नृप भाण वंस॥ जिण तेज अरक जिमि छक जहूर। सुन्दर प्रवीण दातार सूर॥ छत्रपती अभी छत्र कुल छतीस। वहत्तर कला सुलक्षण वत्तीस॥ वर्णाश्रम धर्म मर्जाद वेद। भाषा षट नव रस अरथ भेद॥ आस रास मद थागण अथाग। रूपगाचत्र असी छत्तीस राग॥ जोहरी परख जिण विध जुहार। दश चार परष विद्या उदार॥ वर सकति पाय ताला विलंद। अग जीत सुतन नर लोक पंद। ससि वेस पहल तप वल सजेव। जालियो साहि अव रंग जेव॥ पर चंड चंड पर होम पाठ। अव ताहि दिये पत साहि आठ। साहिरा जोध जोता समंद। कटहड़ चढ़ण मल के कमंध॥ कील मारग मीर हेकमन है कीध। दई वाण पाण जम दाढ़ दीध॥ अव साह औधि देखे अताल। मह मंद साहि दिये मुकत माल॥ पति हुकमै मध फरा खान पेल। झोटिया थाट भुज भार झेल॥

अन्त—सरण ये बड़द मोषम सकाज। दई वाण अभा उमर दराज॥ जस करै येम दुणियाण जाय। महराण जे मगहरा समाय॥ दाव सिंघण वांका दुरंग। जी यसी अने नृप घणा जंग॥ गांव सिंघणा गुण छकड़ गांव। पाउ सिंघणा लाखा पसाव॥ खित गीत चत्र श्लोक खांति। भगवंत श्लोकी सत्य भांति॥ ईण मजउ उजासरो गुण अपार। सूरज प्रकाश रो तंत सार॥ कीरत प्रकास सुज राज काम। नृप ग्रन्थ वड्द संगार नाम॥ महाराज निवाज सुव छव मन। कविराज रीझ कहिये करन॥ जै पै असीस आयम जोड़ कायम राज नृप जुंगा क्रोड़॥ दूहा॥ अमर धर पाणी पवन सूरज चन्द सकाज। महाराज अभ माल रो रिधू यतां जुग राज॥ इति श्री ग्रन्थ विड़द संगार चारण करणी दान कृत संपूर्ण समाप्तः॥ लिखतं मेरू लाल गूजर गौड़ ब्राह्मण संवत् १८२८ वि० माघ मास शुक्ल पक्ष त्रियोदश्याम।

विषय—जोधपुर नरेश राजा अभय सिंह का प्रताप वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता चारण करणी दान थे जो महाराज अभय सिंह के समय में। अभय सिंह का राज्य काल संवत् १७८१ से संवत् १८०५ है। ग्रन्थ का लिपि काल संवत् १८२८ वि० है ।

संख्या १८६ ए. एकादशी महात्म्य, रचयिता—कर्तानन्द, पत्र—३५, आकार—१४½×८½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४९०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३२ = १७७५ ई०, लिपिकाल—सं० १९१८ = १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—सूर्यपाल जी, ग्राम—बड़ागाँव, डाकघर—कंतरी, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशायनमः । सीतारामभ्यो नमः । श्री गुरुचरण । कमलभ्यो नमः । श्री सरस्वतै नमः । श्री सुखदेव जी सहाइ नमः । अथ एकादशी महात्म्य लिषते । करतानंद उवाच । दोहा । सतगुरु वंदौ चरन रज । गुरु जी को प्रनाम । गुरू को सीस नवायकैं मांगौ एक हरि नाम ।१। व्यास पुत्र सुपदेवजी तुम रवि के वर ईस तिनहीं के परताप सौं पार करै जगदीस । २ । अपना कर चरण दास ही भक्ति दई अनुराग । जिनके दो सुत ही भई ज्ञान और वैराग । ३ । तिन तारे बहु जीव ही भवसागर के मांहि । गये पारसो पार ही तिनकी पकरी बांह । ४ । चरनदास के सिष्य जो सहजो वाई नाम । तिनके करतानंद ने हित कर पूजे पांइ । ५ । चौपाई । बंदौ वाई के वे चरना, भक्ति बढ़ावन ई तम हरणा । कर्त्तानंद कहैं कर जोरी, सुनो यह विनती मोरी । ६ । भवनिधि कठिन महा दुख दाई । ता तरिबे को कहो उपाई । श्री गुरू दया करो तुम येसे मातापुत्र पालि हैं जैसे । ७ । तुम सर्वग्या पर्म गुरू देवा, आदि अंतकौ जानौ भेवा । एक आदसी की कथा सुनावो, मो मनको संदेह मिटावो ।

अन्त—अठारह सै बतीसा कहियें । माघ मास तिथि नौमी लहिये । कर्तानंद की हीये आय बोले, गुपत प्रगट भेद सब खोले । सत गुरूआज्ञा मोकों दीनी संस्कृत सो भाषा कीनी । फरकाबाद नगर सो जाना नित कीजै गंगा असनाना । सव साधन कुं सीस नवाऊँ अपनी भूल चूक बक साऊँ । अधिर सुध असुद्ध जु होई लेहु सुधारि क्रपा करि सोई । कर्तानंद जथा मति गाई, व्रत एकादसी खोजि दिखाई । गुरू क्रपा करि सिर करि धरिया, ताते पोथी पूरन करिया । दोहा—धन्य २ सुखदेव जी धन्य चरन हो दास । तुमरी क्रपा पूरन भई, कर्तानंद की आस । छप्पै । धन्य २ श्री गुरूदेव भेद मोहि सवै बतावों, नाम भेद फल सकल ठीक हिरदे में आयौ । बार बार परनाम करूँ निज सीस नवाऊँ । करत रहों हों ध्यान नाम तुमरे गुण गाऊँ । इति श्री पदम पुराने एकादसी महात्मे वुधनी नाम वर्ननो चतुर्विसाध्याय । २४ । संवत् १९१८ मिती फागुन बदी ७ रोज भृगुवासरे । संपूर्ण । लिखनार्थी हरसुख सिंह ठाकुर । सुभअस्थाने । मौजे लछिमनपूर आयौ देखौं सो लिखौं निजवानी विस्तार । लिखते दोस मिटाइये श्री भगवान करैं उरधार । पठनार्थो रूपराम अजाची ब्राह्मन भ्राता मोती राम व धीर सिंह के छोटे भ्राता । श्री राम राम राम राम राम ।

विषय—वर्ष भर में पड़ने वाली एकादशियों की व्रत कथाओं का वर्णन ।

संख्या १८६ बी. एकादशी महात्म्य, रचयिता—कर्त्तानन्द (फरूखाबाद), पत्र—३८, आकार—१२¾ × ८¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२४७, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३२ = १७७५ ई०, लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—बनवारी लाल पुजारी बम्हन टोला मंदिर, ग्राम—समाई, डाकघर—एतमादपुर, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—१८६ ए के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री पद्मपुराने एकादसी मातम वोधनी नाम संपूर्ण संवत १९ सै मी साल अपवदिगुरवारे लिष्यते लालदास वैष्णव षेरी के छाया वलदेव जी देस अंतर वेदा जो देखा सो लिखो मम दोस न श्री महाराज चरन दासजी ।

संख्या १८६ सी. एकादशी महात्म्य, रचयिता—कर्त्तानन्द फरुखाबाद), पत्र—८०, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३२ = १७७५ ई०, प्राप्तिस्थान—रेवतीराम शर्मा, ग्राम—कंतरी, डाकघर—बाब, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—१८६ ए के समान ।

संख्या १८६ डी. एकादशी महात्म्य, रचयिता—कर्त्तानन्द (फरुखाबाद), पत्र—४०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२५०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३२ = १७७५ ई०, प्राप्तिस्थान—श्रीमान् पं० लक्ष्मीनारायण जी आयुर्वेदाचार्य, ग्राम—सैगई, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—१८६ ए के समान ।

संख्या १८७. ख्याल मरहठी, रचयिता—कासीगिरि 'बनारसी' (काशी), पत्र—६०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा हरिदास सरावल, डाकघर—गंज दुड़वारा, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ मरहठी ख्याल काशीगिरि वनारसी कृत लिख्यते ॥ लावनी ॥ हृदय में हैं हिंग लाज करैं काज लाज रखने वाली ॥ नयना देवी नयन में वसैं हंसै दै दै ताली ॥ सीस में सीता सती विराजै सावित्री संकटा रानी ॥ मस्तक में आय रहैं आय श्री महा विद्या औ महारानी ॥ भृगुटी में करै वास भैरवी भय मानै सब अभिमानी ॥ ब्रह्म में अपणे विराजे ब्रह्मा चल औ ब्रह्मानी ॥ बसै नासिका में नौ दुर्गा नगर कोट लाटों वाली ॥ नयना देवी० ॥ १ ॥

अंत—अकवरावाद के वीच मंडवी जिवनी की में मेरा धाम । हरि के भरोसे तहां में अहर निशा करता विश्राम ॥ राधा कृष्ण है नाम जहां लिखने काही करता निष्काम ॥

उदर हेतु ये यत्न करि मुख से करता रामहिं राम ॥ इसमें ही करता हूं गुजारा जो विधना ने दीने दाम ॥ इति श्री बनारसी काशी गिरि कृत ख्याल मरहठी संपूर्ण संवत् १९४० वि० ।

विषय—देवी जी, गंगा जी, आदि के अनेक ख्याल वर्णन ।

टिप्पणी—इस मरहठी ख्याल के रचयिता काशी गिरि बनारसी थे । इनका पता इस ग्रन्थ से पूरा पूरा नहीं चला । लिपि काल संवत् १९४० वि० है ।

संख्या १८८. भरतरी चरित्र, रचयिता—काशीनाथ, कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८८, रूप—स्वच्छ, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१६ = १८५९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामदत्त रायपुर, डाकघर—गोनमत, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ भरतरी चरित्र काशी नाथ कृत लिख्यते ॥ इन्द्र के नाती भये पुत्र गंधर्व सेन । भाई विकरमा जीत के मैना व्रती भैन ॥ चौ०—जा दिन जनमें हैं भरतरी राजा बाजे है तबला निशान ॥ हरे हरे गोवर मगांय के अंगना वेदी लिपाय । मोतियन चौक पुराय के कंचन कलस धराय ॥ सुघर सहेली बुलाय के गावैं मंगल चार । काशी से पंडित बुलवावती चंदन चौकी विछाय ॥ ब्रह्मा बांचै वेद को मुल्ला हर्फ किताब । नाम तो निकला भरतरी कर्म लिखा वाला जोग ॥ वांरू जारूं तेरे वेद को पुत्र दोष लगाय । कंचन देवों गी दच्छिना लौट धरौ इसका नाम ॥

अन्त—पुत्र कहे भिक्षा डारती लेजा रमते अतीत । लेके भिक्षा राजा रम चले आसन पड़ी भमूत ॥ धौरे मंदिर धौरे वाग में वोलन लागे करिया काग । धन्य घड़ी जामें जन्म लिया धन्य पुरुष तेरे पाग ॥ मेरी मेरी कहके रम गये रानी खड़ी रोवै द्वार । सांची वनी काया कोठरी झूंठा है जग संसार ॥ नदी किनारे रूखड़ा जब तब होय बिनास । मेरी मेरी कहि के रम गये अर्जुन जोधा से भीम । पड़ी रही झाड़ खंड में गढ़ कोटा की सी नीम ॥ जुग जुग जीवे मेरी नगरी चौपड़ लागे वाजार । वार से दूनी उजाड़ से मिल गये गुरू गोरख नाथ ॥ चेला बनाय ने बाबा आपना सेवा करूगा वनाय । धूनी तेरी हम करैं संग फिरै तेरे नाथ ॥ बोले बाबा गोरथ नाथ जी सुन वच्चा मेरी वात । तुझको चेला ना करैं तुम हो राजकुमार ॥ पान फूल के भोगिया ना सधे तुमसे जोग । पान फूल बाबा सब तजे सुनले गुरू गोरख नाथ ॥ छोड़ा ऊचे का बैठका छोड़ा भाइयों का साथ ॥ जोग बुरा जौहर भला आठ पहर संग्राम ॥ आठ पहर के बीच में जिसे राखैं भगवान ॥ चुटिया काट चेला किया कान दिये हैं फाड़ि । पीठ ठोंक दीनी गोरख नाथ जोग अमर हो जाय ॥ कलि अमर राजा भरतरी जी ॥ इति श्री काशी नाथ विरचिते भरतरी चरित्र संपूरणम् संवत् १९१६ वि० ॥

विषय—राजा भरथरी का जन्म लेना । ब्राह्मणों से भरथरी की माता का नाम करण करवाना और भविष्य पूछना । पंडितों का भरथरी को जोगी बताना । भरथरी का विद्या पढ़ना और उसकी चार वर्ष की आयु में माता का स्वर्गवास हो जाना । नवें वर्ष की आयु में अनूप देई से दसवें वर्ष की आयु में चंगादे से ग्यारहवें वर्ष की आयु में पिंगलादे से और बारहवें वर्ष की आयु में श्यामादे नारियों से विवाह करना तथा तेरह वर्ष की आयु से शिकार खेलना पश्चात् गुरू गोरख नाथ का चेला होकर जोग साधन करना ।

संख्या १८९ ए. चित्रचन्द्रिका, रचयिता—काशी राज (काशी), पत्र—४७५, आकार—७ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८८९ = १८३२ ई०, लिपिकाल—सं० १९३१ = १८७४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० बैजनाथ ब्रह्मभट्ट, ग्राम—अमौसी, डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ चित्रचन्द्रिका लिख्यते । छप्पै—वारण आनन सुभ भाल सिंदूर सुचर्चित । देव सिद्ध गंधर्व नाग किन्नर करि अर्चित ॥ एक दंत भुज चारि सुभग लंबोदर राजत । अष्ट सिद्धि नौ निद्धि विविध विधावर छाजत ॥ कवि काशिराज सुख पाइकै । चरण कमल में चित धन्यो । नाम लेत शिव पुत्र को । विघ्न सकल तत्क्षण तन्यो । टीका—यह मंगलाचरण है गणपति की स्तुती । ग्रन्थकर्त्ता करतु है । कैसे हैं गणपति गज वदन । उज्वल मस्तक में सिन्दूर लगाये हुए है पुनि देवता आदि दै कें पूजित हैं पुनि एक दांत चार भुज सुन्दर लम्बा उदर सोभित है पुनि आठ सिद्धि नव निद्धि अनेक प्रकार की जो विद्या रूपी जो वर हैं तिन करि कै सोहैं हैं । ऐसे जो गनि पति तिनके चरण कमल में कवि काशि राज सुख पाइके चित्त लगायो शिव पुत्र को नाम लेत ही सम्पूर्ण विघ्न तुरत ही दूर भये ॥ १ ॥

अन्त—कवित्त—कमल नयन वर अंग रुचि नीरद सी । पीत पट कहि राजै मुकुट मयूर पक्ष ॥ आकृत मकर कान कुंडल कलित मणि । मोती माल वन माल सोहै भृगु लात वक्ष ॥ अधर मधुर पर मुरली विराज मान । गोपिन के मध्य छाजै दक्षिण परम दक्ष ॥ चरण शरण आय कवि काशीराज ताके । चित्र चन्द्रिका जो ग्रन्थ कीन्हों जगमें समक्ष ॥ टीका—यह मंगलाचरण है ग्रन्थकर्त्ता कवि श्रीकृष्ण की स्तुति करै है कैसे है श्रीकृष्ण की कमल नयन वर नाम कमल ते श्रेष्ट हैं नेत्र जाके अंग रुचि नीरद सी नाम जाके अंग में शोभा मेघकी सी है । पीत पट कटि राजै नाम पीताम्बर कटि में राजै है । मुकुट मयूर पक्ष नाम जिनका मुकुट मयूर पंख की है आकृत मकर कान कुंडल कलित नाम जटित ऐसो है कुंडल कान में जाके मोती माल वनमाल सोहै भृगु लात वक्ष नाम मोती की माला अरु वनमाल और भृगु मुनि की लात जाके वक्ष नाम हृदय में सोहै है अधर मधुर पर मुरली विराज मान नाम जाके मधुर ओष्ट के ऊपर वांसुरी सोभाय मान है गोपिन के मध्य छाजै नाम गोपिन के वीच में सोभाय मान है दक्षिण नाम दक्षिण नायक हैं अरु परम दक्ष नाम परम चतुर है चरण शरण आय कवि काशिराज ताके तिन श्री कृष्ण के चरण शरण में आय करिके कवि काशीराज चित्रचंद्रिका जो यह ग्रन्थ है ताको कीन्हों है जगमें समक्ष नाम संसार में प्रत्यक्ष कीनो इति श्री मत् श्री लक्ष्मी नारायण चरण कमल प्रसादात् श्री कवि काशीराज विरचित चित्रचंद्रिका ग्रन्थ सम्पूर्ण तामियात् संवत् १९३१ वि०

विषय—

(१) पृ० १ से ३३ तक—मंगलाचरण । चित्र लक्षण । शाक चित्र लक्षण । वर्णा चित्र लक्षण । एकाक्षर लक्षण तथा अन्य वर्ण चित्र वर्णन [प्र० प्रकाश] ।

(२) पृ० ३४ से ५५ तक—द्वितीय प्रकास-स्थान चित्र वर्णन ।
(३) पृ० ५६ से ५९ तक—स्वर चित्र वर्णन [तृ० प्र०]
(४) पृ० ६० से ७३ तक—आकार चित्र वर्णन [च० प्र०]
(५) पृ० ७४ से १२० तक—गीत चित्र वर्णन [पं० प्र०]
(६) पृ० १२० से २२४ तक—कामधेन्वा कारादि चित्र [ष० प्र०]
(७) पृ० २२५ से ३०० तक—गुण वंध चित्र [स० प्र०]
(८) पृ० ३०१ से ४६० तक—अर्थ चित्र [अष्टम प्र०]

कवि वंश परिचयः—गौतम ऋषि के वंश में । भये नृपति वरवंड । काशी में शिव कृपातें । कीनीं राज अखंड ॥ तासुत नय जग विदित हैं । चेत सिंह महाराज । आगम निगम प्रवीन अति । दानिन में सिर ताज ॥ हौं सुत तिनको जानिये । विदित नाम वलवान । काशी राज सुग्रन्थ में कियो नाम परधान ॥

ग्रन्थ निर्माण कालः—देव गुरुवार सो है लसै प्रिय धृति योग श्रवण सुखद गुण आगम वखानियै ॥ आशा तिथि पूरी जहां इषु शुक्ल पक्ष युत हरन विघन खल जगमें प्रमानिये ॥ निधि सिद्धि नाम चन्द्र विक्रम सुछन्द अलिराशि है ललित तहां राजै पहिचानिये ॥ कवि काशीराज मन आनन्द करन हार ग्रन्थ को जनम दिन किधों शिव जानिये ॥

संख्या १८९ बी. मुष्टिकप्रश्न, रचयिता—काशीराज, कागज—देशी, पत्र—१०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०२ = १७४५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामभजन मिश्र, बेहदर कलाँ, डाकघर—संडीला, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ मुष्टिक प्रश्न लिख्यते ॥ लग्न की केंद्री बृहस्पति तथा शुक्र होय तौ जीव चिंता कहिये ॥ मे०, वृ०, कुं०, सिं०, इन ऊपर केन्द्री कुल अर्क होय तौ धातु चिन्ता कहिये ॥ वृं ॥ २, घ ९, तु ७, मि० १२, कृ ४, चंद्र, वृ० शु० सो जो इनकी दृष्टि होय अरु वुध तथा शनि वक्री होय तौ मूल चिन्ता कहिये । वुध लग्न ये ५ अरु ९, ५ शुक्र की दृष्टी होय अरु ६, शुक्र होय तौ फूल चिन्ता कहिये ॥ चन्द्रमा केन्द्री वुध होय की सूर्य की दृष्टी होय तौ गुंज मूल वतइये ।

अन्त—मंगल केन्द्री को देषित होय तो लाल विद्रुम होय केन्द्री शनि होय तौ लोहा कार होय ॥ राहु केन्द्री होय तौ संखा कार होय ॥ वुध ॥ ३ ॥ ५ ॥ होय राहु सूर्य की दृष्टी होय तो सर्व तथा ८ देषति होय तो स्वेत कृष्ण जानिये ॥ मंगल शुक्र ॥ ९ ॥ ५ ॥ होय तौ मृतिका कहिये वुध ५ ॥ ६ ॥ चन्द्रमा शुक्र देषति होय तो आल को फल कहिये ॥ सूर्य ॥ ६ ॥ मंगल ॥ ९ ॥ होय तौ तिल मशुरी रक्त कारो कर वुर कहिये ॥ शुक्र ११ होय तौ गेहूं जौ कहिए ॥ इति श्री काशी राज कृत मुष्टिक प्रश्न संपूर्ण समाप्तः लिखतं गंगा विष्णु शुक्ल स्वपठनार्थं संवत् १८०२ वि० आश्वनि कृष्ण त्रयोदशी श्री राम ॥

विषय—मुष्टिक प्रश्न द्वारा शुभाशुभ वर्णन ।

संख्या १९० ए. योगवाशिष्ठसार, रचयिता—कवीन्द्र (काशी), कागज—देशी, पत्र—६२, आकार—६$\frac{1}{2}$ × ३$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—

७७५, रूप--प्राचीन, लिपि--नागरी, रचनाकाल--सं० १७१४ = १६५७ ई०, लिपिकाल--सं० १७१४ = १६५७ ई०, प्राप्तिस्थान--श्री चिरंजीलाल जी भैरोंबाजार, जिला--आगरा।

आदि--शुरू के पांच छन्द नहीं हैं। कवि परिचय पांत जल जानत भले। संशय भरम भली विधि दले ॥ न्यायादि बहु बार पढ़ाए ॥ साहित में बहु ग्रन्थ बनाए ॥ ७ ॥ पुराण अठारह रसना बैसे ॥ सुमरत सबै कंठ मैं लसै। ८। जोग वाषिष्ठ भले कै बूझा ॥ जानै ब्रह्म आपही सुझा ॥ चारि वरण अरु आश्रम चारी। पंडित मूढ़ पुरुष अव नारी ॥ १० ॥ सब नित जाहिं आसिष देहिं। काशी प्रयाग न्हाहि सुख लेहिं ॥ सो कविन्द्र युग युग जग जियौ। धरमहि काज जनम जिहि लियो ॥ १२ ॥ जाते प्राग बनारस सुखी ॥ नर नारी कोउ नाहिन दुखी ॥ १३ ॥ पूरणेन्द्र ब्रह्मेंद्र गोसांई ॥ जाकी करणी तन मन भाई ॥ १४ ॥ स्तुति कवीन्द्र की निसि दिन करै। हिये हरष आँषिन जल भरै ॥ १५ ॥ दया शील सन्तोष विराजे ॥ जामें क्षमा धर्म्म बहु लाजै ॥ १६ ॥ दान ज्ञान अनुभव को सागर। पर विराग विज्ञान उजागर ॥ १७ ॥ परानन्द सबही को देता। दुष सहत पर स्वारथ हेता।१८। कासी में कोउ नाहिन पूजा। कवि कविंद्र सौं उन न दुजा ॥ १९ ॥ पहिले गोदा तीर निवासी। पाछे आये बसे श्री काशी ॥ २० ॥ ऋग्वेदी अशुलायन साषा। कीनौ ज्ञान सार है भाषा।२१। ज्ञान सार जाके हिय बसै। ताको दुख सब पल में नसै ॥२२॥ दोहा ॥ कासी की अरु प्राण की, कर की पकर मिटाइ ॥ सबहीं को सब सुख दियो, श्री कवीन्द्र जग आय ॥ २३ ॥ इति मंगला चरण अथ योग वाषिष्ट सार लिष्यते ॥ १ ॥

अन्त--दोहा-संवत सत्रह सै बन्यौ चौदा ऊपर वर्ष ॥ फाल्गुण बदि एकादशी भयो विष्णु के हर्ष ॥ १ ॥ परमेसुर को पाइके। आय कृपा को लेश। बनो ग्रंथ अनुभव लिये, अस गुरु के उपदेश, कवीन्द्र सरस्वती सो पासी पंडित ज्ञानी काशी वासी ॥ अर्थ उपनिषद नीके ज्यानि लियो परब्रह्म पहिचान ॥ उन यह ग्रंथ भलो हि बनायो। जाहि बनावत बहु सुख पायो ॥ ज्ञान सार है याको नाम। ज्ञानि पावै सुनि सुष धाम, जो लौं रहिये भूमि अकास ॥ तौलौं ज्ञान सार परगास चारि वेद चारौ जुग जौलौं ॥ ज्ञान सार यह रहि है तौलौं इति श्री योग वसिष्ठ सार संपूरनमं ॥

विषय--योगवासिष्ट का पद्यानुवाद।

संख्या १९० बी. वशिष्टसार, रचयिता--कविन्द्राचार्य, पत्र--१९, आकार--७½ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)--९, परिमाण--(अनुष्टुप्)--३४२, रूप--प्राचीन, लिपि--नागरी, लिपिकाल--सं० १८५८ = १८०१ ई०, प्राप्तिस्थान--पं० रामप्रसाद टीचर हिम्मतपुर, जिला--आगरा।

आदि--ॐ श्री रामाय नमः। लिषते वशिष्ट सार्वसिष्ट उवाच। दोहा। है अनंत व्यापक सकल चिनमये सीरो धाम। अनुभव है ठहरात जे ताहि करौं परनाम। हौं बंध्यौ छूटौं कवै, यह न्हिचै है जाहि। नही मूरष नही अति चतुर येह विद्या है ताहि। जौलों ना जगदीस की होय कृपा को लेस। तौलों न सतगुरु मिलै ना विद्या उपदेश। भवसागर के तिरन को सतगुरु कहे उपाये ज्यों क्षींवर सुपाइये नदी तिरन कों नाव। ग्यान महुषद

सों मिटत दीरघ रोग संसार। को हों काको जगत हैं अैसे कियो विचार। फरोरसीली घाट के नहीं तन्नतरु भेस। एक दिवस सब सिये नहि अैसे निरजन देस।

अन्त—अस्थावर जंगम सवै मनतै देषे जात। मन उन्मन कै भावतैं नहिं दूजो ठहरात। न्हैं चल आनंद जो सुषी जिहि में जग ठहरात। न्हैं चल चंचल आत्मा सो चित ए दिषात। पहले अपनी काचुली जानत है निज देह। छांडी अहि जब कांचली तासूं नेक न नेह। त्यों ग्यानी के नाहिनै दुष गुनन की सुध। भली बुरी जानैं नहीं त्यों वालक की बुधि। फुतली जैसे षंभ में ज्यों जल मांहि तरंग। सदा रहत है ब्रह्म में यह जग नाना रंग। इति श्री कविन्द्रा चारज विरचितं वसिष्ट सार तत्त्व निरूपन नाम दसमो परकर्णं संपुरण। १०। इति श्री कविन्द्रा चारज जी की कृत संपूर्ण सुभ भवन्ति मंगल यथा लिषतं तथा प्रतिस्था लिषतेम्म दोसो न दीयते। संवत ॥ १८५८ ॥ श्री राम कृष्णाय नमः गुरभ्ये नमः।

विषय—योगवाशिष्ट का पद्यानुवाद।

संख्या १९१ ए. गणेश कथा, रचयिता—केशवराय कायस्थ, पत्र—७०, आकार—४ × ३ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९० = १८१३ ई०, लिपिकाल—सं० १८७० = १८१३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० दुर्गाप्रसाद शर्मा, फतेहाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। अथ गणेश कथा लिख्यते हरि राजा सों यों कही एक समय मति धीर। राउ ब्राह्मनी के पुत्र की कथा सुनो तुम वीर श्री कृष्णो वाच। एक ब्राह्मनी दुर्बल रहै। गण पति व्रत तन मन करि गहै। वह नगरी नील ध्वजराई तहां दुज बालक आवें जाई। निस बासर से वामन धरो। तापर राइ मया अति करै। निस और वासर नींद न नैना। श्रवण सुनत राजा के वैना। व्रत प्रताप ते ऐसी भई। सब संपति गणपति जू दई। एक दिन माता पूजा करै। हृदय ध्यान विविध धरै ॥ आयो सुत कीनै दरबारा। भोजन मांगत बारंवारा। मोही भूख लगी अधिकाई।

अंत—रिधि सिधि के दास ही सेवहु चित लगाई। गणपति पग सुमिरन करैं। कायथ के सो रोई। चौपही। आगे हती कछु सही। कछु कथा सुऔरहिं कही। तब शिव महिमा करनन लगी। रिधि सिधि भगतनि को दई। पहलै कथा पुरातन सुनी। ता पाछे चौपही मे गुणी। मनदै श्रवण सुनै जो ज्ञानी। अहो बुधि प्रघटि बुधि बानी। जो यह कथा सुनै सुनावै। गणपति को चरणोदक पावे। इति श्री गणेश कथा भाषा कृत सहित दोहा चौपही समपूर्णम्। शुभ मस्तु। पठनार्थ इदं कायस्थ श्री वास्तव लाला मोहन लालस्य स्व स्थान फतिया बाद के। श्री। श्री। श्री।

विषय—श्री कृष्ण और युधिष्ठिर के संवाद के रूप में गणेश कथा का वर्णन।

संख्या १९१ बी. गणेशव्रत कथा, रचयिता—केसव, कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—८ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२४, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८४० = १७८३ ई०, प्राप्तिस्थान—रामभजन मिश्र, बेहदर कला, डाकघर—सण्डीला, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ गणेश व्रत कथा लिख्यते ॥ दोहा—सुमिरण कर गणेश को गुरु को चरणन चितलाइ । संकट चौथि कथा कहौं सुनौ सबै मनु लाइ ॥ युधिष्ठिर उवाच—नृप प्रत्यक्ष श्री कृष्ण को श्रवण सुनत यश रीति । ये ये रावर शत्रु है तिनहिं कवन विधि जीति ॥ श्री कृष्ण उवाच—कृष्ण कहेउ नृप राइ सुनु करौ धर्म यह चित्त । शत्रुन की क्षय होयगी करि गणेश को व्रत ॥ संत्रुग से संकट कटै रिद्धि सिद्धि धनधाम । उमा पुत्र को सेइये ह्वै है पूरण काम ॥

अंत—असाढ़ मास होम यहु जानैं । फूल कमल सेवती व्रत सानैं ॥ होम करै मन ध्यान लगावै । सो नर मन वांछित फल पावै ॥ सामन मास यह विधि कही । व्रतै सिलावै लै कै दही ॥ यहै होम करि जानै भेवा । जाते वस्य होय सव देवा ॥ दोहा—गणपति पूजन सव करैं । और होम उपदेश । एहि विधि सेवन करत हैं । वड़े देव गन्नेश ॥ सुख संपति के दानि हैं । काटत सकल कलेश । केशव जू सेवत रहैं । श्री गुरु चरण गनेश ॥ इति श्री स्कन्द पुराणे गणेश चतुर्थी व्रत कथा समाप्तः शुभ मस्तु चैत्र मासे सिते पक्षे षष्टम्याम भौम वासरे संवत् १८४० शाके १७०५ ॥

विषय—गणेश चतुर्थी की व्रत कथा का वर्णन ।

संख्या १९१ सी. संकट चौथी महिमा, रचयिता—केशोराई, पत्र—१०, आकार—९½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० दामोदर प्रसाद शर्मा, ओखरा, डाकघर—कोटला, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—१९१ बी के समान ।

संख्या १९१ डी. गनेश कथा, रचयिता—केशवराय कायस्थ, पत्र—२९, आकार—६½ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२८, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० राम जी सारस्वत, जौंधरी, डाकघर—नारखी जिला—आगरा ।

आदि—जानौ सही । इतनी कहि नारद मुनि गए । महादेव तहां आवत भए । दोहा—महादेव जू तिहि समै, आए करि असनान । पारवती कौ देषिकै, धरौ चित्त मैं ध्यान । चोपही । महादेव जू पूछत बात मन मलीन तुम काहे गात । पारवती जी पूछै जेवा, मंड माल को पै हरै देवा । सो हम सौ कही औ समुझाइ जातै जीअ की जरनि बुझाइ । तव ऊचरे जगत के ईसा मुंड माल हैं हमरे सीस । जेते जनम तुमारे भए मुंड सवै ते हमने लए । मुडनि की पहरैं हम माला सबै भयंकर होइ निहाला ॥ पारवती उवाच ॥ बात एक तुम हमारी सुनौ प्रिभु जू अपने मन में गुनौ । एक जनम तुम धरौ निधारु, मेरे जनम भए सौ वारु । सो हमसों कहिए समुझाई । कैसे चली बात गहि आई । महादेव तव ऐसे कहै, वीरज मंत्र मेरे उर रहै ।

अन्त—...काइथ कै सौराइ । आगै कथा कछू सही काइथ उदै भान की सही । तब हम कथा सुनी कछु थोरी । कछु अक आपु उकति सौं जोरी । पहिले दंत कथा मैं सुनी,

पाछै छंद चौपही गुनी। दै श्रवनति सुनि कोई ग्यानी, यह विधि भई रसातम कहानी। सो तिहि कथा सुनैं जु सुनावै। सो नतु लाभि मुक्ति फल पावै। इति श्री गनेश कथा संपूर्ण।

विषय—गणेश कथा तथा व्रतादिका वर्णन।

संख्या १९२ ए. रामचन्द्रिका रचयिता—केशवदास (ओड़छा, बुन्देलखण्ड), पत्र—११२, आकार—१० × ३½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१३६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६९, प्राप्तिस्थान—पं० बेनी प्रसाद जी बरुवा, बमरौली कायस्थ, जिला—आगरा।

आदि—श्री रामाय नमः॥ श्री कृष्णाय नमः॥ अथ रामचन्द्रिका लिष्यते॥ ॥ दंडक॥ वालक मृनालिन ज्यों तोरि डारैं सव काल कठिन कराल वे अकाल दीह दुष्ष कै। विपति हरत हठि पापिनि के पात सम पंक ज्यों पताल पेलि पठवै कलुष कौ॥ दूरि कै कलंक अंक भव सीस ससि सम राषत है केसोदास दास के वपुष कौ॥ सांकरे की साकरिनि सन मुख होत ही ते दस मुष मुष जोवै गज मुष मुष कौ॥ १॥ वानी जगरानी की उदारता वषानी जाय ऐसी मति केसव उदार कौन की भई॥ देवता प्रसिद्ध सिद्ध रिषिराज तप वृद्ध कहि कहि हारे परि कहि न काहु लई॥ भावी भूत वर्त्तमान जगतु वषानतु है केसव दास क्यों हूं न वषानी काहू पै गई॥ वने पति चारि मुख पूत वने पंचमुष नाती वने षट मुष तदपि नई नई॥ २॥

अन्त—दोहा॥ राज श्री वस कैसे हू, होहु न डर अवदात। जैसे तैसे ताहि वस, अपने कीजै तात॥ ३६॥ इहि विधि सिषदै पुत्र, विदा करै दै राज। श्री राजत रघुनाथ संग, सोभित वंधव साथ॥ ३७॥रूप॥ श्री रामचन्द्र चरित्र कौजु, सुनै सदा सुष पाइ। ताही पुत्र कलित्र संपति देत श्री रघुराइ॥ ज्ञान दान असेष तीरथ न्हान को फलु होई। नारकी जनि विप्र छत्रीय वैस्य सूद्र जु कोइ॥ ३८॥ विमल छंद॥ असेष पुन्यपाप के कलाप आपने वहाइ॥ विदेह राज ज्यों सदेह भक्त राम को कहाइ॥ लहै सुगति लोक लोक अंत मुक्ति होहि ताहि। पढ़ै सुनै कहै गुनै जु रामचंद्र चंद्रिकाहि॥ ३९॥ दोहा॥ लीला श्री रघुनाथ की। कौन जानिवे जोग। वेद भेद पावै नहीं। सु संकर करै वियोग॥ ४०॥ इति श्री मत्सकल लोक लोचनेम्वकोर चिंता मनि श्री रामचन्द्र चन्द्रिकायां मिश्र केसवदास विरचितायां श्री राम सीता समागम वर्णनं नाम उनतालीसमो प्रकासः॥ ३९॥ संपूर्ण शुभं मस्तु संवत १८६९ मारग शुक्ल ४ सोमे लिषितं भगवत दास मु० धाईपुर।

विषय—श्री रामचरित्र वर्णन।

संख्या १९२ बी. रामचंद्रिका, रचयिता—केशवदास, पत्र—१२३, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३५०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—हुक्म सिंह अध्यापक, डाकघर—मिढ़ाकुर, जिला—आगरा।

आदि—छन्द—अति सुनि तनुमनु तहं मोहि रह्यो कछु बुधि वल वचनन जाहि कह्यौ। पशु पक्षि नारि नर निरखि तवै, दिन रामचन्द्र गुन गुनत गवै। अति उच्च अगारनि

वनी पगारनि जनु चिन्ता मनि नारि। शुभ सत मषधू मनिधूपति अंगनि हरि कीसी अनुहारि। चित्री बहु चित्रनि परम विचत्रिनि केशवदास निहारि। जनु विश्व रुप की अमल आरसी रची विरंचि विचारि। सोरठा। जग जसवंति विसाल राजा दशरथ की पुरी, चन्द्र सहित सबकाल भालथली जनु ईसकी। कुडलिया—पंडित अति सिगरी पुरी मनऊ गिरा गति गूढ़। सिंहनि जुत जनु चंद्रिका मोहतु मूढ़ अमूढ़; मोहत मूढ़ अमूढ़ देव संग अदित विचारी। सब श्रंगार सदेह सकल सुष सुषमा मंडति। मनऊ सची विधि रची विविध विधि वरनत पंडित। सोरठा। नागर नगर अपार महा मोह तप मित्रते। त्रिष्ना लता कुठार लोभ समुद्र अगस्ति से।

अन्त—जवान षेलि एकहूँ जुवा जु वेद रक्षिये। अमित्र भूमि मांमवा अभक्ष भक्ष भक्षिये। करौ न मंत्र मूढ़सौं नगूढ़ मंत्र षोलिये, सुपुत्र होई जै हठी मठीन सों बोलिये। व्रथा न पीड़िये प्रजा हितू मगान पारिये। अगाध साधु बूझि कैं यथा पराध मारिये। कुदेव देव नारिकौ नवाल चित्त लीजई। विरोध विप्र वंससों सुभूलिहू न कीजई। पर द्रव्य कौ तौ परस्त्री वषानौ। रहौ काम क्रोधे महा कोह लौपै। तजौ गर्व को सदा चित्त छोभै।......

विषय—राम चरित्र वर्णन।

संख्या १९२ सी. रामचन्द्रिका, रचयिता—केशवदास, कागज—बाँसी, पत्र—२९६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४९००, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८४९ = १७९२ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री मुरलीधर केशवदेव मिश्र, डाकघर—जगनेर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—नागरथी छन्द॥ मुनिउवाच॥ भलौ बुरौ न तूठाणै वृथा कथा कहै सुनै। न रामदेव गाइ है, न राम लोक पाइ है। छप्पै—बोलन बोल्यो बोल दियो फिर ताहि न दीनौ॥ मारि न मान्यो सक्रोध मन वृथा न कीनौ। जुरिन मुरिचौ रन माझ लोक की लीक न लोपी। दान सत्य सन मान सुजस जस विदिसा वोपी। मन लोभ मोह मद काम वस, भयौ न केशवदास भनि। पार ब्रह्म श्री राम है अवतारी अवतार मनि॥ मधुभारछन्द॥ राम नाम सत्य धाम बरनि बैको बरन सौ। ध्यान करि चारि जाम जगत कौ सरनसौ॥

अन्त—सवैया— पूजा को बनाइ फलकंचन रुचौ चढ़ाइ धूप दीप अछित चंदन चर चाइकै॥ सुनत पुनीत होत पोत भवसागर कौ सुख कौ निवास सब दुख विसराइकै॥ भक्ति मुक्ति हेत सुन वित धन द्वारा देत अर्थ धर्म कामना की पूरन पाइकै। कहै केशवदास रामचन्द्र जूकी चंद्रका की सप्त दिवस माझ सुनै चित लाइकै। इति श्री मत्सकल लोक लोचन चकोल चिन्ता मनि श्री रामचंद्रकायां श्री रामपरमधाम प्रवेसनी नाम पंच पचासयो प्रकाशः॥ ५५॥ संवत् १८४९ शाः १९१४ ज्येष्ठ मासे शुक्लपक्षे पुन्य तिथौ ८ भौम वासरे॥ लिखितं मिश्र धर्म्मपाल जगनेरिमध्ये॥

विषय—रामचरित्र वर्णन।

संख्या १९२ डी. कविप्रिया, रचयिता—केशवदास (ओड़छा, बुन्देलखण्ड), पत्र—१०७, आकार—१० × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—

२६७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६५४=१६०१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० भगवन्त प्रसाद मौढ़ा, डाकघर—फीरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ।। अथ अलंकार कवि प्रिया लिष्यते। दोहा—गज मुष सन मुष हौत ही। विघन विमुष ह्वै जात। ज्यौं पग परत पराग मग। पाप पहार विलात ॥ १ ॥ बानी जू के वरन जुग। सुबरन कन परमान। सू कवि सुमुष कुर षेत परि। हौत सुमेर समान ॥ २ ॥ कवित्त—सस सस गुन कोकी सत्य ही की सत्यासुभ सिद्धि की प्रसिद्धि की सुबुद्धि वृद्धि मानिये ।। ग्यान ही की गरिमा की महिमा विवेक ही की दरसन ही को दरसन उर आनिये ॥ पुन्य को प्रकासु वेद विद्या को विलास की धौं जसको नैवासुके सौदा सजग जानिये ॥ मदन कदन सुत वदन रदन कीधौं विघन विनास वे की विधि पहिचानिये ॥ ३ ॥ प्रगट पंचमी को भयो। कवि प्रिया अवतार ॥ सौरह सौ अठावना। फागुन सुदि बुधवार ॥ ४ ॥ नृप कुल वरनों प्रथम ही। पुनि कवि केशव दास। प्रगट करी जिन कवि प्रिया। कविता को अवतंस ॥ ५ ॥ नृप कुल वर्णनः—ब्रह्मादिक के विनयते। हरन सकल भुव भार। सूरज वंश कन्यौ प्रगट। रामचन्द्र अवतार ॥ ६ ॥ तिनके कुल कलि काल रिपु। कहि कैसे वे रनधीर। गहर वार प्रख्यात जग। प्रगट भये नृप वीर ॥ ७ ॥

अंत—मास मसौ हम जै वन वीनन वीन वजै सह सोम समा। मार लता तिय नावत सारि रिसाति बनावति ताल रमा ॥ मान वहिर हिहि मोरि दमोद दमोदरि मोहि रही वनमा। माल वनी वलि केशव दास सदा वस केलि वनी बलमा ॥ ४८ ॥ सैनन माधव पोसर केशव रेष सुदेसु सवेस सवै। नैन चकित विजी तरुनी रुचि चीर सबै निशि काल फलै ॥ तै न सुनी जस भीर भरी धर धीर जरी निसु कौन वहै। मैन मनी गुरु चालि चलै सुभ सोभत मै सरसी वलमै ॥ ८४६। दोहा—जा माता ममता मया। मा परोछ छराछमा। तारो नो गंग नो रोता। मक्ष जक्ष क्षज छमा ॥ सार मान वरा रोहा। नगे भागम ना हिज। जाहिना मग भागे। न हारो रावन मारसा ॥ ९५० ॥ अथ कवि प्रीया सम्पूर्णम् ॥

विषय—प्रथम उल्लास—पृ० १ से ५ तक राजवंश वर्णन। द्वितीय उल्लास—कवि वंश वर्णन पृ० ५ से ७ तक। तृतीय उल्लास—कवित्त दूषण पृ० ७ से १३ तक। चतुर्थ उल्लास—कवि व्यवस्था पृ० १३ से १५ तक। पंचम उल्लास-सामान्यालंकार स्वेतादि १५ से २० तक। षष्ठम उल्लास सामान्यालंकार वाह्य वर्णादि पृ० २० से ३१ तक। सप्तम उल्लास—सामान्या लंकार भूमि भूषण पृ० ३१ से ३६ तक। अष्टम उल्लास—सामान्या लंकार राज श्री भूषण पृ० ३६ से ४३ तक। नवम उल्लास—विशिष्टालंकार उत्प्रेक्षालंकार पृ० ४३ से ४९ तक। दशम उल्लास—विशिष्टालंकार उत्प्रेक्षालंकार पृ० ४९ से ५३ तक। एकादस उल्लास—विशिष्टा लंकार अपह्नुति पृ० ५३से ६४ तक। द्वादश उल्लास विशिष्टालंकार जुक्तालंकार पृ० ६४ से ६९ तक। त्रयोदश ऊल्लास—विशिष्टा लंकार समाहितादि पृ० ६९ से ७३ तक। चतुर्दश उल्लास—विशिष्टालंकार नपशिष

पृ० ७३ से ७९ तक। पंचदश उल्लास—विशिष्टालंकार यमकादिलंकार पृ० ७९ से ९१ तक। षष्ठदस उल्लास—चित्रालंकार।

संख्या १९२ ई. कविप्रिया, रचयिता—केशवदास ओड़छा, पत्र—८६, आकार—९ X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१५०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६५८, लिपिकाल—सं० १८८२ = १८२५ ई०, प्राप्तिस्थान—कुंजीलाल भट्ट, ग्राम—औंड़ेला, डाकघर—किरावली, जिला—आगरा।

आदि—१९२ डी के समान।

अन्त—कामधेनुदे आदि अरू कल्प वृछ पर्यंत। वरनहु केशव सकल कवि चित्र कवित्त अनंत। इहि विधि केशव जानियो चित्र कवित्त अपार। वरनतु पंथ बनाइ में, दीनों मति अनुसार। सुवरन जटित पदारथनि भूषन भूषित मानि। कवि प्रिया ज्यों कवि प्रिया कवि संजीवनि जानि। पलु पलु प्रति अवलोकिवो सुनिवो गुनिवो चित्त। कवि प्रिया ज्यौं रहि जहु कवि प्रिया ज्यों मित्त। अनिल अनल कलि मलिनेतं विकल षलनि तें नित्त। कवि प्रिया ज्यों रछिजहु, कवि प्रिया ज्यों मित्त। केशव सोरह भाव शुभ, सुवरन मय सुकुमार। कवि प्रिया के जानियों सोरहऊ श्रृंगार। इति श्री मद्दि विध भूषन भूषितायां मिश्र श्री केशवदास विरचितायां कवि प्रियायां चित्रालंकार वर्णनं नाम षोड्षः प्रभावः समाप्तः। १६। तत्समाप्तोयं कवि प्रिया नाम ग्रंथः। संवत अष्टादश शत व्यासी मास असाढ़ कवि प्रिया पूरण भई परम प्रेम नित बाढ़।

विषय—दशांग काव्य का वर्णन।

संख्या १९२ एफ. रसिक प्रिया, रचयिता—केशवदास ओड़छा (बुन्देल खण्ड), पत्र—१२३, आकार—६¾ X ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८४५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६४८ = १५९१ ई०, लिपिकाल—सं० १९०८ = १८५१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० उलफतरी बसायक नबीस, फतहाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ श्री कृष्णाय नमः॥ एक रदन गज वदन सदन वुधि मदन कदन सुत। गवरि नंद आनंद कंद जगवंद चंद जुत॥ सुष दायक दाय सुकृत गन नायक नायक। षल धायक धायक दरिद्र सलायक लायक॥ गुण गण अनंत भगवंत भजि भक्त वंत भवभय हरण। जय केशवदास निवास निधि लम्वोदर असरण सरण॥ १॥ श्री वृषभान कुमारि हेत श्रृंगार रुप भय। वास हास रस हरे मातु वंधन करुणा मय॥ केशी प्रति अति रुद्र बीर मार्‌यौ वत्सासुर। भय दावानल पान पीऐ वीभत्स वकी उर॥ अति अद्भुत वंचि विरंचि मति सांत संतत सोचि चित। कहि केशव सेव वहु रसिक जन नवरस मय व्रज राजु नित॥ २॥ दोहा। नदी बैत वे तीर तहाँ तीरथ तुंगा रंन्य। नगर ओड़छो रिवलैं वसैं धरणी तल में धन्य॥ ३॥

अन्त—इहि विधि केशवदास रस। अनरस कहे विचारि। वरनत भूल परी जहाँ। कवि कुल लेहु विचारि॥ १४॥ बाढ़े रति मति अति वढ़े। जानै सब रस रीति। स्वारथ

परमारथ लहे। रसिक प्रिया की प्रीति ॥ १५ ॥ जैसे रसिक प्रिया विना। दिखियै दिन दिन दीन। त्यौंही भाषा कवि सबै। रसिक प्रिया करि हीन ॥ १६ ॥ साधारण रस वर्णन कैं। वरनौं पाइ प्रसंग। साधारक वाधा वधिक। राधा जू के अंग ॥ १७ ॥ इति श्री मन्महाराज कुमार श्री इन्द्रजीत विरचितायां रसिक प्रियायाँ रस अनरस वर्ननो नाम षोड़षो प्रभावः ॥ १६ तामध्य लिषितं षमानी राम ब्राह्मन पठनार्थं नदलालु राइ वासुदे मई के। जो देखो सोई लिखो सुध असुध न जानि। पंडित अर्थ विचारिकैं। पढ़ियो ग्रन्थ प्रमान ॥ जो वाँचै ताको राम राम श्री राधा कृष्णाय नमः नारायनमः श्री रामचन्द्राय नमः श्री वासुदेवः—

विषय—नायका भेद और रसों का वर्णन।

ग्रंथ निर्माण कालः—संवत् सोरह सै बरस। वीती अठ तालीस। कातिक सुदि तिथि सप्तमी। वारु वरनि रज नीस ॥

संख्या १९२ जी. विज्ञान गीता, रचयिता—आचार्य केशवदास जी (ओड़छा), पत्र—१२४, आकार—९ x ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३१५, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६६७ = १६१० ई०, लिपि-काल—सं० १८४९ = १७९० ई०, प्राप्तिस्थान—त्रिभुवनप्रसाद त्रिपाठी, पूरे परान पाँडे, डाकघर—तिलोई, जिला—रायबरेली।

आदि—श्री गणेशायनमः। श्री विज्ञान गीता लिख्यते। छप्पय—ज्योति अनादि अनंत अमित अद्भुत अनूप मुनि, परमानन्द पावन प्रसिद्ध, पूरण प्रकाश पुनि नित्य नवीन निरहि निपट निर्वान निरंजन। समसर वज्ञ सवग, संत सो चित सो चित घन। वरनी जाइ देखी सुनी, नेति नेति भाषत निगम। तिनकौं प्रनाम केशव करहुं, अन दिन करि संयम नियम। चन्द्रकला = संग सोहति है कमला विमला, अमला मति होतु तिहु पुरकौ। कहि केशव क्यों हूं वनै न निवारत जारति जोर निही उर को परि पूरण ब्रह्म सदा इहि रूप सहांइ सवै, जग ज्यौं सुरकौ। अति प्रेम सों नित्य प्रणाम करौं परमेश्वर कौ हर कौं गुण कों।

अंत—दोहा—सुनि २ केशव राय सों कह्यो रीझि नृप नाथ। मांगि मनोरथ चित्त मैं कीजै सवै सनाथ। वृत्ति दई पुरुषान की, देहु वाल कनि आसु। मोहि अपनौ जानिकै, दै गंगातट वासु। इति श्री मिश्र केशव राइ विरचितायां चिदानन्द मगनय विज्ञाण गीता यां महा मोह पराजय प्रवोधी दयं वर्ननं नामें कवि शीतमें प्रभावः। समाप्तं शुभं भूयात हरि भक्ति रस्तु सर्व कल्याण मस्तु। सं० १८४९। फाल्गुण कृष्ण तृतीयां सम्पूर्णः।

विषय—इस पुस्तक में श्री केशवदास जी ने प्रथम प्रभाव में अपनी वंशावली पुस्तक बनाने का कारण और बादशाह अकबर तथा राजा बीरसिंह देव की प्रशंसा की है। दूसरे प्रभाव में काम रति कलह संवाद तीसरे में अहंकार दंभ संवाद चतुर्थ भाव में सप्तदीप सर्वं खंडादि का वर्णन पंचम प्रभाव में महामोह मिथ्या दृष्टि संवाद छठे में गंगा शिव वाराणसी, मणि कर्णिका घाट आदि तीर्थों का प्रभाव। सातवें में चार्वाक और उसके सिष्य का संवाद। आठवें में पाखंड धर्म वर्णन। नवें में हृदय में श्रद्धा और विवेक तथा वैराग्य के मिलने की कथा तथा राज धर्म वर्णन। ग्यारहवें में वर्षा तथा शरद ऋतु का वर्णन और

श्री विंदु माधव, विश्वनाथ गंगा जू स्तुति आदि का वर्णन। बारहवें में महामोह पराजय और विवेक जय वर्णन। और तेरहवें प्रभाव में माया विलास वर्णन। इसी प्रकार प्रत्येक प्रभाव में कथा प्रसंग और प्रश्नोत्तर के रूप में अत्यन्त उत्तम काव्य और अनेक छंदों में ज्ञान विज्ञान का विवेचन किया गया है। स्थान २ पर अनेक पुराणों तथा शास्त्रों आदि के प्रमाण श्लोकों में उद्धृत किए गए हैं।

संख्या १९३ ए. अंग स्फुरण ग्रंथ, रचयिता—केशव (राधन, कानपुर), पत्र—४, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२६ = १८६९ ई०, लिपिकाल—सं० १९३१ = १८७४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० काशीराम ज्योतिषी, डाकघर—रिजौर, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ केशवदास शास्त्री कृत अंगस्फुरण ग्रन्थ लिख्यते ॥ अंग स्फुरण दक्षिण भाग में शुभ ओर वाम भाग व पृष्ट भाग व हृदय भाग में अशुभ जानौ ॥ मनुष्य प्रश्न करते हैं कि अंग के स्थान स्फुरण का विचार शुभा शुभ फल विस्तार सहित वर्णन कीजिये ॥ १. मस्तक—पृथ्वी लाभ। २. ललाट—स्थानी की वृद्धि। ३. भृगुटी के मध्य में—पिय दर्शन। ४. नेत्रों में—भृत्य मिले। ५. नेत्रों की कोरों में—धन प्राप्ति। ६. कण्ठ मध्ये—राज प्राप्ति होय। ७. दृग बंधन—युद्ध में जाने से जय। ८. अपांग देश में—स्त्री लाभ। ९. कर्णान्त में—प्रिय मित्र की सुधि। १०. नासिका में—प्रीति सुख होय। ११. अधरोष्ठ में—प्रिय वस्तु की प्राप्ति। १२. कण्ठ में—ऐश्वर्य प्राप्ति। १३. कंधों में—भोग वृद्धि प्राप्ति। १४. दोनों बाहु—मित्र मिलाप। १५. दोनों हाथ—धन प्राप्ति। १६. पृष्ट में—दूसरे से जय होय ॥ १७. उरु से—जय प्राप्ति। १८. कुक्षि में—पुत्र प्राप्ति। १९. शिश्न इंद्री—स्त्री प्राप्ति। २०. नाभि में—स्थान भ्रंश ॥ २१. आंतों में—धन प्राप्ति। २२. जानु संधि में—बलवान शत्रुओं से संधि ॥ २३. जंघा के एक देश—एक देश का स्वामी होय। २४. पादों में—उत्तम स्थान में मान्यता। २५. तलुओं में—अलाभ और गमन ॥

अंत—स्त्रियों का अंग स्फुरण—स्त्रियों का अंग स्फुरण भ्रू मध्य में तो पुरुष ही के समान है परन्तु और सब अंग पुरुषों से विपरीत अर्थात वाम अंग स्त्रियों का शुभ कहा है। हे राजा अनिष्ट फलों के निवारण हेतु ब्राह्मणों से तर्पण करावै सुवर्ण दान करै तो अशुभ अंगस्फुरण का दोष जाता रहै। नेत्रों के ऊर्ध्व प्रान्त आदिक स्थानों में स्फुरण होय तिसका फल कहते हैं। नेत्र के ऊपर का पलक स्फुरण होय तौ मनका दुख जाय और धन की प्राप्ति होय और नासिका के निकट स्फुरण होय तौ मृत्यु नेत्र के नीचे की पलक में स्फुरण होय तो जुद्ध में पराजय होय ये सब फल वाम नेत्र के स्त्रियों के और दक्षिण नेत्र पुरुषों के विचारि करि लेओ। इति श्री मनुष्य स्त्री अंग स्फुरण शुभा शुभ फल संपूर्ण लिखतं बैजू मिश्र सैवसू निवासी संवत १९३१ वि०—राम सिया भज कैसा सलोना—

विषय—अंगों के स्फुरण के शुभाशुभ लक्षण वर्णन।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता केशव देव शास्त्री थे जो राधन जिला कानपुर के निवासी थे। रचना काल संवत् १९२६ वि० और लिपि काल संवत् १९३१ वि० है।

संख्या १६३ बी. होरा व शकुन गमन, रचयिता—केशवदास (राधन, कानपुर), पत्र—१२, अकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर खंजन सिंह, सिकन्दरा मऊ, डाकघर—अलीगढ़, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । अथ होरा व शकुन गमन लिख्यते—जिस वार का होरा होय उसी में प्रथम दो घटि का होरा तिसके पीछे छटे वार को दूसरी इसी क्रम से दिवस के १२ होरा जानों । गुरु की होरा में विवाह शुभ है । यात्रा में शुक्र की होरा शुभ । ज्ञान कार्य में बुध की शुभ । संपूर्ण कार्य में चन्द्रमा की होरा शुभ । युद्ध में भौम की शुभ । सूर्य की राज सेवा में शनि की धन आदि कार्य में शुभ फलदायक है और जिस वार में जो कार्य शुभ कहा है वे सब कार्य जिन वारों की होरा में करने से शुभ दायक है । रवि के होरा में गमन करने से ये सगुन कहे हैं ।

अंत—यात्रा में युद्ध में विवाह में और नगरादि प्रवेश में और व्यापार अर्थात सब वस्तु के लेन देन में राहु मार्ग में शुभ दायक होता है । गर्ग जी के मत से रात्रि की पिछली ५ घरी ऊषा काल में गमन शुभ और वृहस्पति के मत से शकुन और अंगरा के मत से मनका उत्साह शुभ और जनार्दन के मत से ब्रह्म वाक्य शुभ जानिये । इति श्री होरा व गमन के सगुन संपूर्ण समाप्तः लिखा राधावल्लभ विद्यार्थी आगरा कालिज संवत् १९३० वि० ।

विषय—ज्योतिष ।

संख्या १९३ सी. ज्योतिष भाषा, रचयिता—केशवप्रसाद दूबे (राधन, कानपुर), कागज—देशी पतला, पत्र—४८, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३९ = १८८२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामकुमार मिश्र वसीठ, डाकघर—कासगंज, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ ज्योतिष भाषा लिख्यते अब सवत्सरों का फल लिख्यते । प्रभवादि संवत्सरों में से चलते हुए संवत्सर को दुगुण करै उसमें ३ घटाकर ७ का भाग देने से जो शेष रहै तिससे शुभा शुभ फल जानिये । १ अथवा ४ शेष रहे तो दुर्भिक्ष और ५ व २ बचे सुभिक्ष ३ अथवा ६ शेष रहे तो साधारण और शून्य आवे तो पीड़ा जाननी ॥ संवत्सरों के स्वामी ॥ ५ वर्ष का एक जुग होता है इसी प्रमाण से ६० वर्ष के १२ युग और क्रम से उनके १२ स्वामी विष्णु १, वृहस्पति २, इन्द्र ३, अग्नि ४, ब्रह्मा ५, शिव ६, पितर ७, विश्वे देवा ८, चन्द्र ९, अग्नि १९, अश्वनी कुमार ११, सूर्य १२

अंत—(३) बारों में पंचक वर्जित-रविवार में रोग पंचक मंगल में अग्नि पंचक सोमवार में राज पंचक, बुधवार को चौर पंचक, शनिवार को मृत्यु पंचक ऐसे ये पंचक इन वारों में वर्जित हैं जानिये ॥ इति श्री ज्योतिष भाषा केशव प्रसाद दुवे कृत संपूर्ण लिखतं शिव मंगल मिश्र रावतपूर संवत् कार्तिक कृष्ण ९ संवत १९३९ वि०

विषय—ज्योतिष ।

संख्या १९३ डी. ज्योतिषसार, रचयिता—केशवप्रसाद (राधन, जिला—कानपुर), पत्र—१६०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६७२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०, लिपिकाल—सं० १९३३ = १८७६ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला जैनारायण नगला राजा, डाकघर—नौखेड़ा, जिला—एटा।

आदि–श्री गणेशायनमः ॥ अथ ज्योतिष भाषा लिख्यते ॥ अथ शक प्रकरण प्रारम्भः ॥ संवत्सर नाम ॥ शालिवाहन शक में जिस संवत्सर का नाम जानना हो उसकी यह रीति है कि शक की संख्या लिखकर उसमें १२ मिलावै और ६० का भाग दे जो शेष बचे वही संवत्सर का नाम जानिये। जो शालिवाहन के शक में १३५ मिलावै तो वही विक्रम का संवत हो जाय जो रेवा नदी के उत्तर तट में संवत नाम से प्रसिद्धि है ॥ संवत्सरों के फल। प्रभवादि संवत्सरों में से चलते हुए संवत्सर को द्विगुण करै उसमें से तीन घटा के ६ का भाग देने से जो शेष रहे तिससे शुभाशुभ फल जानिये १, ४ शेष रहे तो दुर्भिक्ष ५, २ बचे तो सुभिक्ष ३ अथवा ६ सेस रहें तो साधारण और सून्य आवे तो पीड़ा जाननी

अंत—अंतरंग बहिरंग नक्षत्रः - सूर्य नक्षत्र से चार नक्षत्र फिर तीन नक्षत्र इस प्रकार वर्तमान नक्षत्र तक बराबर गिने तो विक्रम से अंत रंग वहि रंग सज्ञक होते हैं उनमें लाना और पठवाना आदि कर्म करै ॥ (सूतिका स्नान) हस्त जेष्ठा, पूर्वा फाल्गनी, स्वाति धनिष्ठा, रेवती, अनुराधा, मृग, अश्वनी और तीनों उत्तरा रोहिणी। इन नक्षत्रों में प्रसूता स्त्री का अस्नान शुभ कहा है परन्तु रिक्ता तिथि में न करै ये मुनीद्रों का कथन है। इति श्री शुकदेव विरचिते। केशव टीका कृते संपूर्ण समाप्तः लिखतं वनवारी लाल आगरा पीपल मंडी जेष्ठ मास कृष्ण पक्षे तिथो द्वादश्याम् संवत १९३३ वि० राम राम कृष्ण

विषय—ज्योतिष।

संख्या १९३ ई. ज्योतिष सार, रचयिता—केशवशास्त्री (राधन, जिला कानपुर), पत्र—१७२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७२०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल - सं० १९३० = १८७३ ई०, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवशर्मा नगराधीर, डाकघर—सराय अगत, जिला—एटा।

आदि—ऋतु प्रकरणम अयन शिशिर वसंत ग्रीष्म इन तीन रितु में सूर्य की गति उत्तर दिशा को होती है तिसको उतरायण कहते हैं यही देवताओं का दिवस है और वर्षा शरद हेमंत इन तीनों रितु में सूर्य की गति दक्षिण को होती है तिसको दक्षिणायन कहते हैं यही देवताओं की रात्रि है ॥ अयनों में शुभा शुभ कर्ण गृह प्रवेश देव प्रतिष्ठा विवाह मुंडन व्रत धारण मंत्र लेना ये सब शुभ कर्म उत्तरायण में करावै और सब निंद्य दक्षिणायन में करने योग्य हैं ॥ संक्रांति अनुसार ऋतु। मकर आदि लेकर दो राशि जब सयूं भोगते हैं तब एक रितु हो जाती है इसी प्रकार सूर्य १२ राशि भोगते हैं। उससे ६ रितु होती हैं।

अंत—सूतिका अस्नान—हस्त जेष्ठा पूर्वा फाल्गुनी स्वांति धनिष्ठा, रेवती अनुराधा मृगा आश्वनी और तीनों उत्तरा रोहिणी इन नक्षत्रों में प्रसूता स्त्री का अस्नान शुभ कहा है

परन्तु रिक्ता तिथि में न करै ये मुनीन्द्रों का कथन है—इति श्री केशव देव विरचिते ज्योतिष सारे संवत सरादि प्रकरणं समाप्तम् लिखतं शिव चक्रधर संवत् १९३० वि०

विषय—ज्योतिष।

संख्या १९३ एफ. वैद्यकसार, रचयिता—केशवप्रसाद दूबे (राधन, जिला—कानपुर), पत्र—६४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०००, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२७ = १८७० ई०, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामभजन बाजपेयी, सराय पैकू, डाकघर—सरौंढ़ा; जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ वैद्यक सार ग्रन्थ लिख्यते दोहा—विन्घाधिप गण ईश के चरण सरोजहिं नौमि। वैद्यन हित भाषा रचौ वैद्यक सारहिं सौमि॥ ब्रह्मा वर्त्त प्रसिद्धि जो तीर्थ सुर सरो तीर। ताते पश्चिम दिशि वसत राधन ग्राम सुधीर॥ तामें भये द्विज कुल तिलक दुवे देवकी राम। भये परम सुख तासु सुत पंडित विद्या धाम॥ तिनके जन्मे सुत उभय केशव अरु वल्देव। जिनमें केशव ने पढ़ी विद्या करि पितु सेव॥ काव्य कोप व्याकरण पढ़ि अरु वैद्यक के ग्रन्थ। पुनि लीनो पितु साथ ही नगर आगरो पंथ॥ तहं शाला पाठक हुते पंडित हीरा लाल। तिनकी पाइ सहायता रहे तहां कछु काल॥ संवत सत्ताइस अधिक उनइस सत को जान। तामें वैद्यक सार यह रच्यो ग्रन्थ सुख खान॥

अंत—अथ सिंगरफ सोधन विधि—नीबू के रस की सात पुट देइ भेड़ के दूध की सात पुट देइ तो सिंगरफ सुद्ध होइ। इति श्री द्विवेदी केशव प्रसाद कृत वैद्यक सार ग्रन्थ समाप्तः वैसाख मासे कृष्ण पक्षे द्वितीयांम् संवत् १९३६ वि० ग्रन्थ लिखा गया लेखक राम गोपाल त्रिपाठी आगरा मध्ये निवासी उत्तरी ग्राम परगना शिव राजपूर॥

विषय—वैद्यक।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता केशव प्रसाद दूबे थे। इन्होंने अपना परिचय इस प्रकार दिया है:—दोहा ब्रह्मावर्त प्रसिद्धि जो तीर्थ सुर सुती तीर। ताते पश्चि दिशि बसत राधन ग्राम सुधीर॥ तामें भये द्विज कुल तिलक दुवे देवकी राम। भये परमसुख तासु सुत पंडित विद्या धाम॥ तिनके जन्मे सुत उभय केशव अरु बल्देव। जिनमें केशव ने पढी विद्या करि पितु सेव॥ काव्य कोष ब्याकर्ण पढ़ि अरु वैद्यक के ग्रंथ। पुनि लीनो पितु साथ ही नगर आगरो पंथ॥ तहां शाला पाठक हुते पंडित हीरालाल। तिनकी पाइ सहायता रहे तहां कछु काल॥

ये राधन (जिला, कानपुर) के निवासी थे जो ब्रह्मावर्त्त (बिठूर) से पश्चिम की ओर गंगा के तट पर बसा है। ये दो भाई (केशव और बल्देव) थे। पिता का नाम परम सुख था। इनके बनाये अनेक ग्रन्थ हैं। निर्माण काल संवत् १९२७ वि० है:—संवत सत्ताइस अधिक उनइस शत को जान। तामें वैद्यक सार यह रच्यो ग्रन्थ सुख खान॥ लिपिकाल संवत् १९३६ वि० है।

संख्या १९३ जी. वैद्यकसार, रचयिता केशव प्रसाद दूबे (राधन, कानपुर), कागज—देशी, पत्र—६०, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००८, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२७ = १८७० ई०, लिपिकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवशर्मा वैद्य, बासूपुर, डाकघर—फरौली, जिला—एटा ।

आदि-अंत—१९३ एफ के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री द्विवेदी केशव प्रसाद कृत वैद्यक सार ग्रन्थ संपूर्णं समाप्तः संवत् १९३० वि० श्रावण शुक्ल पक्षे तिथौ त्रतीयायाम लिखतं शिव दत्त पाठक देहरादून निवासी ॥

संख्या १९३ एच. वैद्यकसार, रचयिता—केशव प्रसाद दूबे (राधन, जिला-कानपुर), पत्र—६४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—९७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२७ = १८७० ई०, लिपिकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला लालबिहारी, गोहरा, डाकघर—शाहाबाद, जिला—हरदोई ।

आदि-अंत—१९३ एफ के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री द्विवेदी केशव प्रसाद कृत वैद्यक सार ग्रन्थ संपूर्णं संवत् १९३० वि० लिखा राधाकृष्ण ॥

संख्या १९४ ए. पशुचिकित्सा, रचयिता—केशव सिंह (तियरी, जि० उन्नाव), पत्र—९०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८९०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३१ = १८७४ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर जैरामसिंह, बजीर नगर, डाकघर—मधौगंज, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ पशुचिकित्सा लिख्यते ॥ वृषकल्पद्रुमः—दोहा—गणपति गिरिजा ईश अरु विधि बन्दौं कर जोरि । विष्णु चरण को ध्यान धरि भाषौ ग्रन्थ वहोरि ॥ कवित्त—सिद्धि के सदन गज बदन विशाल तन दरश किये ते वेग हरत कलेश को ॥ अरुण पराग को लिलाट में तिलक सोहै बुद्धि के निधान रूप तेज ज्यों दिनेश को ॥ मंगल करन भव हरन शरन गये उदित प्रभाव जाको विदित हमेश को । जेते शुभ काज तामें पूजिये प्रथम ताहि ऐसे जग वंदन सो नंदन महेश को ॥ दोहा—वृष कल्पद्रुम ग्रन्थ को नाम कीन उच्चार । कछु निदान रुज सों कहौं पशु सुख हेतु विचार ॥ और दवा कछु जो सुनी ग्रन्थ में अव लोक । लिखिहों आगे ते सबै हरन पशुन को शोक ॥ वरणि शुभा शुभ कछुक विधि थोरो और विधान । विगरो जो यामें लखै सो सुधारु बुध वान ॥ अवध राज धानी जहां शहर लखनऊ जान । ताते पश्चिम जानियो सोरह कोस प्रमान । जिला लिखों उन्नाव को मिया गंज के पास । आसीवन को परगना तियरि ग्राम में वास ॥ तालुक दार कहावहीं केशो सिंह अहीर । तिन संग्रह करि ग्रन्थ यह हरन वृषभ की पीर ॥

अंत—दो० यह चारो रग जानियो घुट्टना गाठिन मांहि । वहिरी दिशि ये प्रगट हैं वहु निगाह करु ताहि ॥ चौ०—भितरी रग जो प्रथम वखानी । तिनके समुहें है यह जानी ॥ इन फस्तन को खोलि जो जानें । छाती भरी जकरि खुलि मानैं ॥ पगके रोग हरारत तनकी । नीक होय यह जानौ मनकी ॥ दोहा—यह रग एक वखानियो ढुम नीचे जर मांहि । वहुत पातरी होति है करु निगाह वहु ताहि ॥ चौ०—यह रग फस्त खोलि जो जानै । अंत कोस के रोग नशानै ॥ उदर में झोरिया जो वच्चन की तेहि के रोग हरै यह नीकी ॥ दूध सूख जावै जहि पशु को । अरु वदहजमी होवै वाको ॥ इतने रोग सकल हरि जाई । जो मन चितते करौं उपाई ॥ अथ अग्निपुराणे द्विनवत्यधिक द्विशत तमोऽध्यायः संपूर्ण समाप्तः । इति श्री पशुचिकित्सा वृषभ कल्पद्रुम संपूर्ण संवत् १९४० मिती कातिक वदी ३

विषय—वृषभ (बैलों) के रोगों के लक्षण और उनकी औषधियों का वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता केशव सिंह तियरि ग्राम निवासी थे । निर्माण काल संवत् १९३१ वि० और लिपिकाल संवत् १९४० है । इसको इस प्रकार लिखा है:—

संवत शशि गुण ग्रह शशी पौष मास तिथि तीज । ग्रन्थ अरंम्भन कीन तव वृष तन हित को वीज ॥ निवासस्थान आदि इस प्रकार लिखा है:—अवध राजधानी जहां शहर लखनऊ जान । ताते पश्चिम जानियो सोरह कोस प्रमान ॥ जिला लिखों उन्नाव को मियां गंज के पास । आसीवन को परगना तियरि ग्राम में वास ॥ तालुकदार कहावहीं केशव सिंह अहीर । तिन संग्रह करि ग्रन्थ यह हरन वृषभ की पीर ॥

संख्या १९४ बी. पशुचिकित्सा, रचयिता—केशवसिंह, (तियरी, जि० उन्नाव), कागज—देशी, पत्र—८४, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७९८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३१ = १८७४ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा रामदास राम कुटी, डाकघर—सिकन्दराराऊ, जिला—अलीगढ़ ।

आदि-अंत—१९४ ए के समान । पुष्पिका इस प्रकार है :—

इति श्री अग्नि पुराणे द्विन वत्यधिक द्विशत तमोऽध्यायः वृषभ कल्पद्रुम संपूण समाप्तः लिखा साधू राम सिंह नगरा निवासी जैतपुर जिला अलीगढ़ संवत् १९४० वि० जेसी प्रति देखी तैसी लिखी ॥ श्री गोपाल कृष्ण की जै ॥

संख्या १९४ सी. पशुचिकित्सा, रचयिता—केशवसिंह (तियरी, जि० उन्नाव), कागज—देशी, पत्र—८८, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८७०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३१ = १८७४ ई०, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला गेंदनलाल, सारौं, डाकघर—सारौं, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश) ।

आदि-अंत—१९४ ए के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री अग्नि पुराणे द्विन वत्यधिक द्विशत तमोऽध्यायः वृषभ कल्पद्रुम संपूर्ण संवत् १९३६ वि०

संख्या १९४ डी. पशु चिकित्सा, रचयिता—केशवसिंह (तियरी, जि० उन्नाव), कागज—देशी, पत्र—८४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८७६, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३१ = १८७४ ई०, लिपिकाल— सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर रामदेवसिंह, ग्राम—कुकरा देव, डाकघर—धूमरी, जिला—एटा।

आदि अंत—१९४ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री पशु चिकित्सा वृष कल्पद्रुम ग्रंथ केशवसिंह अहीर कृत संपूर्ण समाप्तः ॥ श्रावण वदी द्वादशी संवत् १९३६ वि०

संख्या १९५ ए. काशी काण्ड, रचयिता—श्री खेमदास जी (मधनापुर, जि० बाराबंकी), पत्र—१४१, आकार— ७ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्) ७८०, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८२७ = १७७० ई०, लिपिकाल—सं० १९५६ = १८९९ ई०, प्राप्तिस्थान—त्रिभुवन प्रसाद त्रिपाठी, पूरे परान पांडे, डाकघर—तिलोई, जिला—रायबरेली।

आदि—नमो नमो गन नायकं, शत चित आनंद रूप। जा सुमिरे सत सिद्धिता, गैवी रूप अनूप। वंदौ गुरू-पद-कंज मग, जेहि उर अंतर ध्यान ताहि दरस दूखन दहैं, अघ कटि घरि विलगान। नमो २ निः अक्षर, ब्रह्मा विष्णु महेस। नमो कहौं कर जोरिकै, नित प्रतिनमो नरेश पद वंदन आनंद जुत करि श्रीदीन दयाल। द्रवहु दास मम जानि के वरनौं वस्तु विसाल।

अंत—संवत कहिये अष्टदस, सत्ताइस ऊपर लीन्ह। अगहन शुक्ला सप्तमी, लिखि सम्पूरन कीन्ह। निजि मुख स्वामी भाखि कै कहिन कि भजहु मुरारि। सुसुन वेद कर भेद एह, मुनि सुन लेहु विचारि। संवत कहिये अष्ट दस चालीस चारि और चारि। पक्ष सेत तिथि सत्तमी, चैते लीन्हे उतारि। सो०-चैते लीन्ह उतारि प्रथम ग्रंथ ते पाठ करि जहुँ कहुँ चूकि हमारि सज्जन सोइ संभारिए।

विषय—प्रथम गुरू की वंदना, मन्त्रोपदेश लेने का वर्णन एवं भजन विधि वर्णन करके श्री दूलनदास, देवीदास, गोसाईं दास जी आदि की प्रशंसा की गई है। पीछे गुरू शिष्य के प्रश्नोत्तर के रूप में काशी जी की श्रेष्ठता और त्रिवेणी की महिमा बतलाकर यह दिखलाया है कि नेत्रों तथा भौहों का संधि स्थल ही त्रिवेनी रूप है। इसी क्रम में अनहद शब्दों का विवरण और उसकी गरिमा का वर्णन किया गया है।

टिप्पणी—श्री खेमदास जी मधनापुर (जिला—बारहबंकी) के रहनेवाले कान्य कुब्ज ब्राह्मण थे। बड़े होने पर एक ब्रह्मचारी से उपदेश लेकर घोर तपस्या की, परंतु ईश्वर का ज्ञान प्राप्त न हुआ। जब श्री जगजीवन साहब की कीर्ति सुनी तो उनके पास जाकर मंत्रोपदेश लिया। खेमदास ने काशी काण्ड, ततसार दोहावली तथा शब्दावली नामक ग्रंथ भक्ति विषय के लिखे हैं और बहुत से स्फुट भजन बनाये हैं।

संख्या १९५ बी. सब्दावली, रचयिता—खेमदास जी (मधनापुर, बाराबंकी), पत्र—५२, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६४

रूप--अच्छा, लिपि--नागरी, रचनाकाल--सं० १८३० = १७७३ ई०, लिपिकाल--सं० १९५७ = १८९९ ई०, प्राप्तिस्थान--त्रिभुवन प्रसाद तिपाठी, पूरे परान पांडे, डाकघर--तिलोई, जिला--रायबरेली।

आदि--राम नाम सत्त नाम हमरे कौन करै असनाना। काया गढ़मा कोटिन तीरथ, कोइ कोई पहिचाना। आपन अस जिउ सबका जानै ताहि मिलैं भगवाना। नीचे भरि ऊँचे ढरकावा सत्य नाम जिन्ह जाना। जलम जलम के पाप कटति हैं तिरवेनी गंगा असनाना। ना हम करिबे खेती चाकरी नाहि बनिज वैपारा। छिन एक नाम लेव साहब का एही नेम हमारा।

अन्त—सजन से लगन यह लागी, दरस को भइउँ वैरागी। नहीं वह रंग मोहि आवै सजन सो गुनह मोहिं लावै। उत्तै विरहे को दावा तपै तन बोलि नहिं आवा। दरद येहि देहँ दुवरानी वेदरदी दर्द ना जानी। आस की अमल को आवै खसम आगे भसम लगावै। अभूखन खाक तन साजा ललन को लागि तव लाजा। होइ जो अमर को वासी आउँ मैं ताहि की दासी। सुनावै गैव को डंका चलौ जहां हस्म है वंका। दियो गुर तखत उर डेरा करी नहि जक्त फिरि फेरा। तकत छबि पलक ना मारी चरन सखि स्याम, नेवारी।

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या १९५ सी. ततसार दोहावली, रचयिता—खेमदास जी, (मधनापुर, बारबंकी), पत्र—३१, आकार—७ × ५३ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९५, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८२८ = १७१७ ई०, लिपिकाल—सं० १९५७ = १८९९ ई०, प्राप्तिस्थान—गुरुप्रसाद दास, ग्राम—रमई, जिला—रायबरेली।

आदि—सोरठा—बंदौं सिद्धि गणेश, गंन नायक लायक सबै। तूपद परौं महेश, ग्यान ध्यान वरदान दे। करहु अनुग्रह मोहि, ज्ञान ध्यान वरदान दे। विनय करत हौं तोहि बुद्धि सुद्धि गुनि खानि तुम। दोहा—ज्ञान ध्यान वरदान दै निज मुख कहौं गणेश। दास स्याम विनती करै ग्रंथ करहु उपदेश। मूल मंत्र मन मँगन ह्वै, तजि जिय बाद बेवाद ततसार दोहावली, सिखि स्वामी संवाद। मम सेवक, स्वामी सदा, हौं तुव दास निदास। दास स्याम विनती करैं कहौं सो करहु प्रकास। जरा मरन गर्भवास ते, अमित लोग केहि जोग। कौन अर्थ ते रहित है कहु सो कैसे लोग।

अन्त—सदहिं सत्य सुमिरन करै सत्त तिलक धर ध्यान। निरखै निरगुन रूप सोइ, ह्वै बैठे निर्वान। ध्यान धरै हौं ताहिका जाहि धरैं मुनि ध्यान। सिद्धि साधु सुमिरन करै, सोइ तत्त परमान। अरस परस गुन गाइये ज्यौं २ उठै तरंग। दास स्याम दुनिया जहां तहां कहां वह रंग। दुनिया में दुइ ख्याल हैं, एक झूठ एक सांच। स्यामा दूनौ देखि कै सांचु समाने नाचु। भगति भेद एहि भांति ते, जानै जानै हिरदय मांहि। सदहिं सुरति लागी रहै सो नित निरखै ताहि। स्वामी अब सब भांति ते कीन्ह मोहि निहिसंक। सहज निरंतर नेह कै, नाम भजौ निहि शंक। गुरू मुख वाचा विष्णु के बड़े भाग्य से होइ। स्याम नाम सुमिरन करै हरदम सत्य समोइ।

विषय—तत्वज्ञान।

संख्या १९६. वैद्यप्रिया, रचयिता—खेतसिंह (गिजौरा विंध्याचल), पत्र—२६०, आकार—१०×८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७५०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८७२ = १८१५ ई०, लिपिकाल—सं० १९०३ = १८४६ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला भगवती प्रसाद वैश्य, कुंदौली, डाकघर—अतरौली, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ वैद्यप्रिया लिख्यते ॥ दोहा—श्री गिरजा सुत गुण सदन गणपति बुद्धि गंभीर । तुम दर्शन अघ वहु डरैं आनंद होत शरीर ॥ वंदहुं शारद मातु पद जो शुभ मति दातार । सारद सुमिरण करत ही वाढ़ै बुद्धि अपार ॥ विष्णु और लक्ष्मी जी की स्तुतिः—सोरठा—विष्णु सकल गुण ईश कमल नयन घनश्याम प्रभु । दुख टारन जगदीश सुर महिसुर भुव भक्त के ॥ दोहा—श्री लक्ष्मी कमला रमा सिन्धु सुता के चर्ण । वन्दहु सुख दायक सदा सकल सिद्धि सुख कर्ण ॥ श्री शिव और गिरजा की स्तुतिः—करि प्रणाम उर ध्यान धरि शंकर दीन दयाल । तिनकी कृपा कटाक्षते रंक होय भूपाल ॥ आदि शक्ति श्री पार्वती त्रिभुवन व्यापक शक्ति । उत्पति पालन प्रलय करि सकल देव करि भक्ति ॥ स्थान वर्णन दोहा—अब बर्णहुं स्थान पुनि श्री गुरु प्रथम निवास । दूजो निज वर्णन करौं पुनि सत संत प्रकाश ॥ गुरु स्थानः—शोभिजे दिलीप नगर चारि वर्ण धर्म हैं । वसैं तहां अनेक विप्र वेद उक्ति कर्म हैं ॥ भांति भांति के तहां अनेक सुख देखिये । लहे न दुख रंक हूं सो राजनीति पेखिये ॥ कविस्थान—अव वर्णो स्थान निज नाम गिजौरा जान । विन्ध्याचल गिरि निकट ही सो अब करहु वखान ॥ तीरथ परम पुनीत तहँ नाम अनौटा जासु । शिव गिरिजा शोभित तहां वनभारी चहुं पास ॥

अंत—ग्रन्थ की समाप्ति वर्णनः—गुरुकी कृपा कटाक्ष ते कह्यो ग्रन्थ गुण धाम ॥ तिन श्री गुरु के चरण को वारंवार प्रणाम ॥ चूक क्षमा करि आदरहिं ग्रन्थ सकल अभिराम वुध जन जेवर वैद्यपुनि तिनको दंड प्रणाम ॥ कछू न चातुरता कही बुध कछु नाहीं जोर । ग्रन्थनि ते औषधि कही कहा अधिकता मोर ॥ ताते मो विनती सुनौ चूक भूल सव कोय । मनसा वाचा कर्मना सेवक जानौ मोय ॥ पर निन्दा पर ईर्षा पर दुख सदा सुहाय । तिनको वहु विनती करौं दोष सो हृदय लगाय ॥ देव कोटि तेंतीस पुनि जिन सब रचे सुपंथ । तिनको उर धरि ध्यान रचि वैद्य प्रिया यह ग्रन्थ ॥ संवतसर—संवत सत अष्टा दशहिं अधिक वहत्तरि जानि । मार्ग शुक्ल पांचैं जु शनि तेहि दिनि ग्रन्थ बखानि ॥ पूरण कीनो ग्रन्थ यह रोगी को सुख दाय । याहि समुझि के वैद्यवर औषधि करियो ताय ॥ इति श्री वैद्य प्रिया ग्रन्थे श्री पंडित राज खेत सिंह विरचिते संपूर्ण समाप्तः ॥ श्री संवत विक्रमी १९०३ जेष्ट शुक्ल नवमी को ग्रन्थ लिखकर पूर्ण किया शिवगंज चौराई मध्ये विक्रमसिंह ठाकुर

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता खेत सिंह थे । निवासस्थान गिजौरा बिन्ध्याचल के पास अनौटा तीर्थ स्थान के निकट था । इसको इस प्रकार वर्णन किया है :— अव वर्णों स्थान निज नाम गिजौरा जान । विन्ध्याचल गिरि निकट ही सो अव करहु वखान ॥ तीरथ परम पुनीत तहँ नाम अनौटा जासु । शिव गिरिजा शोभित तहां वन भारी चहुं पास ॥ वहां

राजा मान सिंह राजा और जवाहिर सिंह दीवान थे। जाति के ये श्रीवास्तव कायस्थ थे। निर्माण काल संवत् १८७२ वि०—संवत् शत अष्टादशहिं अधिक वहत्तर जानि। मार्ग शुक्ल पांचै जु शनि तिहि दिनि ग्रन्थ वखानि ॥ लिपिकाल संवत् १९०३ वि० है।

संख्या १९७. रसतरंग, रचयिता—खुशीलाल (बरजीपुर, कानपुर), कागज—विदेशी, पत्र—३२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६०६, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२० = १८०८ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० विष्णुभरोसे, बहादुरपुर, डाकघर—बेहटा, गोकुल जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशाय नमः। अथ रसतरंग लिख्यते ॥ अस्तुति गणेश जी की ॥ दोहा ॥ विघन हरन मंगल करन कुंजर वदन विकास। दीजै वर बाढ़ै विशद वाणी वुद्धि विलास ॥ जय गणेश वर देवता तुमहिं नवावहुं माथ। विघन नाशि वुधि दीजिये जोरौं दोनों हाथ ॥ सवैया—गिरिजा सुत विध्न विनाशन हौ तुम वुद्धि प्रकाशन हौ जग माहीं ॥ शुभ नाम जपै भव पीर टरै अरु ध्यान धरै सव पाप नसाहीं ॥ पद पंकज राखि हिये अपने नित ठाढ़े पुकार करौ तुम पाहीं ॥ निज सेवक जानि विषाद हरौ मन वीच करौ शुभतास सदाहीं ॥ चौ०—जय गज वदन देव गन नायक। आरत हरण परम सुख दायक। जय जय शंकर सुवन कृपाला। ललित सिंदूर सुसोभित भाला ॥ जय गणपति गज दंत विशाला। सैल सुता सुत दीन दयाला ॥ जय लम्वोदर विघन विनाशन। मूषक वाहन वुद्धि प्रकाशन ॥

अंत—लौंद महीना—विलखि वारहु महीना हम विताये, सखी तब लौंद में घनश्याम आये। पिया अपने को हिरदे से लगाया, पहिन •अभिरन सखी पलिंगा विछाया ॥ हर्षि करि श्याम की छाती से लागी। सखीरी चैन से सव रैन जागी ॥ हुई मन कामना पूरन हमारी। विरह की सव ताप खोई मुरारी ॥ सखी री खुल गई तकदीर मेरी। वनी वांके विहारी की मैं चेरी ॥ मिली श्री राधिका मोहन को जैसे। मिले निज पीव से संसार से ऐसे ॥ वहुत सुख से वनायो वारहु मासा। मेरी पूरण करो नंदलाल आसा ॥ पढ़े इसको सदा कोई जो मन लाय। मिलै वैकुण्ठ भव सागर उतर जाय ॥ दोहा—रसिक श्याम जो नर सदा सुनै सहित विस्वास। हरि राधा पद रति बढ़ै पूजै मनकी आस ॥ प्रार्थना—कविताई जानों नहीं ना कछु पिंगल ज्ञान। कविजन भूलि सम्हारियो दास आपनो जान ॥ खेरेश्वर अस्थान ते दक्षिण दिशि एक ग्राम। कहत ताहि वरीज पुर सकल जगत सरनाम ॥ अद्‌भुत है नगरी वनी सुजन जनन कर धाम। ताही में मैं वसति हौं खुशीलाल मम नाम ॥ श्रीवास्तव पद दूसरो कुल कायस्थ बखान। सुत हौं देवी दयाल को करूं ईश को ध्यान ॥ संवत विक्रम जानिये उनइस सौ पच्चीस। चैत सुदी तिथि पंचमी पूरन कीनो ईस ॥ वृज को तजि हरि राधिका रहे द्वारिका छाय। सो चरित्र वर्णन कियो निज वुधि को वल पाय ॥ इति श्री रसतरंग संपूर्ण संवत् १९४० फाल्गुन शिव तेरस ॥

विषय—श्रृंगार।

संख्या १९८. श्री किशोरीदास जी की वाणी, रचयिता—किशोरीदास जी (वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—२२, आकार—१० × ७ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४, खंडित रूप—बहुत पुराना, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबा बंसीदास जी, गोविंदकुण्ड, वृंदावन।

आदि—श्री श्री गौरांग विधुर्जयति। श्री कुंज विहारण्यै नमः। श्री किशोरी दास जू की बानी लिख्यते। अथ श्री महाप्रभु जी के पद मंगला चरन लिख्यते। राग सूहो विलावल रुपकला। जे जे श्री चैतन्य मंगल निधि गाइये। प्रेम अवधि ललित लीला अधिकाइये। ऐसे गौर किशोर सदा उर ध्याइयै। ध्याइयै गौरांग सुंदर निरखि नैन सिराइयै। भज शची नंदन जगत वंदन त्रिविध ताप नसाइयै। पतित पावन विरद जाकौ बड़े भागन पाइयै। श्री किशोरीदास मंगल निधि जै जै श्री चैतन्य गाइयै। जै जै श्री चैतन्य परम कृपाल प्रगटे जीव उधारन भक्तन के प्रति पाल। दुषित जानि जन जन मले ततिहि काल भक्ति मंडन खलन खंडन अैसे दीन दयाल। अैसे दीन दयाल प्रभू हैं जगनाथ के लाल। कृष्ण भक्ति प्रकासि दसौ दिसि कीनौ विश्व निहाल।

अन्त—महाराज वृषभान बहुत बिधि की आस पुजाई। श्री किशोरी दास को बांह पकरि कै बरसाने जु बसाई॥ राग रामकली। हमतौ श्री चैतन्य उपासी। आनंद मंगल श्री शची नंदन सेऊ सुष रासी। इनके चरन सरन जै आवै पावै वृज वृन्दावन बासी। श्री किसोरी दास इनतहि औरै भजिते नर नरक निवासी।

विषय—कृष्ण भक्ति विषयक पद।

संख्या १९९ ए. सामुद्रिक, रचयिता—कोक, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७१० = १८५३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० गंगाराम गौड़, ग्राम—जलाली, जि०—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशायनमः॥ अथ सामुद्रिक लक्षण दोहा॥ निलज अंकुरा बोले अधिक तामस अति गति हास। कहै कोक गुन तरुनी के सकल अलक्षन वास॥ जाकी जुग भौहैं मिली ऐसी जुवती होय। कहैं कोक अति कुटिल मन तेहि प्रति षोवन कोय॥ तन कंपै मारग चलै जांघ पीडु़री वार। जहां तहां वह देखिये विभि चारणी वह नार॥ तरुवर वरित विहंग सम तिहि नक्षत्र को नाम। प्रगट जगत में देखिये व्यभि चारी वह वाम॥ कामिनि लज्जा परि हरै वैठै सम्मुख द्वार। गहे अजिर भावै नहीं ये लच्छन विभिचार॥ जाके अधर विसालती वोलै सदा कुवैन। सो नारी नहि व्याहिये निरषि आपने नैन॥ जा नारी की मुच्छ पर प्रगट हेरै कच स्याम। भूमि न परसै मध्य पग रांड दरिद्री वाम॥ जांघ मुच्छ पर वार जेहि सुभर काम को धाम। भूमि न परसै मध्य पग होइ सो विधवा वाम॥

अन्त—जाकी नारी गंभीर नहिं श्रवन होइ जिमि सूप। निश्चय होय दरिद्रिनी यद्यपि संग्रह भूप॥ छुधावती निद्रावती सोगवती सी वाम। उच्च दंत रसना कठिन कवहुं न पावै दाम॥ येक पीन होय छनि कछु अधिक हीन कछु अंग। वात कहत या तरुनी के फूलै ग्रीव उतंग॥ रोम होय सव गात पर चलती चाल उताल। अति दुर्वल अति छीन

तन सोभा पावत बाल ॥ जाके कूप कपोल द्वै बात कहत है जाय। तात भ्रात तरुनी के निश्चय जीवत नाहिं ॥ काम का वासः—

कृश्न पक्ष		शुक्ल पक्ष	
१	मस्तक	१	अंगुष्ठ
२	नेत्र	२	पाद
३	अधर	३	गुफ
४	कपोल	४	जंघा
५	ग्रीवा	५	भग
६	कोषि	६	कटि
७	कुच	७	नाभि
८	हृदय	८	हृदय
९	नाभि	९	कुच कांख
१०	कटि	१०	कांख
११	भग	११	ग्रीव
१२	जंघा	१२	कपोल
१३	गुफ	१३	अधर
१४	पद	१४	नेत्र
३०	पद अंगुष्ठ	१५	मस्तक

इति श्री सामुद्रिक कोक कृत नारी दूषण समाप्तः लिखतं लीला धर पांडे जेष्ठ शुक्ला सप्तमी संवत् १७१० वि०

विषय—सामुद्रिक शास्त्र।

संख्या १९९ बी. कोकविद्या, रचयिता—कोक पण्डित, पत्र—३२, आकार—८×६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२०, खंडित,रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० रामभजन बाजपेई, स्थान—सराय पैकू, डाकघर—सरौंद, जिला—एटा।

आदि—कोक पंडित ने लिखा है कि बल और वीर्ज के बढ़ाने को सैकड़ों औषधी रसादिक हैं परंतु दूध के समान कोई औषधि नहीं इस लिये मैथुन किये पाछू जो मनुष्य दूध पीवै वह कभी बल हीन नहीं होय वरन चौगना बल और वीर्य और बढ़ै ॥ दूसरी दवा ॥ तिली का तेल शरीर पर मलने से सरीर चैतन्य रहता है और अतरादिक सुगंध के सूंघने से मगज में बल की प्राप्ति होती है बल और वीर्ज बढ़ाने की औषधि-गोद ढाक का, ताल मखाना बीज बंद, समंदर सोख, मूसली सफेद, बड़ा गोखरू तज ये सब औषध बराबर ले पीस छान के बराबर की खांड मिलावैं प्रातःकाल दूध के साथ ६ माशा खाय ॥ दूसरी दवा ॥ कबाब चीनी लौंग अकर करा सोठ

ऊद खालिश स्पंद जलाने का ये सब बराबर पुराना गुड़ दुगुणा डाल गोली बांधै दिन सात खाय १० स्त्री को प्रसन्न करै ॥

अन्त--जिस स्त्री ने बेटा जना होय औरं बेटी चाहै--कड़ुई तोरई को साफ करके छिलका दूर करै भग में राखै फिर पानी से धोके पुरुष के संग मैथुन करै और मेंथी के लाडू खाय और चिकनी सुपारी दूध में पीसै और पीवै ॥ और औषधः--जाय फल को पुर्ष तोड़ै तीन टूक में एक गुड़ में लपेट के सिर पै वार के घर के पिछवाड़े फेंकै दरवाजे के सामने जहां छप्पड़ से पानी पड़ै खाय घर में पुर्ष खाय कोई जानै नहीं बेटी पैदा होय।

विषय--पुरुष स्त्री के बल वर्धक औषधि और गुप्त रोगों की औषधि तथा संतान एवं बांझ आदि की औषधि लिखी है।

संख्या १९९ सी. सामुद्रिक लक्षण नारी दूषण, रचयिता--कोक पण्डित, पत्र--१, आकार--१६ X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)--६०, परिमाण (अनुष्टुप्)--३०, रूप--प्राचीन, लिपि--नागरी, लिपिकाल--सं० १८९० = १८३३ ई०, प्राप्तिस्थान--पं० बाबूराम मास्टर, रामनगर, डाकघर--आवागढ़, जिला--एटा।

आदि-अंत--१९९ ए के समान।

संख्या २००. कविविनोद, रचयिता--कृष्णदत्त ब्राह्मण, कागज--पुराना मोटा, पत्र--१८, आकार--१० X ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)--२०, परिमाण (अनुष्टुप्)--७२०, रूप--अति प्राचीन, लिपि--नागरी, रचनाकाल--सं० १९२८ = १८७१ ई०, प्राप्तिस्थान--नाथू बनिया, पुरानी बस्ती कोठी, जिला--जब्बलपुर।

आदि--अथ कवि विनोद महा भट्ट श्री त्रिलोकी चंद्र जी की आज्ञा सों परम पुनीत नगरी भोजा की बावल वाले ब्राह्मण कृष्ण दत्त ने लावनी की चाल भाषा संस्कृत किया ॥ यह ग्रन्थ ब्राह्मणों को विशेष महाफल दायक सुगम लक्ष्मी का दाता है। सं० १९२८ में पूरा किया ॥ दोहा--प्रथम तीन सायर भये, तुलसी केशव सूर ॥ कृष्णदत्त तिनके सदा, पद सरोज की धूर ॥ १ ॥ सीताराम भजो नहीं नहीं कियो सुख गेह ॥ कृष्णदत्त द्विज मूढ़तैं, वृथा धरो नर देह ॥ २ ॥ भूत भविष्यत वर्तमान जो काल बतलाता है ॥ जोति शास्त्र सब शास्त्र सिरोमन बिना भाग्य नहीं आता है ॥ जिसका जन्में मेष लग्न में क्रोधवन्त और महाव्यसन सब कुटुंब से विरोध जिसके रक्त नेत्र रहना निर्धन ॥

अन्त--इति केतु फलं ॥ इति श्री मत्कृष्ण दत्त विप्र विरचतं जोतिसार भाषा कवि विनोद नव ग्रह फलं समाप्तं ॥ सम्बत १९२८ मिती भाद्र पद कृष्ण ५ भौम वासरे परोपकार्थये लिष्यते ॥ परोपकाराय शुभ भवतु मंगलं मंगलं भगवान विष्णुः मंगलं गरुडध्वजः मंगली पुंडरीकक्षा मंगला यतनो हरिः ॥ श्री शिवायनमः ॥ श्री रामामनमः ॥ इति शुभं सम्पूर्नं ॥

विषय--पृष्ठ १ से लेकर ३ तक गणेश स्तुति। पृष्ठ ४ में शिव कृष्ण और सरस्वती वन्दना। पृष्ठ ५ में बारह लग्नों (मेष, वृष, तुला, मिथुन, कर्क आदि) के फल। पृ० ६ से उच्च अथवा नीच ग्रहों का विचार। सूर्य का विचार पृ० ९ तक। चन्द्र का फल द्वादश

लग्नों में, पृष्ठ ११ तक। पृ० १३ तक भौम फल, पृ० १४ तक बुध फल, १६ तक गुरु फल, १८ पृ० तक भृगु फल, २५ पृ० तक शनिग्रह का फल, २८ तक राहु ग्रह का फल, ३२ तक केतु फल तथा बाकी में ग्रन्थ की समाप्ति।

संख्या २०१. श्री कृष्णदास जी के पद, रचयिता—श्री कृष्णदास, कागज—देशी, पत्र—४०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबा अनन्तदास, बनकुटी, शिवगंज चौड़ा, डाकघर—गोड़ा, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ श्री कृष्णदास के पद लिख्यते ॥ जो तुम हरि यह जुक्ति न करते ॥ हमसे पतित विस्वास विनतिव भव सागार क्यों तरते ॥ जो सुन नाउ लेत न उधरते द्विज को गनिका घरते। तव विधि देश काल हित साधन तप सुचि करि करि मरते ॥ जो वैकुन्ठ गये हूं रिषि दुर्वासहि नहिं परि हरते। तब मुनि गन तप बल तब भक्तनि दुषवत नेक न डरते ॥ जो श्रुति निपुनि जग्य विप्रनु तजि जुव तिन नहिं अनु सरते ॥ तब हम कर्म जाल सब पावक जन्म जन्म परि जरते ॥ जो ब्रज राज युवति के श्रम में वंधन हृदय न धरते ॥ तव अनुराग पियूष विना तव वैभौ बारिधि परते ॥ जाको सकल विनोद गाइयत भल की राधा वरते ॥ श्री कृष्ण दास हित वृन्दावन विधु जे न भजत ग्रत नरते ॥

अन्त—मोसे अधिक छाड़ि चतुराई। मैं जानी रजनी सव जागी जदपि सकुच ते कछु न जनाई ॥ अलंकृत तेरे अधर दसन छवि आलस वलित मुर लेत जंभाई ॥ देखहिं जो अति सुभग वदन पर मध्य सामरी लट छुट आई ॥ नागवली रस मलित ललित अति वनित कपोलन कुंडल झाई ॥ मानो अति विपुल बहत अनुरागहिं अनुपम नयनन की अरु नाई ॥ श्रम जल विन्दु ललाट पटल पर अति लागति सखि मोहिं सोहाई ॥ मानौ लाव निसेष कन उपटत अति ही ताते तन मन न समाई ॥ भृकुटी विलास हास रसि रंजित मनमथ मनमथ को सुखदाई ॥ कृष्णदास हित को वरनैं छवि जो नागर अपने मुष गाई ॥

विषय—कृष्ण भक्ति विषयक पद।

संख्या २०२. मंगलसंग्रह, रचयिता—कृष्णदास और ललितकिशोरी, पत्र—२, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—दालाराव जी दीक्षित, डाकघर—दोहली, जिला—आगरा।

आदि—अथ मंगल श्री कृष्णदास कृत लिष्यते। श्री राम। अथ मंगल श्रीकृष्णदास जी कृत लिष्यते। प्रथम जथामति श्रीगुरू चरन लड़ाये हो। उदित मुदित अनुराग प्रेम गुन गायहो। निरषदपन संपती सुष रीझ मस्तक नाय हो। देउ सुमति वलि जाउँ आनंद बढ़ाइहौ। आनंद सिंधु बढ़ाइ छिन प्रेम प्रसादे पाइ हौ। जै श्री वरू विहारुनिदास कृपा ते हरि मंगल गाइहौं। १।

अंत—मंगल ललित किशोरी जी कृत लिष्यते ॥ आजु महा मंगल भयो माई, भई प्रसन्न सरोवर राधे ये सुष कह्यो न जाई। परम प्रीतसौं विलसत दोऊ, प्रेम बढ़यो

अधिकाई । श्री हरिदासी रसिक सिरोमनि, उमंगि उमंगि आनँद झरलाई । १ । आजु समाज सहज मन भायो, कुमरि किशोरी गोरी भोरी, अपनी जान निकट बैषयो । अपने मेल मिली सब तान तरंग तरंग बढ़ायौ । श्री हरिदास रसिक सिरोमनि, तन मन वचनन हियो सिरायौ । १ । इति मंगल सम्पूरणम् ।

विषय—कृष्ण भक्ति के पद ।

संख्या २०३ ए. ज्ञानप्रकाश, रचयिता—कृष्णदास, पत्र—१६, आकार—८½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—८८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१० = १८५३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० बैजनाथ ब्रह्मभट्ट, अमौसी, डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्री गुरुभ्यै नमः ।। श्री गणेशाय नमो नमः दीन वचन होइ शिष्य ने । नमस्कार कियो आय । वंधेउ मन संसार ते । छूटै कौन उपाय ।। १ ॥ द्वितीय प्रश्न अव कहतु हौं । नीके कहिये मोहि । पंच कोस वपु तीनि की । उत्पति कैसे होहि ।। २ ॥ ॥ श्री गुरुवाक्य ॥ सिष्य उतर सुनि कहत हौं । निश्चै कर उर माहिं । छूटै एक विचार तैं । दूसर साधन नाहिं ।। ३ ॥ एकहि से त्रधा भयो । द्रष्टा सत्ता पाय । पंच कोस करि रचि रहै । कहौं तोहि समुझाय ॥ ४ ॥

अंत—कहत सुनत सव ही थके । भयो एक निरधार । ज्ञान अग्नि परगट भई । जगत भयो जरि छार ॥ कीन्हों ग्रंथ विचार यह । निश्चै ज्ञान प्रकास । श्रवन सुनत आनंद भयो । मिटै द्वैत जगभास ॥ गुरु सिष का संवाद यह । जोरि सुनै चित लाय । समुझै अपने रुप को । जक्त भर्म मिटि जाय ॥ × × × × इति श्री ज्ञानप्रकाश पोथी कृष्णदास कृत समाप्तम् ।। सुभं मस्तु—श्री राम सीता राम संवत् १९०० ।। १० जेठ मासे शुक्ल पक्षे तिथौ अष्टाम्यां सुक्रवारे समाप्तम् ।।

विषय—(१) पृ० १ से ४ तक—संसार से विराग होने का उपाय । पंच कोष और शरीरोत्पत्ति का वर्णन । शरीरों का पृथक् २ वर्णन । (२) पृ० ४ से ८ तक—जीव निरूपण । अज्ञान दूर होने का यत्न महा वाक्य का भेद । त्वं पद वर्णन । (३) पृ० ८ से १६ तक—आत्म निरूपण ग्रन्थकार परिचय जो इस प्रकार है:—सार सार सव ग्रन्थ को । संग्रह कियो वनाय । भाषा ज्ञान प्रकाश तव । दीन्हों नाम जनाय । ज्ञान प्रकास प्रकासते । रहै तिमिर कछु नाहिं । श्रवन मनन करि कृष्णदास । जोरि धरे उरमाहिं ।।

संख्या २०३ बी. ज्ञानप्रकाश, रचयिता—कृष्णदास, पत्र—५, आकार—८¾ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—७०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—लक्ष्मीनारायण श्रीवास्तव्य, चैदवार, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—२०३ ए के समान ।

संख्या २०४, पंचाध्यायी, रचयिता—कृष्णदास कायस्थ सकसेना दूसरे (रामपुर, समशाबाद), पत्र—१२, आकार—८¾ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—५००, रूप—प्राचीन, लिपि—फारसी, लिपिकाल—सं० १९१० = १८५३ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबू शिवकुमार वकील, लखीमपुर, जिला—खीरी (अवध)

आदि—श्री कृष्ण ॥ श्री गनेशाय नमः पोथी पंचाध्यायी हरि हर हरि जन सुमिरन करहू । हरि चरनार विन्द उर धरहू ॥ कोटि जग्य जप तप विधि नाना । अमित जोग व्रत संजम ध्याना ॥ प्रागादिक पुनि तीरथ जेते । नाम तुल्य हुइ सकहिं न तेते ॥ बन को अनल तिमिर को भानू । त्यों अघ को हरिनाम प्रधानू ॥ मूल मत्र हरि नामहिं जानौं ॥ मुच्छ द्वार कुंजी पहिचानौं ॥ है हरि नाम पाप को अरिनी । मोह नदी को सुन्दर तरिनी ॥ सुख दायक कुल कलुष विभंजन । है हरिनाम विश्व मन रंजन ॥ जग धंधा तजि धंध विचारौ । हरि उसास हरि नाम सँभारौ ॥

अंत—रास खेल अद्भुत कथा । कहे जथा मति गाइ । प्रभु पद पंकज पर सदा । कृष्ण दास वलि जाइ ॥ इति श्री पंचध्यायी भागवत दशम स्कंधे कृष्ण कृत मिती कुआँर बदी अष्टमी रोजयक शंबा सन् १२६१ फसली ब तारीख विस्तु यकुम शहर जीहिज्ज सन १२६९ हिजरी मुताविक हिन्दी संवत् १९१० वि० दर दैतुल सल्तनत लखनउ व महल्ले हसन गंज । औरुये गोमती । व मकाने खुद । वखत वेरब्त चरन सेवक अहक रुल इबाद दुर्गा परसाद वल्द लक्ष्मी परसाद काननगो परगना गोपा मऊ मुतील्लकै वोंगर सरकार खैरा वाद सूवै अवध ॥ सम्पूरण शुद्ध ॥

विषय—(१) पृष्ठ १ से २१ तक—रामनाम महत्त्व, कवि दैन्य वर्णन और ग्रन्थ प्रतिज्ञा । ग्रन्थकार परिचय इस प्रकार है:—खेमकरन गुरु नाम सुहायो । सुमिरि जासु जम त्रास नसायो ॥ द्विज वर मिश्र सनाउढ़ जानो । दया धाम गुन मय पहिचानों ॥ × × × कृष्ण दास मम नाम । हरिजन चरन सरोज रज । रहत रामपुर ग्राम । समशा वाद प्रसिद्धि जो ॥ करी कृपा पूछे बरन । वरन सुनाऊं तोइ ॥ सकसेनो कायस्थ कुल । जानु दूसरो मोइ ॥ ग्रन्थ निर्माण कालः—शुक्ल पक्ष तिथि पूर्णिमा । अश्वनि मास पुनीत । वनछा भूलन विविध अरुन नील सुत पीत ॥ रहस्य प्रस्ताव तथा रास रचना । (२) पृ० २२ से ४७ तक—अन्तर ध्यान कथा । (३) पृ० ४८ से ५५ तक—गोपिका जोग वर्णन । (४) पृ० ५६ से ९२ तक—राम लीला वर्णन ।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता कृष्ण दासजी कायस्थ सकसेना दूसरे थे । इनका निवास स्थान रामपुर नामक ग्राम जो अब शमशाबाद के नाम से प्रसिद्ध है, था—संभवतः यह फरुखाबाद जिले का शमशाबाद है । इनके गुरू का नाम खेम करन था । यह सनाढ्य जाति के मिश्र ब्राह्मण थे ।

संख्या २०५ ए, विहारी सतसई, रचयिता—कृष्ण कवि, पत्र—१०, आकार—७ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्) ७२, खंडित रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० दुर्गाप्रसाद शर्मा, फतहाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—दोहरा । डीठिन परतु समान दुति कनक कनकु से गात । भूषन कट कर कस लगत परस पिछाने जात । टीका । यह नाइका के अंग की दीपति सखि नाइक सौ कहति है । नाइक हु सखी सौ कहै तो सम्भवै । कवित्तु । आजु लाल एक के ब्रज वाल मैं विलोकि जाकी ललित लुनाइ लखि लोचन सिहात हैं । साजति सिंगार रचि पचि के प्रवीन

आली तिनहू के चेत सब हेरत हिरात है। करति विचार पै न होत निरधार कछु जै सोई कनकु तैसी कनक के गात है। कौवरे करै कै वितान पहिचानियत कर परसै है आभूषण जानै जात हैं। ७० ।

अंत—गुडि लखि लाल की अंगना अंगना माह। वौरी दौरि फिरति छुवति छवीली छाह। टीका। यह नाइका पर कीया प्रौढ़ा है सुनाइका की चंग को छाह छुए ते नाइका के मिले ही को सुख भानति है। सखि सखि सो कहति है। कवित्तु। नंदलाल नव नागरि पै निजु रूप दिखाई...... ।

विषय—विहारी सतसई के दोहों पर कवित्त रचे गए हैं।

संख्या २०५ बी. विदुर प्रजागर, रचयिता—कृष्ण कवि, पत्र—१८०, आकार—५×३ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—८१०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७९२, लिपिकाल—सं० १७९२ = १७५५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० दुर्गाप्रसाद शर्मा, डाकघर—फतेहाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्री रामजी सहाई। श्री गणाधिपतये नमः श्री रामचन्द्रजी सदा सहाई। अथ विदुर प्रजागर लिखते। दोहा—सुमति सदन सुंदर वदन एक दंत वरदानि। छम रुचि विघ्न विनास कर गनपति मोदक पानि। १। सरद सुधा निधि वदन द्युति सुमिरौं सारद माई। जाके कृपा कटाक्ष ते विमल बुधि अधिकाई। वंदौं गुरु गोविन्द के चरन कमल सुविलास। कहौं तथा मति वरन कछु भारत को इतिहास। ३। धृतराष्ट्र ते विदुर ने कीयौ धर्म संवाद। कहत कृष्ण भाषा वरनि सुनत विलाई विषाद।

अंत—दोहा। विदुर प्रजा गरु में कह्यो यह भाषा मनु ल्हाइ, पढ़ै गुनै समुझै सुनै ताको पापु विलाई। सकल कथा इतिहास को भारत कहिये सारु ताहु में उदिम परव तामें विदुर प्रजारु राजा आया मल की आज्ञा अति हितु जानि विदुर प्रजागर कृष्ण कवि भाषा कन्यो वखानि। ३५। मैं अति ही ढीठ नौकरी कवि कुल सहज सुभाई। भूल चूकि कछु होई तो लीजौ समझ बनाइ। सत्रह में अरु बानवें सम्वत् कार्तिक मास सुक्क पछि पाचें गुरौ कीनो ग्रंथ प्रकास। ३७। इति श्री महाभारथे उद्योग पर्व ने विदुर प्रजागरे कवि कृष्ण भाषा नवमोध्याय।

विषय—महाभारत की कथा आदि से अंत तक संक्षेप में लिखी है।

संख्या २०५ सी. विदुर प्रजाकर, रचयिता—कृष्णकवि, पत्र—६७, आकार—$7\frac{1}{2} \times 6\frac{1}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३०७, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९११ = १८५४ ई०, लिपिकाल—सं० १७९२ = १७५५ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबूराम बहादुर अग्रवाल, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—२०५ बी के समान।

अन्त—राजा आर्यामल कहीं। आज्ञा अति हित जानि। विदुर प्रजाकर कृष्ण कवि भाषा रचौ बषानि ॥ ३९ ॥ मैं साहस अति ही कन्यौ। कवि कुल जाति सुभाइ। भूल चूक जो होइ कछु। लीजौ समुझि वनाइ ॥ ४० ॥ सत्रह सै अरु बानवै। संवत् कातिक मास।

सुकुल पक्ष पाँचै गुरौ । कीन्यों ग्रन्थ प्रगास ॥ ४१ ॥ इति श्री महा भारते महा पुराने उद्योग पर्वने विदुर प्रजागेर नाम नवमो अध्याय ॥ ९ ॥ धृत राष्ट्र विदुर संवादे कथा संम्पूर्ण सुभ मस्तु संवत् १६११ जेठ वदी ३० लिखित लाला भवानी प्रसाद विनौली के कायस्थ ॥ जैसी प्रति देखी तैसी लिखी अक्षर मात्रा की भूल होइ सो सम्हार लीजौ श्री सीताराम जी सहाय ॥

विषय—(१) पाँडवों की उत्पत्ति, उनका निष्कासन, द्रोपदी विवाह, पाँडवों का पुनरागमन, अर्द्ध राज्य प्राप्ति, राज सूय यज्ञ, मगध देश एवम् शिशु पाल विजय, द्यूत क्रीड़ा, पाँडवों का वनोवास, आदि [१ से ४ तक] प्र० अ० (२) विदुर का राजा धृतराष्ट्र की प्रार्थना पर कुछ कथन—पंडित एवम् मूर्ख के लक्षण, बड़ा कौन है ?—आदि राज नीति सम्बन्धी कुछ उपदेश [१४—२५] द्वतीय अध्याय (३) विदुर द्वारा धृतराष्ट्र को धर्म के दस लक्षणादि अनेक उपदेश [२५—३२] तृतीय अध्याय (४) "विरोचन (प्रह्लाद सुत एवम् धन्वा का विवाद । प्रह्लाद का निष्पक्ष निर्णय कर पुत्र के प्राणो की परवाह न करना । धन्वा का विरोचन को प्राणदान" इस इतिहास द्वारा धृतराष्ट्र को विदुर का धर्मोपदेश, पुण्य पाप की व्याख्या [३२–३९] च० अ० ।

(५) अत्रि सुत दत्त तथा साधुओं के संवाद का इतिहास द्वारा विदुर का अनेक उदाहरणों और धर्म शास्त्रानुसार उपदेश देना [३९—४६] पंचमोऽध्याय ।

(६) स्वयंभू मनु के उपदेशों का सार [४७—५३] ष० अ० । (७) अतिथि सत्कारादि अनेक विषयों का उपदेश तथा पाँडवों को उनका राज्य दे देने का आदेश [५३—५७] सप्तम अ० । (८) "जहाँ धर्म तहँ जय" आदिक कथनों द्वारा उपदेश, कौन नष्ट होता है ? दया और धीरजादि की व्याख्या [५७—६३] अष्टमोध्याय । (९) संसार का मिथ्यात्व, एवम् शरीरादि की अनित्यतादि सम्बन्धी अनेक प्रमाणों द्वारा राजा को विदुर का उपदेश देना । अन्त में धृतराष्ट्र का अदृष्ट की प्रवलता का वर्णन कर होनहार पर विष को छोड़कर चुप रहना । ग्रंथकार का स्वल्प परिचय एवम् अभिभावक का परिचय, ग्रंथ पठन पाठन फल व निर्माण काल का दोहा ।

संख्या २०५ डी. विदुर प्रजागर (उद्योग पर्व), रचयिता—कृष्ण कवि, कागज—देशी, पत्र—६६, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—७४२, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७९२ = १७३५ ई०, लिपिकाल—सं० १८९० = १८३३ ई०, प्राप्तिस्थान—हनुमान प्रसाद जी राय, सहायक पत्रालयाध्यक्ष, जिला—मथुरा ।

आदि-अंत—२०५ बी के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री महाभारते उद्योग पर्व नवमो अध्याय ॥ ९ ॥ संपूर्ण । सुभमस्तु ॥ संवत १८९० पूस मासे कृष्ण पक्षे शनिवासरे । तिथि दुतिय लिष्यत गुमान खां पठान । सकरौली मध्य रहत । श्री राम जी ।

संख्या २०६ ए. खेल बंगाला, रचयिता—कुदरतुल्ला (फरुखाबाद), पत्र—१६, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३५०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०८ = १७५१ ई०, प्राप्तिस्थान—सैम्ह, मनौना, डाकघर—पटियाली, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश) ।

आदि—श्री गणेशायनमः। अथ खेल बंगाला लिख्यते।। यह पुस्तक खेल बंगाला कुदरुत उल्ला फर्खावाद के रहने वाले ने वनाया। कपड़े की आड़ से निशाना लगाणे को ताकीब। बंदूक में गोली की जगह पारा भरै और बंदूक के आगे कपड़ा तानै जिसकै चाहे निशाना लगावै जानवर मर जावेगा कपड़े में छेद न होवेगा आक के दूध से हाथ से जो चीज चाहो सो सुखा लो जब साफ सूख जावै तो राख या माठी मलौ लिखा हुआ कुछ मालूम न होगा कि क्या लिखा है।। वगैर रंग व स्याही के रंग वरंग लिखना। पियाज का अर्क निकाल के सफेद कागज पर उस अर्क से लिखै और छाहीं में सुलावै तो लिखा वे मालूम हो जायगा जब उस कागज को आग में सेंके तो सब अक्षर पीरे रंग के प्रगट हो जावेंगे देखने वालों को बड़ा अचरज होगा॥

अंत—चिर चिड़ा की जड़ हाथ में पकड़ के जीता विच्छू पकर ले जहर असर नहीं करेगा॥ कसौटी का पत्थर खूब पीस कर दिया कि बाती पर गुदक दो चाहे जितनी हवा चले दिया न बुझेगा परंतु तेल सरसों का जलावै।। मर्द का वीर्य कपड़े में वांध कर जहां पानी के घड़े धरे जाते हो नीचे गाड़ दो वह मर्द नामर्द हो जावेगा।

विषय—आश्चर्य और कौतूहल पूर्ण खेलों का प्रदर्शन।

संख्या २०६ बी. खेल बंगाला, रचयिता—कुदरतुल्ला (फरूखाबाद), पत्र—१६, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३५६, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०९ = १८५२ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० दालसिंह, मनौरा, डाकघर—पटियाली, जिला—एटा, उत्तरप्रदेश।

आदि-अंत—२०६ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार हैः—इति खेल बंगाला संपूर्ण लिखा विसुनलाल कायस्थ अलीगंज का रहने वाला लिखा फाल्गुन मास शुक्ल पक्ष दिन एतवार संवत् १९०९ विक्रमा जी का

संख्या २०६ सी. रागमाला, रचयिता—कुदरतुल्ला (फरुखाबाद), कागज—विदेशी, पत्र—१२०, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३७ = १८८० ई०, प्राप्तिस्थान—लाला बालकराम, गोविन्दपुरे, डाकघर—माधौगंज, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ राग माला लिख्यते। ठुमरी राग काफी॥ सुघर धनि पनियां भरन गई भूल॥ अंतरा।। गगरि सगरि धर कुआं की जगत पर ठाढ़ रही उर पर दोऊ कर धर। मन अचेत कांपत तन थर थर मुक्त माल रही भूल।। पनघट की सब सखियां सयानी सुनत तान तनमन अकुलानी। शंकर श्याम बड़े गुण ज्ञानी यह वंसिया मंत्र है मूल॥ सुघर धनि पनिया भरन गईं भूल।। १॥

अंत—दादरा–सांवलिया जगाय लाऊ मोरा रे। मोरे पिछवारे मोर चुगुत है कोइ मत करियो शोरा रे॥ उठो ननद नेक दिया वारो द्वारे ठाढ़ो चोरा रे।। जो मैं जानती मोरे बालम हैं काहे को करती शोरा रे॥ चुन चुन कलियां मैं सेजा विछाई सोवैं पिया तहां मोरा रे॥ सांवलिया जगाय लाउ मोरा रे। इति श्री रागमाला ग्रन्थ संपूर्ण समाप्तः मिती पौष सुदी दुइज संवत् १९३६ वि०

विषय—अनेक कवियों के राग रागिनियों का संग्रह ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता का पता नहीं, परन्तु संग्रहकार कुदरत उल्ला फर्रुखाबाद के निवासी थे । लिपिकाल संवत् १९३६ वि० है ।

संख्या २०७ ए. उपदेशावली, रचयिता—कुन्दनदास, पत्र—२४, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९३ = १८३६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामनारायण, अमौली, डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्री दुर्गे महरानी । मन मेरो प्रभु मल भ्रीसत, तो पद वारि समान । ता सो धोवै वचन मम । जेहि जावै अज्ञान ॥ २ ॥ राम चरित भाषा चहौं । कीन्ह सो कृपा निधान । ताते विनवै गुरु चरन । दीनवन्धु भगवान ॥ ३ ॥ गुरु विन या संसार में । को पावै भव पार । उतरो चाहै उदधि को । तौ करु हृदय विचार ॥ ४ जाके गुरु पद प्रेम नहिं । पुनि संतन के संग । ते जड़ पाँवर पसु सरिस । देह तासु की भंग ॥ ५ ॥ सोरठा—हरे राम अस नाम । मम गुरु दीन दयाल की । तिन दीन्हौं हरि ज्ञान । जासे सब सुष मिलत है ॥ ६ ॥ राम नाम उपचार । प्रगट कियो कलजुग विषै । जीवन को उपकार । देह धरी यहि हेत जिन ॥ ७ ॥ ऐसे गुरु को पाय । कुंदन मन संका करी । प्रभु मोहि देहु वताय । राम चन्द्र को भजन दृढ़ ॥ ८ ॥

अंत—सोरठा मम मति है अति मंद । माया ममता में वसी । सदा अधम मति अंध । कविता कहौ केहि भांति ही ॥ ९९ ॥ सकल सभा के संग । तुमसों मैं विनती करौं । भाष्यौ मैं यह ग्रन्थ । अपनी मति अनुसार करि ॥ १०० इति श्री उपदेशावली कुंदनदास कृत समाप्तं ॥ सुभ संवत् सर ॥ १८९३ ॥ शाके ॥ ५८ ॥ अषाढ़ मासे कृष्ण पक्षे तिथि त्रयो दस्यं ॥ १३ ॥ शनि वासरे क समाप्त ॥ राम राम राम राम राम ॥

विषय—(१) पृ० १ लुप्त, पृ० २ से पृ० ७ तक—मंगला चरण । गुरु का महत्व एवम् राम भजन का प्रभाव । भवसागर की संक्षिप्त कथा । गर्भ में जीव की स्तुति ईश्वर वाक्य । (२) पृ० ८ से १७ तक—बाल, युवा और वृद्धावस्था संबंधी दुखों एवम् पापादि का वर्णन और उनके संबंध से भक्ति का उपदेश । (३) पृ० १८ से २४ तक—राम भजन का उपदेश । नरक की भयंकरता । चौरासी योनियों से छूटने का विधान । गुरु वन्दना । गुरु की मृत्यु का समयः—संवत् अठारह सै को साल इक्यानवै तामें भोग भई है । अरु साके सत्रह सै छप्पन पुनि मार्ग शुक्ल नौमी जो लई है । भूमि जो वार पुनीत महा नज्जम गढ़ गंगा निकट सही है ॥ देह तजी तेहि काल कृपाल कहै "कुंदन" भजुराम नहीं है ॥ कवि दैन्य वर्णन और ग्रन्थ समाप्ति ।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रन्थ कुंदन दास जी ने विविध प्रकार के छन्दों में लिखा है । इनके गुरू का नाम हरेराम था जिन्होंने संवत् १८९१ में गंगा तटस्थ नज्जम गढ़ नामक स्थान में शरीर त्याग किया ।

संख्या २०७ बी. रामविलास, रचयिता—कुन्दन दास, पत्र—१२, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०५, खंडित, रूप—

प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० रामनारायण, अमौली, डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ कुंदनदास कृत रामविलास लिख्यते ॥ रागगौरी ॥ वन्दो गनपति चरन हरन दुष। शिव के पुत्र सिद्धि के दाता जेहिं सुमरें तिहि होत परम सुष। कोसौ विघन होई जो के हुहि लेइ नाम तिहि काल। सिद्धि करौ पुनि विघन हरै सब शिव सुत दीन दयाल ॥ हरि की दई मुद्रिका सोभित करमें मानो भानु। विघन तिमिर हिमि नासत है जिमि पातक हरि को नाम ॥ सुमिरत संकर पुनि विधि जिनको सदाँ काम कल्यान। प्रथमैं पूँजि गनेस गौरि पद पाछे करत विधान ॥ सो गन नायक है सिधि दायक ता पद माथ नवावै। कीजै दास दास कुंदन को राम चरित जिहि गावै ॥ १ ॥

अंत—॥ कुंडलिया ॥ द्विज वर सकल बुलाइकै। रघुवर दीन्हौं दान। वार वार अस्तुति करी। राजिव नैन सुजान ॥ राजिव नैन सुजान। राम सोभा सुखसागर। राज नीति पर वीन। ग्यान वैराग्य के आगर ॥ कहि कुंदन येहि विधि दान दै। गवन कीन्ह रघुवीर घर। आनंद सहित आसिष दियो। सरजू तट के द्विज वर ॥ १३ ॥ विश्वा मित्र प्रवीन मुनि। वसत जु उराम ठाम। अति गंभीर पुनीत वन। तहाँ जपै हरि नाम। तहाँ जपै हरि नाम। कसैं इन्द्री सब अपनी। जोग जग्य दृढ़ करै। हरै काया अघ अपनी ॥ जोग जग्य दृढ़ करै। आनि श्रुति स्याम जो अस्वा। जग्य होन नहिं पावै। चले तब अवधहिं विस्वा ॥ १४ ॥

विषय—(१) पृ० १ से १२ तक प्रार्थनाएँ एवम् राम चरित्र वर्णन (रामजन्म से विश्वामित्र आगमन के पूर्व तक) (२) पृ० १३ से...अन्त तक लुप्त।

संख्या २०८ ए. लघुतिब्ब निघंट, रचयिता—लाड़िली प्रसाद, कागज—देशी, पत्र—४८, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—९७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर मानसिंह, ग्राम—पाली, डाकघर—पाली, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ लघुतिब्ब निघंट लाड़िली प्रसाद कृत लिख्यते ॥ अद्रक—गरम प्रकृत वाले को अवगुण निवारण वादाम का तेल। गरम खुश्क है भोजन को पचाता है। अकारे तथा वादी को और कफ को और उदर की तरो को दूर करता है। अंखरोट—गरम खुश्क है वीर्य को उत्पन्न करता है मैथुन शक्ति को बल देता है प्रकृति को नरम करता है। मस्तक हृदय उदर गुर्दा और कलेजे को बल देता है। अफीम—बुद्धि को अवगुण निवारण केशर तथा दालचीनी सर्द खुश्क है नींद लाती है पीड़ा को शांत करती है। वायु फो खोती है और अफारा लाती है। नजले को गुणदायक है।

अंत—संसार में मैंने सब रोगों के नुसखे देखे परन्तु पाप रोग का नुसखा कहीं नहीं मिला अन्तमें ढूंढते २ एक पुस्तक में मिला जो मीदहसन ने वायजीद की कथा में लिखा है। वर्णन है। कि एक दिन वायजीद घूमते २ एक स्थान पर जा निकले वहां देखते

हैं एक हकीम ने औषधियों की दूकान खोल रखी है और हजारों मनुष्य उसके आस पास इकट्ठे हो रहे हैं और वह अपनी वैद्यक के घमंड से चिल्ला चिल्ला कर कहते हैं कि मैं प्रत्येक पीड़ा की औषधी करता हूं और यह मेरी दूकान चिकित्सालय है यह सुनकर वायजीद ने उस हकीम के पास जाकर पूछा कि अये छोटे वड़े मनुष्यों के पीड़ा के चिकित्सक तेरे पास कोई औषधी पाप रोग की भी है। यह सुनकर वह हकीम तो चुप रह गया परन्तु एक उन्मत्त पुरुष ने जो वहां वैठा था कहा कि अय वायजीद पाप रोग का एक नुसखा मेरे पास रखा है परन्तु उसमें सब वस्तु कड़वी हैं। तू उसको न पी सकेगा। वायजीद ने कहा कड़वी दवा ठीक होती है। तब उन्मत मनुष्य ने कहा कि तू पहिले फकीरी रूप बीज ले संतोष के पत्ते जमा कर विनय की हरड़ तैयार कर उसमें धर्म का वहेड़ा आदरभाव का जामला मिलाले फिर श्रद्धा के इमाम जस्ते में कूट विचार की हाड़ी में भर उसमें प्रेम का पानी डाल उत्सव की आंच दे जब उफान आवे तब छान कर ईर्षा द्वेष काम क्रोध मोह लोभ का फोफ निकाल फेंक और आशा के प्याले में भरकर परमात्मा के गुणानुवाद का शहत मिलाकर फिर पाप के कंठ में डाल जिससे तू इस रोग से छुटकारा पावे।

विषय—वस्तुओं के गुण अवगुण और अवगुणों के निवारण की वस्तुओं का वर्णन है।

संख्या २०८ बी. निघंट, पत्र—४४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—९८०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, ठाकुर हरदन सिंह, ग्राम—कंजापुर, डाकघर—पटियाली, जिला—एटा।

आदि-अंत—२०८ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री लघुतिब्ब निघंट लाढ़िली प्रसाद कृत संपूर्ण संवत् १९३२ वि०।

संख्या २०९. रामगोल वैद्यक शास्त्र, रचयिता—लघुलाल, पत्र—२०३, आकार—१० × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०७५, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—लाला प्रभूलाल वैद्य, स्थान—फिरोजाबाद, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। श्री मते रामानुजाय नमः। अथ रामगोल वैद्यक सास्त्र लिष्यते। हिंदुवा वा फारसी किताब पोथान के मतोत्पत्ति दवाई ताप की। अथ वात ज्वर। पाइनु की अगुरी सीतल प्याइ होइ। मुष मीठो होइ। देही में तड़कलु होइ। सिर पीरा होई। ताको उपचार। सौंप मासे ४ ॥ मुनक्का दोने ९ अंजीस वनफसा मासे ४॥ गाजमा मासे २॥ अनेसू मासा १॥ मिश्री तोला १॥ पानी चौदह टंक भरि। चहारम राषि ल्यावै। दोहरी। सौंप मासा ४॥ गिलोइ मासा ४॥ बनफसा मासा ४ मुनका दाने ७ आलू बुखारे दाने २॥ गुलकंद तोला १॥ तीसरी॥ सौंफ मासे ४ गिलोइ मासे ४॥ मुनका दाने ७ अंजीर दाना १॥ आलू बुखारा दाना १॥ पिस्ता दाने ७ षतमी मासे १॥ मिश्री तोला १॥

अंत—पाप ग्रह के वेध असुभ। चक्र विधि।

अ	कृ	रो	मृ	आ	प्र	प्र	श्लो	आ
भ	ड	अ	घ	क	ह	ड	जु	म
अ	ल	ल्ट	२	३	४	ल्ट	म	पू
रे	च	१	ओ	१ सू ६ म	० औ	५	ट	ड
उ	द	१२	४ ९ सु १४	४ १० ष ११	२ ७ चं १२ वु	६	प	ह
पू	स	११	अः	३ १ वृ १३	अं	७	र	चि
स	ग	रौ	१०	९	८	ए	त	स्वा
ध	ऋ	षि	ज	भ	प	न	ऋ	वि
ई	षु	अभि	उ	पू	मू	ज्ये	ऽनु	द

संहार चक्र और हू है। परि जे सबही चक्र युद्धादि कों समर में विसेष करिके हैं। औरु सयान के समैं अक्षे हैं। परंतु फलु रोगी और नरकों करत हैं। इति श्री रामय गोले वैद्य सारोक्ति श्री राउचंद्र हंस ज्वाज्ञा लघुलाल वचनि का काल ज्ञान चक्र निरुपनो नाम अष्टमोपदेसः। ८।

विषय—अनेक रोगों के लक्षण तथा उनका निदान।

संख्या २१०. भगवंत भूषण, रचयिता—ललित लाल, कागज—देशी, पत्र—१११, आकार—६$\frac{1}{2}$ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचना-काल—सं० १९०१ = १८४४ ई०, प्राप्तिस्थान— बाबू हनुमान प्रसाद जी सब पोस्टमास्टर, स्थान—राया, डाकघर—राया, जिला—मथुरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। अथ श्री भगवंत भूषन लिख्यते। प्रथम गनेस अस्तुति। छप्पै। एक रदन बुधि सदन भाल भ्राजत मयंक वर। लंबोदर सुषपानि मोद आनद मंगल कर॥ सुंडानन भुज चारि विवुध चितु चरननि ल्यावत पाइ मनीषा विमल सुजस नृपगन के गावत। जिहि वलऊ वित्त भगवंत के करौ सरल मंजुल रचन॥ बरदान देहु जीन जानि कवि जय जय संकर सुवन।

अंत—कवित्त, जीरन जन्या व जाकौ जाजरीन जोरै जुरै जतन करि हारौ भूरि भार भरी झीनी है। वारिध मय दाई कैरौ ललिता को अपराध। ललित लाल इह ग्रंथ कौ जे

नर पढ़हि हमेस । तिनके सकल मनोरथ पूरन करै रमेस । इंदु षनवि ससि संवत पूरन कीनौ ग्रंथ । श्रावन शुक्ला पंचमी रवि वासर कवि कंथ । इति श्री मन्महाराजाधिराज भूषन भूषिता यां मिश्र ललित लाल विरंचतेते भगवंत भूषन नाम ग्रन्थ श्री राना जी भगवंत स्वार्थं वरननं संपूरन मस्तु । कल्यान रस्तु ।

विषय—गुरु, सारदा और कवि स्तुति । किताब, मुचकुंद, सामान्य भूमि भूषन, देस्र, नग्र, दुर्ग, सरिता, वन, विविध वृक्ष, प्रथम दीर्घ वृक्ष, मध्यम वृक्ष, लघु वृक्ष, गिरि, आश्रम, बाग, सरोवर, बाजार, धाम, पताका, सभा, सभा शोभा, सूर्योदय, चंद्रोद्रय समुद्र, सामान्य षट् रितु, विशेष षट् रितु, पावस, सरद, विजय दशमी, शिशिर, बसंत, ग्रीष्म, सामान्य राज्य श्री, भूम्पामर नव, विसेष, राज्य श्री, महाराज कुमार, प्रोहित, दलपति, राजा मंत्री मेरु, प्रतिहार दूत, गजराज, संग्राम, आखेटक, जलकेलि, विरह, स्वयंवर, राजा श्री भूषन, राज नीति, सत्रुनाश, विवेक और दान वर्णन ।

संख्या २११. उदाहरणमंजरी, रचयिता—लल्लूभाई (भड़ौंच), कागज—देशी, पत्र—१०८, आकार—१२ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७८, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३३ = १७७६ ई०, लिपिकाल—सं० १८३६ = १७७९ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री अद्वैतचरण जी गोस्वामी, स्थान—राधारमणघेरा, वृंदावन, डाकघर—वृंदावन, जिला—मथुरा ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः । अथपूर्णोपिमा । यह विधि सब समता मिले उपमा सोई जानि । ससि सो उज्जल तिय वदन पल्लव से मृदु पानि ॥ कवित्त ॥ भूषन जरा इनके पाइन अनोट ओट कंचन अनूप रूप सांचे ही की ढारी सी । घुंघरू पाइल पर जे हरी विराजे अरु वाजे छुद्र घंटिका निहारे मति हारी सी । कंठ २ माल भाल लाल २ की जिनतें दिन सदुति देखें लगे तारीरी । मनिमयघारी नख सिखलों उतारी निसकारी में निहारी जगमत दिवारी । अथ लुप्तोपमा—वाचक धर्म रु वर्ननी यह चोथो उपनाम इक विनद्वे बिनती न विन लुप्तोपमा बषान । उदाहरन—विजुरी सी पंक मुखी कनक लता तिय लेख । बनिता रस सिंगार की कारनमू परत पेष ।

अंत—प्रगट भयो भृगुपुर विषे मंजुमुके अधिकार । बनीक कुल भूषण भयो लल्लूभाई सिरदार । भाषा भूषन ग्रंथ को ताकों बऊ अभ्यास । अलंकार के अंसमें भयो बुद्धि परकास । वाने पंडित संगतें ग्रंथ २ के देखि । उदाहरन वाके लिखे इतनो कन्यो विसेख । अठरासह तेंतीस में उत्तम भादों मास । उदाहरन की मंजरी पूरन भई विकास । इति श्री भद्रू बनीक कुलभूषण श्री लल्लूभाई विरिचिता उदाहरण मंजरी संपूर्ण । संवत् १८३६ प्रवर्त्तमान्ये चैत्र मासे शुक्ल पक्षे पंचमी रवौ ॥ लिखितं नागर जातीय वडनग राजनिनाना गणेशजी श्री रस्त । शुभमस्त । कल्याणमस्त ।

विषय—भाषा भूषणमें वर्णित अलंकारों के उदाहरण देकर अलंकार वर्णन ।

संख्या २१२ ए. प्रेमसागर, रचयिता—लल्लू जी लाल (आगरा), पत्र—३४०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—७७३५, पद्य गद्य,

लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८६० = १८०३ ई०, लिपिकाल—सं० १९१० = १८५३ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला भोजराज, ग्राम—रुद्रपुर, डाकघर—बमनोई, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ प्रेमसागर लिख्यते । दोहा—विघन विदारन विरद वर वारन बदन विकास । वर देवहु बाढ़े बिशद वानी बुद्धि विलास ॥ जुगुल चरन जोवत जगत जपत रैन दिन तोहि । जग माता है सरसुती सुमिरि युक्ति दे मोहि ॥ महाभारत के अन्त में जब श्री कृष्ण जी अंतर ध्यान हुए तो पांडव तो महा दुखी हो हस्तिनापुर का राज परीक्षित को दे हिमालय गलने गये और राजा परीक्षित सब देश जीत धर्म राज करने लगे । कितने एक दिन बाद राजा परीक्षित आखेट को गये तो वहां देखा कि एक गाय और बैल दौड़े चले आते हैं तिनके पीछे मूसल हाथ में लिये एक शूद्र मारता आता है।

अंत—श्री कृष्णचन्द्र के जितने बेटे पोते नाती भये रूप लावण्य कर्म धर्म में कोई कम न था एक एक से बढ़के थे । उनका बर्णन में कहां तक करूं इतना कह बोले महाराज मैंने व्रज की द्वारिका की लीला गाई यह है सबकी सुखदाई । जो जन इसे प्रेम सहित गावेगा सो निस्सन्देह भक्ति मुक्ति पावेगा । पदार्थ जो फल होता है तप यज्ञ दान व्रत तीर्थ स्नान करने में सो फल मिलता है हरि कथा सुनने और सुनाने में ॥ इति श्री लल्लू जी लाल कृते प्रेम सागरे द्वार का विहार बर्णनो नाम नवति तमोऽध्याय संपूर्ण समाप्तः संवत १९१० वि० लिखा नन्हे मल वैश्य ॥

विषय—श्री कृष्ण की लीलाओं का वर्णन ।

संख्या २१२ बी. प्रेमसागर, रचयिता—लल्लूलाल (आगरा), पत्र—४०२, आकार—३½ × ७½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६०८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० लक्ष्मीनारायन जी आयुर्वेदाचार्य, ग्राम—सैगई, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—इतना कह लोमष ऋषि ने एक चेले को बुलाके कहा तुम राजा परीक्षित को जाके चेता दो कि तुम्हें । श्रृंगी ऋषि ने शाप दिया है भला लोग तो दोष देंगे ही पर वह सुन सावधान तो हो जाय ॥ इतना वचन गुरू का मान चेला चला चला वहां आया जहां राजा बैठा सोच करता था आते ही कहा महाराज तुमे श्रृंगी रिषि ने यह साप दिया है कि सातवें दिन तक्षक डसेगा । अब तुम अपना कार्य करो जिससे कर्म की फांसी से छूटो ॥ सुनते ही राजा प्रसन्नता से खड़ा हो हाथ जोड़ कहने लगा कि मुझपर ऋषि ने बड़ी कृपा की जो शाप दिया क्योंकि मैं माया मोह के अपार सोच सागर में पड़ा था सो निकाल बाहर किया ॥

अंत—इतनी कथा सुनाय श्री शुकदेव जी बोले कि महाराज जिस समय बलराम जी सब यदुवंशियों को साथ लेकर अर्जुन के पीछे चलने को उपस्थित हुए उस काल श्री कृष्णचन्द्र जी ने आय बलराम जी को सुभद्रा हरण का सब भेद समझाया और अति विनती करि कहा कि भाई अर्जुन एक तो हमारी फूफी का बेटा और दूसरे परम मित्र उसने

जाने विन जाने समझे विन समझे यह कर्म किया पर हमें उससे लड़ना किसी भांति उचित नहीं ॥

विषय—श्री कृष्ण चरित्र वर्णन।

संख्या २१२ सी. राननीति भाषा, रचयिता—लल्लूजी लाल (आगरा), कागज—विदेशी, पत्र—१६०, आकार—१०×८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८५९ = १८०२ ई०, लिपिकाल—सं० १८६७ = १८१० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० राममनोहर, ग्राम—आरे, डाकघर—माधोगंज, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ राज नीति भाषा लल्लूजी लाल कवि कृत लिख्यते ॥ दोहा—गज मुख सुख दाता जगत दुख दाहक गुण ईश। पूरण अभिलाषा करौ शंभू सुत जगदीश ॥ कवि वासी गृह कूप को कथा अपार समंद। तैसी ये कछु कहत हौं मति है जैसी मंद ॥ श्री गंगा जू के तीर पटना नाम नगर तहां सब गुण निधान महाजान पुन्य मान सुदर्शन नाम राजा था। वाने एक दिन काहू पंडित ते द्वै श्लोक सुने तिनको अर्थ यह है कि अनेक अनेक प्रकार के संदेहनि को दूरि करै अरु गूढ़ अर्थनि को प्रकाशै ताते सबकी आंखि शास्त्र है।

अंत—अरु अवस्था प्रमाण कार्य कीजै तो दोष नाहीं वानर ते यह उपदेश सुनि मगर निज घर गयो औ उन नया वियाह कियो घर माड़्यो सब दुख छाड़्यो आनन्द सों रहनि लागो इतनी कथा संपूर्ण करि विष्णु शर्मा ने राज पुत्रन को आशीश दई कि तिहारी जय होय और शत्रुन की हार। यह सुनि राज पुत्रन हू वस्त्र आभूपन द्रव्य मगाय भेंटे धरि पांय लाग गुरु को विदा कियो अरु आप नीति मार्ग सों निज राज काज करन लागे इति लल्लूजी लाल कवि कृत राजनीति भाषा संपूर्ण समाप्तः लिखा किशोरी लाल गुजराती संवत् १९६७ वि०

विषय—इसमें पांच प्रकार की कथा है। (१) मित्र लाभ (२) सुहृद्भेद (३) युद्ध कराने की युक्ति (४) मेल कराने की युक्ति (५) प्राप्त धन आदि का खो देना आदि वर्णन।

संख्या २१२ डी. सभाविलास, रचयिता—लल्लूजी लाल (आगरा, कागज—देशी, पत्र—४४, आकार—१०×८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३४, परिमाण (अनुष्टुप्)—८४८, लिपि - नागरी, रचनाकाल—सं० १८७० = १८१३ ई०, लिपिकाल—सं० १८८४ = १८२७ ई०, प्राप्तिस्थान—हरिहरसिंह ठाकुर, स्थान—छावनी, एटा, डाकघर—एटा, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ सभा विलास लिख्यते ॥ सोरठा—विघन हरन गन राय मूशक वाहन गज बदन। गनपति चरन मनाय तवै काज कछु कीजिये ॥ १ ॥ दोहा—आनन भावत स्वाद इमि पर्‍यो गह्यो सु मलिंद। कृष्ण चरन अरविंद को पियत सदा मकरंद ॥ २ ॥ ममता भ्रमता के मिटे उपजे समता ज्ञान। रमे जु रमता राम सों जमता गहे

न मान ॥ ३ ॥ साध सक्यो न तू साध संग लाय न सक्यो समाध । विषै विषाद उपाधि तजि हरियल आध अराध ॥ ४ ॥

अंत—संग्रह करि कवि लाल ने रच्यो काव्य रस रास । धन्यो नाम या ग्रन्थ को याते सभा विलास ॥ यदपि काव्य भूषन सहित दुर्जन दोषत ताहि । बिगरे देत वनाय हैं सज्जन साध सराहिं ॥ खं रिषि वसु चन्द्रहि गनौ संवत को परमान । माघ शुक्ल नौमी रवौ कियो ग्रन्थ निर्मान ॥ इति श्री लल्लू जी लाल कवि ब्राह्मन गुजराती सहस्त्र अवदीच आगरे वासी कृत सभा विलास संपूर्ण समाप्तः लिखतं जग्गामल वैश्य आगरा निवासी स्व पठनार्थं भादौं वदी पंचमी संवत् १८५४ वि० जै कृष्ण भगवान की जै जै जै ।

विषय—सभा योग्य शिक्षा और राग, रागिनी, पहेली आदि समय समय की बातें वर्णन की गई हैं ॥

संख्या २१२ ई. सभा विलास, रचयिता—लल्लूजी लाल (आगरा), कागज—देशी, पत्र—१६०, आकार ६ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८७० = १८१३ ई०, लिपिकाल—सं० १८७३ = १८१६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवकंठ दुबे, ग्राम—बिगहापुर, डाकघर—बिगहापुर, जिला—उन्नाव ।

आदि-अंत—२१२ डी के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—इति श्री लल्लू जी लाल ब्राह्मण गुजराती सहस्त्र अवदीच आगरे वासी कृत सभा विलास संपूर्ण समाप्तः लिखतं शिव गनेश संवत् १८७६ वि०

संख्या २१२ एफ. सभाविलास, रचयिता—लल्लू जी लाल (आगरा), कागज—देशी, पत्र—४४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८७० = १८१३ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर देवसिंह सेंगर, ग्राम—गंजमऊ, डाकघर—दरियावगंज, जिला—एटा ।

आदि-अंत—२१२ डी के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—इति श्री लल्लू जी लाल ब्राह्मण गुजराती सहस्त्रा अवदीच आगरे वासी कृत सभा विलास संपूर्ण समाप्तः लिखतं गोरे लाल ब्राह्मण आगरा निवासी गोकुल पुरा ।

संख्या २१३. कंदुक क्रीड़ा, रचयिता—कविलोक, पत्र—१२, आकार—७ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८०५ = १७४८ ई०, लिपिकाल—सं० १८०५ = १८४८ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० कन्हैयालाल शर्मा, स्थान—फतेहाबाद, डाकघर—फतेहाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीराम जी । मन मोहन अंत कहूँ मत जाउ गटेक करा तरवा छनिया । नहि अंगन दान दिवाल रहौ फिर भयौ हौंचत अचयी औ पनिया । हिगुठान सो गेंद कहा करि है तीनो लोक सुमित्र रही माया सोम चले ब्रज जीवन ताय उठाय लये करसों कनीया । १ । माता एक हारी पलदे समताऊं जहा जमुना ठड़ि है । वगुरि वह भीर सखा

सिवसे दल सो उठि दौरे से चौक धरे मनु ही ऐसो कहि कान कहा जौ दुरौ तीनों लोक सुमित्र व्रजमें दीजिये गेंद घुतान जसोमति जोहत गुआल सबै भगुरि । २ । गेंद के खेल में खेल बढ़ै जहां राग सखा सबही जुर सोहें वालकदास गुपाल कुमार के लोचन लाल भये भर मोहें मौचि वही टरकूल मिकै कविलोक सलौने कहा करि हौ तू दुचति मति होइ जसोमति मोहि तो काजु जहकर नाइ ।

अंत—बजत नाद गंमर मपन सेसजी छाइ करै जो सही है । जाय कहा करिहौ निज धाम सों धाम मिली । सुख दुख मारो वेद विलास गिरा कहै अघतारन नाम तुमारो पीर हरै । फिर भयं नम कीत वार तुम क्या मानि गाउ वारौ सेसके सीस पै छाप करी तब से सजनि बैकुण्ठ सिधारौ । ३६ । नाम धवा नही कंस कलेस नहीं व्रजमें वप रीत भइ । कालीया कूलते नाथ लीयो तब श्री जमुना निरदोष करी है । कविलोक पचीसन ते अधिकें हरिवंसभले लघु बुधि कही है । इति श्री कन्दुक क्रीडा समाप्तम् लिखी गंगा प्रशाद कौम काइथ मौ जगराजपुर परगने फतिहाबाद जिलै आगरा सम्वत् १८०५ फागुन सुदी ३ ।

विषय—श्रीकृष्ण लीला और कंस वध ।

संख्या २१४. गीता सुबोधिनी टीका, रचयिता—माधव, पत्र—२७६, आकार—८ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३८०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१८ = १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—मिहीलाल जी शर्मा, ग्राम—बेगनपुर, डाकघर—फतेहाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । श्री राधा कृष्णाय नमः । श्री मद्भगवद्गीता भाषा टीका लिख्यते । दोहा । हाथ बैंत रथ सारथी सोहत पारथ साथ । छेम सहित नित विजय चित वसत लसत जदुनाथ । स्तुति पद्धरि छंद । तुम आदि अनादि अनंत देव तुम अगम अगाध अभै अभेव । तुम एक अनेक अरूप रूप । तुम करन हरन भव भरन भूप तुम साधन साधक सिद्ध सुद्ध । तुम कारज कारन बुद्धि बुद्ध । तुम सकल भुवन सब में समान । तुम सबहि ते न्यारे निदान । तुम निर्विकल्प निर्गुण निरीह निर्द्वन्द छन्द जानत । निर्भेद नित्य निर्वेद वैष । तुम अलख अमूरति अज असेष ।

अंत—इति भांति श्रुति स्मृति पुराणनि के वचन करिके भगवद्गीता मोक्ष को हेतु है यह निरधार भयो । श्रीधर के श्लोक को जिनकी दीनी सुमति करि कह्यो अरथ सुखकंद । ते वाते सुख पाइवो माधव परमानन्द । दो पद रज परमानन्द की श्री धर सिर पर धारि । टीका करी सुवोधिनी अरथ उधारि । जो चाहे निजु बुद्धि वल भगवद्गीता सार । अमृत वृष्टि गुरु दृष्टि विनु नहीं लहै निरधारु । कानौ चाहे जोर तन अंजुहित उचि समुद्र करनधार विनु अमर भूमि बूढ़ैगो छंद । इति भगवद्गीता सूर्यंन षत्सु ब्रह्म विद्याया योग शास्त्रे श्री कृष्ण जुर्न संवादे मोक्ष्य सन्यास योग नाम अष्टादशोऽध्यायः । मिती श्रावण कृष्ण अष्टमी बुधवार सम्वत् १९१८ द० मंगल सैन ।

विषय—गीता का अनुवाद ।

संख्या २१५ ए. जनम करमलीला, रचयिता—माधोदास, पत्र—१६, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० चंद्रशेखर त्रिपाठी, स्थान—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—॥ रत हरी सव कौं सुख दीना ॥ ११ ॥ प्रथम पूतना प्रान सोषि प्राना हत कीनी। सविष पयोधरा अधरा लाई जननी गति दीनी ॥१२॥ मास द्यौस के सिसुउ तान सोवत पग पट कारा ॥ कपट विकट सकटा सुरा सत खंडि करि डारा ॥ १३ ॥ बरस द्यौस के जव भये तरुणा वृत आयो ॥ लैगयो गगन उठाय कंठ गह मारिषिसावा।' १४ ॥ ये कह्यौ सस्तन पान करत आई जुज भाई। मुख मह जगत निरखि सवै जसु विस मैह पाई ॥ १५ ॥ वाल चरित्र कीये जिते तिते कहन न जाई ॥ निज जन व्रज आनंद देइ सी सुसंग लगाई ॥ १६ ॥

अंत—जिहि वा पाइ नर सरीर जे हरि कीरति नुन करहीं ॥ श्री बैकुंठ निवास पाइ मुरिष षिसि परही ॥ ९५ ॥ हरि लीला हरि जनम करम सुज सुजे गावहि। ग्यान भक्त वैराग जागे वंछित फल पाव ही ॥ ९६ ॥ सत जुग ध्यान तेर तामय द्वापर हरि पुजा कलिकी—रतन समान और नहीं कछु पूजा ॥ ९७ ॥ कीरतन प्रिये प्रान प्रभु लीला चल देसा—श्री जगन्नाथ जगत्त गुरु कृष्ण कौं वहे उपदेसा ॥ ९८ ॥ व्रथा कथा परि हरि करि कीरतन अभ्यासा ॥ हरि लीला हरी जनम करम कहि माधो दासा ॥ ९९ ॥ इति श्री जनम—करम लीला संपूर्ण समाप्त ॥

विषय—कर्म की प्रधानता का वर्णन।

संख्या २१५ बी. करुणा बत्तीसी, रचयिता—माधोदास, पत्र—२४, आकार—८½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० अनंदीलाल दुबे, ग्राम—बमरौली कटारा, डाकघर—ताजगंज, जिला—आगरा।

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ लिष्यते श्री करुणा बत्तीसी माधो दास कृत ॥ कवित्त ॥ गिरि को उठाय वृज गोप को उठाय लियो, अनलते उवारयो पुनि बालक मंजारी को ॥ गज की अरज सुनु ग्राहते छुटाय लीनो। राख्यो वृत नेम धर्म पांडव की नारी को ॥ राख्यो गज घंटा तल बालक विहंगम को। राख्यो पन भारत में भीष्म ब्रह्मचारी को ॥ त्रिविध ताप हाथी निज संतन सुख कारी। मोहि तो भरोसो भारी ऐसे गिरिधारी को ॥ १ ॥

अंत—करत अपराध भोर सांझतर कौर नित, अति ही कठोर मति वौर को न काम हौं ॥ आतुर अधीर ताते धीरज धरत नाहिं। ऊंच नीच वाले गति वकूं आठौं याम हौं ॥ अरचा न जानूं कछू चरचा न वूझत हौं कछु। हेस प्रात सेन लेत हरिनाम हौं ॥ सब तकसीर बलवीर मेरी माफ करो। कहैं माधो दास प्रभु तेरो ही गुलाम हौं ॥ ३२ ॥ दोहा या करुणा बत्तीसि को, पढ़ै गुणौं नर नारि। ताके सब दुःख द्वन्द को। काटैं कृष्ण मुरारि ॥ १ ॥ इति श्री माधव दासेन विर चितायांम करुणा बत्तीसी संपूर्ण ॥ शुभम् भूयात् ॥

विषय—करुणा तथा विनय के छन्द ॥

संख्या २१५ सी, करुणाबत्तीसी, रचयिता--माधोदास, पत्र—१२, आकार--६३/४ × ४१/२ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)--१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—११६, रूप--प्राचीन, लिपि--नागरी, प्राप्तिस्थान--पं० लक्ष्मीनारायण जी आयुर्वेदाचार्य, ग्राम--सैगई, डाकघर--फिरोजाबाद, जिला--आगरा।

आदि-अंत--२१५ बी के समान।

संख्या २१५ डी. करुणाबत्तीसी, रचयिता--माधवदास, कागज--देशी, पत्र--६, आकार--८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)--३२, परिमाण (अनुष्टुप्)--१२७, रूप--साधारण, लिपि--नागरी, लिपिकाल--सं० १८७५=१८१८ ई०, प्राप्तिस्थान--पं० जैगोपाल शर्मा, ग्राम--सराय हरदेवा, डाकघर--जलेसर, जिला--एटा।

आदि-अंत--२१५ बी० के समान। पुष्पिका इस प्रकार हैं:--

इति माधवदास कृत करुणा बत्तीसी संपूर्ण ॥ लिषा महेशराम संवत् १८७५ वि० मिती फागुन सुदि प्रतिपदायां।

संख्या २१५ ई०. करुणाबत्तीसी, रचयिता--माधवदास, कागज--देशी, पत्र--६, आकार--८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)--३२, परिमाण (अनुष्टुप्)--१५०, रूप--साधारण, लिपि--नागरी, लिपिकाल--सं० १८७६=१८१९ ई०, प्राप्तिस्थान--राय परमानंद जी, ग्राम--सीमरी, डाकघर—पतियाह, जिला--एटा।

आदि-अंत--२१५ बी के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति मुंशी माधौदास कृत करुणा बत्तीसी संपूर्ण चैत संवत १८७६ वि० ॥ वलूदाऊ के भैयाजी जय होय ॥ श्री कृष्ण ॥

संख्या २१६ ए. नासकेतु पुराण, रचयिता—माधवदास, कागज—देशी, पत्र—११६, आकार—१० × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०८=१८५१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० भागवत प्रसाद, ग्राम—ककरामऊ, डाकघर—बिलग्राम, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशायनमः श्री सरस्वत्यै नमः श्री गुरुचरणकमलेभ्यो नमः। अथ नासकेतु पुराण भाषा लिख्यते ॥ दो०--राम नाम से मंत्र नहिं दाथा सो नहिं ज्ञान। गंगा सो सलिता नहिं व्रत एकादशी समान॥ चौ०॥--आद गुरू प्रथम चरन मनाऊं, जेहि सुमिरत अक्षर सुदि पाऊं॥ मातु सारदा विनवौं तोही। निर्मल ज्ञान हृदै दे मोहिं॥ सकल रिषिन को मैं सिर नाऊं। जेहि ते हृदय भक्ति वर पाऊं॥ सब संतन के चरन प्रनामा। पाऊं संतन संग विश्रामा॥ गुरू विप्रन का करौं प्रनामा। सकल मनोरथ पुद वहु नामा॥ यहि तर सवके चरन मनाऊं। नासकेत कथा सुभ गाऊं॥ जमके सकल कथा विस्तारा। नासकेत प्रगटे तेहि वारा॥ वैसंपायन रिषि कहै वषानी। जन्मेजय के जग्य में आनी॥ दो०—नासकेत जेहि विधि कहा जम के सकल पसार। वैसंपायन रिषि के वचन कहैं सकल विस्तार॥ चौ०—माधौदास कृपा हरि पाई। गुरू प्रसाद कछु अनभव आई॥ मोरे हृदय परम अभिलाषा। देषि संस्कृत करि हौं भाषा॥

संवत् कृष्ण पक्ष बुधवार। माघ मास तिथि पंचमी कियो कथा विस्तार। ८। बुधिवंत दातार गुरु है गुह लेत गभीर। महा सिद्धि सुत धर्म जुत नाम जगत मनि धीर॥

अंत—सुवर्ण सहित गऊ दस साथा वस्त रुकम वास नर नाथा। अलंकार आभूपन दीजे यथा शक्ति धर्म कीजै। पूरन कथा होइ यह जवे ब्रह्न भोजन कीजे तवै। दोहा। सुनि कथा तुम एक मन कहिय यथामति एक राम कृष्ण पावन कथा ताको पुन्य अनेक। २०८३ इति श्री जगत मुनि विरचितायां अस्वमेध के पूर्वनि जैमुनि कृत सर्व कथा फल वर्णनो नाम सप्त षष्टो ध्याय = ६७। संपूर्णम् शुभम्

विषय—पांडवों के अश्वमेध यज्ञ का वर्णन।

संख्या १६६ सी. जैमिनीपुराण, रचयिता—जगतमणि, पत्र—१४०, आकार—१० × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०८०, रूप—प्राचीन लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७५४ = १६९७ ई०, लिपिकाल—सं० १८८२ = १८२५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० छेदालाल पाठक, ग्राम—टुंडला, डाकघर—टुंडला, जिला—आगरा।

आदि-अंत—१६६ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—इति श्री जगत मनि विरचितायां महा भारत अश्वमेध के पर्व ने जैमुनि कृते सर्व कथा फल वरणनो नाम सप्त षष्टोध्याय =॥ ६७॥ संपूर्ण संवत् १८८१ वर्ष जेष्ठ मासे शुक्ल पक्षे तिथौ अष्टम्यां भृगुवासरे। सुभं भूयात्। लिष्यतं मनोहर सावेन। टीकराम पाठार्थ। दोहा। कटि ग्रीवा अरु नयन वहि अति दुप सहै सुजान। लिषी जानि अति कष्ट तै सठ जानत आसान।

संख्या १६७. धर्म सवाद, रचयिता—जन दयाल, पत्र—१३, आकार—८ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०७, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० बाबूराम जी वैद्य, डिस्ट्रिक्टबोर्ड डिस्पेंसरी, ग्राम—कोटला, डाकघर—कोटला, जिला—आगरा।

आदि—(पृ० १ से ६ तक लुप्त; पृष्ठ ७ से आरंभ) भरतार की सेव कराई। अतीत सेवा सोधि रहाई। धरम दया सक्ति उनमांना; सौंचि सनात सदारत जाना। द्विज अतीत हरि सेव कराई, सो त्रिया सुषी स्वरग रहाई। साल वरन सम वरतन कोई, तीरथा गंगा सम और न कोई। विष्ण नाम सम और न धरमा पवित्र तीन लोक यह करमां। विषय त्यागी वाला वणी राष्यौ दिढ़वर वसो उत्तम भाष्यौ। तीन लोक महि मुक्ति कहीजे पंडवनंदन यह सुषि लीजे। ताके त्रिया सबही माता उत्तिम लषिण महासुप राता। सुध आत्मां सदा अनंदा। परम गति सो जाइ सुछंदा। षट दोष वनिता कौं लागत, दिन दिन प्रति उठि पुनि सो भागत। अतीत भोजन पावत ताकैं पापमुचै कहत हैं जाकैं।४४।

अंत—प्रसूत एक नाई कै होई, स्वांनी सपत सूकरी सोई। सुकरी कुकरी जातक भाई। अधरम पहलै जात फुलाई। गऊ जनैं इक सोई वालक। यौं धरम वधै कोई नहिं तालक। धरम पाप कौ निरनय कह्यौ........कहैं जुधिष्ठिर जपौ। ५५। धरम संवाद सुणै चित लाई मुचै पाप सत सहजि वधाई। परलोक नर पावै सोई मुकति

अंत—जे करिहैं मन ने विरति, ग्यान भक्ति पर पाय। पाँध मुक्तिते लहहिंगे। सब संदेह विहाय। कहि सुनि यह रामायने, करि हैं रीति विचार। ते प्रमोद वन वसहिंगे, परम प्रेम उर धार॥ कवित्त—गंगा परसाद जू कौ नाती कासी राम पुत्र माधो मेरो नाम रीवां नगर निवास है। महाराज विश्वनाथ सिंह कौ सिषायौ पाल्यौ मधुर रामायन रच्यौ सहुलास है। आदि रामायन को अर्थ चारौ खंडन में पंच रात्रि पदम पुराणमालाषास है। मानौ कै विस्वास अंत नासै भव त्रास भयो राम को विलास सीताराम जू को वास है॥ इति सिद्धि श्री महाराजाधिराज श्री महाराजा श्री राजा बहादुर सीता रामचंद्र कृपा पत्राधिकारी विश्वनाथ सिंह देवा जया माधव विरचितं माधव मधुर रामायण संपूर्ण॥ संवत् १६०४॥ फाल्गुण शुक्ल प्रतिपदायां सोमवासरे।

विषय—	(१) पूरव खंड	पृ०	१	—	७८
	(२) दक्षिण खंड	पृ०	१	—	७०
	(३) पश्चिम खंड	पृ०	१	—	३६
	(४) उत्तर खंड	पृ०	१	—	६०

टिप्पणी—प्रस्तुत रचना आदि रामायण का पद्यानुवाद है। रचयिता माधवदास कत्थक रीवां नरेश राजा विश्वनाथ के आश्रित था। वह लिखता है "मैं उन्हीं का सिखाया पढ़ाया हूँ और उन्हीं ने मुझे पाला है।" वह अपने पिता का नाम काशीराम और पितामह का नाम गंगा परसाद लिखता है। उसने ग्रंथ के अंत में ग्रंथ का नाम 'माधव मधुर रामायण' लिखा है और यह भी प्रकट किया है कि इसमें मुख्यतया पद्म पुराण के मत को प्रधानता दी गई है।

संख्या २१८. द्वैत प्रकाश, रचयिता—मधुसूदन दास, पत्र—५, आकार—१३ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७४९ = १६९२ ई०, लिपिकाल – सं० १८७२ = १८१५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० लक्ष्मीनारायण वैद्य, ग्राम और डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्रीमते रामानुजाय नमः॥ दोहा॥ श्री गुरुपद निज जोरिकर। रामानुज सिर नाइ। द्वैत ज्ञान मोहि दीजिये। ज्यों संसार नसाइ॥ १॥ दोहा॥ रामानुज पद जोरि कर, अरु सत संग सहाइ, जह प्रसाद मोहि दीजिये, जन्म मरण मिट जाय॥२॥ कवि कोकिल कवि राज जू, वरन दीजिये सोइ। पद लालित्यऽनुप्रास युत, छंद भंग नहिं होई॥ ३॥ शिव शुक शेष दिनेश जू, विनती तुम सुन लेहु। असत पदारथ ध्वंस करि, सत्य ज्ञान मोहिं देहु॥ ४॥ सत्य कहौं सो आतमा, असत देह को जानु। सत् असत् दुहको लखे, सोई ज्ञान प्रमानु॥ ५॥ षट विकार जे देह के, तिनको करे जु नास। सत्य ज्ञान तव जानिये, आत्मा होइ प्रनास॥ ६॥ महत् ब्रह्म की राशि जो, सो सब जड़ करि जानि। सत् चित् पूरन आत्मा, मधु सूदन पहिचानि॥ ७॥

अंत—दोहा ॥ कृष्णदास गुरु यों कह्यो, सो मैं कह्यों प्रकाश । श्री रामानुज कृपातें, जान्यो गीता भाश ॥ ९० ॥ सत्रह से उनचास जू, संवत् कह्यो विचारु। मारग सुदि तिथि पूर्ण अरु जानों शशि वारू ॥ ९१ ॥ कृष्ण दस गुरु यह कही, तजि अद्वैत कुवास। सदा अविद्या रहत है, मधु सूदन के दास ॥ ९२ ॥ इति श्री द्वैत परकास आत्मा, परमात्मा सच्चिदानन्द वैकुण्ठ्या मुसव्य सक सेवक हेत वाद सिद्धांत श्री मधुसूदन दास कृतेन पंचमो विरचनम् ॥ संवत् १८७२ ज्येष्ठ शुक्ला ५ चन्द्रे शुभम् ॥

विषय—प्रथम विरचन—मंगलाचरण, आत्मा, देह तथा तत्वों का वर्णन [सांख्य मतानुसार पृ० १ तक] द्वितीय—आत्म-परमात्म द्वैत सिद्धि [१ से २ तक] तृतीय—वैकुंठ धाम वर्णन [२ से ३ तक] चतुर्थ—अद्वैत सिद्धि उपदेश [३ से ४ तक] पंचम—अद्वैत वाद के अधिकारी तथा अनधिकारी वर्णन, कवि परिचय एवम् ग्रन्थ निर्माण काल वर्णन [४ से ५ तक]

संख्या २१९ ए. ध्रुवलीला, कागज—देशी, पत्र—४०, आकार—४ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४७०, रूप—नवीन, पद्य गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रामदीन, ग्राम—अतरौली, डाकघर—अतरौली, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री ऊंकार नमः श्री गणेशाय नमः । श्री गुरुभ्यो नमः अथ ध्रुव लीला लिख्यते ॥ दो० ॥ श्री गनपति को सुमिरि के सुमिरौं पवन कुमार । बल बुधि विद्या देहु मोहि हरौ कलेश विकार ॥ ध्रुव लीला वरनन करौ भक्तन को सुख सार । लज्जा मेरी राखियो हे प्रभु कृष्ण मुरार ॥ बुद्धि हीन मति मंद मैं तुम करता संसार । सेवक पर किरपा करौ संतन के रखवार ॥ तुम प्रभु दीन दयाल मेरी ओर निहार । महादेव पावे दरस दीना नाथ तुम्हार ॥ सरस्वती जी का नगर में आकर वचन सुनाना ॥

अंत—जब ही फेंट बांध लीन्हीं ध्रुव प्रगट्यो आप अगारा । महादेव फिर दरशन दीन्हो कुटुम सहित परिवारा ॥ ध्रुव है मोहि भक्तों में अति प्यारा ॥ वार्ता । विष्णु भगवान का ध्रुव को आशीर्वाद देकर अंतर ध्यान होना देवताओं का फूल वरसाना ॥ दोहा ॥ पुष्पन की वर्षा करी देवन वैठि विमान । जै जै शब्द उचारि कै करैं अप्सरा गान ॥ इस पुस्तक के पढ़त ही उपजै हृदै ज्ञान । लीला ललित विनोदनी भक्तन की सुख खान ॥ महादेव परसाद ने बहुत कियो परिश्रम । ध्रुव लीला के कहत ही छूट जात सब भ्रम ॥ इति श्री माधव लीला संपूर्ण समाप्तः मिती श्रावन शुदी शनिवार संवत् १९४० वि० ।

विषय—ध्रुव चरित्र वर्णन ।

टिप्पणी—रचयिता महादेव, जाति के अयोध्यावासी वैश्य मैनपुरी निवासी थे । इसको इस भांति वर्णन किया है:—महादेव प्रसाद करी हरसाइ हमन पर दाया । मैनपुरी में गंज कष्ठ करै भेज शहर सरसाया ॥ छिपही मुहल्ला में मकां रहे हर जकां सभी फरमाया । रहूं मैं शहर के दरम्यां सभी जाने हैं नर नारी ॥ नाम है महादेव प्रसाद कलम हरदम रहै जारी । कौम वनिया अजोध्या का वहे सरजू लगे प्यारी । लगी है आशा हृदय में दरश हमको दे गिरधारी ॥ लिपिकाल संवत् १९४० है ।

संख्या २१९ बी. बारहमासा, रचयिता—महादेव (मैनपुरी), कागज—विदेशी, पत्र—२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१६, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९५० = १८९३ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रामदीन, ग्राम—अतरौली, डाकघर—अतरौली, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ बारह मासा लिख्यते ॥ गया कंथ परदेश सखीरी उमर तो मेरी है वारी । हुई वेकली उसी दिना से तबियत को हुई बीमारी ॥ फागुन ॥ आया महीना फागुन का चहुं ओर तो प्यारी रंग बरसे । पिया मिलन को हमारा घड़ी घड़ी जियरा तरसे ॥ रंग केसर से गलियां बह रही चले पिचिक्का कर कर से । चली होलिका पूजन को हैं सखियां अपने घर घर से ॥ नाच रंग हरजा होते हैं गोरी लिपट जातीं वरसे । अपने पिया को कहां मैं पाऊँ जिसके जाय लगूं गर से ॥ मन को मार खड़ी विलखावै उड़ा न जावै विना परसे । सूनी सेज पिया विन तड़पूं लगी आश मेरी हरि से ॥ शैर ॥ लगी है आग मिलने की समन को ढूंढ़ कर लाऊं । न जानूं किस जगह प्यारा कहो कैसे किधर जाऊं ॥ मगर लागे पता उसका तो जाकर के पकड़ लाऊं । मेरे दिल में यही आता कि जोगिन हो निकर जाऊं ॥ जल्दी घर को आवो प्यारे विरह दुखी तेरी प्यारी । हुई वेकली उसी दिन से तबियत को हुई बीमारी ॥

अंत—माघ ॥ आ गया माघ में कंथ हमारा अब हमने सुख को पाया । जाय विछाया पलंग अटा पै दोउ मिल प्रेम बढ़ाया ॥ फुलवन सेज विछाय रागनी गाय इतर छिड़काया । करी पिया संग ऐश खोल कर केश सुख अधिकाया ॥ मिटी विरह की आग खुला है भाग प्यारी ने पति को पाया । महादेव प्रसाद करी इरशाद हमन पर दाया ॥ मैंनपुरी में गज कष्ट करै भंज शहर सरसाया । छिपट्टी मुहल्ला में मकां रहै हर जकां सभी फरमाया ॥ शैर ॥ रहूं मैं शहर के दरम्यां सभी जाने है नर नारी । नाम है महादेव परशाद कलम हरदम रहे जारी ॥ कौम वनिया अजोध्या का वहे सरजू लगे प्यारी । लगी है आस हृदय में दरश हमको दे गिरधारी ॥ दरश दिया है मेरे पिया ने खुद आके हमको प्यारी । हुई वेकली उसी दिना से तबीयत को हुई बीमारी ॥ इति श्री बारहमासा महादेव कृत संपूर्ण समाप्तः लिषतं जै जै राम मैनपुरी वासी ॥ संवत १९५० वि० राम जै जै सीताराम

विषय—बारहमासा ।

संख्या २१९ सी. बारहमासा विरहनी, रचयिता—महादेव (मैनपुरी), कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२०, रूप—साधारण, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३९ = १८८२ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला जैनारायण, ग्राम—नगला राजा, डाकघर—नौखेड़ा, जिला—एटा ।

आदि-अंत—२१९ बी के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—इति महादेव कृत बारहमासा विरहनी सम्पूर्ण समाप्तः लिखा श्रीराम पंडित स्वपठनार्थं कार्तिक मासे शुक्ल पक्षेतृतीयां संवत् १९३९ वि० श्री गणेशाय नमः । श्री राम सीता की जय बोलो राधा कृष्ण की जय । राम राम राम ॥

संख्या २२० ए. अमरकोष भाषानुवाद, रचयिता—महेशदत्त (धनावली, बाराबंकी), कागज—देशी, पत्र—१८०, आकार—१०×६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२५०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३१ = १८७४ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर जैराम सिंह, ग्राम—वजीरनगर, डाकघर—माधौगंज, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ अमर कोष लिख्यते ॥ दोहा—दंति वदन सकल रदन सिद्धि रदन महराज । उमा नदन मोदक अदन पुरवैं सब ममकाज ॥ स्वर्ग के नाम—स्वः स्वर्ग, नाक, त्रिदिव त्रिदशालय, सुरलोक, द्यौः, द्यौ, त्रिविष्टिप, देवताओं के नाम—अमर, निर्जर, देव, त्रिदश, विबुध, सुर, सुपर्वा, सुमना, त्रिदिवेश, दिवौका आदित्ये, दिविषत, लेष, अदिति, नंदन, आदित्य, ऋभु, अस्वप्न, अमर्त्य, अमृतान्धा, वहिरमुष, क्रतभुक, गीर्वाण, दानवारि, वृन्दारक, दैवत, देवत ॥

अंत—आदि नामो से वहुब्रीह अन्य लिंग को भजता गुण योग द्रव्य जोग से जो उपाधि विशेषण है वे धर्म के ही गुण को भजते हैं ॥ असंज्ञा में कर्ता के अर्थ में कृत प्रत्यय परगामी होते हैं कर्म और कर्ता के वर्तमान कृत प्रत्यय परगामी होते तिस करके रेंगे हुए इत्यादि अर्थ में अणादि तद्धित प्रत्ययांत नानार्थ भेदक अनेकार्थ विशेषण मत वशिष्ट के कारण से वाच्यलिंग होते हैं । षट संज्ञा रूषांत नांत संख्या और कतिशब्द तीनों लिंगों में समरूप और नित्य ही वह वचनात होते हैं युष्मद; अस्मद शब्द तिङन्त पद और अव्यय में भी तीनों लिंगों में समान वने रहते हैं विरोध अर्थात विप्रति षेध में पर लिंगानुसासन प्रवर्तित होता है इस ग्रंथ में जो नाम कहने से शेष बाकी रह गये हैं वे शिष्ट महा महा कवि भाष्यकारादिकों के प्रयोगों से जानने के योग्य हैं । इति लिंगादि संग्रह योग कुरामांक शशाङ्क १९३१ के दशम्यामा श्विनेऽसिते मृगांकेमर कोषस्य टीकापूर्ति मियादियम् इति श्री भाषनुवाद अमरकोष समाप्तः ।

विषय—अमरकोश का भाषानुवाद।

टिप्पणी—इस ग्रंथ के अनुवादकर्ता पं० महेशदत्त शुक्ल धनावल, जिला बाराबंकी निवासी थे । निर्माणकाल संवत् १९३१ वि० है । इसको इस प्रकार लिखा है:—

योग कुशमांके शशांका १९३१ के दशम्याभाश्विने सिते मृगां के ऽमर कोषस्य टीका पूर्ति मिया दियम । लिपिकाल संवत् १९४० वि० है ।

संख्या २२० बी. नरसिंह पुराण, रचयिता—महेशदत्त (धनौली, बाराबंकी), कागज—देशी, पत्र—३००, आकार—१०×६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—४९६०, रूप—प्राचीन, पद्य गद्य । लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर भगवान सिंह राठौर, ग्राम—गोपालसिंह का पुरवह, डाकघर—कांसगंज, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ नर सिंघ पुराण भाषा लिख्यते ॥ नरसिंघ मुरारी जग दुख हारी चरण कमल शिरनाई । नरसिंघ पुराणा सहित प्रमाणा भाषांतर सुखदाई ॥

मैं फरति यथा मति करि बुध गणनति करहिं कृपा हितजानी । नहिं जानत संस्कृत जो जन तिन हित रचत न मृषा वषानी ॥ दो०—यहि नरसिंघ पुराण में अरसठ हैं अध्याय । सकल व्यास वर्णंत सुबुध देषहिं अति हरषाय ॥ तहां प्रथम अध्याय मह सव पुराण प्रस्ताव । वहुरि सृष्ठि कहं सूत जू करिके वहुत वनाव ॥ श्री नारायण नरों में उत्तम नर देवी व सरसुती को नमस्कार करिके फिर जय उच्चारन करना चाहिये । तपाये हुए सुवर्ण के समान चमकते हुए केशों के मध्य में प्रज्वलित अग्नि के तुल्य नेत्रवाले व वज्र से भी अधिक नखों से स्पर्श करने हारे दिव्य सिंघ तुम्हारे नमस्कार है ।

अंत—भरद्वाज आदिक मुनि वृन्दा । मै कृत कृत्य द्विजा गन्यविनिंदा ॥ हर्षित है किय सूत सुपूजा । मनसों छोंड़ि सकल विधि पूजा ॥ गैसव निज निज आश्रम काहीं । सुमिरत सुमिरत हरि मन माहीं ॥ इति श्री नरसिंघ पुराणे भाषानुवादे महेश दत्त कृत संपूर्ण समाप्तः लिखा आश्विन सुदी चौदस संवत १९३६ वि०

विषय—नरसिंह अवतार और उनकी अनेक कथाओं का वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रंथ के रचयिता पं० महेशदत्त, संस्कृत के विद्वान और धनावली, जिला बाराबंकी, के निवासी थे । इनके बनाये भाषा के अनेक ग्रंथ हैं और इन्होंने संस्कृत से अनेक ग्रंथों का भाषानुवाद किया है । संवत् १९२७ वि० तक के रचे ग्रंथ इनके पाये गये हैं । इस ग्रंथ का लिपिकाल संवत् १९३६ वि० है ।

संख्या २२० सी. नरसिंह पुराण, रचयिया—महेशदत्त (धनौली, बाराबंकी), कागज—देशी, पत्र—२९६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—४९९६, रूप—नवीन, पद्य गद्य । लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामनारायण मिश्र, ग्राम—विसेनपुर, डाकघर—उमरगढ़, जिला—एटा ।

आदि-अंत—२२० बी के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—इति श्री नृसिंह पुराण भाषानुवादे महेश दत्त कृत सम्पूर्ण समाप्तः लिखा चैत्र मास शुक्ल त्रयोदशी संवत १९३६ वि०

संख्या २२० डी. नरसिंह पुराण, रचयिता—महेशदत्त (धनावली, बारावंकी), कागज—विदेशी, पत्र—३००, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५८५०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामदत्तजी पाठक, ग्राम—पिहानी, डाकघर—पिहानी, जिला—हरदोई ।

आदि-अंत—२२० बी के समान । पुष्पिका और टिप्पणी इस प्रकार है:—

इति श्री नरसिंह पुराणेभाषानुवादे संपूर्ण समाप्तः लिखा मन्नालाल वाजपेई ७ मास में

टिप्पणी—इस ग्रंथ के भाषानुवादकर्त्ता पं० महेश दत्त जी थे । संवत् १९९० वि० के पहले इनका जन्म हुआ होगा। ऐसा काव्य संग्रह आदि से पता चलता है ।

यह धनावली जिला बाराबंकी गोमती नदी के तट के निवासी थे। लिपिकाल संवत् १६४० वि० है :—सुकुल वहोरन राम तनय वर धरि धरि मणिनामा। तासु इन्द्रमणि सुत तासुत विश्राम राम गुण धामा ॥ तासु तनुज श्री रजावंद सुख केद द्विजन में ठीके। अवधराम शुभ नाम सकल सुव धाम तासु सुत नीके ॥ वहिरालय जन पद गोमति तट धनावली कृत वेशा। विप्र महेश दत्त सुत ताके वारहवंकि प्रदेशा ॥ संवत १६३१ वि० में अमर कोष नामक ग्रंथ रचा जो इस प्रकार लिखा है:—कुरामांके शशांकाब्दे दशम्यामाश्विनेऽसिते मृगां केऽमर कोषस्य टीका पूर्ति मिथादियम

संख्या २२० ई. रामायण वालमीकि बालकांड, रचयिता—महेशदत्त (धनौली, बाराबंकी), कागज—देशी, पत्र—२५६, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२९, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२७०, रूप—साधारण, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३६ =१८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामावतार शुक्ल, ग्राम—पटियाली, डाकघर—पटियाली, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ वालमीकीय रामायण वालकांड दो०—भव्य करण जन भय हरण रामचरण शिरनाइ। वाल्मीकी भाषा करत गणपति गिरा मनाइ ॥ तपस्या व वेद पाठ करने में निरत वेद जानने वालों में व मुनियों में श्रेष्ठ नारद मुनि से तपस्वी वालमीक जी ने पूछा कि इस मृत्यु लोक में इस समय गुणवान वीर्यमान धर्मज्ञ उपकार मानने वाला सत्य वादी दृढ़ व्रत धारण करने वाला अनेक चरितकारी सब प्राणियों का हित करने वाला, परम विज्ञानी अतिदर्शनीय रूप आत्म ज्ञानी क्रोध जीतने वाला तेजस्वी निंदा रहित व संग्राम में जव उसके क्रोध हो तो देवता भी भयभीत हों ऐसा कौन है हे महिर्षि जी यह सुनने की हमको बड़ी इच्छा है आप ऐसे मनुष्य के जानने में समर्थ हैं। वालमीक जी के ऐसे वचन सुन तीनों लोकों के जानने वाले नारद मुनि हर्षित हो वोले सुनिये ॥

अंत— गुरुओं के गुरू कार्य करते कराते जिस समय जिस कार्य का प्रयोजन देखते वही करते कराते इस रीति से रामचन्द्र जी के शील स्वभाव से राजा दशरथ व सब वेद पाठी ब्राह्मण लोग सव उद्यमी व जितने राज्य निवासी हैं सवके सव अति संतुष्ट हुए तिन चारों पुत्रों में अति यशस्वी लोक में सब से सम भाव रखने वाले सत्य पराक्रमी ब्रह्मा के समान सवके पालन करने वाले महा गुणवान कृपानिधान रामचन्द्र जी ही हुए इस रीति से महाराज कुमार श्री रामचन्द्र जी श्री जनक नंदनी सीता जी के साथ उनमें अपना मन लगाए उनका मन अपने में निवेशित कर वहुत दिनों तक विहार करते रहै। चौपाई ॥ ब्राह्म विवाह विवाहित सीता। यासों रामहिं प्रिया पुनीता ॥ प्रीति रूप गुण शीलहि पाई। राम प्रीति दिन दिन अधिकाई ॥ रामसे दुगुण प्रीति हृदय माहीं। जनक सुताके संशय नाहीं ॥ राम जानकिहि सीतारामहिं। जानत मनसों मन अभिरामहिं ॥ राम से अधिक प्रीति वैदेही। करत सदा लखि परम सनेही ॥ रूप देवता सम कमलासम। शोभा सीता

माहिं न कछु कम ॥ सीता राज कुंवरि संग रामा। अति शोभित भए पूरण कामा ॥ जिमि सब देव देव हरि आपू। कमला संग सोभित शुभ लापू ॥ इति श्री रामायणे वालमीके वालकांडे सप्त सप्ततितम संपूर्ण लिखा सावन सुदी दसमी संवत १९३६ वि०

विषय—रामायण बालकांड की भाषा टीका।

संख्या २२० एफ. बालमीकि रामायण अयोध्याकांड, रचयिता—महेशदत्त (धनौली, बाराबंकी), कागज—विदेशी, पत्र—३००, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२९, परिमाण (अनुष्टुप्)—८६००, रूप—नवीन, पद्य गद्य। लिपि—नागरी, लिपि-काल—सं० १९३४ = १८७७ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० बालधर शास्त्री, ग्राम—राजापुर, डाकघर—कादरगंज, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ रामायण वाल्मीकीय भाषा अयोध्याकांड लिख्यते। सोरठा। भरत चरण शिरनाइ रचत अयोध्या कांड वर। गणपति होहु सहाय हरहु विघन बाढ़ै सुयश ॥ जब भरत जी अपने मामा के घर को गये तो पाप हीन व नित्य ही लवणादि शत्रुओं के मारने हारे शत्रुघन जी को भी बड़ी प्रीति के साथ ले गये वहां यद्यपि उनके मामा युधाजित जी भोजन भूषण आदि दे पुत्र के समान लालन पालन करते कराते रहे ॥ तथापि ये दोनों भाई अति वृद्ध राजा दशरथ जी का स्मरण करते जाते थे महा तेजस्वी राजा दशरथ जी भी अपने पुत्रों का जो मामा के यहां थे भरत शत्रुघन को इन्द्र वरुण के समान याद करते रहे।

अंत—श्री सीता जी ने तपस्विनी अनुसूया जी ने जो प्रीति पूर्वक वस्त्र भूषण पुष्प माला आदि दिये थे उनका हाल सब रामचन्द्र जी से कहा—मनुष्यों को दुर्लभ सत क्रिया जानकी जी को देख श्री राम व लक्ष्मण वहुत प्रसन्न हुए सब तपस्वियों से पूजित श्री राम लक्ष्मण जानकी सहित रात्रि में वहां सोये। जब रात्रि बीति गई प्रातः काल हुआ तो पुरुष सिंह राम लक्ष्मण दोनों भाई स्नान व अग्नि होत्र आदि कर वनवासी तपस्वियों से दूसरे वन को जाने के लिये आज्ञा मांगने लगे तब सब धर्म चारी तपस्वी दोनों भाइयों से बोले कि इस वन में राक्षस तपस्वियों को बहुत दिक करते हैं ॥ × × × कुंडलिया। द्विजगण कर जोरी कह्यो इमि पुनि विप्रन कीन स्वति पुन्य वाचन सकल सब विधि युत पर वीन ॥ सब विधि युत परवीन शत्रु तापन भगवाना। राघव लछिमन जनक सुता युत कीन पयाना ॥ वन मंह पैठे जाय यथा रबि निविशत है घन। तिमि रघुनंदन गयउ सकल लै अनुमति द्विज गन ॥ इति श्री रामायण बालमीकी अयोध्या कांड संपूर्ण समाप्तः संवत १९३४ वि०

विषय—वाल्मीकि रामायण अयोध्या कांड की भाषा टीका।

संख्या २२० जी. वालमीकि रामायण आरण्यकांड, रचयिता—महेशदत्त (धनौली, बाराबंकी), कागज—विदेशी, पत्र—२६०, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२७०, रूप—साधारण, पद्य गद्य, लिपि—नागरी, लिपि-काल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—रामावतार शुक्ल, ग्राम—पटियाली, डाकघर—पटियाली, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ रामायण वाल्मीकी भाषा आरण्य कांड लिख्यते। दो० वन विहरण असरण सरण सिया लखन रघुबीर। चरण कमल शिर धरत जो हरण प्रणत जन पीर॥ महा गहन वन में प्रवेश कर श्री रामचन्द्र जी ने तपस्वियों के आश्रम देखे जिनमें कुश चीर ठौर ठौर परे हैं ब्रह्म विद्या की लक्ष्मी का प्रभाव अच्छी तरह विद्यमान हो रहा है जैसे आकाश में भी टिके सूर्य मंडल को मारे तेज के कोई नहीं देख सक्ता। वैसे ही ब्रह्म विद्या के प्रभाव के कारण वे भी बड़ी कठिनता से देखने के योग्य हैं।

अंत—यह कह पुनि कह लषण सो सत्य पराक्रम राम। हम विन किमि राह हैं सखे सीता के असु ग्राम॥ इमि बहु भांति विलाप करि रघुपति करुणा पूर। परम मनोहर पंप सर पैठहु करि श्रम दूर॥ वन देखत मग कुसुम युत पंपा देखहु जाय। जाना शकुनि समेत जी दुखित चित्त द्रोह भाइ॥ इति श्री वालमीकी रामायण आरण्य कांड संपूर्ण समाप्तः अश्विन सुदी १३ संवत १९३६ वि०॥

विषय—वालमीकि रामायण आरण्य कांड की भाषा टीका।

संख्या २२० एच. वालमीकीय रामायण किष्किंधा कांड, रचयिता—महेशदत्त (धनौली, बाराबंकी), पत्र—२३०, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३९७०; रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२९ = १८७२ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० बालधर शास्त्री, ग्राम—राजापुर, डाकघर—कादरगंज, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः श्री रामो विजयतेत राम॥ अथ रामायण वाल्मीकीय भाषा किष्किंधा कांड लिख्यते। दो० सीतान्वेषण हित चरण चरण शरण हुइ आज। किष्किंधा विवरण करत धरत हृदय रघुराज॥ पवन तनय सुनिये विनय सनम्र विनय करि राम। दियहु मिलाप सुकंठ कहं जिमि तिमि पुर बहु काम॥ कमल मछली सहित पंपा नाम तालाब के निकट जाय जानकी जी के विरह से व्याकुल श्री राम जी लक्ष्मण सहित विलाप करने लगे तिसको देखते ही मारे हर्ष के श्री रामचन्द्र जी की सब इन्द्रियां कांप उठी॥ जानकी जी के अंगों के समान कमलादि देख मानो काम के वश हो लक्ष्मण जी से बोले हे लक्ष्मण वै सूर्यमणि के समान निर्मल जल भरी कमलों से पूर्ण किनारे पै विविध प्रकार के वृक्षों के लगने से यह पंपा शोभित है हे लक्ष्मण देखो तो इस पंपा के किनारे कैसा सुहावन वन लगा है।

अंत—महाराय महं संगि विहीना। पथिक समान दीन गिरि दीना॥ सहित वेग वेगित हनुमाना। हरि वर वीर वीर परमाना॥ महानुभाव समाहित मानस। लंकहि चल्यो नहीं कछु आलस॥ इति रामायण वाल्मीकीय किष्किंधा कांड समाप्तः॥ लिपा रघोसिंह साह वैरी ग्राम निवासी संवत १९४० वि०

विषय—वाल्मीकि रामायण किष्किंधा कांड की भाषा ठीका।

संख्या २२० आई. रामायण वालमीकी भाषा सुंदरकांड, रचयिता—महेशदत्त (धनौली, बाराबंकी), कागज—विदेशी, पत्र—१८०, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति

(प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४९७२, रूप—साधारण, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान पं० ज्ञानानंद जोशी, ग्राम—मथुरा, डाकघर—मथुरा झालाकुंज, जिला—मथुरा ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ सुंदर कांड वालमीकी रामायण भाषा लिख्यते ॥दो०॥ सीतान्वेषण निरत गत मान वीर हनुमान चरण कमल अशरण शरण शरण होहिं जन जान ॥ शिर धरि राम संदेस तरि न दिन देश मिथिलेश । सुता संदेश वहोरि कह कोश लेश यह वेश ॥ सो कपि पति शुभ मति करहिं हरहिं विपति के जाल ॥ मोरि विनति नति लेहिं अरू देहिं भक्ति निजहाल ॥ जामवंत के वचनों से प्रोत्साहित हो शत्रुओं के खीचने वाले हनुमान जी ने रावण की हरी सीता जी के रहने का स्थान ढूढ़ने के लिये सिद्धि चरण सेवित आकाश मार्ग में जाने की इच्छा की । उस समय और लोगों से न हो सकने वाला विघ्न रहित काम करने की इच्छा किये सिर व गल ऊपर उठाये हनुमान जी बड़े भारी वृषभ के समान शोभित हुए ।

अंत—(हरिगीतिका छंद) तेहिं समय तुम्हारे शोक पीड़ित जनक राज कुमारिका । मम सकल ईप्सित वचन प्रार्थित भई शोक विदारिका ॥ गत शोक लहि तब शान्ति हर्षित वचन कहहु वनायके । हम चले तेहि समझाइ वहु तिन चरण पर शिर नाइके ॥ इति श्री रामायण वालमीकीय सुन्दर कांड भाषा सम्पूर्ण समाप्तः लिखा शिव दयाल सिंह ठाकुर गूजे पुर निवासी मार्गशिषि वदी । पंचमी संवत १९४० वि०

विषय—बाल्मीकि सुन्दर कांड रामायण का भाषानुवाद ।

संख्या २२० जे. रामायण वाल्मीकि भाषा लंकाकांड, रचयिता—महेशदत्त शुक्ल (धनौली, बाराबंकी), कागज—देशी, पत्र—३६६, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८००, रूप—नवीन, पद्य गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३८ = १८८१ ई०, प्राप्तिस्थान—रामकुमार शास्त्री, ग्राम—हरिहरपुर, डाकघर—अवागढ़, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशायनमः श्री रामायनमः ॥ अथ रामायण वाल्मीकी भाषा का लंका कांड लिख्यते ॥ दो०—जलधि सेतु कारण निरति मारण मारण दास । दर दारुण हारण दिपति पुर वहिं रघुपति आस ॥ उदधि सेतु करि सम रहित रावण युत परिवार । जनक सुता संग अवंध लहि राम हरहिं अधवार ॥ पवन तनय नय विनय युत अनय रहित सुग्रीव । शुभ संगद अंगद सुखद समुद करहु मम जीव ॥ जनक सुते शुभ गण युते विश्वनुते वर दात्रि । मामव भव भव तारिणी रिपुमारिणि शुचि गात्रि ॥ अच्छी तरह कहे हनुमान जी के वचन सुनि अति प्रीति सहित हो श्री रामजी वोले कि जो कार्य हनुमान ने किया है वह भूतल में महादुर्लभ है क्योंकि इस महीतल में मन से भी और कोई ऐसा कार्य नहीं कर सकता ॥ भाई गरुड़ व पवन व हनूमान को छोड़ और किसी को पृथ्वी पर हम नहीं देखते जो समुद्र नाघ जाय देखो देवता दानव जक्ष गंधर्व नाग व राक्षण रावण की पाली लंका पुरी किसी के जाने जोग्य नहीं है ।

अंत—हरि गीतिका ॥ धन धान्य वृद्धि कुटुम्ब वृद्धि सुसिद्धि वर नारी लहै । अरु सुख अनुत्तम अर्थ सिद्धि समृद्धि वहु भारी सहै ॥ जो सुनै यह वर आदि काव्य महार्थ युत क्षिति में सही । सो सकल वांछित पाव ही नर कछुक संसय है नहीं ॥ दीर्घायु कर आरोग्य कर यश करण शुभप्रद है सही । सो भ्रात कर वर वुद्धि करु प्रताप कर रिषि ने कही ॥ यहि पढ़हु सज्जन सुनहु पुनि मन गुनहु देर न लावहू । रघुनाथ नाथ सनाथ करि हैं यहँ लगावहु भावहू ॥ इति श्री रामायण वाल्मीकी लंका कांड संपूर्ण लिखा बैजू शुकुल सुभानपुर निवासी पौष कृष्ण द्वितीया संवत १९३८ वि० ।

विषय—वाल्मीकि रामायण लंका कांड का भाषानुवाद ।

संख्या २२० के. वालमीकी रामायण भाषा उत्तरकांड, रचयिता—महेशदत्त (धनौली, बाराबंकी), कागज—देशी, पत्र—२६०, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—७६८०, रूप—साधारण, गद्य पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामकुमार शास्त्री, ग्राम—हरिहर पुर, डाकघर—अवागढ़, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ रामायण वालमीकी भाषा उत्तर कांड लिख्यते । दो०—कुजा रमण जनदर हरण भव्य करण महराज । चरण शरण अशरण शरण हौं पुर वहु सव काज ॥ राज्य पाय हरषाय सब भाय संग रघुनाथ । करहु दया रिपुगण हरहु भरहु जनन एक साथ ॥ (त्रिभंगी छंद) पितु आज्ञा पाई मुनि संग जाई यज्ञ रखाई जनकपुरी । पहुंचे दोऊ भाई शिव धनु धाई जाय उठाई सीय वरी ॥ पुनि अवधहिं आई राज्य विहाई वनहि सिधाई नारि हरी । करि कीस मिलाई लंक ढहाई निजपुर आई राज्य करी ॥ सो रघुपति राजा सहित समाजा सव गुण भ्राजा अशुभ हैं । अरु पालहि धरणी अद्भुत करणी करि अघ हरणी मोद भरैं ॥

अंत—जब से राम गये तजि याहि । अवध वहुत दिन शून्य रहाही ॥ ऋषभ नृपति के समान वहोरी । वसी अयोध्या सब सुख भोरी ॥ यह आख्यान आयु कर शोभन । कीन्ह वरूण सुत कवि अघमोचन । उत्तर कांड सहित सव गावा । सो मुनि ब्रह्मा के मन भावा ॥ इति श्री रामायण वालमीकी भाषा उत्तर कांड संपूर्ण समाप्तः लिखा बैजू शुकुल सुभावपुर निवासी पौष शुक्ल दशमी संवत १९४० वि०

विषय—वाल्मीकि रामायण उत्तर कांड का भाषानुवाद ।

संख्या २२० एल. विष्णुपुराण भाषा, रचयिता—महेशदत्त (धनौली, बाराबंकी), कागज—देशी, पत्र—४००, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४४, परिमाण (अनुष्टुप्)—९२००, रूप—नवीन, पद्य गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर रामसिंह जी, ग्राम—मझगवाँ, डाकघर—बेनीगंज, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ विष्णु भाषा लिख्यते ॥ दोहा ॥ कुशल करण अशरण शरण विष्णु चरण धरि ध्यान । श्री मत विष्णु पुराण को भाषा करत समान ॥ हैं पहिले सुभ अंस में सब वाइस अध्याय । नाना भांति कथा जहां कहो पराशर आय ॥ तहां प्रथम

अध्याय महं सब पुराण प्रस्ताव । जिनि में त्रेयपरा शरहु प्रश्नोत्तर श्रुति गाव ॥ हे पुंडरी काक्ष आप की जय हो हे विश्वभावन ऋषी केश महापुरुष सबसे पूर्वज तुम्हारे नमस्कार है जो विष्णु सत अक्षर ब्रह्म ईश्वर पुरुष अपने गुणों की तरंगो से इस संसार की सृष्टि पालन व नाश करते हैं और प्रधान द्वारा बुद्धयादिकों को उत्पन्न करते हैं सो हम सब को गतिभूति मुक्ति दें विश्व के ईश्वर विष्णु व ब्रह्मादिकों व गुरू के प्रणाम कै वेद सम्मति पुराण कहते हैं। इतिहास पुराणों के जानने वाले वशिष्ट मुनि के पौत्र मुनिवरों में उत्तम पराशर ऋषि से नमस्कार के साथ मैत्रेय मुनि बोले।

अंत—(चौपाई) अनिल अनल जल कुतल अकाशा। इनकी रचना करत प्रकाशा ॥ शब्द रूप रस गंध स्परशा। सब विषयन भोगत करि सर्सा ॥ सकल इंद्रियन के उपकारी। व्यक्त सूक्षम तनु सुद्ध विधारी ॥ करत प्रणाम तोहि भगवाना। करहु दया सब गुण गण धाना ॥ प्रकृति पुरुष आतमा मय जासू। अज अद्वैत रुप है तासू ॥ होहु सनातन अरू अविनासी। सकल जनन कह मुक्ति प्रकासी ॥ इति श्री मत् विष्णु पुराणे षष्टेऽशे अष्टमोध्यायः ॥ ८ ॥ इति श्री मत् विष्णु पुराण भाषा महेशदत्त रचित धनावनी वारावंकी निवासी सम्पूर्ण संवत् १९३० वि० दो० प्रति श्लोक प्रति चरण प्रति पद भाषान्तर कीन। तदपि भूल जो होइ कहुं चित्त न धरहि प्रवीन ॥

विषय—संस्कृत ग्रंथ विष्णु पुराण का भाषा-गद्य-पद्य में अनुवाद।

संख्या २२१. व्रतार्क भाषा, रचयिता—महेशदत्त त्रिपाठी (नंदापुर, सुलतानपुर), पत्र—५७५, आकार—९$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३६५६, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० रामनारायण, ग्राम—अमौसी, डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ।

आदि—श्री गनेशाय नमः श्री विष्णवे नमः शिवाय नमः श्री कृष्णाय नमः श्री गुरुवे नमः ॥ दोहा ॥ शिव नन्दन करिवर वदन। मोदक अदन सुजान पूर्ण करो मम कामना। बुद्धि सदन गुण खान ॥ १ ॥ शंकर वृत इस ग्रन्थ को। उल्था करति विचारि। गिरिजा नन्दन करि कृपा। ताको देहु सुधारि ॥ २ ॥ अऽन्या धान। प्रतिष्ठा यज्ञ दान। और वृत्त और शुभ कर्म अभिषेक इतने काम मल मास में वर्जित है। शुक्र और बृहस्पति अस्त हों अथवा वाल हों या वृद्ध हों तो मल मास में पूर्वोक्त कार्य और देव दर्शन वर्जित हैं और बृहस्पति नीचस्थ अथवा मकर के हों और वक्री अथवा अति चारग हों या वल वृद्ध हो या वाल वृद्ध हों या सिंह राशि के हों

अंत—मन्त्रः ॥ विश्वाय विश्व रुपाय विश्व धाम्ने स्वयम्भुवे ॥ नमोऽनन्त नमो धात्रे ऋक्साम यजु षाम्यते ॥ इस मंत्र से अर्घ दे ॥ इस विधि से सम्पूर्ण महीने महीने करै और वर्ष के अन्त में घी और चाउरि से अग्नि और ब्राह्मणों की तृप्ति करके रत्न सुवर्ण पद्म सहित वारह घट दूध देनेवाली शील वती सवत्सा चाँदी के खुर मढ़ी वस्त्र युक्त कांस्यदोहनी वारह अथवा चार अशक्त हो तो एक ही गऊ ब्राह्मण को दे। × × × इति श्री नील कण्ठात्मज भट्ट शंकर कृतौ व्रतार्के सोधापन संक्रान्ति व्रतानि सरल भाषा महेश दत्त त्रिपाठी कृत समाप्तम् शुभम् ॥

विषय—(१) पृ० १ से १६४ तक—व्रत के अधिकारी एवम समपादि का विचार। व्रतोपयोगी वस्तुएँ। ऋत्वग्वर्णन। द्वादश लिङ्गोद्भव मंडल। एवम आसनादि विधान। भंग व्रतपूर्ण होने का विधान। सामान्य पूजा। मंत्रादि (परिभाषा प्रकरण) व्रतों का प्रकार। अरुन्धती व्रत संबंधी कथा। अक्षय तृतीया। स्वर्ण गौरी। हरिता-लिका। वृहद् गौरी। संकष्ठ चतुर्थी। कर्पदीश्वर विनायक। गौरी चतुर्थी व ऋषि पंचमी के व्रतों के विधान एवम् कथाओं का वर्णन (२) पृ० १६५ से ३२२ तक—षष्ठी संबंधी व्रत। विशेष—लीलता शीतलां। अभुक्ता भरण सप्तमी। हेमाद्र माघ शुक्ल सप्तमी बुधाष्टमी वृत। भविष्योतर दशा फल। जन्माष्टमी ज्येष्ठा। महा लक्ष्मी, राम नौमी। अगहन की एकादशी ज्येष्ठ शुक्ला एकादशी तथा गोप पद्म वृतों का विधान माहात्म्य एवम् उनके संबंध की कथाएँ (३) पृ० ३२३ से ४७२ तक—श्रवण द्वादशी। पार्वती वृत। नृसिंह चतुर्दशी। अनन्त चतुर्दशी। कदली व्रत। तथा साविश्री वृत संबंधी कथादि का विस्तृत वर्णन। (४) पृ० ४७३ से ५७५ तक—नार दीयेगो पद्म व्रत। कोकिला वृत। सोमवती व्रत। वर लक्ष्मी व्रत। दान फल व्रत। सोमवार व्रत तथा भौम व्रतों का विधान माहात्म्य। पूजा विधान कथाओं और उद्यापि नादि का वर्णन।

संख्या २२२. चित्रकूट महात्म, रचयिता—महिपाल 'द्विजदत्त' (तरौहा, बाँदा), कागज—देशी, पत्र—४०, आकार—१० X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—७२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२८ = १८७१ ई०, लिपिकाल—सं० १९३८ = १८८१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० विष्णुभरोसे, ग्राम—पूरा बहादुरपुर, डाकघर—बेहटा गोकुल, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ चित्रकूट महात्म लिष्यते ॥ श्री राघवायनमः दो०—राम चरित अनुराग अति ऋषि सांडिल्य पुनीत। जिमि सुसुंडि प्रति प्रश्न किय तिन वरणी करि प्रीति ॥ सांडिल्य उवाच ॥ दो० ॥ राम चरन भूषित विमल चित्रकूट वर धाम। जहं अनंत सिय सहित प्रभु अमित लहैं विश्राम ॥ चित्रकूट गिरि भूति अति सुनी अही ऋषि नाथ। श्रुति संमत संवाद कहि मो कहं करहु सनाथ ॥ चौ० चित्रकूट महिमा श्रुति गाई। मंदा किनि तट परम सुहाई ॥ परम शुद्ध मंडल निपुणई। पूरब रचि विरंचि सुखदाई ॥ राम चरित सब कह सुषदाई। अगम सुगम निगमागम गाई ॥ तो जानत सत संग प्रभाऊ। सुगम पंथ नहि आन उपाऊ ॥ धन्य आजु सुचि संग समाजू। सुफल सुकाम सुकृत सुख साजू ॥

अंत—जो हित अंत समैं कहिं वेद तिहि दिन रैन सुचित धरीजै। सो द्विज दत्त लही न लहौ लहि मानुष देह सुधारस पीजै ॥ दो०—सुजन आदरहि यहि सदा जानि भक्त को भेद। अबुध निरादर जो करहि दत्त हमहिं नहिं खेद ॥ संवत उनइस सै अट्ठाइश श्रावण मास सुहावन। मन भावन हरि पद रति पावन नाना सुख उपजावन ॥ चित्रकूट महात्म ग्रंथ यह विरचो भव निधि सेतू। बैठि तरौ हां नगर पुनीता जो मम सुष को हेतू ॥ इति श्री चित्रकूट महात्म संपूर्ण समाप्तः माघ मास शुक्ल पक्षे त्रयोदशयाम संवत् १९३८ वि० ॥

विषय—चित्रकूट तीर्थ की महिमा का वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रंथ के रचयिता महिपाल उप० द्विज दत्त जाति के ब्राह्मण तरौंहा जिला बांदा निवासी थे । निर्माण काल संवत् १९३८ वि० है । इस को इस प्रकार लिखा हैः—संवत् उनइस सै अट्ठाइस श्रावण मास सुहावन मन भावन हरि पद रति पावन नाना सुख उपजावन ।। चित्रकूट महात्म ग्रंथ यह विरच्यो भवनिधि सेतू ।। बैठि तरौ हां नगर पुनीता जो मम सुख को हेतू ।।

संख्या २२३ ए. गनेश की पूजा तथा होमविधि, रचयिता—माखनलाल चौबे (कुलपहार), पत्र—२७, आकार—८$\frac{३}{२}$ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२४, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०० = १७४३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० आनंदीलाल दूबे, ग्राम और डाकघर—बमरौली कटारा, जिला—आगरा ।

आदि—प्रथम पृष्ठ लुप्त—द्वितीय पृष्ठ से उद्धृत ॥ श्री कृस्न उवाच ।। कृस्न कहै नृपराज जू। धरौ धर्म में चित्त । क्षत्रन की छै होइगी । करौ गणेश को वृत ॥ शत्रु नास संकट कटैं । रिद्धि सिद्धि धन धाम । उमा पुत्र कों सेइया । पूरण हुइहै काम ॥ चौपाई ॥ पूंछत तबै कृष्णकों राई । कौन गनेस कौन सुत आई ॥ कौन भांति प्रगटे हो देवा । ते हमसौ कहियो भेवा ।।

अंत—गण पति पूजा सब कही । और होम उपदेस । जिहि प्रकार सेवत रहै । बाढ़ै देव गणेस ॥ सुख संपति को देत है । काटत सवै कलेस । प्री मष वानी कहत हैं । नृप कौं दै उपदेस ॥ सैले सै लेन मन क्य मुतिक्यनगजे गजे सर वति साधवो । नहिं चंदनेन वणे वणे सुभ कासै एक दंतस्या कपिलो गज ।। आसलखपरतु ।। जएै गणेश ।। गणेस ॥ गणेश ॥ गणेश ॥ गणेस ।। ऐती श्री गणेश की पूजा की विधि होम की विधि सम्पूर्ण समाप्त ॥ इति श्री लिखितं झन्डी विरामन मुजै दिनहुली के गोत्र आवोरिआ ॥ सो पोथी गणेश की सम्पूरण ॥ जैसी देखी तैसी लिखी अछिर की टोट होइ तहां और लगाइ लीजौ संमत पटा १८१०० लीखतं भा वदी १३ भई ॥

विषय—श्री गणेश की पूजा तथा होम विधि ।

संख्या २२३ बी. गणेशकथा, रचयिता—माखनलाल चौबे (कुलपहार, हमीरपुर), कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०८ = १८५१ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला देवीराम पटवारी, ग्राम—अगसौली, जिला—अलीगढ़ ।

आदि–अंत—२२३ ए के समान । पुष्पिका इस प्रकार हैः—

इति श्री गणेश उत्पति कथा वर्णन संपूर्ण भई ॥ इति श्री गणेश वृत कथा संपूर्ण संवत् १९०८ वि० ।

संख्या २२४. कोकशास्त्र, रचयिता—मकुंददास, पत्र—४२, आकार—९$\frac{१}{२}$ × ६$\frac{१}{२}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६७२, रूप—प्राचीन, पद्य गद्य,

लिपि—कैथी, रचनाकाल—सं० १६७५ = १६१८ ई०, प्राप्तिस्थान—बनवारीलाल पुजारी, बम्हनटोला मंदिर, ग्राम—समाई, डाकघर—इतमादपुर, जिला—आगरा ।

आदि—श्री राम श्री गनेस सा एकम्ह श्री गंगाजी सहाए श्री पोथी कोक सास तर । दोहा । पिंगल विनु छंदहि रचै ओ गीता विनु ज्ञान । कोक पढ़ै विनु रती करै सो नर पसु समान । चौपाइ । ब्रनौ गनपति वुद्धि निवासा । राम रूप तुम पुरवहु आसा । तव वरनौ सारद के पाऊँ । जीन्ह की कृपा ज्ञान मोंहि आऊ । श्रीतु पताल कै वंदौ देवा । दस द्वीगपाल के करौं मैं सेवा । चौदहभुवन कीन्ह विस्तारा । वंदौ तुअगुर अगम अपारा । दोहा । एतना देव कह वंदौ बहु बिधि चरन मनाए । कोक सासत्र कछु वरनौ अक्षर देहु बनाए । चौपाई । पंडित जन सो वीनती हमारा, मै कछु कथा करौ अनुसारा । तोहरी कृपा ज्ञान हीद आया । पुषन छत्र ताही दिन पाया । जगकर उपमा जो संजोगा, कथा कहो मैं सुनु सब लोगा । साहसलै मंदील सुलताना ताकी मैं सब लोक संकाना । दोहा । सोलह सै पचहती संमत सुना हदीस, सनद कुतर मह देषः एक हजार पचीस । ताहा कवि एक पंडित भैउ, पहिल कोक ग्रंथ उन कैउ । जवनी पुत्र कवी अती मन माना । काम केलि रस उन सब जाना । उनके मता ग्रंथ हम देषा ।·······वीसेषा । काम केलि वरनहि सब कोइ । सुना रसी करवस होइ । दोहा । बहुत ग्रंथ विचारत होए बहुत दिन षेप । बाल बोध के कारन, कीए कथा संक्षेप ।

अंत— औरत का संकोच विधि—पाव तोला सुषासीम का दो भाग दर काजर काक का भुष तीनों तोलाई सब चीज को फुकी करै मीलएके सुवाही षाइ एक तोला ऊपर सो मुनका रस पीअै एक सीपी से बोल प्रट है । भवानी सीघ मथुरा के पोथी कोकली आकान्ह पुर छावनी मो ।

विषय—काम शास्त्र का वर्णन ।

संख्या २२५. पद्मावती, रचयिता—मलिक मुहम्मद जायसी (जायस, रायबरेली), पत्र—३१७, आकार—१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४७२६, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सन् ९२७ हिजरी, लिपिकाल—संवत् १८५८ = १८०१ ई०, प्राप्तिस्थान—महंत गुरुप्रसाद दास जी, ग्राम—हरिगाँव, डाकघर—जगेसरगंज, जिला—सुलतानपुर ।

आदि—श्री गणेशायनमः चौ—संवरौ आदि एक करतारु, जेइ जिव दीन्ह कीन्ह संसारु । कीन्हिसि पृथिमी जोति प्रगासू, कीन्हिसि नव पर्वत कविलासू । कीन्हिसि पवन अगिन जल षेहा, कीन्हिसि बहुतै रंग औरेहा । कीन्हिसि धरती सरग पतारू कीन्हिसि वरन वरन अवतारू । कीन्हिसि स्याम सेत ब्रह्मंडा, कीन्हि भवन चौदह नव षंडा । कीन्हिसि दिन दिनकर ससि राती, कीन्हिसि नषतु तराइन पांती । कीन्हिसि सीत धूप और छाया कीन्हिसि मेघ वीजु जेहि माहा ।

अंत—चौ० एक पुरुष के एकै धानू, एक चाँद एकै पुनि भानू । जो सब कर पर पुरुष आही, एक ते करू पूजा पुनि ताही । ग्रह २ दीपक लेसहु ग्याना, नाही तेज जारु अभि

माना। पांचहु मिलिके नाचहु तांहा, आइ पुरान पूर्ष तम जाहां। जनमा मरन परै जेहि वाता, वहि के रंग रहसि जेराता। नाहि तो जन्म २ पछिताहू रहट घरी अस फिरि २ जाहू। वास पाइ इहवां जनि भुलहु, करि २ कवध देहि जनि फूलहु। दो० सुख संवाद जनि भूलहु होइह अंत विकार। नाही तौ पछिताइहौ, यहि पांचौ करु छार। महमद रसना हाथ करू, रहु अति लीने भेष, मीठो बोलन जै चलन, सबै तुम्हारो देस।

विषय—सूफी प्रेम कथानक काव्य जिसमें चितौर के राजा रत्नसेन के समय उसकी रानी पद्मिनी के लिये दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन की लड़ाई का वर्णन है।

टिप्पणी—जायसी का जन्म जायस (रायबरेली) के मुहल्ला कंचानाखुर्द में हुआ। इस स्थान पर अब एक नयी हवेली बन गई है जो दादू मियां के मकान के पास है और जायसी के एक वंशज ने बनवायी है। जहां जायसी ईश्वर आराधना करते थे वह गुफा अब तक है। जायसी के खानदानी लोग हैदराबाद (दक्षिण) में बड़े बड़े ओहदों पर हैं। कुछ लोग यहां भी हैं। जायसी ने जायस के पास एक 'दमड़ी' नामक छोटा सा गांव बसाया था जो अब तक है। जायस के बहुत से लोग इनके शरीरान्त का इस प्रकार वर्णन करते हैं कि जायसी ने अमेठी के राजा से एक बार पहले ही कहा था कि तुम्हारे हाथ से हमारी मृत्यु होगी। एक बार कोटि के समीप ही तपस्या कर रहे थे कि वहां से शेरके बोलने की आवाज सुनाई पड़ी। राजा साहब ने गोली मार दी, परंतु गोली 'मलिक' साहब को लगी। उन्होंने उसी स्थान पर उनकी समाधि बनवा दी जहां पर प्रति वर्ष मेला भरता है।

संख्या २२६. एकादशी महात्म्य, रचयिता—मानदास, पत्र—४८, आकार—८½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२००, रूप - प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८५ = १८२८ ई०, प्राप्तिस्थान – महाराज महेंद्र मानसिंह जी, स्थान—भदावर, डाकघर—नौगाँव, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ श्री सरस्वती जू नमः॥ श्री गुरु चरन कमलेभ्यो नमः॥ अथ एकादशी महात्म्य लिष्यते॥ है कैसो एकादशी महात्म्य॥ जाके कहत सुनत परम मोछ की प्रापति ह्वै जातु है॥ और जाव्रत के समान मुक्तिकी देन हार व्रत कोऊ नाहिं॥ जैसे नदीनि में श्री गंगा जू वड़ी हैं॥ औरु जैसे देवतनि मैं श्री कृष्ण जू वड़े हैं॥ अरु चारहू वेदनि मैं जैसे साम वेद वड़ो है और वृछन मैं जैसे पीपर वड़ो है तैसे व्रतनि मांझ एकदशी वड़ी व्रत है और नाही॥

अंत—एका दशी अपार, वरित रासि वुध जन लही। मम मति लघु सिल हारि, लषि कछु ले इकठा वरै॥ ३९॥ षट पद हंस समान, गुन ग्राही सज्जन सुमति। मानदास अस जानि, कहै कछुक व्रत चरित वर॥ ४०॥ इति श्री पद्म पुराने एकादशी महात्मे श्री कृष्ण जुधिष्टिर संवादे कार्तिक सुकल एकादसी प्रवोधिनी नाम चतुर्विंसमो अध्याय॥ २४॥ सम्पूर्ण मिती जेठ वदी ३० संवत् १८८५ श्री गनेशाय नमः॥ अथ एकादशी मल मास कथा लिख्यते॥ जुधिष्टिर उवाचः— × × तो ब्राह्मन अपने पिता के ग्रह में जातु भयो श्री कृष्ण कहत है कि हे राजा जुधिष्टिर या प्रकार व्रत करियै॥ ४३॥ जो यह एका-

दसी व्रत सुनैगो सर्वं पापनि तै छूट हरि को लोक पावैगो ॥ ४४ ॥ इति श्री ब्रह्मांड पुराने पुरुषोत्तम मासे श्री कृष्ण जुधिष्ठिर संवादे कमला एकादसी व्रत महात्म्यं संपूर्न संवत् १८९५ मलमास ॥

विषय—वर्ष भर की सम्पूर्ण एकादशियों के व्रतों का विधान, उनका माहात्म्य, फल और कथादि का वर्णन।

संख्या २२७. गोपीचंद राजा की कथा, रचयिता—मानामंत्री, पत्र—५२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—६७६, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, लिपिकाल—संवत् १९२७ = १८७० ई०, प्राप्तिस्थान—महाराजा महेंद्र मान सिंह जी (भदावर के राजा), स्थान—भदावर, डाकघर—नौगवाँ, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ गोपीचंद राजा की कथा लिष्यते ॥ चौपही ॥ अलष निरंजन सिरजन हारा। सब जग सिष्ट उपामन हारा ॥ १ ॥ लैकर पैपालै और मारै। चौदह भुवन पलक मैं टारै ॥ २ ॥ धरती सर्ग पताल अकासा। नाना विधि लीला परगासा ॥ ३ ॥ गगन षड़ो कीनो विन थूनी। चंद और रवि जड़े विन चूनी ॥ ४ ॥ प्रेम भक्ति का है वह दाता। निर आकार पिता नहीं माता ॥ ५ ॥ भाँत भाँत रचना उन कीनी। भगत मुकत उनही ने दीनी ॥ ६ ॥ गोपीचंद राजा शुभकारी। सोलह सै छांडी जिन नारी ॥ ७ ॥ जाका मंदर इंद्र सम जाना। त्यागत मन मै मोह न आना ॥ ८ ॥ दोहा ॥ माता के उपदेश से छाँड़ सकल सुष भोग। गौड़ बंगाला राज तज अमर भये कर जोग ॥ ९ ॥ अमर काया के कारने जोगी भये गोपी चंद ॥ मानामन्त्री यौं कहै छाँड़ माया के फन्द ॥ १० ॥

अंत—राज काज सब त्याग सन्यासी। सब ही त्याग भये वन वासी ॥ राज काज में बहु दुष सहै। जोग काज अमरापुर लहै ॥ राज सकल सब पुर कौ जारै। राज काज भाई को मारै ॥ राज काज भाईन सौं लरै। राज काज रन माहीं मरै ॥ धन गोपीचन्द उत्तम काया, विष समान छोड़ी सब माया ॥ धन इह मेना मंती माई। जिन इह सुत की जुगत बताई ॥ धन वह गुरु जलंधर नाथा, जिन गोपीचंद कियो सनाथा ॥ सबमें सार नामको पावै। जनम जनम की पीर मिटावै ॥ एक ब्रह्म दूसरो है नाहीं। तत्व ज्ञान वेदीनह माहीं ॥ अवगत आपसै ध्यान लगावौ। गुरु किरपा सै सब सुध पावौ ॥ ९५० ॥ अब इहि कथा जो भई समापत। तत ज्ञान मेहि भयो परावत ॥ जो कोई जोग कथा यह गावै। आतम ज्ञान पदारथ पावै ॥ ६५२ इति श्री गोपीचन्द की कथा राग सागरो वैराग वानी समाप्तं, श्रावन मासे कृष्ण पक्षे प्रति पदायां १ बुधवासरे संवत् १९२७।

विषय—गोपीचन्द की आदि अवस्था रानी का जोग के प्रति उपदेश, राजा का विरोध, रानी का देह की अनित्यता और संसार की निस्सारता समझा कर पुत्र का योग में विश्वास जमाना। गोपीचन्द तथा रानियों का संवाद। राजा का दीक्षा लेकर जालंधर को गुरू करना। माता तथा रानियों से भिक्षा मँगवा कर गोपीचन्द का योग दृढ़ कराना।

गोपीचन्द का निज भगनी चन्द्रावलि के यहाँ योगी वेश में जाना और उसका विलाप। राजा का शरीर की अनित्यता तथा संसार मिथ्यात्व को समझाना और योग की प्रशंसा करना, मन पर विजय कर गुरु जालंधर से मिलना और सदैव एक ब्रह्म के ध्यान में निमग्न रहना।

संख्या २२८. गनिका चरित्र, रचयिता—मंगलदेव (आगरा), कागज देशी, पत्र—३६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२१०, रूप—साधारण, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—जैसुखराम, ग्राम—मंगलपुर, डाकघर—मारहरा, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ गनिका चरित्र लिख्यते ॥ दो० धर्म कर्म धन भक्षिणी संतति खावन हार। गनिका है अति राक्षसी बुधजन कहत पुकार ॥ चौ० पृथक नारि डायन कहुँ नाहीं। यही प्रवल डायन जग माहीं ॥ जे वस पर हैं इन ठगनी के। काटि कलेजा खावहिं नीके ॥ ये डायन लड़िकन को खावैं। धन पति को चटनी करि जावैं ॥ नव कुमार सब इनके खाजा। इतने बचे न रैयत राजा ॥

अंत—चौ० सब से गौ हत्या अति भारी। वेद सास्त्र सब कहत पुकारी ॥ गौ घाती ढिग बैठन हारो। वो भी होवत गौ हत्यारो। गौ घाती से प्रीति लगावे। वे भी गौ घाती हुइ जावै ॥ अव तुम देखो सोच विचारी। वेश्या प्रति दिन गौ हत्यारी ॥ जब तुम उसका नाच करावो। तब तिन को निज ढिग बैठावो ॥ अति पातक ढिग बैठे होई। धर्म शास्त्र आज्ञा नहिं गोई। वेश्या की लीला दर्साई। मंगलदास बहुत विधि गाई ॥

विषय—वेश्या के अवगुणों का वर्णन भली भाँति किया गया है।

टिप्पणी—इस ग्रंथ के रचयिता मंगलदेव सन्यासी आगरा के निवासी थे। निर्माण काल संवत् १९३२ वि०, लिपिकाल संवत् १९४० वि० है।

संख्या २२९ ए. राग सार संग्रह, रचयिता—मन्नालाल (दोड़वा कानपुर), पत्र—७२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३०९, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९४१ = १८८४ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला बालकराम, ग्राम—गोविंदपुर, डाकघर—माधोगंज, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ राग सार संग्रह लिख्यते ॥ श्री गणेश वंदना ॥ ध्याइये गणपति जग वंदन। शंकर सुवन भवानी जी के नंदन ॥ तेज प्रताप महा दुख भंजन ॥ मोदक प्रिय मुद मंगल दाता। विद्या वारिध बुद्धि विधाता ॥ सिद्धि करन गज बदन विनायक कृपा सिंधु सुन्दर सब लायक ॥ मागत तुलसी दास निहोरे वसुहु राम सिय मानस मोरे। ध्याइये गणपति जग वंदन ॥१॥

अंत—राग विलावल ॥ देखत खग मृग छबि रघुवर की। कबक कुरंग संग वन धावनि कर सरोज साधन धनुसर की ॥ ग्रीवा नवीन ठवनि ठमकनि ठठि ओट गमन वल्ली तरुवर की ॥ चलीन अहेरी चाल सुचंचल चहूँ ओर चितवन हरिहर की ॥ फिरि फिरि

हिरन विलोकत रामहि मूरत मधुर प्राण हर वर की ॥ राम गुलाम सराहत सुरगण भाग्य अपार सरवरी चर की ॥ इति श्री राग सार संग्रह समाप्तम लिखा राम विलास त्रिपाठी स्वपठनयार्थ संवत् १९४१ वि० जेष्ठ शुक्ला दशमी ॥

विषय—इसमें हर प्रकार के भजन, ठुमरी, राग रागिनी आदि का वर्णन है।

टिप्पणी—इस ग्रंथ के संग्रहकार मन्नालाल वैश्य डौड़वां जिला कानपुर निवासी थे। लिपिकाल संवत् १९४१ वि० है।

संख्या २२६ बी. रागसंग्रह, रचयिता—मन्नालाल (दोड़वा, कानपुर), पत्र—८४ आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) ३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६२४, रूप—साधारण, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३१ = १८७४ ई०, लिपिकाल—सं० १९४२ = १८८५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवमहेश जी, ग्राम—विशुनपुर, डाकघर—अलीगंज, जिला—एटा।

आदि—२२६ ए के समान।

अंत—भजन ॥ सुन वंशी वाले काहे को डाली लाल मोहनी। दधि की मटुकिया सिर पर धरके दधि बेचन ग्वालिन निकसी और गूजरी आगे निकस गई चन्द्रावलि पीछे निकसी। कान्ह कहें दधि लेहौं बरजोरी भोरहिं से भई आज वोहनी ॥ सुन वंशी ॥ रोज रोज का दान मैं लूंगो जो यही मारग आवोगी। छल वल करके निकल जावोगी नाहक रारि वढाओगी ॥ नथ दुलरी की न्यारो लेउंगो सुरत वनी तेरी सोहनी ॥ सुन वंशी वाले० ॥ राज कठिन है कंस राजा को सुनै कंस कहिं पावेगो। माय जसोदा पिता नंद जी सबको पकड़ बुलावेगो ॥ ग्वाल वाल संग चलेंगे पीछे चलेगी मैया रोहनी ॥ सुन वंशी वाले० ॥ वांस वरेली के लालदास और वृन्दावन दस कोस वसै, मोहनि मूरति हृदय वसि गइ अमृत मुख से वचन कहे। जो रस चाहौ सो रस नहियां गो रस पियो भरि दोहनी। सुन वंशी वाले काहे को डाली लाल मोहनी ॥ इति श्री राग संग्रह ग्रंथ समाप्तः भादौं दुहज संवत् १९४२ वि०

विषय—प्राचीन काल की अनेक भाँति की राग रागनियों का वर्णन है।

टिप्पणी—इस ग्रंथ के संग्रह कर्ता मन्नालाल जाति के वैश्य डोड़वा जिला कानपुर निवासी थे निर्माण काल संवत् १९३१ वि० लिपि काल संवत् १९४२ वि० है।

संख्या २२६ सी. संगीतसार, रचयिता—मन्नालाल (दोड़वा, कानपुर), कागज—विदेशी, पत्र—८०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९५६, रूप—साधारण, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० गंगाप्रसाद दुबे, ग्राम—सराय नव्वाब, डाकघर—सारो, जिला—एटा।

आदि—२२९ ए के समान।

अंत—राग विभाग चौताला ॥ भूप के कुंवर दोऊ सुन्दर अनूपरूप वाग मध्य आये सिया चली देख लीजिये। मैं तो देखी मगन भई तन की सुधि भूलि गई सुम की जोहारै कहीं नैनन सुख लीजिये ॥ पीछे कीजो और वात वे तौ जौलों चले जात मैं तो चेरी रावरी

हूं रावरे सुख लीजिये ॥ विधि को मनात जात काहू न जनात वात तात की प्रतिज्ञा देखि कैसे मन धीजिये ॥ राम रूप देखि कान्हर नंदिनी जनक जी की गौरी सो कह्यो आप ऐसो वर दीजिये इति सांगीत सार समाप्तः ॥

विषय—अनेक राग रागनियों का वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रंथ में अनेक कवियों के भजन, ध्रुपद, दादरा, गजल, होली आदियों का संग्रह है । इसके संग्रह कर्त्ता मन्नालाल, (जाति वनिये, जिला, कानपुर, ग्राम डुंडवा) हैं

संख्या २३० ए. एकादशी महात्म, रचयिता—मेघराज प्रधान, पत्र—६७, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२० = १८६३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० देवीप्रसाद सनाढ्य, स्थान और डाकघर—समसावाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ श्री राधावल्लभो जयति ॥ नवीन नीरद स्यामं नीलेंदीवर लीचनं । स्फुरो दुर्हदलोद्वह नील कुंचित मूर्द्ध जं ॥ कंदव कुसुम भासि वनमाला विभूषितं । गंड मंडल संसर्ग चलित्कांकन कुडलं ॥ × × × × × है कैसो एकादशी महा तमु जाके कहत सुनत परमोक्ष को प्रापति हो जात है और या व्रत के समान मुक्ति कौं दैन हार और वृत कोऊ नाहीं ॥

अंत—सो जे प्रानी या व्रत को करि हैं तिनको सोवरन की सी कान्ति हो है ॥ और सूरज को सौ तेज ह्वै है ॥ और काल वस ह्वै है तव वैकुंठ लोक की वास पाइ हैं । सो जो कथा कहि है और सुनि है तिनको वृत के करे कौ फलु ह्वै है ॥ यामें सन्देह नाहीं ॥

इति श्री पदम पुराने एकादशी महात्मे श्री कृष्ण जुधिष्ठर संवादे प्रधान मेघराज भाषा कृते कातिके सुकल पक्षे की एकादसी । देवठानी नाम चौवीसयोध्याय ॥२३॥ एकादशी कथा संपूर्ण ॥ शुभ मस्तु सिद्ध श्री ॥ महारानी वांकावती ॥ देव्या जू के आज्ञा अनुषान लिषी मिती भादौं वदी १२ वुधे संवत १९२० मौ० नौगाए में ॥

विषय—साल भर की चौदहों एकादशियों के व्रतों का विधान और उनके माहात्म्य का वर्णन ।

संख्या २३० बी. मकरध्वज की कथा, रचयिता—मेघराज कायस्थ, पत्र—६, आकार—८ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० सीताराम शर्मा, ग्राम—आरे, डाकघर—कंतरी, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गनाधिपतेन्मः ॥ श्री सरस्वतीन्मः ॥ श्री मकरध्वजकी कथा लिष्यते ॥ चौ० ॥ सिया गये सै हनमत वीर । सागर नापि गये कपि धीर ॥ तिन सब लंका दई जराय । सागर पूंछ वुझाई जाय ॥ धुवाँ वहुत तिनके मुख गयौ । अश्लेषमु तिनको तव भयौ ॥ तब खखारि कैं थूक्यो जाइ । तिहि देखत ही लीन्यों खाइ । तिहि संजोग गर्भु तिहि ठयौ । दिन पूजें ते वालकु भयौ ॥ ताको नाम मगधुंज धन्यौ । मानो हनू दूजौ अव तरो ॥

मगरेलनि में खेलै जाइ । मलहम आवै सवै गिराइ ॥ अति वंत महा सो भयो । पूछन माय आपनी गयो । पिता हमारे को कह नाउ । जीतत सौंह कौन की खाऊँ ॥ मगरि कह्यौ तासौं सति भाऊँ । हनूमान है तिनकों नाऊँ ॥

अंत—॥ दोहरा ॥ बिदा दई सुख पाइ कैं । चले निसा तब जाइ । मन इच्छा पूजी सवै । जब कृपा भये रघुराइ ॥ चौपही ॥ ध्रुव जिमि राजु तहाँ अव करै । कछुकी नहीं संका धरै ॥ अव यह कथा समंगल भई । मेघराज काइथ बरनई ॥ जो यह कथा सुनैं धरि ध्यानू । बढ़ै लक्षिमी अरु सन मानू ॥ अरु जे पढ़ै सुनै चितु लाई । विछुर्‍यौ मिलै तासु कौं आइ । मकरध्वज अति बली अपार । तिनकी कथा चली संसार ।

विषय—हनुमान के पुत्र मकरध्वज की कथा का वर्णन ।

संख्या २३१. मीराबाई की बानी, रचयिता—मीराबाई, कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१२ = १७५५ ई०, प्राप्तिस्थान—रामभरोसे दूबे, ग्राम—मानपुर कला, डाकघर—गंज डुंडवारा, जिला—एटा ।

आदि—अथ मीराबाई की बानी लिख्यते ॥ भजन ॥ मैं अपने सैयां संग सांची ॥ अब काहे की लाज सजिनी परगट ह्वै नाची ॥ दिवस न भूख न चैन कबहूं नींद निशि नासी ॥ वेधिवार को पार ह्वै गो ज्ञान गुह गांसी ॥ कुल कुटुम्बी आनि बैठे मनहु मधु मांसी ॥ दास मीरा लाल गिरधर मिटी जग हांसी ॥ १ ॥ ऐसे पिये जान न दीजै हो ॥ चलो री सजनी मिलि राखिये नैनन रस पीजै हो ॥ जोइ जोइ भेष सों हरि मिलै सोइ सोइ कीजै हो ॥ मीरा के प्रभु गिरधर नागर वड़भागन री जै हो ॥ २ ॥

अंत—भजन—जावा दे री जावा देरी जोगी किसका मीत । सदा उदासी मोरी सजनी निपट अटपटी रीति ॥ बोलत वचन मधुर अति प्यारे जोरत नाहीं प्रीति ॥ हूं जाणू या पार निभैगी छोड़ चला अध वीच ॥ मीरा के प्रभु गिरधर नागर प्रेम पियारा मीत ॥१॥ नैना लोभो रे वहुरि सकै नहि आय । रोम रोम नष सिष सब निरषत ललकि रहे ललचाय । मैं ठाढ़ी ग्रह अपने री मोहन निकसे आय ॥ वदन चन्द परकासत हेली मंद मंद मुसकाय ॥ लोग कुटुबी बरजि बरज ही बतियां कहत बनाय ॥ चंचल निपट अटक नहिं मानत पर हथ गये बिकाय ॥ भली कहौं कोई बुरी कहौं मैं सब लई सीस चढ़ाय ॥ मीरा प्रभु गिरधरन लाल विन पल भरि रह्यो न जाय ॥ २ ॥ बादर देख झरी हो श्याम मैं बादर देख झरी ॥ कारी पीरी घटा जो उमगी वरसी एक घरी ॥ जित जाऊं तित पानी ही पानी भई सव भूमि हरी ॥ जाको पिउ परदेस वसत है भीजै वार खरी ॥ मीरा के प्रभु गिरधर नागर कीजै प्रीति खरी ॥ ३ ॥ पिया तैं कहे गयो नेहरा लगाय । छांड़ि गयो अब कहां विसासी प्रेम की बाती वराय । विरह समुद्र में छांड़ि गयो पिय नेह की नाव चलाय ॥ मीरा के प्रभु गिरधर नागर तुम विन रह्यो न जाय ॥ ४ ॥ इति मीरा बाई के भजन संपूर्ण ॥ संवत १८१२ वि०

विषय—मीरा बाई कृत भजन ।

संख्या २३२ ए. गणितनिदान, रचयिता—मोहनलाल, पत्र—१६०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३३६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९११ = १८५४ ई०, लिपिकाल—सं० १९१७ = १८६० ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रामदयाल पटवारी, ग्राम—गूदापुर, डाकघर—बिलग्राम, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ गणित निदान ग्रन्थ लिख्यते ॥ बहुधा यह देखा कि मनुष्य करना नहीं जानता और केवल २० वा १०० तक गिनती जानता है वह अपना हिसाव याद रखने के लिये दीवाल पर खड़िया से लकीर खींच देता है और जब अपना लैन देन का हिसाब करता है तो लकीर गिन कर वता देता है कि हमारा इतना चाहिये वा तुम्हारी इतनी जिंस हम पर हुई और जितना उनके पास पहुँचा हो वा उन्होंने कुछ जिंस दे दी हो तो गिन कर लकीर मिटा देते हैं ॥ और बता देते हैं कि हमारा इतना वाकी रहा तुम्हारी जिंस इतनी हम पर और चाहिये जो मनुष्य १०० तक पूरी गिन्ती नहीं चाहिये तो जब उनको २० से ऊपर गिनना पड़ता है तो वह २० सों के हिसाब से वताते है जैसे ५५ को वह दो बीसी ऊपर पन्द्रह वा पांच कम ३ वीसी कहेंगे और जो तुरंत ही हिसाव का काम आन पड़ता है तो कंकड़ वा टीकड़ी वा कौड़ियों से काम कर लेते हैं और वहुत से आदमी अपने हाथ की अंगुली के पोरुओं के चिन्हों को गिनकर जोड़ लेते हैं ॥ जब विद्यार्थी गिन्ती गिनना सीख जाय तो उसे गिन्ती का जोड़ और घटाना इस रीति से सिखाना चाहिये ॥ पट्टी पर तीन खड़ी रेखा पास पास खींचे और फिर थोड़ा उनसे हटा कर और दो लकीर पास खीचे जैसे ।।। ।। फिर पूंछे वताओ ३ और दो कितने हुये फिर विद्यार्थी एक ओर से गिन कर वता देगा कि पांच हुए ॥

अंत—२॥ऽ धाऊ व मिट्टी मिले लोहे में से ऽ६ सेर लोहा पड़ता है तो ५६ऽ धाऊ में से कितने मन लोहा निकलेगा ॥ उत्तर ३ऽ४.४ एक नगर से दो सवार आमने सामने की सीधी दो दिसा को चले एक चार मील फी घंटे चला और दूसरा ३½ मील फी घंटे चला तो कितने समय में उनके बीच ६० मील का अन्तर पड़ जावेगा ॥ कदाचित वे दोनों अपनी चाल से एक दिसा को ही चलते तो उनमें ५½ मील का अन्तर स्थान कितने समय में होता उत्तर ११ घंटे १२० तोप का लड़ाई का जहाज है उसमें २८००ऽ लोहे के कील काटे लगे है तो –)॥२ सेर के भाव से कितने का लोहा लगा होगा ॥ उत्तर ११६६६।≈)॥२ पाई ॥ वैरा मीटर नाम वायु के गुरुत्व के मापने के यंत्र में पारा ३० इंच ऊंचा खड़ा है उस समय प्रत्येक वर्ग इंच के ऊपर हवा का ७॥ सेर वोझ पड़ता है जो पारा २५ इंच ही खड़ा हो तो हवा का वोझ प्रत्येक वर्ग इंच पर कितना होगा उत्तर ऽ६। ॥ अपूर्ण

विषय—गणित।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता मोहनलाल जाति के ब्राह्मण थे। निर्माण काल सन् १८५४ ई० और लिपिकाल सन् १८६० ई० है। गणित प्रकाश और इसका लिखनेवाला एक ही है।

संख्या २३२ बी. गणित निदान, रचयिता— मोहन लाल, कागज—भूरा, पत्र—१४४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)-२५९२, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१३ = १८५६ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला हरकिशन राइ वैद्य, ग्राम— जाजामऊ, डाकघर—हाथरस, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—२३२ ए के समान ।

अंत—८०० धुएं की गाड़ी हैं उनमें से प्रत्येक २२४) मन बोझ २०० मील १ दिन में लेजाती है और एक घोड़ा १०॥) मन बोझ २४ मील ले जाता है तो सब गाड़ियों के बराबर काम कितने घोड़े करेंगे ॥ इति श्री गणित निदान पं० मोहनलाल कृत संपूर्ण समाप्तः लिखा गौरी दयाल कायस्थ दर्जा ३ स्कूल सीता रामपूर ॥

विषय—गणित वर्णन है ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के कर्त्ता पंडित मोहनलाल थे जिन्होंने अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद किया था । लिपिकाल संवत् १९१३ वि० है ।

संख्या २३२ सी. गणित निदान, रचयिता— मोहनलाल ब्राह्मण, कागज—देशी मोटा, पत्र—७२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)-१९४४, खंडित, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०९ = १८५२ ई०, लिपिकाल—सं० १९११ = १८५४ ई०, प्राप्तिस्थान—हरिहर सिंह ठाकुर, स्थान—छावनी मोहल्ला एटा, डाकघर—एटा, जिला—एटा ।

आदि-अंत—२३२ ए के समान ।

संख्या २३३. कहानियों का संग्रह, रचयिता—मोतीलाल (लखनऊ), कागज—देशी, पत्र—८०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—११००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामभरोसे, ग्राम—देवकली, डाकघर—माहरहटा, जिला—एटा ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ कहानियों का संग्रह लिख्यते ॥ एक साहूकार पोतड़ों का रज्जा समय के फेर में पड़ अपना धन सब खो बैठा और लगा निपट दुख पाने और उपासा रहने निदान उसके जी में यह सोच आया कि जो मैं किसी महापुरुष या सिद्ध के पास जाऊं तो यह दुःख मिटै क्योंकि सुना भी है कि साधु के दर्शन से व्याध जाती है यह विचार चला चला एक जोगी के पास गया । यह उससे कुछ कहने न पाया कि उसने अपने योग से इसका मनोर्थ जान करके कहा-दोहा—सुख दुख प्रति दिन संग है । मेटि सकै नहिं कोय । जैसे छाया देह की । न्यारी नेक न होय ॥ यह उत्तम उत्तर पा वह विचारा धीरज धर अपने घर आया ॥

अंत—एक बूढ़ा बटोही गरमी की ऋतु में तपन की प्रचण्ड किरनों से निपट कष्ट पाकर लाठी टेकता चला जाता था । मारग में एक जवान घोड़ा पर चढ़ा आ निकला । बूढ़े को देखकर उसे दया आई और बोला अजी मैं जवांन आदमी हूं शीत घाम सब सह सक्ता हूं तुम बुढ़ापा के कारण बहुत थके हो अब इस घोड़े पर चढ़ो । मैं पीछे पीछे चला

जाऊगा। उसकी इस करुण वाणी से प्रसन्न हो बूढ़ा उसके घोड़े पर चढ़ा और जवान पीछे पीछे पैदल जाने लगा।

वह बहुत दूर न गया था कि जवान ने पुकार कर कहा अरे बूढ़े निर्लज्ज घोड़े पर से उतर क्या तूने अपना घोड़ा पाया है सो सारा दिन उस पर चढ़ा चला जाता है! बूढ़ा शर्मा कर उतर पड़ा और धीरे धीरे चलने लगा। थोड़ी दूर गया था कि इसका कष्ट देख फिर उसके जी में दया आई और बहुत सी विनती कर फिर उसे घोड़े पर चढ़ाया। थोड़ी दूर जाकर उसे फिर उसी भांति उतारा निदान दो तीन वार उसे इसी प्रकार चढ़ाने उतारने से बूढ़े ने पूछा तुम्हारे पिता का नाम क्या? वोला शैय्यद हब्बो। फिर उसने तुम्हारी महतारी का नाम क्या? उसने कहा बीवी जीरा पर वह कुलवान नहीं उसके ब्याह सें हमारे कुलमें दाग लगा। यह सुनते ही बूढ़े ने कहा हां बाबा अब मैं समझा कि चढ़ावै उतारें जीरा। अब आप चलिये मैं गिरते पड़ते चला जाऊंगा इति श्री कहानियों का संग्रह संपूर्ण लिखा लाला सुख वासी लाल पटवारी संवत् १९३० आषाढ़ मास शुक्ल पक्ष दशमी।

विषय—इस ग्रन्थ में १०० मनोहर कहानियाँ लिखी हैं।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के संग्रहकार मोती लाल थे। ये लखनऊ निवासी थे। ग्रंथ की प्रस्तुत प्रति को किसी सुख वासी पटवारी ने संवत् १९३० वि० में लिखा।

संख्या २३४ ए. धर्मसंवाद, रचयिता—मुखदास (पंजाब), कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१०, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९० = १८३३ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रामकिशन कुरमी, ग्राम—अतरौली, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ अथ मुख दास कृत धर्म संवाद लिख्यते॥ ॐ द्वारा पुर विषे कथा होत भई नगर जु है हस्तनापुर दीली के पास ति विषे गुरों कोल पूंछत भई। ॐ राजा जन मेजय राजा परीक्षित का बेटा पाण्डव का पोता। हे वैशंपायन जी राजा धर्म अरु पुत्र युधिष्ठिर इनका मिलाप क्योंकर होइहै सो तुम कृपा करके कहो॥

अंत—धर्मोवाच—हे राजा जी तेरी अरबल बहुत होवे हे पाण्डव पुत्र तू चिरजीवी होय। संवाद करके अरु राजा धर्म देव लोक विषे प्राप्त भया धर्म करके शत्रु भी दूर होता है। धर्म करके ग्रह भी दूर होता है जिथे धर्म उथे दया है॥ इति श्री धर्म संवाद मुष दास कृत संपूर्ण समाप्तः लिखतं राम दास संवत् १८९० वि० आश्वनि सुदी दशमी।

विषय—महाराजा युधिष्ठिर और धर्म का संवाद वर्णन।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता मुख दास पंजाब निवासी थे। इनका और कुछ पता नहीं। लिपि काल संवत् १८९० वि० है।

संख्या २३४ बी. दुर्गास्तुति, रचयिता—मुखदास, पत्र—४, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९६, प्राप्तिस्थान—लाला छीतरमल, ग्राम—राइजीत का नगला, डाकघर—लखनऊ, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ दुर्गा अस्तुति लिख्यते ॥ चौ० गुरु गणेश के चरण मनाउं । जेहि प्रसाद देवी गुण गाऊ ॥ प्रथमहिं सुमरौं बंदी माया । जेहि सुमरे ते निर्मल काया ॥ सौरौं देवी आदि कुमारी । जेहि सुमरे सिधि होइ हमारी ॥ सुमरौं दुरगा मन चित लाई । दुख दारिद्र पाप छुटि जाई ॥ अस्तुति करौं भवानी केरी । सुनियहु संत कहौं मैं टेरी ॥ जा सुमिरे दुख भंजन होई । रोग आदि दुख रहे न कोई ॥

अंत—कलयुग कलि मष जाइ नसाई । अस्तुति पढ़ै सदा चित लाई ॥ कोढ़ी पढ़ै कुष्ट छय जाई । दाद खाज सब शीघ्र नसाई ॥ विद्यार्थी विद्या को पावै । पुत्र अर्थि को पुत्र मिलावै ॥ जो जो मन में इच्छा लावै । सो इच्छा संपूरण पावै ॥ दिन प्रति अस्तुति जो कोइ ध्यावै । कहि सुष दास परम पद पावै ॥ इति दुर्गा अस्तुति संपूर्ण समाप्तः लिखतं रामदास चेला गंगादास अस्थान राममठी भादों सुदी ३ संवत् १८९६ वि०

विषय—भगवती दुर्गा की महिमा का वर्णन ।

संख्या २३४ सी. भगवती अस्तुति, रचयिता—सुखदास, कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९७ = १८४० ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा रामदास, ग्राम—दही नगर, ग्राम—टेढ़ा, जिला—उन्नाव ।

आदि-अंत—२३४ बी के समान ।

संख्या २३४ डी. गर्भगीता, रचयिता—सुखदास (पंजाब), पत्र—३२, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१०, रूप—पुराना, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९० = १७३३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० देवनंद मिश्र, ग्राम—हबीबगंज, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॐ नमो भगवते वासुदेवाय नमः अथ गर्भ गीता सुष दास कृत लिख्यते ॥ अर्जुनवाच ॥ ॐ अर्जुन श्री कृष्ण भगवान पास पूंछता है श्री कृष्ण जी उत्तर देते है ॥ श्री कृष्ण जी की आज्ञा है कि जो कोई इस गर्भ गीता का मन लाय कर पाठ सुनै तिसके निकट जम किंकर आवै नहीं । बचन है श्री कृष्ण जी का । श्री कृष्ण अर्जुन संवाद करते है पुन्य पाप विचारते है जो कोइ इहु वचन पाठ सुनै कमावै अरु रहते रहै सो मुक्ति होयगा ॥ अर्जुनवाच ॥

अंत—श्री भगवानुवाच—हे अर्जुन धन्य तेरे ज्ञानुकों और वैष्णव धर्म तेरा तुझको भावता है और देखिया दो अक्षर है अरु जे हरिहर सदा जपिये । हे अर्जुन वैष्णव अस्नान करिके ॐ नमो नारायण श्री मंत्र एक मन होइ कर जपै सो मेरा भगत है सो वैकुन्ठ को प्राप्त होता है सो मेरा भगत जानना अरु साधू भगत छोड़िके मनुष्य के गर्भ वास होता है । हे अर्जुन मनुष्य की देह में साढ़े तीन करोड़ रोमावली है तब लग नरक में जाता है । यहै गर्भ गीता है । इति श्री गर्भ गीता अर्जुन श्री कृष्ण संवाद संपूर्ण समाप्तः ॥

विषय—श्रीकृष्ण और अर्जुन के संवाद के रूप में ज्ञान एवं धर्मोपदेश ।

संख्या २३४ ई. गर्भगीता, रचयिता—सुखदास, कागज—देशी, पत्र—३२, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६०, रूप—बहीखाता तुल्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९१ = १८३४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामऔतार अध्यापक, ग्राम—नगला बीरसिंह, डाकघर—मारहरा, जिला—एटा।

आदि अंत २३४ डी के समान। पुष्पिका इस प्रकार है :—

इति श्री भगवत्गीता कृष्ण अर्जुन संवादे गर्भ गीता संपूर्ण समाप्तः सं० १८९१ वि०।

संख्या २३४ एफ. गर्भगीता, रचयिता—सुखदास, पत्र—३६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१२ = १७५५ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रामस्वरूप, ग्राम—लमौरा, डाकघर—रामपूर, जिला—एटा।

आदि-अंत—२३४ डी के समान। पुष्पिका इस प्रकार है।

इति श्री गर्भ गीता श्री कृष्ण अर्जुन संवाद समाप्तः संवत् १८१२ वि०।

संख्या २३४ जी. सारगीता, रचयिता—सुखदास (पंजाब), कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१२ = १७५५ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रामस्वरूप, ग्राम—लमौरा, डाकघर—रामपूर, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ सार गीता लिख्यते ॥ अर्जुनोवाच—अर्जुन श्री भगवान जी से प्रश्न करे हैं कि हे परमेश्वर जो ऊँकार का महात्म और रूप और असथान तिनके सुनने की मेरे वांछा है। तुम कृपा करके कहौ। श्री भगवानो वाच ॥ हे अर्जुन तुम ने वहुत भला प्रश्न किया है अब ऊँकार का महातम विस्तार कर कहता हों तू सुने। यह गीता सार है। ब्रह्मा विश्नु महेश्वर इसकी रक्षा करने हारा है ॥ और अग्नि वायु सूरज यह इसके देवता हैं गायत्री जगत्री त्रिष्टुपु एहु तीनो इसके छंद हैं और अग्नि अस्थान है ॥ तहां चारों वेद हैं ॥ रिग्वेद युजुर्वेद, सामवेद, अथर्वण वेद चारों वेदों कारन है ॥

अंत—रे मनसो तिस फल को तुम क्यों नहीं खाते। पापों के अज्ञान को वरंचन करन हारी है। वारंवार भली भांति सदा सर्वदा गीता का पाठ कीजै अथवा श्रवण कीजै और शास्त्र का विस्तार श्री कृष्ण के निमित्त कीजै। कमल नाभ जो है श्री कृष्ण कृपानिधान श्री नारायण जी तिनकी मुख कमल ते निकसी है और श्री मुख वाक्य है गंगा गीता गायत्री गुरु गोविन्द इन पांचों का राग करै सो पुनर्जन्म को न पावै जो कोई इस सार गीता का जथा शक्ति अभ्यास करै अरु पाठ मात्र करै सो विश्नु के चिदमान जाइ प्रापति होंय इसके आगे क्या कहैं इति श्री सार गीता संपूर्ण समाप्तः शुभम् लिखतं संवत् १८१२ वि० लिखा राम गोपाल पाठक माधौ गंज ॥

विषय—भगवद्गीता का सार वर्णन।

संख्या २३४ एच. सारगीता, रचयिता---मुखदास (पंजाब), पत्र---२४, आकार---८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)---१२, परिमाण (अनुष्टुप्)---१५०, रूप---अच्छा, लिपि---नागरी, लिपिकाल---सं० १८६०=१८०३ ई०, प्राप्तिस्थान---रामभजदत्त, ग्राम---हस्तपुर, डाकघर---चांदपहाड़ी, जिला---अलीगढ़ ।

आदि-अंत---२३४ जी के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:---इति श्री भगवद्गीता श्री कृष्ण अर्जुन संवादे सार गीता संपूर्ण शुभम् संवत् १८६० वि० ॥

संख्या २३४ आई. गीतासार, रचयिता---मुखदास (पंजाब), पत्र---८, आकार---७$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)---७५, रूप---प्राचीन, लिपि---फारसी, प्राप्तिस्थान---ठाकुर शिवनाथसिंह जी, रईस, ग्राम और डाकघर---इतमादपुर, जिला---आगरा ।

आदि-अंत---२३४ जी के समान ।

संख्या २३५. हनुमान स्तोत्र, रचयितः---मुक्तानन्द मुनी, कागज---देशी, पत्र---४, आकार---७ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)---९, परिमाण (अनुष्टुप्)---३६, पूर्ण, रूप---प्राचीन, पद्य, लिपि---नागरी, प्राप्तिस्थान---पं० जीह्वाराम शर्मा, ग्राम---सौराई, डा०---खन्दौली, जि०---आगरा ।

आदि---श्री हनुमाने नमो नमः । अथ हनुमान स्तोत्र लिख्यते । इदंव छंद---नीतिं प्रवीन सवै निगमा गम शास्त्र में वुद्धि रुप के अपारा । श्री रघुनाथ के मंत्री अनूप हो ताहि तैं राम को प्रान से प्यारा । प्रौढ़ शरीर सिंदूर से सोहत नैपिक के मध्य इन्द्र उदारौ । श्री रघुवीर के इव महावल कष्ट हरौ हनुमान हमारौ । जानकी कारन श्री रघुनाथ के अन्तर भे भयौ कष्ट अनंता । टारिन ताहि सहायक एक हने मनुजाद महा वलवंता । जारि निशाचर नाथ के लंक महामुनि सिद्ध प्रशंसत संता । श्री रघुवीर दूत महाबल संकट मोर हरौ हनुमंता ।

अंत---यह पुस्तक जो पढ़ै तासु सब संकट नासैं, राम दूत हनुमंत सदाइग आगे भासैं । विघन होत सव नाश मगन होई हरि गुन गावैं । पाप पुंज सब तरह बहुरि भव में नहि आवैं, धन धाम पुत्र संपत बढ़ै पद्म चरण रति पावहि, मुक्ति कहे सो भक्त के संकट विकटन आवहि । इति मुक्ता नंद विरचित श्री हनुमान स्तोत्र संपूर्णम् । श्रीराम । श्रीराम ॥

विषय---हनुमान जी का स्तोत्र ।

संख्या २३६. ज्ञानमाला, रचयिता---मुकुन्दराय, कागज---देशी, पत्र---९०, आकार---८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)---१६, परिमाण (अनुष्टुप्)---७२०, रूप---प्राचीन, लिपि---नागरी, लिपिकाल---सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान---रसूल खां काजी, स्थान---गाङ्गीरी, डाकघर---सलेमपुर, जिला---अलीगढ़ ।

आदि---श्री गणेशाय नमः ॥ अथ मुकुन्द रायकृत ज्ञान माला भाषा लिख्यते ॥ एक दिन राजा परीक्षित गद्दी पर बैठे थे ता समय श्री व्यास जी के पुत्र शुकदेव जी आये । राजा देखते ही सिंहासन से उठ खड़ा हुआ और रिषि के चरणारविंद में गिर के साष्टांग

दंडवत की फिर वड़े आदर और सत्कार सहित उनको सुन्दर स्थान में ले जाकर रतन जटित सिंहासन पर बैठाय दोऊ चरण चरण कमलों को धोय के चरणोदक लिया।

हे मनुष्य जो इन तीन वातन को अपने चित्त सों कभी न्यारी नहीं करै तो इस लोक और परलोक में परम सुख पावै। प्रथम स्वामी की सेवा में हंस मुख और निर्लोभ रहै दूजे चाकर के मन को दुखी न राखै। तीजे क्रोध न करै। इति मुकुन्दराय कृत ज्ञान-माला भाषा समाप्तम् शुभं लिखतं शिवनंद गुजराती ब्राह्मण संवत् १९०० वि० तिथि दुइज भादवां कृष्ण पक्ष ॥

विषय—इस ग्रन्थ में श्री कृष्ण जी ने अर्जुन को व्यौहारिक शिक्षा दी है। जो ऊंचनीच कर्मों से संबंध रखती है।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता मुकुन्द राय थे। ये जाति के ब्राह्मण थे। इनका और कुछ पता नहीं। लिपिकाल संवत् १९०० वि० है।

संख्या २३७. रविव्रत कथा, रचयिता—मुनीन्द्र जैन, कागज—देशी, पत्र—२४, आकार—६ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७४३ वि० = सन् १६८६ ई०, लिपिकाल—सं० १८५५ = सन् १७९८ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा खड़गी राम पुजारी, डा०—अलीगंज, जिला—एटा।

आदि—श्री वीतरागाय नमः ॥ अथ रवि व्रत कथा लिख्यते ॥ चौपाई—पारस नाथ वन्दौं धरि भाव। सरस्वति माता करौं पसाव ॥ सुख गुरु चरण कमल चितधरौं। रवि व्रत नीक कथा यह करौं कामी देश वनारस ग्राम। सेठ वड़ो मति सागर नाम ॥ तासु घरनि गुण सुन्दर सती। सात पुत्र ताके सुभमती ॥ सहस्र कूट चैत्यालो एक। आये मुनिवर सहित विवेक। आगम सुनि सब हरषित भये। सबै लोक वंदन कौ गये ॥ वंदे जाति पति पूजे पाइ। राजा लोग सबै सिद्धराय ॥

अंत—गढ़ गोपाचल नग्र भलो सुभ थान वखानौ। देवेन्द्र कीर्ति मुनिराज भये तप तजे प्रमानौ ॥ तिनके पद पट विराज ही सुरेन्द्र कीर्ति जु मुनीन्द्र सकल भटरे पनि पर मैं कलस संघ आनन्द ॥ संवत्—संवत विक्रम राइ भले सत्रह सै मानै। ता ऊपर तेतालिस जेठ सुदि दसमी जानै ॥ वारजु मंगल वार हस्त नक्षत्र जु परियो। तव यह रवि व्रत कथा मुनीन्द्र रचना शुभ करियो ॥ वार वार हौं का कहौं रवि व्रत फल जु अनंत। पंचन मिलि जु कृपा करी दीनो पट सु महंत। गांव विरथरा वसहिं गोत पंडा जु वखानौं। जैसवार जसवंत साह भगवंतह जानौं ॥ तिनकी त्रय गुणवंत शील संजम कहि पूरी ॥ उपजै कुषि द्वै रतन साह पिर मल वूडी चंदजू ॥ हेमचन्द कुल वंश वचन अपने प्रति पालैं ॥ अवगुण को दे त्यागि भले गुण मन में राखै ॥ तिन सकल कीर्ति साह तुम हो गुण गुणवंत सोर ॥ एतवार व्रत की कथा तुम जुकरौ एक और ॥ जौ लौ सूरज चांद रहै ग्रह तारा मंडल ॥ रहै सुदरसन मेरु षीर सागर संपूरन ॥ जौ लौ पिरथी चंद सै निजु वढ़ौ वंश कुल ॥ सकल कीर्ति सो ऐसो कह्यौ दूजो अषय भंडार ॥ सकल पेट परिवार करौ सुख

भोग जू ॥ इत आदित वार व्रत कथा संपूरण । श्रावण मासे सुकुल पक्षे चतुरदशी गुरुवासरे संवत् १८५५ वि० ।

विषय—रवि व्रत कथा के इसमें अनेक दृष्टान्त वर्णन हैं ।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता मुनीन्द्र जैन थे । इनका वास विरथरा में था । ये गोपाचल गढ़ में आकर रमे थे । जहां जैसवार जसवंत साह थे । इनके रतनसाह पिरथीमल, बूड़ीचन्द, हेमचन्द थे । ये जेसवार जैन धर्मावलम्बी थे । इनको इतवार व्रत की कथा सुनाई गई और मुनि राय ने आशिर्वाद दिया । निर्माण काल संवत् १७४३ वि० है । लिपिकाल संवत् १८५५ वि० है । निर्माण काल का दोहा इस प्रकार है:—संवत विक्रम राय भले सत्रह सै मानै । तापर तेतांलीस जेष्ठ सुदी दशमी जानैं ॥ वारजु मंगलवार हस्त नक्षत्र जु परियो । तब यह रवि व्रत कथा मुनीन्द्र रचना सुभकरियै ॥

संख्या २३८. चित्रगुप्त की कथा, रचयिता—मुन्नूलाल कायस्थ, कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—८½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२०, पूर्ण, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८५१, लिपिकाल—सं० १८८५, प्राप्तिस्थान—बाबू शिवकुमार प्लीडर, डा०—लखीमपुर खीरी, जि०—लखनऊ ।

आदि—श्रीगणेशायनमः ॥ श्री गौरी नमः ॥ नमो नमो गन पति गुन ज्ञाता । सिद्धि होत जातें सब वाता ॥ नमो नमो गुरुदेव गुसाईं । गुरु समान जगमें कोउ नाहीं ॥ नमो नमो त्रिभुवन के स्वामी । नमो नमो प्रभु अन्तरजामी ॥ नमो नमो श्री आदि भवानी । नमो नमो जगदंबे रानी ॥ नमो नमो शंकर त्रिपुरारी । संकट हरन महा सुभ कारी ॥ नमो नमो शिव शंकर नाथा । गौरा पारवती जिहि साथा ॥ नमो नमो श्री गंगा माई । जेहि दरसन से दुख मिटि जाई ॥ नमो नमो भारत द्विज देवा । निसिदिन करौं तुम्हारी सेवा ॥ नमो नमो पृथ्वी आकासा । सूरज चन्द्र जहाँ परकासा ॥ नमस्कार कर जोरिकैं । कहत सुनहु सव देव ॥ चित्र गुप्त की अव कथा । तुम पूरन करिदेव ॥

अंत—मुनि पुलस्य बोले तिहिं ठाईं । है यह कृपा वहुत सुखदाई ॥ जम दुतिया को जो दिन होई । कातिक माँझ होति है सोई ॥ जो नर वादिन पूजा करई । सुमिरन उनकी मनमें धरई ॥ विविध भाँति सी ध्यान लगावै । अरु पूजा की सौझि धरावै ॥ धूप दीप नैवेद्य मँगावै । अक्षत सहित पुहप सव लावै ॥ दही दूध पकवान मिठाई । ब्राह्मण को वहु देइ जिमाई ॥ चित्रगुप्त प्रसन्न वहु होवैं । ताको पाय दुःख सव खोवैं ॥ जो जन कहै सुनैं चित ल्यावै । बिष्णु लोक की पदवी पावै ॥ दोहा ॥ चित्रगुप्त की यह कथा । चित दै सुनै जो कोय । ताको दुःख रहै नहीं । वहु सुख प्रापति होय ॥ तमाम तमाम शुद ॥ पोथी चित्रगुप्त जी वखत्ते नाफिस वन्दा गुरुदयाल वल्द महताव राय इब्न खरमराय कौम का कायस्थ कानून को परगनै काकोरी सरकार दारुल सलतनत लखनऊ मसाफ सूबै अवध अख्तर नगर दर अहदे हजरत नसीरुद्दीन हैदर दाम इकवाल हू अजलालहू दरमाह कुआर तिथि सुदी चतुर्दशी बाके तारीख दवाज दहम शहर रवी उस्सानी सन् १२४६

हिजरी वख्त इस पास रोज वरामदा व रोज जुमा तहरीर याफ्त ॥ हरकि दवा कुनद वातिल गरदद । न विश्ला विमानद सियह बर सफेद । नवां सिन्दारा नस्ते फदी उम्मेद ॥

विषय—पृष्ठ १ से १० तक—चित्रगुप्त की कथा और कवि परिचयः—अब मैं अपनी वात वताऊँ । सब दासन को दास कहाऊँ ॥ मुन्नू लाल नाम मम जानों । इन्द्र जीत को सुत पहिचानौं ॥ कायथ माथुर मोहिं बखानों । अल्लमहाउले मोकों जावें ॥ सैर कोट स्थान कहायो । प्रयाग मध्य जन्म जो पायो ॥ ग्रंथ निर्माण कालः—भादो मास पक्ष उजियारा । तेरसि तिथि औ रविवारा ॥ संवत अट्ठारह सै इक्कावन । पूरन भई कथा मनभावन ॥

विशेष ज्ञातव्य—प्रस्तुत ग्रंथ इन्द्र जीतात्मज मुन्नूलाल माथुर कायस्थ की रचना है । इनकी अल्लमाउले थी और यह प्रयाग के मध्यवर्ती सैरकोट नामक स्थान के निवासी थे । इन्होंने चित्रगुप्त की संक्षिप्त कथा दं हे चौपाइयों में लिखी है । वर्णन प्रायः साधारण हैं । ग्रंथ के प्रति लिपि कर्ता ने भी अपना पूरा परिचय पुस्तक के अंत में लिख दिया है । उससे ज्ञात होता है कि यह किताब गुरुदयाल कायस्थ ने लिखी है । इनके पिता का नाम महताव राय और प्रपितामह का नाम खंग राय था और ये हजरत नसीरुद्दीन (नवाव अवध) के अहदमें परगने काकोरी के कानूनगो थे ।

संख्या २३९. प्रियव्रत या ध्रुवचरित्र, रचयिता—मुरली, कागज—देशी, पत्र—९, आकार—८$\frac{3}{4}$ × ४$\frac{1}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२५, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—मुं० काशी राम, ग्राम—रायभा, डाकघर—अछनेरा, जिला—आगरा (उ० प्र०) ।

आदि—विश्वरूप धरनी धर जगन्नाथ शिवजू । विश्वरूप धरनीधर जगन्नाथ शिवजू । विश्वरूप धरनीधर जगन्नाथ शिवजू । अठ सातिया । ई काले ब्रह्मा संकरे । विष्णु निरंजनं । मध्य निरंजनं । तत्वपद नियरूप । आकार निराकार । अविनासी अखंडित । सोहंमन विसराम । काया क्षेत्र तक्कि राम । २ ।

अंत—सूनी ताकी पुरानी पुनीयां । सत्या घोड़े डोलें ननीया । ध्रुवकी सुनी श्रवनन अवाजा । ततक्षण उठि धाये राजा । ५३ । नागें पायन पिछ हों नीवहीया । हर्तहूत जाइ मिले दल महिया । रथ ते उतरि पुत्र पिता के पायन परे । पिता पुत्र को उपदेश करे । ५४ ॥ ॐ नमो भगवत्ये वासुदेवाय ।

विषय—ध्रुव चरित्र ।

संख्या २४०. शृंगार सार, रचयिता—मिश्र मुरलीधर, कागज—बाँसी, पत्र—४, आकार ७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—६३, खंडित, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री वहुरी चिरंजी लाल जी, स्थान—भैरो बाजार, जिला—आगरा ।

आदि—भाव लक्षनं ॥ रस उपजत है भाव ते भाव सु पाँच प्रकार । भनि विभाव अनुभाव अरु सात्विक चिर संचार ॥ रच अनुकूल है विकार मन बहै भाव अनुभाव जिनिते विकार मन जानिये ॥ विभाव विसेषना है आवन की सोहे भाँति आली वन इक पूजो

उद्दीपन मानिये ॥ सात्विक है आठ स्तम्भ स्वेद रोम स्वर भंग वे पथु विवर्ण औसू प्रलय वखानियै ॥ ते तीस है संचारी तो स्थाई रति पुष्ट करै न वही सिंगार रस पूरौ पहिचानिये ॥

अंत—दोहा— ऐ हो औरी हाव है दम्पति के संयोग । इनको काई कविन ने, वरन्यौ नारि वियोग ॥ ४२ ॥ यह सिंगार रस सार की, पोथी रची विचारि ॥ भूल्यों हो उनहां कछु लीजे सुकवि सुधार ॥ इति श्री मिश्र मुरलीधर विरचितं श्रृंगार सार ७४ ॥ ॥ शुभम् भूयाम् ॥

विषय—श्रृंगार रस की विवेचना ।

संख्या २४१. भागवत दशमस्कंध, रचयिता—नागरीदास, पत्र—४०६, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५७५५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० विद्याराम शर्मा, ग्राम—उगनपुरा, डाकघर—बाह, जिला—आगरा ।

आदि—······छंद पद्धरि । इक समय कियो वसुदेव व्याह । रथ चढ़ि चले करिके उछाह ॥ तीय पुरुष एक रथ बैठि लीन । हय रश्मि कंस नृप ग्रहन कीन । भगिनी हित काजे कंस राइ । सतरु कम स्थिनि विच लिये जाइ । सूत दये दाइ जे गज सुचारि । सुवरन माला तिहि कंठ अरि । दस पांच सहस घोरा सुदीन्ह । क्षत दसरु आठ रथ संग कीन्ह । सत दोइ दई दासी सुचारु । वर भूषन अम्बर सुजि सुदारु । अवनीस सुता पर प्रीति मान । अनगिनत विदा देय ताहि दान मृदु मृदंग बाजे बजाइ । वर वधु मंगल सुगाई । कवित्त—हाथ में है हय रसमी गहे जात मारग में खेहि कंस तो सो कहि देव वानी हैं । आठवों गरभ याको मारि है सुतों को मूढ़ि जाहि लिये जातु जिय भगनी सुमानी है । ऐसें सुनी कान्ह तब भोज कुल दोषन ने गहि करवाल के समाखि कै ठानी है । कठिन कठोर निरलज्ज अति देख्यो ताहि वोले वसुदेव वर कोमल सुवानी है ।

अंत—कूरम कुल मधि प्रगट नृपति जोरावर सिंह वर । अम्बरीष ज्यौं भक्ति दीन जन पै करुना कर । भये मुहब्बत सिंह पुत्र तिनके सुभ हारथ । राजा राव प्रताप सिंह तिन सुत सम पारथ । अरि प्रबल नबल कीने जिन निज भुज दण्ड प्रताप करि । मनि नागर अठस सुरेस ज्यौ रह्यौ रुदा सिर क्षत्र धारि । दोहरा । साह फकीर जु दास के बालकृष्ण सुत जानि तिनके छाजू राम जू हरि जन मांझ प्रधान । छप्पै । छाजूराम दिवान राजा के प्रतिनिधि । दई कृपा करि ताइ भक्ति लखि ईस सकल विधि । दाता करन समान सूर जाहर जस आयौ । गोदानन के काज मनो मृग फिरि घर आयौ । इति श्री भागवते महापुराणे दशमस्कंधे भाषा साह छाजू रामर्थं नागरीदासेन कृतम् ।

विषय—श्री कृष्ण का चरित्र वर्णन ।

संख्या २४२. कोकमंजरी, रचयिता—कवि नहसूर, पत्र—२८, आकार—६ × ३½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४९०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाँकेलाल, ग्राम—फतेहाबाद, डाकघर—फतेहाबाद, जिला—आगरा ।

आदि--श्री गणेशाय नमः। श्री सरस्वत्यै नमः। अथ कोक मंजरी लिख्यते। दोहा। ललित सुमन धन अलि पनिच चेतन छवि अभिनव कंद मधु हितु हितु ऋतु खन सु जै जै मदन अनंद। छप्पै। अभिनव जल धर वरन सकज सुख चरण सा सुतरति पति मधु रूति हितौ प्रगट विकत पति जिहि नित पुरुप चाप अलि पनिच पंच सायक जग रंजन जुलचेर चपल पलाक असुर सुर नरवर गजन सुरनि पसुनि पखिनि सधति अलि आनंद प्राणन करत सो जयो नित नागरन जो धरधरा जिहि नख धरन। २ दोहरा वरनौ काम अभिराम छबि वरनौ भामिनि भोग सकल कोक दधि मथन करि रच्यो सार सुख जोग।

अंत--मनुष रूप है औतऱ्यो तीन बात की जोग द्रव्य उपार्जन हरि भजन और भामिनि भोग। भगत एक भगवंत की भोग सभामिनी भोग। यह संकट में सुख करण बहु दुख हरण वियोग। पिंगल बिनु छंद रचै अरु गीत विनु मान कोक पढ़ै विनु रति करै तिनहुं न रंच कल्यान कोक पढ़ै विनु रति करै बिनु दीपक निस धाम ता कारण रचना रची कोक मंजरी नाम। ललित वचनि तिनि कविनि के सुरत करत सब कोइ द्रग अंजति सब कामिनी भेद सयन में होई। छप्पै। ललित वचन ते जानि अंग २ चुनि २ औलि जहि उकति जुगति वसु आनि समुझि गुरु लघु गुण किजहि रति विनोद तिहि मानि। कोक गति जो जन जानै सकल भेद निरखहिं केलि बहु विधि ठानै अंजन सुनैन भामुज्जति नयन केरि कटाक्ष हसि मनु हरै कवि नाह सुर।

विषय--इसमें क्रमशः इन विषयों का उल्लेख है। स्त्री पुरुष भेद, उनके लक्षण, शुभाशुभ दोष, नुसखे, आसन, रति के अयोग्य स्त्रियां। अंत में वाजीकरण औषधियों का वर्णन है।

संख्या २४३. स्वामी नामदेव जी का पद, रचयिता—नामदेव, कागज--देशी, पत्र--६, आकार--८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)--१४, परिमाण (अनुष्टुप्)--३००, रूप--प्राचीन, लिपि--नागरी, लिपिकाल--सं० १७१० = १६५३ ई०, प्राप्तिस्थान--बाबा हरीदास जी, ग्राम--छर्रा, डाकघर--छर्रा, जिला--अलीगढ़।

आदि--राम जी सति ॥ अथ श्री स्वामी नाम देव जी का पद लिख्यते॥ राग टोड़ी नाम देव पायो नाम हरी। जम आइ का करि हैं वौरे अव मेरी छूटि परी। भाव भगति नाना विधि कीन्हीं फल काको न करी। केवल ब्रह्म निकट लौ लागी मुकति कहा वपुरी॥ नांव लेत सनकादिक तारे पार न पायो तास हरी। नाम देव कहै सुनो रे संतो अब मोंहि समझ परी॥ १॥ राम रंमे रमि राम संभारे॥ मैं बलि ताकि छिन न विसारै। टेक। सरीर सभागी सो मोहिं भावै। पार ब्रह्म का जो गुन गावै। सरीर धरे की इहै बड़ाई नाम देव राम नवी सरिनाई॥ २॥ राम नाम जपिवो श्रवनन सुनिवो सलिल मोह में वहि नहि जाई। अकथ कथ्यो न जाई कागद लिख्यो न जाइ अपिल भुवन पति मिल्यो सहज भाई॥ राम माता राम पिता राम सब जीव दाता मन तन भईया छिपौ कहींदे फुकारि गीता॥

अंत—राग धनासी। कहा लै आरती दास करै। तीनि लोक जाकी जोति फिरै॥ टेक॥ कोटि भानु जाके नप की सोभा कहा भयो कर दीप फिरै। सात समुंदर जाके भरण

निवासा कहा भयो जल कूप भरे। अणंत कोटि जाके वाजा वाजै कहा घंटा झुलकार करै ॥ चौरासी लष व्यापक राम्या। केवल हरि जस गावै नामा ॥ १ ॥ आरती पति देव मुरारी, चंवर ढुरै वलि जाउं तुम्हारी ॥ टेक ॥ चहुं जुग आरती चहुं जुग पूजा चहुं जुग राम अवर नहिं दूजा। आरती कीजै अैसे जैसे ध्रुव प्रहलाद करि सुष तैसे ॥ आनंद आरती आतम पूजा नाम देव भणै मेरे देवन दूजा ॥ २ ॥ इति श्री नाम देव का पद संपूर्ण समाप्त

विषय—ब्रह्म ज्ञान वर्णन।

संख्या २४४ ए. अनेकार्थ मंजरी, रचयिता— नंददास, पत्र—११, आकार—७ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८७, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१४ = १७५७ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० श्रीरामजी शर्मा, प्रधानाध्यापक, ग्राम—मई, डाकघर—बटेश्वर, जिला—आगरा।

आदि—श्री कृष्णाय नमः ॥ ॐ ॥ अथ अनेकार्थ मंजरी लिष्यते ॥ दोहा ॥ जो प्रभु जोति मय जगत मय कारन करन अभेव। विघन हरन सब शुभ करन, नमो नमो तिहि देव ॥ १ ॥ एकै वस्तु अनेक ह्वै जगमगात जग धाम। जिमि कंचन तें किंकिनी, कंकन कुंडल नाम ॥ २ ॥ उच्चर सकत न संस्कृत, अरु समझन असमर्थ। तिन हित नन्द सुमति जथा, भाषे अनेक अर्थ ॥ ३ ॥ गो शब्द नाम ॥ गो इन्द्रिय दिग वाक जल, स्वर्ग वज्र षग चंद। गोधर गोतरु गो किरनि, गोपालक गोविंद ॥ ४ ॥

अंत—दान नाम ॥ दान द्विजन कों दीजिये गज मद कहिये दान। दान साँवरो लेत वन, गोपी प्रेम निधान ॥ ११६ ॥ रस नाम ॥ रस नव रस घृत रस अमृत, रस विष अकरस नीर। सब रस को रस प्रेम रस, ताके वस वलवीर ॥ ११७ ॥ सनेह नाम ॥ तैल सनेह सनेह कृत वढ्यो प्रेम सनेह। सो निज चरनन गिरधरन, नंद दास कहँ देहु ॥ ११८ ॥ जो इहिं अनेकारथहि सदा, पढ़ै सुनै नर कोइ। ताको अनेक अर्थ सु इहां, पुनि परमारथ होइ ॥ ११९ ॥ इति श्री अनेकारथ मंजरी स्वामी नंददास जी कृत सम्पूर्ण ॥ संवत् १८१४॥ वर्षे अषाढ़ शुक्ला ११ भौम दिन ॥

विषय—अनेकार्थ संबंधी शब्दों के नामों का दोहों में उल्लेख।

संख्या २४४ बी. अनेकार्थ मंजरी, रचयिता—नंददास, कागज—देशी, पत्र—४०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०१ = १८४४ ई०, प्राप्तिस्थान—वैद्य रामदास, ग्राम—बाबुलपुर, डाकघर—मेड़ू, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः ॥ तं नमामि पद परम गुरु कृष्ण कमल दल नैन। जग कारण करुणार्णव गोकुल जाको अैन ॥ नाम रुप गुणा भेद लहि प्रगट तस वही ओर। ता विनु तहां जुआन कछु कहे सुअति बड़ ओर ॥ उचरित सकत न संस्कृत जाहत नाम तिन लगि नंद सुमति जथा रचत नाम के दाम। ग्रंथ निनाना नाम को अमर कोस की भाय। मान वति के मान पर मिले अर्थ सब आय ॥ स्वच्छ वछु उर पिय के निरषि आपनी काय। ताते उपज्यो मान हिय आन तिया के भाय ॥ मान नाम।

खर्वदर्प अहंकार मद गर्व समय अभिमान मान राधिका कुवांरी को सबको करत कल्यान ॥ सखीनाम् ॥ वयसा सध्रीची सषी हितू सहचरी आहि । अलीकुंवर नदलाल की चली मनावन ताहि ॥

अंत—ध्रुवनाम ध्रुव निश्चय ध्रुव जोग पुनि ध्रुव जो ध्रुव पद ताल । ध्रुव तारे जिमिते अटल भजियो श्री गोपाल ॥ सुमनस । सुमन ससुर सुमनस पुहप सुमनस वहुरि वसंत । सुमनस तेनित मन वैसे कोमल कमलाकंत ॥ विटप नाम । विटप श्रंग पल्लव विटप विटप कहत विस्तार विटप वृक्ष की डार गहि टाढ़े नंद कुवार ॥ रसनाम ॥ रस नव रस घृत रस अमृत रस विष रस रस नीद । सवरस को रस प्रेम है जाके वस वल वीर ॥ स्नेह नाम ॥ स्नेह तेल अरु स्नेह घृत वहुरो प्रेम स्नेह सो निज वर नव गिरधरन नंद दास को देह ॥ इति श्री नंददास कृत अनेकार्थ मंजरी समाप्तः लिपि कृत ब्रह्म नारायण जोसी वासी माधौपुर का संवत १९०१ मार्ग शिर कृष्ण तिथौ चौथ ॥ पठनार्थ श्री राव जी अर्जुन सिंघ ॥

विषय—अनेक शब्दों के अनेक नाम लिखे हैं ॥

संख्या २४४ सी. अनेकार्थ, रचयिता—नंददास, पत्र—३०, आकार—६ × ३ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५२ = १७९५ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर प्रताप सिंह, ग्राम—राटौटी, डाकघर—होलीपुरा, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—२४४ के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री नंददास कृत अनेकार्थ सम्पूर्णम् । शुभ मस्तु । लिखितं भवानी सिंह आषाढ़ मासे शुक्ल पक्षे तिथौ ११ रवि वासरे सम्वत् १८५२ ।

संख्या २२४ डी. भँवरगीता, रचयिता—नंददास, पत्र—४१, आकार—४½ × ३½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४१ परिमाण (अनुष्टुप्)—२०५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६३ = १७०६ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला सूरजपाल जी माथुर वैश्य, स्थान—कचौरा, डाकघर—कचौरा, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । दोहा । गौरी नंदन वंदिके वंदौ सारद माय । उद्धव के उपदेस कों वर्णौ मन चित लाइ । उद्धव को उपदेश सुनो वृज नागरी । रूपशील भव शील सुनों गुण आगरी । प्रेम ध्वजा रस रोपनी उपजावन सुख पुंज, सुंदर स्याम विला सिनी नव विन्द्रावन कुंज । सुनो वृज नागरी । कहो श्याम संदेश एक मैं तुम्हें पठायौ ता कारन श्री कृष्ण मोहि तुम पै पठवायो । सोचत ही मनमें रहो कव पाऊँ इकठांउ । कहि संदेस नंदलाल को वहुरि मधुपुरी जाऊँ । सुनो वृज नागरी । सुनो स्याम को नाम वाम घर की सुधि भूली, भये नयन जल नील प्रेम वेली दृग फूली । दोहा । पुलकि रोम सब अंग भये भरि आए जल नैन, कंप कंठ गद् गद् गिरा, बोले जात न बैन । विवश्वर प्रेमकी ।

अंत—सुनत सखा के वैन नैन भरि आए दोऊ, विह्वल प्रेम अवास रही नाहिं सुधि कोऊ । रोम रोम प्रति गोपिका है गई सिगरे मात । कल्पत येवर साँवरे वृज वनिता भई पात । उमहि अंगतें । है संचेत कहि भले सरूप पठये सुधि लायन । अवगुन हमरे आनि तहां ते लगे हिसावन । उनमें मोमें ह्वै सखा छिन भरि अंतर नाहिं । ज्यों देखी मो मांह

वे योंही उनहीं माहिं । तारागन वारि ज्यों । ऊ गोपी आइ दिखाई एक करिके वनवारी । ऊधो भरम निवारि डारियो मोह की जारी । अपनो रूप दिखाइकें लीन्हां वहुरि डराइ । नन्ददास पावन भये सो यह लीला गाइ । इति श्री नंददास कृत भंवर रीति सम्पूर्णम् । प्रतिमिती सावन वदी द्वतीय ११ शनीश्चर सम्बत १८६३ श्री रामचन्द्र जी श्री राम श्री राम श्री राम ।

विषय—उद्धव गोपी संवाद ।

संख्या २४४ ई. नाम मंजरी नाममाला, रचयिता—नंदादस, पत्र—१५, आकार—९ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६००, खंडित रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६० = १८०३ ई०, प्राप्तिस्थान—दामोदरदास गौड़, ग्राम—शमशाबाद, डाकघर—शमशाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—[दूसरे पृष्ठ से शुद्ध; पहला पृष्ठ लुप्त] ······म । चली मनावन भारती, वचन चातुरी काम । सीघ्र के नाम । आसु झटित प्रति तूर्न लघु, छिप सतुर उत्ताल । तुरत, चली चातुर अली, आतुर लषि नंदलाल । धाम के नाम । संदन सद्म संकेत ग्रह, आलय नीलप स्थान । भवन भूप व्रषभानु के सहचरि पहुंची जान । सौवर्न के नाम । कंचन अर्जुन कार्ति सुर चामी कर तपनीय । अष्टापद हाटक प्रटट महा रजत रमनीय । सोने ही के सदन सब मानक गच सचि देत । जहां तहां निजु नारि नर, झांकी झुकि झुकि लेत । रूपे के नाम । क्वरु सरजत दुर्वरन पुनि, जात रुप पज्जूर । रुपे के गोसार जहँ, भूप भवन ते दूर ।

अंत—अथ इंद्री के नाम । गोंहुषी करन गुन, इंद्री ज्यो अस पाइ । पियरा धामाधव मिले, परम प्रेम रसु आइ । अथ माला के नाम । माला अकसिज गुगवती, यह जु नाम की दाम । जनज कंठ को रहि सुनरु ह्वै है छबि के धाम । अथ जुगल के नाम । जमल जुगल जुग दंद द्वै, उभय मिन विव वीज । जुगल किसोदर सर्व सौ नंददास के हीय ।२६०। इति श्री नाम मंजरी नाम माला नंद दास क्रत समाप्तम् । शुभं मस्तु । संवत् १८६० मिती पौस स्वदी १२ रविवासरे । शुभं भवतु । लिष्यतं पुस्तकं दृष्टाता ६ सलिषित मया येदि शुध मशुध वा मम दोसो न दीयते । १ । पुस्तक नाम माला सम्पूर्णम् । श्लोक संख्य २६० पत्र संख्या १५ । शुभं शुभं भूयात । शुभं शुभं शुभं । श्री ।

विषय—कुछ शब्दों के पर्यायवाची शब्दों की दोहों में नामावली ।

संख्या २४४ एफ. मानमंजरी, रचयिता—नंददास, पत्र—२१, आकार—७ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) ११, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४७, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१४ = १७५७ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० श्रीराम जी शर्मा, प्रधानाध्यापक, ग्राम—मई, डाकघर—बटेश्वर, जिला—आगरा ।

आदि—२४४ बी के समान ।

अंत—वेत के नाम ॥ वेत स शति विदुल रथी, अम्य पुष्प वानीर । मंजुल वंजुल कुंज वह, जहँ वैठे वलवीर ॥ ६७ ॥ कोकिला नाम ॥ परभृत कलरव रक्त दग, पिक धुनि

तहँ रस पुंज । जनु पिय आरति निरष तुहि, टेरति वलि वह कुंज ।। ६८ ।। इन्द्रिय नाम ।। गोह दुषी षंकूरण गुण, इन्द्रिय ज्यों असु पाइ । यों राधा माधव मिले, परम प्रेम रस भाइ ।। ६९ ।। जुगल नाम ।। जमल जुगम जम द्वंद ह्वै, उभय मिथुन विवि वीय । जुगल किसोर सदा वसो, नन्द दास के हीय ।। ७० ।। माला नाम ।। माला श्रुकस्तंय गुनवती, यह जु नाम की दाम । जु नर कंठ करि हैं सु नर ह्वै है छवि के धाम ।। ७१ ।। इति श्री मान मंजरी नाम माला कृत कवि नंद दास जी संपूर्ण समाप्तः ।। संवत् १८१४ वर्षे अषाढ़ शुक्ला ७ ।। गुरुवार ।।

विषय—अनेक शब्दों के पर्याय वाची शब्दों का कथन ।

संख्या २४४ जी. नाम मंजरी, रचयिता—नंददास, पत्र—५८, आकार—६ × ३ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६९, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५२ = १७९५ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर प्रतापसिंह, ग्राम—रटौटी, डाकघर—होलीपुरा, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । दोहरा । तन्नमामि पद परम गुरू कृष्ण कमल दल नैन । जग कारन करुना निधि गोकुल जाको ऐन । १ । नाम रूप गुण भेद जेते प्रगटत सब ठौर । तिन बिन तत्व जु आन कछु कहै सु अति बड़ बौर ।२। गूथ्य नाना नाम की अमर कोश के भाई । मानवती के मान पर मिलैं अर्थ सब आई । ३ । उचरि सकत न संस्कृत जानो चाहत नाम । तिहिन नंद सुमति जथा रची नाम की दाम । ४ । कृष्ण नाम । कृष्ण विष्णु वाबन विठ्ठल वासुदेव भगवंत । विख्यातम परमात्मा कमला कंत अनंत । ५ । हृदय नाम । वक्ष ह्रिदय उर पीयके निरखि आपनी झाई । ताते उपज्यौ मान यह आन त्रिया के भाई । ६ । मान नाम । रतंव दर्प अहंकार मद गर्भ समय अभिमान । मानि राधिका कुवरि को सबको करत कल्यान । सखी नाम । वयसी साध्रीची सखी हितु सहचरी आहि अली कुंवर नंदलाल की चली मनावत ताहि । वुद्धिनाम । वुद्धि मनीषा से मुखी मेधा छिषना धीप । मति सौंपतौ करति चलि भली विजक्षणनीय

अंत—द्वय नाम । जुगल जुग्म जुग द्वंद द्वय उभय मिथुन बिबिवीय । जुग्ल किसोर सदा वसो नंददास के हीय । रस नाम । सार माधुर्य पुनि पुण्य रस कुस्मसार मकंदर । रस के जाननहार वलि सुनि पावै सुखकंद । माला नाम । माला शक शाज गुणमती यह जु नाम की दाम । जो नर कंठ करै सुतौ ह्वै है छबि को धाम । २०७ । इति श्री नंददास कृत नाम मंजरी सपूर्णम् । शुभमस्तु । लिखितं भवानी सिंह श्रावन मासे शुक्ल पक्षे तिथौ ४ चंद्रवासरे । सम्वत् १८५२ ।

विषय—अनेक शब्दों के अनेक नाम ।

टिप्पणी—अमर कोष के अनुसार इस कोप को बनाने का प्रयत्न किया है ।

संख्या २४४ एच. फूल मंजरी, रचयिता—नंददास, पत्र—३, आकार—८ × ८½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० श्रीराम जी, ग्राम—भीखनपुर, डाकघर—फतहाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गनेशायनमः ॥ अथ फूल मंजरी लिषिते ॥ दोहा ॥ सीस मुकुट कुंडल झलरु, संग सोहै ब्रज बाल । पहरै माल गुलाब की, आवत है नंदलाल ॥ १ ॥ चंपक बरन सरीर सब, नैन चपल हैं मीन । नव दुलहीन की रुप लषि, लाल भये आधीन ॥ २ ॥ फूलि रहे तहँ विविध तरु, बहुत सघन घन बेलि । कुंजय होय उर माल धरि, करत कुंज मधि केलि ॥ ३ ॥ स्वेत बरन सारंभ अधिक, मनौ कनक की धूप । लसत राधिका कुँवरि कै, कर को बंड अनूप ॥ ४ ॥ मंजन कै ठाड़ी भई, नव सत भूषन मेलि । बनमाला ऊपर लसे, मनौ कनक की बेलि ॥ ५ ॥

अंत—लाल मनावति वेगि वलि, कहाँ रही हठ लाय । एरी वह सब वीसरी, लेति सेवती पाय ॥ २८ ॥ तुम जु लिये भले महा, दुषित होय है वाल । और ष्याल सब छांडि यह, करनौ हत लाल ॥ २९ ॥ कहत फिरत सब सषिन में, सौतिन लावत सूल । आजु लाल हम कूं दिये, सूरज मुषी के फूल ।' ३० ॥ पीतांवर कटि काछिनी, सोहत स्याम सरीर । कुसुम केतती मुकट धरि, आवत है वल वीर ॥ ३१ ॥ इति श्री फूल मंजरी नंद दास किरत संपूर्ण समाप्तं ॥ श्री पत्रा तीन ॥

विषय—दोहों में नायिका के रूपादि का वर्णन और प्रत्येक दोहे में एक पुष्प का नाम ॥

संख्या २४४ आई. रानी मंगौ, रचयिता—नंददास, पत्र—३०, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५३, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—डा० प्रतापसिंह, ग्राम—रटौटी, डाकघर—होलीपुरा, ज़िला—आगरा ।

आदि—अथ रानी मंगौ लिख्यते । मैं जुवति जाचत वृत लीन्हो । जहिं जहि जौनि जाऊ तहि तहि अंक भुजा पर दीन्हों । पुरुष जाति हौ हौ दान मान देति जतन नेक हेरों । केसरि वलय महा वरि मंडित इनको ऊलपन फेरों । राज सिंघासन हय रव हाथी ल्यो नहिं नटकर कोट अंगिया उड़िया लहंगा मुदरी इनको मेरे कोट । सिंह सुता दैकुण्ठ की रानी मंगति मुकतिक कर वर्षे । जिनके चित यह होत अजाची जाचिय जुग जुग हरषै । जाचिग सकल जगतक वलाको किरतध्नी कृत न मानैं । वार मुखी को बेटा मानौ पिता नहिं पहि-चानै । पारवती पति को अति प्यारी सदा रहे अरधांगी व्रत मानी जग मंगल माता अनंत पुत्र जिन जानि । प्यारा प्रसनी जठरा कीरति सुमित वेद पुरान वखानी । पुत्र भाई परसोत्तम जाच्यो संख्य चक्र गदा पानी । अदित उधार सची नीधी सोभा सति रुवा सति रानी ।

अंत—आठ आठ झुम वाच हौं फेरैं मानो कुमुदिनी फूली अरघ मुख हेरैं । जुथ जुथ चहुं फेरे घनी में कफ सो सुन्दरि बनि । तवै हिते आनंद राम सावधान भये मोहन दानी खोरि साकरि मोहन रोकि ललिता सखि पहली ही रोकी । अहो मारग माझ कौन तुम डारैं वृषभान गोपिते नाहि न डरै । अरी वृषभान गोप को कहा डर मानै । दानी दान ल्यौ सब जांनु । अहो बहौत भांति के दान कहावै । तुम कौन भांति के दानी आये एक गहन वेद वोल भी जल में पीसि लोक सब देई । एक अमावस संकई मंगै अगर सिरी अपने पद रज इनकी प्यारी । रानी मंगौ । नंददास ।

विषय—श्री कृष्ण का ब्रज की युवतियों से दान माँगने और उनके साथ के प्रेम क्रीड़ाओं का वर्णन ।

संख्या २४४ जे. रास पंचाध्याई, रचयिता—नंददास, पत्र—११, आकार—१० × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९८ = शक सं० १७६३, प्राप्तिस्थान—पं० देवीराम जी, ग्राम—विधौली, डाकघर—खेरागढ़, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । अथ रास पंचाध्याई लिख्यते । वंदन करों कृपा निधान श्री सुक शुभकारी । शुद्ध जोगमय रुप सदा सुंदर अविकारी । हरि लीला रस यज्ञ मुदित वित विचरत जग में । अद्भुत गति कहु नहिन अटक है निकसे नग में । नीलोत्पल दल स्याम श्रंग नव जोवन भ्राजै कुटिल अलख मुष कमल मनो अलि अवलि अवलि विराजै । ललित बिसाल सुभाल दास जोना निकरि निसा करि कृष्न भक्ति प्रति विंव तिमिर वहु कोटि दिवाकर ।

अंत—जो यह लीला गावै हिंत सों सुनें सुनावै । प्रेम भक्ति सो पावै अरु सबके जीय भावै । तीन श्रद्ध निंदक नास्ति कहरि धर्म वहरि मुष । तिनसों कबहू न कहे कहै तो लहै नही सुष । भक्त जननि सो कहें जिनके भागवत धर्म वल, सो जमुना के मीन लीन नित रहत जमुन जल । जद्दपि सप्त निज भेदनि जमुना निगम वषानै, ते तिहि धार हिधार रमित छुवत जल आवै । यह ऊज्जिल रस माला कोटि करि योही । सावधान ह्वै पहरि फैरि तो रोमति कोई । श्रवन की रतन सार सार मन को है पुनि, ग्यान सार हरि ध्यान साश्क्त निसार गुथी मुनि । अघ हरनी मनहरनी सुंदर प्रेम वितरनी, नंददास के कंठ वसो नित मंगल करनी । इति श्री रास पंचाध्याई नंददास कृत समाप्तं शुभ संवत् १८९८ शाके १७६३ मिती भादों सुदि १ भोंमवासरे लिखितं मिश्र गोपाल जी स्वपनार्थं ।

विषय—श्री कृष्ण की रासलीला का वर्णन ।

संख्या २४४ के. पंचाध्यायी, रचयिता—नंददास, पत्र—४०, आकार—७ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८२ = १८२५ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर तिलकसिंह जी, ग्राम—लतीफपुर कोटला, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—२४४ जे के समान ।

संख्या २४४ एल. रुक्मिणीमंगल, रचयिता—नंददास, पत्र—१३, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६९, रूप—प्राचीन, लिपि—कैथी, लिपिकाल—सं० १८७८ = १८२१ ई०, प्राप्तिस्थान—विशेश्वरदयाल, ग्राम—होलीपुरा, डाकघर—होलीपुरा, जिला—आगरा ।

आदि—सिधि श्रीगनेसायनमः ॥ अथ श्री रुकमिनीमंगलु लिषते ॥ श्री गुरुचरन प्रताप सदा । आनंद बढ़े उर । किस्न क्रियातें कही जथा । सुखु पाये सुर नर ॥ रुकमिन हरन पुनीत । चितु दे सुने सुनाये । तासु मिटै जम त्रास । वासु हरिपुर की पावे ॥ सिस

पालहि दई रुकम। रुक मिनी वात सुनी जब। चित्र लिषित सम भई। दई अब भई कहा अब॥ चकित चहूँ दिशि चहति दिछुरि जनु म्रगी मालते। भजोही वंदनु कछु मलिन नलिन जनो जलित॥ कोर भरि आऐ दोऊ नैन ऐन जने प्रेम सुहाए जनो। सुंदर अरविंद अलदान पेदि हलोए—अलि बूझी॥ बलि वात कही नैनन की पानी। योंही मिरिनु उडियरी कहो तिन सो मधु वानी॥ ३॥

अंत—सरनु जानिमन भंगु रुकम तिय अति दुष पायौ। जहा दूलहू सिसिपालु तहाँ मनु राषन आजौ॥ तव निकरौ नृप रुकमु दीऐ सिर कंचन कुलही। रंचक धीर होहु अनि दुहोगे दुलही॥ ५१॥ कर कंकन दुष दीनो दुपते कोइ जु दीनो। चपल द्रगन के काजर फिरि मुँह कारो कीनो॥ रिस करिषा जो हो होय भये ऐसे दुखलु दीनु। पतंगु परतु पाग मेनेसे पर तब वहुदल वलु देषत। वल दल जु सम्हान्यो। मन हर महार पेठि कमल गुंजार विंद जिसे कर सहीय हरो तितो कछू नाहीं कीन्हों। मूंछ मूड़ि मुखु मूड़ि छोड़ियम जीवन दीनों॥ ५३॥ विधिवत भजो विवाहु तिहूं पुर मंग वुलुगजो॥ नंददास सुख पाजो तब ही दुलहिन ल्याजो॥ ५४॥ अथ रुकमिनी मंगल संपूरन समापति नंद दास कृत लिषते नाउली में लिषी पुरजन के लिये संवतु १८७८ मिती चैत्र वदी १२ वुध वासरे को सम्पूरणः

विषय—श्री कृष्ण रुक्मिणि विवाह वर्णन।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रन्थ लिपिकर्त्ता ने प्रति लिपि करते समय बहुत अशुद्ध लिखा है। छन्दों में किसी भी प्रकार के विरामादि चिन्ह न होने के कारण तथा अशुद्ध मात्रादि के प्रयोग के कारण यह ठीक-ठीक नहीं पढ़ा जाता।

संख्या २४४ एम. विरहमंजरी, रचयिता—नंददास, पत्र—९, आकार—७ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१४ = १७५७ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० श्री रामजी शर्मा, ग्राम—मई, डाकघर—बटेश्वर, जिला—आगरा।

आदि—श्री कृष्णाय नमः॥ अथ विरह मंजरी लिष्यते॥ दोहा परम प्रेम उछल नइकु, वढ़्यो जु तन मन मेंन। व्रज वाला विरहीन भई, कहत चंद सों वेंन॥ १॥ अहो चन्द रस कंद तुम, जात आहि वहि देस। द्वारा वति नद नंद सों, कहियो वलि संदेस॥ २॥ चौपाई॥ चले चले तुम जाइयो जहाँ। वैठे होंहिं साँवरे तहां। निधरक कहियो जिय जिनि डरो, हो हरि अब व्रज आवन करो॥ ३॥ तुम विन दुषित भई व्रज वाला, नागर नगधर नंद के लाला पूर पछि॥ प्रस्न भई इक संदर स्याम, सदां वसत वृंदावन धाम॥ ४॥ याकें विरहज उपज्यो महा, कहो नंद सो कारन कहा। नंद समोधत ताको चित्त। व्रज के विरह समुझि लै मित्त॥५॥ व्रज में विरह चारि परमार, जानत हें जेइ जानन हार। प्रथम प्रतिछि विरह तू गुनलै, तातें पुनि पलभांतर सुनलै। तीसरे विरह वनांतर भयो, चतुर्थ विरह देसांतर के गयो॥ ६

अंत—ढाढ़े निकसि कुंवर वर पोरि वन रहि निसि की चंदन खोरि ॥ लट पटी पाग कछुक धसि रही । सो छवि परति कवन पे कही ॥ ८९ ॥ आलस रस भरे चंचल नेन, जिनहिं निरषि मुरझत मन मेन । अकिले प्रान पियारे पाये, देषि दुषी भरे दृग सिय-राए ॥ ८२ ताके निरखि नैन अरवरे, सुंदर गिरिधर पिय हँसि परे ॥ समाचार पाये ता तियके, अंतर जामी सबके हियके ॥ ८३ ॥ इहिं परकार विरह मंजरी, मिरवधि परम प्रेम रस भरी ।। यह जो सुनें गुनें चितु लावैं, सो सिद्धान्त तत्त्व को पावै ॥ ८४ ॥ दोहा ॥ और भांति ब्रज को विरह, वनें न क्यों हूँ नन्द । जिनके मित्र विचित्र हरि, पूरन परमा नन्द ॥ ८५ ॥ इति श्री स्वामीनंद दास जी कृत विरहमंजरी सम्पूर्णः ॥ शुभ मस्तु ॥ श्री परमात्मने नमः ॥ संवत् ठारह सौ लिषी, चौदह ऊपर वर्ष । तिथि त्रियोदसी, अषाढ़ सुदि गुरु वासर मन हर्ष ॥ श्री मथुरा मध्ये लिषितं वालक दास ॥

विषय—चन्द्रमा से ब्रज बालाओं का वियोग वर्णन । वियोग के चार भेद और उनकी व्याख्या तथा बारह महीनों का विरह वर्णन ।

संख्या २४४ एन. विरहमंजरी, रचयिता—नंददास, पत्र—४, आकार—९ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६१ = १८०४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० मवासीलाल शर्मा, ग्राम—अछनेर, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—२४४ एम के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री नंददास क्रत विरह मंजरी संपूर्णम् । शुभं । भवतु । सं० १८६१ । वैषाष कृष्ण ४ रवि । शुभं भूयात् । श्री । लिष्यतं पठतं शुभं भवतु । पुस्तक विरह मंजरी अत्र श्लोक संख्या १०० । पत्र १६ । शुभ भूयात् ।

संख्या २४५ ए. जैमुनी पुराण (अश्वमेध), रचयिता—नन्दलाल (सहावाद), पत्र—१८०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्ति-स्थान—पं० बालकृष्ण बाजपेई, बरखेड़ा, डाकघर—हरदोई, जिला—हरदोई (उत्तर प्रदेश)

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ नंदलाल कृत जैमुनि अश्वमेध लिख्यते ॥ दोहा—सारद सेस महेस अज सिर धरि गुरु पद धूरि । वाजि मेध वर्णन करत सकल सुमंगल मूरि ॥ सहावाद सुन्दर नगर टीकम को स्थान । वसत तहां चारों बरन शोभा शील निधान ॥ गृह तीरथ नग पुपकरी पंच सुभग तहं कूप ॥ राम अनुज लछिमन तनै अंगद तहां को भूप ॥ तेहि पुर भीतर वसत है त्रिभुनायक मति राम । तासु तनै नंदलाल पुनि वरनत हरि गुन ग्राम ॥ इह इतिहास पुनीति अति सुनौ सजन चितलाइ । संसै शोक कलेस श्रम तुर तहिं जाइ नसाइ ॥

अंत—पांच वान तव पारथ मारे । घाउ न लगेउ काटि सव डारे ॥ तव करि कोप सारथ षिसियाना । छोड़े लगा हजारन वाना ॥ दयजा छत्र रथ तुरंग निपाता । नीलद वज कांपेउ रन गाता ॥ पर्‍यो मूर्छि रन मह नृप सोई । हरिजन देखी दूत जम तोहि ॥ मूर्छा

गई उठो वलवाना पुनि रण महं धनुरस संधाना ॥ वान अमिथ पारत पर आरे । लोगेउ तन सब काटि निषारे ॥ हरिजन देषि भजहि जम दूता । तोपे नृप सर जाह वहूता ॥ तव नीलध्वज मन अनुमानी । है यह सुभा महावल खानी ॥ स्वाहा नाम तासु सुकुमारी । वरी अनल का साज सुमारी ॥ राजा मत यह सुमिल कीन्हा । कोपि अनल सर मंह में दीना ॥ छांड़े सिवान प्रलै की आगी । भाजी सैन जरै सब लागी ॥ नज रथ पैदर तुरंग वृष कर भा तजि तनि भार । गयउ वनहिं अति विकल हूं ततनहि रहो सभार ॥

विषय—जैमिनि अश्वमेध का पूर्वार्द्ध वर्णन ।

संख्या २४५ बी. जैमुनी अश्वमेध पूर्वार्द्ध, रचयिता—नंदलाल (सहाबाद), कागज—देशी, पत्र—१६०, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२६४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७२ = १८१५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० देवनारायण, अलीगढ़ शहर, डाकघर—अलीगढ़, जिला—अलीगढ़ ।

आदि अंत—२४५ ए के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री जैमुनि अश्वमेध ग्रंथ समाप्तः लिखा रामाधार मिश्र संवत १८७२ चैत्र शुक्ल अष्टमी ॥

संख्या २४५ सी. जैमुनि अश्वमेध, रचयिता—नन्दलाल (शाहाबाद), कागज—देशी, पत्र—१८८, आकार—९ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)-२२९०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८८ = १८३१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० गंगाराम गौड़- जलाली, डाकघर—जलाली, जिला—अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश)

आदि-अंत—२४५ ए के समान । पुष्पिका इस प्रकार है:—

इति श्री जैमुनि अश्वमेध ग्रंथ संपूर्ण । लिखत रामदास देवि आश्रय शिवगढ़ वैसाख सुदी तीन संवत् १८८८ वि०

संख्या २४६. भानुमती कबूतरकलाचरित, रचयिता—नरसिंह, पत्र—१६, आकार—९ × ३ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० कन्हैयालाल जी, फतेहाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः । अथ भानमती कबूतर कला चरित लिख्यते तत्रादौ नर सिंह मंत्र पढ़ि पीत सर्वपेन ताडयेत् । प्रेतो ज्वलित पलायन निश्चयेत् । सात समुद्र पारं अस्फिटक सिला ताहि चढ़ि वइ सुनर सिंह विराजे नरसिंह कै दुहाई । अथ वटुक भैरव मंत्र द्विती ॐ ह्रीं । वटुक भैरव वालक केस भगवासन भेश सभ आपदे को काल भक्त जज हठ को पाल । करे घेरे सिद्धि कपाल । दूज कर करवाल तेतीस काटि मंत्र का जाप लक्ष वटुक भैर जानि ये मेरी भक्ति गुरु की शक्ति फुरो मंत्र इस्वरो वाच । अथ नेत्र स्धारे को मंत्र पढ़ि पानी के छींटा मारै फली मांडा जाई शर्योतिच सुक न्याच च्यवन शक्र मश्विनौ एतेषां स्मरणान्नृणां नेत्र रोगाप्रनश्यन्ति ।

अंत—अथ मोहिनी प्रयोग मंत्र दर मौवानम । हुंग कुर सुहु उकार महुं भुइधर मानुष्य मुंह से वाचै सामानुस महु मोह वीरू पलं गौरी । शिवशंकर नाथ मोहि देखे पानी पथ हार जाउ हाथ में जौ तेल की धार सीधं दुआरे पै संक समाहि करौसि आर

संध्या समय उ पाता राम लखन हनुमान पढ़ि द्वितीय पवन बाधौ वन में दिनी वांधौ वांधौ कटा व्याथा भौ तेल तेलाई औथां भावै सस्न बिष्णु महेश तीनऊ चलेकेदार देवी कमक्षा के दो हार पानीपथं दोहाइ जाइ लरि अग्नि बुझै अग्नि भवतैक्षधारवन मौनु सीतलता ते लावै जै पाव को भवै जसमंति पर फिऊ दुःख पावे नरसिंह कहै जटा दुःख पावै इति मंत्र सग्रह भानमत्यादि विरचितं शुभ मस्तु । राम राम राम राम राम ।

विषय—इसमें निम्नलिखित मंत्र और उनके साधने के उपाय लिखे हैंः—हंक यंत्र, वरवटिवाय गोल झारे का मंत्र, कुक्कुर काटे को मंत्र, वशीकरण मंत्र और उसका चक्र ज्वर झारे को मंत्र विदूष मंत्र और लवंग मंत्र इत्यादि ।

संख्या २४७ ए. अनुराग रस, रचयिता—नारायण (वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—१० x ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२८ = १८७१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामलाल गौड़, बादलपुर, डाकघर—हाथरस, जिला—अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश) ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ अनुराग रस लिख्यते, श्री गुरु बंदना दो०—श्री गुरु चरण सरोज रज वंदौ वारंवार । नारायण भव सिंधु हित जे नवका सुषसाढ़ ॥ कृपा करौ मो दीन पै हरौ तिमिर अज्ञान । नारायण अनुराग रस निज मति करूं वषान ॥ २ श्री राधा गोपाल वंदना । श्री राधा गोपाल पद करि प्रणाम ॥ उर धार । नारायण अनुराग रस कहूँ बुद्धि अनुसार ॥ ३ दया सिंधु अति सुष सदन सदा रहौ अनुकूल । नारायण जिन उरधरो मो पामर की भूल ॥ ४ (श्री वृन्दा वन वंदना) धनि वृन्दावन धाम है धनि वृन्दा वन नाम । धनि वृन्दा वन रसिक जन सुमिरे राधे श्याम ॥ ५ वृन्दा वन जो वास करै साग पात नित खाये । तिनके भागिन को निरखि ब्रह्मादिक लालचाय ॥ ६ हम न भये व्रज में प्रगट यही रही मन आस । नित प्रति निरषति जुगुल छबि कर वृन्दा वन वास ॥ ७ नारायण व्रजभूमि कू सूरपति नावै माथ । जहां आय गोपी भये श्री गोपेश्वर नाथ ॥ ८

अंत—गुंण मंदिर सुंदर जुगुल मंगल मोद निधान । नारायण निज चरण रति यह दीजे वरदान ॥ इति श्री वृन्दावन निवासी श्री नारायण स्वामी कृत अनुराग रस संपूर्ण समाप्तः लिषतं ज्ञानदास वैरागी रामगढ़ मध्ये संवत १९२८ वि०

विषय—चेतावनी, गुण-दोष लक्षण, कृपा निधान की शोभा और प्रेम लक्षण आदि का वर्णन ।

संख्या २४७ बी. अनुरागरस, रचयिता—नारायण स्वामी, कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—१० X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०, प्राप्तिस्थान— पं० विष्णु भरोसे, बहादुरपुर, डाकघर—बेहटा गोकुल, जिला – हरदोई ।

आदि-अंत—२४७ ए के समान पुष्पिका इस प्रकार हैः—

इति श्री अनुराग रस नारायण स्वामी कृत संपूर्ण जेष्ट शुक्ल नौमी संवत १९३० वि०

संख्या २४७ सी. गायन संग्रह, रचयिता—नारायणकृत, कागज—देशी, पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, प्राप्तिस्थान—चौधरी गंगासिंह, विष्णुपुर, डाकघर—धूमरी, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ गायन संग्रह लिख्यते ॥ राग झंझौटी। सखी तुम नेक तौ रूप दिखाओ। घूंघट पट मुख ओट करो क्यों याहि तनिक सरकाओ ॥ ब्रज में लाज करै सो बौरी हंसि हंसि के बतराओ। नारायण हम दोउ बराबर क्यों इतनी सकुचावो ॥ सखी तुम मेरी ओर क्यों न हेरो। बरसाने में पहिर तेरो कै कोऊ गाम गमेरो। तू इतनी मोसो क्यों चमकत मैं हूँ देवर तेरो। घूघट खोल ऐरी नव नागरी दान दीजियो मेरो ॥ लाज करौ गोरस क्यों बेचो घर घर सांझ सबेरो। नारायण नित कुंज गलिन में रहत कान्ह को डेरो ॥

अंत—राग दादरा। गैल जिन रोकौ मद माते। इन बातन शोभा नहिं पैइहौ लाज भरी गाते ॥ तुम जानत हमतें नहिं डरपत तासों बहुत इतराते। नारायण हम यासों न बोलैं मानि जाति के नाते ॥ इति श्री नारायण कृत राग गायन संग्रह संपूर्ण लिखा भैयाराम सारस्वत ब्राह्मण नयर खरैचा फागुन वदी अष्टमी संवत १९३२ वि० ॥ नारायण नारायण जय जगदीस हरे ॥

विषय—संगीत।

संख्या २४७ डी. गोपाल अष्टक, रचयिता—नारायण (बृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—२, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२८ = १८७१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० भैरवप्रसाद गौड़, भगवन्तपुर, डाकघर—मेंडू, जिला—अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री राधा कृष्णाभ्यां नमः अथ गोपाल अष्टक लिख्यते। विहरत स्वच्छंद आनंद कंद श्री ब्रज चंद ब्रह्म परम। पूरण शशि वदनं शोभा सदनं जित छबि मदनं रूप वरम ॥ हलधर बल वीरं श्याम शरीरं गुण गभीरं धरि धरम। भज श्री गोपालं दीन दयालं वचन रसालं ताप हरम ॥ राजत वनमाला रूप विशाल चाल मराला सुरत हरम। कुंडल धृत करणं गिरिवर धरणं निज जन शरणं कृपा करम।

अंत—गोरज मुख शोभित सुर नर लोभित मन्मथ छोभित दृश्य परम्। गोपन सह भुंजे विपिन निकुंजे वत्सन पुंजे द्रुहिण हरम ॥ यह छबि नारायण लखि नारायण भरे परायण अखिल नरम। भज श्री गोपाल दीन दयालं वचन रसालं ताप हरम् ॥ इति श्री गोपाल अष्टक संपूर्ण समाप्तं लिषतं ज्ञानदास जेष्ट सुदी तेरस संवत १९२८ वि० लिखा रायगढ़ मध्ये ॥

विषय—श्री कृष्ण की स्तुति।

संख्या २४७ ई. नारायण कृत संग्रह, रचयिता—नारायण, कागज—देशी, पत्र—३६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६७६, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१६ = १८५९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवमहेश, विश्नुपुर, डाकघर—अलीगढ़, जिला—एटा, (उत्तर प्रदेश)।

आदि—अथ नारायण कृत संग्रह लिख्यते ॥ भजन ॥ राग खम्माच, प्यारे मोरे गरवा में जनि डारौ वहिंया । छुओ न लंगर पकरो कर मेरो अब छोड़ो तुम कपट वलैया ॥ प्यारे०॥ जावो पिया अब वाही मन भाई के भवन जाके नित प्यारे० ॥ परत हो पैयां . झूठी मूठी सौं हैं क्यों खावो नारायण मैं वलिहारी विहारी चतुरैयां ॥ प्यारे मोरे गरवा में जनि डारौ वहियां

अंत—राग दादरा—गैल जिन रोको मत माते ॥ इन वातन शोभा नहि पैइ हौ लाज भरी गाते । तुम जानत हमते नहिं डरपत तासों वहुत इतराते ॥ नारायण हम यासों न बोले मानि जाति के नाते ॥ इति श्री नारायण कृत संग्रह संपूर्ण समाप्तः १९१६ वि०

विषय—राग रागिनी, भजन, गजल आदि वर्णन ।

संख्या २४७ एफ. व्रज विहार, रचयिता—नारायण स्वामी (वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—१८०, आकार—८ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ —३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०७२, पद्य गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२८ = १८७१ ई०, प्राप्तिस्थान—स्वामी नारायण दास, बिलखना, डाकघर—बिलखना, जिला—अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश) ।

आदि—अथ श्री व्रज विहार नाम ग्रंथ लिख्यते राग शहानौ । वंदौ श्री गुरु चरण कमल वर । अस्ताई ॥ जिनको नाम सकल मंगल निधि ध्यान धरत अघ रहत न परभर । परम उदार सार निगमागम भक्ति ज्ञान की खान मनोहर ॥ नारायण मोंहि दीन जानि के वास दियो वृन्दा वन गहिकर ।

अंत—दोहा । विविध कथा गोपाल की नारायण सुखरास । गति पावे सुनि भक्त जन दुष्ट करैं उपहास ॥ इति श्री सांझी लीलं संपूर्ण समाप्त ॥

विषय—श्री कृष्ण की संपूर्ण लीला सांगीत में लिखी है ।

संख्या २४८. सुदामा चरित्र, रचयिता—नरोत्तम दास, पत्र—६, आकार—९ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२६, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६० = १८०३ ई०, प्राप्तिस्थान—मुंशी भोलारामजी, ग्राम—भैसन, डाकघर—खैरागढ़, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । अथ सुदामाचरित्र लिष्यते । गण पति कृपानिधान वुधि विवेक जत, देहु मोहि वरदान प्रेम सहित हरि गुन कहो । हरि चरित्र बहु भाइ । सेस दिनेसन कहि सकें । प्रेम सहित चित्र लाइ । सुनो सुदामा की कथा । १ । दोहा । विप्र सुदामा वसत हैं सदा आपने धाम । भिक्षा करि भोजन करे हीये जपै हरिनाम । २ । ताकी घरनि पतिव्रता गहें वेद की रीति । सुवुधि सुलज्य सुसीलता पति सेवा सों प्रीति ।३।

अन्त—कहु सपनेहु सुवर्ण के महल हते पूर मनि मंडित कलसा कव धरेते रतन जटित सुभ सिंघासन बैठिवे को कब जे पवास पढ़े मोपे चौर दुरते देखि राज सामा निज वामासो सुदामा कहै कवजे भंडार रतन जुभार भरते जोपे पतीव्रत मोहि देती न उपदेस तौ द्वारका के प्रभु मोपे केसें कृपा करते । ६९ । कथा सुदामा विप्रकी कहें सुनें चितु लाइ इत्या को श्री जदुराय जू दिन दिन होइ सहाइ । ७० । इति श्री सुदामा चरित्र संपूर्ण । संवत् १८६० शाके १७२६ वर्षे चैत्र शुक्लो द्वतीय १५ भौमवारे शुभं श्री कृष्णार्पण मस्तु ॥

श्री कल्यानरस्तु शुभं भवतु । श्री । श्री । श्री । कदन सहाइ रहिइ । सुदा । चरित्र समाप्त । पत्र संख्या ६ । इलोक संख्या १०० ।

विषय — सुदामा चरित्र वर्णन ।

संख्या २४९ ए. शब्दावली, रचयिता—नेवलदास जी (उमापुर), पत्र — १४४, आकार—९½ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—९१६, रूप—बहुत अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८१७, प्राप्तिस्थान—श्री चन्द्रभान दास जी महन्त, ग्राम—उमापुर, डाकघर—मीरमऊ, जिला—बारहबंकी ।

आदि — सतगुरू साहब कृपा करि, दिहिन भक्ति वरदान । वरनौं जस शब्दावली, धरि उर अंतर ध्यान । सब असमान बटोरि लै, पैठि सिमिटि पाताल । चढ़ि पाताल तहँ गँगन गे, नेवल अजायब ख्याल । अथ आरती—साहेब तुम जगजीवन स्वामी, जीव जंतु सब अंतर जामी । देविदास और दूलन दासा, इन्ह के घर सम्पूरन वासा । खेमदास औ दास गोसाईं, यह आए साहेब सरनाईं जहं प्रभु दीन्हेउ तुम ज्ञाना, मैं मति मंद कहै नहि जाना । दास नेवल सुमिरै कर जोरे, कब अइहो साहेब घर मोरे ।

अंत—सोवत रहिउँ नींद भरि हो गुरू दीन जगाइ । गुरूक चरन रज अंजन हो, राख्यो नयन लगाइ । तबसे नींद नहिं आवै हो, नहि तन अलसाइ । प्रेम प्याला गुरू प्यायो हो, डार्‍यो मति बौराइ । विरह विथातन तलफै हो, मन कछु न सोहाय । सुमति गहन वा पहिरौ हो, डारो कुमति उतारि । सत कै मँगिया गुंधावौ हो, अंग भसम रमाइ । तन कर दियना बनावौ हो, क्रम वाती लगाइ । नाम के चिनगी उड़ावौ हो, देतिउँ दियना जराइ । गँगन मँदिल मनुवाँ बैठो हो, जहँ चोरन जाइ । दास नेवल उहँ सत गुरू हो जमराज डेराइ । वंसुरिया विरहिनि वाजि रही । इत उर वाजत उत उर धुनि सुनि घुमरि २ मन माँह रही । अनहद धुनि अवरन गति वाजत, समुझत वनत न जात कही । तान सुनत मोर प्रान छकित भे मैं वृन्दावन जात रही । दास नेवल भजु साईं जगजीवन मोहन मोरी वांह गही ।

विषय—भक्ति, ज्ञान और वैराग्य आदि का वर्णन ।

संख्या २४९ बी. ककहरा नामा, रचयिता—श्री नेवलदास जी सत्यनामी (उमापुर), पत्र—१०, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—९०, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८१८, लिपिकाल—सं० १९८२ = १८२६ ई०, प्राप्तिस्थान—त्रिभुवन प्रसाद त्रिपाठी, ग्राम—पूरेपरान पांड़े, डाकघर—तिलोई, जिला—रायबरेली ।

आदि—प्रभु साहेब जग जीवन स्वामी भवन २ विश्रामारे । दास नेवल्ह तिन्हकर यक चेला गावत कहरा नामा रे । पहिले ज्याति २ ते निर्गुन तौ फिर सुन्य समाही रे । दास नेवल तेहि सुनहि मिलगे, फिर नहिं आवहिं जाहीं रे । कूर कुटिल निंदक अभिमानी अंत जांव वदि खाने रे । बेरी परी नर्क मंह बूड़ै ऐय रोय पछिताने रे । वालक जुवा जठर नर नारी करि निश्चै जो गावै रे । ताके भमन भरा सुख पूरन अंत मुक्ति फल पावै रे ।

अन्त—भूली फिरहु बाप घर बपुरी मायन कछु ढंग दीन्हा रे खेलहु बहुत विसरिगे सांई लेहु आपना कीन्हा रे । प्रीतम जुक्त रहे तरू नापा तव औरहि मन लायो रे । अबतौ उमर बीतिगै नाहक पिय दर्शन कंह पायो रे । तेहि छिन पिया आप घर बैठे, देखत उठे रिसयाई रे । मारु, काड़ु, धरु बांधु विविध विध कोऊ न नेह छोड़ाई रे । दूरहि से करि रहहु बंदगी, तौ पिय कर वर पायो रे । वार २ पिय चरनन परिकै दास नेवल तव आयो रे ।

विषय—प्रत्येक अक्षर पर कविता करके ज्ञानोपदेश वर्णन ।

संख्या २५०, भक्तसार, रचयिता—नवनदास जी, पत्र—४४, आकार—४ × ३ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८१७ = १७६० ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर प्रतापसिंह, ग्राम—राटौती, डाकघर—होलीपुरा, जिला—आगरा ।

आदि—अथ श्री नवनदास जी कृत भक्तसार पोथी लिख्यते । दोहा । बहु बंदन पर नाम बहु परम इष्ट गोपाल नवनदास के उर बसै मूरत परम विसाल । अमर खंडत धाम निज वृन्दावन प्रगट्य नवनदास कै इष्ट सो केलि करत जदुराय । मंगल मयि अनूप छबि श्री सकु मुनर न जीत । माया त्यागि भक्त निज पुरन परम अतीत । सत गुरु परं दयाल मम रहत सीस पर नित्त । आठ पहर रटना यही नवनदास के चित्त । तव कृपा पोथी रचूँ भक्तसार को अंग जुगतानंद परताप सै खोल कहूँ परसंग ।

अन्त—जग में रहै मोह नहीं जाके श्री गोपाल साथ नित जाके । कर अस्तुत यों रमत भये । मोह जीत बैन नल छये । भक्तसार पोथी कही मोह जात परसंग, नवनदास ताके सुनै उपजै भक्त उमंग । मंगल छंद । यह कथा निज वैराग दृढ़मत सुवन जो कोइ करै । आनंद उपजै अति महा और सोग पाति गहि जरै । असमेधु जज (अश्वमेध यज्ञ) करै सदा और कोट तीरथ न्हावई । सो फल मिलै नरतास कूं गोपाल के गुन गावई । बहु करै सुकृत अन गिनत कुलधार सुरग पधारई । लहै अमर लोक अषंड अवि चल सो लहै यह सारहि । सत गुरू करिके दया किये अतिहि ये भक्त प्रभावहिं । जन नवनदास विलास यह बरनत बाढ़ो अति चावहिं । इति श्री नवनदास कृत भक्तसार पोथी चौपाई २०९ दोहा ६४ सवैया २६ छप्पय ४ मंगल ३ सकल समुदाय । इति श्री नवनदास कृत रक्तसार पोथी संपूरन समाप्तम् स० १८१७

विषय—पुस्तक कथा इस प्रकार है:—एक विवाहार्थी ब्राह्मण कन्या के घर विवाह संस्कार करने गया । विवाह मंडप में आधी पद्धति के होते ही ब्राह्मण को वैराग्य हो गया । वहां से प्रस्थान करना चाहा पर कन्या के प्रार्थना एवं प्रतिज्ञा करने पर कि वह सदा आज्ञाकारणी रहेगी ब्राह्मण ने विवाह विधि पूर्ण कराई । विवाहोपरान्त ब्राह्मणी ने समय पर एक पुत्र प्रसव किया । ब्राह्मण ने उसे एकान्त वनस्थली में फेंक उसके जन्म का कारण पूछा । लड़के के यह बतलाने पर कि वह पूर्व जन्म में दिया हुआ अपना २० मुद्रा का ऋण लेने आया है । ब्राह्मण ने २०) दे दिए । बालक मर गया । इसी प्रकार दूसरा पुत्र खून का बदला लेने तीसरा ऋण लेने आया । ब्राह्मण ने सबको सन्तुष्ट कर कर्तव्य का पालन किया ।

कथा का उद्देश्य वैराग्य का प्रतिपादन है। पुत्र पिता आदिकों का सम्बन्ध केवल कर्म रोग है और कुछ नहीं। यही कहने का तात्पर्य है।

संख्या २५१ ए. कन्हैया जू का जन्म, रचयिता—नजीर (आगरा), पत्र—६, आकार—८ × ५½ इंच. पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—मुंशी पद्मसिंह कायस्थ, कायथा, डाकघर—कोटला, जिला—आगरा।

आदि—लिष्यते श्री कन्हैया जू का जन्म नजीर अकबरा वादी कृत ॥ है रीति जन्म की यों होती जिस घर में वाला होता। उस मंडल में हर मन वहुतेरा सुष चैन दोवाला होता ॥ सव वात पिता की भूलै है जव भोला भाला होता है ॥ यों नेक नक्षत्तर वनते हैं इस दुनियां में संसार जनम पर उनके और ही लछन हैं जब लेतें हैं औतार जनम ॥ सुभ साइत से यो दुनियां में औतार गर्भ में आते हैं। जो नारद मुनि है ध्यान भली सव इनका भेद वताते है ॥ वह नेक महूरत से जिस दम इस श्रष्टि में जन्मे जाते है जो लीला रचनी होती है वह रुप यह जाद कहाते है ॥ यों देखने में औ कहने में वह रुप तो बाले होते हैं। पर वाले ही पन में उनके उपकार निराले होते हैं ॥

अंत—नन्द और जसोदा वालक को वाँ हाथों छाओं में थे रखते नित प्यार करैं तन मन वारें सुथरी अवरन घने वन के ॥ जी वह लाते मन पर चाते औरु खूव खिलौना मग वाते। हर आन झुलाते पलने में इधर और उधर टहलाते ॥ कर याद नजीर अव हर साइत उस पालने और उस झूले की। आनन्द से वैठो चैन करो जै वोलो कान्ह झन्डोले की ॥ इति शुभम्

विषय—कृष्ण के जन्म का वर्णन।

संख्या २५१ बी. वाँसुरी, रचयिता—नजीर (आगरा), पत्र—३, आकार—८ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—६०, रूप—प्राचीन, पद्य, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—मुंशी पद्मसिंह कायस्थ, कायथा, डाकघर—कोटला, जिला—आगरा।

आदि—अथ नजीर कृत वाँसुरी लिख्यते ॥ जव मुरली धरने मुरली अपनी अधर धरी। क्या क्या प्रेम मीत भरी इसमें धुन भरी। लै इसमें राधे राधे की हरदम भरी खरी ॥ लहराई धुन जो उसकी इधर औ उधर जरी ॥ सव सुननेवाले कह उठे जै जै हरी हरी ॥ ऐसी वजाई कृष्ण कन्हैया ने बांसुरी ॥ कितने तो उसके सुनने से धन हो गये धनी। कितनों की सुध विसरि गई जिस दम वह धुन सुनी ॥ कितनों के मन से कल गई और व्याकुली चुनी ॥ क्या तरसे लेके नारियां क्या कूड़ा क्या गुनी ॥ सब सुनने वाले कह उठे जै जै हरी हरी ॥ ऐसी वजाई कृष्ण कन्हैया ने वांसुरी ॥

अंत—वन में अगर वजाते तो वाँ भी यह उसकी चाह। करती धुन उसकी पंक्षी वटोही के दिल में राह ॥ वस्ती में जो वजाते तो क्या शाम क्या पनाह। पड़ते ही धुन वह कान में वलहारी होके वाह ॥ सव सुनने वाले कह उठे जै जै हरी हरी ॥ ऐसी वजाई

कृष्ण कन्हैया वासुरी ॥ मोहन की वांसुरी के मैं क्या क्या कहूं जतन । लै इसकी मन की मोहनी धुन उसकी चित हरन ॥ इस वासुरी का आनके जिस जा हुवा वचन । क्या जल पवन नजीर पखेरुवा क्या हिरन ॥ सव सुनने वाले कह उठे जै जै हरी हरी ॥ ऐसी वजाई कृष्ण कन्हैया ने वांसुरी ॥ इति शुभम् ॥

विषय—श्री कृष्ण की मुरली का गुणगान ।

संख्या २५१ सी. वंजारानामा, रचयिता—नजीर (आगरा), पत्र—५, आकार—५½ × ४ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० शालिग्राम जी अध्यापक, ग्राम—देवखेड़ा, डाकघर—अहारन, जिला—आगरा ।

आदि—बंजारा । टुक हिर्स हवा को छोड़ मियां । मत देस फिरै मारा मारा । कज्जाक अजल का लूटै है दिन रात वजाकर नक्कारा । क्या बधिया भैंसा बैल शुतर क्या गूने पल्ला सिर भारा । क्या गोहूँ चांवल मोठ मटर क्या आग धुआं का अंगारा । सब ठाठ पड़ा रह जावेगा जब लाद चलेगा बंजारा । गर तू है लखी बंजारा और खेप भी तेरी भारी है । ए गाफिल तुझसे भी चतुर इक और बड़ा ब्योपारी है । क्या शक्कर मिसरी कंद गरी सांभर मीठा खारी है । क्या दाख मुनक्का सोंठ मिरच क्या केसर लौंग सुपारी है । सब ठाठ पड़ा रह जावेगा जब लाद चलेगा बंजारा । तू वधिया लादे बैल भरे जो पूरब पश्चिम जावेगा । या सूद बढ़ाकर लावेगा या टोटा घाटा पावेगा । कज्जाक अजल का रस्ता में जब भाला मार गिरावेगा धन दौलत नाती पोता क्या यह कुनवा काम न आवेगा। सब ठाठ पड़ा रह जावेगा जब लाद चलेगा बंजारा ।

अंत—हर आन नफा और टोटे में क्यों मरता फिरता है बन बन टुक गाफिल दिल में सोच जरा है साथ लगा तेरे दुश्मन । क्या लौंडी बांदी दाई ददा क्या बंदा चेला नेक चलन क्या मंदिर मस्जिद ताल कुआं खेती बाड़ी फूल चमन । सब ठाठ पड़ा रह जावेगा जब लाद चलेगा बंजारा । जब मर्ज फिराकर चाबुक को यह बैल बदन का हांकेगा । कोई नाज समेटेगा तेरा कोई गौन सिये और टांकेगा । हो ढोर अकेला जंगल में तू खाक लहद की फांकेगा । इस जंगल में फिर आह नजीर इक भिनगा आनन झांकेगा । सब ठाठ पड़ा रह जावेगा जब लाद चलेगा बंजारा । इति बंजारा नामा नजीर कृत समाप्तम् ।

विषय—बंजारे के ब्याज से ज्ञानोपदेश ।

संख्या २५१ डी. हंसनामा, कागज—देशी, पत्र—२, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१० = १८५३ ई०, प्राप्तिस्थान—शेख मौलाबख्श, अध्यापक, नाहिद-पुर, डाकघर—सहावर, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ हंस नामा लिख्यते ॥ आया था किसी शहर से एक हंस विचारा । एक पेड़ पै शहरा के किया उसने गुजारा ॥ रहते थे वहुत जानवर उस पेड़ के ऊपर । उसने भी किसी शाख पै घर अपना संवारा ॥ देखा जो उसे तायुरों ने हुस्नमें खुश रंग । वह हंस लगा सब के निगाहों में प्यारा ॥ वाजोल गरीबों थे शाहे हुए

आकाश । शकरों ने भी शक्वर से किया उसका मदारा ।। जागो जगनो तूति वो ताऊस कबूतर । सब करने लगे उससे महोब्बत का इशारा ।। कुछ लाल चिड़े पोदने पिद्दी न थी आकाश । पिदरी भी समझती थी उसे आंख का तारा ॥ जितने थे गर्ज जानवर उस पेड़के ऊपर । उन सब ने महोवत में दिल उस हंस से हारा ।। सोहबत जो हुई हंसमें जानवरों में । एक चंद हुआ खूब महोवत का गुजारा ।। उस हंस को जब हो गये दो चार महीने । एक रोज वो यारों की तरफ कहके पुकारा ।। लो यारो हम चलते हैं कल अपने वतन को । ये पेड़ मुबारिक रहे अब तुमको तुम्हारा ।।

अंत-- इस बात के सुनते ही हर एक के उड़े होश । बोले कि यह फ़ुरकत नहीं अब हमको गंवारा ॥ हम जितने हैं सब साथ तुम्हारे ही चलेगें । यह दर्द तो अब हमसे न जायगा सहारा ॥ इतने में सब कूंच हुऐ सुबे नमूदार । पर अपना हवा पर जो उस हंस ने मारा ॥ सब साथ उड़े उसके जो थे यार खाह । हर एक ने उड़ने के लिये पंख पसारा ॥ कोई तीन कोई चार कोई पांच उड़ा कोस । कोई आठ कोई नौं कोई दस कोस पे हारा ॥ दस कोस परे उड़े जो हुई मारगी गालिब । फिर पर में किसी के न रहा कूवतो पारा ॥ कोई यां रहा कोई वां रहा कोई रह गया नाचार । कोई और उड़ा उनमें जो था सबसे करारा ॥ चीलें गिरी कौवे गिरे और बाज थके भी । उस पहिले ही मंजिल में किया सबने किनारा ॥ सब बैठ रहे साथ के साथी जो नजीर आह । आखीर के तईं हंस अकेला ही सिधारा ॥ इति श्री हंस नामा नजीर कृत संपूर्ण संवत् १९१० वि० जेष्ट सुदी दसमी ।। राम राम राम राम राम ॥

विषय—एक हंस की कथा जिसमें दर्शाया गया है कि जीव से सब प्यार करते हैं, पर जब जीव निकल जाता है फिर कोई उसके साथ नहीं जाता । सब देखते ही रह जाते हैं ।

संख्या २५२ ए. रसरत्नाकर, रचयिता—निंब कवि, पत्र—८१, आकार—४३/४ × ४१/२ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५८०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—नौबतराम गुलजारीलाल, फीरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ।। एक रदन गज वदन सदन बुधि मदन कदन सुत ॥ गवरि नंद आनंद कंद जग वंद चंद जुत सुखदायक दायक ॥ सुक्रति गण नायक नायक षल घायक घायक दालिद्र दहलायक लायक गुरु गुन अनंत भगवंत भय सुभगति वंत भव भय हरण ॥ जय केशव दास निवास निधि सुलम्बोदर असरण शरण ॥ १ ॥ पूजि महेश मनाइ गनेस गिरा पति ग्वाल गुरू पग धाऊँ । होहु सहाइ सरस्वति माइ महा मुख अमृत वानी हो पाऊँ ॥ वेद अकास मही पर जेतिक तेतिक को मथिकै मतु ल्याऊँ । पूषन पूरि के दूषन दूरि पुराने ते भूषन भाषा बनाऊँ ॥ २ ॥ अथ रस रत्नाकर लिख्यते ॥ सर्वांग स्थूल तरंग गजेन्द्र वदनं, लम्बोदरं सुदरं । विघ्नेशं मधु गंधलुब्ध मधुत व्याधूत गंडस्थलं ॥ दंता घात विदारिताद्भुत जनं सिंदूर सोभा करं । वंदे शैल शुता सुतं गणपति सिद्धि प्रदं कामदं ॥१॥ दोहा ॥ अखिल निरंजन है'''दूजा नाहि न कोई । ता कीनो बहु सकल जग । उन कीनों सबु कोइ ।। चौपाई ।। × × × निंबो कवि को आज्ञा दई । तब भाषा यह परगट भई ।

अन्त — अथ पुंत्रादि मल्हम विधि लिख्यते ॥ पुरवी पुंगी फल चार जानिये । औरु आमरे छाल जारिये ॥ औरु वारि लै वर कै पान । पल पल सीरो षरो सुजान ॥ चूनों सीपी षरी सुषाई । ए दोनौं ऊपल करी ॥ गावो घृत लीजो पल वीस । वोषदि मांहि घालि जो ईस ॥ तो लो खरल्लि उठो जो तार । चीतोरी उजहि असार ॥ ओरो वरन होइ जो देह । या मल्हम भाजे संदेह ॥ इति ॥ और पुम्वादि मल्हम विधि लिष्यते ॥ थूथौ पहिलै एक भरि लेइ । वहुरि कसीस टंक भरि लेइ ॥ चारि टंक लीजै फटि करी । आठ टंक लैसी षरी ॥ साठि टंक लै करुवो तेलु । वहो वाहि तेल मैं मेलु ॥ घोरि तैल मैं धरै सुजाना ॥ औषदि वैठे तरे सुजान ॥ तब वा ऊपर तेली जो तेलु । जैसे औषधि होइ न मैलु ॥ फोहा तेलु भिजै कै धरै । औषधि तर हरि छरी रहै ॥ जिते होइ पत छत न रहैइ । इहि सब को भी''''''''''॥

विषय—चौदह विद्याओं की व्याख्या, धातुओं की उत्पत्ति, रस, धूनी, गुटका, बटी और मरहमादि का वर्णन ।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता ने अपना गुरु ग्वाल को माना है । ऐसा ही अजीरन मंजरी के कर्ता ने भी लिखा है । वंदना का छंद दोनों ग्रन्थों में एक ही है । इससे विदित है कि दोनों ग्रन्थों के रचयिता अभिन्न हैं । अजीरन मंजरी में उसके कर्ता का उल्लेख नहीं था । अतएव अब निर्विवाद रुप से उसका कर्त्ता निम्ब कवि मान लिया गया है ।

संख्या २५२ बी. अजीरन मंजरी, रचयिता—निम्ब कवि, पत्र—१०, आकार—$१०\frac{३}{४} \times ५\frac{३}{४}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८२५ = १७६८ ई०, प्राप्तिस्थान—नौबतराम गुलजारीलाल, डाकघर—फीरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ अजीरन मंजरी लिष्यते ॥ कवित्तु ॥ पूजि महेश मनाइ गनेस गिरी पति, ग्वाल गुरु पगुं धाऊँ ॥ होइ सहाइ सरस्वति माइ महासुष अमृत वानी हौं पाऊँ ॥ अकासु मही पर जेतिक तेतिक को मथि कैं मतु ल्याऊँ । दूषन दूरि कै पूषनि पूरी पुरातन तैं भूषन भाषा वनाऊँ ॥ १ ॥ अंबु अजीर जातु पीयै पय चावर ते पचि जाति गरी है । घिउ पचै रसु खाइ जम्हीरी के घीउ पियै पचै केरा फरी है ॥ मास के नास कों कांजी कजाषु है नारिग कों गुरु साहि छरी है ॥ पेट पिडौरे की पीर मिटै तब पीसि कैं कोदौं की षातु बरी है ॥ २ ॥

अंत—अजीरन मंजरी करी उदर अजीरन जाइ ॥ इति श्री अजीरन मंजरी सम्पूर्णम् संवत् १८२५ मिती सावन सुदी ॥ ४ ॥ मंगलवार ॥ नगरु फिरोजावाद म चन्द्रस हकिम लिषितं पुस्तिकं ॥ श्री धन तरन्मः ॥

विषय—विविध वस्तुओं के खाने से उत्पन्न अजीर्ण रोग का उपचार वर्णन ।

संख्या २५३. निपटनिरंजन के छंद, रचयिता—निपटनिरंजन, पत्र—३६, आकार $८\frac{१}{२} \times ५\frac{३}{४}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—७६५, अपूर्ण, रूप—बहुत प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—डा० लक्ष्मीदत्त जी शर्मा, फीरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—······तहै । निपट निरंजन जो इनतें चतुर अंग पूछि राषै अरथ कौ अजइ अवित है । हितकौ कत्वारथ भूवन सौ भूसानति जीवहू में जीवन के जानत के जगत है । ४३ । तत्वन मौ तत्त्वार्थ भूतन मो भूतागति जीवहू मौ जीवन के जानत जगत है । गुन में गुनत्व और ब्रह्म इ में ब्रह्मत्व अंतर मो अंतर गत सुपने की स्थित है । निपट निरंजन ऐ आतमा में आतमत्व लय में विलय सुष सुषयत हित है । हित कौ ववित्त की वित चित अखत कवित्त है । ४४ । निरषे नैना ताकें करुना न आवति है विनहीं विलोकैं याकी उकति अनूठी है । वेद चार भेद संजुक्ति षट सास्त्र ठारह पुरान अर्थ सरल अपूठी है । अस्तुति करत याकौं भए हैं अनंत जुग निपट निरंजन की वात मूठी है । केतियौ भगत ताकें लगत वकन वौ मेरे जनि जगमै जीभ सी न झूठी है । ४५ । जैसे राज मूरति पै न मूरति निहारियत मूरत निहारैं रहै राज की वरद मैं । दल दल पौहप कें प्रमल अमल वास नास का कुसुम अवलोकन अवद मै । निपट निरंजन लुकानौ है वचन वीच वचन वदत नित्य आवत नवद मैं । सवद विदेह कहत ही सवद भयौ देह देष्या चाहै तौ देपियौ सवद मैं । ४६ ।

अंत—सीभुत सालिग राम परे तही तें व भटा की दया मन आनी । पेट में ठौर सुधारस सुधारस कौन हिता पर आन पिवावत पानी । ईसर ता न रहै निपटा निर अंजन ह्वै तहां पीव की वानी । में पद स्वानद छाड़ि दयौ परमानंद की अब कौन कहानी । लषत अलेषै मन परौ सात पांच लेषै देषै के परे षैदुष बाब्यौ अति जी की है । यहै कहै को है जो हैं कहौ सत गुरु सोहै एक है दो है हो है सो तौन कही को है । निपट निरंजन ए अंत सब नासवंत आज ही ······ जानै सब की को है । हों ते हो तो ········· छु होत नाहीं अैसे जग होते ······ को है । २५ । षग मृग मीन ········· ।

विषय—आत्मज्ञान संबंधी छंद ।

टिप्पणी—यह विना नाम का आद्यंत से खंडित वेदान्त संबंधी ग्रंथ 'निपट निरंजन' की रचना है । उनके छंद अच्छे हैं । भाषा और भाव दोनों ही लगभग अच्छे हैं । ग्रंथ के अधूरे रहने के कारण कवि का भी कुछ परिचय ज्ञात नहीं होता और न ग्रंथ के रचना कालादि के विषय में ही कुछ पता चलता है ।

संख्या २५४. श्री विचार सागर, रचयिता—निश्चलदास (किहड़ौली, दिल्ली), कागज—देशी, पत्र—२००, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६७२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०५ = १८४८ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा रावदेव, ज्ञानकुटी, कपूरपुरा, डाकघर—सहावर, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश) ।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री विचार सागर लिख्यते ॥ दोहा ॥ जो सुख नित्य प्रकाश विभु नाम रुप आधार । मति न लखै जिहि मति लखै सो मैं शुद्ध अपार ॥ अब्धि अपार सरुप मम लहरि विश्नु महेश । विधि रवि चंदा वरुण जम शक्ति धनेश गणेश ॥ जा कृपाल सर्वज्ञ को हिय धारत मुनि ध्यान । ताकी होत उपाधि ते मोये मिथ्या भान ॥ ह्वै जिहि जानै विन जगत मनहुं जेवरी सांप नसै भुजग जग जिहि लहै सोहँ आये आप ॥ वोध चाहि जाको सुकृति भजत राम निष्काम । सो मेरी है आतमा काकूं करुं प्रणम ॥ भऱ्यो वेद सिद्धांत जल जामे अति गंभीर । अस विचार सागर कहूं पेखि मुदित ह्वै धीर ॥

सूत्र भाष्य वार्तिक प्रभृति ग्रंथ बहुत सुखानि । यद्यपि मैं भाषा करु लखि मति मंद अजानि ।। कवि जन कृत भाषा बहुत ग्रंथ जगत विख्यात । विन विचार सागर लखै नहिं संदेह नशात ।। चौ० नहि अनुवंध पिछानै जौलौं हे न प्रवृत्त सुघर नर तौ लौ । जानि जिनै यह सुनौ प्रवंधा कहूं व माते ते अनुवंधा ।।

अंत—दोहा कछू व्यतीत्यो काल तव तजि राजा निज प्रान । ब्रह्म लोक में सो गये मुनि जहं जात सध्यान ।। राज काज सब तव कियो तर्क दृष्टि हुसियार । लग्योन रंचक रंग तिहि लह्यो ब्रह्म निर्धार ।। अंते भयो प्रारब्ध को पायो निश्चल गेह । आतम परमातम मिल्यो देह खेह में छेह ।। यह विचार सागर कियो जामे रत्न अनेक । गोप्य वेद सिद्धांत ते प्रगट लहत सविवेक ।। सांख्य न्याय में श्रम कियो पढ़ि व्याकरण अशेष । पढ़े ग्रंथ अद्वैत के रह्यो न एकहु शेष ।। कठिन जु और निबंध है जिनमें मत के भेद । श्रम ते अवगाहन किये निश्चल दास सवेद ।। तिन यह भाषा ग्रंथ किय रंच न उपजी लाज । तामे यह एक हेतु है दया धर्म सिरताज ।। विन व्याकरण न पठि सकै ग्रंथ संसकृत मंद । पढ़ै याहि अनयासही लहै सु परमा नंद ।। दिल्ली ते पश्चिम दिशा कोश अठारह गाम । तामे यह पूरो भयो किहि डौली तिहि नाम ।। ज्ञानी मुक्ति विदेह में जासों होय अभेद । दादू आदू रुप सो जाहि वखानत वेद ।। नाम रुप व्यभिचार में अनुगत एक अनूप । दादू पद को लच्छ है अस्ति भाँति प्रिय रुप ।। इति श्री विचार सागर ग्रंथ संपूर्ण समाप्तः लिखतम् जयंती प्रशाद वैश्य बल्हुर निवासी, भादौं सुदी ५ पंचमी सं० १६०५ वि०

विषय—वेदांत ।

टिप्पणी—वेदान्त वर्णन है। इस ग्रंथ के रचयिता निश्चल दास दादू पंथी थे। ये देहली कहि डौली निवासी थे :—दिल्ली ते पश्चिम दिशा कोस अठारह गाम । तामे यह पूरो भयो किह डौली तेहि नाम । ज्ञानी मुक्ति विदेह में जासो होय अभेद । आद रुप सो जाहि वखानत वेद । कठिन जु और निवंध है जिनमें मत के भेद । तिन यह भाषा ग्रंथ किये-निश्चल दास सवेद । लिपिकाल संवत १९०५ वि० है ।

संख्या २५५ ए. महासावर, रचयिता—नित्यनाथ, पत्र—९२, आकार—८ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—७३६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९५६ = १८९९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामसेवक मिस्र, मिरकनगर, डाकघर—निगोहाँ—जिला—लखनऊ ।

आदि—यह मंत्र अष्टोत्तर शत वार जपै तौ सिद्धि होय ।। सनीचर के दिन उपास करै इन्दोरन की जर पान फूल फल सुधा लीजै ।। उत्तर मुख होय लीजै।। छाँह मैं सुखावै ।। ओखरी में कूटै ।। तामें सोंठि पीपरि मिरच वरावर डालि जै ।। पुनि छेरी के मूत्र में वाँटिजै । पुनि छाया में सुखाय जै ।। ताकी गोली वाँधि जै वाके नाम रक्त चंदन पुनि पानी सोधि सिताहि लगाई जै सो वस्य होय पुनि वह गोली और देव दारु और चंदन मल्यागिरि जलसौं वाँटि जाको खवावै सो वस्य होय ।।

अंत—४-८-१२—अदि सिद्धि सुतान हांति । आत्मा हंति अरिं अरिं ।। ३७ ।। तस्मा देव दशाहं वर्गरा काल सप्तग्रहोदर्पे साध कस्य ममो भावे सम्यक् ज्ञात्वा समाचरेत् ।.३८।।

यत द्रस्य परम मुदि रित ॥ सिद्धि दाई कपतछित || न्यखिल सिद्धि भाजन भवतु अहो भूवि साध्यक सदा ॥ ३९ ॥ चिन्तामणि मोध श्री चंद्र सूर्य चूणा स्यनि योगीत गेहि यंत्रादि । सिद्धि जमयादि पाठिकां चमार समोदर पंडिते ॥ ४० ॥ इति श्री योग चिन्तामणौ ॥ महाकल्प ॥ वैरे प्रत्यक्ष ॥ सिद्धि योगे । उमा महेश्वर संवादे ॥ दामोदर पंडितौ कृत ग्रन्थ सिद्धि सावर संपूर्णम् शुभ मस्तु ॥ संवत् १९५६ अषाढ़ मासे कृष्ण पक्षे तिथौ पंचम्यां ॥ भृगु वासरे ॥ लिषितं त्रिपाठी महासुख प्रसाद || वाँगर मऊ के मोकाम इंदौर का || राणी पुरा में श्री राम कृष्णाय नमः श्री राम ||

विषय—(१) पृ० १ से १० तक—प्रथम उपदेश वसीकरण मंत्र संग्रह । (२) पृ० १० से १८ तक—मंत्र सार । स्तंभनादि वर्णन । (३) पृ० १८ से ३२ तक—संकोचन व खंड करनादि (४) पृ० ३२ से ३६ तक—कौतूहल (५) पृ० ३६ से ४२ तक—यक्षिनी साधन (६) पृ० ४३ से ५० तक—अंजन पादुका साधन (७) पृ० ५० से ७० तक—अमृत संजीवन सिद्धि मंत्र (८) पृ० ७० से ९२ तक—यक्षिणी पटल ।

संख्या २५५ बी. वीरभद्र, रचयिता—नित्यनाथ, पत्र—६६, आकार—८ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—६१४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१५ = १८५८ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामसेवक मिश्र, मीरकंजर, डाकघर—निगोहां, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्री गजाननाय नमः || एक समये विषे महादेव पारवती कैलास विषे अपने मंदिर मा वैठे थे तव लोक के उपकारार्थ पार्वती शिव सौ पूछै तव शिव जी कहै प्रथम शिव करत उच्चाटन १ मोहन २ स्तंभन ६ संतिक ४ पौष्टिक ५ चक्षू हानि ६ मनो हानि ७ कान विधि ८ आंख अंधी ९ ज्ञान हीन १० लाज हीन ११ खिलनो १२ कार्य स्तंभन १३ शेषन १५ पूरन १५ इनका सब का ध्यान शिव जी तुम मोसों कहो तव ईश्वर वोलेस पार्वती तुम सुनियो मौं तोसों कहत हों तू मेरी भक्ति कृत हो ॥

अंत—गाड़ी जे तो ते हन कन्या प्राप्ति होयः शीघ्रः || इति श्री वीर भद्रे महा तंत्रे मंत्र को नाम पटलः तृतीया || ३ ॥ षट कोण यंत्र लिषि जै तिहाँ छह कोठा या डंकुर कुल्ल हो स्वाहा मंत्र लिषि जै भोज पत्र पर लिषि घरमा द्वार या देहली माँ ॥ संवत १९१५ शाके १७८० प्रमोद नाम संवत्सरे फाल्गुण कृष्ण ६ गुरु वासरे इदे पुस्तक संपूर्ण || हस्ताक्षर नारायण भट्ट कोल्हापुर कर ग्रन्थ संख्या ११०० श्री लक्ष्मी नारायण प्रसन्नौस्तुलेखक पाठकां यो शुभं भवति

विषय—(१) पृ० १ से १० तक—उड्डामर तंत्र । (२) पृ० ११ से २६ तक—संक्षिप्त स्वर ज्ञान । (३) पृ० २७ से ६६ तक—औषधि प्रकरण ।

संख्या २५५ सी. रसरत्नाकर, रचयिता—पार्वतीपुत्र नित्यनाथ, पत्र—८०, आकार—८ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—७२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१५ = १८५८ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामसेवक मिश्र, मीरकंजर, डाकघर—निगोहां, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ प्रथम १ साधक चित्त होय ता पीछे ब्रह्मचारी रहै पीछे ये मंत्र साधे ॥ ॐ नमः सर्वार्थ साधनी स्वाहा ॥ एवम् मंत्र १००० एक हजार जपै कृष्ण पक्ष की चौदस की उपवास करै ॥ पीछे २० हजार जपै तव मंत्र सिद्धि होय ते पीछे रुद्र जठाकी जड़य लेइ वाजड को लेप करै तो सर्वत्र वश्य होइ ॥ प्रथम प्रयोग सार हड़ी गो रोचन वरावर लेइ पानी सौं पीस तिलक करै तो सर्व जय होइ ॥ सहरे वी जड़ तांवूल साथै दीजै तो लोक वस्य होय ॥

अन्त—१५।२।४।१३ कपूर सहित गुरुवारे अदिमी की चरवी की वाट करके दीपक की जेते काजल पाड़ कर अंजन करै तो निधि देषै ९।६।३।११ रात्रि विषै मंगल वार की मोन होय अंको तेल सो लेप करै तो धन प्राप्ति पाले पथी वीर्य धारी सौ योजन चलै। ११।१४।१।८। लोहीत आदित वारे अंजन करै तौ अदेषि वस्त रति विषैं देषै ये शास्त्र शिवजी ने कह्या लोक के विनोद के वास्ते ॥ इति श्री पार्वती पुत्र नित्य नाथ विरचितं रस रतना करे मंत्र सारे अंजनादि धूप षष्टमोप देशः ॥ ६ ॥ अथ वुद्धि गुसाईं श्री जू कै कह्यो भाषा की विषोध सम नीयो गुरुपदेश सत्य चक्र पाणि वागीश कृत भाषा रस रत्नाकर की संवत् १९१५ शाके १७८० ॥

विषय—(१) पृ० १ से १४ तक —प्रथम उपदेश—स्त्री मोहन।

(२) ,, १४ ,, २६ ,, —द्वि० उ०—सिद्धि खंड में मंत्र सामंत सार के अन्तर्गत आकर्षणादि तथा स्तंभन ॥

(३) ,, २६ ,, ५० ,, —मंत्र सार। ग्रह क्लेश निवारण करण संबंधी अनेक मंत्र तथा उनकी प्रयोग विधि। तृ० उ०।

(४) ,, ५० ,, ५८ ,, —च० उ०। कौतूहल संबंधी मंत्रादि।

(५) ,, ५९ ,, ६८ ,, —अंगनादि पादुका लेप संबंधी। (वहुत चलने आदि के संबंध के) मंत्र—पं० उ०।

(६) ,, ६९ ,, ८० ,, —मृत संजीवनी विद्या, बहुत खाने आदि तथा भूख न लगने आदि के संबंध में अंजन धूपादि (ष० उ०) ग्रन्थ रचना का कारण—"अथ वुद्धि गुसाईं श्री जू कै कह्यौ भाषा की विध सोध समजीयोः गुरु उपदेश सत्य चक्रपाणि वागीस कृत भाषा रस रतना कर की संवत् १९१५ साके १७८०"

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रन्थ प्रधानतया तंत्रों और मंत्रों से संबंध रखता है, किन्तु साथ ही इसमें औषधियों आदि का भी कुछ वर्णन है। इसके कुछ प्रयोग अरुचिकर घृणोत्पादक तथा क्रूरतापूर्ण हैं। किन्तु ऐसे प्रयोगों के निराकरण करने की विधि भी साथ ही देदी है।

संख्या २५५ डी. रस रत्नाकर, रचयिता नित्यनाथ, पत्र—८२, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—७२८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१६ = १८५९ ई०, प्राप्तिस्थान—रेवतीराम शर्मा, कंतरी, जिला—आगरा।

आदि-अंत—२५५ सी के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—

रत्नाकर समाप्तम् शुभम् भूयात् ॥ इति श्री संवत् १९१६ वि० ॥

संख्या २५५ ई. उड्डीस, रचयिता—नित्यनाथ (पार्वती पुत्र), पत्र—२०, आकार—६३/४ × ३ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६६, खंडित, रूप—बहुत प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५६ = १७९९ ई०, प्राप्तिस्थान—रतन सिंह जी, नमनी, डाकघर—किरावली, जिला—आगरा।

आदि—···टि तिलक करै तौ तीन लोक वस्य होय। अथ मंत्र। ॐ नमो कंद संवारिणी जारिणी मालिनी सर्व लोक वसीकरनाय स्वाहा मंत्र अठौत्तर सै वार जपै तौ सिद्ध होय अथ और प्रयोग सनीचर वृत करै इदोरणी के जर पान फूल शुद्धां उत्तर मुख है लीजै छांह मैं सुषाइयै ताकी गोली वांधै सोंठि मिरच पीपरि बिराबरि डारिछेरी के मूत मैं वांहि छांह मैं सूषै ताकी गोली वांधि वह गोली और रक्त चंदन घिसिकैं जाहि लगावै सो वस्य होइ पुनि वह गोली और देवदार और मलयागिरिचंदन पानी सौं घिसि आपनै तिलक करै तो जहां जाय तहां सिद्धि होय।

अंत—जापुरिष कैं लेपन करै सो पुरिष स्त्री कौ दिषाइ परै रुद्र जटा श्वेत अर्क तथा जो हो छिर हटाये वो षपुनर्वस नक्षत्र मैं लैकै तावीज मैं मढावै माथै में राषे तौ जहां जहां जाइ तहां वोल ऊपर रहै वड़ी सिद्धि पावै सभा मै बोल बाला होय। मंत्र। ॐ नमो हूं ह्रां क्लीं-हूं-हू ठं ठ = फट स्वाहा। जहां कौं चलै तहां कौ या मंत्र है पढ़ि लेइ सिद्धि होइ। इति श्री पार्वती पुत्र नित्यनाथ विरचिते सिद्ध खण्डे मंत्रसारे अमृतसंजीवनी नाम सप्तमोपदेश। ७। मिती श्रावण सुदी १ भआ संवत् १८५६ श्री श्री श्री रस्तू कल्यान। मस्तू दीर्घायु रस्तु श्री कृष्ण श्री कृष्ण श्री कृष्ण।

विषय—कुछ जंत्र मंत्र तथा तंत्रादि का वर्णन।

संख्या २५६. रुक्मिणी मंगल, रचयिता—पदमैया, पत्र—२३, आकार—८१/२ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—५६१, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९४२ = १८८५ ई०, प्राप्तिस्थान—डा० लक्ष्मीदत्त जी शर्मा फीरोजाबाद, जिला—आगरा।

श्री गणेशाय नमः। रुक्मणी मंगल लिख्यते। विगन हरन मंगल करन···बुद्धि प्रकास। नामलेत गणेश को होत······प्रकास। १। सदा भवानी दाहिनी सन्मुख रहत गणेश। पांच देव रक्षा करैं ब्रह्मा विष्णु महेश। गुरू कूं नवन कीजिये एक घड़ी सुभाव। कागा सो हंसा कीये करत न लागी वार ॥ राग जिल्ला की ठुमरी ॥ कवो मेरा भाई नारद मुनि आये। कोण जाति तेरो गोत कहये चौकी पर बैठाये। हाथ जोड़ राजा जी आयो आभूषण पहराये। धुप दीप नईवेद आरती गुरू सीस नवाये। हाथ पकड़ि रुक्मणीं कूं लाये। गुरु कूं आन वताये नारद बोले सुन राजा······द्वारिका में लगन पहुंचावो। पदम भने···पांई लागुँ झट पट विनाइक बैठायो। १।

आदि—चित लगाय रुक्मणी मंगल सुणसी। जाकी पुरसि आसा। जिन मुखड़ा सुँ वचन सुनावे। सुणवा वाला का आसा ठाम पै वांचे उत्तम होसि। सीसुपाल तो जनम

रोसी। पदम भणे जी त्याया। राड़ो श्री कृष्ण वल याको ही मिलसी कुंमारी सुर्णवरं प्रापती होसी। परणी पुत्र खीलावसी। बूढ़ी सुणें एकमणी मंगलवा वैकुंठा जासी। जो याको भगति जो करसी। ताको दरसन देसी। श्री कृष्ग सभा में आसी। पदम भणे प्रण में पाइं लागुं भगतां के मन भासी। १३२। इति श्री पदमैया कृत रुकमणी मंगल संपूर्ण। आश्वनि वदी ६ मंगल वासरे लिखितं वैष्णव जान किसन सर्मनः संवत् १६४२।

विषय—रुक्मिणि और कृष्ण के विवाह का वर्णन।

संख्या २५७ ए. गंगालहरी, रचयिता—पद्माकर (सागर, जि० बाँदा), पत्र—२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१९, परिमाण (अनुष्टुप्)—५७२, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०८ = १८५१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० हरस्वरूप वैद्य, सुधरवा, डाकघर—शाहजनपुर, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ गंगालहरी कवि पद्माकर कृत लिख्यते॥ दोहा—हरि हर विधि को सुमिरि के काटहु कठिन कलेश। कवि पदमाकर करत है गंगालहरी वेश॥ कवित्त—वहँती विरंचि भई वामन पगन पर फैली फैली फिरी ईश शीश पै सुगथ की॥ आइ कै जहान जहु जंघाल पटाई फिरी दीनन के हेत दौरि कीनी तीनि पथ की॥ कहै पदमाकर सु महिमा कहां लौ कहौं गंगा नाम पायो सोही सबके अरश की॥ चार्‍यौं फल फली फूली गह गही वह वही लहलही कीरति लता है भगीरथ की॥

अंत—भूमि लोक भुव लोक स्वर्ग लोक महालोक जन लोक तप लोक सत्य लोक कल में॥ कहै पद्माकर अतल में विमल में सुतल में रसातल में मंजु महातल में॥ त्योंही तलातल में पताल में अचल चल जेते जीव जंत वसैं भासत सकल में॥ वीच में न विल में विराजै विष्णु थल में सु गंगा जू के जल में नहावे एक पल में॥

विषय—गंगा-महिमा वर्णन।

संख्या २५७ बी. गंगालहरी, रचयिता—पद्माकर (सागर, जि० बाँदा), पत्र—२०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० वंशगोपाल, दीनापूर, डाकघर—उमरगढ़, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि-अंत—२५७ ए के समान।

संख्या २५७ सी. जगद्विनोद, रचयिता—पद्माकर भट्ट (मथुरा), पत्र—७६, आकार—१० × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५९६, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० मवासीलाल शर्मा, डाकघर—अछनेरा, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ लिष्यते पद्माकर भट्ट कृत जगद्विनोद ग्रंथ॥ दोहा॥ सिद्धि सदन सुन्दर वदन। नंद नँदन मुद मूल। रसिक सिरोमणि साँवरे। सदा रहहु अनुकूल॥ १॥ जय जय शक्ति शिलामई। जय जय गढ़ आमेर॥ जय जय पुर सुर पुर सदृश। जो जाहिर चहुँफेर॥ २॥ जय जय जाहिर जगतपति। जगत सिंह नरनाह। श्री प्रताप नंदन वली। रवि वंशी कछ वाह॥ ३॥ जगत सिंह नर नाह की। समुझि जगत को ईस॥

कवि पद्माकर देत हैं। कवित बनाइ असीस ॥ ४ ॥ कवित्त ॥ छात्रन के छत्र छत्र धारिन के छत्रपति। छटान क्षिति क्षेम के छवैया हो। कहै पदमाकर प्रभाव के प्रभाकर। दया के दरियाव हिन्दू हद्द के रखैया हो ॥ जागते जगत सिंह साहव सवाई श्री प्रताप नन्दकुल चंद आजु रघुरैय्या हो ॥ आछे रहो राज राज राजन के महाराज। कच्छु कुल कलश हमारे तो कन्हैया हो ॥ ५ ॥

विषय—नायिका भेद।

संख्या २५७ डी. जगद्विनोद, रचयिता—पद्माकर, पत्र—१५२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—७९८, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० अमृतलाल, फिरोजाबाद, मुहल्ला—पिपलवाला, जिला—आगरा।

आदि—२५७ सी के समान।

अन्त—घन वर्षत कर पर धर्‌यौ। गिरि गिरिध निस्संक ॥ अजब गोप सुत चरित लखि। सुरपति भयो ससंक ॥ १६ ॥ अथ शांत रस वर्णन ॥ सुरस सान्त निर्वेद हैं। जाको थाई भाव। सत संगत गुरु तपोवन। मृतक समान विभाव ॥ १७ ॥ प्रथम रोमा वादिक तहां। भाषत कवि अनुभाव। धृति मति हरषादिक कहे। शुभ संचारी भाव ॥१८॥ शुद्ध शुक्ल रंग देवता। नारायण है तान। ताको कहत उदाहरण। सुनहु सुमति दै कान ॥ १९ ॥ शान्तरस को उदाहरण ॥ सवैया ॥ वैठि सदा सत्संगही में। विष मानि विषय रस कीर्ति सदा ही। त्यों पदमाकर झूठ जितो जग जानि सु ज्ञानहि के अवगाही ॥ नाक की नोक में दीठ दिये नित चाहै न चीज कहूँ चित चाही संतत संत सिरोमणि है। धन है धन वे जन वै पर वाही ॥ २० ॥ दोहा ॥ वन वितान रवि शशि दियाफल......। ......(अपूर्ण)

विषय—नायका भेद वर्णन

संख्या २५७ ई. लिलहारी लीला, रचयिता—पद्माकर, पत्र—२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१४ = १८५७ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा नारायण शर्मा, मोहनपूर, डाकघर—मोहनपूर, जिला—एटा (उत्तरप्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ लिलहारी लीला लिख्यते ॥ कवित्त—मन मोहन मोहनि रूप धरो वरसाने चली वन के लिलहारी ॥ वृषभान के धाम अवाज दई तुम लीला गुदावो सवै वृजनारी ॥ राधे आवाज सुनी श्री कृष्ण की लीन्ही वुलाय पिन्हावन हारी ॥ लै आओ वुलाय हमारे घरे यक आई है आजु नई लिलहारी ॥ १ ॥ उन्ह जाय जबाव दियो श्री कृष्ण को तुम्हें बुलावत राधिका प्यारी ॥ अपने कर सों कर साथ लियो जहँ बैठी हती वृषभानु दुलारी ॥ सिर पै जो डला सो उतारि धरो अरु जाय खड़ी प्रिय पास अगारी ॥ तवहीं हंसि राधे जबाब दियो तुमही लिलहारी की गोदन हारी ॥ २ ॥ लिखि दे भुज दंड पै वाल गोविन्द भुजै भगवान गरे गिरधारी ॥ ठोड़ी पै मूरति ठाकुर की अरु ओठन पै लिखु कृष्ण मुरारी ॥ इइके अधीन सवै लिखिदे सुनिये लिलहारी की गोदन हारी ॥ ३ ॥ दे लिखि वाहन में व्रजचंद सो गोल कपोलन कुंज विहारी ॥ सो पदुमा

लिखिहों विधि लिखि गोसे गोविन्द गरे गिरधारी ॥ याही तरह नख से सिखलों लिखु नाम अनंत हुकंत होइ प्यारी ॥ स्यामरे को रंग सों गोदि दे अंग में सुनिये लिलहारी की गोदन हारी ॥ ४ ॥

अन्त—दंत पै नाम दमोदर को मेरे कंठ में लिखिदे कृष्ण मुरारी ॥ दाहिनी ओर लिखो सजनी कर चारि भुजा के वांके मुरारी ॥ हाथ पै नाम लिखो हरि को दोनों जोवन वीच लिखो वनवारी ॥ हृदय विच नाम लिखो मन मोहन सुनिये लिलहारी की गोदन हारी काम हमारो यही सजनी हम है परदेसी सहित रुजगारी ॥ तुम जोइ कहौ हम सोइ लिखै तेरे अंगहि अंग में वेधों मुरारी ॥ वृषभान लली वरसाने घरा बड़े राजन की तुम राज दुलारी ॥ देहौ कहा सो कहो सजनी हम हैं लिलहारी की गोदन हारी ॥ ६ ॥ देहों मैं हार हजारन को दुलरी तिलरी हंसुली वड़ि भारी । देहों छला दोनों हाथन के अरु पैंधन को अपने तन सारी ॥ और अभूषन तोहि दिहों अरु पैधन की अपने तन सारी । मोतिन माल अमोल दिहों सुनिये लिलहारी की गोदन हारी ॥ ७ ॥ हाथ पै हाथ धरो जबहीं तब चौंकि उठी वृषभान दुलारी । श्याम सिखे छल छंद बड़े तुम काहे को भेष बनावत नारी । देखन को तोहि प्रेम वढ़ो तब ही हम रूप कियो लिलहारी ॥ पदमाकर यो वृषमानारि कहैं हम हैं हरि के पग धोवन हारी ॥ इति श्री लिलहारी लीला लिख्यते ॥ लिखा वाल दीन पांड़े मिती चैत्र वदी अष्टमी संवत् १९१४ वि० राम राम राम—

विषय—श्री कृष्ण की लिलहारी लीला ।

संख्या २५८. रामविनोद, रचयिता—पद्मरंग, पत्र—२४४, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७२८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२८ = १८७१ ई०, प्राप्तिस्थान—वैद्य देवनारायण मोहनपूर, डाकघर—बरवान, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ राम विनोद लिख्यते श्री शिवाय नमः ॥ प्रथम गणेश जू की स्तुति लिखे हैं गणेश जी कैसे है रिद्धि सिद्धि के देने हारे हैं गौरा के पुत्र हैं विध्न के दूर करने वाले हैं ऐसे गणेश जी को नमस्कार है । ग्रन्थ करनेवाले पंडितों से विन्ती करे हैं नाना प्रकार के वैद्यक के शास्त्रों को देख कर राम विनोद ग्रन्थ अधिक सुगम करूं हूं । सकल जग के जीवों को सुख का देने वाला है । अथ वैद्य वुलाने वाले के लक्षण—विलक्षण होय पंडित होय सुन्दर होय सज्ञान होय विनय वत होय ऐसा पुरुष होय सो रोगी के वास्ते वैद्य वुलाने जावे ॥ वैद्य के आगे आय हाथ जोड़ नमस्कार कर मीठे बचनों से विनय करै वैद्य के आगे श्रीफल रुपया वस्त्र प्रसन्न हो आगे धरै और यह कहै आप कृपा करिये ॥ वैद्य को वुलाने वाला पुरुष खाली हाथ जाय ॥ खुशी होय वैद्य अपने घर से एक पुरुष के साथ जाय ॥ रोगी के घर दोके साथ न जाय ऐसा भला सगुन होय तो वैद्य रोगी के घर जाय ॥

अन्त—चरक १ आत्रेण २ हरीत ३ जोग चिन्ता मणि ४ सुश्रुत ५ भृगु ६ क्षीर पाणि ८ आनन्द माला ९ आनंद माला १० वैद्य विनोद ११ सन्निपात कलि कान १२ राज मार्तंड १३ रस चिन्ता मणि १४ जोग सतात १५ विन्दुसार १६ मनोरमा १७ वालतंत्र १८

सारंग धर १९ काल ज्ञान २० वाल चिकित्सा २१ वैद्य सर्वस्वात २२ वैद्य वल्लभ २३ मर्मोत्सव वैद्य २४ वैद्यक सारोद्वार २५ सार संग्रह २६ भाव प्रकास २७ अमृत सागर २८ चिकित्सार्णव २६ क्षेम कौतूहल ३० रस मंजरी ३१ रस रत्नाकर ३२ टोंडरा नंद ३३ माधवी दामोदर ३४ माधव निदान ३५ वंगसेन ३६ रत्न भूषण ३७ जैजु ग्रन्थ ३८ वसिष्ठ ३९ भेड़ा ग्रन्थ ४० इत्यादिक ग्रन्थों की भाषा से यह राम विनोद किया गया वचन का वंध यह सर्व व्याधि का दूर करनेवाला है। इसमें पुन्य होय जस होय अच्छे अच्छे मित्र होंय धन की प्राप्ति होय परोपकार होय इस ग्रन्थ बराबर और ग्रन्थ सुगम नहीं हैं। इति श्री पद्म रंग विरचिते राम विनोद ग्रन्थ सम्पूर्ण समाप्तः श्री संवत् १६३५ वि०

विषय—वैद्यक।

संख्या २५६. ऊखाचरित्र, रचयिता—रामदास विस्राम छन्दर-सुलतांपुरी (चन्देरी, पहार कवि कायस्थ), पत्र—८४, आकार—१०½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४५७, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—मुंशी छेदालाल, खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ दोहा ॥ गज मुष शसि मुख हंस सुभ। मूषक वाहन जासु। सिधि बुधि वर के दानि हे। नमो गनाधिप आसु ॥ १ ॥ सोरठा ॥ शिव सुत हृदय मनाइ। अघ नासत कर फरस धरि। दारिद दरक विलाइ जिमि। अहिगण सागर लखत ॥ सुमिरौं चित्त लगाइ। जदपि सुतत्रय के वचन। वसउ सु कवि उर आइ। तहां बुधि उति पति करै ॥ नील जलद तनु श्याम। अरुन जलध लोइनि सरिस। ससि मुख कमल वाम हरि। राधा पद उर धरउ ॥ छंद गीतिका ॥ श्री कृष्ण अज शिव सती। सारदा सेस अंव गणेशयं। दुज राज रिखिन समाज। चित्र गुपित्र भूमि सुरे सयं ॥

अन्त—रामदास कवि कथा वनाई। केवल रची चौपई गाई ॥ पढ़त न फीकी कहै सुजाना। तिहि विश्राम छंद विनु नाना ॥ काइथ कुल कवि नाम पहारा। सुलातापुरी चंदेरी बारा ॥ देषि कथा यह बुधि विचारी। सुंदर छन्द करौं निरधारी ॥ प्रति अध्याय सु छंद वनाए। सबकों वाचत लगे सुहाये ॥ छंद नाम संज्ञा सुनि लीजै। बुधि वान मम दोस न दीजै ॥ छंद गीतिका परम सुहाये। गावत सुनत श्रवन सुखदाई ॥ पदमावती मर हटा कहिये। दुवई छंद त्रभंगी लहियै ॥ उषै व्याहि कृष्ण घर आये। नित नव आनंद वजत वधाये ॥ कथा भागवति सुनै जो कोई। पावै फल पुरान विधि सोई ॥ दोहा ॥ रिषि मुनि भूसर सकल। अरु भाषा करि सोइ। तिनके चरननु रेनु धरि। कवि पहार सिर मांहि ॥ इति श्री हरि चरित्रे दशम स्कन्धे श्री भागवते ॥ महापुराने ऊषा विवाह वर्ननो नाम सप्तदशमो ध्याय ॥ लिखितं पीतं जोसी मोजे पीथे पुर के ॥ संवत् १९१८ मिती फागुन वदी १० रविबार ॥

विषय—उषा अनिरुद्ध की कथा का वर्णन। कवि परिचयः—नेमा कहत राम को दासू। देस मालवा अति सुख वासू ॥ सहर सिरोज निकट सो ठाऊं। जन्म भूमि मलिनी के गाऊं ॥ पिता मनोहर दास विधाता। वीरा वती जन्म दियौ माता ॥ रामदास सुत तिनको आई। कृष्ण नाम की भक्ति कराई ॥ विश्राम छन्द रचयिता का परिचयः—(१)

कारणः—रामदास कवि कथा बनाई। केवल रची चौपई गाई॥ पढ़त न फीकी कहै सुजाना। तेहि विश्राम छन्द बिनु नाना॥ (२) परिचयः—देखिये अन्तिम भाग

संख्या २६० ए. ख्याल पचासा, रचयिता—द्विज पहिलमान, पत्र—३१, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००२, लिपि - नागरी, लिपिकाल—सं० १९२६ = १८६९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० जैसुखराम, मंगलपूर, डाकघर—मारहरा, जिला—एटा (उत्तरप्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ ख्यालपचासा लिख्यते॥ ख्याल श्री कृष्ण जी के जन्म का—चली हरी दर्शन को बृजनार लिये कर आरति थार सम्हार॥ नंद भवन प्रभु प्रगट भये तीनि भुवन कर तार॥ स्यामल मूरति निरखि छवि आनंद उर न समात। करैं सखि आरति वारहिं वार लये कर आरति थार सम्हार॥ १॥ चंदन अंगन लिपाय के मोतिन चौक पुराय। नंद द्वार नौवति वजैं ग्रह ग्रह मंगल चार॥ देव सब बरषत पुष्प अपार करैं सखि आरति वारहिं वार॥ २॥ कोऊ माला कोऊ मूदरी कोऊ रतनन के हार। साल दुशाला चीर पट करैं सखि आरति वारहिं वार॥ ३॥ पहिल मान जदुराइ के दानन को न सम्हार। कामिनि गाय बजाय के प्रभु मूरति धरि ध्यान। चली सखि बरनति नाम उदार करै सखि आरति वारहिं वार॥ ४॥ इति श्री ख्यालपचास संपूर्ण लिखा मथुरा प्रसाद आगरा निवासी॥ राम राम संवत् १९२६ वि० राम राम॥

अन्त—ख्याल पचासवां-कृष्ण भये गोकुल के वासी राधिका लछिमी सी दासी॥ मधुर धुनि मुरली की खासी सुनत उठि धावैं ब्रज वासी॥ दो०—महरि श्याम छवि निरखि के लीन्हे कंठ लगाय। नंद सुनत आनद भये अति गौ गज रतन लुटाय॥ दान भूपति दिये मन भासी कृष्ण भये गोकुल के वासी॥ १॥ सुनत सब धाई ब्रजनारी रतनि भरि कंचन की थारी॥ कृष्ण छवि निरखै नर नारी। आरती करैं सखी सारी॥ चंदन अगन लिपाय के मुक्तन चौक पुराय। गणपति गवरि पुजाय सकल मिल गावैं मंगल चार। करैं न्योछावरि ब्रज वासी कृष्ण भये गोकुल के वासी॥ २॥ पूतना नंदधाम आई महरि से बोली मुसकाई। मोहिं सुत दीजै दिखलाई सेज पर सोवत जदुराई॥ दो०—धाय श्याम को गोद लै विष कुच दियो गहाइ। कपट जानि खींजो हरि तबहीं गई स्वर्ग लै धाई॥ गिरत गति दीनी अविनाशी कृष्ण भये गोकुल के वासी॥ ३॥ कंस सुनि सोच कियो भारी। त्रणाव्रत भेजो छल कारी। अघासुर आवा बल धारी। लात से मारा बन वारी॥ दो०—जसुधा बांधे श्याम को ऊखल दामरि लाइ। जानि दुचित्ती मातु को दीने वृक्ष गिराय॥ गये दोऊ इन्द्र धाम खासी कृष्ण भये गोकुल के वासी॥ ४॥ नन्द तहां दये दान भारी गोप सब सोचत नर नारी। कंस अब किया जुलुम भारी कौन विधि बीच हैं बन मारी॥ दो०—नंद गोप गोकुल तजी वृन्दावन बसे जाय। नाग नाथि धाये प्रभू गिरिवर नख धरो जाय॥ इन्द्र का मान भयो नासी कृष्ण भये गोकुल के वासी॥ ५॥ धाम है मथुरा का भारी। जहां हरि प्रगटे गिरिधारी। सवन से दान कियो जारी। कंस तहा रच्यो रंग भारी॥ दो०—कंस बुलाये गोप सब राम कृष्ण दोऊ भाइ। रथ चढ़ाय अक्रूर गये तहँ धनुष जग्य लख्यो जाइ॥ रूप सब देखत ब्रजवासी। कृष्ण भये गोकुल के वासी॥ ६॥ धनुष प्रभु खंडन करि डारा। सूर सब मारे

वरिआरा ॥ कूबरी सुन्दर तन कारा । बसन लये रजक कृष्ण मारा ॥ दो०—सूर मारि डारे समर । देखत सब नर नारि । गयो कंस घवराय तब । डारों उन्हें संहारि ॥ वचन अस कहो भूप त्रासी । कृष्ण भये गोकुल के बासी ॥ ७ ॥ कुबलिया मारो जदुराई । कंस के संका मन आई ॥ लये सल तोसल बुलबाई । कृष्णन से समर कियो जाई ॥ दो०—सल तोसल भारे हरी । मुष्टि कादि रन धीर । धाइ गये प्रभु कंस केस । गहि दियो भूप को डारि ॥ खैंचि गये जमुना तट वासी । कृष्ण भये गोकुल के वासी ॥ ८ ॥ मातु पहँ राम कृष्ण आये । कृष्ण तब बंधन कट वाये ॥ तुरत ही धाम श्याम लाये । मातु पितु आनन्द उर छाये ॥ दो०—उग्रसेन को राज दै । तिहुं पुर अनंद अपार । पहिलमान श्री कृष्ण को । सुजस रहो जग छाय ॥ काट देउ जमपुर की फांसी । कृष्ण भये गोकुल के बासी ॥ इति श्री ख्याल पचासा पहिलमान द्विज कृत संपूर्ण समाप्तः संवत् १९२६ वि०

विषय—श्री कृष्ण लीला ।

संख्या २६० बी. भजनपचासा, रचयिता—पहिलामान (द्विज), पत्र—२८, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४४, परिमाण (अनुष्टुप्)—८७२, खंडित, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबू दीपचन्द, चौगन्नापूर, डाकघर—मारहरा, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश) ।

आदि—श्रीगणेशायनमः ॥ मेरे मन हरि की याद भुलाई ॥ पुत्र कलित्र मित्र धन दारा बड़े चतुर हैं भाई । प्रेम फन्द से फांस लियो है सो छूटति कठिनाई ॥ १ ॥ निस दिन भ्रमत बैल सम जगयो तन धन बुद्धि गमाई ॥ हरि का नाम जपा नहिं मूरख भूलि गई चतुराई ॥ मेरे मन ॥ २ ॥ जब जमराज नर्क दिये डारी विपति परे सुधि आई । त्राहि त्राहि हरि सरन तिहारे अवकी होहु सहाई ॥ मेरे मन ॥३॥ झूंठ विवाद मास मद हारी रौरव भरमौ जाई । पहिल मान हरि नाम रटा कर जमपुर फांस छुटाई ॥ मेरे मन ॥ ४ ॥ कर्म गति ना काहू लखि पाई ॥ नृप को दान विदित चारों जुग गिरगिट तन धरो जाई ॥ द्वारावती कूप में डारी कृष्ण दरस गति पाई ॥ १ ॥ गणिका अजामिल कंसादिक सुर पुर दीन पठाई । अघा वका सकटा सुर तारे कीन्हेउ कौन कमाई ॥ २ ॥ रामण सीय विपिन छलि लैगो सो सुर पुर वसो जाय । विप्र सुदामा दास तिहारो चौथे पन सुधि आई ॥ ३ ॥ सिवरी वधिक कौन व्रत धारी उनकी सुगति बनाई ॥ पहिलमान प्रभु अधम उधारम मेरी याद भुलाई ॥ ४ ॥ कर्म गति काहू ना लखि पाई ॥

अंत—अथ वारह मासा पूरवी ॥ गगन घन गरज मचावें रे । लागे मास असाढ़ मोर वन शोर मचावें रे ॥ करि सोलह सिंगार निरखि नयनन जल आवें रे ॥ १ ॥ सांवन परे हैं हिन्डोल तीज त्यौहार न भावें रे ॥ सइयां भये निपट कठोर नेक मेरी सुरति न आवै रे ॥ २ ॥ भादों मास गंभीर घटा धन तड़प सुनावै रे ॥ मेरे लगत विरह के बान जान मेरी कौन बचावै रे ॥ ३ ॥ क्वांर कनागत दान मान तन मोहिं न भावे रे । भये स्याम निरमोह एक पतिया न पठावै रे ॥४॥ कातिक रैन उजेरी पिया विन सेज न भावे रे । धनि कुवरी के भाग श्याम को कंठ लगावै रे ॥ ५ ॥ अगहन अधिक अंदेश विरह दुख कौन बटावै रे । हम सब धारें जोग भोग कुवरी मन भावै रे ॥ ६ ॥ पूस पवन चले जोर सीत तन अधिक

सतावै रे। तलफति हों दिन रैनि चैन मोहिं नेक न आवै रे ॥ ७ ॥ आये माघ वसंत कंथ विन कछु न सुहावे रे। मालिन लाई वसंत कंत विन और न भावै रे ॥ ८ ॥ फागुन उड़त अबीर राग रंग मोहिं न भावे रे ॥ फूटि गये मेरे भाग श्याम को कौन मिलावै रे ॥ ९ ॥ चैत फले फल फूल कुइलिया शब्द सुनावै रे। मोरे उठत विरह की पीर श्याम विन कौन मिटावै रे ॥ १० ॥ माधव मास बैसाख श्याम मधुवन में छाये रे। ऋतु ग्रीषम की तपनि हमारी कौन बुझावै रे ॥११॥ जेठ श्याम मिलि गये गले विरहिन लपटावे रे। फूलन सेज विछाय श्याम को खूब रिझावेरे ॥ १२ ॥ पहिलमान द्विज एक कहति हरि के गुन गावेरे। ऊधो दीन दयाल तपनि तन की वे बुझावेंरे ॥ १३ ॥ इति वारह मासा विरहनी समाप्तः संवत् १९३० वि० ।

विषय—भक्ति और ज्ञानोपदेश।

संख्या २६१. श्रीपालचरित्र, रचयिता—परमालदेव (आगरा), पत्र—१०४, आकार—१३½ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—७४८८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री जैन मन्दिर, डाकघर—नारोखी, जिला—आगरा।

आदि—६० । अथ श्रीपालचरित्र भाषा लिख्यते ।चौ०। सिद्धि चक्र व्रत केवल सिद्धि। गुन अनंत जाकौ पाल सिद्धि। प्रनमौ परम सिद्धि गुरु सोइ, ता प्रसंग जो मंगल होइ। सिद्धि पुरी जाकौ सुभ तान। सिद्ध पुरी आनंद निधान। प्रगटौ जो त्रिभुवन में आइ। मूरष देव कोऊ लषै न ताहि। अंजन नरहित निरंजन जांनि। हीन बुद्धि कौ कहै वषानि। मैं मति हीन जुगन कौ कहौ। गुन अनंत हम पार न लहै। जप जिनंद आदीश्वर देव। सुन नरक्रत पद पंकज सेव। जय अजिते सुर गुन हनिधांन। मान रहित मिथ्या तब भान। जयजिन संभव हरै विकार; सुमिरत अभैदान········वार। जय अभिनंदन नंदन वीर गुन गरिष्ट भय भंजन वीर।

अंत—जो तव रही अणुव गंभीर, अति प्रताप कुल रंजन धीर। ता सुत रामदास पर वान। ता सुत अस्तुत करि सुर गान। गोबर गढ़ गिर ऊपर थान। सूर वीर तहं राजा आन। ता आगे चंदन चौधरी। कीरति सब जगमैं विस्तरी। जगति वरहिया गुण गंभीर। अति प्रताप कुल रंजन धीर। ता सुत रामदास परवान ता सुत असली सुरज्ञान। तासुत कुलमंडन परमल्ल वसै आगरेमें अरिसल्ल। ता सम बुद्धि हीन नहिं आन। तिन कीयो चौपई वंध प्रमान। होइ असुद्ध जहां पदहानि। फेरिसंवारी कवियन जानि। वार वार जपै करि जोर। बुध जन मोहि देहु मति खोरि। इति श्री पालचरित्र भाषा संपूर्णम्। समाप्तम्। शुभंभवेत्। मिती कार्तिक वदी १। ननर्ड। लि० लालामदन मोहन अटेर प्रति अटेर के मंदिर की पै तै उतारौ।

विषय—(१) मंगलाचरण, ग्रंथ निर्माण कालः—संवत सोरह सौ उच्चरौ, तापर इक्यावन आगरौ। मास असाढ़ पंहुचै आइ वरषारितु कौ कहौ बढ़ाइ। पाछि उजारी आठैं जानि सुक्कर वार वार परवान। कवि परमल्ल सुद्ध करि चित्त। आरंभौ श्री पालचरित्र।

बब्बर पात साह हौ जहां, ता सुत साह हिमाऊँ तहां। ता सुत अकबर साह प्रधान। सो तप तपै दूसरो भान। ताके राजन कहूं अनीति वसुधा सकल करी सब जीत। ताके राज कथा इह करी—कवि परमल्ल प्रगट विस्तरी। (२) श्री पाल का जन्म, उसके कुष्ठ व्याधि, उसका वनगमन, सिद्धि चक्र व्रत लेना, सागर में डूबना कष्ट का दूर होना, बहुत बड़ा दल पाना, दल का प्रगट करना, पुनः राज्य पाना तथा पुराणों में उसका प्रकट होना।

संख्या २६२. कबीर भानु प्रकाश, रचयिता—परमानन्द दास (दौन्दा, फीरोजपुर समीप मुक्तसर, पंजाब), पत्र—५२०, आकार—१०½ × ७¾ इंच, पंक्ति प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६३६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२५ = १८७८ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० बैजनाथ प्रसाद ब्रह्मभट्ट, अमौसी, डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ।

आदि—अथ लिष्यते ग्रन्थ भानु प्रकाश। प्रथम पूर्वार्द्ध भाग जंबू दीप भरथ खड को सर्व शास्त्रीय धर्मनि कथा वरननं कबीर भानु अस्त संध्या वंदन। (छन्द शिखरि रादि) कवीरं भानुं भा कर निकर ज्ञानं विधि मयं ॥ परस्थाने धीरं जगत गुरु पीरं निधि नयं ॥ महा तेजो रासं वदन स्वदनां सानूप नूपा ॥ परं तापं तापं तदनु जदल दापंत न क्रया ॥१॥ तरं तं तारं तं लहत जन सारं वसुमती ॥ महत्थंया रंतं अकथित अनंतं पसु पती ॥ सुराधी संधी संहि यति मीर पीसं ॥ जग जगे। भवं भावं भंगेर तिर करुना मय पग पगं ॥ २ ॥ जन कं जंटं जं दरस भ्रम भंज सत हितं। निहारं हारंहा तिमिर हर पारंगत छितिं ॥ सती सूतं सातं विलग विलगातं दिन करा। जती भोगं भागं गत विगत भागं किन करा ॥ ३ ॥ प्रजा प्रीड़ा व्रीड़ा दुख घन तिमिर क्रीड़ा महि महा ॥ हत मुद्रा निद्रा समद मन छुद्रा गीत गहा ॥ सतो संगं रंगं वसत विप्र संगं भसं करा ॥ उमंगं अंगं एक समस अनंतं तसकरा ॥ ४ ॥ नमस्कारं कारं कुमर क्रम कारं ककते ववं वंदे भानू भनत भव फंदे वव व्रते ॥ रमं नमे रम्यं सत दर कल्यान करनं ॥ प्रनंम्यं तौ पीष्ट परम परमीष्ट व्रवरनं ॥

अन्त—आरती—आरती कबीर भानु पर कासा। जासु कृपा भ्रम तम हो नासा ॥ आरति साँचे सत गुरु जी की। कुमति विहाय उदै बुधि नीकी ॥ रहै न भर्म अज्ञ रजनी की। लहै परम गति जिनकी आसा ॥ जेहि जेहि सों सत गुरु लषि आया। फेरन सो भौ भटका खाया ॥ संसार विहाय हंस पद पाया। वसे जाय चरनन प्रभु पासा ॥ बूझउ जो सछम वेद की वानी। अंड पिंड गति सो पहचानी ॥ मैं उचरा चर जो वहु वानी। विनु प्रभु को भेंटे भ्रम भासा ॥ × × × इति श्री ग्रन्थ कबीर भानु प्रकाश समाप्तम ॥

विषय—(१) पृ० १ से २२६ तक—कबीर भानु अस्त संध्या वंदन (शिखरणी स्तोत्र)। कबीर भानु का वियोग। कबीर भानु का लोप होना। रात्रि का उद्गम। भक्ति विरहनी का कबीर भानु के वियोग में व्यथित होना। प्रीतम के पास पाती लेकर सुरति दूती को भेजना। दूती का विनय पत्र लेकर चलना। रात्रि में विषयानंद। सर्व कर्म धर्म प्रचार होना। इसी रात्रि में भक्ति विरहिनी को महा उद्वेग एवम् उच्चाटन होना। विरह विलाप

में रात्रि का व्यतीत होना । प्रातः कालीन व्यथा ॥ (२) पृ० २२७ से २३५ तक—सुरति दूती का लौट कर भक्ति विरहिनी को प्रीतम का संदेश देना । प्रभात होने और मन मोहन जी के आने का आशिर्वचन सुनाना । उसको शृंगार करने और भूषणादि से सुसज्जित होने का उपदेश देना, भक्ति का शृंगारादि करके सत गुरु प्रीतम से मिलने की लालसा कर चलना । (३) पृ० २३६ से ४९० तक—प्राणाधार का आगमन । प्रभात स्तोत्र । भुजंग प्रयात अष्टक कह कर प्रभाती और सवैय्या कहना, भक्ति एवम् सत गुरु का विवाह । भक्ति एवम् सत गुरु के संयोग से ज्ञान नाम धारी पुत्र की व्युत्पत्ति । उसके द्वारा भक्ति के शत्रुओं का विनाश । अज्ञान अन्धकार का तिरोभाव, हृदय में प्रकाश का विकाश ॥ (४) पृ० ४९१ से ५२० तक—संसार में दीन धर्म कथा का विख्यात होना । दीन धर्म का लेखा । गृही और साधु धर्म आदि का निर्णय । मध्यान्ह दिन का होना । कबीर भानु महाराज की मध्यान्ह की स्तुति-विनय । कबीर भानु प्रकाश की आरतीआदि के पश्चात् ग्रन्थकार का परिचय ॥ एवम् ग्रन्थ निर्माण कालः—संवत् उन्नीस सौ पैंतीसा । कला एकादशी तिथीसा ॥ मंगल और ज्येष्ठ महीना—तादिन ग्रन्थ समापति कीन्हा ॥ महि पंजाब देश के माहीं । सहर पिरोजपुर एक आही ॥ नम्र मुक्त सर तहँ एक अहई । दौदा ग्राम निकट तेहि कहई ॥ ताहि ग्राम में जब आसीना । भजन ध्यान प्रभु के लौलीना ॥ ग्रन्थ रचन गुरु आज्ञा पाई । लिख रचि धर्म कथा समुदाई ॥ जेते अक्षर लिखे बनाई । जो कोई पढ़ि पढ़ि ताहि मिलाई ॥ सो गुरु सनमुख लेखा भरि है । भिन्न भेद जो कोई करि है ॥

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता ने अपनी रचना में कबीदास को नायक, भक्ति को नायिका एवम् सुरति को दूती मान कर वियोग के व्याज से प्रायः संसार के सभी धर्म एवं संप्रदायादि का वर्णन करते हुए कबीर के सिद्धान्तों का बड़ी उत्तमता से मंडन किया है । अन्य धर्मों का वर्णन करते हुए भी उन्होंने पक्षपात से कार्य नहीं लिया है । जिस प्रकार उन्होंने ईसाई, मूसाई, कुरानी और पुरानी मतों का वर्णन किया है उसी प्रकार अमरीका और यूरोपादि देशों का भी वर्णन किया है । 'हिन्दुस्तान' शब्द की व्याख्या 'मेरु तंत्र' के आधार पर की गई ज्ञात होती है । इस एक ही ग्रन्थ से अनेक धर्म व सम्प्रदाय के सिद्धान्तों और उनके विभागों का ज्ञान हो सकता है । ग्रन्थ उत्तम है । किन्तु लिखा बहुत अशुद्ध है ।

संख्या २६३ ए. बहुरंगीसार, रचयिता—परमानन्द (इटावा), पत्र—१६२, आकार—६ X ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२१०, रूप—प्राचीन, लिपि - नागरी, रचनाकाल—सं० १८९० = १८३३ ई०, लिपिकाल—सं० १९०६ = १८४९ ई०, प्राप्तिस्थान - ठाकुर विजय सिंह रामपुर के, डाकघर—सरौंढ़ा, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश) ।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री गुरु नारायनमः अथ बहुरंगी सार लिख्यते ॥ भजन—संतो कृष्ण धरम औतारा लीला वेद प्रकारा ॥ चोर भक्त को नित चुरावै काम हरन सुख धारा । अग्नि रूप औतार कृष्ण तन छुधा तृषा धर्त सारा ॥ १ ॥ अलस हरन नींद के हरता

मिथुन प्रचुत घर दारा ॥ प्रक्त पती कृष्ण हैं जगपति कामिन के भरतारा ॥ २ ॥ जेती कामिनि कृष्ण पुरुष वर इच्छा रास विहारा। अग्नि कुंड में सवही उज्वल जोति पतिंगा कारा ॥ ३ ॥ अग्नि जोति चन्दा निर दोसी सखी सकल को तारा। परमानन्द कृष्ण उपदेशी निन्दे मूढ़ गवांरा ॥ ४ ॥ दो०—जेती आहुति अग्नि में अग्नि सदा परकाश। धर्त रूप सब सत्य है परमानंद विलास ॥ संतो राम कृष्ण करता है उनही जक्त रचा है ॥ रमन भवन श्री रामचन्द्र को कीड़ा कृष्ण करा है। सतजुग चारी ले अवतारी ब्रह्मा देव तरा है ॥ त्रेता तीनि चीनि सोई प्रभु दसरथ भाव सता है। द्वापर दौसी धरम हेत दिउ असुरनि मारि कहा है। भक्तन के हिरदे में व्यापक कलि में एक रहा है। परमानंद निसानी मानी संभल महल वना है ॥ दो०—संभल मुरादाबाद मेरा मित्र कलंकी रूप। कछू दिना में प्रगटि है परमानंद अनूप ॥

अन्त—होली ज्वाला देवी—चलोरी सखी ज्वाला पूजो री वसंत ऋतु आई होरी ॥ काली दुरगा पूजन संगी भैरव द्वार खरोरी। महाकाल जहँ धूम मचावे जोगिन शोर करोरी ॥ चन्द्र क्षेत्र चमत्कार वीर बर प्याला रंग पियोरी ॥ चखन करो वली वली दे पशु को वंशी मीन हतोरी ॥ जोत रूप माता जग जननी विजया अंक धरोरी ॥ खप्पर खंग गरुड़न की माला रक्त वरन शिव जोरी ॥ ब्रह्म रूप जो शंकर पूंजे चैत्र ब्रह्मा शुभ कोरी ॥ सहस वाहु को रामन मारो परमानंद धरोरी ॥ १ ॥ दो०—अग्नि रूप ज्वाला मुखी दसौ दिसा की माय। रिद्धि सिद्धि दासी खड़ी परमानंद सहाय ॥ मचाई जग में नित नई नई होरी ॥ सुनके कोऊ देउ न खोरी ॥ काम क्रोध के कुंड बने हैं ममता को रंग भरोरी ॥ मचाई ॥ लोभ मोह सवही को गहि गहि बोरत है बर जोरी। आसा तृष्णा जग फगु हारी पीछे फिरत दौरी दौरी ॥ इनसे भागि वचो नहिं कोई लेत है प्राण निचोरी ॥ खेलत बारह मास छऊ रितु लागी है मेरी औ तेरी ॥ खेल फाग कुरंग रूप वत कामिनि करत वर जोरी ॥ इनसे भाग बचो कोउ गुरुजन ब्रह्म रंग डिग डोरी ॥ परमानंद वसु गगन गुफा में शब्द न शोर करोरी ॥ मचाई जग में नित नई नई होरी ॥ इति श्री वहुरंगी सार संपूर्णम् ॥

विषय—इसमें राम कृष्ण के शिक्षाप्रद भजन हैं।

संख्या २६३ बी. बहुरंगीसार, रचयिता—परमानन्द (इटावा), पत्र—१६, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला सीताराम विनोदगंज के, डाकघर—छर्रा, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ वहुरंगी सार ग्रन्थ परमानन्द कृत लिख्यते ॥ वहुरंगी सार का प्रारम्भः ॥ संतो कृष्ण धरम अवतारा। लीला वेद प्रकारा ॥ चोर भक्त को चित्त चुरावै काम हरन सुष धारा ॥ अग्नि रूप अवतार कृष्ण तन छुधा तृषा धर्त सारा ॥ संतों कृष्ण० ॥ आलस हाल नींद के हरता मिथुन प्रचुत घर दारा। प्रक्त पती कृष्ण है जग पति कामिनि के भरतारा ॥ जेती कामिनि कृष्ण पुरुष वर इच्छा रास विहारा ॥ अग्नि कुंड में सवही उज्ज्वल जोति पतिंगा कारा ॥ अग्नि जोति चन्दा निरदोसी सखी सकल को तारा ॥

परमानंद कृष्ण उपदेशी निर्दै मूढ़ गवांरा ॥ दोहा—जेती आहुति अग्नि में अग्नि सदा परकाश । घृत रूप सब सत्य है परमानन्द विलास ॥

अन्त—संतो राम कृष्ण करता है उनहीं जक्त रचा है ॥ संतो० ॥ रमन भवन श्री रामचन्द्र को क्रीड़ा कृष्ण करा है । सत जुग चारी ले औतारी ब्रह्मा देव तरा है ॥ संतो० ॥ त्रेता तीनि चीनि सोई प्रभु दशरथ भाव सता है । द्वापर दौसी धरम हेत दिउ असुरनि मारि कहा है ॥ भक्तन के हिरदे में व्यापक कलि में एक रहा है । परमानन्द निशानी मानी सभल महल वना है ॥ दो०—संभल मुरादाबाद मेरा मित्र कलकी रूप । कछू दिना में प्रगटि हैं परमानंद अनूप ॥ होरी–मचाई जग में नित नई नई होरी सुनके कोऊ देउ न खोरी ॥ काम क्रोध के कुन्ड वने हैं ममता को रंग भरोरी ॥ मचाई० ॥ लोभ मोह सवही को गहि गहि बोरत है बर जोरी ॥ आसा तृष्णा जग फगुहारी पीछे फिरत दौरी दौरी ॥ २ ॥ इनसे भाग वचो नहिं कोई लेत है प्राण निचोरी । खेलत वारह मास छऊ ऋतु लागी है मेरी औ तेरी ॥ ३॥ खेल फाग कुरंग रूप वत कामिनि करत वरजोरी । इनसे भाग वचो कोऊ गुरू जन ब्रह्म रंग डिग डोरी ॥ परमानंद वसु गगन गुफा में शब्द ने शोर करोरी ॥ मचाई जग में नित नई नई होरी ॥ ४ ॥ इति श्री वहुरंगी सार ग्रन्थ संपूर्ण समाप्तः लिखा प्राग दत्त तिवारी भादों सुदी चौदस सं० १९८० वि० ॥

विषय—उपदेश व शिक्षा संबंधी भजन ।

संख्या २६४ ए. उषा चरित्र, रचयिता—परसराम, पत्र—५०, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—८००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७२ = १८१५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवकण्ठ मिश्र गोपामऊ के, डाकघर—गोपामऊ, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ उषा चरित्र लिख्यते ॥ चैत—चैत मास गौरी व्रत होई । संकर त्रिया पूजि सब कोई ॥ बानासुर की राज दुलारी । ऊषा नाम सो प्रान पियारी ॥ विधि संजोग ताके मन आई । सो चलिकै रानी पै जाई ॥ मोकूं विदा देहु जौ माता । हों पूजौं शंकर सुख दाता । रानी विदा कुमरि को कीनी । पुष्प कमल सामग्री दीनी ॥ दूध दीप नैवेद्य लै । संघ सखा दल साथ । फूल दल पाती फल जती । केशर चन्दन हाथ ॥ आई कुंमरि शंकर मठ जहां । उमापती सोहत है तहां ॥ जल आश्रम शंकरि चलि गये । पर्वत संग करीलउ गये ॥ गावैं गंदर्प राग सुजाना । रति अपछरा नृत्त जहँ ठाना ॥ दिन कर मगन महा सुख होई । काम मग्न फूली सब कोई ॥ कुंवरि आइ पूजन जब देखा । सर्व त्राश पिया रंग देखा ॥ कुंवर देख मन में कही धन्य सती पति संग । भये प्रसदि गौरा लिखे आयेउ मंग अनग ॥

अन्त—कपट प्रीति ऐसी कुंवर न कीजै । वचन करौ दुख वहुत न दीजै ॥ सुनी कुवंर कुवंर की रानी । अति सो प्रीति दुःख कर जानी ॥ तवहिं कुंवर भेंटी एक बारी । लई जिवाय विरह की मारी ॥ मिली कुंवर और राज कुमारी । पछिले दुख छिन मांहि बिसारी ॥ सेज सुखे सेन राजकुमारी । उवक्षु सहित सखी निज सारू ॥ दो०—

कुंवर कहै रजधानी । अति सुख रुप अनंत । जो यह कथा निरवारई । कृपा करै भगवंत ॥ दया करौ जादौ नाथ गुसाईं । भुक्ति मुक्ति फल होइ बड़ाई ॥ कहै सुनै संकट नहिं परई । बिछुरे प्रीतम मिलै तेहि वरही ॥ व्याध दरिद्र न आवै नेरे । रन में तिसनहिं आवै हेरे ॥ रूप नींक पावै संसारा । वाधो छुटै सुजत ही वारा ॥ जुर जाड़ा आवै नहिं नेरे । दुष्ट न व्यापै करै बहु तेरे ॥ दो०—परसराम की वीनती । जौन श्रवन सुन लेइ । परम दयाल कृपा करै । प्रभु इतना फल देइ ॥ पुनि ले अपनो इक हौ । अल्पै सतले सोइ । गुन जन समैं सुधारियो । हीन जहां कछु होइ ॥ इति श्री अनिरुद्ध उषा सुपन प्रसंग समाप्तः संवत् १८७२ जेष्ट कृश्न ९ गुरु लिखतं नंद राम ॥

विषय—ऊषा अनिरुद्ध का स्वप्न प्रसंग वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता परसराम थे जैसा इस पद से प्रगट है:—परसुराम की वीनती जौन श्रवन सुनि लेइ । परम दयाल कृपा करै प्रभु इतना फल देइ ॥ लिपिकाल संवत् १८७२ वि० है ।

संख्या २६४ बी. ऊषा चरित्र, रचयिता—परशुराम, पत्र—२०, आकार—८ × ५$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—५५०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—कैथी, रचनाकाल—लगभग १६३० ई०, प्राप्तिस्थान–पं० सीताराम शर्मा, डाकघर—कमूतरी, जिला—आगरा ।

श्री गणेशायन्मः ॥ अथ लिषितं ऊषा चरित्र ॥ कृष्ण कमल लोचन हितकारी । अवध भूप ईश्वर अवतारी ॥ जाको नाम सुनत अघ जाइ । सो प्रभु वरनै सदा घट माहिं ॥ घट घट बसै लषै नहिं जानी । पंडित गन गुन रहे वषानि ॥ प्रेम प्रीति निजु सुःख कहात । चतुर्भुज एकंकर वात ॥ दोहरा ॥ त्रिभुवन पति नागर नवल । जुगल किसोर किसोर । तिहि की जुगति अपार है । कवि बरनै किहि ठौर ॥ जाको मरमु निगम नहि जानै । जासौं मति पकरि तासु ग्रह आनैं ॥ जोग अनेक जोगेश्वर आवैं । करत विचार पार नहि पावैं ॥ गुप्त रुप प्रगटौ सब आइ । गिरगुन एक करौं गुँसाईं ॥ कमल नैन भयो बनवारी । केल कृष्ण संतन हित कारी ॥ अब प्रभु कौ विनयौं कर जोरी । तिहि गति अगम मुहि मति थोरी ॥

अन्त—दूत कहै आये किहि काजा । अनंत बभूत बड़ राजा ॥ तव बोले हरिक... देखा । कुमार एक अटक्यौ तेहि देसा ॥...नाजा हौ चंडी आये । वंधे कुमार तोही दे··· ये ॥ सुनि कैं दूत चकित से रहेयौ । स......जासौ कह्यौ ॥ राजा पूछी कहौ समुझाइ । पुरुष एक उतर्‍यौ आइ ॥ कहै दूत तुम...भुआला । कृष्ण देव आये इहि काला ॥...... रकाज जादौं चढ़ि आये । कटक अनंत सा...प धाए ॥ आए राइ सहत वल जाहै । गज म ...न उठि खुर काहै ॥ प्रवल कटक कछु कही...इ ॥ राज द्वार रह गये रुप छाइ ॥.. ...

विषय—ऊषा अनिरुद्ध के विवाह का वर्णन ।

संख्या २६५ ए. षटरहस्य निरूपण, रचयिता—जन पर्वतदास, पत्र—३०, आकार—१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—८२५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७४० = १६८३ ई०, लिपिकाल—सं०

१८९८ = १८४१ ई०, प्राप्तिस्थान--पं० रामविलास रामनगर के, डाकघर--तालबक्सी, जिला--लखनऊ (उत्तरप्रदेश)।

आदि--श्री गणेशाय नमः अथ पट रहस्य निरूपण लिख्यते ॥ प्रथम ज्योति रहस्य लिख्यते ॥ लाल इन देविन के लागौ पांय ॥ कर जोड़ो पद जोरि लाड़िले विनै करौ सिर नाय ॥ ये हमारि कुल पूज्य भवानी तुम्हैं उचित हिआं आये ॥ परमानंद होय दूनौ दिसि इनके पूजि पुजाये ॥ २ ॥ नाईं रीझै जप तप संजम ना कछु गाये वजाये। केवल विनै मात्र कर जोरै द्रवती सरल सुभाये ॥ ३ ॥ सर्वों विघ्न प्रसन्न मोद प्रद कह तिहि वनि सति भाये। वेगि पांय परि दीन भाव धरि करि है क्रोध विल माये ॥ ४ ॥ प्रभु हंसि कहा कैसी है देवी वैठी बदन दुराये। क्रोध प्रसन्न जानि कस परि है विना सरूप लखाये ॥ ५ ॥ यह हमारि ग्रह गोचर माया द्रवहिं न अंग दिषाये ॥ दूरि रहौ जनि छुयेहु धोपेहू महँ हो तुम विना नहाये ॥ बरबस राम गहो घूंघट पट हमरी पदुप चुराये। इन देविन के भाग्य सराहौ दोऊ पद लेत चढ़ाये ॥ हमका काह ठगौ मृग नैनी तुम्हैं ठगन हम आये। जन पर्वत मुसकाय कहत भई लालन पढ़े पढ़ाये ॥

अन्त—कोउ वहु श्रुति सर्वज्ञ कहै कोउ सता नंद तब पायो। क्यौं कहै कौतुकी नारद तिन सब भेद वतायो ॥ नापित गति सुनि भूप कौतुकी आतुर तिन्हे बुलायो। चित्र चिन्ह तत्काल मिटै नहिं जद्यपि धोय छुड़ायो ॥ रचना देषि हंसे सभा मुनि अरु सब सकल वराता ॥ मचो हांस आनन्द कुलाहल समुझि परै नहिं वाता ॥ इहि प्रकार आनन्द दुहू दिसि परम विलास सुहावा ॥ सज्जन समुझि लेउ अपने मन यथा स्वमति मैं गावा ॥ जस मम हृदै प्रेरना करि अरु जस मम मतिहिं लखायो। परवत दास संत पद रज सिर राखि चरित यह गायो ॥ दो०-जे सुनि हैं करि प्रीति यह जे कहिहैं करि भाव। तिनका राम विलास यह करि है तुरत प्रसाव ॥ सीताराम रहस्य यह भक्त रसिक सुख मूल। ध्यान मनन करिहैं जेइ तिन्हें दंपति अनुकूल ॥ भक्ति हास्य श्रृंगार रस त्रय रस मिश्रत स्वाद। जे पढ़हैं जनिहैं तेई सिय रघुवीर प्रसाद ॥ कहै सुनै जे ब्याह मा सावधान करि भाव। सांत होइ सर्वों सुभ दिन दिन मंगल चाव ॥ इति श्री पट रहस्य निरूपण संपूर्ण समाप्तः लिखतं शिव दीनपांडे सं० १८९८ वि० चैत्र कृष्ण द्वादसी ॥

विषय—श्री राम जी के विवाह के रहस्य (ज्योति रहस्य, बाती रहस्य, लहकौरि रहस्य, राम कलेवा रहस्य, चतुर भगिनी रहस्य) वर्णन।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता बाबा पर्वत दास थे। यह अठारहवीं शताब्दी में हुए थे। ग्रन्थ निर्माण काल संवत् १७४० वि० और लिपिकाल संवत् १८९८ वि० है।

संख्या २६५ बी. पट रहस्य, रचयिता—पर्वतदास, पत्र—२५, आकार—१४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—७७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९११ = १८५४ ई०, प्राप्तिस्थान—भगत रामदास—सीरपुर, डाकघर—बारहद्वारी, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ षट रहस्य लिख्यते ॥ प्रथम ज्योति रहस्य ॥ लाल इन देविन के लागौ पाय। कर जोरों पद जोरि लाड़ले विनै करौ सिर नाय ॥ हे हमारि कुल पूज्य भवानी तुम्हैं उचित ह्यां आये। परमानंद होइ दीनों दिसि इनके पूजि पुजाये ॥ नाई रीझै जप तप संजम ना कछु गाये वजाये, केवल विनय मात्र कर जोरत द्रवती सरल सुभाये ॥ सर्वो विघ्न प्रसन्न मोद प्रद कह तिहु वनि सत भाये। वेगि पांय परि दीन भाव धरि करि है क्रोध विलमाये। प्रभु हंसि कहा कैसी है देवी वैठी वदन दुराये ॥ क्रोध प्रसन्नि जानि कस परिहै विना सरूप लखाये। यह हमारि सह गोचर माया द्रवहि न अंग दिखाये ॥ दूरि रहौ जनि छुयेहु धोखेहु तुम हौ विना नहाये। वरवस राम गह्यो घूंघट पट हमरी पटुप चुराये ॥ इन देविन के भाग्य सराहौ द्वौ पद लेत चुराये ॥ हमका काह ठगौ मृग नैनी तुम्हें ठगन हम आये। जन पर्वत मुसकाइ कहत भई लालन पढ़े पढ़ाये ॥

अन्त—अथ चतुर भगनी रहस्य। हे दसरथ के पूतौ का कछु नेंग हमारा। मैं तुम्हरे पुरिखन कै वंदी विदित सकल संसारा ॥ जवते वसिष्ठ पुरोहित भे तबते मैं लीन भटाई। केवल तुम्हरे हेत लाड़िले मैं यह वृत्ति उठाई ॥ यह इच्छाकु वंस में मेरा अन्य भाषि नहिं खाऊं। तेहि पर अवस अवध गादी तजि और कहूं नहिं जाऊं ॥ पिता तुम्हारे वहुत कछु दीना राव वहुत कछु पावा। तुमसी धरहिं संपदा पाई आग्रह काह न आवा ॥ और और के नेंग हैं हम एकै यह पावैं। फिर कवहूं नहिं जांहीं काहु के घर बैठे गुन गावैं ॥ व्याहि प्रथम आवैं जव दुलहिन हमैं नेगु दै दासुन। तव भोगे सेज्यादिक सौपिन पूंछि लेउ निज सासुन ॥ सुनि परिहार अनरगल अक्षर घूंघट विच मुसकानी। मानहु चारि विधु भये अरुन घन ऊपर प्रभा यह रानी ॥ तव तिन पुरानी हंसि वोली सत्य कहै यह भाटिन। जो मागै सो देउ प्रीति जुत यह हमारि कुल पाठिन ॥ अब मैं पाठ चुकिउं ठकुरैनी जो हमका इन चीन्हा। सुन्दर बदन सुकोमल नैनन मोहिं चितै हंसि दीन्हा ॥ अब चहिहौं तब मांगि लेउ मैं मोर कहू नहिं जाई। जस जस इनकी वृद्धि होइगी तस बर बड़ी सवाई ॥ सदा अचल अहि बात रहै होइ होइ पूर धुर धारी। प्राण तें अधिक पतिन का प्यारी होय असीस हमारी ॥ जन पर वत जे परम उपासक रस माधुर्जहि जाना। रहस्य ध्यान ते जनित पाउ सुख होइहि मंगल ताना ॥ सीता राम विवाह सुभग यह सवका परम हुलासा। राम कृपा सो रहस्य रहस्य कह यह सोजन पर्वत दासा ॥ इति श्री रहस्य संपूर्ण संवत् १९११ श्रावण शुक्ल बुधवार तिथि दुतिया लिखा मुसदी घूरे लाल गुजौली ॥ राम राम

विषय—इसमें श्री राम और सीता आदि चारों भाइयों के विवाह, राम कलेवा आदि षट रहस्य लिखे हैं।

संख्या २६५ सी. जानुकी व्याह चतुर्थरहस्य, रचयिता—पर्वतदास (ओड़छा), पत्र—४, आकार—१३ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्) ८२, लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—८२, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, ठाकुर भगवान सिंह, सासनी, डाकघर—सासनी, जिला—अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ जानुकी व्याह चतुर्थ रहस्य लिख्यते ॥ प्रथम जोति रहस्य लिख्यते ॥ लाल इन देविन के लागौ पाय। कर जोड़ों पद जोरि लाड़ले विनय करौ

सिर नाये । ये हमारि कुल पूज्य भवानी तुम्हैं उचित ह्यां आये ॥ परमानंद होय दोनों दिसि इनके पूजि पुजाये । ना ई रीझै जप तप संजम ना कछु गाय बजाये ॥ केवल विनै मात्र कर जोरत द्रवती सरल सुभाये ॥ सर्वौ विघ्न प्रसन्न मोद प्रद कहति हवनि सति भाये ॥ बेगि पांय परि दीन भाव धरि करि है क्रोध विल माये । प्रभु हंसि कहा कैसी है देवी बैठी वदन दुराये । क्रोध प्रसन्नि जानि कस परि है बिना स्वरूप लखाये । यह हमारि ग्रह गोचरि माया द्रवहि न अंग दिखाये ॥ दूरि रहौ जनि छुयेहु धोखेहु तुम हौ बिना नहाये । बर बस राम गह्यो घूंघट पट हमरी पदुप चुराये । इन देविन के भाग्य सराहौं द्वौ पद लेत चढ़ाये ॥ हमका काह ठगौ मृग नैन्यू तुम्हैं ठगन हम आये । जन पर्वत मुस काइ कहत भइँ लालन पढ़े पढ़ाये ॥

अंत—जानकी घेरे है सखी सुभगिनी संग तरुनी तरुन चपल बरनी मन हरनी मृदु अंग मसला करैं । परसपर हिल मिल एक एक को घेरें ॥ नाम कहौं निजनिज भरतन के चंचल दृग करि हेरैं ॥ अंगुलि कोरैं वसन अजोरैं दीठि करै सब नारी । नारि सुआसिनि सबै लेत भईं रह गई जनक दुलारी ॥ प्रथम कह्यौ तीनिउ भगनिनि का कहौ निज निज पति नामा । सिय सकोच ते कहि न सकै कछु धरि झिझ कोरैं वामा ॥ अब कस सकुच करौ अवनी मुख कहौ मंद मुस काई । गाढ़े गही नारि संगति तिन नहीं कछु जतन विसाई ॥ हम सन हठि हठि नाम कहायो दिन लीन्हें नहिं वाची । तुम नोपी कस करौ सयानी हय नाही अस कांची । एक कहै अस नाहिं गमनि है लीजै संग लिवाई । आवनि वेगि पठै जनवासे जहँ वतरो समुदाई ॥ श्रुति कीरति तब कह्यो शत्रुहन भरत मांडवी काहा । मंद स्वरन तब कह्यो उरमिला लखन हमारे नांहा ॥ धरि येक हास कर्‌यो सव जुवतिन तुरत सिया गहि लीन्हा ॥ तुमहूं नाम कह्यो निज पति को जो यह कौतुक कीन्हा ॥ सकुचि सिया कह मैं नहिं जानति कहै सखी यह बानी । पाले परीहु महा कठिनन के ना कछु चली सयानी ॥ तब सिय कहै नाम निज पति को सुनहु सकल सषि वृन्दा । रघुनायक रघुवर रघुनंदन रघुकुल मनि रघु चंदा । सखी कहै हमहीं बड़ी चातुर तिन्हैं कहा वह लावो । तौन नाम कस गोयहु लाड़ली जौन वशिष्ठ धरायो ॥ छवि आगर करुण सुख सागर बल बुधि अरु गुन धामा । आदि रकार मकार अंतह यह निज पति कर नामा ॥ सखी कहै हमहूं अस जाननि राम नाम तव कंता । पै तुम्हरे मुष ते निकसाउव यहै वात है तंता ॥ तेहि अवसर नृप जनक आइगे सकल रही सकुचाई । जाहु सिया तुम्हें मात वुलावै दासी चली लिवाई ॥ सीताकी रहस्य जे गावैं सुनै उर करि वड़ी हुलासा । हुइहै परम सुषी नारी नर गावत परवत दासा ॥ इति श्री जानुकी व्याह रहस्य समाप्तः लिषतं राम दास मुंसी चैत बदी तेरस संवत् १९०० वि० ।

विषय—श्रीरामजानकी के विवाह के छः रहस्यों (ज्योति रहस्य, वाती रहस्य, लहकौरि रहस्य, जानकी रहस्य, आदि) का वर्णन ।

संख्या २६५ डी. रामकलेवा रहस्य, रचयिता—पर्वतादास (ओरछा), पत्र—२०, आकार—१३ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४६५, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर भगवान सिंह-सासनी, डाकघर—सासनी, जिला—अलीगढ़ ।

आदि— श्रीगणेशायनमः अथ रामकलेवा रहस्य लिख्ये ।। अथ कलेवा रहस्य रागिनी काफी ॥ सुनिये रहस्य या श्री राघो सुख दानि । प्रात समय रवि उदित भये सति नौवा जनक पठायो । चारिउ कुँवरि राउ दशरथ के तुरत बोलि लै आयो ॥ गवनित नौवा गा जनमासे नृप दशरथ के ठाईं । चारिउ कुँवर महा कौशल बर चले कलेवा खाई ॥ सुनि नृप सखा अनुज जुत रामै आतुर लिय उर लाई । जाउ सकल मिलि खान कलेवा पठये जनक बोलाई ॥ पितु अनुसासन पाय कृपा निधि चलिभे चारिउ भाई । सम वे राजकुमार छवीले ते सब चले लिवाई ॥ कोउ स्यन्दन कोउ तुरंगन आपु रुचिर सुख पाला । अनुज-सहित लसत रघुनंदन कोटि मदन मद घाला ॥ स्यंद नादि सह भ्राजत अदभुत परम विचित्रित कीन्हे । जग मगात सब जड़ित जड़ापन दिनकर परत न चीन्हे ॥ गोमुष आदि दुंदभी वाजत पणवं सरस सहनाई । आवत जान राम कहं सखियां गली सुगंध सिचाई ॥

अंत—येहि प्रकार सुनि वचन सखा के भूप सखी मुसकाने । औरौ जे सब वैठे सभासद तेउ हूं से सुख साने ॥ कोउ वहु श्रुति सर्वज्ञ कहैं कोऊ सतानंद तव पायो । क्यों कहै परम कौतुकी नारद तिन सव भेद वतायो ॥ नापित गति सुन भूप कौतुकी आतुर तिन्हें वुलायो ॥ चित्र चिन्ह तत्काल मिटे नहिं जद्यपि धोय छुड़ायो ॥ रचना देखि हंसे सभा पुनि अरु सव सकल बराता । मच्यो हास आनन्द कोलाहल समुझि परै नहिं वाता ॥ एहि प्रकार आनन्द दुहू दिशि परम विलास सोहावा । सज्जन समुझि लेउ अपने मन यथा सुमति भै गावा ॥ जस मम हृदै प्रेरना करि अरु जस मम मतिहि लखायो । पर्वत दास संत पद रज सिर राखि चरित यह गायो ॥ दो०—जे सुनिहैं करि प्रीति यह जे कहिहैं करि भाव । तिन कहे राम विलास यह करिहैं तुरत प्रसाव ॥ सीताराम रहस्य यह भक्ति रसिक सुख मूल । ध्यान मनन करिहैं जेई तिन्ह दंपति अनुकूल ॥ भक्ति हास्य श्रृंगार रस त्रय रस मिश्रित स्वाद । जे पढ़ैं जनिहैं तेई सिय रघुवीर प्रसाद ॥ कहैं सुनैं जे व्याह या सावधान करि भाव । सांत होय सर्वोशुभ दिन दिन मंगल चाव ॥ इति श्री रामकलेवा रहस्य पर्वत दास कृत संपूर्ण समाप्तः ॥ लिखतं रान दास मुंसी चैत्र बदी द्वादशी संवत १९०० वि० राम राम राम—

विषय—१ पृष्ठ से २ पृष्ठ तक—कलेवा के लिये राम आदि चारों भाइयों का जनक के मंदिर जाना आदि । पृष्ठ २ से ३ तक—भोजन तैय्यार होना और जेवनार के लिये महल में चारों भाइयों को बुलाना ॥ पृष्ठ ४ से ६ तक—चारों भाइयों का जीमना और सखियों का गारी गाना आदि । पृष्ठ ७ से १० तक—जेवनार जीमने के पश्चात् पान आदि खाना और चारों ओर से सखियों का घेर कर बैठना और परस्पर हास विलास करना ।। पृष्ठ ११ से १५ तक—सखियों का हंसी दिल्लगी करना और परस्पर के उत्तर प्रति उत्तर ॥ पृष्ठ १६ से १९ तक—राम लक्ष्मण भरत शत्रुध्न आदि का सरहज के महिल में जाकर हास विलास उत्तर प्रति उत्तर देना पृष्ठ २० से २४ तक—सरहज के मंदिर से राज समाज में जाना और कविका ग्रन्थ महिमा वर्णन करना आदि लिखा है । इसमें २१ विश्राम हैं ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता पर्वत दास संत थे जो संवत् १७२१ में हुए हैं । निर्माण काल का पता नहीं । लिपि काल संवत् १९०० वि० है ।

संख्या २६६ ए. रणसागर, रचयिता—पातीराम (सरहैदी), कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—१२ X ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—४६२, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री जयदेव मिश्र, ग्राम—सरहैदी, डाकघर—जगनेरा, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—अैसे अमृत वचनि सुनि, मुदित भये मनमांहि। आपस लै तवही चले, निज राजनु परछाहि। चौपाई—तिहि औसर नारद रिषि आऐ, परम भगत सबके मन भाए। तिनकौ हरि जू आदर कीनो। नमस्कार करि सादर लीनौ। तिन अैसी विधि वैन बतायो, जिनके सुनै परम सुख पायो। पूछन लगै तिनै सुख दाता। सकल पंडु पुत्रन की बाता। दुर्जोधन है अति अनराइ। उनको होत सदा दुख दाइ। कैसी रीति रहैं तब ठाँऊ, कहौं केद रिषि राज गुसाई। नारद कही सुन हो भगवाना। अलख निरंजन सबके प्राना। तुम मोसों पूछत यह वाता। मेरे रोम उठे सब गाता। सोरठा—धरत तुम्हारो ध्यान, सकल जीव संसार के। सुनहु श्री भगवान, पातीराम नारद कहत।

अन्त—फिरि निकुल प्रचारैं वचन उचारैं आयसुमोंको दीजे ये जू। ये जू सबकौ रन मारौ कटक संहारौ नृपति देव नहिं कीजे ये जू। देखौ मम काजू पोरख आजू भूमि पलटि सब लीजे ये जू। वनकू नहीं जइयै घर ही रहिये कौरक को बल लीजे ये जू। राजा समुझावै वचन सुनावै नकुल रोस नहीं कीजे ये जू। तुम पोरिख ताइ कहि न जाइ, संरि वरि कौनहूं दीजे ये जू। दोहा—द्दग भरि राजा यों कही, हौनि मिटी न जाइ, अनुजन की भुज पकरि कै, ग्रह कूं चले लवाइ। सभा यह वहित करिं सुनै जो कोइ नर नारी। मोक्ष लाभ और अरथ ध्रम मिलहीं पदारथ चारि सब पतितन तै पतित हौं, बुधि हीन तै हीन प्रभु को जस कैसे कहूं मैं दीनन मैं दीन। सिसु पर पित हितु नहि तजै, परै कोट तकसीर पातीराम की रक्ष करि, तैसे ही जदुवीर। इति श्री महा भारत पुराने भाषा रण सागर दुज पाती राम कृत राजा जुधिष्टिर वचन हारि वरनो नाम आवा दशोध्याय ॥ १८ ॥

विषय—महाभारत के सभापर्व का पद्यात्मक अनुवाद।

संख्या २६६ बी. पातीराम के भजन, रचयिता—पातीराम (सरैंधी), पत्र—११०, आकार—९ X ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५२०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री सोनपाल पारासर, ग्राम—सरैंधी, डाकघर—जगनेर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशायन्मः। श्री सरस्वतै नमः। श्री भजन गणेश जी का। टेक०—जोई गनेश मनावैं जा जग में। रिद्धि सिद्धि सुख सम्पति सवरी चारि पदारथ पावै। माता पारवती के लाड़ले दुलारे कुंमार देवता वन्दना करैं कर जोरें बार बार। दालिद्र कै खोपरे को फोर करैं धार धार जी, जाके नाम लेत कट जात पातक पहार। पांच पांच पेड़ रिद्धि नाम के चले अगार रूप हैं अनादि गणपति जू के अवतार। चारि वेद जस गावैं॥ टेक०। एक दयावन्त दूजे चारि भुज चक्रधारी माथे पै सिंदूर सीस पे मुकट धारी। कन्धे में जनेऊ

गल मोतिन की माला डारी । केसरि कस्तूरी खौरि चंदन की अति प्यारी धूप दीप चांवर चढ़ावै सब नर नारी । आसन अचल और मूसे पै असवारी । तापै विघन टरावै । जग में जोई० टेक । सम्भु और पारवती को ब्रह्मा ने विवाह कियो मात पिता दोउ ने गणेश पैलें पूज कियो । जाई परताप तें सुहाग को आचल कियो । सुमिरि गनेस देवतन अमृत पियो । रैयत बंचै है पर रंचक न जाय दियो, इन्द्र ने सुमिरि कामधेनु कल्प वृक्ष लियो । रम्भा रोज नचावै । जग में जोई गणेश मनावै ।

अंत—परे हैं मूर्छा खाय भारी । व्याकुल भरत उठे आसन ते, भुज भर लये उठाय । टेक । हिये से लगाय पुचकारत भरत भाई । को हों तुम कपि नानै सुमिरै है रघुराई । हाय २ मोपै आजु कैसी मति बनि आई इत रामचंद्र जी को जाके मैंने वान दीयो । एक भयो अजर और दूसरे कलंक लीयो । विधि ने विचारि मैं तो केकयी को सुत कीयो औजस बधौ अघाय भारी । मेरे पीछे जानकी जी लक्ष्मन बन गये । मेरे पीछे हमारे तात जी ने प्रान दये । मेरे पीछे गुरु मात आतीन कूँ दुख भये । सब से कठिन दुःख आज तो भयो है मोकूं । मारग चलत वीर वानु छालि दियो मोकूं ॥ उडेगा अनस भारी जाइ कौन विधि रोकूं । मैं भयो कुटिल अघाय भारी । कुमति कलंक कोटि मैंई भयो अजुध्या में, मेरे पीछे मेरे स्वामी बनवसि दुःख पावै । बिनयै विपति हम ने कहू न काम न आवै जी । लागत ही वान बीर मूर्छा भई है तोय ॥ विमुख प्रभु के चरनन सों कियो है मोय । जे अपराध मेरी कौन विधि माफ होय । भइया उठि समझाय टेक० ॥ व्याकुल भरत हनुमान जी पै फेरे हाथ । कै तो तुम्हारी मूर्छा जगे वीर कपि तात । ना तो तिहारे संग आज मेरेउ प्रान जात । इतनी सुनत हनुमान वीर बैठे भये । राम राम जपन हिये मैं सावधान भये ॥ पातीराम भरत ने हनुमान गह लये ॥ भेंटत प्रेम बढ़ाय ॥

विषय—गणेश, शारदा, राजा हरिश्चंद्र, परीक्षित, ध्रुव, सुदामा, रावण युद्ध और आत्मज्ञान पर भजन ।

संख्या २६७. रजस्वला वैद्यक, रचयिता—पतितदास, पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१६, रूप—प्राचीन, पद्य गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९० = १८३३ ई०, लिपिकाल—सं० १९१२ = १८५५ ई०, प्राप्तिस्थान—नारायणदास—इटौंरा, जिला—लखनऊ (उत्तरप्रदेश) ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ रजस्वला रोग दोष षष्टो प्रयोग विधि लिख्यते ॥ दोहा—गुरु शरण धर्म व्रत संजम कै मिटे जीव कै दोष । दास पतित विन छल तजै कौन करै संतोष ॥ चौ०—षट तरह के वांझ कै दोषा । गहि कै करी छोड़ि सब रोषा ॥ भली बात यह कहौं बुझाई जीवन को सुख अपनि वड़ाई ॥ अथ नारी कै उलटा कमल होई । तेहिते बीज गहति नहिं कोई ॥ सो पारिष रदन और सीर पिराई । रजस्वला समै सो लघु भाई ॥ सो अस्नान के रोज व्रत करै प्यारी । वेदोक्त व्रत औ पूजा धारी ॥ अथ ॥ सो लाली गऊ ओ लाले वस्त्र देई । सर्वो लालै संकल्प कै कैसो सेई ॥ प्रीति प्रतीति वढ़ाई दान करेई । व्रत नेम जुत दीन होइ फल लेई ॥ तब भोरे भात औ मूंग की दारि मृचि औ घीव ये चारौ

चीज और यही पूजा के सब चीज मिलाय खाई औ भोग समै नारी सीधी लंम्बी होइ कै भोग करै जिससे कमल सीधो रहै गर्भ रहै धरिये में बीज पहुँचै ॥

अन्त—अथ आयु विधि । जेहि मानुष को नापै तेहि के अंगुल की परमान हैं । जो नर वामन अंगुल का होइ सो देव रूप है निज गानी १ मिथ्या अहारी होइ । और अस्सी अंगुल का महा कुटिल कूर जानौ ९० अंगुल वाले की उमरि ३० की और ९० अंगुल से आगे अंगुल पीछे ५ वरष वढ़त है । सौ लै औ सौ अंगुल खोले की उमिरि ८० बरस की जानौं और १०० आगे होइ तो अंगुल पीछे सात सात बरस बढ़ै सो उमिरि ११० वरसि कै और ११० अंगुल कै होइ तो १५० बरस कै उमरि जानव और ११० अंगुल से १५० आगे अंगुल पीछे दस दस वरस बढ़त है उमिरि सो जानब १२० अंगुल से आगे और बड़ा होइ सो गुन मैं कहां लौ कहौं ॥ दोहा—देवता दैत्य राक्षस सब हैं वह औ कछु नाहिं । दास पतित मत गूढ़ है । या समुझि लेउ मन मांहि ॥ गुन दोष औ सुख दुख भल कै कहब विचारि । दास पतित धर्म वर्त गहो रक्षक श्री मुरारि ॥ इति श्री रजस्वला रोग दोष निवारण नाम ग्रन्थ संपूर्ण समाप्तः लिखतं शिव विलास पांडे संवत १९१२ वि० माघ मासे शुक्ल पक्षे त्रियोदशी ॥

विषय—इस रजस्वला ग्रन्थ में बांझ स्त्रियों के लक्षण, रोग और उनके उपचारों का वर्णन है ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता बाबा पतितदास थे । ग्रन्थ का निर्माण काल संवत् १८९० बि० और लिपिकाल सं० १९१२ वि० है ॥

संख्या २६८ ए. विवेक सार, रचयिता—पतितदास, पत्र—४०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८०, रूप—प्राचीन, लिपि—कैथी, लिपिकाल—सं० १९३९ = १८८२ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला जानकी प्रसाद मुखतार, बाबू विहारीलाल नम्बरदार समेरी, डाकघर—नगराम, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ पोथी विवेकसार लिष्यते वर्णौ रवरा सुर पन्नगा । गण गंधर्व नराच । प्रसीद मे पुनः पुनः अक्षरं सुद्धिं कुरुष्य मम् ॥ १ ॥ मम मतिं वुद्धिं तुक्षच । ज्ञान ध्यानेस्वंदे नात् ॥ गुरु प्रसादे न कथं हरि चरचा सुलभं यः ॥ २ ॥ स्वजनं सुख पदायः पाखंडिना निंदंक च ॥ शुभा शुभ संग्रह यां न गहति न्यार्था पथं ॥ दोहा ॥ अरे गँवार पीछे रुपक समुझो वहुत सँगार । पतिता नंद की सीख यह उतरि चलौ भव पार ॥ १ ॥

अन्त—वर्न भेष सुनि देश के ज्ञाना ॥ आत्म दरसी के कहै पहिचाना ॥ ब्राह्मण दौनौं सुने दिखंडी पाँची ॥ भीतर नीचे तापर लाली राँची ॥ बेंडी खंडी द्वै लाली जानी ॥ क्षत्री के सुपेदी तापर लाली मानी ॥ वैश्य मध्य नीचे वेंड़ी पेरी ॥ सदु लाली तापर सुपेद दे दै देरी ॥ इतरी जीउ मध्य में काली देई दूनों केर माथे सब कीयै कै सेई ॥ त्यागी को कछु नहीं । सब राखै चहैं मुँड़ाय ॥ कषाय वस्त्र भल गहें से सूर वीर ॥ इति श्री स्वामी

पतित पावन और शिष्य संवादे सर्व न्याय और अपने भेष के गहन गाहन संपूर्ण ।। सुभ मस्तु ॥ संवत् १९३९ ॥ मिती श्रावण आदिक कृष्णा १४ ॥

विषय—(१)—गुरु शिष्य संवाद के व्याज से साधु सन्यासी आदि के लक्षण और उपदेश संबंधी पद्य ।

संख्या २६८ बी. पतित पावनदास की कविता, रचयिता—पतितपावन चकौली, पत्र—२२५, आकार—८¾ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३७५, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—कैथी, प्राप्तिस्थान—मुंशी जानकी प्रसाद, मुखतार, बाबू बिहारीलाल नम्बरदार–समेसी, डाकघर—नगराम, जिला—लखनऊ ।

आदि—कहता पतित वचोगे तवहीं । हरि कै दास में हरि की हरिनी ॥ दासिहि दास्य भेद नहीं एकौ वाकी महिमा यन की करनी ।। १ ।। विन धर शीस जगत धरि खायौ खाय पंचानमस गिरधरनी । मिरनी पाय दोस मोहि लागै नाम ब्रह्म द्वौ बरनी ॥ २ ॥ हरि चाहैं इतो का करैं कोई वने वने में रहे रहे च‍ धरनी । हो यै चरनन पानि भरनी ॥८१०॥ का करिवो जव जम लूटि लई नगरी । अवहीं तो कोट मवासी वइठे का करिहौ मग परिहौ सकरी ।। १ ।। जादिन दूत कोटि लेइहिं घेरी तादिन सुकिहौ कौनी कोठरी । वजाइ नगारे पकरि भँगइहैं तवना कोई बांह तोर पकरी ॥ २ ।। ताते मूढ़ गहउ करि सरनहीं होइहौ पार सागर भौ तपरी । दास पतित प्रभु मन समुझावैं मानौ मोरि सकल तोरसुधरी ।। ८११ ।।

अन्त—अवधू सुनियो जाति हमारी ।। छत्री कुल में गाँउ चकौली जहँ वाधेउ छुरी कटारी । ज्ञान ध्यान पितु दियेउ सूरता जननी दिढ़ता दै दुष्टन मारी ।। असरफपुर है मात के नहइयर जहँभा चेत करारि । गाँव रिठुरी आसत गुरु भेंट्यौ जवसे सरण सिधारी ॥ चिन्ता भरम छूटि सब संसै सँग सूतें गोड़ पसारे । दास पतित भजु अलप निरंजन आवागमन को टारि ॥ × × ×

विषय—(१) पृ० १ से ४० तक—चेतावनी, गुरु महिमा, कर्त्ता निरुपण तथा विनयादि, योग विधान और जाप एवं हिन्दूमुस्लिसभ्रम। (२) पृ० ४१ से ११६ तक—गारी, साधु उपदेश, देवी से विनय, विवेक, मन की चंचलता और विनय तथा स्मरण । (३) पृ० ११७ से १९८ तक—ध्यान, सतगुरु, मन की भूल, होली, गुरु माहात्म्य, भजन-भाव और कवि परिचय । (४) पृ० १९९ से २२५ तक—गिरिजा-शंकर संबंधी भजन, जगन्नाथ संबंधी भजन, तृष्णा, दुनियाँ की स्वार्थान्धता, आत्मदर्शी वर्णन राम नाम माहात्म्य विनय तथा दीनता

संख्या २६९ ए. परमपहेली, रचयिता—प्राणनाथ, पत्र—३६, आकार—३¾ × ३¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२६, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—मुंशी बंशीधर, मुहम्मदपूर, डाकघर—अमैठी, जिला—लखनऊ ।

आदि—जो पीव की इश्क सों प्रीति । देषी इसक की ऐसी रीति ॥ विना इसक नाहीं परतीति ।। ११ ॥ इसक निहचै मिलावै पीव । विना इसक न रहे याको जीव ॥ ब्रह्म सिष्टि की ऐही पहचान । आतम इसकै के गलतान ॥ १२ ।। इसक याहि धनी ए वताया । इसक

याही सिष्ट गाया ।। इसक याही में समाया । इसक याही सिष्टे चित्त लाया ।। १३ ॥ इसक पिया को बतावै विलास । इसक लै चलै पीव के पास ।। इसक मिलै दरसन्न । इसक न होए विना सोहागिन्न ।। १४ ॥ इसक ब्रह्म सिस्ट जानैं ब्रह्म सिस्टएही ब्रात मानै ।। खास रुहो को एही खांन । इन अरवाहों को एही पान ॥ १५ ॥

अन्त—जव प्रेम हुआ प्रव्वल । अंग आया धाम का वल । तुम पुंजिन जानों कोई । विना सोहागिन प्रेम न होई । प्रेम खोल देवे सव द्वार । पारै के पार जो पार । प्रेम धाम धनी को विचार । प्रेम सव अंगों सिरदार ॥ ईसके में पोंह चाया । ईस के धाम में ले वैठाया । इसके अन्तर आखें खुलाई । धनी साथ में ला देखाई ।। मेहे मत कहे प्रेम समान । तुम दूजा जिन कोई जान । लेव छरंग ते घर आऐ । पीया प्रेमैं कंठ लगाऐ ॥ ६६ ।।

विषय—प्रेम का वर्णन ।

संख्या २६६ बी. श्री धामकी पहेली, रचयिता—प्राणनाथ, पत्र—१४४, आकार ३$\frac{3}{4}$ × ३$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—मुंशी बंशीधर, मुहम्मदपुर, डाकघर—अमेठी, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्री धाम की पहेली वरन बनी ।। मंगला चरण अथे लिष्यते ॥ ब्रह्म सिस्ट लीजीओ । हारे सैंया ऐहो अपना जीवंन ।। सषी मेरी जो है मूल वतंन । सास्त्र सवद मात्र जो वांनी ।। ताको कलस वांनी । सवदा तीत ताको भी कलसहू ओ अषंड को ॥ तापर धुजा धरुं तिर्न थेरहीत ।। मगज बेद कतवे के ।। बाँधे हूते वचंन आद करके अवलों ॥ सषी मेरी कघहूं न खोले किंन ॥ सुपंन वैकुंठ लौं ।। या निरंजंन निराकार ।। सो क्यौं सुने फो उलंघ के ॥ सषी मेरी क्यों कर लेवे पार ॥ सुपंन वुध अटकल सों ॥ बेद कतेव षोजे जिंन मग जन पाया मांहेका वांधे मा ऐने बगे तिन सातु वोले इनं जुबां ॥ गावे सवदा तीत वेहद ॥ पर काहा करे वुध मोह की ।। आंगेन चले सबद पाँच तत्व मोह अहंकार ॥ चौदह लोक त्रीगुन ॥ ऐ सुन द्वैत जो लेपड़ी ॥ निराकार निरंजंन सुन ॥ प्रक्तनी माहा प्रले हो वही ।।

अंत—याद करो सोई सायेत ए जी वैठ के मांग्या जित स्यांम श्यांमा जी साथ सो भिन क्यौं न देषो अंतर गत पीछला चार घड़ी दिन जब ऐ सोई घड़ी हे अब याद करो जो मै कह्या सब निंद छोड़ी जी मागी नव जाद करो धनी को सरुप श्री स्यांमा जी रुप अनूप याद करो सोई सनेह साथ करत मिनो मिने जेह सुष सैयाँ लेवे नित अंग आतंम मजो उपजन रस प्रेम सरुप चहे चित कै विधि रंग खेलत वुध जगत तले जगावती ।। सुष मूल वतंन देषा वली प्रेम सागर पुर चला वती संग सैयो कों भी पीतो लावती ॥ पीया जी के हेई प्रावती तेज तारतंम जो न करावती तासों महंमत प्रेम ले तौलती तिंग सों धांम दरबाजा षोलती सौयां जांने धांम में पेठी आं ।। ए तो घर ही में जांग वैठी आं ।। १९६ ।। श्री धाम को वरनंन ।। तमांम ॥

विषय—(१) पृ० १ से ६० तक—मंगला चरण, सृष्टि निरूपण, अर्श अजीम का वर्णन, सात तवक आदि का वर्णन, श्री धाम संबंधी वन तथा मंदिर आदि का वर्णन,

धनी की बैठक का वर्णन, पशु पक्षियों के कल्लोल का वर्णन और आनन्द बधाई आदि। (२) पृ० ६१ से १२४ तक—श्रृंगार तथा हास विलास का वर्णन, स्यामा स्याम का संयुक्त वर्णन, सखियों आदि के साथ लीलाओं का वर्णन, भोजनादि वर्णन, अन्य कार्य-खेल कूद और रास आदि संबंधी विनोद वर्णन, गाने बजाने का वर्णन तथा नृत्य का वर्णन। (३) पृ० १२५ से १४४ तक—युगल किशोर के दर्शनों का वर्णन, प्रेम विलास, स्वरूप श्रृंगार तथा प्रेम बाहुल्य का वर्णन॥

संख्या २६९ सी. प्रगटबानी, रचयिता—प्राणनाथ, पत्र—९२, आकार—३¾ × ३¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—मुंशी वंशीधर, मुहम्मदपुर, डाकघर—अमेठी, जिला—लखनऊ।

आदि—अथ प्रगट बांनी लिषे हैं॥ अब लीला हम जाहिर करें। ज्यौं सुख सैयां हिरदे धरें॥ पीछे सुख ही सीस दनं। पस रसी चौदे भवनं॥ अब सुनी ओ व्रह्म सिस्टी विचार। जो कोई निज वतनी सिरदार॥ अपने धनी श्री स्यांमा स्यांम। अपना वासा हे निज धाम॥ सोई अषंड अघेरा तीन घर नित वैकूंठ। मिने अषेर पाही गुभ करु प्रकास॥ व्रह्मा नंद व्रह्म सिस्ट विलास। ऐ वांनी चित दे सुनी यो साथ॥ क्रिया करके कहे श्री प्राण नाथ। ऐ किव कर जिन जानों मन धनी ल्याये धाम से वचंन सो केहे तीहू प्रगट कर यह टालु आडा अंतर तेज तार तंम जो न प्रकाश॥ करु अंधेरी सव को नासं। अव खेल उपजे के कहूं कारंन॥ ऐ दो उईछा भउत पंन विना कारन दोउ ऐ उपजाई॥ हमारे धनी सों तोवा तेहे अति घनी॥

अंत—धनी जी को दीदार सव कोई देषे होरी गई दूनिआँ सव किनहूँ कछू ऐ नां कह्यो क्रोध ब्रोध काऊ का ना रह्यो॥ धनी जी को०। धनी जी को ऐसो जस दुनियाँ आये हुई ऐक रस नेज जोत प्रकास जो ऐसो काहू संसे न रह्यो केसो सव जाते मिली एक ठौर कोई न कहे धनी मेरी और पीया के व्रह सों निरमल कीये पीछे अखंड सुख सव को दीऐ ऐ ब्रह्म लिला भई जोईत सी कवहू नां होसी कितनां तो कै उपज गरो इंढ भी आंगे कै होसी व्रह्मांड ये तीनो व्रह्मांड हूऐ जो नाव ऐरो हू एनां कोई होसी कित इन तीनों में व्रह्म लीला भई व्रजरास और जागनी कही ज्यौ निंद में देख्या सो कछूक नींद कछूकु सुध रास को सुख लीयो या विध जाग नीको जागते सुख ऐ लीला क्यौ कहं या सुख जागनी में लीला धाम जा हेर निसांन लीऐ हिरदे चित धर तव उपज्यो आनंद सवो करार लै नजरों लीला नित विहार इति ही वैठे घर जागो धाम पुरंन मनोरथ हूये सव काम धनी महंमत हसता लीदे साथ उठा हस्ता मुखजे॥११५॥ श्री प्रगट वानी तमांम सम्पूर्ण ः साधु लछमन दास जी पठनारथ दसकत तिलोक दास कवीर पंथी मेडता में॥

विषय—(१) पृ० १ से ३० तक—सृष्टि निरूपण, माया वर्णन, कृष्ण जन्म और कतिपय लीलाओं का अति सूक्ष्म विवरण। (२) पृ० ३१ से ८२ तक—अखंड रास का वर्णन, भगवान का अंतरधयान होना और सखियों की जड़ अवस्था का वर्णन, वृज, मथुरा

तथा द्वारा वतों की संक्षिप्त कथाओं का वर्णन । (३) पृ० ८३ से ९२ तक–धनी जी के दीदार, सुख और उसके प्राप्त कर्त्ताओं की स्थिति का वर्णन, ब्रह्म लीला के तीन ब्राह्मणों का वर्णन तथा लीला धाम की कथा ।।

संख्या २६९ डी. तारतम्य, रचयिता—प्राणनाथ, पत्र—७८, आकार—३$\frac{3}{4}$ × ३$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१२, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—मुंशी बंशीधर, मुहम्मदपुर, डाकघर—अमेठी, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्री कृष्णाय नमः ।। श्री निज नाम श्री कृष्ण जी अनादि अक्षरातीत सो तो अब जाहीर भए सब विधि वतन सहित ॥ १ ॥ श्री तारतंम लिषे हैं ॥ जब पांच तत्व चौदा लोक तीन गुण पिंड ब्रह्मांड ए संसार कछु ना हतो तब क्या थी ॥ धाम और प्रमधाम? ए दोठे काने अषड हे कुरांन की वोली ये कहे ते हे अरस ओर अरस अजीम ये दो मकान हैं आतहे २ अपनी वोली में केहेत हैं नूर और नूर तज लाय अष्पर को सरुप कैसो है कै वरस सात को लषमी जी को सरुप कैसो है कै वरस पाँच को ४ श्री राज जी को सरुप कैसो है कै जैसे वरस ग्यार को श्री ठकुरानी जी को सरुप और सषियन के सरुप जैसे कें वरस नोंके ओर चार चार वरस की षूव षुसलीयाँ हे श्री धाम के सोहैं ॥

अन्त—तब अष्पर की सुरतनें कही के दूसरे ब्रह्मांड में होएगा ॥ ए वरदान दीयो ।। इही अषीअन में वो होत ब्रेह कीयो ढूढ़ती ढूढ़ती वन में ॥ दूरि निकस गै, तहाँ आगें अध्यारा आई ॥ पात पात कर ढूंढे ॥ पर राज काहु न प्रगट भये ॥ फेर राज ने अवेंस दीयो ॥ तव वीचई में से प्रगट भए ॥ एक सषी एक कृष्ण भये नाना प्रकार षेले ।। फेर पीछे दोए घरी रात रही ॥ तव जीलना कीयो ॥ फेर आरोग के ॥ अपने चित्त की बातें करने लगे । पिछले ब्रेह जो कीए थे सो सब सषियन के हिरदे में चढ़ आए ।। तव सषियन नें पूछी कै आधीरात कों तुम कहां गए हते ॥ तब आवेसने जुवाब दियो ।। कै मैं कहूं ना गयो हतो ॥ उस वी सुपंन ॥ जे राज को आवेस राज के पास गयो ॥ अष्पर की सुरत अष्पर को ठिकानें गई ॥ अष्पर की ओर सषियन की नीद नहीं ॥ यह जोग माया को पतन भयो ॥ तब अष्पर मैंने विचार देष्यों ॥ के मे कछू और देष्यौ है ॥ तब ब्रज लीला चित्र में चढ़ आई ॥ ब्रज अषंड चित्त में भयो ॥ और रास बुध में अषंड भयो ॥ फेर राजनें देष्यो तिन समें त मरी सषियन कों दुष न भयौ ॥ तब तीसरौ ब्रह्मांड पैदा भयो ॥ जैसो काम माया को हुतै ॥ तैसो कोते सो उठि ठाड़ो भयो ॥ नंद जसोदा ग्वाल गोपी और कंस तेसो को तैसो उठ ठाड़े भए तब कंस ने अपने भाई केसी को घोड़े को सरुप धरकें पठायों ॥ × × × ×

विषय—(१) पृ० १ से ७८ तक– सृष्टि उत्पत्ति तथा हरदो मकान का वर्णन, लक्ष्मी आदि का स्वरूप, ठकुरानी तथा सखियों का भगवान के प्रेमाधिक्य के संबंध में विवाद, सखियों की प्रेम परीक्षा तथा इसी संबंध में कृष्णावतार एवं उसकी विविध लीलाओं का संक्षिप्त वर्णन ।

संख्या २६९ ई. वेदांत के प्रश्न, रचयिता—प्राणनाथ (पन्ना), कागज—पुराना, पत्र—१०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—राममनोहर बिचपुरिया, पुरानी बस्ती, कटनी, मध्यप्रदेश ।

आदि—श्री परमात्मनेन्मः अथ श्री वेदांत के प्रश्न लिष्यते ॥ श्री वेदान्त मधे ऐसे कहो है ॥ जो कछु दृष्टे विष्टै देषियत है ॥ अस कानन सुनियत है ॥ अरु जो कछु चित विषै मन विषै ध्यान कीजीयत है ॥ अरु सब्द मात्र वस्तु मात्र जो है सो सब तीनो काल विथा है ॥ याकि साक्षि ॥ " दृश्यते श्रूयते यधतः स्मंयतेः बानरैः " ये वेदन्त विषे ऐसो कहो है की जो कछु मन चित्त विषै ॥ सब्द मात्र बात मात्र ॥ सो सब चिदानन्द ब्रह्म है ॥ याकि साक्षि ऐसि भाँत प्रिय अस्मेति श्रुते दस्वते श्रूयते पधत सुमृय ते बान रैः सदा ॥ अव या प्रश्न को अर्थ ऐसो प्रकार सो ॥ विचार कै लीजै ॥ जो पहिले सो सब मिथ्या कह्यो फेर वाही सो सच्चिदानंद ब्रह्म कह्यौ ॥ अरु असत मिथ ॥ कब हें सत न होई अरु सत ब्रह्म कबहूं मिथ्या न होई ॥

अन्त—उक्त आत्म बोध ॥ त्रिधार दृष्टि ॥ पुरा प्रोक्तानीव ईश्वरी ब्रह्म निस्ताह ॥ अब याके प्रश्न को अर्थ ऐसे प्रकार सो ली लीजै जो सी वसिष्ठ नो स्वप्न ते कही अस ईश्वरी सिष्ट प्रकृति के आदि जो लय सव संसार कह्यौ ॥ अरु ब्रह्म कि सिष्टि तद गत ब्रह्मा समान है लिषतं सर्म्पून ॥

विषय—प्राणनाथ जी ने वेदांत संबंधी प्रश्नों का विस्तृत विवेचन किया है ।

संख्या २७०. भक्ति भावती, रचयिता—प्रपन्न गणेशानन्द, पत्र—२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६०६ = १५५२ ई०, लिपिकाल—सं० १८१० = १७५३ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला राजकिशोर, जाहिदपुर, डाकघर—अतरौली, जिला—हरदोई ।

आदि—सिद्धि श्री गणेशायनमः अथ भक्ति भाव लिख्यते ॥ सब संतन को नाऊं माथा । जा प्रसाद से भयो सनाथा । भौ जाल पार गयो कोऊ चाहै । तौ संत चरण निज शीश चढ़ावै ॥ जौ नारायण अन्तर जामी । सबकी बुद्धि प्रकाशी स्वामी ॥ तुम वांणी मैं प्रगट्यो आई । निर्वर्त्ति प्रवर्त्ति देह वताई ॥ दोहा—परम हंस आस्वादिता । चरण कमल मकरंद । नमः राम रामा नन्दा । नमः गोकुल चंदा ॥ चौ० जै प्रवर्त्ति कौ दुष न मानौ । तौ निर्वर्त्ति औषध क्यौं मन आनौ । कलि अज्ञान भयो विस्तारा । पूर्व अपर नहीं संभारा ॥ अध फर कूप वेलि अव लंवी । काटत मूसो तरि अज गरि लम्वी मधु की वूंद पड़ी एक आई । सव दुख विसर्‍यो और सुख पाई ॥ अल्प सुख दुख है विस्तारा । पै कोई येकै भाजि होत है न्यारा ॥ जै दुख जाणै तै होइ असंगा । ताते उपजे भक्ति अभंगा ॥

अन्त – दोहा—जद संसार असार है चेतनि एकै होइ । ताते तुम्हरो तोष को हेत नाहिने कोइ ॥ ब्रह्म ज्ञान हरि चर्म रति ई नद है को सिद्धि । साधक होय नमो नमः मेरो तास धनै और न जानू कोइ ॥ चौपाई—भक्ति भावती याको नामा । दुष खंडन अरु सुख

विश्रामा ॥ सीखै सुनै अरु करै विचारा । तौ कलि कुसमल कौ ह्वै ख्यौ पारा ॥ अल्प सुखण ही जाने केता । सो सुख पावै चाहै जेता ॥ दोहा—जो वहुपुर ते मति लहै । वह पंडित पूछ्या होय । सो सव याही में लहौ । जो नीके सोधै कोय ॥ चौपाई—लरिका कछू वस्तु जो पावैं । लै माता आगे कुदराबै ॥ भली बुरी वह लेइ पिछाणि । यों तुम आगे मैं इह आणि ॥ अब वहेड़ो कहां ते करई । अपनो फल लै आगे धरई ॥ यूं जैसी कृपा तुम हमसों कीनी । तैसी मैं वाणी कह दीनी ॥ संवत सोलह सै नव साले । मथुरा पुरी के सव आलय ॥ अस्वनि पहल ज्ञारसि रविवारी । तहां षट पहर मांहि विस्तारी ॥ इति भक्ति भावती संपूर्ण समाप्तः संवत् १८१० वि० आश्वनि शुक्ल नवमी ॥ राम राम राम ॥

विषय—ईश्वर भक्ति वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता—प्रपन्न गणेशानंद मथुरापुरी के निवासी थे । निर्माण काल संवत् १६०९ वि० है जो इस प्रकार लिखा है:—संवत सोलह सै नव साले । मथुरा पुरी केसव आलय । आस्वनि पहल ज्ञारसि रविवारी । तहां षट पहर मांहि विस्तारी ॥ लिपिकाल संवत् १८१० वि० है ।

संख्या २७१. वैद्यक विधान, रचयिता—प्रतापराय, पत्र—१२०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७७२ = १७१५ ई०, लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर अगम सिंह परिहार, नगला झंमन सिंह, डाकघर—पिलखना, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ वैद्यक विधान प्रताप कृत लिख्यते ॥ शंभु गजानन को सुमिरि भगवति शीस नवाय । संस्कृत से भाषा रचूं सुनो सुजन चित लाय ॥ १ ॥ धनवंतरि को ध्यान धरि गुरू चरण करिमान । आस तिहांरी कर रचूं वैद्यक रूप विधान ॥ २ ॥ प्रथम रोगी परीक्षा लिख्यते—रोगी की परीक्षा इतने प्रकार से होती है ॥ देषि बे सो छूवे सों बूझिवे सों स्वप्न में दूत सों असगुन सें और काल ज्ञान सें साध्य असाध्य रोगी की परीक्षा होती है ॥ मूत्र परीक्षा ॥ नारी परीक्षा ॥ रोगी को देखिके पूंछिके नाड़ी देखै और उसकी दसा को समुझि करि के फिरि मूत्र परिक्षा करिके औषधि आरम्भ करै ॥ औषधि विचार ॥ वैद्यक प्रथम औषधि के गुणागुण विचारै और रोगी को रोग के प्रमाण माफिक औषधि देय अर्थात् थोरी रोग होवे तो अधिक औषधि न देय और वे औषधि रोगी द्वैष करै तो ऐसो रोगी जीवै नहीं ॥

अंत—प्राणों को ६ वस्तुयें तत्काल हर लेती है । उनके नाम ये हैं । (१) सरो मांस २. बूढ़ी स्त्री ३. सूर्य को घाम ४. तुरंत को जमो दही ५. प्रातः काल समय मैथुन, प्रभात काल की निद्रा ये ६ वस्तु हैं । ६ वस्तु तुरंत प्राणन की रक्षा करती हैं ॥ ताजो मांस, वाला स्त्री, क्षीर को भोजन, नयो मक्खन कूप जल से अस्नान और उष्म जलसो स्नान करना ॥ छः रितु में छः छिन से भोग करै सो लिखाते हैं । हिम रितु में शिशिर ऋतु में अपनी शरीर की शक्ति माफिक बारंवार स्त्री सों भोग करै तो शरीर में आनन्द रहै । वसंत और सरद ऋतु

वर्षा रितु में ग्रीष्म रितु में पन्द्रहवें दिन भोग करै में तीसरे दिन भोग करै शक्ति माफिक तो रोग होवै नही आनंद रहै। इन स्त्रियों से भोग न करैं। रजस्वला स्त्री सों, रोग वाली सों। बूढ़ी सों जाके काम जगे, मैली कुचैली सों, गर्भवती सों आतशक वाली स्त्री सों संभोग न करै। इति श्री वैद्यक विधान ग्रन्थ प्रताप राय कृत संपूर्ण समाप्तः लिखतं रामवली वैद्य वनारस शहर संवत् १९०० वि० जेष्ठ वदी दशमी॥

विषय—वैद्यक।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता प्रताप राय थे। इनका विशेष पता नहीं। निर्माणकाल संवत् १७७२ वि० और लिपि काल संवत् १९०० वि० है।

संख्या २७२. अमृत सागर, रचयिता—प्रताप सिंह महाराज जैपुर, पत्र—६२५, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४४, परिमाण (अनुष्टुप्)—८६१०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३६ = १७७८ ई०, लिपिकाल—सं० १९०० = १८९३ ई०, प्राप्तिस्थान—वैद्य रामलाल शर्मा, निहालगंज, डाकघर—धूमरी, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः सिद्धि श्री मन्महाराजाधिराज महाराज राजेन्द्र श्री सवाई प्रताप सिंह जी विरचिते अमृत सागर नाम ग्रन्थ लिख्यते॥ श्री मन्महाराजाधिराज महाराज राजेन्द्र श्री सवाई प्रताप सिंह जी विचारि करि मनुष्यां का रोगां का दूर करबा वास्ते परम करुण सुश्रुत वाग भट्ट भाव प्रकाश आत्रेय ने आदि लैके वैद्यक का सर्व ग्रन्था तें वाको सार काढ़ि अति संक्षेप तें सर्व रोगों का निदान पूर्वक अमृत सागर नाम ग्रन्थ की वचनिका करिके औषद्यां के अनेक प्रकार का अजमाया जतन विचार पूर्वक है॥ अथ प्रथम रोगां का विचार लिख्यते॥ कोई तरह नें पीड़ा होत ने रोग कहिये सो दो प्रकार को छे। एक तो कायिक दूसरो मानसिक। काया में रहैं तीको नाम कायक और मन में रहे तीको नाम मानिसिक छे। सो ये दोनों वात पित्त कफ रूप दो शरीर में कई तरह का कुपथ्य करके मिथ्या हार मिथ्या विहार का विथा कों कोप कों प्राप्त हुआ सर्व रोग ने उपजावे छे। अर ये वात पित्त कफ कही तरह कुपथ्यां से विन स्वाथ्य क्या गाड़ें छै। अर येही आछी तरह पथ्यां का अच्छा हुआ कहे।

अन्त—अथ पित्त की प्रकृति के लक्षण लिख्यते—जवान अवस्था में सफेद वाल हों वुद्धि मान होय और परोव घने आवै क्रोधी होय स्वप्न में तेज दीखै ये लक्षण होंय तो पित की प्रकृति जानिये। अथ कफ की प्रकृति को लक्षण जाकी गंभीर वुद्धि होय स्थूल अंग होय स्वप्न में जल का स्थान देखै केश चीकण होय ये लक्षण जामें होय ताको कफ की प्रकृति कहैं। अथ भेद को लक्षण लिख्यते। तमो गुण और कफ अधिक होय तब मूर्छा होय और वाय पित्त रजोगुण अधिक होय तद मौलिक और भ्रान्ति होय। कफ वाय और तमो गुण अधिक होय तब तन्द्रा होय और बाल जातो रहै तद ग्लानि आवै और दुख सों और अजीर्ण सों षेदसूं यासूं भी ग्लानो होय अथ वल थकी उत्साह नहीं होय ताको आलस कहिये याको आदि लै सो सही जाण लेणा जी। इति शरीर नाम या मनुष्या के शरीर में जो कुछ है सो संक्षेप सूं सर्व निरूपण कियो छे। इति श्री मन्महाराजा धिराज महाराज राजेन्द्र श्री सवाई

प्रताप सिंह जी विरचिते अमृत सागर नाम ग्रन्थ संपूर्ण समाप्तः लिखतं राम गोपाल वैश्य संवत् १९०० चैत्र मासे शुक्ल पक्षे अष्टम याम् ॥

विषय—वैद्यक।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता श्री महाराजाधिराज महाराज राजेन्द्र सवाई प्रताप सिंह जी थे। निर्माण काल संवत् १८३६ वि०, लिपिकाल—संवत् १९०० वि०।

संख्या २७३ ए. अनिन्य मोदिनी, रचयिता—प्रियादास जी (वृन्दावन), पत्र—२३, आकार—६×४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००, रूप—अति प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबा बंशीदास जी गोविन्दकुण्ड, वृन्दावन।

आदि—श्री राधा वल्लभो जयीह। अथ अनिन्य मोदिनी लिख्यते। दोहा—श्री चैतन्य मन हरन भजि श्री नित्यानंद संग। श्री अद्वैत प्रभु पारषद जैसे अंगी अंग। रसिक सिरोमनि विग्य वर श्री मति रूप अनूप। सदा सनातन धर हियें दोऊ एक सरुप। रसिक अनिन्यनिकौ गमन जामा रंग में होय। ताके आचारज येई यह छबि मन में सोय। कहूं विन्दु कहूं चुलु भरि जान मूल सिंधु रस रसिकता रूप सनातन मान। रस अनिन्य पद्धिति कही कीजै सरस विचार। सुगम होय जिनकी कृपा उमै रूप उरधार। सम्प्रदाय दृढ़ हिये द्रढ़ रव रीतै अधार। ऐसे गुरू की सरन ह्वै करैं तत्व निरधार। कंठ लगनि कंठी सुभग तुलसी माल सुधारि। स्याम वदनी गुंज युत नुर पर करत विहार। तिलक भाल जगमग रहै मुद्रा भुज निरसाल। इष्ट अचारज नामवर अंकित सोभा जाल। श्री वृन्दावन धाम में वसै निरंतर देह। जो उदै बन बीस सकै सन द्रढ़ करैं सनेह।

अन्त—कवित्त—जु किसोर जू ने जाको मन चोर लियो पियो हित रस ताकें और कछू आसना। निस दिन गान रुप माधुरी को पान उर मुकुर समान नेंकु बासना की बासना। लागै दृग झरी प्रेम भरी सुनि बातें हरी खरी मति हरी जाति घूमें मानों सासना। कोऊ भाग पाय जो पै मिलै आय ऐसनि सों देत झलकात चख ऐसे ही उपासना। दोहा—अनिन्य मोदनी रुचि कही देत अनिन्य मोद। पियादास जे दृढ़ भरा तिनकी सुर भरी गोद। इति अनिन्य मोदिनी सम्पूर्ण

विषय—अनन्य भक्ति का वर्णन।

संख्या २७३ बी. श्री भक्तमाल भक्तरस बोधिनी टीका, रचयिता—प्रियादास, कागज—बाँस का, पत्र—१२२, आकार—१०×६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९२४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७६९ = १७१२ ई०, लिपिकाल—सं० १९०२ = १८४५ ई०, प्राप्तिस्थान—हरिमोहन मिश्र, सिंग्रावली, डाकघर—ताँतपुर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—श्रीमते रामानुजाय नमः अथ भक्तमाल सटीक लिष्यते। अथ टीका कर्ता कौ मंगल चरन अज्ञान निरूपन। कवित्त। महा प्रभु कृश्न चैतन्य मनहरन जू के चरन को मेरे नाम मुष गाइयै। ताही समै नाभा जूने आज्ञा दई लई धाटि टीका भक्त माल को सुना-

इये । कीजिये कवित्त वंद छंद अति प्यारो लगे जगे जग माहि कहिवानी विरमाइये । जानौ निज मति अैसे सुन्यो भागवत सुक दुम विप्र वेस ऐसे ही कहाइये । टीका को नाम स्वरुप वरननं ॥ रचि कविताई सुखदाई लगे निपट सुहाई, औ सचाई पुन रुक्त लौ मिटाइ है । अक्षर मधुर ताई अनुप्रास यमकाई अति छबि छाई मोद गरी सी लगाई है । काव्य की बड़ाई निज मुष न भलाई होत, नाभा जू कहाई ताते प्रोढ़ कै सुनाई हैं । ह्रदै सरसाई जो पै सुनीये सदाई इस भक्त रस वोधिनी सुनाम टीका गाई है । भक्ति स्वरूप—श्रद्धाइफलेल और अटउ बनो श्रवन कथा मैल अभिमान अंग भंग निछड़ाइयै । मनन सुनीर अन्हवाय अंग छाइदया नव नवसन पुनि सौधौल लगाइयै । अमनाम हरि साधु सेवा कर्णफूल मानसी नथ संग अंजन बनाइयै ॥ भक्ति महारानी कौ सिंहार चारु रहै जो निहारि लटै लाल प्यारी गाइयै ।

अन्त—इति श्री भक्त माल नारायण दास कृत सम्पूर्ण छप्पै ॥ तवैया रसकाई कविता जाहि दीनो तिनपाई भई तरसाई हिये नवं नव चाई है । करणं भवन मेराधिकार बन बसै लसै ज्यौ मुकर मध्य प्रतिबिम्ब भाई है । रसिक समाज में विराज रस राज कहै, चहे दुष सब फूलैं सब सुखदाई है । जाना हरि लाल मनोहर नाम पायौ उनहू को मन हरि लीनो तातें राई है । इनकी के दास दास दास प्रियादास जानौ तिन लै बषानौ मानो टीका सुष दाइयै । गोवर्द्धन नाथ जू के हाथ मनुपस्वाजा को कन्यो वास वृन्दावन लीला मिलि गाइये । मति उनमान कह्यो लह्यौ मुख संतनि के अंत कौन पावै जोई गावै उर आइयै ॥ घट बदि जात अपराध मेरो क्षमा कीजो साधु गुन ग्राम इह मानि मैं सुनाई है । कीनी भक्त माल सुर रसाल नाभा स्वामी जू न तरै जीव जगन जग जनमन मोहिनी । भक्त रस बोधिनी है वांचत कहस अर्थ लागै ......अति सोहनी । टीका और मूल नाम गीता सुनै जब रसिक अनन्य मुप होत विश्व मोहिनी । नाभा जू कौ अभिलाष पूरन लै कियो मैं तो ताकी साखि प्रथम सुनाई नीके गाइकै ॥ भक्ति विसवास जाके ताही सौ प्रकास कीजै भीजै रंग हियो लीजै संतति लहाइकै ॥ सम्वत प्रसिद्ध दस सात सत नूनहत्तर फाल्गुन मास वद सप्तमी वितायकै । नारायण सुख भक्त माल लेके प्रियादास दास उर बसौ रहौ छाइकै । इति श्री भक्तिमाल भक्त रस बोधिनी टीका सम्पूर्ण २७१४ श्लोक फाल्गुन शुक्ला ७ संवत सर १६०२ प्रति लिखीतं मिश्र कनही राम वलमगढ़ के पठनार्थ ठाकुर परसराम वासी शुभ मस्तु कल्याण मस्तु ॥

विषय—प्राचीन और मध्यकाल के भक्तों का वर्णन ।

संख्या २७३ सी. पीपाजी की कथा, रचयिता—प्रियादास, पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७६९ = १७१२ ई०, लिपिकाल—सं० १८७६ = १८१९ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर दालसिंह, गंगागंज, डाकघर—राजा का रामपुर, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश) ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ पीपाजी की कथा लिख्यते । पीपा प्रताप जग वासना नाहर को उपदेश दियो । प्रथम भवानी भक्ति मुक्ति मांगन को धायो ॥ सत्य कहौं

तिहिं शक्ति सुदृढ़ हरि शरण बतायो । श्री रामानंद पद पाइ भयो अति क्ति की सीमा गुण असंख्य अनमोल संत धरि राखत ग्रीवां ।। परसि प्रणाली सरस भई संकल विश्व मंगल कियो । पीपा प्रताप जग बासना नाहर कौ उपदेश दियो ॥ गागरौन गढ़ बढ़ पीपा नाम राजा भयो लयो पन देवी सेवा रंग चढ़यो भारिये ॥ आये पुर साधु सीधो दियो जोई सोई लियो मनमाझ प्रभु बुद्धि फेरि डारिये सोयो निसि रोयो देखि सुपनो विहाल अति प्रेम विकराल देह धरि कै पछारिये । अवना सुहाय कछू वहूं पाय परि गई नहिं रीति भई वाही भक्ति लागी प्यारिये ॥

अंत—गूजरी को धन दियो पियो दही संतनि ने ब्राह्मन को भक्त कियो देवी जी निकारि कै । तेली को जियायो भैंसि चोरनि पै फेरि लायो गाड़ी भरि आयो तन पांच ठौर जारि कै ॥ कागद लै कोरो करौ बनियां को शोक हरो भरो घर त्यागि डारी हत्या हू उतारि कै । राजा कों औसेर भई संत कौ जु विभव दई लई चीठी मानि गये श्री रंग उदारि कै ॥ १ ॥ श्री रंग के चेत धन्यो तिय हिय भाव भन्यो ब्राह्मन को शोक हन्यो राजा पै पुजाइ कै । चंदवा बुझाय लियो तेली को लै बैल दियो दियो पुनि घर मांझ भयो सुख आइ कै ॥ बड़ोई अकाल पन्यो जीव दुख दूरि कन्यो पन्यो भूमि गर्भ धन पायौ दै लुटाई कै ॥ अति विस्तार लियो कियो है विचार यह सुनै एक बार फेरि भूलै नहिं गाय कै ॥ २ ॥ इस पीपा की कथा को जो वांचेगा सुनेगा सुनावेगा वह मोक्ष को प्राप्त करेगा ॥ इति श्री पीपा जी की कथा सम्पूर्ण समाप्तः लिखा राम भजन चैत्र शुक्ल राम नौमी संवत् १८७६ वि ॥

विषय—पीपा जी की कथा का वर्णन ।

संख्या २७३ डी. रसिक मोदिनी, रचयिता—प्रियादास जी (वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—१८, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१११, रूप—बहुत अच्छा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३५, लिपिकाल—सं० १८३५ = १७७८ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा बंशीदास जी, गोविन्दकुण्ड, वृन्दावन ।

आदि—श्री राधागोविन्द जयति । अथ श्री रसिकमोदनी लि० ॥ दोहा ॥ महाप्रभू चैतन्य हरि रसिक मनोहर नाम, सुमिर चरन अरविन्द वर वरनो महिमा धाम। श्रीगोपाल राधारमन विपिन विहारी प्रान। ऐसे श्रीजुत रूप जो सदा सनातन दान। प्रगट करी वृज भूमि मधि श्री वृन्दावन धाम । ताकी छबि कहि कवि सकें सब जन मन अभिराम । लाख अंग हरि भक्त के चौंसठि महा प्रकास । ताहू मे पुनि पांचि कहि कह्यो एक बनवास । दुर्लभ सुर्लभ सो कियो सब विधि सुखकौ मूल । कथा कीर्तन रास रसि श्रीयुत जमुना कूल । तब तनि के यों रस प्रवल मानें तीन गुन हीन । बसें निरन्तर विपिन में ज्यों जल जीवन मीन । भूतल में वृन्दा विपिन ऐसर्वो परि प्राहि । बड़ी भूल नहीं बस सकैं फिर कब पावैं ताहि । निपट प्रबल साधन करें तऊ मिलै तन त्याग । बिनसाधन तन सहत ही मिले चटे रस पाग । श्री वृन्दावन धाम में साधक सुष अबै गाउ । मगन होत रस सिंधु में भूले सिधकी चाउ । परम रसकिनी लाड़िली जाकौ महल रसाल । कृपा करैं

काहू रीझि में तव बन बसैं निहाल। सोवत जागत रैंन दिन चलत फिरत सुष होत। जुगल रूप गुन नाम रस बहुत चहूं दित सोत।

अंत—ते तुम मणि गनो अर्थ कांति विस्तार। रसिक जननि मन मोहनी तातें पहर्‌यौ हार। कांति मोहिनी तांते पर्‌यौ रसिक मोदनी नाम। सदा कंठ में झलमलो अंग अंग अभिराम। रसिक इन्दु गोंविन्द श्री कुंज वास अनयास। प्रियादास इह नाम जिन गुह्यौ चातुरी बास। पूछो जगके जौंहरी मणि सुगंध नहीं होय। ए अद्‌भुत पहरत हीयें मन में पेठे सोय। जो सुगंध मन करनकी इच्छा होय अनूप। तो पहरो ग्रीवा हरषत गुन बाढ़ै रूप। और महा अद्‌भुत लषौ सुन्यौ न देख्यौ नेंन नेंकु निहारे हीयपें बाहू वासे वेंन। बानी मानी रसिकजन छानी रहै मूल। सानी बन हित जुगल हित गानी सव अनुकूल। इति श्री रसिक मोदिनी सम्पूरण समाप्त। फाल्गुण सुदी पूर्णमा सं० १८३५

विषय—भक्तिरस का वर्णन।

संख्या २७३ ई. संगीत रत्नाकर, रचयिता—प्रियादास, पत्र—४०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५१८, पूर्ण, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९६ = १८३९ ई०, प्राप्तिस्थान—रामदास गोसाईं, गढ़ी जैसिंह, डाकघर—सिकन्दर राऊ, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ सांगीतरत्नाकर लिख्यते॥ रेखता रासलीला—रस रहस में रसीलो नाचत नवल विहारी। अद्‌भुत श्रंगार कीने संग सोहै कीरति कुमारी॥ बाजत मृदंग बीना मुरचंग बजै न्यारी। बाजत करताल झांझैं मुरली को शोर भारी॥ गाती हैं गीत गोपी शुभ राग को उचारी। लेती हैं ताल सम्यै देती हैं सवै तारी॥ ह्वै कै त्रभंग कबहूं बंसी मधुर बजावैं। धुर पद मलार ठुमरी सुन्दर सुराग गावैं॥ कर कोप करि के कबहूं नाचन प्यारी सिखावैं। इहि भांति से मगन ह्वै रस रहस में वढ़ावै॥ प्रिय दास आस पास सोंहैं गोप की कुमारी। तिन मध्य सुभग राजत वृषभान की दुलारी॥ दादरा सुन्दर कली का—छवि आगर नागर बन्योरी नारी। लहँगा लाल बैजनी सारी रतन जड़ाऊ की चोली न्यारी॥ चंपकली गरे कंठा सोहै नक वेसर की है वलि हारी॥ भूषन वस्त्र विचित्र अंग में छवि पै रति छवि दीजै वारी॥ प्रिया दास मुकुटी सिर सुन्दर देख छकी छवि गोप कुमारी॥ २॥

अंत—राग पीलू—पंडित रूप वने बनवारी॥ पीताम्बर की धोती पहिरे रचि पचि पटुली सवांरी। तिलक भाल रच्यो माल गले विच पोथी कांख तर सोहत न्यारी। सिरपै पाग गुलावी सोहत को बरणो छवि अति शुभकारी॥ प्रियादास के ठाकुर परि हरि खराऊँ वरसाने तन चले सिधारी॥ ११॥ राग देश वागेश्वरी—प्रियाजी की झांकी हरि देखन आये। प्यारी आवत देखि श्याम को उठि के कंठ लगाये॥ सखी लाय आसन सुचि तापै श्याम विठाये। कर को पकरि वृषभान नन्दिनी हरि के चित्र दिखाये॥ देखो प्यारे चित्र तिहारे सांझी के विच कैसे वनाये। तब ही बचन श्याम शुभ मधुरे यों फिर कहत सुनाये॥ तेरो भेद बेद नहि पावत तव दर्शन को मम द्दग अकुलाये। तबहिं लाल को कुंअरि किशोरी

सुमन माल पहिराये ।। प्रियादास मिले युगुल परस्पर सखी सुमन वरसाये ॥ १११ गोपी गजल—नटवर लीला करत गोपाल । नटवर भेष सजे जैसें मोहन तैसे सजे सव संग के ग्वाल ॥ कवहूं कला वांस पर खेलत कवहूं कूदत महि दै ताल । नट लीला में चतुर शिरोमणि मोहलई सवै बृजकी वाल ॥ प्रियादास कीरति की कुमारी रीझ दई उर मोतिन की माल ॥ नटवर लीला कन्ह की पढ़ै सुनै मन लाइ । नटनागर आगर गुणन लेत वाहि अपनाइ ॥ इति श्री संगीत रत्नाकर संपूर्ण समाप्तः लिखतं रामदास चेला संत दास स्थान ज़मुनाघाट संवत् १८९६ वि० राम राम राम राम ।

विषय—रागरागिनियों का विवेचन ।

संख्या २७३ एफ. सांगीत माला, रचयिता—प्रियादास, पत्र—२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२४ = १८६७ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामनाथ मिश्र, विलसढ़ पट्टी, डाकघर—अलीगंज, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ सांगीत माला प्रिया दास कृत लिख्यते ॥ रेखता रास लीला ॥ रस रहस में रसीलो नाचत नवल विहारी ॥ अद्भुत श्रंगार कीन्हें संग सोहै कीरति कुमारी ॥ वांजत मृदंग बीना मुरचंग बजै न्यारी ॥ बाजत करताल झांझै मुरली को शोर भारी ॥ गाती हैं गीत गोपी शुभ राग को उचारी ॥ लेती हैं ताल संपै देती हैं सबै तारी ॥ ह्वै कै त्रिभंग कवहूं बंशी मधुर बजावैं ॥ धुर्पद मलार ठुमरी सुन्दर सुराग गावैं ॥ कर को पकरि के कवहूं नाचन प्यारी सिखावैं ॥ इहि भांति से मगन ह्वै रस रहस में वढ़ावै ॥ प्रिया दास आस पास सोहैं गोप की कुमारी ॥ तिन मध्य सुभग राजत वृषभान की दुलारी ॥ १ ॥ राग सुन्दर कली का दादरा—छटा दान लीला ॥ छवि आगर नागर वन्यो नारी ॥ लहंगा लाल बैजनी सारी रतन जड़ाव की चोली न्यारी ॥ चंप कली गरे कंठा सोहै नक वेसरि की है वलिहारी ॥ भूषण वस्त्र विचित्र अंग में छवि पै रति छवि दीजै बारी ॥ प्रिया दास मटुकी सिर सुन्दर देखि छकीं छवि गोप कुमारी ॥ २ ॥

अन्त—चंप कलिता गृह गमन लीला ॥ राग ईमन देश ॥ श्याम सखी दोऊ करत कलोल ॥ आलिंगन चुंबन परि रंभन अपने अपने रुपहिं तौल ॥ छूटी लट अलकैं कपोल पे नागिन सी रहीं ढोल ॥ प्रियादास आनंद निधि लूटी प्रेम विवस विन मोल ॥ १ ॥ राग देव गंधार—प्रेम हिंडोले सखी प्रभु को झुलावै ॥ नेह के खम्भ प्रीति की डोरी पलक पाट पै हरिहिं रमावै ॥ झोका देत रसिक नागर जब तब गोपी निज कंठ लगावै ॥ देखि देखि मोहन मूरति को गोपी हिये विच हर्ष बढ़ावै ॥ प्रियादास छवि लखि दग छाके उपमा अधिक कहन नहिं आवै ॥ २ चंप कलिता को सुख दियो निशि में सुन्दर श्याम । हे त प्रात ही चलि भये मोहन अपने धाम ॥ पंडित लीला—राग पीलू ॥ पंडित रूप बने वनवारी । पीतांबर की धोती पहिरे रचि पचि पटुलि संवारी ॥ तिलक भाल रच्यो माल गले विच पोथी कांख तर सोहत न्यारी ॥ सिरपै पान गुलावी सोहत को वरणै छवि अति सुख कारी ॥ प्रियादास के ठाकुर पहिरि खराऊं वरसाने तन चले सिधारी ॥ इति श्री संगीत माला प्रियादास कृत संपूर्ण लिखा भैरों दास माली चैत्र पीछले पाख पंचमी संवत् १९२४ वि०

विषय—राग रागिनियों में श्री कृष्ण चरित्र वर्णन ।

संख्या २७३ जी. संग्रह, रचयिता—प्रियादास, पत्र—२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) - २८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१० = १८५३ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला दिलसुखराय, नगरा भगत, डाकघर—पटियारी, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश) ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ नटवर लीला लिख्यते ॥ नटवर लीला करत गोपाल नटवर वेष सजे जैसे मोहन तैसे सजे सब संग के ग्वाल ॥ कबहूं कला वांस पै खेलत कबहूं कूदत महि दै ताल ॥ नट लीला में चतुर शिरोमणि मोहि लई सब ब्रज की बाल ॥ प्रिया दास कीरति की कुमारी रीझि दई उर मोतिन की माल ॥ दो०—नटवर लीला कान्ह की पढ़ै सुनै मन लाय । नटनागर आगर गुणन लेत वाहि अपनाय ॥ इति ॥ हिंडोला लीला ॥ राग पीलू ॥ आज बन झूलत पिय प्यारी ॥ हमहूं देखि आई हनु सजनी झूला पर्‌यो कदम की डारी ॥ जमुना निकट तीर वंशीवट श्री वृन्दावन अति शुभ कारी ॥ गावत राग मलार सुहावन मन भावन हित गोप कुमारी ॥ प्रिया दास वृषभान सुता को कबहूं झुलावत श्याम विहारी ॥१॥ राग मलार-सावन मास सुहावन प्यारी ॥ देखो दामिनि कैसी दमकत नभ मंडल में घटा आई कारी ॥ मोर शोर वन वोर करत हैं और क्वैलिया कूकत न्यारी ॥ बरषत मेघ गरजत हैं नान्हीं नान्हीं बूंद परत महि प्यारी ॥ प्रिया दास कहैं रसिक शिरोमणि गावत सावन तनमन वारी ॥ इति

अन्त—राग षट-फूल बिनन लीला ॥ फूलन के हित सखिन संग चली श्री बृषभानु कुमारी है ॥ अति सुकुमार रूप निधि श्यामा वा छवि पै वलिहारी है ॥ लहंगा लाल रेशमी सोहै अति छवि देत किनारी है ॥ तापै सोहै रंग बैजनी केरि सुंदरी सारी है ॥ कंठ सिरी दुलरी औ तिलरी कौस्तुभ मणि उर न्यारी है ॥ दमकत जुगनू उभय कुचन विच शोभा कहि बुधि हारी है ॥ जात बतात मध्य गोपिन के कीरति राज कुमारी है ॥ गज गामिनि सुकुमार छवीली हंसत वजावत तारी है ॥ प्रियादास आनन्द रस लूटत ललितादिक ब्रज नारी है ॥ सांझी लीला ॥ राग देश वागेश्वरी ॥ प्रिया जी की सांझी हरि देखन आये ॥ प्यारी आवत देखि श्याम को उठके कंठ लगाये ॥ सखी लाय आसन सुचि तापै श्याम विठाये ॥ कर को पकरि वृषभान नंदिनी हरि के चित्र दिखाये ॥ देखो प्यारे चित्र तिहारे सांझी के विच कैसे वनाये ॥ तवहीं बचन श्याम शुभ मधुरे यों फिरि कहत सुनाये ॥ तेरो भेद वेद नहिं पावत तव दरसन को मम दृग अकुलाये ॥ तबहिं लाल को कुंवरि किशोरी सुमन माल पहिराये ॥ प्रियादास मिले जुगुल परस्पर सखी सुमन वर्षाये ॥ इति सांझी लीला समाप्तः लिखा वेनी-राम वैश्य जेष्ठ शुक्ला नौमी संवत् १९१० वि० राम राम राम राम

विषय—श्री कृष्ण की ब्रज लीलाओं का वर्णन ।

संख्या २७४. जैमुनी पुराण, रचयिता—पुरुषोत्तमदास (दादरपुर), पत्र—१६०, आकार—१०½ × ४¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८४०,

खंडित, रूप—बहुत पुराना, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १५५८ = १५०१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० कैलाशपति जी तैनगुरिया पुरोहित, ग्राम—बिजौली, डाकघर- बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। अथ जै मुनि लिष्यते। प्रथमहि प्रणवौ पुरुष पुराना। आदि अंत प्रभु है अवसाना। निर्गुण सगुन जानि नहिं जाई। रुप नरेख रहत घट सोई। ब्रह्मादिक जिहि षोजत रहही।······आदि सारदा तोहि मनावौ। देहु सुमति जौ हरि गुन गावौ। तुम भल जानत रहहु भगवतहि मारि देत राषेहु सुर संतहि। वाहन गरुर गदा कर लीन्हा। संष चक्र मनि भूषन कीन्हा। कमल षरन के नृमल चरना। रसना रामे नाम गहु सरना। वाकं वादिनी नृमल वाना। देहु सुमति हरि नाम प्रवाना। कवल नयन निजु चरन निवासी। तुअ प्रशाद पावौ कवि लासी। दोहा। ब्रह्म रुद्र सुरंगन पति जग जननी जस लेहु पुरसोत्तम हरि सेवक वुधि प्रकास किक्षु देहु। २।

अन्त—मदनसिंघ सब बिप्र बुलाए। जोतिष शास्त्र विसारद आए। कहहु लग्न सुभ कहिआ अही। विषया चंद्रहास जो व्याही। उत्तिम सूर्ज ब्रहस्पति कहिआ वर कन्या एका-दस चहिया। बड़े भाग्य वैष्णव गृह आवा, आजु नीक सुभ लगन सो चावा गौधूरी कर उत्तिम पर्वा लग्न दोष विवर्जित सर्वा। सुनतै मदन परम हुलासा। सषिअन्ह सौ कह वचन प्रकासा। बाजन बाजे मंगल चारा, होइ लाग विवाह पसारा। विषया चंद्र हांस नह-वाए दिव्यांवर वस्तर पहिराए। मंडप पाटंवर ते क्षावा वर कन्या वेद्री बैठावा। हरादे चढ़ाइ कन्या नहवाई, अरघ देइ वेदी बैठाई। चंद्र हास कह वस्त्र बनावा अस्त होत हरि कलस पुजावा। जिव मह सुमिरा हरि कर चरना। आसन आइ बैठ मन हरना। साधरन विप्रन्ह कह······।

विषय—मंगला चरण, कवि तथा उसके अभिभावुक का परिचयः—जंबू द्वीप भरत षंडा कनउजकै पाटी पर चंडा। सप्तपुरी महा उत्तिम थाना कोशल देसबै कोउ जाना। रामपुरी सरजू के तीरा नाम अजोध्या निर्मल नीरा। सर्गा द्वार पापकर नासन। जहवां रामचंद्र कर आसन। तिहिते दक्षिन जोजन चारी, आदि गोमती किल्मिष हारी। नारायणपुर सुघर सुदेसा तहां बसैं विक्रार नरेसा। कुँवर ब्रह्म दधीच सुजाना, वोन्ह की सरवर रावन आना। तहवा नगर बसत इक दादर, जहवां जती सती कर आदर। राजा रुप मल्ला वहां रहई वैश्य वंश नित धर्महि चहई। लागि गुहारि कोरि संहारा। दादर पुर के महा जुझारा। सर्व सकुल निर्मल राजा, रुप मल्ल नाम। राम भक्त पुरुषोत्तम बसहिं सुदादर ग्राम। वंश विभूति पिता महँ प्रीती। क्षेमा नंद धर्म की रीती। तिन के सुत पुरुषोत्तम दासा प्रथम गये जग्रनाथ निवासा। कमल नयन पर दच्छिन दीन्हा अंवक पुरी जाइ गुरु कीन्हा। गुरु रघुनाथ के चरन मनाये जिन व्याकरन सिक्षुन पढ़ाये। ग्रन्थ निर्माण कालः—संवत पंद्रह सै अट्ठावन निर्मल चैत मास का आवन। शुक्ल पक्ष प्रति पक्षा सुहावन, श्री गोबिन्द कथा गुन गावन। उत्तम दिवस चंद्रकर वारा मेषक सूर्ज बसंत प्रगासा। हरि प्रसाद पुरुषोत्तम दासा अश्वमेध करि कीन्ह प्रगासा। और राजा युधिष्ठिर के अश्वमेध-यज्ञ का वर्णन।

टिप्पणी—कवि क्षेमा नन्द के पुत्र दादरपुर के निवासी थे। उन्होंने अम्बकपुर में जाकर गुरु दीक्षा ली थी और किसी रघुनाथ से व्याकरण पढ़ा था।

संख्या २७५. वैद्यकसार, रचयिता—पुरुषोत्तम मिश्र, कागज—स्याल कोटी, पत्र—४८, आकार—११३/४ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११५२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०२ = १८४५ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा बिनतीदास, चेला धरमदास, ग्राम—कुंडौल, डाकघर—डौकी, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ प्रथमे औषध भक्षणे ॥ अथोप चारः सरकुंरवा मूल पावे दिन ७ फीहा जाप। प्रमेह जाइ वह्म दंडी पंचाग पीवै दिन ३ वीर्ज प्रवाह मिटै पथ्य रहै तो ॥ अथ शीत ज्वर को ॥ × × तथा सिंगरपुर सोमल खार दोनो समान महीं पीसै मात्रा चांवल १ अनुपान दूध भात के चूरमा देइ शीत ज्वर जाय गोली शीत ज्वर की चमत्कार लवंग अकर करा दोनों समान पीसै सहत सो गोली बांधे झड़वेर प्रमाण सांझ सबेरे खाय शीत ज्वर जाय। तब ब्राह्मण भोजन करावै। शीत ज्वर की गोली तुलसी के पत्र अढ़ाइ २॥ सों दीजे।

अन्त—जवानी पीपरामूल, दाल चीनी, पत्रज, इलायची केसर, सोंठ, मिरच, चीता, नेत्र बाला, स्याम जीरा, धनिया, सोंचर पेसव प्रत्येक टांक टांक लेइ अनार दाना टंक तितड़ी टंक बेल गिरी टंक ३ धाप के फूल टं ३ अजमोद टं० २ पीपर टं० ३ मिश्री टंक १०८ कपित्थ टंक १४४। इति प्लहिनां। इति श्री पुरुषोत्तम मिश्र विरचितो वैद्यक सार संपूर्ण ॥ आसाढ़ कृष्णा १० रवि वासरे संवत १९०२। श्रीराम जी।

विषय—काष्टादि दवाइयों के अंजन चूर्ण तथा रसादिक का वर्णन।

संख्या २७६ ए. जोग वासिष्ट उत्पत्ति, रचयिता—प्यारेलाल काश्मीरी, कागज—देशी, पत्र—२००, आकार—१२ × १० इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—७०००, रूप—प्राचीन, गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८२२ = १८६५ ई०, लिपिकाल—सं० १८३३ = १८७६ ई०, प्राप्तिस्थान—रामेश्वर सिंह, मोहनपुर, डाकघर—सहावर, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ जोग वसिष्ट प्यारे लाल कश्मीरी कृत भाषा लिख्यते ॥ अथ उत्पत्ति प्रकरण लिख्यते ॥ श्री गणेशायनमः। वसिष्ट जी बोले हे राम जो ब्रह्म और ब्रह्म वेत्ता में तुमः इंदः सः इत्यादिक सब सब्द आत्म सत्ता के सहारे से स्फुरते हैं ॥ जैसे सपने में सब अनुभव सत्ता में सब्द होते हैं तैसे ही यह भी जानौ और जो उसमें यह विकल्प होते हैं कि जगत क्या है कैसें उत्पन्न हुआ है और किस का है ॥ हे राम जी यह जगत ब्रह्म रुप है यहां का स्वप्न का दृष्टांत विचार लेना चाहिये। इसके प्रथम मुमुक्ष प्रकरण मैंने तुम से कहा है अब उत्पत्ति प्रकरण कहता हूं सो सुनिये ॥ जो ज्ञान वस्तु सुभाव है हे राम जी पदार्थ जो उपजते हैं वही घटते बढ़ते बंध मोक्ष ऊंच नीच होते हैं और जो उपजते नहीं उनका बढ़ना घटना बंध मोक्ष ऊंच नीच नहीं होता है ॥ हे राम जी स्थावर जंगम जो कुछ जगत दीखता है सो सब आकाश रुप है दृष्टा का जो दृश्य के साथ संजोग है इसी का नाम बंधन है और उसी संजोग के विवृत होने का नाम मोक्ष है ॥

अंत—हे राम चन्द्र यह जगत चित में स्थित है और चित्त संकल्प रुप है। जब संकल्प रुप क्षय होता है तव चित्त नष्ट हो जाता है और जब चित्त नष्ट हुआ तब संसार रूपी कुहरा नष्ट हो जाता है ॥ और निर्मल शरद काल के आकाश वत आत्म सत्ता प्रकाशती है। वह चैतन् मात्र सत्ता एक अज आदि मध्य अंत से रहित है उसी से जो स्पन्द फुरा है वह संकल्प रुप ब्रह्मा होकर स्थित हुआ और उसने नाना प्रकार का जगत रचा है वह शून्य रुप है मूर्ख बालक को सत्य रुप भासता है जैसे बालक को परछाईं में वैताल भासता है और जैसे जीवों को अज्ञान से देहाभिमान होता है तैसे ही असत्य रुप ही सत्य रुप होकर भासता है ॥ जब सम्यक ज्ञान होता है तब लीन हो जाता है जैसे समुद्र से तरंग उपजकर समुद्र में लीन होते हैं तैसे ही आत्मा में जगत उपज कर आत्मा में ही लीन होता है। तिक्षी जोग वशिष्ट उत्पत्ति प्रकरण प्यारेलाल कृत भाषानुवाद संपूर्ण समाप्तः संवत १९२२ में भाषा समाप्त हुई लिखा भैरवलाल ब्राह्मण भाद्र पद संवत १९३३ लिखहि का साढ़े ७॥) रु० पाये ॥ इति श्री जोग वसिष्ट सपूर्ण भया ॥

विषय—ब्रह्म ज्ञान का वर्णन।

संख्या २७६ बी. शिवपुराण भाषा पूर्वार्द्धखण्ड, रचयिता—प्यारेलाल, कागज—देशी, पत्र—३१६, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)–७१८९, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, प्राप्ति-स्थान—पं० श्रीराम शास्त्री, रुद्रपुर, डाकघर—नौखेड़ा, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ शिव पुराण भाषा का पूर्वार्द्ध प्यारे लाल कृत लिख्यते ॥ प्रथम अध्याय। एक समय श्री सूत जी महामुनि श्री वेद व्यास जी के सत शिष्य जिनमे आपने गुरु की सेवा से बड़ाई पाई नैमिषारण्य के वन में श्री सदा शिव महाराज की तपस्या में लगे थे और श्री शंकर के गुणों को अपने हृदय में ध्यान करके मगन रहा करते थे कि संयोग से शोनकादि मुनीश्वरों के सहित सूत जी के संमुख आये। और विनय की कि आप सदा शिव के गुणों को वर्णन करैं क्योंकि हम अथाह संसार सागर में डूब रहे हैं हमारे बड़े भाग्य से आप मिले हैं ॥ थोड़े समय में वह जुग आनेवाला है जिसमें पाप अधिक होंगे और सनातन धर्म का नाश होकर सब प्राणी कुमार्ग में लीन हो जावेंगे मनुष्य आप निंदित होकर औरो की निंदा करने वाले सत्य हीन और लोभी होकर त्रिकाल संध्या और व्रत आदि से हीन हो केवल संसारी कार्य में प्रवृत्त होकर विचरेंगे ॥

अन्त—ब्रह्मा जी बोले कि हे नारद मंदिर में जाने के पीछे सब स्त्रियां इकट्ठी होकर शिव पार्वती की आरती उतारने लगी नाच व गाना और फूलों की वर्षा होने लगी विश्नु और हम सबने दोनों का पूजन किया ॥ हम सबको ऐसा आनंद प्राप्त हुआ जैसे गुंगे को वचन, दरिद्री को धन, अन्धे को नेत्र योगी को योग रोगी को अमृत प्राप्त होने से होती है ॥ हम सबने अलग अलग स्तुति की जिससे शिव प्रसन्न हुऐ और सबको उत्तम २ भोजन दिया, इसी तरह कई दिन तक हम सब लोग कैलास पर्वत पर रहे फिर विदा होने की विनय की और कहा कि हमारे सबके मनोर्थ आप जानते हैं ॥ शिव जी ने विश्नु और हम से कहा हमको तुमसे अधिक कोई प्रिय नहीं है हमने तुम्हारे कहने से गिरजा का ब्याह

किया अब तुम अपने लोक को जावो ॥ तुम्हारे सब काम पूर्ण होंगे तारक दैत्य वेग ही जमलोक जावेगा तुम सब देवताओं को निर्भय कर दो यह कह शिव जी हंसे और चुप रहे हम भी हंस के जय जयकार शिव शंभु कह अस्तुति चले ॥ बरात चले जाने के बाद शिव गण उनकी सेवा करने लगे ॥ शिव व गिरजा संसार के माता पिता है हम उनका श्रृंगार क्या वर्णन करें शिव समान संसार में कोई नहीं है उन्हों ने पर ब्रह्म होकर संसार के दुख दूर करने को विवाह किया है यह हमारी लीला कह कर और सुन कर मोक्ष प्राप्त करें शिव गिरजा का विवाह मंगल दायक है जो इसको न सुने वह पशु समान है इस संसार में मुक्ति मिलने की युक्ति इससे अधिक कोई नहीं है जो शिव जी की कथा प्रीति सहित सुनेगा वह आनंद को प्राप्त होगा जो इस कथा को पढ़कर सुनावेगा वह भी आनंद को प्राप्त होगा जो थोड़ा भी पढ़ेगा व सुनावेगा मुक्ति को पावेगा सब रोग दूर होंगे अंत में मुक्ति को प्राप्त होगा ॥ इति श्री शिव पुराणे तीर्थ खेडे ब्रह्मा नारद संवादे शिव गिरजा विवाह तृतीयो खंड सशी समाप्तः लिखा रामदास वैरागी चैत्र वदी एकादशी संवत १९३२ वि० ॥

विषय—शिवपुराण का भाषा में अनुवाद ।

संख्या २७६ सी. शिव पुराण भाषा पूर्वार्द्ध चौथा पाँचवाँ भाग और छठवाँ, रचयिता—प्यारेलाल, कागज—देशी, पत्र—२३६, आकार—१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५८१६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० दुर्गाप्रसाद मिश्र, डाकघर—एटा, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः । अथ शिव पुराण भाषा लिख्यते ॥ चौथा खंड पहिला अध्याय । इतना सुनि के सौनक ने कहा हे सूत जी शिव जी का विचार सुन नारद जी ने ब्रह्मा जी से फिर क्या पूछा सूत जी बोले कि नारद जी ने ब्रह्मा से यह प्रश्न किया कि मैं ने वेद पुराणों को बहुत पढ़ा परन्तु मेरे मन की तृष्णा न गई मैं संसार भर में फिरता रहा परन्तु शिव का भेद न मिला फिर विशनु जी के कहने के अनुसार मैं आप की सेवा में उपस्थित हो थोड़ा सा शिव जी का चरित्र सुना तो मन को अति संतोष प्राप्त हुआ और यह विश्वास हुआ कि शिव जी का चरित्र अति आनंद और मंगल दाता संसार के लिये है ॥ शिव के तप बिना किसी को कुछ भी सुप प्राप्त नहीं हो सक्ता है अब मेरी इच्छा है कि मैं यह सुनूं कि शिव गिरजा के साथ विवाह करके कैलाश पर्वत पर विराजे तो फिर उन्होंने कौन से भक्तों के सुख दायक लीलायें की और हिमांचल ने विदा होकर कौन २ कार्य किये । तारक दैत्य का वध व ति वीर्य की उत्पत्ति और त्रिपुरासुर का प्रगट होना आदि सब कथा सुना दीजिये ॥

अन्त - शिव और गिरजा ने विश्वनाथ का पूजन किया और बड़े आनंद के साथ अस्तुति की फिर वीर भद्र और गणेश जी ने पूजन किया फिर लक्ष्मी और विष्णु ने पूजन किया फिर हमने सावित्री सहित पूजा की इस प्रकार सबने उसकी पूजा विधिवत की नाना प्रकार के बाजन बजने लगे और नाच गान होने लगा देवताओं की पत्नियां भली प्रकार नाचने गाने लगी किन्नर और गंधर्व गाने देवता गण आकाश से फूलों की वर्षा करने लगे

मुनिश्वरों ने अस्तुति की वेद पुराण शरीर धारण कर आये और शिव गिरजा की अस्तुति की उस समय शिव गिरजा ने सबकी ओर दया दृष्टि करके देखा जिससे हम सबके मनोर्थ पूर्ण हो गये फिर शिव गिरजा पुत्रों समेत सबके देखते देखते अंतर ध्यान हो गये और विश्वनाथ के लिंग में समा गये इस बात को कोई न जान सका शिव जी का प्रभाव अचरज से पूर्ण है फिर अपने लोक में जाकर कैलास वासी हो गये और लिंग रूप करके काशी में स्थिर रहे यह देख सबको अचरज हुआ फिर सबने अस्तुति की और मुक्ति को प्राप्त हुऐ और अपने अपने अंशों को काशी में स्थित करके चले गये और शिव का नाम जप कर उनका ध्यान करके सदा प्रसन्न बने रहे सदा शिव गिरजा के चरित्र सदा वर्णन करते रहे जिससे शिव की प्रीति उत्पन्न होती है यह शिव चरित्र अति आनंद का देनेवाला है इसके पढ़ने से शिव अति प्रसन्न होते हैं ॥ इति श्री शिव पुराणे षष्ट खंडे ब्रह्मा नारद संवाद पंच विंशो अध्याय से पूर्ण समाप्तः

विषय—शिव पुराण का भाषानुवाद।

संख्या २७७. दश लाक्षणिक धर्म पूजा, रचयिता रघू, पत्र—५०, आकार—$८\frac{1}{2} \times ६\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अष्टुदुप्)—५५०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—लाला ऋषभदास जैन, महोना, डाकघर—इटौंजा, जिला—लखनऊ।

आदि—ॐ नमः सद्धेभ्यः॥ अथ दस लाक्षणिक धर्म पूजा प्रारंभ्यते॥ श्लोक॥ उत्तम क्षान्तिं मर्यंत ब्रह्मचर्य सुलक्षणम् स्थापये दशधा धर्मं मुत्तमं जिन भाषितम्॥ १॥ ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा महि वार्जव सत्य शौच संयमत पर स्त्यागा किंचन्य ब्रह्मचर्य लक्षण धर्म अत्रावत रावतर संवौषद ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा महि वार्जिव सत्य शौच संयम तपस्त्यागा किंचन्य ब्रह्मचर्य लक्षण धर्म अत्रं तिष्ट तिष्ट ठः ठः ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा महि वार्जव सत्य शौच संयम तपस्त्यागा किं चन्य ब्रह्मचर्य लक्षण धर्म अत्र मम सन्निहतो भव भव वव षद् स्थापनं॥ × × × × उत्तम क्षमा गुण समूहों के स्थान रहने वाली है अर्थात् उत्तम क्षमा के होने से अनेक गुण प्रगट हो जाते हैं इह उत्तम क्षमा मुनियों की वहुत प्यारी है श्रेष्ठ मुनि जन इसका पालन करते है इह उत्तम क्षिमा विद्वानो के लिये चिन्तामणि रत्न के समान है। × × × ×

अंत—जिण णाह महि जुई पण मिजुई दह लक्खणु पगले पहणिरु॥ मो खेम सिंह सुय भव्व विण यजु यहो लिख भण इह करहु थिरु॥ ६॥ अर्थ॥ श्री जिणेन्द्र देव भी इस दश लाक्षिणिक धर्म की महिमा का वर्णन करते है। और श्री मुनिराज भी इसको प्रमाण करते हैं। इसलिये हे भव्य हो इसका नित्य पालन करो और अतिसय विनय सहित ऐसी श्री खेम सिंह की पुत्री होली के समान अपने चित्त को स्थिर करो॥ भावार्थ॥ आचार्य ने होली का दृष्टान्त दिया है। होली श्री खेम सिंह की पुत्री थी। इसने मन वचन काय पूर्वक दश लाक्षणिक ब्रत पालन किये थे। इन ब्रतों का पालन जैसा होली ने किया है वैसा ही भव्य जीवन पालन करो। ऐसा आचार्य का आशीर्वाद है॥ ६॥ ॐ ह्रीं उत्तम ब्रह्मचर्य धर्माकाय अर्घ्य निर्वयामिति स्वाहा॥ १०॥ अर्घ्य॥

विषय—जैन धर्म संबंधी दश लाक्षणिक धर्म पूजा का वर्णन।

संख्या २७८ ए. मानस दीपिका शंकावली, रचयिता—रघुनाथदास (अयोध्या), पत्र—१२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)-२८०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० दाताराम गौड़, राघौपुर, डाकघर—मारहरा, जिला—एटा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः श्री जानकी वल्लभो विजयते॥ ए गोसाईं जी की रामायण बिचारते सर्व संका रहित है जाते पूर्व पर लगाये तें इसी ग्रंथ में समाधान मिलता है परन्तु इस ग्रन्थ का प्रचार बहुत है। याते वहुत लोग शंका करत है ताते कछु लिषत है। शंका भाषा वद्ध करब मैं सोई॥ प्रतिज्ञा तें विरुद्ध कांड के आदि में संस्कृत कवि काहि लिखे। उत्तर देव वानो अति मंगलरूप जानि कै वा भाषा के षट लच्छन में संस्कृत हू चाहिये। शंका—निज इष्ट देव त्यागि प्रथम गणेश वंदना की है। उत्तर—गणेश का प्रथम पूजन सर्व सम्मत वा प्रथम पूजित नाम प्रभाऊ॥ संका—गोसाईं जू ने अनन्य द्विभुज रघुवर उपासक नारायण जू को उर में वसाये कोहको उत्तर—दोऊ का अभेद जानि प्रमाण—प्रगट भये श्रीकंता॥ शंका—माया जीव ब्रह्म जगदीशा। ये सब अनादि हैं विधि ने कैसे वनाये। उत्तर—उपजाने में तात्पर्य नहीं हैं। गुण और अगुण का प्रकरण है वा प्रार्थना ते विधि ने। उपजाये प्रमाण—जय जय सुननायक इत्यादि॥

अंत—जीव कै जन्म नाहीं होत और चारि अवस्था में जन्म रूप भेद पाया जाता है जैसे वाल वृद्ध इत्यादि केवल लड़िका देखे होइ फिर दूसरी अवस्था में जो देखेगा सो नहीं पहिचानेगा और जन्म संसार का नाम है और चारों जुग का जो भेद कहत है सो प्रमाण तौ समान जानव याही ते धरमन में विरुद्ध भाषत है जैसे समान और विशेष सों सब मतन में सामान्य विशिष्ट पायो जात है औ विशिष्ट में अनेक विरुद्ध देखौ परै है जैसे मास मच्छन में विन्ध्य के दखीन में वासीन कों आज्ञा उत्तर—वासी पतित होत है। हवन धातु तौ जीवन में चरितार्थ नहीं होत जैठ घट मठ आकाश का नाश पावतु है याही ते जीव व्यापक जानौ जात हैं और जन्म सूक्ष्म और स्थूल शरीर करके भाषतु है॥ जैसे ८४ लक्ष जोनि जन्म परमित कियो सो संस्कार और काल को धर्म्मन को मुख्य जानवो साम आयो॥ दोहा॥ मान युक्त मानस सुखद शंका रहित उदार। वोध रहत निज मोह वस शंका करत उदार॥ मानस माम अनेक जुत मानी मन गम नाहिं। मन साहस शंकावली क्षमव साधु मन माहिं॥ इति श्री सप्तकांड शंकावली संपूर्ण समाप्तः लिखी गौरीशंकर दूबे क्वार मासे शुक्लपक्षे त्रितीयांम संवत् १९३० वि०।

विषय—इस ग्रंथ में श्री गोसाईं तुलसीदास कृत रामायण में जो शंकायें हैं उनका समाधान किया गया है॥

संख्या २७८ बी. मानस दीपिका विश्राम, रचयिता—रघुनाथदास (अयोध्या), पत्र—८, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४०, रूप—प्राचीन, पद्य गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०, प्राप्तिस्थान—दाताराम गौड़, राघौपुर, डाकघर—मारहरा, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ मानस दीपिका विश्राम लिख्यते ।। विश्राम नाम धन्यो ताको हेतु ।। दोहा ।। विषै आप आकाश महं मन भटका जिमि चंग ॥ यहि भू उत्तर विचार मग प्रेरक कर थिर अंग ॥ अथ रामायण के परमार्थ पक्ष को विचार ॥ दोहा ॥ रामायण द्रुम मोक्ष फल गायत्री गऊ बीच । राम सुरच्छा अंकरित वेद मूल शुभ बीज ॥ वेद वेद्य पर पुरुष भो दशरथ तन यह धार । वाल्मीक ते वेद भी रामायण अवतार ॥ कुंभज मुनि निज संहिता माहीं कह्यो अनूप । रामायण अरु वेद को भिन्न न जान्यो रूप ॥ भक्त मालवर ग्रन्थ में कीन्हों यह निरधार । वाल्मीक तुलसी भये कुटिल जीव निस्तार ॥ वेद मूल हृद ते चली कथा भूमि के द्वार । आतम ज्ञान तरंगिनी पान करत सुख सार ॥ वार्ता—यातें गूढ़ाशय वेद रूप यह रामायण कथा भागते सत गुण लीला प्रति पादन करतु है अरु अंतर आशय ते परमार्थ पक्ष ऐश्वर्य छिपाइ कै कहत है यथा मानुष देह ब्रह्मांड जानौ ॥

अंत—करि प्रसंग के अंगते हरि यश हेतु जनाय । यथा भानु समता लिखे षद्यो-तोगनि जाय ॥ रामायण सरसिज सरिस । चहियत भानु प्रकाश ॥ यह प्रसंग खद्योत इव किमि कर सकत विकाश ॥ रामायण के अर्थ को को समर्थ मति वंत । यथा सिंधु खग चोंच भरि तृप्ति लहति नहिं अंत ॥ को तुलसी भाषा कवन कौन वेद को सार । कौन कोप तिहिं तिलक को चाही कहत गवांर ॥ मत्सर मद माया मदन मारे मान मरोर ॥ रामायण जाने कहा परधन परतिय चोर ॥ कवि कोविद रघुवर भगत मानस मान सुजान । की सन सिन्धु गंभीर ता मंदिर गिरि पहिचान ॥ मानस पारा वार को पार वार को जान । मंदिर गिरि बूड़त जहां मम मत की परमान ॥ अष्टा दश षट संहिता या मल तंत्र विचार ॥ धर्म नीति श्रुति सागरहिं तुलसी कृत विस्तार ॥ वरवै ॥ श्री काशी पति पितु की आज्ञा पाइ । यो गजराज कथनि मन मेल मिलाइ ॥ सरल अरथ आखर की थोरी सहत प्रभाव शांत रस बोरी ॥ दूर देश दरशावन हारी अनेक सम विधु विमल तमारी ॥ इति श्री रघुनाथदास कृत मानस दीपिका विश्राम अंग सप्तमः समाप्तः संवत् १९२० कातिक शुक्ला ११ शनिबार । जै राम सीता सीता राम ॥

विषय—मानस दीपिका रायायण का विश्राम अंग वर्णन ।

संख्या २७८ सी. विश्रामसागर, रचयिता—रघुनाथदास (अयोध्यापुरी), कागज—सफेद, पत्र—६००, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—७२००, रूप—नया, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०१ = १८४४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० बाबूराम, रामनगर, डाकघर—आवागढ़, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ रघुनाथ दास राम सनेही कृत विश्राम सागर लिख्यते ॥ श्लोक ॥ सीता रामेति जुगलं वस्तु तत्त्वेक रूपिणं । परमानंद संदोहं सर्वा राध्यं नतोस्म्यहम ॥ दोहा—सुमिरि राम सिय संत गुरु गणय गिरा सुख दानि । नाना ग्रन्थन केर मत कहौं बन्दना वखानि ॥ १ ॥ बन्दों शारद के चरण हरण अविद्या मूल । बुधि सुधि विद्या दे सुमति है मो पर अनुकूल ॥ २ ॥ छंद—एक रदन करिवर वदन सदन सुख के दुख नाशक । ईश तनय गण ईश सीस रजनीश प्रकाशक ॥ ३ ॥ रिद्धि सिद्धि बुधि देत लेत हरि

कुमति न जागत । जो सुमिरै मन लाय विघ्न ताजन के भागत ॥ जै जै गणेश गिरिजा सुवन भुवन विदित यश अपहरण । रघुनाथ दास वंदन करत बार बार गणपति चरण ॥ संवत मुनि बसु निगम शत रुद्र अधिक मधु मास । शुक्ल पक्ष कवि नौमि दिन कीन्ही कथा प्रकाश ॥ अवधि पुरी परसिद्धि जग सकल पुरिन सर नाम । रामघाट के घाट में राम निवास सुधाम ॥ तहां कीन्ह आरम्भ मैं रघुपति आयसु पाय । श्री गुरु देवा दास के पद निज हृदय वसाय ॥

अन्त—अहो संत भगवंत गुरु विनय करहु मम कान । चहौं न महि सुष देव सुख विधि सुख पुनि निरवान ॥ विधि सुख पुनि निरवान रिद्धि सिधि सकल धरीजै ॥ जहं राखौ प्रभु मोंहि तहां निज पद रज दीजै ॥ दीजै पुनि सत संग जहं तव गुण सुन वाको लहौं ॥ भक्ति विमुख कर वदन जनि दिखरायो सुख प्रद अहौं ॥ अयन तीसरे संख्या गाई । युग सहस्र नव सै है भाई । और सतत्तर जानी जोई । इतनी है चौपाई सोई ॥ दोहा साठि पंच शत जानौ । नब्बे सोरठ सोइ पिछानौं ॥ है छप्पय वावन इहि माहीं । गितिका छंद उंतालिस आहीं ॥ चौवोला जुग यामें होई । मंजु छंद यक सुन्दर सोई छंदै है मुनि कहा सुहाई । कुंडलिया मोहिं वीस लखाई ॥ तोटक यक यक दंडक जानौ । कमल यक यक तोमर मानौ ॥ रोला वेद वेद अश्लोका । रुद्र त्रिभंगी छन्द विलोका ॥ एक मालिका यामैं भाई । संख्या अपन कहा मैं गाई ॥ सो०-महिखर छंद जु एक जुग नराच छंदै अहैं । भुजंग प्रयाता एक एक कविश यामें विशद ॥ जो कुछ देखेउ चूक मम छम्यो जानि अज्ञान । परा धीन जग जीव सब ज्ञानी इक भगवान ॥ इति श्री विश्राम सागर श्री रघुनाथ दास राम सनेही कृत संपूर्ण समाप्तः । लिखतं रामनाथ त्रिपाठी मौजा गूजे पुर श्रावण वदी नौमी संवत् १९०१ वि०

विषय—रामायण आदि बहुत से धार्मिक ग्रन्थों का सार लेकर भक्ति ज्ञानोपदेश ।

संख्या २७८ डी. प्रश्नावली, रचयिता—जन रघुनाथ (अयोध्या), कागज—देशी, पत्र—३, आकार - ८ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६०, पद्य गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०१ = १८४४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामभरोसे, देवकली कलाँ, डाकघर - मारहरा, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ प्रश्नावली लिख्यते ॥

कमल	कुंद	निवारी	दुपहरिया
महादेव	जमराज	हनूमान	इन्द्र
ईश	गरुड़	पपीहा	गीध
वेला	केवड़ा	गुल्दावदी	पियावासा
राम	गणेश	शनिश्चर	भैरव
मैंना	कोयल	खूसट	वया
कलगा	सुदर्शन	गुलमेंहदी	नरगिस
भरत	पवन	जल	शारदा

टिटीरी	भरदूल	खड़रेंचा	चंडूल
कंदयल	भरुवा	गुलफिरंग	सेवती
अन्न	शुक्र	अश्वनीकु	स्वामिका
	कटनाश	तूती	सारस
गरगवा	—	—	—

अंगुली रख कर इस प्रश्न का निकालना

१	२	१३	८	२६	२४
३१	२३	२८	११	७	०
१७	१४	२०	२७	१९	०
९	१८	४	२२	५	०
३	२९	१६	६	३०	०
१५	१०	१२	२५	२१	०

अन्त—बिन वर्षा घन समुझि घर दीन्हे चयनि बिसारि। पियावास तिमि तव तजा भैरव आश निवारि ॥ तीतर त्यागे प्राण निज गा अनार तरु सूखि। नरसिंह को करु यादि अब तू मति काढ़ुइ दूखि ॥ सुमिरि शारदा के चरण चढ़े न क्यों चंडूल। नरगिस करि क्या करहिंगे जो ईश्वर अनुकूल। रहिये रहन बटेर की चहिये सुयस गजारि। लहै केतकी वास किमि मुनिवर कहत विचारि ॥ सारस वद को याद करु है सो मंगल खानि। स्वामि कार्तिक रटत जेहि शंभु सेवती मानि ॥ गुलावास की आस तजि शार दूल को ध्याव। होई सुख परदेश में कहत बृहस्पति जाव ॥ गुल फिरंग फूली विपिन भई कृपणि के दर्वि। कह रवि सुत हरि बिन बृथा तूती वोलै अर्वि ॥ श्री गुरुदेवा दास के चरण कमल धरि माथ। वरणों माणस प्रश्न यह पूरण जन रघुनाथ ॥ देव सुमन अरु खगन के नाम जान इकतीस। पंच धाम कोठा असी अंक पांच तिन सीस ॥ सकल सुनावैं नाम जो धाम मध्य ठहराय। अंक जोरि दोहा समुझि सगुनहि देव वताय ॥ इति श्री जन रघुनाथ दास कृत प्रश्नावली संपूर्ण समाप्तः संवत् १६०१ वि०

विषय—शुभाशुभ शकुनों का विचार।

संख्या २७६ ए. प्रह्लाद लीला, रचयिता—रैदास, कागज—स्याल कोटी, पत्र—२, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री रामचन्द्र सैनी, बेलनगंज, जिला—आगरा।

आदि—सहर बड़ो मुलतान जहां एक लखन राजा। तहां जनमें प्रहलाद सुर नर मुनि के काजा ॥ पूछौ विप्र बुलाइ कै जनम्यो राजकुमार ॥ या सम तो कोई नहीं, असुर संहारण हार ॥ सुत धौरों पहलाद कौ रण गुण तै पठैरो ॥ मैं पठैरो राम को नामा ओइ जान हीं जानौ। राम मौ छोड़ि तीसरो, अंक न आनौ ॥ कहा पढ़ावै बावरे और सकल जंजार। भौ सागर जम लोक ते मुहि कौन उतारे पार ॥ २ ॥

अन्त—अस्त भयौ तब भानु उदय रजनी जब कीन्हा। थंभा में ते निकसि जांघ पर जोधा लीन्हा ॥ नष सों निझव विडारिया, तिलक दिया महराज। सप्त लोक नव खंड

में, तीन लोक भइ राज । जहां भगत को भीर तहां सब कारज सारे ॥ हमसे अधम उधारि कीऐ नरकन ते न्यारे ॥ सुर नर मुनि गंद्रप पढ़ै, पूरण ब्रह्म निवास ॥ मनसा, वाचा, कर्म्मणा, गावै जन रैदास । इति प्रहलाद लीला ॥ सम्पूरण ॥

विषय—प्रह्लाद चरित्र वर्णन ।

संख्या २७९ बी. रैदास जी का पद, रचयिता—रैदास, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—५४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १६९६ = १६३९ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा हरीदास छर्रा, डाकघर—छर्रा, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री रामजी सति ॥ अथ रैदास जी का पद लिख्यते पद—परचै राम रमे जो कोई । पारस परसे दुविधा न होई ॥ जे दीसै सो सकल विनास । अण दीसै नाहीं विस वास ॥ करम रहित जो उचरे राम । सो भगता केवल निहकाम ॥ फल कारण फूलै बन राइ । उपजै फल तब करम नसाइ ॥ बटक बीज का पहुआकार । पसर्‍यो तीनि लोक विस्तार ॥ जहां का उपज्या तहां बिलाई । रुहज सुनि में रहौं लुकाई ॥ जो मन व्यंदै सोई व्यंद । अमावस में दीसै चंद्र ॥ जलमें जैसे तूंबा तिरै । परचै पिंड न जीवै मरै ॥ सो मन कौन जु मनको खाइ । विन द्वारे त्रिव लोक समाइ । मनि की महिमा सव कोइ कहै । पंडित सो जो उनमनि रहै ॥ घृत कारण दधि मथै सयान । जीवति मुकति सदा निवाणि कहै रैदास परम वैराग । राम नाम किन जपहु सभाग ॥

अंत—राग धनाश्री— मैं का जानो देव मैं का जानों मन माया के हाथ बिकानो ॥ चंचल मनवां चहूं दिशि ध्यावै पांचौंइन्द्री हाथ न आवै ॥ तुमतो आदि जगत गुरु स्वामी हम कहियत कलियुग के कामी ॥ लोक बेद मेरे सुक्रत बड़ाई लोक लीक मोपै तजी न जाई ॥ इन मिलि मेरो मन जु विगार्‍यो दिन दिन हरि सों अंतर पार्‍यो ॥ सनक सनंदन महा मुनि ज्ञानी सुख नारद व्यास इहै जु बखानी ॥ गावत निगम उमापति स्वामी सेस सहस भुज की रतिगामी ॥ जहां जहां जांव तहां दुखकी पापी जो न पत्याहु निगम हैं साखी ॥ जम दूतन हू वहुविधि मार्‍यो तहूं निलज अजहूं नहिं हार्‍यो ॥ हरि पद विमुप आस नहिं छूटै ताते त्रिश्ना दिन दिन लूटै ॥ वहु विधि कर लीये भट कावै तुमहिं दोष हरि कौन लगावै ॥ केवल राम नाम नहिं लीयो संतत विषै स्वाद मुख दियो ॥ कहै रैदास कहां लौं कहिये बिन रघुनाथ बहुत दुख सहिए ॥ इति श्री रैदास जी का पद संपूर्ण समाप्तः लिखतं कैसोदास ॥

विषय—ज्ञान और भक्ति का वर्णन ।

संख्या २८०. ज्योतिष पद्धति, रचयिता—रामचंद (मेवाड़), आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२६०, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८५८ = १८०१ ई०, लिपिकाल—सं० १८५८ = १८०१ ई०, प्राप्तिस्थान—त्रिभुवन प्रसाद त्रिपाठी, पूरेपरान पाँडे, डाकघर—तिलोई, जिला—रायबरेली ।

आदि—दोहा-ॐ गज-मुष सनमुष होतही विघन विमुख ह्वै जात । ज्यों पग परत प्रयाग मग पाप पहार विलात । जे अठये भवन राह मंगल केत युत परै तौ लोह छात

उपजै । सूर्य राहु युक्त परे तौ लोहवा अग्नि ते मरण । रवि मंगल अठये भवन में परै तौलो हवा अग्नि अग्नि धात । तथा रुधिर प्रकोप वाग रमी रक्त श्रावना छांत उपजै । वरेह भवन मंगल परे तोवां दृष्टि होइ तो नेत्रेथवा करण विकारः ॥ शनि मंगल तथा राहु । मंगल बरहे परे तो मद्र मांस भोजी लंपट दृष्टे नेत्र कर्ण विकारः

अन्त—मीन रे । शनिः । कुटंवणो, चंचलाई वणो, झिर व्वाणो सिल्य ज्ञाणे ॥ विद्या जाणे ॥ धलवणो करै उद्यमी व्वाणे । नम्रताई व्वणी । काम भोग वे विन्दु खुलास खलित वेगो होय । वैपार मोह । विवहारमाहे समुकणे । व्यसनो । परेक्षा व्वणे जाणे । धन मोह विष भक्षण उपजै । कामी न्याव चाले ।

विषय—फलित ज्योतिष वर्णन ।

टिप्पणी—फारसी भाषा में लिखा है कि मारवाड़ के बहादुर सिंह दीवान की आज्ञानुसार यह पुस्तक लिखी गई थी ।

संख्या २८१ ए. जिज्ञासा वोध ग्रन्थ, रचयिता—रामचरण (साहीपुर), कागज—देशी, पत्र—१३६, आकार—८ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—५०, परिमाण (अनुष्टुप्)—५९५०, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८४७ = १७९० ई०, लिपिकाल—सं० १९०४ = १८४७ ई०, प्राप्तिस्थान—चौबे जमनालाल, अलीगढ़, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—अथ जिज्ञास वोध ग्रन्थ लिख्यते ॥ अस्तुति—रामतीत राम गुरुदेव जी पुनि तिहूं काल के संत । जिनकूं रामचरण की वंदन वार अनंत ॥ आज्ञा पाऊं परम गुरु गाऊं वोध जज्ञास । राम चरण चरणा रता हिरदे अधिक हुलास ॥ करि हुलास भजि राम कूं सव विधि पूरण काम । निज जग्यासा विचारि कै सतगुरु कूं परनाम ॥ गुरु गोविन्द सरब गहै दसौ दिसा भरपूर ॥ राम चरण उर सुमिरिये भरम न गिणिये दूर ॥ द्वार नहीं भर पूर हैं वाहर भीतर राम । सो सरूप परगट गुरू ताहि सदा परनाम ॥ कुंडल्या—मुर सद कूं सजदा करै जे साईं माने सोइ ॥ वंदगी जुगति विच्यान्यां ॥ आलम औरत जुलुम रहे तिस वास विसान्यां ॥ राम चरण उन पीर के पैर मुरीदा जोइ । मुरसद कूं सजदा करै जे साईं मानै सोइ ॥ छंद मन हरन—कीजिए परनाम नित सत चिदानंद गुरु, सरु निज धरम करै करत प्रकास जू ॥ महा गुण ग्यान दीनो बखानी है, गिरा आप ताप जो निवारि सारी देति है निवास जू ॥ ऐसे गुण सागर दयाल महा दीनन के, आवत नजीक जाकी काटै दुख पास जू ॥ राम ही चरण गुरु देव को प्रणाम करै । धरै उर ध्यान सुधि पावत जज्ञास जू ॥

अन्त—दोहा—गुरु सतुक्ति अति अगम है निगमहू लहै न पार । राम चरण वन्दन करै नमो गुरु निरकार ॥ छंद मनहरन—निराकार ब्रह्म नित गति है अकास वत । आकास मै आभ गुर ऐसे करि जानी है ॥ आभ ते प्रगट जल त्यौंही गुरु ज्ञान दाता वा तैने पै भोमिया हां जग्या सानि पानी है ॥ एह तन कारन प्रगट आप राम रूप दास कूं । निवास हेति दया उर आनी है ॥ रामही चरण कहै नमो जी कृपाल गुरु । दया करि कियो मोहिं आपकै समानी है ॥ सोरठा—कीओ आप समानि अपनो अनुचर जानिकै ॥ मेटी दुतिया

वानि राम चरण पद लीन जू ॥ अरेल—राम चरण पद लीन तीन के पार है । सत गुरु दीन दयाल कियो उपगार है ॥ साधन सुध जज्ञास भयो उर सोध है ॥ परिहां पायो सुख भरपूर जग्यास बोध है ॥ अठारा सै सैताल का संवत कातिक मास। बुधि दोज सोमार दिन पूरण ग्रन्थ जग्यास ॥

विषय—ज्ञानोपदेश ।

संख्या २८१ बी. विश्रामबोध ग्रंथ, रचयिता—रामचरण, कागज—देशी, पत्र—९६, आकार—१० X ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—५०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८५१ = १७९४ ई०, लिपिकाल—सं० १९०३ = १८४६ ई०, प्राप्तिस्थान—गनेशदत्त पांड्या, बीरपूर, डाकघर—दतौली, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ विश्राम बोध ग्रन्थ लिख्यते । अस्तुति ॥ रम तीत राम गुरु देव जी पुनि तिहूं काल के संत । जिनकूं राम चरण की वंदन वार अनंत ॥ सतगुरु परम कृपाल कू करि अस्तुति परनाम । राम चरण चित लाइ चित पाइ रहे विश्राम ॥ छांड़ि मनोरथ कामना राम नाम लौ लाइ । रामचरण विसवास पद गुरु किरपा सूं पाइ ॥ गुरु किरपा सूं उपज्यो उर में उत्तम सोध । राम चरण ताते कहूं ए विसराम जु बोध ॥ कुंडल्यां—बोध बुधि दाता गुरू सार दिखावण हार । उनकूं वन्दन कीजिये पल पल बारंबार ॥ पल पल बारंबार करै उर नैन उजारा ॥ सदा एक रस जोति करै नहिं होइ अंधारा ॥ राम चरण सुख कार गुरु आनंद काज पयोध ॥ गुरु गोविन्द सो अधिक है देवै उत्तम बोध ॥ गुरु गोविंद सूं अधिकता कहै सास तर संत । गुरु भिलिया से पाइए निज पद तत भगवंत ॥ निज पद तत भगवंत और साहिक नहिं कोई । जन के वचन विचारि सार हिरदै धरि सोई ॥ राम चरण भजि राम कूं यो परंपरा वेदंत । गुरु गोविंद से अधिकता कहैं सासतर संत ॥

अंत—छंद हंसाल—गुरु ज्ञान रूपं महिमा अनूपं गुणा तीत पारं सबै तो अधारं ॥ अध्यातम वाचा । सुधा बैन सांचा । पीवै तोर दासं । पावै अविनासं ॥ ह्वै है नहिं कामा मिटै भ्रत जामा । उधारे अनेकं गुरू जी अलेपं ॥ हमे सरणि लिए महा पद दिये । किये आप रूपं गुरू जी अनूपं ॥ अनूपं अतोलं अतोलं अतोलं । कहे राम चरणां सुनो मोर करणां ॥ दोहा—करणा सुनि कृपाल जो मोहि लगाए पाइ । आप मिलाए आप मे दुतिया भेद मिटाइ ॥ छंद वेताल—दुती भेद भै भरम वीता नदीता सब काम जू । नह काम निरमल भया निरभै पाइयो अभिराम जू ॥ नित सुख सानन्द मांही लीन आगम धाम जो । एक रस सरवंग पूरण राम चरण विराम जो ॥ सो०—ए विश्राम जु बोध सतगुरु किरपा करि कह्यो । लह्यो जु आतम सोध राम चरण चरणां रता ॥ अठारा सै अक्यावन आसोज सुकुल पष होइ । दोज तिथि गुरु वार कूं ग्रंथ जस पूरण होइ ॥

विषय—निर्गुण ब्रह्म की कथा वर्णन ।

संख्या २८१ सी. समतानिवास ग्रंथ, रचयिता—रामचरण (साहीपुर, राजपूताना), कागज—देशी, पत्र—६८, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—५०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८५२ = १७९५ लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा रामगिरि, भौसानपुर, डाकघर—गौंड़ा, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ समता निवास ग्रन्थ लिख्यते ॥ अस्तुति ॥ रमतीत राम गुरुदेव जी पुनि तिहूं काल के संत । जिनकूं राम चरण की वंदन बार अनंत ॥ परम गुरू परमातमा रमता राम निधान ॥ राम चरण कर जोड़िकै करिहै वंदन मान ॥ बंदन बिधि कर जोरि करि उर में अधिक हुलास ॥ राम चरण गुरु राम द्यो सुष समता जु निवास ॥ सुख समता बकसीस दे सतगुरु किये निहाल ॥ राम चरण भव तारिहै समरथ संत कृपाल ॥ कुंडल्या—कासी भया कबीर जी ज्यूंही भया दात डैसंत ॥ भवसागर की धार सैं ज्यौं ताऱ्या जीव अनंत ॥ ज्यों तारा जीव अनंत राम कै भजन लगाया । कूकस भरम उड़ाइ कृपा करि कंणप कराया ॥ राम चरण बंदन करै सो मोरे उर वर तंत ॥ कासी भया कबीर जी ज्यूंही भया दांत डैसंत ॥ भला पधारे कठिन जुग वपु धारण करि संत ॥ किते पतित पावन किए हमसे अधम अनंत ॥ हमसे अधम अनंत नांव नवका बैठारै । षेवट आप दयाल षेइ कर भव जल तारे ॥ राम चरण कर जोरि कै उर अस्तुति करंत ॥ भला पधारे कठणि जुग बपु धारण करि संत ॥

अंत—छंद पधरी—जपि राम नाम कारज कीन । तब मिटी बासना हुती कीन ॥ जब लिये आय आपै सम्हाइ । रिव वंवहु तोरिव मिले जाइ ॥ गुरु तेज रूप मन जल सुकाइ । अब बंबदास मिनतान पाइ ॥ पद गुणांतीत अभीति निति । मन बाच अगोचर अगमगति ॥ गुरु मिहर वानगी पाइ दास । ए रामचरण समता निवास ॥ अब भया थीर गंभीर धाम । तन सहज भाइ समता अराम ॥ एक ठण गुरु क्रिया कीन । महाराज आज मों देषि दीन ॥ षराषरी अपणाइ आप मेटि दिये सब ही संताप ॥ मन वचन जोरि कर कहै दास । राम चरण पायो निवास ॥ जिभ्या एक महिमा अनंत गुरु नमो नमो कृपाल संत ॥ कुंडल्या-ये किरपा क्रिपाल जी कीन्हीं आप दयाल ॥ राम चरण जी केलि उर बोले बचन रसाल ॥ बोले बचन रसाल राम रस जामे भरिया ॥ अणाभौ अगम अगाध जथारथ जो उचरिया ॥ दास बिचारै राम जन सोही सदा निहाल ॥ ले समिता सुमरै राम कूं बिपति होइ पैमाल ॥ संवत्-समता अष्टादसमों पोष सुदी वावना । एकै सौ मथ ग्रन्थ संपूरण भावना ॥

विषय—शिक्षाप्रद दोहों का संग्रह ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता राम चरण साहिपुरा निवासी कृपाल दास के शिष्य थे । निर्माण काल संवत्ः—संमता अष्टादस में पोष सुदी वावना । एकै सौ मथ ग्रन्थ संपूरण भावना ॥ यानी निर्माणकाल संवत् १८५२ वि० है । इनकी मृत्यु संवत् १८५५ में हुई है । इसका दोहा इस प्रकार है ॥ ए वाहक उर मोह पधारे धामकूं । रंरंकार में लीन

उचारे रामकूं ॥ अठारा सै पचपन बुधि पाँचै परी । परिहां वैसाख मास गुरुवार देह त्यागन करी ॥ लिपिकाल—संवत् १९०० वि० है ॥

संख्या २८१ डी. विस्वास बोध ग्रंथ, रचयिता—रामचरण (साहीपुरा, राजपूताना), कागज—देशी, पत्र—१००, आकार—८ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—५०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८४९ = १७९२ ई०, लिपिकाल—सं० १९०४ = १८४७ ई०, प्राप्तिस्थान—चौधरी गंगाराम-इजलास, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ विस्वास वोध ग्रन्थ लिख्यते ॥ रम तीत राम गुरु देव जी पुनि तिहूं काल के संत । जिनकूं राम चरण की वंदन वार अनंत ॥ गुण अगाध त्रिगुण परैं निरगुण राम सरूप । राम चरण नित बंदना करि हूं सदा अनूप ॥ करि वंदन विधि भावना नित निरमल परकास ॥ मन थिरता के हित कहूं ऐह वोध विसवास ॥ राम निरंजन देव कूं राखूं उर विसवास । गुरु वाहक साहिक सदा राम चरण निज दास ॥ दास आस अविनास पद सद विसवास विचारि । सत गुरु कूं सिर नाइके करिहौ ग्रन्थ उचार ॥ चंदरायणां ॥ करिहौं अवै उचार वोध विसवास को ॥ जगतें बेड़ों पार करौ प्रभु दास को ॥ ज्यों चितवनि सबै मिटाइ गाइ अनूपरे । परिहां राम चरण गुर राम एकही रूप रे ॥ मन हरन ॥ राम गुरू एक सौ बबेक करि मान भाइ, बड़ाई सो जानि एह देह राम जाप जू ॥ पोषरु संतोष रीति रीति सूं करत रष्या, देह दष्या दान जू निवारैं पाप दाप जू ॥ ऐसो ए दयाल गुरु देव जू निहाल करै । ताते ताहि बंदन करत मिटै ताप जू ॥ राम ही चरण जो सरण सदा सुख दानी निधानी जो राम रूप मिले गुरु आप जू ॥

अन्त—कुंडल्या—ज्ञान लह्यो गुरु देव सैं जो भयो अमन मन सोइ । गयो तिमिर अज्ञान को रह्यो प्रकासिक होइ ॥ रह्यो प्रकासिक होइ सार बुधि दिल दर सावै ॥ नहीं असुध को भास दास पद वदो न पावै ॥ राम चरण शरणौ सुखी ज्या ऐसी बरतिन जोइ ॥ ग्यान लह्यो गुरु देव सैं जो भयो अमल मन सोइ ॥ छंद कपाल—सतगुरु अमल कियो मन मेरो चेरो जानि चितायो ॥ मेटि अधीरज धीरज दीन्ही निज विसवास दिढ़ायो ॥ करि सुचेत हेत दे अपनो विसवास वोध ये गायो ॥ सारी रैसि राम मिलवे की जाको भेद बतायो ॥ भजन ज्ञान वैरागरु भगती सत्ति सुधा मई वोले ॥ जो जो अगता वंधन होते सो सो सांसै खोलै ॥ संसै मेटि किया निर संसै अंसै अंस मिलाया ॥ जीव ब्रह्म की भिनिता भागी आपै रूप समाया ॥ ए परताप परम गुरु केरो फेरा सबै मिटाया ॥ निरभै किया आप करि किरपा मैं चरणूं शिरनाया ॥ पुनि वलिहारी बारंबारा सत गुरु दीन दयालं ॥ राम चरण कर जोड़ करै नित नमो नमो कृपालं ॥ सो०—अठारा सै गुणचास संवत् भाद्र पद मास सुधि ॥ पूरन ग्रन्थ प्रकास चतुरदशी गुरुवार है ॥

टिप्पणी—गुरु व परमात्मा में विश्वास करने ही से मनुष्य बंधन से छूट सकता है आदि वर्णन ।

विषय—इस ग्रन्थ के रचयिता रामचरण थे, जो साहिपुरा राजपूताना निवासी थे । इनके बनाये अनेक ग्रन्थ हैं । निर्माण काल संवत् १८४९ वि० है जो इस प्रकार लिखा

है:—अठारा सै गुणचास संवत् भाद्र पद मास सुधि । पूरन ग्रन्थ प्रकास चतुर दशी गुरुवार है ॥ लिपकाल संवत् १९०४ वि० ॥ इनकी मृत्यु का समय संवत् १८५५ वि० है ॥

संख्या २८९ ई. अमृत उपदेश, रचयिता—रामचरण (साहीपुरा राजपुताना), पत्र—७२, आकार—८ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—५०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१५०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८४४ = १७८७ ई०, लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा बिहारीदास-रतनगढ़ी, डाकघर—विसवाँ, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ अमृत उपदेश लिख्यते ॥ अस्तुति ॥ रम तीत राम गुरु देव जी पुनि तिहू' काल के संत । जिनको राम चरण की बंदन वार अनंत ॥ राम निरंजन ध्यान मई सतगुरु कूं परनाम । कहू' इम्रत उपदेस एह देहु वुधि वरियाम । वुधि सुधिता होइ तव उपजै इम्रत वैन । राम चरण दढ़ता बंधै रोम रोम होइ चैन ॥ छंद मन हरन—रोम रोम होइ चैन वैन जो बखानैं, गुरु करूं में सतुति कूं न तोल सूं तुलाई है ॥ चंद सूर सम कहू' सो तो उदय अस्त होइ, धरा ज्यूं बखानूं धीर धरा न रहाइ है ॥ अतोले सुमेर सो तो ताहू को बतावै तौल, अथग समंद कूं भानद जू थगाई है ॥ राम ही चरण कहै गुरु जी अगाध गति सिष है चात्रग स्वांति नीर कूं जंचाई है ॥ दोहा—चात्रग जाचै नीर तछि पीर हरै घन पलक की, रामचरण किरपाल की वलिहारी पल पलक की ॥ कुंडल्या—राम मई गुरु जाणिये गुरु मई जाण राम । गुरु मूरत को ध्यान उर रसना उचरै राम ॥ रसना उचरै राम भरमना उर में नाहीं ॥ गुरु गोविन्द तन एक देषि व्यापक सब माहीं ॥ राम चरण कह जाइये ए घटि वधि कोई न ठाम ॥ राम मई गुर जाणिये गुर मई जाणो राम ॥

अन्त—मैं हूँ तोर चरणा परानित स्वामी । तुमे सांनकूलं भए अंतर जामी ॥ दई मोहि धीरं अभीरं करी हैं । दोउ हसत सीस दया से दिए हैं ॥ रचे आप सरणां एक रणा सुणी हैं । उदय भाग मेरो भलाये वणी हैं ॥ किए मुकति रुपाहनी जग जालं । कहै राम चरणां नमामी कृपालं ॥ दोहा—सिर ऊपर सत्त गुरु तपै क्रिपाराम जो संत । राम चरण ता सरणि मैं ऐसो पायो तंत ॥ तंत दियो जग तरण कूं राम नाम निरधार । राम चरण भज रैणि दिण गये गुणा ते पार ॥ अमर भये गुरु वैन सुणि चैन भये चित पूरि । काल जाल में भरमना सकल निवारे दूर ॥ दूरि निवारे करि दया दे इम्रत उपदेस । रामचरण क्रिपाल कूं किये जतन मन पेस ॥ ए इम्रत उपदेस अति संत बचन वरियाम । राम चरण भावै भलै सिर पर सतगुरु राम ॥ इति श्री इम्रत उपदेस ग्रन्थ राम चरण कृत संपूर्ण संवत् १८४४ वि०

विषय—उत्तम उपदेश वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता राम चरण साहपुरा निवासी थे । निर्माण काल संवत् १८४४ वि० है, लिपिकाल संवत् १९०० वि० है । इनकी मृत्यु संवत् १८५५ वि० में

हुई थी। इसको इस प्रकार लिखा है:—ए बाहक फुरमाह पधारे धामकूं। रंकार में लीन उचारे रामकूं ॥ अठारा सै पचपन बुधि पांचै परी। परिहां वैसाख मास गुरुवार देह त्यागन करी ॥

संख्या २८१ एफ. रामचरण के शबद, रचयिता—रामचरण (साहापुर राजपूताना), पत्र—८०, आकार—८ X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—५०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३५००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवदत्त वैद्य, बलाई का नगला, डाकघर—विजयगढ़, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ रामचरण के शब्द लिख्यते ॥ राम तीत राम गुरु देव जी पुनि तिहूं काल के संत। जिनकूं राम चरण की वंदन वार अनंत ॥ प्रथम वंदन गुरु देव कूं पुनि अनंत कोटि निज साध। कहूं एक चिन्ता वणी देउ बाणी विमल अगाध ॥ बधे स्वाद रस भोग जे इन्द्रियां तणे अरथ ॥ उन जीवन के चेतिवे कहूं चिंता वणि ग्रन्थ ॥ राम चरण उपदेश हित कहूं ग्रन्थ विसतार। पन्यो प्राण भव कूप में सो निकसै अरथ विचार ॥ चामर चंद—दिवाना चेति रे भाई। तू सिर गजब चलि आई ॥ जुरा की फौज अति भारी। करै तन लूटि के पवारी ॥ साईं वेगि अपणध्याइ। पीछे जुरा दावै आइ ॥ तजि संसार का सब धंध। एतो सही जम का फंद। अब तू राम सरना गाइ। वीतो जनम अहिलो जाइ ॥ तेरा जणम की सुणि यादि। मरख खाइये नहिं बादि ॥ पाई दुलभ मानुष देह। अब हरि सुमिरि लाह्वा लेहे ॥ गाफिल होइ मत भाई। औसर वहुत नहिं पाई ॥

अंत—दुष मा सवद संसार में उलटे दुखी पुकार। जैसे दुधारा खंग ज्यूं करै वध परहार ॥ कड़ी वचन में संग लिया मीठै नहीं मिलाइ ॥ लंबो उठता बैठता दुर्जन बड़ा संताप ॥ नष दर वाहिर भीतरां जल धर अगन उचारि ॥ सिव सुत नारि विचारि के मधि की मधि निवारि ॥ तेरा मैं मेरा का है तेरा मेरा नाहिं ॥ तेरा मैं मेरा कहै सो बूड़ि जाइ भौ माहिं ॥ मुक्ति ग्यान पूजि परम पद रसिक होइ रस लेइ। राम चरण चहुं फड़न के मति धुर अथिर जेइ ॥ अठारा सै षट वर्ष मास फागुन बुदि सातैं। संत पधारे धाम सनीचर वार विख्यातें ॥ बत्तीसै क्रिपाल छठि भद्र पद सुदि सुकर। छाड़े आप शरीर परम पद पहुंचै मुकर। पचपन कै वैसाख बुदि पांचै गुरुवार ॥ राम नारण तन त्यागि के लीन भये निज निरंकार ॥ सत गुरु संत कृपाल जी राम चरण सिष तासु के। कारिज कर करण मिले तुम गुरु रामजन दास के ॥ इति श्री राम चरण के सबद संपूर्ण समाप्तः लिखतं राम दास वैरागी। संवत् १९०० वि० भाद्र पद अष्टमी जलम श्री कृष्ण जी का दिन—

विषय—निर्गुण भक्ति और ज्ञानोपदेश।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता राम चरण शाहपुरा (राजपूताना) के निवासी थे। इनके गुरु का नाम कृपाल दास था जो संवत् १८३२ में मृत्यु को प्राप्त हुए। राम चरण के शिष्य रामजन थे। इनके ग्रंथ संवत् १८४२, १८४७, १८४९, १८५१, १८५२ के निर्मित मिलते हैं। इनकी मृत्यु संवत् १८५५ में हुई ॥

संख्या २८१ जी. अणभै बिलास, रचयिता—रामचरण (साहीपुरा, राजपूताना), पत्र—१००, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—५०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४३७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८४५ = १७८८ ई०, लिपिकाल—सं० १९०१ = १८४६ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा परमानंद दास, मुरसान कुटी, डाकघर—मुरसान, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ ग्रन्थ अणभै बिलास लिख्यते रमतीत राम गुरुदेव जी पुनि तिहूं काल के संत । जिनकूं राम चरण की बंदन वार अनंत ॥ नमो निरंजन राम जू नमो गुरू गुण पार । राम चरण बंदन करैं मैं तुमरे आधार ॥ सरजन हारा रामजी संत गुरु वंदि विलास । हरिजन किरपा होइ बुधि कहूं अन भोज विलास ।। मन हरन छंद—अनुभो विलास कहूं सांसो वेका सद हूं । सोग रोग भानि सारा भव को निवास जू ।। उदित आनन्द होइ दुंद वाद दुप खोइ । जोइ जग पार निराधार कौ प्रकास जू ॥ राम ही चरण अनुभौ अनूप लहै, पाइ गुरु ज्ञान जो निधान को उजास जू ॥ दोहा—यह उजास गुरु ज्ञान सों उर लोचन परकास । रवि ससि उदै हिये न होत उजास ॥ कुंडलिया—सहस सूर ससि के उदे हिये न होत उजास । सत गुरु ज्ञान उदोत से हिरदै होत प्रकास ॥ हिरदै होत प्रकास भरम अधियारो भागै ॥ सुपना वत संसार जानि सोवत सो जागै ॥ परपि भजै परमातमा रखै न मैली आस । सहस सूर ससि कै उदै हिये न होइ उजास ॥

अन्त—याको है सवाद मीठो दीठो हम चापि ऐह । फीको लगै काम राम राम जी सों राग हैं ॥ उत्तिम सवद सत नित जाकी सोभ भरी । उचारी है गिरा ग्यान अगता ज्यौं त्यागी हैं ॥ भगति भजन मन जीतिवे गति कही, गही जो विचार वान वोही बड़भागी है ॥ अनभै विलास महा सुख को निवास जानौं । विपानू जो काहा एह परम बिराग है ॥ राम चरण महराज कै अनभौ छैल अनूप । ताकी जोड़ि बनाइ एह कीनो ग्रन्थ सरूप ॥ साहि पुरै सुभ धाम सत संगति संता, सरणि ग्रन्थ बरण्यो यह नाम निज अणभोज विलास जू ॥ राम चरण गुरु देव अगम छौल अण भै कही । जाको अति गुणभेव कहौ कौन जानै राम जन ॥ राम भजन प्रकास सतगुरु किरपा सूं भयो । सो उर हिरदै हुलास ग्रन्थ जोड़ कही राम जन ॥ संवत् सिष्या सार अठारा सै पैताल जू, महा सुध भूवार पून्यो पूरण ग्रन्थ हो ॥ इति श्री अणभै विलास ग्रन्थ संपूर्णम् लिखा संवत् १९०२ ॥

विषय—निर्गुण मत के अनुसार ज्ञानोपदेश ।

संख्या २८१ ए. राम रसाइनी, रचयिता—रामचरण (साहीपुरा), कागज—देशी, पत्र—४०, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—५०, परिमाण (अनुष्टुप्)—२००८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा परमानन्द दास, मुरसान कुटी, डाकघर—मुरसान, जिला—अलीगढ़ ॥

आदि—श्री गणेशायनमः ।। अथ राम रसाइनि ग्रन्थ लिख्यते ॥ रंरं तीत राम गुरु देवजी पुनि तिहूं काल के संत । जिनकूं राम चरण की वंदन वार अनंत ॥ दोहा ॥ सत गुरु

परम निधान पद हद सूके हद जोइ । राम चरण वन्दन करै ब्रह्म रूप नित सोइ ॥ ब्रह्म रूप गुरु संत जू परगट जन किरपाल । राम चरण वन्दन करै सत गुरु परम दयाल ॥ बंदन कर बिनती करूं सुनो परम गुरु आप । राम चरण की अरज यह भौ भै हरण संताप ॥ झूल राग—भव भंजन कौं गुरु आप सही दिन रूप प्रकास कराइ है जी ॥ गुरु वारा कला इक साहि प्यारे निज धाम सो राम मिलाइ है जी ॥ जिथा होइ सी चीज नजरि आवै मग छांडि न भरम भुलाइ है जी ॥ जन राम चरण होवे सिधि कारि जसो गुरु साषि बताइ है जी ॥

अंत—ए राम रसाइनि वरणिये ग्रन्थ सुधा मई सार । महराज अमी वरषा करी जामे एह विचार ॥ राम चरण महराज मुख अमरत बरसा कीन । पी पी जावै दास जो आस उन पद लीन ॥ आस दास की एक रस तामें फंसे न कोई राम । लिया ग्यान बैराग का कहै राम ही राम ॥ सबद एक महराज का नग मोताहल जोइ । ग्रन्थ जोड़ कर रामजन माना जादु जु होइ ॥ ए वाहक उधारक रिण कूं राम चरण जी भाषैं । राम रसाइनि रस का भरिया आप्र सबन कूं दाषै ॥ ताकी जोड़ ग्रन्थ यह परगट राम जन बण बायो ॥ ग्यान भगति बैराग जुगती मुकथी पंथ बतायो ॥ राम चरण जी सत गुरु मेरा सुध सरूप सदाई । जेरो अण में सबद उचारे सबहीं को सुखदाई ॥ ये वाहक फुर माह पधारे धाम कूं । ररंकार में लीन उचारे राम कूं ॥ अठारा सै पचपन बुधि पांचै परी । वरिहां वैसाष मास गुरुवार देह त्यागन करी ॥ इति श्री राम रसाइनि ग्रन्थ राम चरण कृत संपूर्ण समाप्तः ।

विषय—राम रसायन वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता रामचरण थे । इनका जन्म संवत् १८०६ वि० में हुआ और मृत्यु संवत् १८५५ विक्रम में हुई । ये साहिपुरा राजपूताना निवासी थे । इस को इस प्रकार लिखा है ॥ जन्म संवत्ः—अठारा सै षट वर्ष माह फागुन वुदि सातें । संत पधारे धाम सनीचर वार विख्याते ॥ मृत्यु संवतः—पचपन कै वैसाख वुदि पांचै गुरु वार । राम चरण तन त्यागि के लीन भये निराकार ॥

संख्या २८१ आई. सुखविलास, रचयिता—रामचरण (साहीपुरा, राजपूताना), कागज—देशी, पत्र—९६, आकार—८ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—५०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३९६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८४६ = १७८९ ई०, लिपिकाल—सं० १९०५ = १८४८ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा परमानन्द दास, मुरसान कुटी, डाकघर—मुरसान, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ सुख विलास लिख्यते ॥ रम तीत राम गुरुदेव जी पुनि तिहूं काल के संत । जिनकूं राम चरण की बंदन वार अनंत ॥ परम गुरु परमातमा रमता राम अद्वेव ॥ उर बंदन आठौ पहर राम चरण नित सेव ॥ नित ही बंदन बंदगी रसना राम उचार ॥ अभैदान आनन्द कर नमो नमो दातार ॥ कवित्त—सतगुरु सम दातार और नहिं जगतर माही । राम सबद बकसीस करै कुछ बंछै नाहीं सकल धरम ता मांहि वड़ो समता को सागर । रहै धारि पर तीत सोइ

जन होइ उजागर ॥ रामचरण भौ धार का दुख दालिद सब जाइ । भरम भेद सबही मिटै सुष में रहै समाइ ॥ छंद पधरी ॥ मैं शरण तुम्हारी दयानाथ । मन नैन उभै जोरे जु हाथ ॥ गुन तीन पार गुरु ज्ञान रूप सुधा सिन्धु पूरन अनूप ॥ प्रभु कूंन सुख कैसे समाइ । ऐह भेद कहियो वनाइ ॥ तुम वैन अमी भरिया रसाल । मोहि श्रवन द्वार पावों कृपाल ॥

अन्त—सोरठा—राम चरण महराज सुष विलास वाइक कहे । कलि जीवन के काज दया विचारी उर महीं ॥ राम चरण जी सतगुरु मेरा दया करी है भारी । जिनये अनभै वैन उचारे सबद कहे सुख कारी ॥ रतन अमोलक सतगुरु वाइक जाकी जोति अनूपा । ताकी जोड़ि ग्रन्थ ए कीन्हो सुख विलास सुख रूपा ॥ ए गुरु मिहरि भई मो ऊपर तब ये जोड़ बणाई । राम जन सरणागति तुम्हरी सत गुरु रखो सदाई ॥ छुद्र बुद्धि सुधि नहिं मोरे ये किरपा गुरु कीन्हा । जाते भेद पाइ गुरु प्रगट ग्रन्थ जोड़ ये चीन्हा ॥ नगर साहि पुर जाणि सुभ सत संगीत । धाम है ग्रन्थ वरण्यो परमाण सुख विलास सुख रूप जू ॥ अठारा सै छियाल ए संवत् संख्या कही । मघश्र सुधि विलास तीज तथिर गुरुवार है ॥ इति श्री सुख विलास ग्रन्थ संपूर्ण शुभ मस्तु लिखतं ज्ञानदास स्वपठनार्थ क्वार वुदि संवत् १९०५ नौमी राम राम राम राम सतगुरु मेरा बेड़ा पार ॥

विषय—सतगुरु की सेवा फल का वर्णन ।

संख्या २८२. संगीत मनोहर, रचयिता—रामचरन वनिया द्वारा संग्रहीत, (शाहजहांपुर), कागज—देशी, पत्र—६४, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रतिपृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३५२, पूर्ण, रूप—पुस्तक की भांति, पद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—१९१६ वि०, प्राप्तिस्थान—पं० रामसनेही मिश्र, स्थान—मानिक खेड़ा, डा०—किशोरगंज, जि०—एटा ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः । अथ सागति मनोहर राम चरणकृत लिख्यते ॥ दो० । सिद्धि सदन वारन वदन हृदय राखि सुख दानि । यह पुस्तक संग्रह करौं जन जानि ॥ वहु नवीन गजलैं लिखीं सखा पढ़हु चित लाय । राम चरन लखि रसिक जन पुनि पुनि हिय हुलसाय ॥ ठुमरी भैरवी ॥ ढलै जात जुवना रे दिन दिन । उनपै निस दिन ध्यान लगायो । श्याम सुंदर पर जियरा गवायो । दिन ही रैन मोहिं तलफत बीती । राति कटी तारे गिन गिन ॥ १ ॥ जो चाहे तरवर की छहियां गौना लेन नहिं आये सैयां । यही सोच मोहिं रहत है पल पल ॥ वीती जात वैस छिन छिन ॥ रूप स्वरूप के स्वांग उतारे विना वताये गुरु कर डारे मान नहीं काहू को राखे । गर्व किये चाहे जिन जिन ॥ ढले जात जुवनवां रे दिन दिन ॥

अंत—ठुमरी दादरा । गई वीति रैन नहिं आये पिया । सखि कैसे समझाऊ मैं अपना जिया । कवहूं न हमने नेह लगाया अव तो लगाया तो दाग उठाया । सैयां निरमोहिया ने ऐसा चलाया, जला जला के खाक किया । गई वीति० । इतनी अरज है तुमसे शाहिद हरि तुम्हरे मिल जावे शायद । हमरी ओर से यह कह दीजो, क्या उनको आजाद किया । गई वीति० ॥ राग शहाना ॥ कासे कहूं दुख अपना सखीरी । प्रीत किये की रीति

नईरी ।। ऐसे निरमोहिया पाले पड़ी हूं पीत लगाय में जिया से गईरी ।। कासे कहूं दुख अपना सखीरी ॥ रेखता ।। सरजू नदी के तीर कुवंर सावरा खड़ा । तिरछी नजर वदल वह दिल में मेरे अड़ा ।। पनियां भरन को हम गई सर पर मेरे घड़ा अब क्या कहूं सखीरी सन बात में खरा । गले मोतिन की माला हीरा रतन जड़ा । जुगराज जिसके दर्श को दरबार में खड़ा । सरजू नदी के तीर कुंवर सावंरा खड़ा । ठुमरी पील ताल जल्द ।। सैयां रंगरेजवा ने मोहिका गारी दीन्ही रे ॥ सूहे की रंगाई वारी क्या कुछ मागे जो मांगी वह लीन्ही रे । सैइयां रंग रेजवा ने गारी मुहिका दीन्ही री ।। इति श्री संगीत मनोहर संपूर्ण समाप्तः लिख दिब्बा लोहार अगहन वदी नौमी संवत् १९१६ वि०।

विषय—राग रागिनी वर्णन ।

विशेष ज्ञातव्य—इस ग्रंथ के रचयिता रामचरन बनिया थे जो शाहजहांपूर के निवासी थे । लिपिकाल संवत् १९१६ वि० है ।

संख्या २८३ ए. रसपचीसी, रचयिता रामहरी जौन्हरी (वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—५, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल और लिपिकाल—सं० १८३५ = १७७८ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा बंशीदास जी, गोविन्द कुण्ड, वृन्दावन ।

आदि—श्री राधारमण चंद्रो जयति । अथ रसपचीसी लि० । दो०—इष्ट सुराधारमण हे शची सून संकेत । राधाकुंड नदी श्वरे वृन्दाबन रस पेत । जीभ कसौटी स्वाद की श्रवण कसौटी बन । बास कसौटी नासिका रूप कसौटी नैन । जीवन आगम सिसु गमन कटि पटि कसित कुमारि । मनहु छीन छति छीजिकैं द्वै नृप बीज उजारि । यह कटि परती टूटिकैं गुर उरोज के भार । जो नहिं होतो त्रिवलि कौ दृढ़ बंधन आधार । मृग मराल कोकिल मयंक वारिज केहरि मीन । कदली हान्यो कीर छवि लई राधिके छीन । सिंघ कमल कोकिल उरग गति मराल गज चाल । कीर कुरंगिन मीन छबि अधर पवाली लाल । बाल दयाल बिसाल छबि तिलक बोल परताप । जगत करन जनु वरि दई जगत विजै की छाप ।

अंत—नवला निकसत तीर जब नीर चुवह वरचीर । जनु असुवन रोवत बसन तन विछुरन की पीर । कंज २ प्रतिकंज पर अलि गुंजत परभात । जनु उरतम तेजहि भज्यौ रोवत ताके तात । वृन्दावन जमुना पुलिन राधाकृष्ण विहार । नंददास सत कविन की वानी करे अहार । चौपाई दोहा चापई रस पचीस । रामहरी भजले जगदीस । इति रसपचीसी सम्पूर्ण ।

विषय—वंदना तथा श्री राधाजी के श्रृंगार का वर्णन ।

संख्या २८३ बी. बोधवावनी, रचयिता—रामहरी जौन्हरी (वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२, रूप—अति प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३५ = १७७८ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा बंशीदास जी, गोविन्द कुण्ड—वृन्दावन ।

आदि—श्री राधा रमन चंद्रो जयति । अथ ग्रंथ बोध बावनी लिख्यते । दोहा, सुमिरहु श्री राधा रमण शची सून बृज भौन । पांच बात नित याद करि कहां ते आये कौन । कहा करन कहा करत हौं । जांऊ कहां विचार । और कछू नाहिं न वने च्यार बात हिय धार । यथा लाभ संतोष करि छिन २ लै हरि नाम । यथा शक्ति कछु दान दे कृपा चरन कर धांम । सोरठा । हरि भजि करि सुब काज भूल विलंवहि जिन करै निहचै कीजै आज कहा भरोसो कहालकौ । ४ । दोहा । झूंठौ जग सौं राम की सांचे कृमहि कीन्ह । रामहरी सांचो लगत माया भ्रम आधीन । रे मन सोंचे कृम भजि माया भ्रम दे त्याग । षेल षिलारी ने किया मन धरिलै वैराग । मिथरान स्वर जगत सुप सबै दुःष को धाम । इक्क रसना आनंद मय एक कृष्ण कौ नाम । यह विषया विस्वासिनी मौंहन जिन पति धाइ । सकल जगत षायौ तऊ पाते छिन न अघाइ ।

अंत—कथना जाहिं न पाइ हरि पैये क्ररनी सोइ । वात नदी पगना परै वारैं दीपग होइ । अगहन पून्यो संवत है अष्टा दस पैंतीस । वरषोत्सव वलदेव को वृन्दाबन रजनीस । वांनी नाना कविन की बोध बावनी धार । राम हरी पढ़ि अर्थ लहि हरि भजि उतरो पार । इति श्री बोध वावनी सम्पूर्ण ।

विषय—वैष्णवों के लिये प्रेमा भक्ति के विषय में ज्ञानोपदेश ।

संख्या २८३ सी. लघुशब्दावली, रामहरी जौन्हरी (वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—२०, आकार ६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०० रूप—अति जीर्ण, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३४, लिपिकाल—सं० १८३५ = १७७८ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा बंशीदास जी, गोविन्द कुण्ड, वृन्दावन ।

आदि—श्री राधा रमन चंद्रो जयति । अथ श्री लघु शब्दावलि लि० ॥ दोहा । अंघ्रि कमल राधा रमन शची सून गोपाल । श्री मुकंद वृन्दा विपुन सुमिरि मिटै जंजाल । अनेका अर्थ नंद दास की एक सब्द वहु अर्थ । अधिक सब्द लैको सतें दोहा किए सामर्थ । देव शब्द १२ ॥ देव मेघ व्यौहारन्ह क्रीडा पति रवि जीत । कांत मोद मद सुप्र गति हरिदेवहि करि प्रीत । सारग सब्द । ललित पवन घन तडित तृण अहि निषि चपन षकांम । धम पद कवि विष करट षट ओ जकठन तिय भ्रांम । द्विज तव कच धनु अग्नि सरवीन मराल । मृग पद पै पिक कमल छवि है है सारंग नंद लाल । हरि सब्द । हरि चंदन चातग किरण शुक्र सत शुक कील । दादुर तरू जम भय मिटै हरि भजि गहि मन शील ॥ गो सब्द । गोदि गर रवि मृग सतध्या अघ्रि पुसप बाल । जग्य निगम सर चिन्ह गिर गोसुष भजि गोपाल । सुर भी सब्द । सुरभी चंपक धीर पुनि मंत्री कंचन भाम । विल्व प्रसस्थ रुजाय फल सुरभि ललित सो स्यांम । रस सब्द । हर्ष तिक्त सिंगार रसद्रवी सुगंध सराग । पारद वीरज कोक नद ए रस हरि रस पाग । गुण सब्द । गुण प्रधान इंद्रिय ललित सूर त्याग पुनि उष्न । नटी गवैया सीतल हीरा गुनगुनि श्री कृष्न ।

अंत—ससि कलकंदा कमल सब्द २ । ससि कहि चंद कपूर कृपि कमराल कलकंद । कमल जुजल वारिज वदन ध्यान करौं नंद नंद । अखिल अब्द और कोशवहु राम हरी नहि

छोर । भाषा सुमुरू ज्ञन कछू लिषे छिमयौ नंद किशोर । अल्प आयु विधनि बड़ सार काठि नर लेय । बाद विवादहि छाँडि कै भजिये श्री हरि देव वेदराम वसु कलानिधि संवत मासु जु क्वार । शुक्ल पक्ष पुन्यौ सरद वृन्दावन गुरूवार । अति दुर्लभ वृन्दा विपुन गायौ वेद पुरांन । देह पाप वसि धूलि जन कल्प वृक्ष रस पांन । सौ दोहा नाना अरथ लघु सब्दावलि नाम । रामहरी पठि अर्थ लहि सुमिरौं स्यांमा स्यांम । इति श्री लघु सब्दावलि सम्पूरण ।

विषय—कुछ शब्दों के पृथक २ नामों का वर्णन ।

संख्या २८३ डी. लघु शब्दावली, रचयिता—बाबा रामहरी जी जौन्हरी (वृन्दावन) कागज—देशी, पत्र—२०, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण अनुष्टुप्)—१०२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३०, प्राप्तिस्थान—बाबा बंशीदास जी, गोविन्दकुण्ड, वृन्दावन ।

आदि—शिर धरि श्री राधारमन पदभट्ट गोपाल सहाइ । कोश धन जप आदि औ कछुक नाम कहाइ । नंददास नामावली अमर कोश के नाम । इनते जें नितरक्त औ लिखे हेत घनस्यांम । प्रथम मंगला चरन में सुमिरो शचीकुमार । अशुभ हरन सब शुभ करन प्रणऊँ बारंबार । कृष्ण नाम को गिनैं जिह्वा अखिल हराय । तक ग्रंथ की आदि में विशंत नाम गनाय । श्री कृष्ण नाम । गोकुलचंद हरि मोहन माषन चोर । बनमाली गोविंद विध गिरधर स्याम किसोर । केशव माधव मुरलिधर दामोदर गोपाल । कुंज विहारी चिकनिया पुरुषोत्तम नंदलाल । सुंदर नाम । हद्य सौम्य मंजुल मधुर चारु ललित सुकुमार । कम्र मनोज्ञ मनोहर सम्पूष्ठ मंजुर ससार । कमल नाम । उत्पल राजिव कोक नद सितां भोज जल जात । इंदी वररू महोतप लविस प्रसून सत पात । सरसी कह बन रूह बनज अबुंज बारिज सोइ । सहश्र पत्र षरड डकहि नीरज सरसिज होइ । ब्रह्मा नाम ॥ पेरमष्ठी प्रजापति कमला सत हंसेश । विरंच विधाता अत्म भूहिंर्ण लोकेश । महादेव नाम । उग्रक पदीभूत कृत वासो सित कंठ । इशांन रुद्र मृत्युज्जय रुवृष्व ध्वज श्री कंठ ।

अन्त—जन्म नाम । भव उदगम उद्भव जनन जनि उत्पति सब ग्रांम । जन्म सफल जगजब भलो भजि मन मोहन स्यांम । रस नाम । सारध मधुरंग पुष्प सार मकरंद । रस के जानन हार इक भजि लै रे नंद नंद । सो दोहा किय नाम बहु राम हरी नहिं पार । भूल चूक कवि करि छमा लधुनाम बलिधार । अब्द षड जुग चारि तिस श्रावण शुक्ला तीज राम हरी वृज बास करि सदां कृष्ण रंग भीज । इति श्री लधुनामा सम्पूरण ।

विषय—कुछ शब्दों के पृथक २ अनेक नाम ।

टिप्पणी—बाबा रामहरी जौहरी जयपुर के निवासी थे । यह गौड़ीय सम्प्रदाय के वैष्णव थे और अपने समय के अच्छे कवियों में गिने जाते थे ।

संख्या २८३ ई. सतहंसी, रचयिता—रामहरी जी जौहरी (वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—१८, आकार – ६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०२, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३३ = १७७६ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा बंशीदास जी, गोविन्दकुण्ड, वृन्दावन ।

आदि—श्री श्री राधा रमन चंद्रो जयति । ग्रंथ सतहंसी लिख्यते । सांत रस दोहा बावरे विचरन जग मग चित्त । श्री राधा मन चरन करि परि चरन सुचित्त । बिषै चरन मन बावरे विचरन जग मग मित्र । वारन को तारन अहो वारन लागी तोहि । वारन करिये हे प्रभू वारनि भटकति मोह । धारनितें बृज रापि लिय गोधन धारन कीन । धार नदी संसार की बहत सुधा रिन बीन । कर गहिकै तारयौ करी करही सों प्रभु आप । कर नीकी मोंको करी रविकरि कैसी ताप । तारी लाई नाहि जिन सो तारी प्रभु वांम । तारी बिन तारे षुलत दै तारी लै नाम । घरी जनावत ही रहत घरी भजे नहि राम ॥ अथ सिक्षा ॥ जारज कों चाहत रमा जार जता तें जान । जारज तन तें त्यागिये दुःष जारजतें मान । कौंकिन सेइये तारि सकल जो लेत । तार सहित जौ होय तौ ता रसब्द करि हेत । सरवर सरवर सात ही सरवर सरवर जात, मिथ्या रूपी जगति गनि अठो नगन सब रूप ।

अन्त—हरी राम जौंहरी जौहर परष प्रवीन । तिंह प्रेरे जौंहरि करी जौहर भरी नवीन । दोहा जम जुग पउन घटि जमकें धरी बनाय । जमके जेवर सुनेगे जमकें ते नहि जाय । सतही सब होता दोहा किये सबही कौ सत जांन । सत पद पावत सुनत हीइही सुसत करि मांन । राम[3] ताप[3] वसु[८] बिधु[1] अवद माघ सुवल मधुबान । कुंज दिन वृन्दाबन प्रगटि धरिहू कंठ सुजान । इति श्री सतहंसी सम्पूरण समाप्त ।

विषय— श्री राधाकृष्ण का गोपिकाओं के साथ रास विहार ।

संख्या २८३ एफ. बुधविलास, रचयिता—रामहरी जौंहरी (वृन्दावन), कागज—देशी, पत्र—४६, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८३२ = १७७५ ई०, लिपिकाल—सं० १८३२ = १७७५ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा बंशीदास, गोविन्द कुण्ड—वृन्दावन ।

आदि—श्री राधा रमण चंद्रो जयति । अथ ग्रंथ बुधविलास लिख्यते । पुण बहु श्री राधा रमण सची सून गुन देव । हरि जन जमना बृज राम हरी के सेव । कज्जल नग सब उदधि मसि लेपन सुर का तार । रसा पत्र गो लिपत ऊ राम हरी नहि पार । लघु दोहा सब कविन के राम हरी लिप लीन । हित रस नेह समुद्र है पैरिन पाऊँ दीन । राम हरी सुध प्रति में धन विच परै रौर । धर्म पुत्र हूं कही है रहत नाहि मन ठौर । लैन दैन कीरति भई राम हरी ते टूट । नंद कुमार सौं प्रीत करि बसि बृज रासुप लूट । कृष्ण चंद्र को ध्यान धरि कृष्णहि के गुण गाइ । राम हरी भजि कृष्ण कौं कृष्णहि सदा सहाइ । प्यारो जानूं कृदम कूं मित्र जानि घनश्यांम । राम हरी जग एक है सुंदर गिरधर नांम । जमला इह जग सुप नहीं किये जु बहुतै मित्त । जिहि सुप बंध्या येक सौं सो सोवै सुष नित्त । मित्र बराबर सुप नहीं तीन लोक में कोइ । जैसो चाहे चो पसों जो वेसो चित होइ ।

अंत—फुटकर दोहा जुदे २ नहीं अनुक्रम जान । राम हरी संगहि करी अपनी बुधि प्रमान । शब्द आठ दस तीस द्वै जेठ सुदी रवि तीज (१८३२) । मन रोचक यह ग्रंथ

पठि प्रेम भक्ति रस भीज। दो सत पचपन उपरै दोहा चुनि २ सोध। बुद्ध विलास चित चतुरई करि हरि प्रीति प्रबोध। इति श्री बुद्ध विलास सम्पूर्णं समाप्त।

विषय—भगवान श्री कृष्ण की वंदना तथा उपदेश।

संख्या २८४ ए. गणक आह्लादिका, रचयिता—रामहित, पत्र—१६०, आकार—९ × ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०८०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८८४ = १८२७ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० मिट्ठूलाल मिश्र, डाकघर—फीरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि—आई उ ऐ कृतिका वोवा वी वू रोहिणी वे वो क की मृगसिर कू थ ङ छ आद्रा को कोहही पुनर्बस हूहेहोड़ा पुष्य डीडूडेडो श्लेषा मामीमूमे मघा मोटा टीटो पूर्वा फाल्गुणी टेटोपीप उत्तरा फाल्गुनी पूख ण ठ हस्त पेपो रारी चित्रा रुरे रोता स्वांती तीत तेतो विसाषा नानी नूने अनुराधा नोया यी यू ज्येष्टा जौ जो भाभी मूल भूधा फाढ पूर्वा पाढ़ भेभो जजी उत्तरा षाढ़ खी खू खे खो श्रवन॥

अन्त—जन्म नखत ता मनुज की। परै मध्य तिर सूल। चारों दिसि जो विदित है। सो जूझै जनि भूल॥ दोऊ वगल त्रिमूल के। मनुप नखत गत पाव। जुद्ध करन जनि जानरे। गये लागि है घाव॥ इति श्री जग राम हित विरचितायाँ गणक आह्लादिकाको समान विसेस सौच चारादि अपर विचार सहित वर्णनो नाम नवमो विश्राम समाप्तम्॥

विषय—फलित ज्योतिष।

ग्रन्थ निर्माण कालः—एक आठ पुनि आठ दे। तापर चारि धरेहु॥ संवत शुभ पहिचानिये। ग्रन्थ पूर कृत ऐह॥

संख्या २८४ बी. गणक आल्हादिका, रचयिता—जैरामहित, पत्र—१६०, आकार—१० × ६१/२ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४००, रूप—प्राचीन, पद्य गद्य, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८८४ = १८२७ ई०।

आदि—अथ नक्षत्र॥ चरण विभाग लिष्यते॥ चू चे चोला॥ अश्वनी॥ लीलू ले लो॥ भरणी॥ आ ई ऊ ऐ॥ कृतिका बो बा बी बू॥ रोहिणी॥ बे वो क की॥ मृगसिरा॥ कू थ ङ छ॥ आर्द्रा॥ के को ह ही॥ पुनर्वसु॥ हू हे हो ड़ा॥ पुष्य॥ डी डू डे डो॥ श्लेषा॥ मा मी मू मे॥ मघा॥ मो मा टी टो॥ पूर्वा फाल्गुणी॥ टे टो प पी॥ उत्तरा फाल्गुनी॥ पू ख ल ठ॥ हस्त पे पो रा री॥ चित्रा॥ रु रे ऐ ता॥ स्वांती॥ सी तू ते तो॥ विशाखा॥ ना नी नू ने॥ अनुराधा॥

अंत – चंद्र नषत ते दीजिये। चन्द्र कला पर जोय। अट्ठाइस जो नषत हैं। क्रमते भरिये सोय॥ जन्म नषत जा मनुज की। परै मध्य तिरसूल। चारों दिशि जो विपति है। सो श्रम्भै जनि भूल॥ दोऊ जुगल तिर सूल के। गुनय नषत गत पाव। शुद्ध करन जान दै। गये लागि हैं घान॥ एक आठ पुनि आठ दै। ता पर च रि धरेहु। संवत सुभ पह चानिलै। ग्रंथ पूरिकृत ऐह॥ चैत्र शुक्ल नौमी सुतिथि। गुरु वासर सुष रूप। ग्रंथ

गनक आह्लादिका । कीन्हौं मति अनुरूप ॥ इति श्री जन रामहित विरचितायां गणक आह्लादिकायां समान विशेष शौचा चारादि अपर विचार सहित वर्णनोनाम नवमो विश्राम ॥ समाप्तम् ॥ शुभम् ॥

विषय—फलित ज्योतिष ।

संख्या २८५. गायन संग्रह, रचयिता—रामकवि (कहिंजरी), कागज—देशी, पत्र—२१०, आकार—१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२७ = १८७० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवमहेश, विश्नुपुर, जिला—अलीगढ़ ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ गायन संग्रह लिख्यते ॥ श्रीगणनायक को सुमिरि सरस्वति को शिरनाय ॥ हनूमान बजरंग को ध्यावत शीश नवाय ॥ राग रागिनी को लिखूं कविजन करि गुन गान ॥ गुरु पद पद्म पराग की महिमा सकल बखान ॥ ध्रुपद—गुरु गनेश शारदहिं मनाऊं । जाते मोक्ष जुगति गति पाऊं ॥ जटा मुकुट गौरी अरधंगा । वरणों मैं हरि जू के चरणा ॥ त्रिभंग छंद त्रिभंगी मानस रंगी ताना नंदी गरल गरे । त्रिभुवन के नायक हैं सुख दायक लायक लोचन तीन धरे ॥ शिव प्रति काशी हैं अविनाशी कैलाशी दारिद हरनं ॥ मम्मृ गति ताल धुधकति धुधंग पर कहत राम कवि शिव शरणं ॥ गुरू० ॥ कनक पत्र कनिका सुर कीन्हे भंग रंग खप्परि भरि लीन्हें ॥ रुचिसों भैरव गाल बजावैं मधुर मधुर धुनि ताल सुनावैं ॥ तान सुनावैं निरतत आवैं भावैं भूसम भसम धरे । किंक्कृत ताल उझकत उडंग पर कहत राम कवि शिव शरणं ॥

अंत—राग देश सोरठ—प्रभू जी मोरे औगुन चित न धरौ ॥ सम दर्शी है नाम तिहारो चाहे तो पार करौ ॥ यक नदिया एक नार कहावत मैलो ही नीर भरो ॥ दोनों जाय मिले सागर सों सुर सरि नाम परो ॥ यक लोहा पूजा में राखो यक घर वधिक परो ॥ पारस गुन औगुन नहिं चित में कंचन करत खरो ॥ यह माया भ्रम जाल निवारो सूरदास सिगरो ॥ अब की बेर मोहिं पार उतान्यो नहि प्रग जात हरौ ॥ १० ॥ राग झप ताल—मो मन वसौ स्यामा स्याम ॥ स्याम तन मन श्याम कामर माल की मन श्याम । श्याम अंगन श्याम भूषण वसन हैं अति श्याम ॥ श्यामा श्याम के प्रेम भीने गोविन्द जन भयो श्याम ॥ २ ॥ राग झंझौटी—अब हरि वनि है नाहिं विसारे—दीन दयाल कृपा निधि हे प्रभु गिनिये न दोष हमारे ॥ सिद्धि अजामिल गनिका आदिक जापन पै तुम तारे । मोमन लाल आपनो पन सोइ वनि है नाथ संभारे ॥ ३ ॥ राग परज ॥ या व्रज में कछु देख्यो री टोना ॥ ले मटुकी सिर चली गुजरिया आगे मिले वावा नन्द के छोना ॥ दधि को नाम विसरि गयो प्यारो लेहु लेहु कोऊ स्याम सलोना ॥ वृन्दावन की कुज गलिन में आंख लगाय गयो मन मोहना ॥ मीरा के प्रभु गिरधर नागर सुन्दर स्याम सुघर रस लीना ॥ ४ इति श्री गायन संग्रह कवि राम कृत संपूर्ण संवत् १९२७ वि० चैत्र द्वादशी शुक्ल पक्ष ॥

विषय—नाना प्रकार की राग रागिनियों का वर्णन ।

संख्या २८६ ए. शिवपार्वती बिवाह, रचयिता—रामऔतार, पत्र—११, आकार—१० × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०, लिपि—नागरी,

रचनाकाल—सं० १९१९=१८६२ ई०, लिपिकाल—सं० १९४९=१८९२ ई०, प्राप्ति-स्थान—पं० हरस्वरूप, सुघरवा, डाकघर—शाहजनपुर, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ श्री शिव पार्वती बिवाह खिख्यते ॥ दोहा—नमो जुगुल पंकज चरण श्री गणपति सिरनाइ । कहौं कथा शुभ ब्याह शिव छन्द कवित्त बनाइ ॥ सवैया—कंठ विराजत जाहि हलाहल सीस सुधौल गंगा कर धारा ॥ वाम शिव अरधिंगिन जो कटि शार्दुल चर्म कसे अहि डारा ॥ भस्म सु अंग ललाट शशी कर शूल धरे वसहा असवारा ॥ सो शिव मो पर होहु दयाल नमो चरणाम्बुज बारहिं बारा ॥ १ ॥ घनाक्षरी—शंकर के ब्याह की भई है तयारी जब गण सब दूलह श्रृंगार शिव करहीं माथे जटा मुकुट भुजंगनि को मौर गूथ कुंडल कानन पहिराये विष धरहीं ॥ हाथे व्याल कंकण विभूति सर्व अंगन में शशि भाल सीस गंगा सोहत सुन्दर हीं ॥ कांधे उपवीत सर्प नैन तीन विष कंठ डाले गले बीच माला गूथी नर शिर हीं ॥ २ ॥

अन्त—सब याचक हीं सनमानि भले निजधाम चले भव साथ भवानी ॥ हरषी उर देवन पुष्प बहू बर्षे कहि सुंदरि जै जै वानी ॥ नभ दुंदुभि आदिक भांति किते बहु वाजन वाजहिं आनंद दानी ॥ हिम वानहुं साथ चले शिव को पहुचावन प्रीति हृदै अधिकानी ॥ १ ॥ बहुभांति कही परितोष करी गिरिनाथहिं कीन विदा गिरि जेशू इत आये ग्रही हिमवंतन जै गवने उत आपन धाम महेशू ॥ सब सागर शैल सरादिक जो रहे नेवत आये धरे बहु भेशू ॥ अति सादर कीन गिरीश विदा गवने अपने अपने सब देशू ॥ २ ॥ जबही शशि शेषर संग शिवा पहुंचे कैलाशहिं जो सुख धामा ॥ अति मोद भरे सब देव गये अपनो अपनो जहं जाकर ठामा ॥ जग मातु पिता शिव पारवती कैलास रहे जन पूरन कामा ॥ किमि ताहि सिंगार कथा कहिये निज भोग बिलाश चरित्र ललामा ॥ ३ ॥ हरि गौरि विवाह चरित्र कथा बहुभांतिन नित नवीन उदारा ॥ अव गाह अनंत अगोचर जो गम नाहिं जहां मन बुद्धि विचारा ॥ सह सान्य दानि न अंत लहै श्रुति जानि सकै नहिं भेद अपारा ॥ किमि सो यह राम औतार कहैं अति मंद मती अघलीन गवारा ॥ ४ ॥ दो०—शंकर व्याह चरित्र शुभ मुद दायक सुख खान । कहत सुनत शिव गौरि कृपा होहि परम कल्यान ॥ आश्वनि सित तिथि प्रति पदा उदधि सुवन सुतवार । संवत ग्रह शशि अंक शशि ग्रन्थ समाप्त विचार ॥ इति श्री शिव विवाह संपूर्ण समाप्तः संवत् १९४९ वि० ।

विषय—शिवजी का विवाह, उनका श्रृंगार एवं बरात बरातियों का वर्णन ।

संख्या २८६ बी. शिवविवाह कवितावली, रचयिता—राम औतार, कागज—देशी, पत्र—१२, आकार—८×६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०२, रूप—दीमक लगी, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९१९=१८६२ ई०, लिपिकाल—सं० १९४९=१८९२ ई०, प्राप्तिस्थान—शिवलाल शर्मा, धूमरा, डाकघर—सरौंढ़, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ श्री शिव विवाह कवितावली लिख्यते ॥ दोहा ॥ नमो जुगुल पंकज चरण श्री गण पति सिर नाइ । कहौ कथा शिव व्याह शिव छंद कवित्त

बनाइ ॥ सवैय्या—कंठ विराजत जाहि हलाहल सीस सुधौल गंगा कर धारा ॥ वाम शिवा अर्धंगिनि जो कटि शार्दुल चर्म कसे अहि डारा ॥ भस्म सु अंग ललाट शशी कर शूल धरे वसहा असवारा ॥ सो शिव मोपर होहु दयाल नमो चरणाम्बुज वारहिं वारा ॥ १ ॥ घना-क्षरी—शंकर के ब्याह की भई है तयारी जब गण सब दूलह श्रृंगार शिव करहीं ॥ माथे जटा मुकुट भुजंगनि को मौर गूथ कुंडल कानन पहिराये विषधरहीं ॥ हाथे व्याल कंकण विभूति सर्व अंगन में ससि भाल सीस गंगा सोहत सुन्दर हीं ॥ कांधे उपवीत सर्प मैन तीन विष कंठ डाले गले बीच माला गूथी नर शिरहीं ॥२॥ दूलह सरूप वनि चढ़ि शिव वसहा पै साजि के समाज निज चले ले वराति जो । अमित प्रकार गण भेपहु अनेक विधि निज निज वाहन चढ़े हैं वहु भांति जो ॥ खर स्वान असुर श्रृगाल वाघ मूंष गण विविध स्वरूप सब अगणति जाति जो ॥ भूत प्रेत जोगिनी पिशाच वहु रंगन को चले सब हर्षित सकल जमाति जो ॥ ३ ॥

अन्त—सब याचकहीं सन मानि भले निज धाम चले भव साथ भवानी ॥ हरषी उर देवन पुण्य बहू बर्षे कहि सुन्दर जै जय बानी ॥ नभ दुंदुभि आदिक भाति किते बहु बाजन बाजहिं आनंद दानी ॥ हिम वानहु साथ चले शिव को पहुंचावन प्रीति हृदै अधि-कानी ॥ बहु भांति कही परि तोप करी गिरि नाथहिं कीन विदा गिरि जेशू ॥ इत आये गृही हिम वंतनि जै गवने उत आपन धाम महेशू ॥ सब सागर शैल सरादिक जो रहे नेवत आये धरी वहु भेशू ॥ अति सादर कीन्ह गिरीश विदा गवने अपने अपने सब देशू ॥ जवहीं शशि शेखर संग शिवा पहुंचे कैलाशहिं जो सुख धामा ॥ उर मोद भरे सब देव गये अपनो अपनो जहं जाकर गामा ॥ जगमातु पिता शिव पारवती कैलाश रहे जन पूरण कामा ॥ किमि ताहि सिंगार कथा कहिये निज भोग विलास चरित्र ललामा ॥ हरि गौरि विवाह चरित्र कथा बहु भांतिन नित्त नवीन उदारा ॥ अवगाह अनंत अगोचर जो गमनांहि जहां मन बुद्धि विचारा ॥ सहसानन वानिन अंत लहै श्रुति जानि सकै नहिं भेद अपारा ॥ किमि सो यह राम औतार कहै अति मंद मती अघ लीन गंवारा ॥ दो०— शंकर व्याह चरित्र शुभ मुद दायक सुख खान ॥ कहत सुनत शिव गौरि कृपा होहिं परम कल्यान ॥ आश्वनि सित तिथि प्रतिपदा उदधि सुवन सुत वार । संवत ग्रह शशि अंक शशि ग्रन्थ समाप्त विचार ॥ इति शिव विवाह संपूर्ण समाप्तः

विषय—शिव विवाह वर्णन ।

संख्या २८७ ए. कवित्त, रचयिता—विप्र रामबकस, कागज—बाँस का, पत्र—१६, आकार—५ X ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)— ७, परिमाण (अनुष्टुप्)—११२, खंडित, रूप—अतिप्राचीन, लिपि - नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री लचेरा राम ब्रह्मभट्ट, ग्राम—बसई, डाकघर—ताँतपुर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा ।

आदि—थकित भई है देह जगत करै ना नेह, कौन जल प्यावै मेरो जीव अकुलावे है । षांसी कष्ट चढ़यो जोर ये हो नंद के किसोर देखो नेक मेरी ओर तेरी याद आवै है । मैया बाप भैया आप पालन करैया आप संकट हरैया आप और न सुहावै है । विप्रराम वकस कहैं श्री जी राजाधिराज राज अब तो समेटि मेरी देह दुख पावै है । चरनन को रापे

ध्यान जीउ तौनौ सुजान भगवान मेरी ऐसो करेगो मति। भक्तन को साँसो काज ये हो गरीब निवाज तुमको हमारी लाज दुष्टन को मारो हति। कामदेव तेरो रूप ही सौ सुन्दर सरुप त्रयलोकी नाथ भूप तेरी छबि छाइ छिति। विप्र राव वकस कहैं श्री जी राजा धिराज काइ वर देह की पुसामद करिहयो मति।

अन्त—अरजुन के काजै आप स्वारथी हौ युद्ध करिके वैराट रूप से सेना दुष्ट मारी है। द्रोपदी पुकारी जबै नेक न अवार चारि आयो अन्त भक्ति पन धारी है। दुरभासा आयो श्राप देने ज्यों जुधिष्ठिर को थार से निकार यो साग पत्र लैंढ़कारी है। विप्र राम वकस कहैं कैसे लगाइ देर अरजी हमारी आगे मरजी तिहारी है। स्यारै प्रहलाद जिनै आप कौन छोड़्यो वाद पिता बलिहार यो तेरी सुधि न विसारी है। गिरवर सो डारयौ वानै वाको कूप सौ निकास्यो तैहस्ती सिंह भाज गरा आप रखवारी है। होलिका मैं जान्यो तोउ नेक न लगी है आंच षंभ फारि प्रगटे नरसिंह देह धारी है। विप्र राम वकस कहे तेरो विस्वास है अरजी हमारी आगे मरजी तिहारी है। ब्राह्मनन तुम्हारे मैंने तुझको सहन नाथ हम हैं अनाथ तुम्हें न भक्ति पन पारे है। धारत उतारन काजै धारै चौबीस देवन की पक्ष करि असुर सिधारे हैं। जहां तहां भीर परी संकट सहाय करी आयो कलिकाल रक्षा कारन पुकारे हैं। विप्रराव वकस कहैं श्री जी राजाधिराज राषीयो हमारी लाज भिक्षुक तुम्हारे हैं।

विषय—भगवान श्रीकृष्ण की भक्ति विषयक कवित्त।

संख्या २८७बी. विप्र करुनासागर, रचयिता—विप्र रामवकूस, पत्र—४८, आकार—७½ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०८०, खंडित, रूप—अति प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—ब्रह्मभट्ट खचेरा ब्राह्मण, ग्राम—बसई नसौरा, डाकघर—तांतपुर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—विप्र करुना सागर ग्रन्थ लिख्यते। दोहा। श्री गुरु चरन प्रनाम करि, गणपति सीस नवाइ। शारद की अस्तुति करहुं, भक्ति दान दे माइ। शिव विरंच सुर इन्द्र लै तुमै नवाऊ सीस। भक्ति दान मोहि दीजिये कृपा कीन्‌ु जगदीस। च्यारौ जुग के भक्त कौ, आपुन लीयो उवारि। कलिकाल रक्ष्या करौ, भक्तन लेइ सम्हारि। ब्रह्मा की रक्षा करी लाए वेद छुड़ाय। संखासुर के प्रान हनि, आपुन करी सहाय। विप्र वरन डभिन सकलई नेकु दीये पढ़ाई। कर्म्म करैं द्विजराज सब माथे लिये चढ़ाई।

अन्त—सतजुग मैं रक्षा करी, देवन की महराज। असुरन को संग्राम करि राषी तिनकी लाज। मीन भये आपुन प्रभु वेदनि कारन काज। संषासुर के प्रान हनि विधि की राषी लाज। बनि वराह वसुधा लई मारयो असुर प्रचंड। लाए आपुन डाढ़ धरि, काये करि नव षंड। कमठ रुप धरि सिंधु मथि उधरै लानि कषिरि। अमृत पै उगरन भयौ, हनै मोहिनी ध्याय। भक्ति करी प्रहलाद ने, दियो पिता ने त्रास। आप भये नरसिंघ हरि पूजी मन की आस। वामन धारौ रूप तुम, पहुंचै बलि के द्वार। इन्द्र पक्ष के करने, आप रुप करतार। परसराम तुम रूप धरि छत्री किये निक्‍छ। सहज भुजा नृप की हनी करि विप्रन को पच्छि।

विषय—ब्राह्मणों की महिमा और उनकी विपत्ति दूर करने के संबंध में श्री कृष्ण की स्तुति।

संख्या २८७ सी. रामवकश के कवित्त, रचयिता—रामवकश, कागज—बांसी, पत्र—४८, आकार—७ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—४१६, खंडित, रूप—अति जीर्ण, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री खचेराराम ब्रह्मभट्ट, ग्राम—बसई, डाकघर—तान्तपुर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा ।

आदि—अंगद पठायौ समझायौ जाय रावन कूं जानकी मिलौगे लैके या विधि उचारी जूं । रावन कीयो है क्रोध नेकहू न राख्यो बोध फेकि दऊ तोको या मैं महाबल भारी जू । उठो है रिसाय बोल्यो अंगद सम्हारी आप राम परौगे पांय मानीयै हमारी जू । अंगद ने आय कही रामचन्द्र सत्य भई अचल अपंग भक्ति दीजियौ तुम्हारौ जू । फौज साजि धाई रामचन्द्र ने पठाई पाऊँ रावन की धाई भयौ जुद्ध घोर भारी जू । राक्षस फिरैं है इतैं बंदर जुरे हैं विते राम की भई है जीति फौज मारि डारी जू । फेरूँ चढ़ें भारी दुष्ट मकर बतायौ कष्ट आपु सबै भाजै जहां अवध बिहारी जू । अंगद चढ़यो है हनुमान संग जामवन्त अचल अपंग भक्ति दीजियो तुम्हारी जू । दिसा चारि रोकी दरवाजे पर धरे जाय दुष्टन की फौज आई सवन कारी जू । मेघनाद आयौ लक्ष्मन सों कियो है जुद्ध हनुमान दौरयो वाके मुष्ट एक मारी जू । मूरिछा भयो है फिर उठो क्रोध कीनो आप लक्ष्मन जू के वान मारयो देह डारी जू ।

अंत—ब्रह्मा ने कीनी देवतान नै निहोरि सकल पृथ्वी पै चढ़यो है भार सुनी अै हमारी जू कृष्ण चन्द्र बोले मैं तो ब्रज में धूरोंगो देह भारथ उतारौं आप भूमि रषवारी जू । जनम लउगो वसुदेव देवकी के आय थोरे दिनन में मैंने मनमें विचारी जू । ब्रह्मा देवतान संग लै करि पधारौ आप अचल अपंग भक्ति दीजियो तिहारी जू । राधा सौ कीन आओ भवन वृषभान जू के कीरति तुम्हारी होय आय मैं हे तारी जू । देवतान कीनी तुम ग्वालन की धारो देह हमहूं धरेंगे देह सुनियो हमारी जू । गर्भ देवकी के आप मिलि हैं जसोधा धाय करि हैं चरित्र आछे पूतन सिधारी जू । कंस आदि लैके और दुष्टन को नास करैं अचल अपंग भक्ति दीजियो तुम्हारी जू ।

विषय—रामचन्द्र के सम्पूर्ण जीवन की मुख्य २ घटनाओं का वर्णन ।

संख्या २८८ ए. कार्तिक महात्म्य, रचयिता—रामकृष्ण, पत्र—४८, आकार—१३ × ४$\frac{३}{४}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६९६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७४२ = १६८५ ई०, प्राप्तिस्थान—शालिगराम शर्मा, ग्राम—महवा, डाकघर—जैतपुर कलाँ, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशायनमः । श्री सरस्वत्यै नमः । श्री गुरु चरण कमले भ्यो नमः । लिप्यते श्री कार्तिक महात्म्य । दोहा । प्रथमहि गुरू गोविन्द को सुमिरन करौं बनाय । वाकपती गनपंती सहित कवियन चर्ण मनाय । प्रथमहि मंगल चरण तें, सबकौ मंगल जोर, कहत सुनत सुष उपजै और परमारथ होइ । कार्तिक की महिमा विपुल मुक्ति धर्म परमान । राम कृष्ण की सुरति सों प्रगट कियो भगवान । सत्रह सौ सम्वत सरहि व्यालीस पुनि जानि । पौष पंचमी शशि सहित आरंभ्यो तइ जानि । कहत सुनत श्रद्धा बढ़े पढ़ै रहै मन लाइ । आह्लादन सुनि के करैं भव सागर तिरि जाइ ।

अन्त -काम भेद सुप तुम नहि पायौं । तातै हमरौ निंद्य कहायौ । तातें वृप होहु निरधार, सूरत सुष नहिं लहत लगार । सो शिव प्रयाग अपैवर भए, पीपर रूप विष्णु है गए । ब्रह्मा जबही भए पलास, छोलौ नाम कहै पुनि तासु । पेठ मध्य ब्रह्मा के वास, त्वचा विष्णु साषा शिव जास । पात पात में देवा सवै, विष्णु स्वरुपी पीपर अवै । दोहरा । रिसि मिलि वूझै सूत कौं, पीपर भेद निदान । कबही छूवै दुख नहीं होइ प्राप्ति भगवान । इति श्री पद्म पुराणे कार्तिक रिसि सूत संवादे पीपर वृक्ष वेप वर्णननो नाम अष्ट विंशोध्याय । समाप्तं शुभं ।

विषय—कार्तिक मास के स्नानादि का फल वर्णन ।

संख्या २८८ बी. कार्तिक महात्म्य, रचयिता—रामकृष्ण, पत्र—४५, आकार—१२$\frac{3}{4}$ × ४$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६८८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१७४२, लिपिकाल—१९०६ = १८४९ ई०, प्राप्तिस्थान—बंशीदासपुजारी मन्दिर बम्हनटोला समाई, डाकघर–एतमादपुर, जिला–आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । श्रीराधाकृष्णाय नमः । दोहा । प्रथमहिं गुरुगोविंदको सुमिरन करो बनाय । वाकपती गनपति सहित, कविननमले मनाय । प्रथमहि मंगल चरनते, सबको मंगल जोइ । कहत सुनत सुप उपजै अरु परमारथ होइ । यह कातिक महिमा विपुल, मुक्ति धर्म परमान । रामकृष्ण की सुरति सों प्रगट कयो भगवान । १७४२ । सत्रहसै संवत्सरहि बयालीस पुनि जानि । पौप पंचमी शशि सहित आरभ्यो तहि जानि । कहत सुनत सरधा बढ़ै, पढ़ै रहै मन लाइ । आह्लादन सुनिकै करै, भव सागर तिरि जाइ ।

अंत—कामभेद सुप तुम नहिं पायौ, तातैं हमरौ निंच कहायौ । ताते वृष होहु निरधार, सुरत सूप नहिं लगत लगार । सो शिव प्रयाग अपैवर भए, पीपर रूप विष्न है गए । बृह्मा जब ही भये पलास छोलों नाम कहें पुनि तास । पेठ मध्य ब्रह्मा को वास त्वचा विष्न सापा शिव जास । पात २ में देवा सवै विराम स्वरूपी पीपर अवै । दोहा । ऋषि मिलि बूझै सूत को, पीपर भेद निदान । कबही छूवै दुष नहीं, लगैं कब प्राप्ति भगवान ।

इति श्री पद्मपुराणे कार्तिक महात्मे ऋषिसूत संवादे पीपर कुछ यथेष्ट वरननो नाम अष्ट विंशमोध्याय ॥ २८ । दोहा । अब आगे यह कहैगे लछि अन्नादि जुभेद सब एसो सबवानिकै ज्यौ भाषै निजु भेद । ऋपि रुवाच सब रिसि मिलि परसन करै, कहै सूत समझाय । पाप पुन्य पीपर छुये, तिनको वरुन वषान । संवादि । १९६ । जेठ वदी कृष्ण पक्षे एकादसी सुक्रवारे छाया वलदेव की अंतर वेद लिपितं लालदास वैष्णु वा पठनार्थ जो खोजो लिखो मम को सोन दीजिये ॥ राम राम ॥

विषय—कार्तिक मास के स्नानदि का विधान और माहात्म्य ।

संख्या २८८ सी. कार्तिक महात्म्य, रचयिता—रामकृष्ण, पत्र—४८, आकार—१० × ६$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७२८, रूप—प्राचीन,

लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७४२ = १६८५ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री पं० लक्ष्मीनारायन जी आयुर्वेदाचार्य, ग्राम—सईजई, डाकघर—फीरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि-अंत—२८८ ए के समान।

संख्या २८९. रामरक्षा स्तोत्र, रचयिता—रामानुजाचार्य (वृन्दावन), पत्र—६, आकार—६ × ४३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—नेकराम शर्मा, कायथा, डाकघर—कोटला, जिला—आगरा।

आदि—श्री रामचंद्राय नमः। ॐ संध्या तरणि सर्व दुख निवारनि। संध्या उचरे विघ्न टरे पिंड प्राण की रक्षा श्री नाथ निरंजन करै। १। ज्ञान धूप मन पुहुप इंद्रिय पंच हुतासन क्षिमा जाप समाधि पूजा नमोदेव निरंजनं। २। ॐ अखंड मंडलाकारं व्याप्तं जेन चराचरं। तत्पदं दर्शितं जेन तस्मै श्री गुरवे नमः। ॐ परम गुरुभ्यो नमः॥ प्रात्परे श्री गुरुभ्यो नमः। आत्मा गुरूभ्यो नमः। आदि गुरु देवी अनादि गुरुदेव अनंत गुरुदेव। अलख गुरुदेव। सराय गुरूदेव। श्री गुरूदेव। श्री गुरदेव के चरनार विंद नमस्कार। हरत सर्व व्याधि सोक संताप दुख दालिद्र कलह कलपना रोज पीड़ा। सकल विघ्न खंखड तस्मै श्री राम रक्षा निराकार वाणि। अन ततले निर्भय मुक्ति जारभी। ६। वांधपा मुल देखिया स्थूल गर्जिया गगन धुनि ध्यान लगा रहे। त्रिगुण रहित सील संतोप माही श्री राम रक्षा लिये ॐ कार जाज। ७। पांच तत्व पंच भूत पचीस प्रकृति पंच वायु सम दृष्टि सांम घर आई। ८। उलटिया प्रान अपान उधान व्यान समान मिलि अनहद शब्द कि खवरि पाई। ९।

अन्त—दोहाई फिरती रहे। अलख निरंजन का चक्र फिरता रहा। वहुवाट घाट में चोर में राज के तेज में सांकरे पैठता आनि विझाल में सोवते जागते खेलते मालते उठते बैठते संत के सीस पर हाथ धारे रहे। चरण अरू सीस सो राम रक्ष्या करे गुप्त का जावले गुप्त साधैं। जीतिया संग्राम देवाधि देव चंड सूर्यय कथि रहै फेर सूधा किया। उलटि अमृत पिया। विषकि लहर सर्व भागी। कमल दल कमल जोति ज्वाला जतै। भमर गुंजार आकार जागा। रोम नाडितु चारक्त विंद सोषतं गाजत गगन वाजतं वेनु धुनि सक त्रकुटि सारे गुरू रामनंद ब्रह्म कौ चिन्ह ते सो ज्ञानि एते राम रक्षा वादेप उच्चरंत प्राणी। राजद्वारे पथे धारै संग्रामै शत्रु करै। श्री राम रक्ष्या स्तोत्र मंत्र राजाराम चंद्र उचरंत लक्ष्मण कुमार सुनत धर्मै निहारं ततयो पराय लभ्यते सीता सुमंत हनुमान सुनेते। वीज त्रिकाल जपते सो प्राणी परांगता। इति श्री रामानुजाचार्य कृत श्री राम रक्षा स्तोत्र सम्पूर्ण॥

विषय—अनेक रोग विनाशक राम रक्षा मंत्र वर्णन।

संख्या २९०. सुखजीवन प्रकाश, रचयिता—रामप्रसाद (जहानगंज), पत्र—४०, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—११०६, रूप—कीड़ा लगा, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, लिपिकाल—सं० १९३६ = १८७९ ई०, प्राप्तिस्थान—वैद्य देवनारायण—मोहनपुर, डाकघर—बरवान, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ सुख जीवन प्रकाश लिख्यते ॥ मंगला चरन कवित्त ॥ शेष महेश गणेश मनाय मनाऊं सदा जगदंब भवानी ॥ श्री धन्वंतरि सुश्रुत वाग भट्ट पाराशर आत्रेय जे ज्ञानी । निज मति आयुर्वेद रच्यो उन पग जुग सौमिरु गुणहिं वखानी ॥ भाषा वैद्यक ग्रन्थ कह्यो चहौं देहु दयानिधि बुद्धि की खानी ॥ दोहा—सुख जीवन परकास यह है जीवन को मूल । निश्चय दोष हरन यह जानु अमिय सम तूल ॥ दोहा और चौपाइन में लिखी है मति अनुसार । लोक कार्य हित चिकित्सा मुनिन कहे सुख कार ॥ सोई पुस्तक हेरि के याही ग्रन्थ के मांहि । लिख राखी शुभ जानि के दोष न मुझ को नाहिं ॥ चूक जो होवे या विषे चतुरहु लेहु निहारि ॥ रोगिन के हित होइंगे वैद्यन को यश सार ॥ सब रोगन में होत है ज्वर नृप रोगहु गूढ़ याते प्रथमहिं लिखत हैं ज्वर की औषधि ढूंढ़ ॥

अंत—अथ वाल रोग चिकित्सा ॥ दोहा ॥ धाय पुष्प नेत्र बाल अरु लोध गिरी को लाय ॥ गज पीपरि सम लायके क्वाथहु करै बनाय ॥ शहत मिलाकर दीजिये बल बालक को देषि ॥ अतीसार को दूर कर बहुरि न ताको पेष ॥ तथा ॥ पीपरि और अतीस पुनि ककरा सिंगी लाय । नागर मोथा मंगाय के चूरन करो बनाय ॥ शहत डारि चटाइये बल बालक को जानि । ज्वर अतिसार अरु वमन हू कासहु दृष्टि न आनि ॥ अथ विरेचन ॥ सिंगरफ सुहागा सम कह्यो त्रिफला त्रिकुटा दीन । बचा हींग अज मोद पुनि सैंधव दंती लीन ॥ खुरासानि अजवाइनि पुनि क्रमि रिपुहु को लाइ । सबहि बराबर लीजिये जय पालहु को भाइ । नीबू रस को मर्दिये ताको खूब महीन । रती एक मात्रा कही गोली विधि से कीन । उष नोदक से खाइये गुल्म पाण्डु क्षय टारि । स्वांस कांस कफ मेह जुत अफरा मूल विडारि । उदर रोग मंदाग्नि पुनि अर्श विष्ट बहु नाश ॥ कोढ़ इत्यादिक दूर सब जगत होय प्रकाश ॥ राम ग्रह शिव नेत्र जिनइन चरनन चित दीन । और नेत्र लगाय के अपने वस कर लीन ॥ तिनकी कृपा कटाक्ष ते ग्रन्थ समापति होति । अश्वनि शुक्ल मास में नव निधि पावत ज्योति ॥ इति श्री मन जहानगंज निवासी रामप्रसाद विरचिते सुख जीवन प्रकाश संपूर्ण समाप्तः ॥ संवत् १९३६ वि० ।

विषय—वैद्यक ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता राम प्रसाद जहानगंज निवासी थे । निर्माण काल संवत् १९३२ और लिपिकाल संवत् १९३६ वि० है ।

संख्या—२६१ ए. जोग वासिष्ट पूर्वार्द्ध, रचयिता—रामप्रसाद निरंजनी (पटियाला), पत्र—४३६, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२८८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७९८ = १७४१ ई०, लिपिकाल—सं० १९१२ = १८५५ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला दीनदयाल अवकाश प्राप्त तहसीलदार, टप्पल, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ जोग वसिष्ट भाषा रामप्रसाद निरंजिनी कृत लिख्यते ॥ प्रथम वैराग्य प्रकरण ॥ उस सच्चिदानन्द रूप आत्मा को नमस्कार है जिससे

सब भाषते हैं। और जिसमें सब लीन और स्थित होते हैं॥ अर्थात् जिससे ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय दृष्टा दर्शन दृश्य और कर्त्ता कारण क्रिया सिद्धि होते है॥ जिस आनन्द के समुद्र के कारण से सब जीव जीते हैं अगस्त जी शिष्य सुतीक्षण के मन में एक समय उत्पन्न हुआ तब वह उसके दूर करने के हेतु अगस्त मुनि के आश्रम जाय के विधि सहित प्रणाम करके पूछा कि हे भगवान आप सब तत्वों के जानने वाले हैं और सब शास्त्रों के जानने हारे हौ एक संदेह हमको है सो दूर करौ। मोक्ष का कारण कर्म है अथवा ज्ञान अथवा दोनों। इतना सुन अगस्त जी बोले कि हे ब्राह्मण केवल कर्म से मुक्ति नहीं होती और न केवल ज्ञान से ही मुक्ति होती है॥ मोक्ष दोनों से प्राप्त होता है॥ कर्म से अन्तः करण शुद्ध होता है मुक्ति नहीं होती और अन्तः करण की सुद्धि विना केवल ज्ञान से भी मुक्ति नहीं होती। इस कारण दोनों से मुक्ति होती है॥

अन्त—हे रामजी जो तामसी राजसी जाति है उसको जन्म और कर्म के संसकार वश से सात्विक प्राप्त होता है॥ और वह भी अपने विचार द्वारा सात्विक जाति को प्राप्त होता है॥ पुरुष के भीतर अनुभव रूपी चिन्तामणि है॥ उसमें जो कुछ निवेदन करता है वही रूप हो जाता है॥ इससे पुरुषार्थ करके अपना उद्धार करौ पुरुष परिश्रम और अपने श्रेष्ठ गुणों से मुक्ति को पाता है॥ और उसके जन्म का अंत होता॥ फिर जन्म नहीं पाता है और अशुभ जाति के कर्मों से अलग हो जाता है। ऐसी वस्तु पृथ्वी आकाश देवलोक में कोई नहीं है॥ जो उपाय करने से प्राप्त न होवे। हे रामजी तुम तौ बड़े गुणवान हौ। धीरज वान हौ उत्तम वैराग्य और दृढ़ बुद्धि से सम्पन्न हौ और उसके प्राप्त की धर्म बुद्धि से वीत शोक रूप हौ तुम्हारे कामों को जो कोई ग्रहण करेगा वह मूढ़ता से रहित होकर अशोक पद को प्राप्त होगा। अब तेरा अन्त का जन्म है और बड़े विवेक से संयुक्त हो। तुम्हारी बुद्धि में शांति के गुण फैल गये हैं और उनसे तुम्हारी शोभा है सात्विक गुण से सब में रमि रहे हो और संसार की बुद्धि मोह चिन्ता तुम को मिथ्या है। तुम अपने स्वस्थ स्वरूप में स्थित हौ। इति श्री जोग वसिष्टे महारामायणे स्थिति प्रकरणे मोक्षो पाप वर्णनन नाम एकष्टष्टित्तम सर्गः ६१ समाप्तः लिखतं दया राम कायस्थ आगरा निवासी अश्विन मासे शुक्ल पक्षे द्वादश्याम संवत् १९१२ वि०॥

विषय—योगवाशिष्ट का भाषानुवाद।

संख्या २९१ बी. योग वाशिष्ट, रचयिता—रामप्रसाद निरंजनी (पटियाला,पंजाब), कागज—मोटा, पत्र—४२०, आकार—१६ × १० इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३४४०, रूप—पुराना और दीमक लगी, लिपि - नागरी, रचनाकाल—सं० १७९८ = १७४१ ई०, लिपिकाल—सं० १८५६ = १७९९ ई०, प्राप्तिस्थान—पण्डित रामभजन शास्त्री, भिष्मपुर कलाँ, डाकघर—जलेसर, जिला—एटा।

आदि-अंत—२९१ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—इति श्री जोग वसिष्टे। महारामायणे स्थिति प्रकरणे मोक्षो पाप वर्णनं नाम एक षष्टितम सर्गा ६१ संपूर्ण समाप्तम लिखतं गूजर मल॥ वैश्य स्वपठनार्थ संवत् १८५६ वि०॥

संख्या २९१ सी. जोगवसिष्ट, रचयिता—रामप्रसाद निरंजनी (पटियाला, पंजाब), पत्र—४२४, आकार—१६ X १२ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२९९६, रूप—दीमक लगी, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७९८ = १७४१ ई०, लिपिकाल—सं० १८७५ = १८१९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० केदारनाथ, भगौता, डाकघर—सोरों, जिला—एटा।

आदि-अंत—२९१ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है:—इति श्री जोग वसिष्ठे महारामायणे स्थिति प्रकरणे मोक्षो पाय वर्णनं नाम एक षष्टिम सर्गा ६१ संपूर्ण समाप्तम् लिषतं शिवराम पाँड़े संवत् १८७५ वि० ॥ राम राम राम।

संख्या २९१ डी. जोगवसिष्ठ भाषा (पूर्वार्द्ध), रचयिता—रामप्रसाद (पटियाला पंजाब), कागज—देशी, पत्र—६१०, आकार—१६ × १० इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६००६, रूप—प्राचीन, लिपि नागरी, रचनाकाल—सं० १७९८ = १७४१ ई०, लिपिकाल—सं० १८८० = १८२३ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला लच्छीराम पटवारी, पीपरगंज, डाकघर—सराय अगत, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ जोग वसिष्ठ लिख्यते ॥ साधु राम प्रसाद कृत ॥ प्रथम परब्रह्म परमात्मा को नमस्कार है जिससे सब भासते हैं और जिसमें सब लीन और स्थित होते हैं। जिससे ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय द्रष्टा दर्शन और कर्त्ता कारण क्रिया सिद्धि होते है जिस आनन्द के समुद्र के कण से संपूर्ण विश्व आनन्द मयी है जिस आनन्द से सब जीव जीते हैं। अगस्त जी के शिष्य सुतीक्षण के मन में एक सन्देह पैदा हुआ। तब वह उसके दूर करने के कारण अगस्त मुनि के आश्रम को जा विधि सहित प्रणाम करके बैठे और विनती कर प्रश्न किया कि हे भगवन आप सब तत्वों और सब शास्त्रों के जानने हारे हो मेरे एक सन्देह को दूर करो। मोक्ष का कारण कर्म है कि ज्ञान है अथवा दोनों हैं समझाय के कहो इतना सुन अगस्त मुनि बोले कि हे ब्रह्मण्य केवल कर्म से मोक्ष नहीं होता और न केवल ज्ञान से मोक्ष होता है। मोक्ष दोनों से प्राप्त होता है ॥

अन्त—हे रामजी जो पुरुष अभिमानी नहीं है और जिसके रूप में स्थिति है। वह शरीर के इष्ट अनिष्ट में राग द्वेष नहीं करता क्योंकि उसको शुद्ध बासना है और वह जो करता है सो बंधन का कारण नहीं होता। जैसे भुना बीज नहीं जमता तैसे ही ज्ञान वान की वासना जन्म मरण का कारण नहीं होती और जिसकी वृत्ति संसार के पदार्थों में स्थिति है और राग द्वेष से ग्रहण त्याग करता है ऐसी मलीन वासना जन्मों का कारण है ऐसी वासना को छोड़कर जब तुम स्थित होगे तब तुम कर्त्ता हुए भी निर्लेप होगे ॥ और हर्ष शोक आदि विकारों से जब तुम अलग होगे तब गीत राग भय क्रोध से रहित होगे। हे रामजी जिसका मन असंग हुआ है वह जीवन मुक्त हुआ है ॥ इससे तुम भी वीत राग होकर आत्म तत्व में स्थित हो। जीवन मुक्त पुरुष इन्द्रियों के ग्राम को निग्रह करके स्थित होता है। और मान मद वैर को त्याग करके संताप से रहित स्थित होता है। वह सब आत्मा जानकर कर्म करता है। परन्तु व्यौहार बुद्धि से रहित असंग होकर कर्म करता है। वह

करता भी अकरता है उसको आपदा व संपदा प्राप्त हो अपने स्वभाव को नहीं त्यागता जैसे छीर समुद्र मंदरा चल पहाड़ को पाकर शुक्ला को नहीं त्यागा ॥ तैसे ही जीवन मुक्त अपने स्वभाव को नहीं छोड़ता। हे रामजी आदा प्राप्त हो अथवा चक्रवर्त्ती राज्य मिले। सर्प अथवा इन्द्र का शरीर प्राप्त हो इन सब में सम भाव स्थित होता है। हर्ष शोक को नहीं प्राप्त होता। वह सब आरम्भों को त्याग कर नानात्व भाव से रहित स्थिति होता है। विचार करके जिसने आत्म तत्त्व पाया है वह जैसे स्थिति हो वैसे ही तुम भी स्थिति हो इसी दृष्टि को पाकर आत्म तत्त्व को देखो तब विगत ज्वर होंगे ॥ और आत्म पद को पाकर फिर जन्म मरण के बन्धन में न आवोगे ॥ इति श्री जोग वसिष्ट उपशय प्रकरण समाप्तः इति श्री जोग वसिष्ट पोथी संपूर्ण संवत् १८८० वि० ॥

विषय--योगवाशिष्ट का भाषानुवाद।

संख्या २९२. अखरावली, रचयिता—श्री रामसेवक महात्मा (हरचन्दपुर, जि० बारहबंकी), पत्र—२८, आकार ७३/४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)--२६५, रूप—सादा, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३० = १८८१ ई०, प्राप्तिस्थान—महन्त चन्द्र भूषण दास जी, ग्राम—उमापुर, डाकघर—मीरमऊ, जिला—बारहबंकी।

आदि—(क) करन धार कमाल कर्ता करत सरवस सो अहै। श्रुति सेस साब पुरान बानी काव्य तेहि सी फति कहै। ब्रह्म शंकर नारदं सुक ब्यास सौनक मन चहै। सनकादि देव सुरादि सूतौ अंगिरा अंतर गहै। आनंत संत सुगावते सतनाम पारस पर अहै। आरूप अवरन अकह अविगत कवन तेहि गत कालई। अस सामरथ जग जविन जगमग जगति पति जन क्रम दहै। प्रभु देवीदास लखाय दीन्हो रामसेवक मिलि रहै।

अंत—एक करता पुरुष अविगत अलख अगुन निअक्षरं। जिन कीन त्रिभुवन तनक मा नहिं जानि गति काहू परं। सोइ सुन्यकार अपार अवरन वरन बुद्धि न संचरं। अद्वैत अकथ अनादि अज अल भेस देस निवासरं। सो सत्य गुरु सत सिद्धि दायक जक्त गुन धरि अवतरं। जग जिवन नाम कहाय जन हित भक्ति विस्तारं करं। प्रभु देविदास दयाल तिन्ह कहि दीन्ह मत परगट वरं। जन राम सेवक मँगन ह्वै कर जोरि कै पायन्ह परं।

विषय—प्रत्येक अक्षर पर छंद रचना करके ज्ञानोपदेश किया गया है।

संख्या २९३ ए. कार्तिकमहात्म्य, रचयिता—रंगीलाल (मथुरा), कागज—देशी, पत्र—१०६, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९७६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—लालागंगाबकूश पिड़रुआ, डाकघर और जिला—हरदोई।

आदि—श्रीगणेशायनमः ॥ अथ कार्तिक महात्म की भाषाटीका लिख्यते ॥ एक समय सब तीर्थन में उत्तम जो नेमषाण्य क्षेत्र है तामें बैठे हुए श्री सूत जी अट्ठासी

हजार ऋषियों से कहते भये की हे ऋषियों जब श्री सत्य भामा जी अपने मनमें प्रसन्न होकर लक्ष्मी के पति जो श्री वासुदेव भगवान श्री कृष्णचन्द्र हैं। तिनसो बोलत भई हे नाथ आज में अपने को धन्य मानूं हूं। आज मेरो जन्म सफल भयो और मेरे जन्म के दाता जो मेरे माता पिता हैं। ते भी धन्य हैं। जिन्होंने तीनों लोकन में जाको सरूप जाको विख्यात ऐसी जो मैं हूं ताय उत्पन्न करी और आपके जो सोलह सहस्र स्त्री है तिन सबमें मैं यथोक्त विधि से नारद मुनि के अर्थ समर्पण किये गये ताकी वार्ता जो मृत्यु लोक में बसन हारे जो जीव नहीं जानत हैं सोई कल्प वृक्ष आपकी कृपाते मेरे घर में वर्त्तमान हैं ॥

अंत—सूत बोले ऐसो वाको बैठाय के उद्दालक चले गये। वहां बहुत देर ताईं उनकों मार्ग देखती भई। वो जब उनको न देखती भईं तब पति के त्यागने से दुखित हो शोक सों रोदन करती भईं॥ वाके रोदन को लक्ष्मी वैकुन्ठ भवन में सुनत भई तब लक्ष्मी उदास मन हो विष्णु सों प्रार्थना करत भई। लक्ष्मी बोली हे स्वामी मेरी जेठी बहिन भर्त्ता के छाड़ने सों दुषित है तो हे दयालु जो मैं तुम्हांरी प्यारी हूं तो तुम वाको धीरज देवो जाय॥ सूतजी बोले ता पीछे कृपानिधि विष्णु लक्ष्मी सहित वहां जात भये उस अलक्ष्मी को धीरज दे के ये वचन बोलते भये। हे अलक्ष्मी तुम पीपल की जड़ में सदा रहो ये मेरे अंश सों उत्पन्न है याते मैंने तुम्हांरे वांस के निमित्त दियो। और प्रति वर्ष जो गृहस्थी जेष्ठा जे तुम हो तुम्हांरो पूजन करेंगे उनके घरमें तुम्हांरी छोटी बहिन लक्ष्मी वास करेगी और स्त्रियों करके नाना प्रकार की भेद देके सदा पूजी जावोगी। गंध पुष्पाद से जो तुम्हांरो पूजन करेंगे तिन पर लक्ष्मी प्रसन्न होंगी। सूत जी बोले हे मुनियो या प्रकार श्री कृष्ण और सत्य भामा और नारद पृथु को संवाद मैंने तुम्हांरे आगे वर्णन कियो और जो कुछ तुम्हें पूछना होय सो पूछो मैं विस्तार पूर्वक कहूंगी॥ ये वचन सुनते ही सब ऋषि मन्द मन्द हंसते भये और आपस में कुछ न कहते भये और सब बद्रिकाश्रम को दर्शन करने के निमित्त जात भये। जो मनुष्य या कथा को श्रमण करैगो अथवा श्रेष्ठ मनुष्यन को सुनावैगो वो सब पापनते निवृत्त होयगो॥ और विष्णु भगवान को सायुज्य प्राप्त होयगो। इति श्री पद्म पुराणे कार्तिक महात्मे व्रज भाषा टीकायाम मथुरा निवासिनां रंगीलाल कृतौ संपूर्ण समाप्तः संवत् १९४० माघ मासे शुक्ल पक्षे पंचम्यांम्।

विषय—कार्तिक माहात्म्य वर्णन।

संख्या २९३ बी. कार्तिकमहात्म्य, रचयिता—रंगीलाल (मथुरा), कागज—देशी, पत्र—११२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८७२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला हरसुख राय, गंगधरापुर, डाकघर—जैथरा, जिला—एटा।

आदि-अंत—२९३ ए के समान।

संख्या २९३ सी. जर्राही प्रकाश, रचयिता—रंगीलाल, कागज—देशी, पत्र—७६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००८, रूप—

प्राचीन, लिपि--नागरी, लिपिकाल--सं० १९१९ = १८५९ ई०, प्राप्तिस्थान--नानकचन्द श्रीवास्तव, कमलागढ़ी, डाकघर--वजीदपुर, जिला--अलीगढ़ ।

आदि--श्री गणेशायनमः ॥ अथ जर्राही प्रकाश ग्रन्थ लिख्यते ॥ अथ आतशक अर्थात् उपदंश की चिकित्सा ॥ जानना चाहिये कि ये रोग कितने ही प्रकार का होता है ॥ एक तो किसी वेश्या के यह रोग होवे और पुरुष कामदेव से उन्मत्त होकर इसकी परीक्षा न करके उससे संभोग करै जैसे कहावत कि ज्वानी दिवानी और जब वह भोग कर चुकता है तो कई एक दिन पीछे यह रोग प्रगट होता है और पेडू व लिंग पर अंड कोषों पर एक पीली फुन्सी हो जाती है उसमें खुजली के संग जलन होती हैं फिर मनुष्य उसे खुजा डालता है जब वह घाव बढ़ जाता है तब अपनी मूर्खता से सेल खड़ी व कत्था लगा देता है जब घाव एक पैसे के बराबर हो जाता है तब लोगों पर प्रगट करता है तो वह उसको हुक्के में पीने की दवाई देता है । उससे मुँह आगया वमन व दस्त हो गये और कोई खाने को दूध बताता है यदि इस चिकित्सा से कई दिन के लिये आराम हो जाता है । परन्तु रोग की जड़ नहीं जाती बस उचित है किसी विद्वान बुद्धिमान जर्राह को बुलाकर चिकित्सा करावै और जर्राह को भी चाहिये पहिले घाव को देखे कि घाव कितना चौड़ा है परन्तु यह घाव केवल मलहम से अच्छा नहीं हो सकता इसकी इस प्रकार चिकित्सा करै॥

अन्त--नुसखा १--वनसफा का तेल ५ तोले आंच धरके उसमें सफेद मोम २ तोले कतीरा ९ माशे मिलावै और जहां दर्द होता हो वहा मर्दन करावै तो इसके लगाने से वहुत जल्द फायदा हो जायगा ॥ नुसखा २--वनसफा के व सफेद चन्दन खतमी के वीज नाखूना जव का चून गेहूं की भूसी ये सब दवा वरावर लेके कूट छानकर इन सबको मोम रोगन में और वन फसा के तेल में तथा गुल रोगन में मिलाकर पकावै जब रोगन मात्र रह जावे तव उतार कर इसका मर्दन दर्द के मुकाम पर करावै तो दर्द वहुत जल्दी रफा हो जावेगा । नुसखा ३--खतमी के बीज अलसी मकोय के पत्तों का रस अमल तास का गूदा इन सवको पीस कर छाती पर लेप करना अथवा वारह सिंगा का सींग सोंठ अरंड की जड़ इनको पानी में घिस कर लगाना अथवा मीठे तेल में अफीम औंटा कर मलवाना ॥ इति श्री जर्राही प्रकार ग्रंथ रंगीलाल कृत संपूर्ण समाप्तः लिखा शिवदास अहीर रमुआ ग्राम निवासी वैसाख वदी १३ संवत् १९१६ वि० ॥

विषय--छूतवाले रोगों का वर्णन ।

संख्या २९३ डी. जर्राही प्रकाश, रचयिता--रंगीलाल, मधुपुरी (मथुरा), कागज--देशी, पत्र--१२४, आकार--८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)--२६, परिमाण (अनुष्टुप्)--१६३४, रूप--प्राचीन, लिपि--नागरी, रचनाकाल--सं० १९२७ = १८७० ई०, लिपिकाल--सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान--वैद्य रामभूषण, जमुनिया, डाकघर और जिला--हरदोई ।

आदि--श्री गणेशायनमः अथ जर्राही प्रकाश लिख्यते ॥ मंगला चरण दोहा ॥ श्री धन्वन्तर के चरण रज निज मस्तक पर धार ॥ जर्राही परकास ये रच्यो ग्रन्थ सुपकार ॥

पुनि गुरु चरण सरोज रज मस्तक तिलक चढ़ाय। रोगिन के उपकार हित पूरण कियो बनाय॥ नाना ग्रन्थन को रतन अरु निज मति अनुसार। रची चिकित्सा देह की सुख पावे संसार॥ अथ मस्तक के फोड़े का यत्न॥ एक फोड़ा सिर के तालू पर होता है। सूरत उसकी यह है कि पोस्त के दाने के बराबर होता है उसके आसपास हथेली के बराबर स्याही होती है॥ और वह स्याही हवा के सदृश दौड़ती है और जहरबाद से संबंध रखती है। यहां तक यह स्याही फैलती है कि सब शरीर स्याह हो जाता है और वह रोगी ४ या ७ पहर में मर जाता है। परन्तु परमेश्वर की कृपा से कोई अच्छा जर्राह मिल जाता है तो निःसंदेह आराम हो जाता है॥ जो स्याही कंठ के नीचे उतर आई हो तो इलाज करना न चाहिये॥

अन्त—प्रगट हो कि जो लोग प्रति वर्ष फस्त खुलवाते या जुलाब लेते हैं तो उनको अभ्यास वैसा ही पड़ जाता है और यह अभ्यास अच्छा नहीं और फस्त का खुलवाना उत्तम है॥ क्योंकि वर्ष में तीन रितु होती हैं और रुधिर भी तीन प्रकार का होता है। शीत काल में मध्यान के समय खुलवावै कि उस रितु में रुधिर उसी समय चक्कर पर होता है॥ फिर ठहिर जाता है और कोई कोई यों भी कहते हैं कि रुधिर जम जाता है सो यह बात झूंठ है। क्योंकि जो मनुष्य के शरीर में रुधिर जम जावै तो मनुष्य जीवै नही किन्तु भीतर गरमी होती है और रुधिर निकलने में यह परीक्षा नहीं होती कि यह रुधिर अच्छा है वा बुरा और उसी समय में फस्त खुलवाने से मनुष्य दुर्बल हो जाता है। क्योंकि बुरे रुधिर के साथ अच्छा रुधिर भी निकलता है। और ग्रीषम काल में रुधिर प्रथक होता है। इस रितु में संझा के समय फस्त खुलवाना उचित है और सवेरे खुलवाने में रुधिर कम हो जाता है। जो मनुष्य फस्त खुलवाने के आदी हैं अगर फस्त न खुलवावै तो एक न एक रोग समाना रहता है। वर्षा काल में रुधिर मात दिल हो जाता है उस रितु में फस्त खुलवाना योग्य नहीं। जो हकीम की सम्मति होवे तो खुलवा लेवे॥ और अगर फस्त खुलवाने की अधिक आवस्यता हो तो फस्त खुलवा लेवे दिन मुहूर्त समय न देखै यह समय विचार योग्य नहीं है इति जर्राही प्रकाश रंगीलाल कृत संपूर्ण समाप्तः॥ राम राम राम राम राम॥

विषय—शल्य चिकित्सा का वर्णन।

संख्या २९४ ए. श्रीमद्भागवत महापुराण, रचयिता—रसजानि, पत्र—४५७, आकार—१५ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२७५०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८०७ = १७५० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० खुसालीराम-राजोरिया, ग्राम—कुंडौल, डाकघर—डौकी, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशायन्मः श्री राधा कृष्णे जयति। अथ श्री भागवत की भासा रस जानि कृत लिख्यते। प्रथम स्कंध मंगला चर्ण॥ चौपाई॥ राधा चरण अरुण पाऊं। सीस नवाइ जु बात सुनाऊं। हे राधे सुनि विन्ती मोरी। कृपा कटाक्ष जु चाहों तेरी॥ जिहि कटाक्ष जल सींचों ताही। बजि रूप हिय बानी आही। सब अंग सुंदर मेरी कविता। सुन्दर करऊँ प्रेम रस वनिता॥ सब कनि कहत वदन छबि ससि जिमि। करि मन काव्य आपमे सुख सिति। सशि समान जिन करहे सजनी। प्रगट कलंक होत जिहि रजनी॥ अर्थ गंभीर करहु पुनि अैसी। नाभि गंभीर विराजति जैसी॥

अंत—कहुं और को और पुनि, जो अर्थहि लषि लेहु ॥ पाठ भेद सौं जानियौ, मोहि दोष जिनि देहु । चौपाई—मोर डेढ़े पसु इरस पागे, जो रस पगे न सोभा आगे । संवत अष्टा दस सत सात । जेष्ठ बदी छट मंगल गात । इति श्री भागवते महापुराणे परम हंस्या संहितायां द्वादस स्कन्ध भाषा रस जानि कृते त्रयोदश अध्याय ॥ द्वादश सम्पूर्ण शुभ मस्तु ॥ सरबोपरि श्री भागवत, परम धर्म स्वछन्द । जाके कह आवै नहीं, सोई अति मति-मंद । पुनि चैत्रधि मास लोन मधुरित मधुर वसंत नवीन । संवत वीस चारि के भीतर । प्रति सुभ मूल लिखी है मनु करि । कृष्ण पक्ष तिथि मावस जानौ । गुरुवासर दिन पुनि पहिचानौ । लिखितं हरिप्रसाद पंडितवर, हरिदासनि की सदा आस करि । सन्तन सम प्रिय और न कोई । कहि प्रभु पुनि पुनि यह मत गोई । बाबा जी बालक दास जी की प्रति सों पंडित हरिप्रसाद ने सम्पूर्ण भागवत रसंजस कृत प्रति की उतारी । प्रति देखा सो लिखा मम दोषो न दीयते । ग्राम वासं कुन्डौल ॥ राम राम ॥

विषय—भागवत् का भाषानुवाद ।

संख्या २९४ बी. श्रीमद्भागवत, रचयिता—रसजान, कागज—बाँसी, पत्र—११४९, आकार—१२ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४१२९, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०४ = १८४७ ई०, प्राप्तिस्थान—महन्त त्रिवेणीदास चेला मंगलदास जी, राधा वल्लभ की शाला, डाकघर—बमरोली कटरा, जिला—आगरा ।

आदि-अंत—२९४ ए के समान । पुष्पिका और टिप्पणी इस प्रकार है:—

इति श्री भागवते महापुराणे द्वादस कन्धे भाषा रस जानि कृते नाम त्रय दसो अध्याय ॥ १ ॥ संवत् १९०५ ॥ शाके १७७० तत्र वर्षे चैत्र कृष्ण पक्षे तिथौ ३ रविवासरे ।

टिप्पणी—भागवत माहात्म्य में रचयिता ने अपना परिचय इस प्रकार दिया है :—दोहा—श्री प्रिया दास रस रस रास को पौत्र ईश्वादास, ताही को रस जानि तिन कीनो नाम प्रकास ॥ २ ॥ श्री हरि जीवन गुरु कृपा पावै सोई जानि । श्री भागवत महात्म की भाषा करी बखानि ।

संख्या २९४ सी. श्रीमद्भागवत (प्रथम स्कन्ध), रचयिता—रासजान, पत्र—२९, आकार—१३½ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—७६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१२ = १८५५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० कैलासपति शर्मा, ग्राम—विजौली, डाकघर—डाब, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशायनमः ॥ अथ प्रथमो स्कंध भाषा रसजन कृते लिपते । प्रथम मंगलाचरन । चौपई । राधा चरन कमल मन ध्याउ । सीस नवाइ जु बचन सुनाउ । हे राधा सुनि विनती मोरी । कृपा कटाक्ष जु चाहत तोरी । तेहि कटक्ष जल सींच्यो ताहि । बीज तू पहिय वानी आही । सब अंग सुंदर मेरी कविता सुंदर करहु प्रमरस वनिता । सब कवि कहैंत वंदना छबि ससि जिमि करि मम काव्य आपने मुष तिमि । सस समान

जिन करिहैं सजनी। प्रगट कलंक जुहे जिमि रजनी। अर्थ गंभी करहु पुनि ऐसो। नभिणा भार विराजै जैसी। दुर्जन हुन मन छेदहु ऐसी। पीतम हिइज भेदत जैसे।

अंत—कृष्ण पांडवनि के प्रीय भारे। फूफी के बेटा अति प्यारे। तिनके वंस में मोको जानि। मोपर क्रपा करी तुम आनि। तुम्हरी गति नहिं जानी जाइ, नरनि कौ दुर्लभ दरसनु आइ। अति दुर्लभ तुव दरसन वाको, मन आइ प्राधत भयो ताको। सव के गुरु तुम सिधि के दाता, पूछतु एक तुमही को वाता। मरन हरन प्रानी आहि, करिवे जोग्य कहो मुनि ताहि कहौ करै अरु सुनि कहा करो, कहि भजै कौन कौ सुमिरै। जाजा कौ निषेध है अहौ, सो सो प्रभु तुम मोसे कहो। गो दोहन लगि रहौ तहां, अहि ग्रहस्थन के ग्रह जहां। सूतो वाच। सुंदर वानी सोयो राजा पूछी सुक सो सुष के काजा। तवै व्यास सुत बोलत भये अति धर्मग्य महा छवि छाये। इति श्री भागवते महापुराणे प्रथम स्कंधे भासा रसजन क्रत श्री सुकगवननो नाम उनइसमोध्याय। १९। संवत् १९१२ मासोत्तम मासे कृष्ण पक्षे पुनि तिथउ। ६। गुरुवासरे सन् १२६३ फसली। राम राम राम राम।

विषय—भागवत प्रथम स्कंध के उन्नीस अध्यायों का भापा में पद्यानुवाद।

संख्या २९४ डी. भागवत प्रथम स्कन्ध, रचयिता—रसजान, कागज—बाँसी, पत्र—२४, आकार—१२ X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—७५७ रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० जयदेव मिश्र, ग्राम—सरैधी, डाकघर—जगनेर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—श्रीमन्ते रामाजायन्मः॥ ॐ नमः अथ लिख्यते भागवत को प्रथम स्कन्ध॥ दोहा—रसिक भूप हरि रुप पुनि श्री चैतन्य स्वरुप। हृदै कूप अनुरूप पुनि, उकल्यो बहै अनूप। मगवंशके नृप कहे, द्वादश पहिले ध्याय। भये वरनशंकर सुने, कलि प्रभाव को पाप॥ श्री परीक्षत उवाच॥ जदुकुल भूखन कृपन जु आहिं। अपने धाम गये ते ताहिं। कौन को वंस भयो घर में पुनि। यह हमसों सब कहो मुनि।

अंत—तुक अमिलन मात्रा अधिक अर्थ बनावनि हेत। तुम मिलन संक्षेपहित, कहूं अर्थ संकेत। तुक अमिलन पेरोख नहीं, कवि प्रयोग को देखि। घटी बढ़ी मात्रा को निपुन, पढ़ि लैहैं सु विशेप। कहुं और पुनि जो अर्थहि लखि लेहु। पाठ भेद को जानिये, मोहि दोख जनि देहु। चौ०—संवत अष्टादश सत सात। जेठ बदी छटि मंगल गात। दोहा—श्री प्रियादास रस रासि की, कृपा पाप रस जानि। अगम कीयो निपट सुगम, द्वादस स्कन्धि बखानि। श्री भागवत महापुराणे द्वादस स्कन्ध भापा रस जान कृते त्रयोदशोध्याय।

विषय—भागवत प्रथमस्कन्ध का पद्यानुवाद है।

संख्या २९४ ई०. भागवत (द्वितीय स्कन्ध), रचयिता—रसजन, पत्र—१७, आकार—१३½ X ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—८१६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—कैलाशपति शर्मा, ग्राम—विजौली, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः । श्री ध्या न्मः श्री हि या ध षा सनि वे वे तेः ॥ दोहा । श्रीवन की रंतन आदि करि, स्थूल रूप भगवान । तामें मन ठहरात हैं प्रथम ध्याय यह जान । श्री सुकौ वाच । हे नृप कृष्ण श्रेष्ठ यह भारी, सकल लोक को मंगलकारी । ग्यान वान को संमत है पुनि, सुनिवे की लाइक ताते सुनि । जे नर आत्म तत्त्व नहिं जानै ग्रह में अति आसीक्तहि ठानै । ते नृप नाहिनै सहस निवाताः सुनिवे योग आहि विष्याता । निंद्रा रात्रि की आयुहि हरै, कछुआ पुछ यत्रीय सग करै । दिन की आयुऽ दि मतै जाऐ, कुटुंव भरन तै कछु न सुहाऐ । तन सुत त्रिय परि करि है जेतो यह नर नष्ट लहत है ते तो । तो मन नैक न आवति तातै, अति आसक्ति है रहौ जातै । सर्वात्म ईश्व जो आहि हे नृप जो नरु चाहतु ताहि । सो नर हरि सुमिरन सनु ल्यावै, हरि को सुनै ओरू हरि गुण गावै ।

अन्त—जग मै ज्ञान मान हे जोई, गुण मय हरि को जानत सोई । जग के जन्म कर्म के मांही हरि कै कक्षू अभिमान न नाही । कवि हू वरन करै नहिं यातै माया करि प्रकासत है तातै । सहित विकल्प कल्प विधि सोई । जड जंगम सब होहि कला मै महा तत्वादिक होहि विकल्प मैं । कल्प तक्ष सरूप है जोको, औसो जो है काल सुता को । कहिहो मै प्रमान नृप सवै, पदम कल्प तुम सुनि लेहु अवैं । श्री सौ कौच । महा भागवत विदुर है जोइ, दुस्तर वंधन तजि करि सोई । जाई तीर्थनि मधि अन्हायो सूत जु तुम नैह मैं सुनायो। तत्व विचार मंत्री सुनि, जाइ कही सो हमैं कहौ पुनि । पूछी पीछै मंत्री सुनज्य कहौ विदुर सौ हमहि कहौज्य । अहो सूत जी विदुर चरित सब तुम नीकै वरनो हम सो अब । विदुर नै वंध त्याग क्यों करे फिरि कहौ कैसे ग्रह वरे । सूत उच ॥ तुम हमसौं पूछी है जोई श्री सुक सौ नृप पूक्षौ सोई । श्री सुक नृपहिं कहो पुनि अैसौ मोसो सुन्यो अहो नृप तैसे । इ श्री ग म पु णे तीयऽधभा रसनिते परम हंस संहिता यांसिक्या ।

विषय—भागवत द्वितीय स्कंध का पद्यानुवाद ।

सख्या २९४ एफ. श्री भागवत पुराण, रचयिता—रसजान, कागज—स्यालकोटी, पत्र—६०, आकार—१२×५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१४ = १८५७ ई०, प्राप्तिस्थान—श्रीयुत नन्हाप्रसाद दुबेदी, बमरोली कटरा, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । अथ श्री भागवत पुराण प्रथम अध्याय लिख्यते । श्लोक । ॐ नैमिषे निमप क्षेत्र ऋपम शौन कादयः सत्रं स्वर्गीय लोकाय, सहष समऽऽसत ॥ दोहा:—प्रथम मंगलाचरण कह सूत प्रश्न वषानि । आदर करिके सूत कौ, प्रथम ध्याय यह जानि । दोहा—जग उपजै वे पालै हरै । व्यापक हत्यौरा पुनि रहे ॥ जिति हिय भरि विधि बेद पढ़ायो । जानै मोही बड़े निहं पायो ॥ सव प्रकास सर्वग्य विराजत । जाते झूठो सांचो लागत ॥ माया रचित जगत है अैसे । मृग मारिचि का मैं जल जैसे ॥

अन्त—श्री शुक नृप सौ कह्यो पुनि जैसे । मोसों सुनो अहो मुनि तैसे । दोहा—प्रियादास रस रासि की, पाय कृपारस जानि । आगम कीयौ निपट सुगम द्वितीय स्कन्ध वषानि । राम राम कृष्ण । राम कृष्णराम । राधा कृष्ण । संवत् १९१४ शाके १७७९ तत्र वर्षे ज्येष्ठ कृष्ण अष्ट म्यां रवि वासरे लिखी भवानी प्रसाद ब्राह्मणः अस्थान नौपुरा में, पठनार्थ श्री दौलतराम ब्राह्मणं अस्थान बमरोलीमें ।

विषय—भागवत प्रथम तथा द्वितीय स्कंध का दोहा चौपाइयों में अनुवाद ।

संख्या २९४ जी. भागवत (तृतीय स्कन्ध), रचयिता—रसजान, पत्र—४२, आकार—१२१/२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०१६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० कैलाशपति शर्मा, ग्राम—बिजौली, डाकघर—बाह, जिला—आगरा ।

श्री गणेशाय नमः । श्री सरस्वत्यै नमः । दोहा । रसिक भूप हरि रूप पुनि, श्री चैतन्य सरुप । हृदय कूप अनुरूप रस उडल्यो बह्यो अनूप । आपहीन लषि वंधु सब विदुर त्यागि उठि जाय । उद्धव सों संवाद किय, तृतीय पहल के ध्याय । श्री शुकउवाच । हे नृप तुम पांडव सुपकारी, तिनके भए सुरत मुरारी । दुर्योधन ग्रह त्यागत भए अपनौ मानि विदुर घर गए । अति संपति सौं रह्यो सुछाये सोऊ ग्रेह विदुर छुट काए । वन में जाय मैत्रे सों सो पूछत भए तुमनि पूछो जो । राजोवाच । कहां मिले मैत्रेय विदुर वुनि; कब संवाद भयौ कहियै मुनि । साधुन के संमत नीकौ जो, विदुर भक्त पूछौ ह्वै हैं सो ।

अंत—देव हूति जहां पाई सिद्ध, तहां सीधपुर भयौ प्रसिद्ध । जोग सों सबै धन मल गयौ महान दौलत ताकौ भयौ । सेवत तामों सिद्ध महान, करत सबै सिद्धिनु कौ दान । मात की आज्ञा पाय कपिल मुनि गये पूर्व उत्तर के मधि पुनि । अस्तुति करत भए गंधर्व चारन सिध अप्सर मुनि सर्व । समुद पूजिकैं दीनो ठौर; गावत जस सा ख्यक सिर मौर । तिनि लोक के मंगल कारन अबलों करत जोग कौ धारन । एहो तात तुमनि पूछो जो कह्यो संवाद मात सुत कौसो । यह मत पावन कपिल देव कौ आत्म जोग में गोथ-भेव कौ । हरिमें मन धरि सुनै सुनावे सों तिह चरन कमल कों पावै । दोहा । श्री प्रियादास रस रासिकी पाय कृपा रस जानि । अगम कियौ निपटै सुगम तृतीय स्कंध वषानि । इति श्री भागवते महापुराणे तृतीय स्कंधे भाषा रस जानि कृते कपिले ये त्रयस्त्रिंशोध्याय । श्रीरस्तु मासे फाल्गुणे कृष्णपक्षे चतुर्थ्यांज्ञ वासरे श्री चौवे चिंतामणि मिठार्थं लिखतं देवी दास प्रोहित साथन शुभमस्तु ।

विषय - भागवत तृतीय स्कंध का पद्यानुवाद ।

संख्या २९४ एच. भागवत (चतुर्थ स्कन्ध), रचयिता—रसजान, पत्र—४७, आकार—१२१/२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३५०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६३ = १८०६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० कैलाशपति शर्मा, ग्राम—बिजौली, डाकघर—बाह, जिला—आगरा ।

आदि —श्री गणेशाय नमः । ओं नमो भागवते वासुदेवाय । ओं नमोनारायणं ओं हरे नमः । अथ चतुर्थ स्कंध लिष्यते । दोहा । श्री रसिक भूप हरि रुप पुनि श्री चैतन्य सरुप हृदय कूप अनरुप रस उभुल्यौ बहे अनूप । मैत्रेय उवाच । मनु कंन्यनि कौ वंस है चतुर्थ पहिलें ध्याय जज्ञादिक अवतार जहं, प्रगटे सुपहि बढ़ाय । मनु की तिय शतरुपा नामैं, प्रगटीं तिनि सुकि न्याता मैं । देव हुती इक पुनि आकूती, तीजी कौहे नाम प्रसूती । मनुकें द्वै बेटा हे यद्यपि संमत पाइ तिया कौ तद्यपि । आकूती रुचि कौं दै कही याको सुत हम लेहें

सही। तामें रुचि हरि में मनु ल्याइ, इक सुत सुता लए उप जाइ। जज्ञ नाम सुत विष्णु प्रशंस सुता दक्षर्ण रमा सुअंस

अन्त—शुक्र उवाच। जहां उतान पाद कौ वंस अब सुन प्रिय वृत वंस प्रसंस। जो नारद ते आत्म ज्ञान लैं बहुरो पृथ्वी कौं सुभोग कै। राज वांटि बेंटनि को दयो अपु हरि कौ पद पावत भयौ। यह हरि कथा कही मैत्रे मुनि बख्यो विदुर कें प्रेम ताहि सुनि। हरि पद हिय धरि द्दग भरि आये पुनि मुनि के पायनि लपटाये। कही किहे जोगेस कृपाल, तुमनि मोहि दिपयौ ततकाल। या जग दुस्तर कौ जो पार, जहां अकिंचन द्रव्य मुरारि। जह कहि अज्ञा लै नवाय सिर गए हस्तिना पुरहि विदुर फिरि। अपने बंधुन के देषन हित अति आनंदित होय गयौ चित। जह हरि भक्तिनि कौ चरित्र जो सुने आपु धनमति पावै सो। दोहा—श्री प्रियादास रस रासिकी पाय क्रपा रस जानि। अगम कियौ निपटै सुगम चतुर्थ स्कंध बषानि। इति श्री भागवते महापुराणे वैयासिक्यां चतुर्थ स्कंधे भाषा रसजानि क्रते एकत्रिंसोध्यायः। ३१। चतुर्थे स्कंध भाषा संपूर्ण संवत् १८६२ मिती फाल्गुण सुदी पंचमी सनौ प्रतिलिष्यते श्लोक सत्रह चालीस १७४०।

विषय—भागवत चतुर्थ स्कंध का पद्यानुवाद।

संख्या २९४ आई. भागवत (पंचम स्कन्ध), रचयिता—रसजन, पत्र—३२, आकार—१३½ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५०६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१२ = १८५५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० कैलाशपति शर्मा, ग्राम—बिजौली, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। श्री राधा जयति। दोहा। रसिक भूप रघुवंस मनि, पुनि चैतन्य सरुप। हृदै कूप अनुरूप रस, उझि लो वहै अनूप। ज्ञान पीय व्रत को चरित, पंचम पहिले ध्याय। राज भोग करि मुक्ति पुनि भयौ ज्ञान कौ पाप। राजोवाच। अहो महामुनि प्रिय वृत नामा, महाभागवत अत्मारामा। वाधि कर्म मैं हरिहि भुलावै ता ग्रह मैं सो रथौ मन लावै। निश्चै प्रियवृत से असंग जे ग्रह में रति करि वैन उचित जे सुधी भये हरि पद ज्ञायारत चहै नही कुटंवहि तेवर। त्रिय सुत धरनि माहि अटक्यो जो हरि में अति मति लाई पुरयो सो। मेरे यह संदह महा मुनि ताकौ आपु दूरि कीजै पुनि।

अन्त नारायन भगवान वषान्यो। यह तिहि माया गुणनि सुवान्यो। ताहि को यह थूल सरीर रति सो सुने सनी वैधीर। शुध रति सों होइ अमल मति जानि हरि सरुप दुर्गम अति स्थूल रुप सुन जीत मनही पुनि, बुधि सो सूछम महि धरै सुनि। घर गिरि नभ नद सम दय ताल नरक जोति गन दिसीर सातज्ञ सर्व शुध हरि थूल सरुप सो हम तमे सुनायो भूप। श्री प्रियादास रस रासिकी पाय क्रपा रस जानि, अगम कियौ निपटै सुगम पंचम स्कंध पुनि। इति भागवते महा पुराने पंचमो स्कंध भास्साजन कृते सुयौ परीक्षत संवादे नर्क वर्ननो नाम षडवीसमोध्याय। २६। संवत् १९१२ मिती कार्तिक वदी १० रविवासरे। लषत। लाला हरदेवदास रहत मो० मलापुर पठनार्थ मिश्र बलदेव प्रसाद।

विषय—भागवत पंचम स्कंध का पद्यानुवाद।

संख्या २९४ जे. भागवत (षष्टम स्कन्ध), रचयिता—रसजन, पत्र—२७, आकार—१२½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—११३४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० कैलाशपति शर्मा, ग्राम—विजौली, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः । दोहा । रसिक भूप हरि रुप श्री चैतन्य सरुप । हृदय कूप अनुरुप रस उलभ्यौ वहै अनूप । हिरन कासिप के जन्म कौ, कारण पहिले ध्याय विष्णु भक्त प्रहलाद पै जो अति गयौ रिसाय । राजोवाच । अहो महामुनि श्री भगवान सबके प्यारे सुहृद समान । ताने अहो विपम जन जैसें, हते इंद्र हित दानव कैसें । सुप रुप नहिं लाभ सुरनि तें, निर्गुन कों नहि भय असुरन तें हरि गुन में यह संशै महा दुरि करौ मुनि कहियै कहा । शुक उवाच । अहो तुम पूछ्यो हरि चरित्र वर, जहां भक्ति वर्धक पवित्र तर, श्री प्रहलाद कथा गावत मुनि व्यास महिनै, सो तोहि कहो पुनि । निर्गुन अज अव्यक्त मुरारी जदपि प्रकृति तें परें सुभारी तिऊ निज माया गुन आश्रे करी, हंता हन्यहि हेत होत हरि ।

अन्त—धन जस धर सुत रुप सुहाग । पावै तिय जु करै बड़ भाग । कंन्या गुननि भरयौ पावै पति विधवा पावे अति उत्तम गति । मृत वत्सा के मरें नहि सुत होय कुरूपा निपट रुप जुत । सहित तिय दुर्भगा होय जो या वृत किए होय सभगा सो । होय निरोग महा रोगी जन वहुरों पावे दृढ़ इन्द्री तन । पुन्य कर्म में याहि पढ़े जौ पितर देव अति तुष्ट होंय तौ । देव पितर हरि अग्नि सु आक्षें देय अर्थ सबहों में पाक्षें । दिति वृत मरुत निजन्म अनूप, महा पुन्य हम बरन्यौ भूप । श्री प्रियादास रसरास की पाय कृपा रस जानि, अगम कियौ निपटै सुगम पष्ट स्कंध वषानि । इति श्री भागवते महा पुराणे परमहंस स सहियां वैयासिक्यां पष्टम स्कंधे भाषा रस जानि कृते एकोनविंसोध्याय । १९ । श्री पष्टम स्कंध भाषा संपूर्ण संवत् १८६४ मिती असाढ़ सुदी १५ लिपितं जोरावर मैनपुरी मध्ये ।

विषय—भागवत षष्टम स्कंध का पद्यानुवाद ।

संख्या २९४ के. भागवत (सप्तम स्कन्ध), रचयिता—रसजन, पत्र—२७, आकार—१२½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—११३४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६४ = १८०७ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० कैलाशपति शर्मा, ग्राम—विजौली, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः । दोहा । रसिक भूप हरि रुप पुनि श्री चैतन्य सरूप, हृदय कूप अनुरूप रस उलझ्यौ वहै अनूप । छुट्यौ पापी अजामिल हरि के दूतन आइ; धर्म कह्यौ जम अनुचरनि षष्टम पहिले ध्याइ । राजोवाच । तुम नृवृति मग वरन्यों मुनिवर क्रम करि विधिपुर जाइ छुटे नर । बहुरि त्रिगुण बरन्यो प्रवृत्ति मग, जाकरि प्रकृति छुटै न जाइ जग । पापिन के फल नरक कहे मुनि, कह्यो स्वयंभू मन्वन्तरि पुनि । प्रिय वृत पुनि उत्तान पाद के वंस चरित वरने सवाद के । दीप षंड धर समुद्र वनादि जे तुम आक्षें वरनें आदि पुनि नक्षत्र पातालन कीजो रचना तुम नीके वरनी सो । घोर नरक अब अहो तह ज्यों नरन जाइ सो कहौ । श्री शुकउवाच । मन तन वानी कृत पापिनि कौ,

प्राथश्चित यहां न करै जौ, तौ मरि घोरि नरक में जाय जे हम तुमको दए सुनाइ। तातें मीचु पहल दृढ़ तन करि वेगि पाप कौ जतन करै नर।

अंत—तुमरे मामा के सुत प्यारे सुहृद पूज्य गुरु किंकर भारे। ताकौ तत्व यथारथ नाहीं, आवत हंसि सिवादि बुधि माहीं। पूजत हम रति मौन सांत करि होहु प्रसन्न सोइ जदुपति हरि। श्री शुकउवाच। भयौ प्रेम विह्वल नृप जह सुनि कृष्ण सहित पूजे नारद मुनि। कृष्ण धर्म पुत्र सौं आक्षें, सीख मागि मुनि गमनो पाक्षें। पर ब्रह्म श्रीकृष्ण सुने जब भए धर्म सुत अति विस्मै जब। वंस दक्ष बेटनु के कहे, जिनमे जड़ जंगम सवल हे। दोहा। प्रियादास रस रासिकी पाइ कृपा रस जानि, अगम कियौ निपटे सुगम सप्तम स्कंध वषानि। इति श्री भागवते महापुराणे सप्तम स्कंधे पर्म हंस संहितायां वैयासिकं। भाषा रस जानि कृते पंच दशोध्यायः १। सप्तम स्कंध भाषा संपूर्ण समाप्तं। संवत् १८६४ ज्येष्ठ मासे शुक्ल पक्षे तिथौ त्रियौ दस्यां गुरुवासरे लिषी जोरावर ब्राह्मण सनाढ्य मैनपुरी मध्ये।

विषय—भागवत सप्तम स्कंध का पद्यानुवाद।

संख्या २६४ एल. भागवत (अष्टम स्कन्ध), रचयिता—रसजान, पत्र—३२, आकार—१२½ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३४४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८६४ = १८०७ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० कैलाशपति शर्मा, ग्राम—विजौली, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। श्री सरस्वत्यै नमः। दोहा। रसिक भूप हरि रुप पुनि श्री चैतन्य सरुप। हृदै कूप अनुरूप रस, झल्यौ बहै अनूप। अष्टम पहिलै ध्याइमै कहै चीर मनु वाम, स्वायंभू स्वारोचिषरु उत्तमत्ता मस नाम। श्री राजो वाच। स्वायंभू कौ वंस जु आहि करि विस्तार कह्यौ तुम ताहि। जहां मरीचादिक जन नें पुनि, औरो मुनि हमसों कहीयें मुनि, जह जह जन्म कर्म्म हरि के जे, वरनत कवि हमसों कहियै ते। दियो करैं करिहै जो अहौ, हरि मन्वंतर मोसों कहौ। श्री शुक उवाच। स्वायंभू आदिक क्षह मनु जे, होयि चुके या कल्प माहि ते। पहलो मनु हम कह्यौ महामति, जहां सब देवादिक की उतपत्ति। पुनि आकूतिरु देव हूति जे स्वायंभू मनु की पुत्री ते। तिनके सुत भए पंकज नैंन धर्म ज्ञान उपदेश सुदैन कपिलदेव जी कियौ कह्यो सो, सुनिये अब श्री जज्ञ करयौ जो। भोग स्वयंभू मनु तजि दये तप हित तिय जुत वन कों गए।

अन्त—आत्मा परमात्मा निनैं जो, नाव चढ़यो सब संग सन्यौ सो। तापाक्षें यह ग्रीव मारि करि उठे विधिहि दार वेद ल्याय हरि। पुनि सो सत्य व्रत जो भूप ज्ञाण वहुरि विज्ञाय सरुर। इंकल्प में हरि प्रसाद करि वैवस्वत मनु भयौ भूप वर। सत वृत तिमि अवतार चरित्र, सुनत होय नर निपट पवित्र। जो यह अवतारहि नित गावै, पूरण होय उत्तम गति पावै। सूतें विधि मुषवेद गिरे जे असुरमारि जिन ताहि दए ते। कह्यो तत्व सत्य व्रत भूपहि, नव तहों ता माया तिमि रुपहि। दोहा—श्री प्रियादास रसरास की पाप कृपा रस जानि। अगम कियो निपटे सुगम अष्टम स्कंध वषानि। इति श्री भागवते महा-

पुराणेऽष्टम स्कंधे भाषा रस जानि कृतेण चतुर्विसोध्याय २४ अष्टम स्कंधे भाषा संपूर्ण संवत् १८६४ ज्येष्ठ वदी १० चंद्रवार लिपितं जोरावर ब्राह्मण सनाढ्य मैनपुरी मध्ये ।

विषय—भागवत अष्टमस्कंध का पद्यानुवाद ।

संख्या २९४ एम. भागवत अष्टम स्कन्ध भाषा, रचयिता—रसजान, पत्र—४७, आकार—१२ X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१११६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबू रामबहादुर जी अग्रवाल, डाकघर—बाह, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ दोहा ॥ रसिक भूप हरि रुप मुनि, श्री चैतन्य स्वरूप । हृदय कूप अनुरुप रस, उछल्यौ वहै अनूप ॥ १ ॥ अष्टम पहिलेध्याय में, कहे चरण मनु वाम । स्वायंभू स्वारो चिसरु, उत्तम तामस नाम ॥ २ ॥ राजो वाच ॥ स्वायंभू कौ वंस जु आहि, करि विस्तार कह्यौ तुम ताहिं । जहां मरीचादिक जन्मे पुनि, औरौ मन हमसौं कहियै मुनि ॥ जहाँ जहँ जन्म कर्म हरि केजे, वरनत कवि हमसौं कहियेते । क्यो को करिहै जे अहौ, हरि मन्वन्तर मैं सो कहौ ॥ श्री शुकोवाच ॥ स्वयंभू अदिक छह मनु जे, होइ चुके या कल्प माहिंते ॥ पहल्यौ मनु हम कह्यो महा मति, जहँ सब देवा दिक की उतपति ॥ पुनि आकूती देव हूहिंगे स्वायंभू मनुकी पुत्री ते ॥ तिन के सुत भे पंकज नैन, धर्म ज्ञान उपदेश सुदैन ॥

अन्त—श्री शुकोवाच—यह सुकि आदि पुरुष तिमि रुप, कह्यौ समुद्र मैं तत्व अनूप ॥ सांख्य जोग जुत मच्छ पुरान, सविता नृपहि कह्यौ भगवान ॥ ३५ ॥ आत्मा परमात्मा निरनै जो, नाव चढ़्यो सब संग सुनै सो । ता पीछे हय ग्रीव मदि करि, उऋे विधि हिये वेद ल्याइ हरि ॥ ३६ ॥ पुनि सो सत्य वृत जो भूप, ज्ञान वहुरि विज्ञान स्वरूप । इह कल्प मैं हरि प्रसाद करि, वैवस्वत मनु भयौ भूप वर ॥ ३७ ॥ सति वृत तिमि अवतार चरित्र, सुनत होहिं नर निपट पवित्र ॥ जो इहिं अवतारहिं नित गावै पूरन होइ उत्तम गति पावै ॥ ३८ सूते विधि मुष वेद गिरे जे, असुर मारि जिन ताहि दिये ते । कह्यौ तत्व सत्य वृत भूपहिं, नवति हौं तामाया तीमि रुपहिं ॥ ३९ ॥—दोहा—श्री प्रियादास रस रास की, पाय कृपा रस जानि । अगम कियौ निपटै सुगम, अष्टम स्कन्ध वखानि ॥ इति श्री भागवते महा पुराणे अष्टम स्कन्धे भाषा सहिते चतुर विंशोध्यायः ॥

विषय—भागवत अष्टम स्कन्ध का पद्यानुवाद ।

संख्या २९५ ए. जैमुनी पुराण, रचयिता—रतिभान (इटौरा), पत्र—७३, आकार—१७ X ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—४९६४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६८८ = १६३१ ई०, लिपिकाल—सं० १८४४ = १७४७ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० लक्ष्मीचन्द जी गौड़, ग्राम—चन्दवार, डाकघर—फिरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—ओं नमः श्रीमते रामानुजाय नमः । श्री गुरूभ्यो नमः । परमात्मने नमः ओं निर्गुणादि निरंजन सोई । सुमिरत जाहि सकल सिद्धि होई । पुनि पुरुषोत्तम पुरुष

पुराना । सुमिरौ आदि मध्य अवसाना । सुमिरौ श्री गुरु चरण सुचित्त । ध्याऊ विघ्न विनासन नित्त । दाता सिद्धि सकल वै चरना । तीर्थं सकल सदन सुभ करना । सिवविरंचि मुनि मानत जिन्हैं । प्रनत पाल जानत तिन्है । भव समुद्र नौका वै पाई मेरे हृदे वसेतें आई । गुरुकी कृपा प्रगट भौ ग्याना । जैमुनि कथा करौ बषाना । संचित सकल पाप जन्मादि । कीन्हे काटि धौसते वादि । ज्ञान कुलभौ भागु विचारे । कै कक्षु साधु कृपा के जारे । उपज्यौ ज्ञानु सुनी मैं कथा । भाषा करि देषी प्रति जथा । विदुष विचारि दीजिअहु षोरि । दोउ कथा देष यह जोरि । देसु नौरठौ उत्तम ठाउ । बसायो तहां इठौरा गाऊँ । कालप क्षेत्र कालपी पासा । सिद्धि साध पडित सुष वासा । कलि गंगा वैतवै इत वहै । न्हाए जहां पापु नहिं रहै । मध्य सुदेस ईठौरा गांऊ । तहां सत गुरू रोपन तिहि नाऊ । प्रगट प्रनाम पंथ है जाकौ । निर्गुन मंत्र जपै जगुता कौ । कीरति विदित कहै सव कोई । हमरे कहे बड़े नहिं होई । मैं आपु बड़ाई अज बषानौ । जाते न उह मारौ जानौ । तासु पुत्र कुल मंडन दासा । भगति भागवत प्रेम हुलासा । जानराय जग नामु कहायो । छोटे बड़े सबनि मन भायो । ऐसो प्रगट जगत जसु जाको । श्री परशुराम पुत्र है ताको । × × × श्री परशुराम गुरू पिता हमारे । तकि भए पुत्र पुनि चारे । जेठे तीनि सवहि विधि लायक । अपनी बात कहौ परवान । सब कोउ कहै नाउ रति भान ।

अंत—अब सुनु सुनु कै देहु जो दान सुनि जन्मे जै तासु बषान । सकल कथा सुनि विप्र जिमावै । दस वर्ष स्व कर्ण को आस्व गढ़ावै । पूजै विप्र वस्त्र पहिरावै । विषभ ऐकसा द्रिष्ट मनावै । यह सब सौज द्वजहिं पहुंचावै । तब श्रोता अश्वमेध फल पावै । संतत साधुन सेवा करई । चारि पदारथ ता कहं मिलई । चौदह पर्व कहे नृप राई । आगे आश्रम पर्व सुनाई । बसत हस्तनापुर सुष वास । पारथ कुंत सहित हुलास । बर्षै नौ बीति निकुताई । सुषमौ सुनि जन्मे जौराई । इहि विधि कथा रिषि जै मुनि कही । रति भांन सौं भाषा निर्वही । दोहा—सकल कथा पूरन भई गई दुचितई चित । रतिभान सकल भ्रम छांड़िकै सुमिरौ निरंजन नित्त । सं० १६८८ अति पबित्र वैसाष । शुक्ला सोम त्रियोदसी भै पूरन कथाऽभिलाष । इति श्री महाभारते अश्वमेध के पर्वने जैमुनि जन्मेजै कथनो नाम अष्ट वीसमोध्याय । ६७ । अथ शुभ संवत सरे नाम संवत् काल युक्त संवत् १८४४ दक्षिनाइने भास्करे । लिषितं मासोत्तमें मासे पौष कृष्णपक्षे तिथौ त्रतीयां गुरु वासरे । गंगा जमुना मध्ये परगने फुफूद स्थाने सर्वं साधुनविश्राम × × । लिषितं वैष्णव श्री श्री श्री श्री स्वामी महंत हीरादास जी को सीस्य वैष्णव अजोध्यादास ।

विषय—मंगलाचरण, कवि परिचय तथा अश्वमेध यज्ञ का वर्णन ।

संख्या २९५ बी. जैमिनी पुराण, रचयिता—रतिभान (इटौर, मध्य प्रदेश), पत्र—७५, आकार—१२$\frac{3}{4}$ × ८$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं०१६८८ = १६३१ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री पं० लक्ष्मीनारायण जी आयुर्वेदाचार्य, ग्राम—सैगई, डाकघर—फीरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीमते रामानुजाय नमः । अथ जैमुनि पुराण भाषा लिष्यते ।। ओं निर्गुण आदि निरंजन सोई । सुमिरत जाहि सकल सिधि होई ॥ पुनि पुरुषोत्तम पुरुष पुराना । सुमिरों आदि मध्य अवसाना ।। सुमिरौं श्री गुरु चरन सुचित्त । ध्याऊं विध्न विनासन नित्त ॥ दादा सिद्धि सकल वै चरना । तीरथ सकल सदन सुभ करना ।। देस नौरठौ उत्तम ठाऊं । वस्यो जहां इठौरा गाऊं ॥ कालप क्षेत्र कालपी पासा । सिद्धि साध पंडित सुष बासा ॥ कलि गंगा वैतवें इत वहै । न्हाए जहां पाप नहिं रहै ॥ मध्य सुदेस इटौरा गाऊं । तहां सत्य गुरु रोपन तिहि नाऊं ॥ प्रगट प्रनाम पंथु है जाकौ । निर्गुन मंत्र जपै जग ताकौ ।। जाते नामु हमारौ जानौ । मै आपु बड़ाई काज वषानौ ।। तासु पुत्र कुल मंडन दास । भगति भागवत प्रेम हुलास ॥ जानराय जग नाम कहायौ । छोटै वड़े सवनि मन भायौ ।। ऐसे प्रगट जगत जस जारौ । श्री परशुराम पुत्र है वारो । श्री परशुराम गुरु पिता हमारे । ताकी स्तुति करत पुकारे ॥ ताके भए पुत्र पुनि चारि । × × जेठे तीनि सबहि विधि लायक । संत साधु सवहिं सुष दायक ॥ अपनी वात कहौं परवान । सब कोऊ कहै नाम रतिभान ।।

अंत—सकल कथा सुनि विप्र जिमावै । दस वर्ष स्वकर्ण कौ अस्व गढ़ावै ॥ पूजै विप्र वस्त्र पहिरावै । वृषभ एक शादिष्ट मंगावै ॥ यह सब सौजहि जहि पहुँचावै । तव श्रोता अस्वमेध फल पावै ।। संतत साधुन सेवा करई । चारि पदारथ ताकहं मिलई ।। चौदह वर्ष कहै नृपराई । आगे आश्रम पर्व सुनाई ॥ वसत हस्तना पुर सयवासा । पारस कुंतीस हित हुलास ।। बरसै नौ वीति निकुताई । सुषमैं सुनि जन्मेजय राई ॥ इह विधि कथा रिषि जैमिन कही । रतिभान सो भासा निवही ॥ दोहा ॥ सकल कथा पूरन भई । गई दुचितई चित्त । रतिभान सकल भ्रम छांडिकैं । सुमरि निरंजन नित्त ॥ संवत सोरह सौ अट्ठासि, अति पवित्र वैंसाष । सुकला साम त्रयोदसी । भई पूरन कथाऽभिलाप ॥ इति श्री महाभारथे अस्वमेध पर्वने जैमुनि जन्मेजय कथानो नाम अष्टवीसमोध्याय ॥ जैमिन पुराण सम्पूर्णम् शुभम् ॥

विषय—जैमुनि पुराण का पद्यानुवाद ।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रंथ का रचयिता परशुराम का पुत्र मध्य देशान्तर्गत इटौरा ग्राम का निवासी था । वह अपने बड़े तीन भाइयों का होना बतलाता है । स्वयं सबसे छोटा था ।

संख्या २९६. वैद्य सुधानिधि, रचयिता—रतिराम, पत्र—२०३, आकार—१० × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६६९९, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि – नागरी, प्राप्तिस्थान—महादेव सिंह वर्मा चन्द्रसेनी, ग्राम—रामपुर चन्द्रसेनी, डाकघर—होलीपुरा, जिला—आगरा ।

आदि – ······पान्मे = वैद्य सुधानिधि लिष्यतं । दोहा । ······ विघन हरन सुप कंद । रहो सदा······क्रत सो गनपति गवरीनन्द । पुनि······प्रथम धनंतरि रुप, विघन विहंडन सो सदां, मंडन ग्रंथ अनूप । नाना व्यापति विक्र जो जग जीवन अनंत, तिनको हित केहि विधि बनें, कहो मोहि सो कंत । श्रग सावक नैंमी प्रिया, जो पूछत तू मोहि;

अति विचित्र इतिहास, कसुष्ट जु सुनाउ तोहि । रोग विपति लखि श्रेष्ठ कै, चतुरानन दुष पाय । विनय करी बहु भांति, छीर सिंधु तट जाय । विधिवांनी सुन विनै जुत, पलन सक्त अनुरुप । कर कर कर करुणायतन, धन्यौ धनंतर रूप । जग जीवन हित लागि निज, कीनौ आयुर्वेद, प्रघट करी बहु औषधीः हरन सकल गरु षेद । ७ ।

अंत—अथ बीछी के विष को जतन । अजैपाल घिसि लोय सों, जिं काटै पै धर वाय । जिमि नौसादर तात की लेपहविष धाय । पालस पापटो पीसिये, अर्क क्षीर में जान । पुनि ताको लेपक करे, वीछी विष की हान । अजा क्षीर में सिरस के वीज मिहीं पिसवाय, लेप बीछी डंक में ताको जहर मिटाय । बीछी को मंत्र—ऊ आत्यस्य वेगेन विक्ष्म वाह वलेनच । सुवनं पक्षियौन व ॥ भूम्य गछ महा विष । १ । उपद्य यौग योग पदाक्षा श्री सियोतमा प्रभू पदाज्ञ भूम्य गछ महाविस । पामंत्र सौ करौदेय वार ईक बीस । २१ । अथ कनेरि के विष को जतन रजनी पयमें पीसिके सिता और मिलवाय । ...... विस कनेरि को जाय ।

विषय—मंगलाचरण, धन्वंतरि उत्पत्ति वैद्य तथा दूतादि लक्षण, नाड़ी परीक्षा, तौल प्रमान, गर्भ उत्पत्ति, पालन विधि, युक्तायुक्त विचार, रोग गणना, रोग निदान, ज्वरादि वर्णन, मंदाग्नि अजीर्ण, आलस्य आदि के लक्षण और प्रतिकार का वर्णन, कृमि रोग प्रतिकार, रक्त पित्त निदान, राजयक्ष्मा, कास हिचकी, स्वर भंग मूर्छा और उनकी चिकित्सा, उन्माद वर्णन; बात व्याधि, मूत्रकृच्छ, पथरी, प्रमेह, मेद, गंड माल, भगंदर, उपदंश, कोढ़ादि रोगों का वर्णन । पश्चात् पुरुषाधिकार, सर्व धातु शोधन तथा विष आदि का वर्णन ।

टिप्पणी—यह वैद्यक ग्रंथ सुश्रुतादि अनेक प्राचीन संस्कृत ग्रंथों के आधार पर बड़े परिश्रम से लिखा गया है । प्रायः वैद्यक में चीड़ फाड़ और फोड़ा आदि कुछ रोगों को छोड़ कर अनेक प्रसिद्ध रोगों पर प्रकाश डाला गया है । रावण के ग्रंथ में से बालकों की चिकित्सा में सहायता ली गई है । खेद है ग्रंथ का कुछ भाग लुप्त हो गया है और प्रति लिपि कर्त्ता ने उसे अशुद्ध भी बहुत लिखा है ।

संख्या २६७ ए. प्रेमरतन, रचयिता—रतनदास (काशी), कागज—देशी, पत्र—८०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—८५२, रूप—नवीन, लिपि –नागरी, रचनाकाल—सं० १८४४ = १७८७ ई०, लिपिकाल—सं० १८७२ = १८१५ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रामस्वरूप, लभौरा, डाकघर—रामपुर, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ प्रेम रतन लिष्यते ॥ सोरठा ॥ अविगत आनंद कंद परम पुरुष परमातमा । सुमिरिसु परमानन्द गावत कछु हरि यश विमल ॥ १ ॥ पुनि गुरु पद शिर नाइ उर धरि तिनके बचन वर ॥ कृपा तिनहिं की पाय प्रेमरतन भाषत रतन ॥ २ ॥ अगम उदधि मधि जाहि पंगु तरहिं बिनु जिमि तरणि ॥ तैसिहि रुचि मन माहिं अमित कान्ह जस गान की ॥ ३ ॥ पै मोमन विश्वास, पुरवत पूरण काम प्रभु । उर पुर सकल निवास निज जन को अभिलाष लषि ॥ ४ ॥ लीला अगम अपार पार न पावै शेष

शिव। जासु स्वांस श्रुति चार तिहि गुण गण को गनि सकहिं ॥ ५ ॥ अमित चरित्र विचित्र यथा शक्ति गावत सकल। निज मुख करन पवित्र भाषत हरि गुण गण विमल ॥ ६॥ भक्त हृदै सुख दैन प्रेम पूरि पावन परम। लहत श्रवण सुनि चैन भव वारिधि तारण तरण ॥ ७ ॥

अन्त—प्रेम रतन गावहिं सुनहिं जे सप्रेम नर नार। कृष्ण प्रेम सों पावहीं सकल सुखन को सार ॥ हरि सम जग कछु वस्तु नहिं प्रेम पंथ सम पंथ ॥ सत गुरु सम सज्जन नहीं गीता सम नहिं ग्रन्थ ॥ सोरठा—जो जन होहु सुजान लीजो चूक सुधारि धरि ॥ बालक अति अज्ञान हौं अजान जानत न कछु ॥ अति जड़ बढ़ि मति मंद नहिं कवि वुधि नहीं चतुर कछु ॥ मोको गमहु न छंद यह गायो गुरु कृपा ते। ठारह सै चालीस चतुर वर्ष जब वितित भय ॥ विक्रम नृप अवनीस भये भयो यह ग्रन्थ तब। माह माह के माह अति शुभ दिन सित पंचमी। गायो परम उछाह मंगल मंगल बार बर ॥ कह्यो ग्रन्थ अनुमान त्रयशत अरसठ चौपई। तिहि अर्धरु अठ जान दोहा सोरह सोरठा ॥ काशी नाम सुठाम धाम सदा शिव को सुखद ॥ तीरथ परम ललाम सुभग मुक्ति वरदान छम ॥ ता पावन पुर माँहि भयो जन्म या ग्रन्थ को। महिमा वरणि न जाइ सगुण रूप यश जस भरयो ॥ कृष्ण नाम सुख मूल कलि मल दुख भंजन भजत। पावै भव निधि कूल जाके मन यह रस रमहिं ॥ कुरू क्षेत्र शुभ थान व्रज वासी हरि को मिलन। लीला रस की खान प्रेमरतन गायो रतन। इति प्रेम रतन ग्रन्थ संपूर्ण समाप्तः लिखतं रामगिरि केपिल मध्ये संवत् १८७२ वि० ॥

विषय—श्री कृष्ण जी का द्वारिका से कुरुक्षेत्र आना और श्री राधिका का बरसाने (ब्रज) से कुरुक्षेत्र जाना तथा वहां दोनों का मिलन वर्णन।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ की रचयित्री बीबी रतन कुंवरि काशी निवासिनी थीं। निर्माण काल संवत् १८४४ वि०, लिपि काल संवत् १८७२ वि० है। रचनाकाल इस प्रकार वर्णन किया है:—ठारह सै चालीस चतुर वर्ष जब वितित भय। विक्रम नृप अवनीस भये भयो यह ग्रन्थ तब ॥ काशी नाम सुठाम धाम सदा शिव को सुखद ॥ तीरथ परम ललाम सुभग मुक्ति वरदाम छम। तापावन पुरमाहिं भयो जन्म या ग्रन्थ को ॥ महिमा वरणि न जाइ सगुण रूप यश रस भरयो ॥ कुरुक्षेत्र शुभ थान व्रज वासी हरि को मिलन। लीला रस की खान प्रेम रतन गायो रतन ॥

संख्या २९७ बी. प्रेमरतन, रचयिता—रतनदास (काशी), कागज—देशी, पत्र—८०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—७९२, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८४४ = १७४८ ई०, लिपिकाल—सं० १९०७ = १८५० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवदान गंगापुत्र, कटक, डाकघर—भरावन, जिला—हरदोई।

आदि-अंत—२९७ ए के समान। पुष्पिका इस प्रकार है :—

इति श्री प्रेम रतन बीबी रतन कुँवरि कृत संपूर्ण समाप्तः लिखतं चेतनदास स्वपठनार्थं काशी वासी संवत् १९०७ वि० ॥

संख्या २९८. विग्रह वर्नन, रचयिता—रतन सिंह, कागज—बाँसी, पत्र—२०, आकार—६ X ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६०, रूप—अति प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री खचेराराम ब्रह्मभट्ट, ग्राम—बसई, डाकघर—तान्तपुर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशायन्मः। श्रीसरस्वतीन्मः। अथ विग्रह वर्नन॥ श्री नारायण मिश्र ने सहसंस्कृत करी कीन। रतन सिंघ भासा करी जाकी कछू प्रवीन। श्री गनेस अरु सरस्वती, फल दाइक तुम होइ। देवन विग्रह की दवा, विग्रह कबहू न होइ। कहि सिंघ सिवाराम मन सो करि कै नेह। विग्रह अरु सम सिंध की, भाषा तुम करि देहु।

अंत—भरौ कम्बल ओढ़ि सवारो, तीर कमान लिये रखवारो। एकान्त में दबि क्यो जाइ। गदहा जानि गदही ठहराइ। गधही जान रोकि सो धायो। गधहा जानि समारि गिरायो। जाते कारज विचार सो कीजे। बिना विचारे सबै डरीजे। बगला कहै सुनौ तुम राजा। बिना विचारे विगरे काजा। सब पंछी मोसों यों कहे, देस हमारे मे तुम रहे। ४४॥ याही देस बीच तू चरे, दुष्ट हमारी निन्दा करे। यहै बात हम कैसे सहै, दौरे मो को मारन चहै। चोचनि चोट करत अरु मारत। दुर्बल तेरो भूप विचारत। भौरो अरु सुधो उर माहीं। ताको राज चाहियत नाहीं। भौरो; भूप न चहिये कोइ। वस्तु हाथ की रहे न सोइ। धरती को कैसी विधि राखे। ऐसी नीति वेद विधि भाषे।

विषय—राजनीति।

टिप्पणी—रचयिता ने अपना पता निम्नांकित छप्पय में दिया है "प्रथम नराइन मिश्र तिन ग्रन्थ सकीनो। संस्कृत तें श्लोक जोरि जित तित थे लीनो। विश्नु शर्मा जो विप्र जानि जाकौ पढ़ि आयो। पटना नृप कौ कुंवरि बहुरिताको सुनायो। लाभ मित्र को भेद सब विग्रहे संधि सदार भनि रतन सिंघ का सा करी ताके अंग सुचारि गनि"।

संख्या २९९. कवित्त संग्रह, रचयिता—रूपराम सनाढ्य, (कचराघाट, आगरा), पत्र—१७, आकार—६ X ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१७, परिमाण (अनुष्टुप्)—४३४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० छोटेलाल शर्मा, डाकघर—कचराघाट, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ कवित्त॥ सामरौ गात सुहात भट्ट जल जात हूतें अति सै अनुकूले। पीत झँगूली महा विलसै रति की मति की गति हू छकि भूलै॥ मोद विनोद भरी दतियाँ लखि कै अतियाँ छतियाँ सुख फूलै। रूप रंगीले छबीले भने दशरथ के लाड़िले पालने भूलैं॥ १॥ लोंने लोने लोचन ललित ललाई लसै लालन की पीक लीक लेखि सुख सरसै। गोल मोल लोलन अमोलन कपोलन पै अलबेली अलक अवलि वैसी परसै॥ अति कमनीय कंठ किंकनी वलित कटि कसैं अट पट पीत पटनी कौ दरसै। रूप राम सुकवि विलोकौ राम चन्द्र जू के मुख अरि विंद पै अनन्द वृन्द वरसै॥ २॥ राजत राम अनूप सरूप सो भूप मनोभव वैरि कौ भावक।

पीत दुकूल कसैं विहँसैं लखि लोचन लाजत हैं मृग शावक ॥ गोल अमोल कपोलन पै हलकैं अलकैं छलकैं छवि छावक। मानो निशंक मयंक के अंक कौं रोषि कें राहु चलायो है चाबुक ॥ ३ ॥ चकित सी चित वीत चहूँ दिसि चित चोरि आई पूजि गौरि ओढ़ि ओढ़नी धनक की। दमकति दामनी है कीधौं चंद चाँदनी है करिवर गामिनी है कली है कनक की ॥ भये हैं अधीर धीर काहू न धरी है धीर कहौं कैसे वीर वाकी सुष भावना की। रूप राम काम की है कामिनी ललाम छाम राम जू की वाम कीधौं नन्दिनी जानकी ॥ ४ ॥

अन्त—इन्द्र सौं न भोगी न वियोगी राम चन्द्र जू सौं योगी चन्द्रभाल सौ न रोगी तिमि चन्द्र सौ। करण सौ न दानी काभिमानी और रावन सौ वावन सौ न कवानी ज्ञानी हरिचन्द्र सौ ॥ पुत्र सौ न फूल गंगा जल सौं न जल और औध सौन थल रुप राम मधु कंद सौ। भौंन सों न फंद मंद जौंन सौं न कौन कहौं पौन सो स्वच्छंद ना अनन्द साधु वृन्द सौ ॥ ९३ पंचवान वान में न देवन विमान में न मासै भासमान में न प्रान नप्रयान में। गंग के प्रवाह में न सिन्ध के अगाह में न पच्छिन के नाह में न पौन अप्रमान में ॥ ऐरा पति में न अस्वपति में न मेघन में तारापति में न तैसो कहौ कहा जहान में। रुप राम सुकवि विलोको ऐसो काहू में न जैसो वे प्रमान वेग देख्यो हनूमान में ॥ ९३ दारिद सो तापन प्रताप है अनंग ऐसो गंगा सौन आप त्यौंन पाप है अनीति सौ। विंध्य सौ विनोद अनुमोद ब्रह्मवोध सौ न वान सौ सवोध न अवोध इन्द्र जीत सौ ॥ रुप राम भनत नीरदै हरिचन्द सौ अनंदन अनंद रस रीति सौ। वीर दस कंध सौं न मूरख कवन्ध सौ न कंस सौ मदंध त्यौ न वंध और प्रीति सौ ॥ ९४

विषय—फुटकर कवित्तों का संग्रह

संख्या ३००. रत्नकरंड श्रावकाचार की देस भाषामय वचनिका, रचयिता—सदासुख कासिलीवाल (जयपुर), पत्र—८३६, आकार—१३ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५०४८, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२० = १८६३ ई०, लिपिकाल—सं० १९५८ = १९०१ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला ऋषभदास जैन, ग्राम—मोहना, डाकघर—इटौंजा, जिला—लखनऊ।

आदि—ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥ नमः स्याद्वादिवे सर्वज्ञाय ॥ अथ श्री रत्न करंड श्रावकाचार की देष भाषा में वचनिका लिखिए है ॥ यहाँ पर इस ग्रन्थ की आदि में स्याद्वाद विद्या के परमेश्वर परमनि ग्रन्थ वीत रागी श्री समंत भद्र स्वामी जगत के भव्यनि के परमोपकार के अर्थि रत्न त्रय का रक्षन को उपाय रुप श्री रत्न करंड नामा श्रावकाचार कौ प्रगट करने का इच्छक विघ्न रहित शास्त्र की समाप्ति रुप फलकूं इच्छा करता इष्ट विशिष्ट देवता कूं नमस्कार करता सूत्र कहे हैं ॥ श्लोक ॥ ममः श्री वर्द्धमानाय निर्द्धत कलिलात्मेन ॥ सा लोकानां त्रिलोकानाम यद्विद्या दर्पणायते ॥ १५ ॥ अर्थः ॥ श्री वर्द्धमान तीर्थंकर कैं अर्थि हमारा नमस्कार होहु। श्री कहिये अंतरंग स्वाधीन जी अनंत ज्ञान अनन्त दर्शन अनंत वीर्य अनंत सुख रूप अविनासीक लक्ष्मी अर वहिरंग इन्द्रादिक देवनि करि वंदनीक जो समवशरनादि लक्ष्मी तिस करिकैं वृद्धि कौं प्राप्ति होई। सो श्री वर्द्धमान कहिये। अथवा अव

समंतात् कहिये समस्त प्रकार करि ऋद्धि कहिये परम अतिसय कौं प्राप्ति भया है। केवल ज्ञानादिक मान कहिये प्रमान जिसका सो वर्द्धमान कहिये। इहाँ अवाघोर लोयः इस सूत्र करि अकार कौ लोप भयो है॥ कैसा कहैं श्री वर्द्धमान निर्धूत कलिल हैं॥ आत्मा जाका निर्धंत कहिये नष्ट किया है आत्मा-तै कलिल कहिये ज्ञाना वरनादिक पापमल जानैं ऐसा है॥ बहुरि जाकी केवल ज्ञान लक्षण विद्या अलोक सहित समस्त तीनि लोकनि कों दर्पण वत् आचारण करै हैं॥

अंत—हे जिन वानी भगवती। मुक्ति भुक्ति दातार। तेरे सेवन तें रहैं। सुख मय नित अविकार॥ १५॥ दुख दरिद्र जन्मौं नहीं। चाहण रही लगार। उज्जल यस मय विस्तर्यौ। यों तेरौ उपगार॥ १६॥ अड़सठि वरस जु आइ कै। बीते तुझ आधार। शेष अयुत वसरन तै। जाहु यही समसार॥ १७॥ जितनैं भवति तनै रहो। जैन धर्म अम-लान। जिनवर धर्म बिना जुमम। अन्य नहीं कल्यान॥ १८॥ जिन वानी सूं वीनती। मरण बेदना एक। आराधन के सरन तैं। होहु मुझै पर लोक॥ १९॥ बाल मरन अज्ञान तैं। करै जु अपरंपार। अब आराधन सरन तैं। मरन होहु अविकार॥ २०॥ हरि अनीति कुमरन हरो। करो जु ज्ञान अखंड। मोकूं नित भूषित करौ। शास्त्र जु रत्न करंड॥ २१॥

× × × ×

इति श्री स्वामी समंत भद्र विरंचित् रत्न करंड श्रावका चार की देस भाषा में वचनिका सम्पूर्णम्॥ इस प्रकार मूल ग्रन्थ के प्रसादतैं सदा सुख कासिली वाह डेडा का अपने हस्ततैं लिपि ग्रन्थ समाप्त कीया संवत १९५८ वैसाख वदी ३ रविवार ता दिन पुस्तक सम्पूर्ण॥......

विषय—(१) पृ० १ से १४८ तक—मंगला चरण। धर्म का स्वरुप। सम्यादर्शन का लक्षण। सत्यार्थ आप्त का लक्षण। सत्यार्थ आगम का लक्षण तपस्वी का स्वरूप सम्यक्त के अंगों के लक्षण। इन अंगों के पालन करने वाले प्रख्यात व्यक्तियों का विवरण। असमर्थ तादि स्वभावों का वर्णन। लोक तथा देव मूढ़ तादि का वर्णन। सम्यक्त के नष्ट कारी अष्ट मद। गर्वादि वर्णन। सम्पत्ति का लक्षण। सम्यग् दृष्टि के गुणों का विवरण। धर्म अधर्म का फल। रत्न त्रय में सम्यग्दृष्टि की महत्ता। सम्यग्दर्शन का प्रभाव (प्रथम अधिकार) (२) पृ० १४९ से १५२ तक—सम्यक् ज्ञान का स्वरुप। (द्० अ०) (३) पृ० १५३ से २५६ तक—सम्यक् चरित्र। पंच प्रकार के अणु व्रत। व्रत अती चार। अणु व्रत धारियों को फल और महिमादि। उनके अष्ट मूल गुण। तीन प्रकार के गुण व्रत और उनके स्वरु-पादि दंड तथा भोगोप भोग वर्णन। तृ० अ० (४) पृ० २५७ से ३६६ तक—चार शिक्षा व्रतों के स्वरूप का निरूपण देसाव कासिक वृत क्षेत्र की मर्यादा। सामायिक स्वरूप तथा उसके अति चार आदि का वर्णन। नवधा भक्ति का विवरण दान विधान तथा दोनों का फल। जिनेन्द्र की पूजा का उपदेश उपास्य देवों की गणना तथा पूजा का विधान। जिन पूजन का फल। वैया व्रत के पंच अती चार। (चतुर्थ अधिकार)॥ (५) पृ० ३६७ से ८३६ तक—परमागम की आज्ञा। प्रमाण भावना महा अधिकार। भावनादि का वर्णन।

पन्द्रह प्रकार की भावनाओं का वर्णन। धर्म का स्वरूप। दस लक्षण रूप षट प्रकार के अभ्यंतर आदि का वर्णन। स्वाध्याय आदि का कथन। आत्मा के तिष्ठने का विवेचन। धर्म ध्यान का वर्णन। धर्म ध्यान विषै दस भावनाओं का वर्णन। अन्यत्व भावना का स्वरूप चिंतवन। निर्जरा भावना। अष्टादश दोषों का विवरण। शुक्ल ध्यान के चार भेदों का वर्णन। समाधि मरन की महिमा का वर्णन। आत्म निरूपण तथा ज्ञान का प्रभाव वर्णन तथा निश्रेयस्वरूप वर्णन। श्रावक के पदों का वर्णन। दश प्रकार के परि ग्रहों का वर्णन। ग्रन्थ-कार परिचयः—जयपुर नगर मनोग्य अति। धनिमति धर्म विचार। वर्णाश्रम आचार को। अति उज्जल आधार॥ यामें राज करैं निपुण। राम सिंह जनपाल। क्रोध लोभ मद टारिकैं। विघ्नहरण कूं टाल॥ × × गोत कासिली वाल है। नाम सदा सुख जास। सहली तेरा पंथ में। करै जु ज्ञान अभ्यास॥ जिन सिद्धान्त प्रसाद तैं। लिषी वचनिका सार। पढ़ि सुनि श्रद्धा भक्ति तैं। करो धर्म निर्धार॥ ग्रन्थ निर्माण कालः—संवत् उगनीसै उगनीस। मगसर बुद्धि अष्ठ मिदि नईस। लिखणे का आरम्भ जु किया। सुभ उपयोग मांहिं चित दिया। संवत् उगनी सै अरु बीस। चैत्र कृष्ण चौदह निज सीस। पूरन करि स्थापन जब कीया। शुभ उद्यम का निजफल लीया॥

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रन्थ स्वामी समंत भद्र का रचा हुआ है। उसी की वचनिका सदा सुख कासिली वाल ने भाषा में की है। मूल ग्रन्थ लेखक ने सूत्रों में रचा है। टीका कारने इन सूत्रों की व्याख्या बड़ी मार्मिकता से की है। स्थल स्थल पर प्रमाण के लिये गोमट सार, त्रैलोक्य सारादि अनेक जैन ग्रन्थों से सहायता ली है। विविध गाथाओं द्वारा भावों को अत्यन्त रुचि कर दिखाने की पूर्ण चेष्टा की है। ग्रन्थ में एक प्रकार से सूक्ष्म तथा जैन धर्म का मूल तत्व, जिसकी जड़ स्याद् वाद सिद्धान्त पर निर्भर है, भली भांति दिखा दिया गया है। ग्रन्थ के मध्य भाग में कुछ विपक्षी धर्मों के सिद्धान्तों पर आक्षेप किये गये हैं। यज्ञ विधान को मूल ग्रन्थकार तथा टीकाकार दोनों ही नापसंद करते हैं। जैन धर्म ही जब इसके विरुद्ध है तो उसके आचार्यों का ऐसा लिखना समीचीन ही है।

संख्या ३०१. श्री अयोध्या महात्म्य, रचयिता—सहाईराम, पत्र—१५०, आकार—१० × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२०२५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० शिवकुमार उपाध्याय, द्वारा इंद्रजीत सिंह, वकील, ग्राम—बाह, डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

आदि—अथ अयोध्या महात्म्य लिष्यते॥ दोहरा॥ गणपति औ शारदा चरण। प्रथमहि करि परनाम। अवध महातम कहत हौं। भाषा करि सुख धाम॥ महाबीर महराज कौं। वन्दौं वारहि बार। मम कुल को पालन करत। बुधि बल देत अपार॥ सोरठा॥ वंदन करि पग शेष। कहौं कथा हरि धाम कर। अघ न रहत लवलेश। जासु महातम सुनत हीं॥ एक समैं रिषि राज। घने गये कैलास को। तहाँ अति बन्यो समाज। पारवती संकर सहित॥ दोहा॥ पारवती ताही समै। कोमल दोऊ कर जोर। मधुर बचन बोलत भईं। मनहुँ सुधा रस बोर॥ सोरठा—सवै देव के ईश। महादेव आनंद भवन। तुम्हैं नवावौं सीस। कहौं कथा श्री अवध की॥

अंत—॥ छन्द ॥ मति विपुल विविध विधान बरनन कथित शिव जग नयर्क ॥ शुभ खान यह चिल्लोक नगरी परम आनंद दायर्क ॥ ब्रह्मादि सुर सनकादि नारद मान हित वहु सेवहीं । प्रगट जहाँ रघुवंश भूषण सर्व मंगल देवहीं ॥ दोहा ॥ शत पुराण मनु वर्ष में । कहे सहाई राम । दायक चारो फल कथा । सब मंगल को धाम ॥ श्लोक ॥ मति विपुल विधानै वंर्णितं धर्म माधं कल यति परम भक्त्या क्षेत्र महात्म्यं मेतत् । य रह नर उदारह श्री सनाथः स्सम्याव्रजति हरि निवासं सर्व भोगाश्च भुक्ती ॥ १ ॥ इति श्री अयोध्या खंडे गौरी शंकर संवादे सहाईराम भापा कृते अयोध्या क्षेत्र महिमा वर्णनो नाम त्रिंशोध्यायः ॥ ३० ॥ सं० १९३६ इति समाप्तं ग्रन्थोयम् ॥ शुभम् ॥

विषय—श्री अयोध्या क्षेत्र की महिमा का वर्णन ।

संख्या ३०२. रामायण माहात्म्य, रचयिता—शक्तधर (मुरादाबाद, उन्नाव), पत्र—६०, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—९७२, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८३ ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० हरविलास सिंह, ग्राम—रानीपुर, डाकघर—जैथरा, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ रामायग महात्म्य लिख्यते ॥ श्लोक—शम्भोः पाद युगं नमामि सततं संलालितं चोमया । शक्ताद्येरभि बंदित भय हरं सौख्यं करं कामदम ॥ यं ध्यात्वा निज मानसेपि मनुजा धान्यं धनं लेभिरे । तं वंदे कवि वृन्द वंदित महं दारिद्रय दुःखच्छिदे ॥ १ ॥ प्रणम्य सच्चिदानंदं श्री रामं जगदीश्वरंम ॥ श्री रामायण महात्म्य टीकेयं तन्यते मया ॥ २ ॥ दोहा—करि प्रणाम गज बदन विभु सिद्धि सदन सुख धाम । रामायण महात्म्य कर रचौं तिलक अभिराम । कहब प्रथम अध्याय महँ राम कथा सविधान । जाहि पढ़े जन होत हैं सुती सुखी मति मान ॥ रहौं जिला उन्नाव महँ ग्राम मुरादाबाद । शुक्ल वंश जनि शक्तिधर कीन्हों यह अनुवाद ॥ सुनहिं पढ़हि जे प्रेम करि पावैं जन मन काम । उनकहँ कछु दुर्लभ नहीं कृपा करैं श्री राम ॥

अंत—रामकथा का सुनने द्वारा करोड़ों जन्मों के पापों से शीघ्र ही मुक्त हो जाता है । और अंत समय में सात पीढ़ियों सहित मोक्ष को पाता है इस रामायण महात्म्य को मैंने भली भांति तुम लोगों से कहा जिसको पूर्व काल में भक्ति के सहित पूंछते हुये सनत कुमार जी से नारद जी ने सुनाया था । इस रामायण के एक श्लोक अथवा आधे श्लोक को पढ़ते हैं उनको कभी पाप बन्धन नहीं होता है । जो प्राणी भक्ति भाव से इस रामायण को सुनते अथवा गाते हैं उनके पुन्य फल को आप सुनिये वे लोग सौ जन्मों के पापों से शीघ्र ही छूट जाते हैं और हजार कुलों के सहित परम पद को प्राप्त करते हैं । प्रति दिन राम कथा को सुनते हुये मनुष्यों को चैत्र मास और कार्तिक मास में रामायण का कथा रुपी अमृत नवमी के दिन सुनना चाहिये उसी से वह श्रोता पापों से मुक्त हो जायंगे । यह राम कथा राम की प्रसन्नता का जनक होकर राम भक्ति को वढ़ाता है और सव पापों को क्षय करता है । जो मनुष्य सावधान हो इस राम कथा को सुनता अथवा पढ़ता है वह सव पापों से मुक्त होकर वैकुंठ धाम को जाता है । चौ०—रामायण महात्म्य

अनूपा । तासु तिलक भाष्यों सुख रूपा । तिलकन मह सिर मौर सुहोई । राम कृपा खिल संसय खोई ॥ जो जन पढ़ै सदा मन लाई । तापर दया धरहि रघुराई ॥ पुत्र पौत्र धन धान्य समाजा । तासु अलभ्य न एकौ साजा ॥ सत्य सत्य जन भाषण येहू । सब तज करिय राम पद नेहू ॥ गोपद इव तरिहों संसारा । ना तरु वह जैहों मझधारा । जासु न जानत कोऊ प्रभु ताई । सोइ करिहैं द्विज शक्ति सहाई ॥ इति श्री रामायण महात्म्य संपूर्ण संवत् १९४० वि०

विषय—रामायण माहात्म्य वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता पं० शक्तिधर शुकुल उन्नाव जिला के अंतर्गत मुरादाबाद के निवासी थे । ग्रन्थ संवत् १६४० वि०, चैत्र शुक्ल नौमी को लिखा गया :— रहों जिला उन्नाव महँ ग्राम मुरादाबाद । शुक्ल वंश जनि शक्तिधर कीन्हों यह अनुवाद ॥

संख्या ३०३. महाभारत (गदापर्व), रचयिता—शंकरदास, पत्र—३६, आकार—८¾ × ६¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२२, परिमाण (अनुष्टुप्)—११८८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७६ = १८१९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० मवासीलाल, ग्राम—अछनेरा, डाकघर—अछनेरा, जिला—आगरा ।

आदि—प्रथम अध्याय लुप्त (द्वितीय अध्याय से उद्धृत पृष्ठ २) ॥ दोहा ॥ कहतु सगुन कौं पुत्र जहँ । दुर्जोधन तुव काज । पारथ भिस्म समर्थ रन । हौ जीतौं महराज ॥१॥ ॥ समानिका ॥ चन्द्र वंस में प्रसंस । धर्म को करौ विध्वंस ॥ सावधान ह्वै महिन्द्र । संग राखि फौज वृंद ॥ २ ॥ पंड वंदजे जिजितेक । अगृमो करै न टेक । त्रिम्म पंथ सौल सैसु । आजु ही फते करौसु ॥ ३ ॥ मकै रनै समाइ जाउ । अगृतै परै न पाउ ॥ सचि हौ करौ पतिंग्य । देहु मो नृपाल अग्य ॥ ४ ॥ तोटक ॥ दुर्जोधन नैन नवाइ रहै । तुव के पितु तैं अति सुष्प लहे ॥ तट तैं नहि छाड़त मोहिं वनै । मम प्रानु वसै तुममैं सऐने ॥ ५ ॥

अंत—संपति है मचीर अपार । वाजि वारुन देस को मिलै सदा फल चारि ॥ वंदि मोच अनेककु सुनितै छुटै वहु तोइ । इक चित्त सुनित्त है सुनि हित भारथ कोइ ॥ ३८ ॥ चामर ॥ स्वर्ग के कपाट तान रैहि कौ पुले रहै । येकु हू जुपार भारथै कथा सुनै कहै ॥ अष्ट सिद्धि विद्धि पुत्र भक्ति भक्ति विश्नु आइहै ॥ अर्थ धर्म काम कौ मनासु मोक्ष पाइहै ॥३९॥ ॥ दोहा ॥ राजु भयो ध्रुव धर्म कौ । उदै अस्त लौं जानि । छत्र फिरै भुव पाल पै । संकर दास वखानि ॥ ४० ॥ इति श्री महाभारते महा पुराने गदा जुद्धे कवि शंकर दास कृते दुर्जोधन जंघ भंग जुधिष्ठिर विजय वर्ननं नाम षट वीसमोध्याय ॥ २६ ॥ गदा पर्व समापति संपूर्न मिती फागुन वदि ३० रिवि वासरे संवतु १८७६ ॥ जथा प्रति तथा लिष्यते ॥ श्री राम ॥

विषय—महाभारत गदा पर्व की कथा का वर्णन ।

संख्या ३०४. करुणा विरह प्रकाश, रचयिता—सेवादास पांडेय, पत्र—९८, आकार—१० × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०७८,

रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८२४ = १७६७ ई०, लिपिकाल—सं० १८६२ = १८०५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० महाबीर प्रसाद मिश्र, स्थान—मोह० हाथीपुर, लखीमपुर, डाकघर—लखीमपुर, जिला—खीरी।

आदि—श्री राधा वल्लभो विजयते ॥ श्री महागणपतये नमः ॥ अथ करुणा विरह प्रकास लिष्यते ॥ दोहा ॥ आरत की आरति हरन। षंड परस सुत चंड। चरन पद्म उर में धरौं। वंदौ सुन्डा दंड ॥ १ ॥ अलष अकथ अव्यक्त अज। अगुन अनादि अनीह। ताकौ कछु वरनन करौं। सुफल होत निज जीह ॥ २ ॥ वरवै ॥ गौरि गिरीश ईस गण सीस नवाइ। सुमिरि सारदा सरस्वती सुर सरि पांइ। आनंद दायक लायक पद जेहि केरि। चितवत कृपा कटाक्ष कदन दुप वेरि ॥ सोरठा ३ ॥ अवगति अकथ अपार। पार न कोऊ लहि सकै। आवत हृदय अगार। परस जासु होत बानी विमल ॥ ४ ॥—दोहा—पदुमासन पद्म प्रिया पद्मा युत सुभ चारु। तासु पद्म पद वंदि कैं। करौं कथा विस्तारु ॥ ५ ॥ वरबै ॥ गौरि गिरीस ईस गण सीस नबाइ। सुमिरि सारदा सरस्वती सुर सरि पाइ ॥६॥ गणनायक वरदायक जगत प्रसिद्धि। पल धायक सुप दायक दायक सिद्धि ॥ ७ ॥

अंत—सोरठा वृन्द्रावन के जीव पसु। पक्षी नर नारि सब। झारि प्रेम की सीव। रहे कृष्ण को धारि उर ॥ १०४ ॥ वै वृन्द्रावन कुंज वोई जमुना वै लता। वोई सुप को पुंज। वै माधो वै राधिका ॥ १०५ ॥ दोहा ॥ येहि प्रकार करुणा विरह। बरणो सेवादास। राधा राधारवन मिलि। फिरि वै भोग विलास ॥ १०६ ॥ श्री हरि देव विहार को। लीला चरित प्रसिद्ध। कीन्हों सेवादास यह। माफिक अपनी बुद्धि ॥ १०७ ॥ पढ़ै याहि जो चित्त धरि। चित्त तासु को आइ। वसैं निरंतर सर्वदा। राधा कृष्ण वनाइ ॥ १०८ ॥ काव्य रीति जानौं नहीं। छन्दौ भेद न आहि। कविजन लीज्यौं सोधिकैं। अक्षर शुद्ध न ताहि ॥ १०९ ॥ वरबै ॥ राधा कृष्ण मनाओ नाओ माथ। मागौ सो वरु पावौ जोरो हाथ ॥ ११० ॥ राधे रचन चरन मन वसै वनाइ। पावौ सो वरु जेहि रुचि मोहि होइ ॥१११॥ विरद रापिये हाठिकै अपन मोर। करि उर क्रपा चितै करि लोचन कोर ॥ ११२ ॥ जन पालक हो घालक असुर अपार। विरद मनत अहि वानी संभु वदार ॥ ११३ ॥ इति श्री राधा वल्लभो चरिते करुणा विरह समाप्तं शुभ मस्तुः माघ मासे शुक्ल पक्षे तिथौ दुतिया याम भौम वासरे इदं पोस्तकं लिपितं हरी राम दुवे रमुश्चा पुर के संवत् १८६२ ॥

विषय—(१) पृ० १ से ६ तक—प्रथम उल्लास। कवि परिचय तथा ग्रन्थ निर्माण कालः—विरच्यौ विरह प्रकासपाँडे सेवा दासनै। सुनिहैं सहित हुलास, सज्जन वुध जन भक्त जन ॥ १७ ॥ सरजू तट शुभ थान, मंडल अवध पुनीति अति। कीन्हों तहाँ वखान, सौंत ग्राम सुन सरि जहाँ ॥ १८ ॥ राम जन्म महि अवधहि जान सुजान। सरजू सरि सुर पुर सरि करत बखान ॥ १९ ॥ × × संवतु अष्टा दस भये। विधि विंसति गुरुवार। कार्तिक सुदि एकादशी। लियौ ग्रन्थ अवतार ॥ २२ ॥ भूमिका (२) पृ० ६ से १४ तक—द्वि० उ० उद्धव गमन प्रस्ताव व्रज आगमन। (३) पृ० १४ से ५४ तक—गोपियों का विरह वर्णन तृ० उ० (४) पृ० ५५ से ५८ तक—ब्रजदशा वर्णन

पं० उ० (५) पृ० ५८ से ७२ तक—उद्धव द्वारावति आगमन। ब्रज का समाचार कथन कृष्ण का ब्रज प्रेम में तल्लीन हो जाना। पं० उ० (६) पृ० ७२ से ८६ तक—हरि का कुरुक्षेत्र गमन। और ब्रज वासियों से समागम रुक्मिणी राधिकादि मिलाप प० उ० (७) पृ० ८६ से ९६ तक—कृष्ण का तीर्थ से लौटना। ब्रज वनिताओं का वियोग। रुक्मिणी आदि द्वारा राधा का सत्कार और पारस्परिक विरह दशा वर्णन ग्रन्थ की पूर्त्ति तथा उसके पठन पाठन का फल वर्णन।

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता पांडेय सेवादास हैं। इसमें उन्होंने भागवत तथा सूर सागर के आधार पर गोपियों के विरह का वर्णन किया है। इसके साथ ही स्पष्ट रीति से यह भी कह दिया है कि उन्होंने प्रागन कवि की रचना से भी यथोचित लाभ उठाया है। उनका कथन है कि उक्त ग्रन्थों को पढ़ कर ही उनके मन में कृष्ण प्रेम जगा। उनके विरह वर्णनों को पढ़कर वे मुग्ध हो गये थे।

संख्या ३८५. राधारहस्य, रचयिता—शीतलप्रसाद (जुरिया, इलाका संडीला, मुतास्सिल रहीमाबाद), पत्र—७६, आकार—८३/४ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिणाम (अनुष्टुप्)—१७१७, रूप—प्राचीन, लिपि—फारसी, रचनाकाल—सं० १९०६ = १८४९ ई०, लिपिकाल— सन् १२६८ फसली = सं० १९१८ = १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबू सेवाकुमार वकील, स्थान—लखीमपुर, डाकघर—लखीमपुर, जिला—खीरी।

आदि—श्रीगणेशाय नमः ॥ भगवती स्तुति मंगल ॥ नमो भगवती योगमाया नमस्ते नमो खड्गिनी चक्रधारणि तुही है ॥ नमो कालिका जालिका जोति ज्वाला नमो जगत् जननी विहारणि तुही है ॥ नमो हंस वाहनि वृषासन नमस्ते नमो दीप दुर्गा परारिन तुही है ॥ नमो ईसुरी विष्णवी शक्ति ऐनी नमो चंद्रिका विश्वतारन तुही है ॥ नमो गौरिजा सरसुती मातु कमला सकल दैत्य दानव पछारन तुही है ॥ नमो भद्रकाले विसाले कराले नमो शंभु दलिनी अघारण तुही है ॥ नमो विन्ध्यवासिन जयन्ती नमस्ते नमोदेवि ललिता खरारिन तुही है ॥ नमो रुपवन्ती नमो कामवंती नमो मोहनी छवि निहारन तुही है ॥ नमो मंगला पिंगला सुषमना औ नमो गुन्हिका शत्रु मारन तुही है ॥ शीतल परो मातु चरनन तिहारे सरण लाज करि गहि उबारण तुही है ॥ सोरठा—सुमिरौं प्रथम गनेश। बहुरि सारदा के चरन। बन्दौं गौरि महेस। सुख दायक संकट हरन ॥

अंत—दोहा—जाके नाम प्रताप ते। जोग सिद्धि करि लेहु। सो सीतल निसि दिन भजौ। सांचे भरि को देउ ॥ नाम दोऊ सुख सार। जो कोऊ ध्यावौ नेमसौं ॥ वेदन कीन्ह विचार। जपौ रटौ निज प्रेम सौं ॥ राधे कृष्ण राधे कृष्ण, कृष्ण कृष्ण राधे राधे राधेश्याम राधे श्याम श्याम श्याम राधे राधे ॥ दोहा ॥ जो कोई होइ बंदि मैं। छूटि जाय ततकाल। मंत्र जपै लीला सुनै। तापर होत दयाल ॥ जो बाँचै चित दै सुनै। प्रेम भक्ति सो कोइ ॥ श्री राधा परतापतें सुनत समूचनसुख होइ ॥ लक्ष मंत्र की ध्यान करि। काज सिद्धि कै लेऊ। प्रिय प्यारी के भावसों। विप्रन भोजन देउ ॥ मंत्र × × इति श्री ब्रह्मांड पुराने कृष्ण खंडे उमा रुद्र सम्वादे राधा कृष्ण विवाह सम्पूर्ण शुभ मस्तु भाषा कृत शीतल प्रसाद पंडित साकिन मौजे जुरिया इलाका संडीला मुत्तसिल रहीमाबाद वखते नाकिस बन्दा

दीनदयाल वल्द भजवन्त राय कायस्थ खरे कानूनगो परगनै काकोरी सरकार लखनेऊ मसाफ् सूबै अवध अख्तर नगर वाकै अमावस वदी माह जेठ सन् १२६८ फसली मुताविक विस्त हस्तुम शहर जिलहिज सन् १२७७ हिजरी रोज शंवा व इतमाम रसीद ॥

विषय—(१) पृ० १ से ६ तक—देवी स्तुति । राधा का रूप तथा निवास स्थल और दैवो तथा गुरु आदि का वर्णन कवि परिचयः—नगर रहीमाबाद सुहावन । सोई जन्म भूमि अति पावन ॥ तामैं रहैं विप्र सुख रासी । सदा नीति औ धर्म विलासी ॥ सव दिन रंग राग मे बीते । करैं परस्पर काम प्रतीते ॥ × × तामें नृप सूबा सिंह मालिक । सदा विप्र गौअन प्रतिपालक ॥ उत्तर दिसा जुरैया गांव । तामें है शीतल को ठाँव ॥ दोहा सुर सरजी के घाट पै । विदित दिव कली धाम ॥ तहाँ के ठाकुर अल्ल हैं । करुणामय उरराम ॥ वच्छ गोत्री बंश । प्रथम त्रिपाठी वंदनीया ॥ ज्यों सागर में हंस । मुक्ता भोजन है घना ॥ गौमध्या लोक लीला ॥

(२) पृ० ७ से १९ तक—द्वितीय रहस । राधा कृष्ण जन्म कथा वर्णन ।

(३) पृ० २० से ३६ तक—तीर्थ रहस्य लीला ।

(४) पृ० ३७ से ५० तक—राधा कृष्ण विवाह वर्णन ।

(५) पृ० ५१ से ६६ तक—गंगा जन्म गोपेश्वर महादेव वर्णन ।

(६) पृ० ६७ से ७६ तक—शेप विवाह सम्बन्ध वर्णन ॥

टिप्पणी—प्रस्तुत ग्रन्थ के रचयिता पं० शीतल परसाद का जन्म स्थल रहीमाबाद नगर के निकटस्थ जुरिया (इलाका संडीला) नामक ग्राम में था । उस समय यह स्थान नृप सूबा सिंह के अधिकार में था । ग्रन्थकार ने नृप सूबा सिंह को बड़ा धर्मात्मा बतलाया है । साथ ही रहीमाबाद की तत्कालीन सुंदर रहन सहन का भी दिग्दर्शन कराया है । सुर सरि के तट वर्तिनी देव कली नाम्नी नगरी के बच्छ गोत्रीय ठाकुरों का वर्णन करते हुए उन्होंने लिखा है कि त्रिपाठी प्रथम उनसे पूजे गये इससे यह भी झलकता है कि सीतल त्रिपाठी ब्राह्मण ही रहे होंगे ।

संख्या ३०६ ए. दिललगन चिकित्सा, रचयिता—सीताराम वैद्य (हसनपुर), पत्र—९३, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२६०, रूप प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८७० = १८१३ ई०, लिपिकाल—सं० १८९० = १८३३ ई०, प्राप्तिस्थान - पं० रामदुलारे वैद्य, ग्राम—मलीहाबाद, डाकघर—मलीहाबाद, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्रीगणेशायनमः अथ दिल लगन चिकित्सा लिख्यते ॥ शंभू बुध दायक गज आनन तिनकूं सीस नवाऊं । पुनि देवी की चरन कमल की रज लै हृदे लगाऊं ॥ श्री धन्वतरि और अश्वनी सुत तिनहूं चरण धरि सीसा ॥ कहूं दिल लगन चिकित्सा कृपा करै जगदीसा ॥ चारि लाख वैद्यक देसाई जो मुनि कही बखानी ॥ कछुक ग्रन्थ देखे निज गुरु सों तिनकी भाषा ठानी ॥ सकल सृष्टि बाधा जो नासी जब वैद्यक दर्साई ॥ देहज व्यथा सुनैते जैहै भमवत इच्छा गाई ॥ प्रथम दूत के लक्षन वर्णन सुन रस रुप उजागर ॥

अति सुन्दर सुजान उज्वल हो चतुरा बुध गुण सागर ॥ होय अकेला मीठा बोलै इस गुण वैद्य बुलावै ॥ फल फूल रुपैय्या वस्त्रादिक सुभ वस्तु लियो कर आवै।

अमित ग्रन्थ वैद्यक के जगमें तिनकी भाषा कीनी ॥ चरकादिक जो वैद्य शिरोमणि तिनकी आज्ञा लीनी ॥ हट्टी सिंह सुत पुस्तक कीनी अगनित ग्रन्थन मथि कै ॥ अवगाहन में अजव अनोखो सीस फूल सो कथकै ॥ जो यह ग्रन्थ पढ़ै औ समुझै सुन दिल लगन पियारी ॥ सीताराम कियो यह निश्चै तिनकूं व्यथा कहारी ॥ याके तो इलाज अलवेली तैने सब अज माये ॥ यथा युक्त सुन पंकज लोचन मैंने तोहि सुनाये ॥ संवत ठारा सै सत्तर महिना सावन अधिक सुहायो ॥ कृष्णत्रयोदसी छैल छबीली चंन्द्रवार सु बतायो ॥ त्रिपुर सुन्दरी की कृपा संपूरन ग्रन्थ वनायो ॥ कठिन चिकित्सा सागर प्यारी भाषा कर दर्पायो ॥ पूरण वैद्य सभा के भूपन गौड़ विप्र गुण दाता ॥ पाठक हठी सिंह सुत नाम है सीताराम विष्याता ॥ शक्ति उपासक संकर सेवक पढ़ो लिखो अति नाहीं ॥ जिन यह ग्रन्थ रचो है ताको सदन हसन पुर माहीं ॥ और भरम भूलो मत कोई सुन दिल लगन पियारी ॥ है दिल लगन उर्वसी नभ की सुंदर कुदरत न्यारी ॥ आवै इकली और न कोई निसा समै वो वाला ॥ किया सिंगार वतीसों अभरन ओढ़ै सुरख दुसाला ॥ इति श्री दिल लगन चिकित्सा नाम ग्रन्थ संपूर्ण समाप्तः ॥ लिखतं शिवराम वैद्य आपाढ़ कृष्ण पक्ष त्रयो दसी संवत् १८९० वि० ।

विपय—वैद्यक ।

संख्या ३०६ बी. दिललगन चिकित्सा, रचयिता—सीताराम (हसनपुर), पत्र—९६, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८७० = १८१३ ई०, लिपिकाल—सं० १९२९ = १८७२ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला भगवती प्रसाद वैद्य, ग्राम—वकौठी, डाकघर—सिकंदरपुर, जिला—सीतापुर ।

आदि—अथ दिल लगन चिकित्सा लिख्यते ॥ दोहा ॥ शंभु बुध-दायक गज आनन तिनकूं सीस नमाऊं ॥ पुनि देवी की चरण कमल की रज लै हृदै लगाऊं ॥ श्री धन्वन्तर और अश्वनी सुत तिनहूं चरण धरि सीसा ॥ कहूं दिल लगन चिकित्सा प्यारी करै कृपा जगदीसा ॥ चार लाख वैदक दर्साई जे मुनि कहो वखानी ॥ कछुक मंत्र देखे निज गुरु सौं तिनकी भाषा ठानी ॥ सकल सृष्टि वाधा जो नासी जन वैधक दर्साई ॥ देहज व्यथा सुनै ते जेहैं भगवत इच्छा गाई ॥ प्रथम दूत के लक्षण वर्णन सुन रस रुप उजागर ॥ अति सुन्दर सुजान उज्जल हो चतुरा बुध गुण सागर ॥ होय अकेला मीठा वोलै सगुण वैध बुलावै ॥

अंत—फल फूल रुपैया वस्त्रादिक सुभ वस्तु लिये कर आवै ॥ जान लई वैदक में मैंने अधिक निठुरता तेरी ॥ ऐसी तैं कहि चतुर सिरोमणि मोको नींद घनेरी ॥ यह दिल लगन चिकित्सा अव गिन याद करो इन तेले ॥ तेरे प्रश्न किये ते प्यारी वर्णन कीने मैंने ॥ अमित ग्रन्थ वैद्यक के जग में तिनकी भाषा कीनी ॥ चरका दिक जो वैद्य सिरोमणि तिनकी

आज्ञा लीनी ॥ हट्टी सिंह सुत पुस्तक कीनो अगनित ग्रन्थन मथि के ॥ अवगाहन में अजब अनोखो सीस फूल सो कथके ॥ जो यह पढ़ै अरु समझै सुन दिल लगन पियारी ॥ सीताराम कियो यह निश्चै तिनकूं व्यथा कहारी ॥ याके तो इलाज अलवेली तैने सब अजमायो ॥ यथा युक्त सुन पंकज लोचन मैंने तोहि सुनायो ॥ संवत अठारा सै सत्तर महिना सावन अधिक सुहायो ॥ कृष्ण त्रयो दसी छैल छवीली चंद्रवार सु वतायो ॥ त्रिपुर सुन्दरी की कृपा संपूरन ग्रन्थ बनायो ॥ कठिन चिकित्सा सागर प्यारी भाषा कर दर्षायो ॥ पूरण वैद्य सभा के भूषण गौड़ विप्र गुड़ दाता ॥ पाठक हट्टी सिंह सुत नाम है सीताराम विख्याता ॥ शक्ति उपासक संकर सेवक पढ़ो लिखो अति नाहीं ॥ जिन यह ग्रन्थ रचो है ताको सदन हसनपुर माहीं ॥ और भरम भूलो मत कोई सुन दिल लगन पियारी ॥ है दिल लगन उर्वसी नभ की सुन्दर कुदरत न्यारी ॥ आवै इकली और न कोई निसा सभै वो वाला ॥ किया सिंगार बतीसों अभरन ओढ़ो सुरख दुसाला ॥ इति श्री दिल लगन चिकित्सा संपूर्ण समाप्तः संवत १९२९ भाद्र पद शुक्ल पक्ष अष्टमयाय ग्रन्थ संपूर्ण दसखत वैजनाथ पाठक ॥ श्री राम जी ॥

विषय—वैद्यक ।

संख्या ३०६ सी. दिल लगन चिकित्सा- रचयिता—सीताराम वैद्य (हसनपुर), पत्र—९६, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८७० = १८१३ ई०, लिपि-काल—सं० १८९६ = १८३९ ई०, प्राप्तिस्थान—वैद्य रामलाल शर्मा, ग्राम—निहालगंज, डाकघर—धूमरी, जिला—एटा ।

श्री गणेशाय नमः ॥ अथ वैद्यक ग्रन्थ सीताराम विरचिते दिल लगन लिख्यते ॥ शंभु वुध दायक गज आनन तिनकूं सीस नवाऊं ॥ पुनि देवी की चरण कमल की रज लै सीस चढ़ाऊं ॥ श्री धनवन्तर और अस्वनी सुत तिनहु चरण धर सीसा ॥ कहूं दिल लगन चिकित्सा प्यारी कृपा करै जगदीसा ॥ चार लाख वैदक दरसाई जे मुनि कहौं वखानी ॥ कछुक ग्रन्थ देखे निज गुरु सों तिनकी भाषा ठानी ॥ सकल सृष्टि व्याधा जो नासी जव वैदक दरसाई ॥ देहज व्यथा सुने ते जे हैं भगवत इच्छा गाई ॥ प्रथम दूत के लक्षण वर्णन सुन रस रुप उजागर ॥ अति सुंदर सुजान उज्वल हो चतुरा वुध गुण सागर ॥ होय अकेला मीठा बोलै इस गुण वैद्य वुलावै ॥ फल फूल रुपैया वस्त्रादिक शुभ वस्तु लियो कर आवै ॥ शुभ रहस्य लक्षण उज्वल हों ताके तो संग जाई ॥ जो हो हीन अंग अरु मैलो वैठ इकंतर रहिये ॥ शस्त्र वांध कर आवै जो नर आनंद कंद छवीली ॥ ताके सग कवहुं नहिं जैइये सुनले रंग रंगीली ॥

अंत—संवत् अठारै सै सत्तर महीना सावन अधिक सुहायौ ॥ कृष्ण त्रयोदशी छैल छवीली चन्द्रवार सु वतायो ॥ त्रिपुर सुन्दरी की किरपा संपूरण ग्रन्थ वनायो ॥ कठिन चिकित्सा सागर प्यारी भाषा कर दर्शायो ॥ पूरण वैद्य सभा के भूषण गौड़ विप्र गुण दाता ॥ पाठक हठी सिंह सुत नाम है सीता राम बिख्याता ॥ शक्ति उपासक संकर सेवक

पढ़ो लिखो अति नाहीं ॥ जिन यह ग्रन्थ रचो है ताको सदन हसन पुर माहीं ॥ और भरम भूलो मत कोई सुन दिल लगन पियारी ॥ है दिल लगन उर्वसी नभ की सुन्दर कुदरत न्यारी ॥ आवै इकली और न कोई निसा समै वो वाला ॥ किया सिंगार वतीसों अभरन ओढ़ो सुरख दुसाला ॥ इति श्री दिल लगन चिकित्सायां ग्रन्थ संपूर्ण लिखितं शिव नारायण चैत्र वदी छठ संवत् १८९६ वि० ॥

बिषय—वैद्यक।

संख्या ३०७ ए. कवि तरंग, रचयिता—सीताराम (रौपड़ , पत्र—११६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७६० = १७०३ ई०, लिपिकाल—सं० १८६९ = १८१२ ई०, प्राप्तिस्थान—सेवाश्रम पुस्तकालय, ग्राम—नौरङ्गपुर, डाकघर—उमरगढ़, जिला—एटा।

आदि—श्रीगणेशायनमः ॥ अथ कबि तरंग भाषा लिख्यते ॥ दोहा—प्रथम नमो परमात्मा। बहुरो शारद माय। शिव सुत पद परताप ते। भाषा कहों बनाय ॥ मारग सित तृतिया असित। सोम दिवस शुभ वार। एकादश संवत समय। और साठ निरधार ॥ देखी तिब्ब सहाव की। उपज्यो मन आनन्द। अर्थ फारसी कठिन ते। सुगम बनाये छन्द ॥ ब्राह्मण तिरखे वंश में। केशव सुत कविराम। रौंपड़ में भाषा करी। कबि तरंग धरि नाम ॥ कवि सी मति भाषा करी। तर्क न कीजै कोय। ज्यों दीपक के दीप है। घट उपज्यो तन होय ॥ चरक आदि ते ग्रन्थ लै। देखे उदधि समान। उनमें सार निकारि के। रतन गहे जिय जान ॥ रोग हरण अरु सुख करण। रतन औषधी सोय। सेवे प्रति दिन मनुज जो। रोग व्याधि को खोय ॥ व्याधि हरण नर होय जो। करै भक्ति करतार। युवती आदिक सुख करैं। भोग सार संसार ॥ याते पहिले देह की। करो सदा प्रति पाल। जो कबहूं गिरि जाय तो। बहुरि न पावै काल ॥

अंत—अथ शस्त्र मंज्जन प्रतीकार ॥ दोहा—हंडौली का तेल कर। मलै शस्त्र पर कोय। जंगाल मोरचा न लगै। बरस काल जो होय ॥ राषै गेहूं रास में वरस काल के मांहि। मैल मोरचा ना लगै कह्यौ कपट कछु नाहिं ॥ संवत—गये जो बिक्रम बीर विताय। सत्रह सै अरु साठि गिनाय ॥ मकर कृष्ण तृतिया परधान। शुभ नक्षत्र भृगु वासर जान ॥ कह्यो सुगम कवि सीताराम। सब काहू के आवै काम। कष्ट हरण है सुख का धाम। कबि तरंग राख्यो इहि नाम ॥ दोहा—अर्थ फारसी कठिन ते। भाषा कही बखान। ताते छमियो सकल कवि। चूक परै कवि आन ॥ चौ०—खंड दीप मुनि दोहा जान। कवि तरंग में कहे वखान ॥ थान खंड राम चौपाई। संख्या ग्रन्थ यहे सुबताई ॥ रोग निधान औषधी कही। कबि तरंग में जानों सही ॥ समझ चिकित्सा करै जो कोय। ताको अपजस कबहुं न होय ॥ दो०—किंचित लाभ न कीजिये। धर्म अर्थ पहिचान। दीजै औषधि दया करि। श्री पति कह्यो बखान ॥ इति श्री कबि तरंग सीताराम बिरचिते रोपड़ स्थाने समाप्तम्। लिखा श्याम लाल वैश्य मिती वैसाख सुदी पूर्ण मासी संवत् १८६९ वि० राम राम राम—

विषय—वैद्यक ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता सीताराम केशव के सुत थे । ग्रन्थ रौंपड़ में रचा गया :—ब्राह्मण तिरपे बंश में केशव सुत कबि राम रौंपुड़ में भाषा करी कवि तरंग धरि नाम ॥ निर्माण काल संवत १७६० वि० है । इसको इस प्रकार वर्णन किया है :—गये जो विक्रम बीर विताय । सत्रह सै अरु साठ गिनाय ॥ मकर कृष्ण तृतिया परधान । शुभ नक्षत्र भृगु वासर जान ॥ कह्यौ सुगम कवि सीताराम । सब काहू के आवै काम ॥ लिपिकाल संवत् १८६९ वि० है ।

संख्या ३०७ बी. कवि तरंग, रचयिता—सीताराम (रौंपड़), पत्र—११६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४३६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७६० = १७०३ ई०, लिपिकाल—सं० १८८८ = १८३१ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला हरकिसनराय वैद्य, ग्राम—जाजामऊ, डाकघर—हाथरस, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ कवि सीता राम कृत कवि तरंग लिख्यते ॥ दोहा—प्रथम नमो परमातमा । वहुरो शारद माय । शिव सुत पद परताप तें । भाषा कहौं वनाय ॥ मारग सित तृतिया असित । सोम दिवस सुभ वार । एकादश संवत् समय । और साठ निरधार ॥ देखी तिब्व सहात की । उपज्यो मन आनंद । अर्थ फारसी कठिन ते । सुगम वनाये छन्द ॥ ब्राह्मण तिरपे बंस में । केशव सुत कविराम । रौंपुड़ में भाषा करी । कवि तरंग धरि नाम ॥ कवि सीपतिभाषा करी । तर्क न कीजै कोय । ज्यौं दीपक के दीप है । घट उपज्यो तन होय ॥ चरक आदि ते ग्रन्थ लै । देखे उदधि समान ॥ उनमें सार निकारि कै । रतन गहे जिय जानि ॥ रोग हरण और सुख करण । रतन औषधी सोय । सेवे प्रति दिन मनुज जो । रोग व्याधि को खोय ॥ व्याधि हरण नर होय जो । करै भक्ति करतार । युवती आदिक सुख करै । भोग सार संसार ॥ याते पहिले देह की । करो सदा प्रति पाल । जो कबहूं गिरि जाय तो । बहुरि न पावै काल ॥

अंत—शीतना फोला का उपाय । मगर का पिता ४ माशे कलमी शोरा ४ मासे । संग बसरी ४ मासे । रतन जोति ४ मासे । गमीरी ४ माशे । समुद्र झाग ४ माशे । चीनी पियाला असल पुराना ८ माशे । सीपी का चूना वीच रगर के निकाले ८ माशा मोती अनछेदे १माशा । सफेद मिरचा । दक्षिणी दाने १६, संगि समाक का खरले होवे या सवज पत्थर का खरल होवे उसमें सब औषधे डाल के सौ नीवू कागजी के रस से खाल करै २० दिन फिर नीवू के दंड़े के पेंदे को चौकोना चोकोना रुपया यानी अकवर शाही लगाय कांशे के वर्त्तन में ५० नीवू के रस में खरल करै २० दिन गोलियां बना रखे फेर पानी से घिस के तांबे की सलाई से नेत्रों में लगावे दूध भात पथ्य करै शीतला का फूला तिमिरि पुष्प धुंध सब रोग जांय ॥ अथ संवत् कथितं ॥ गये जो विक्रम बीर विताय । सत्रह सै अरु साठि गिनाय । मकर कृष्ण तृतिया परधान । शुभ नक्षत्र भृगु वासर जान ॥ कह्यौ सुगम कवि सीता राम । सब काहू के आवैं काम । अर्थ फारसी कठिन ते । भाषा कही वखान् । ताते छमियो सकल

कवि। चूक परै कहु आन ॥ इति श्री कवि तरंग कवि सीताराम बिरचितायां रौपड़ अस्थाने संपूर्ण समाप्तः संवत् १८८८ वि० राम राम

विषय—वैद्यक।

संख्या ३०७ सी. कवितरंग, रचयिता—सीताराम (रौपड़), पत्र—१२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९९६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १७६० = १७०३ ई०, लिपिकाल—सं० १८९६= १८३९ ई०, प्राप्तिस्थान—रामजीवन वैद्य, ग्राम—पचौली, डाकघर—मरहरा, जिला—एटा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ श्री कबि सीताराम कृत कवितरंग लिख्यते ॥ दो०—प्रथम नमो परमातमा। बहुरो शारद माय। शिव-सुत-पद परताप ते। भाषा कहौं बनाय ॥ मारग सित तृतिया असित। सोम दिवस सुभ वार। एका दश संवत् समय। और साठ निर धार ॥ देखी तिब्ब सहांय की। उपज्यो मन आनन्द। अर्थ फारसी कठिन ते। सुगम बनाये छन्द ॥ ब्राह्मण तिरषे वंश में। केशव सुत कवि राम ॥ रौपुड़ में भाषा करी। तर्क न कीजे कोय। ज्यौं दीपक के दीप है। घट उपज्यो तन होय ॥ चरक आदि ते ग्रन्थ लै। देखे उदधि समान। उनमें सार निकारि कै। रतन गहे जिय जानि ॥

अंत—अथ संवत कथितं—गये जो विक्रम वीर विताय। सत्रह सै अरु साठि गिनाय। मकर कृष्ण तृतिया परधान। शुभ नक्षत्र भृगु बासर जान ॥ कह्यौ सुगम कवि सीता राम। सब काहू के आवै काम। कष्ट हरण है सुख का धाम। कवि तरंग राख्यौ यहि नाम ॥ दो०—अर्थ फारसी कठिन ते। भाषा कही बखान। ताते छमियां सकल कवि। चूक परै कहु आन ॥ चौ०—षंड द्वीप मुनि दोहा जान। कवि तरंग मा कहे बखान ॥ थान षंड राम चौपाई। संख्या ग्रन्थ यहै सु बताई। रोग निधान औषधी कही ॥ कवि तरंग में जानौं सही ॥ समझ चिकित्सा करै जु कोय। ताको अपजस कवहु न होय ॥ दो०—किंचित लोभ न कीजिये। धर्म अर्थ पहिचान ॥ दीजे औषधि दया करि। श्रीपति कह्यौ बखान ॥ कवितरंग संपूर्ण समाप्तः संवत १८९६ वि०।

विषय—वैद्यक।

संख्या ३०८. प्रभाती भजन, रचयिता—सीताराम, पत्र—३२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—९७२, खंडित लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३० = १८७३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामशंकर वैद्य, ग्राम—धनरायपुर, डाकघर—मल्लावा, जिला—एटा।

आदि—जागिये कृपानिधान जान राय रामचन्द्र जननी कहत बार बार भोर भयो प्यारे राजिव लोचन विसाल पीत वापिका मराल ललित कमल वदन ऊपर मदन कोटि वारे ॥ उदित अरुण विगत सर्वरी ससांक किरन हीन दीन दीप ज्योति मलिन दुति समूह तारे ॥ मानो ज्ञान घन प्रकास वीते सव भवविलास आस त्रास तिमिरि तोष तरनि तेज जारे ॥ वोलत खग मुखर निकर मधुर कर प्रतीत सुनो श्रवण प्राण जीवनधन मेरे तुम वारे ॥ मनो वेद वंदी मुनि सूत मागधादि विरद वदत जय जय जय जयति कैट भारे ॥

विकसत कमला वली चले प्रपुंज चंचरीक गुंजत कल कोमल ध्वनि त्याग कंज सारे ॥ मनो विराग पाय सकल सोक कूप ग्रह विहाय भृत्य प्रेम मत्त फिरत गुणत गुण तिहारे ॥ सुनत वचन प्रिय रसाल जागे अतिसय दयाल भागे जंजाल विपुल दुख कदंब टारे ॥ तुलसि दास अति अनंद देखि के मुखार विन्द छूटे भ्रम फंद द्वंद परम मंद भारे ॥

अंत—प्रभु मेरी नांव उतारो पार । वलिहारी नन्द कुमार ॥ भव सागर संसार अगम है । तिरछी जाकी धार ॥ पार उतारन कठिन भयो है । सूझत वार न पार ॥१॥ लोभ मोह के वादल उमड़े भयो महा धुंध कार । काम क्रोध पवन संग लीने बरसत है हंकार ॥ २ ॥ डोलत है यह नाउ पुरानी भवसागर मझधार ॥ विजली चमकत वादल गरजत लरज तजिया हमार ॥ ३ ॥ दीन दयाल भरोसे तेरे चढ़ाया सव परि बार ॥ इस बेड़े को पार उतारो हे दयाल करतार ॥ महा मली मैं कपटी कामी तुम्हरो वखसन हार ॥ रुप चंद निज ठौर नहीं कोऊ नाम तेरा आधार ॥ प्रभु मेरी नांव उतारो पार ॥ ४ ॥ मन राम सुमिरि पछु तायगा ॥ पापी जीउड़ा लोभ करत है आज कल्ह उठ जायगा ॥ लालच लागे जन्म गवांयो माया भरम भुलायगा ॥ धन जोवन का गर्व न करिये कागज सा गल जायगा ॥ सुमिरन भजन दया नहिं कीनी तामुख चोटा खायगा ॥ धर्म राय जब लेखा मांगे क्या मुख लेकर जायगा ॥ कहत कवीर सुनो भाई साधो साध संग तर जायगा ॥ मन राम सुमिर पछ तायगा ॥ इति श्री भजन प्रभाती संपूर्णम् लिखतं वावूलाल वैश्य कसहेट वाजार का रहवे वारा संवत मिती वैसाख वदी ७, १९३० वि० ।

विषय—इस ग्रन्थ में गो० तुलसीदास, सूरदास, प्रेमदास, कबीर दास, मीराबाई, रूपचंद, रामनाथ आदि अनेक कवियों के रचे हुये भजन-प्रभाती संगृहीत हैं ।

संख्या ३०६. औषधि यूनानीसार, रचयिता—सिवगोपाल (दिल्ली), पत्र—९०, आकार—१०×८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८८० = १८२३ ई०, लिपिकाल—सं० १९०२ = १८४५ ई०, प्राप्तिस्थान—वैद्य शिवदयाल, ग्राम—नीमकापुरा, डाकघर—जलाली, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ औषधि यूनानी सार लिख्यते ॥ शिवगोपाल दिल्ली निवासी कृत ॥ रस निस गोली—अकर करा काली मिर्च सोठि तज दार चीनी जाफरान मोथा पिपला मूर जायफल जाविञी सालब मिश्री वहमन सफेद व सुर्ख मस्तंगी इन्द्र जौ पोस्त तुरंज मुनक्का गोंद वबूल सव चीजें बराबर २ तौल के वारीक पीस के गोली चने के बराबर वनावै मगर गोंद को भून ले । खुराक एक से पांच गोली तक ॥ फायदा—वलगम को दूर करै और हाजिम है ॥ मरदौं के काम की गोली—अफीम जायफल मुश्क काफूर वरावर तौल के पीसले और वंगला पान के रस में चार चार रत्ती की गोली वनावै । जब मर्द औरत के पास जावै तब एक गोली खाय ले । ये गोली इम्साक पैदा करतीं हैं । गोली जिरयान की—धतूरे के वीज, काली मिर्च ६, ६ मासे पीसके चने के वरावर गोली वनावै और एक रोज सौंफ सीरह के साथ खाया करै—फायदा जिरियान मनी के वास्ते जीयाम मुफीद है ॥

अंत--गंधक का तेल--यह तेल खुजली के वास्ते मुफीद है ॥ गंधक को दो दिन तक मदार के दूध में पीसे और छाया में सुखादे फिर एक वर्त्तन में पानी भरके उसमें गंधक डालदे ॥ और चार पहर तक मद्दी मद्दी आंच दे जोश दे जब तेल पानी के ऊपर मालूम होवे तो कांसे की थाली में उतारता जावे ॥ रोगन पन वाड़ ॥:--खारिश के वास्ते मुफीद है पनवाड़ के वीज १ सेर गंधक गंधक १ तोला पीस कर २ सेर दूध और पावसेर घी में पकावे। जव दूध जल जावै औरोगन रह जावै तब काम में लावै ॥ मरहम कौंचं ॥ घाव को जल्दी भरता है। कोंच की गिरी पांच तोले पीसकर ४ तोले मोम और नीम के पत्ते पावभर मीठे तेल में पकावै फिर घोट ले--मरहम पियाज साबुन कत्था सफेद चार चार तोले नीम ११ पत्ते मीठा तेल ४ तोले सव चीजैं तेल में जरावै फिर कत्था पीस के मिलादे ॥ मरहम अरंडी--इसका तेल कों पल का रस पाव पाव सेर आग पर जलावै जब तेल रह जावै तब एक तोला पत्थर का चूना बारीक पीस मिलादे ॥ मरहम अलसी ॥ कमीला मोम चार चार तोले तेल अलसी पाव भर पकावै मगर कमीले को पीसे यह मरहम घोड़े की पीठ और घाव को मुफीद है ॥ इति किताव यूनानी औषधि सार संपूर्ण लिखतं राम बली पंडित दिल्ली निवासी चैत्र मासे कृष्ण पक्षे दिन चन्द्र वासरे संवत १९०० वि० ॥

विषय यूनानी वैधक।

संख्या ३१०. श्रृंगार सार, रचयिता--शिवगुलाम (बेथर, उन्नाव), पत्र--३८, आकार--६ X ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)--२०, परिमाण (अनुष्टुप्)--४८०, रूप--प्राचीन, लिपि--नागरी, प्राप्तिस्थान--पं० रामप्रसाद दुबे, ग्राम --पीर का नगरा, डाकघर--पटियाली, जिला--एटा।

आदि--अथ श्रृंगार सार लिख्यते ॥ दोहा--जन हित जीवन मूरि जग। विपति विदारन हारि। जयति जयति जय जयति जय। श्री वृषभान कुमारि ॥ श्री वृषभान दुलारि के। पद वंदौ कर जोर। जे निसि वासर उर धरै। वृज बसि नन्द किसोर ॥ कवित्त--दास दुख मोचन सुरोचन सुभग तन आंगुरी नखन युत मंजु पोर पोरी के ॥ ऐड़िन गुलफ सुभ शुलफ सुरज भरे विहरे अइय रूप वर वृज खोरी के ॥ ललित के जीवन सुकंज के बरन चारु सुखमा भरन और करन चित्त चोरी के। वंदत चरन भव हरन सुभाव भरे नवल किशोर अरु नवल किसोरी के ॥ कल्प लता के कीधों पल्लव नवीन दोई हरन मंजुता के कंजता के वनिता के हैं ॥ पावन पतित गुन गावैं मुनि ताके छवि छलै सविता के जन ताके गुरु ताके है ॥ नवो निधिता के सिद्धिता के आदि आलैं हठी तीनौं लोक ताके प्रभुताके प्रभु ताके हैं ॥ कटैं पाप ताके वड़े पुन्य के पताके जिन ऐसे पद ताके वृषभान की सुता के हैं ॥

अंत--मोतिन की माल तोरि चीर सब चीर डारे फेरि कै न जैहौं आली दुख विकरारे हैं ॥ देवकी नंदन कहैं धोखे नग चोंचनि सों अलक प्रसून नोंचि नोंचि निरधारे हैं ॥ मानि मुख चंद चोहैं दीनी अधरनि आन तीनों ये निकुंजन में एकै तार तारे हैं ॥ ठौर ठौर डोलत मराल मतवारे जैसे मोर मतवारे त्यों चकोर मतवारे हैं ॥ १ ॥ औचक अकेली

वरसाने की डगरि भूल भांवरें भरी में भोर माधवी लतन में ॥ कवि लछिराम तौलों पीछे ते विथोरि लट वेशर मरोन्यो हार तोन्यो छली छन में ॥ नखन चपेटे कुच फारै कंचुकी के बीच आई केहूं लाल मुख विखसन में ॥ वीन जन जाइयो परेते परबस वसै बानर विसासी बजमारे मधुवन में ॥ २ ॥ सवैया—सब भांति सुपास तुम्हें इहि ठाम अराम करौ चित चावन में । कित जाऊगे सांझ समय सुनिये अंधियारी असूझ भया वन में ॥ हम रेहू पिया परदेश वसैं इहि हेत कहौं सत भावन में ॥ वंगलाल वटोही हमारे बसो धुरबान की धावन सावन में ॥ ३ ॥ फूलि रहे कचनार अनार हजार सो रंग विरंग अवास है ॥ मंजुल मंजु दली कदली वनी भौरं थली रुचि मैन मवास है ॥ सो मदनेश जू सीतल मंद सुगंधित पौन हू पौन प्रकास है । वाग घनी है घनी वनी कुंज विदेशी तुम्हें सब भांति सुपास है ॥ ४ ॥ इति श्री शृंगार सार संपूर्ण समाप्तः ॥

विषय—शृंगार रस के कवित्त और सवैया ॥

संख्या ३११. रसरंजन, रचयिता—शिवनाथ, पत्र—२७, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५८०, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८४६ = १७८९ ई०, प्राप्तिस्थान —रामनारायण पटवारी, ग्राम—हरपुर, डाकघर—बारहद्वारी, जिला—एटा ।

आदि - श्री गणेशाय नमः ॥ अथ रस रंजन शिव नाथ कृत लिख्यते ॥ कवित्त—चंदन चढ़ाइ चारु फूलन के आसन पै आरती सवांरि गुन गावती घनेरे हैं ॥ कहै शिवनाथ साथ राधिका किशोरी जोरी राखि हिय अन्तर निरंतर न बेरे हैं ॥ पौरिहा तिहारे हम चौरिहा तिहारे राज हम छत्र धारी ज्योति हारी प्रीति घेरे है ॥ आस पास हेरे मेरे साहिब रसिक राज दास हम तेरे हैं खवास हम तेरे हैं ॥ दोहा—रति को थाई भाव सो । सोई है शृंगार । ताहि कहत कवि द्वै तरह जोग विजोग विचार ॥ आलंवन शृंगार को कही नायिका आदि । ऐसे सब कवि कह गये प्रथम नाहिं अबिबाद ॥ त्रिविधि महामाया भई तीनि भेद परगास । स्वेया पर कीया कही पूर्न जोषिता विलास ॥ तीन्यो के भेदनि रहे तीनि लोक परिपूर याहि ते उपजत जगत यही सजीवन मूर ॥ याके भेदनि को कहै काके ऐतो ज्ञान जानि पन्यो सो कहत हौं लक्षन समुझि सुजान ॥

अंत—उत्तम जथा कवित्त—आए रस मसे कहूं नागिन नवोढ़ डसे अति शोभ लसै अंग अंग रस भोये हैं ॥ एक हाथ हाल लीने फूलन की माल लीने एक हाथ प्याला लीने देषि नैन जोये हैं ॥ कहै शिवनाथ नाथ धन दै धनद सम दूरि कीनो रोस रस आनन्द समोये हैं मारगना पावै मानौ माननी के कान लगे काननि सो कोमिला को ऐक हैं को ये हैं ॥ मध्यम जथा ॥ दो०—प्यारी जू के कोप में मनको जानें भाव । अंग चेष्टा रूप लखि सोई मध्यम राव ॥ कवित्त—वोलै न मधुर बैन खोलै न बदन चन्द चंद्र कहा भयो सांसनि उसासनि सरति है ॥ अंगुली तरजक कर पल्लव सौ वर जीत कहां भयो दांतनि सों अधरा दुसति है ॥ कहै शिवनाथ जो पै साजि कै सिंगार वैठी अंतर के प्रेम सों निरंतर वसति है ॥ ऐसे कोप कोमल में रश वरसति कसि कंचुकी कसति ठकुराइनि लसति है ॥ इति श्री रस

रंजने श्री कृष्ण विलासे शिवनाथ विरचिते नाइका भेद समाप्ते । शुभं भूयात ॥ लेषक स्तुति कवित्त—संवत् रस वेद और भुजंग चन्द्र क्रम ही ते धरीजै अंक वाम मारग सुभाइ सों ॥ ससि ससि मुनि भूमि अंक साके को नीकी भांति लीजियो विचारि पुनि वाहिये गुनाइ सों ॥ माघौ सित पक्ष आइ दशमी को चन्द्र वार ताही दिन पूरन कै लिषिहौं भुलाइ सों ॥ कहि जगरूप क्षमा कीजियो कछुक चूक परै सम्हांरो चितु लाइ सों ॥ श्री राधा कृष्णायनमः

विषय—नायिका भेद ।

संख्या ३१२. मनु धर्मसार, रचयिता— राजा शिवप्रसाद (बनारस), पत्र—२२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३०८, रूप—प्राचीन, लिपि— नागरी, लिपिकाल—सं० १९१३ = १८५६ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला दरगाही लाल कुरमी, ग्राम—बीबीपुर, डाकघर—बिल्हौर, जिला—कानपुर ।

आदि— श्री गणेशायनमः अथ मनु धर्म सार लिख्यते ॥ मनु जी एकाग्र चित्त बैठे हुए थे । महर्षियों ने उनके पास जाय के और महा न्याय प्रति पूजा करके कहा हे भगवन सब वर्णों का और सब अंतर प्रभवों का धर्म क्रम से ठीक २ हम सब को कहिये ॥ जब उन महात्माओं ने महा तेजस्वी मनु जी से यह पूछा तब मनु जी ने उन सब महर्षियों से पूजा करिके कहा कि सुनिये । यह सब जगत पहिले तम अर्थात् अंधेरा था न वह जाना गया था न उसका कुछ लक्षण करने के योग्य था न जानने के योग्य था । मानव नींद में सोया हुआ था । फिर जब महा भूतादि अर्थात् पृथ्वी अप तेज वायु आकासादि से प्रगट है प्रभाव जिसका तम को दूर करने वाले अव्यक्त स्वयंभू भगवान इस जगत को व्यक्ति अर्थात् प्रगट करता हुआ जो भगवान जितेन्द्रियों का ग्राह्य सूक्ष्म अव्यक्त सनातन अचिंत सर्व भूत मय है सोई आप से आप प्रगट हुआ ।

अंत—नीच जाति होके हम बड़ी जाति हैं ऐसा झूठ वोलना राजा के समीप किसी पर दोष कहना । गुरू से झूठ वोलना ये सब ब्रह्म हत्या के समान हैं । साक्षी होकर झूठ वोलने में गुरू को मिथ्या दोष लगाने में स्त्री के बध में और मित्र के बध में जिसकी वाणी मन शरीर ये सब क्रम से निषिद्धि कथन असतह्य कल्प निषिद्धि व्यापार उनका त्याग किये हुये हैं वही त्रिदंडी कहाता है । क्योंकि दमन से दंड है सो जिसने तीनों से तीनों वस्तु का दमन किया वही त्रिडंडी है । संपूर्ण जीवों में इन तीनों दंड को स्थापन करके और काम क्रोध को रोक के सिद्धि को पाता है । इति श्री मानव धर्म सार संपूर्ण समाप्तः लिषतं गौरी शंकर पांडे वेहरा ग्राम निवासी संवत् १९१३ वि० ॥ राम राम राम ॥

विषय—मनुजी के धर्म शास्त्र का हिन्दी भाषा में अनुवाद ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता राजा शिवप्रसाद थे । ये बनारस निवासी, संवत् १८८० से संवत् १९५२ तक वर्त्तमान थे । ये बीबी रत्न कुँवरि के पुत्र थे । लिपि काल संवत् १९१३ वि० है ।

संख्या ३१३ ए. वैद्यक संग्रह, रचयिता—शिवराम शास्त्री, कागज—पुराना, पत्र—३६, आकार—७½ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२६०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल – सं० १९२७ = १८७० ई०, लिपि-काल—सं० १९२७ = १८७० ई०, प्राप्तिस्थान—श्री चिरंजीलाल वैद्य, स्थान और डाक-घर—बेलनगंज आगरा, जिला —आगरा।

आदि—श्री मते रामनुजाय नमः अथ अतीसार की दाह ॥ जावित्री जायफल सोंठ सोंथा, इन्द्रा जब, राल, पनीय सुपारी, पाठ उहवेरी, भांग, कुचला, मुरदा सिंह- बाँसे की छाल, मिरच लोद आम की गुठली बंस लोचन केसरि अनार की कली बंवर के फूल वर की जटा नारीयर की जटा खपरीया सर्व समान लय चूर्ण करै पौस्त कै पानी में पीसि गोली लघु बेर प्रमान बाँधै गोली एक सद पानी सो खाई जाय तो सर्व अतीसार जाय। पथ मसूर की दाह ॥

अंत—श्री श्री १०८ श्री निवास श्री मते रामानुजाय नमः श्री १०९ श्री रङ्ग देशिक तरु बड़ी हले वर्पनि परम गुरुभ्यो न्मः श्री इतु श्री लाला शुक योगी विर-चितं श्री श्रवण पठनाभ्यां धर्म्मं निखिलं फल प्रदं श्री कृष्ण कर्णा म्रतंः क क्रस्तमाचार्य सहायेन कल्याणं शिवराम शास्त्रि सम्य करि कृत्य केशव मुद ली वर्येण चिन्ताद्रि पेटि कार्य प्रभाकर मुद्राक्षर शालायां क्रोधन संवत्सर कन्या शुद्ध त्रयोदशं × × श्री विद्रावन प्रति श्री रंग स्थली हस्त संवत् १९२७ फाल्गुण मास शुक्ल पक्षि में समाप्तं। लिखितं मिदं ॥

विषय—वैद्यक के नुस्खे तथा तंत्र और मंत्र।

संख्या ३१३ बी. वैद्यक, रचयिता—शिवराम, पत्र—६४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१६०९, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान लाला राजकिशोर, ग्राम—जाहीदपुर, डाकघर—अतरौली, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ वैद्यक शिवराम कृत भाषा लिख्यते ॥ प्रथम नमस्कार के दोहाः—प्रथम गवरि गनेस सरस्वति आज्ञा पाऊं। हों आधीन मति हीन बरन करि सके कहां लौ तुम गुन अपरंपार ॥ व्याप रहे त्रिभुवन जहां लों ॥ गुरु आज्ञा विनु कछु नहिं होई। चार रितु प्रगट कर कहे अव सुनो सब भेद ॥ 'अथ रित विचार बर्णन ॥ शिशिर रितु में चार कोठा है एक कोठा में अग्नि है तहां ते छुधा लगत है ॥ प्रथम जल को कोठा ताके द्वै रंग हैं सो ऊपर को चलि दूसरे कोटा में अन्न रहत है तिसरे में जायके भस्म होत है चौथे में मल वंधत है दो नीचे को चलि एक दाहिनीं ओर दूसरा वाई ओर नीचे की है सो पायन की ओर आई है। एक बाई तरफ आई बाईं तरफ के बाहें के रग में ते चारि अंकुर फूटे। एक नीचे को चला एक बाईं ओर एक दाहिनी ओर एक ऊपर को चली।

अंत—अथ सीत ते गरमी जुर ॥ पेसाब का रंग कांसे कासा होय तामें सर्वत कैसो रंग मिला होय तो सीत से गरमी विकार जानिये ॥ ताके लक्षन ॥ पदे में दरद होय ॥

नीचे के आधे अंग पसीना आवे उचक होय हाथ पांव में जलन होय। छाती में दरद होय सिर दुपै आंखि सुर्ख होय अतीसार होय स्वांस होय कफ डारै पेट में दर्द होय हाड़ फूटन होय ॥ अथ मलते वाय ॥ पेशाब को तेल केसो रंग होय तामें भूरो रंग मिलो होय तो मलते वाजु विकार जानिये ताके लछन ॥ भ्रम होय सिर दुखै खांसी अफरा होय माथे पसीना आवे उचक होय मल ते वाय जुर पेशाव भूरो रंग मिलो होय तामें तेल केसो मिलो रंग होय तो वाय ते मल जुर जानिये। ताके लक्षन। अतीसार अति पीर होय कबज होय छातीं दुखे उचक होय छाती में पसीना आवै ॥ हाथ पांव दुखै ऐंठे जमाही आवै ॥ मलते सीत ॥ पेसाव तेल के सो रंग होय तामें कांसे केसो रंग मिलो होय तो मलते सित जुर जानिये ताके लक्षन मल बंध होय पेट सूल होय थोरो पेशाव करै कंदो हो आवै जमाही आवै उचक होय हाथ पांव में जलन होय जुर होय हाड़ फूटन होय अथ सीत ते मल जुर जो पेशाव कांसे केसो रंग होय तामें तेल केस्यो रंग मिलो होय तो सीत ते मल विकार जानिये। ताके लक्षन ॥ मल बंध होय पेट में सूल होय हाथ पायन में जलन होय जुर होय हाड़ फूटन होय तो मल शुक्र जानिये अपूर्ण

विषय—वैद्यक।

संख्या ३१४. वैताल पचीसी, रचयिता—शिवरत्न मिश्र, पत्र—११६, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२११२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८५६ = १७९९ ई०, लिपिकाल—सं० १८९६ = १८३९ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला शिवदयाल, ग्राम—बरखेड़वा, डाकघर—टड़ियाव, जिला—हरदोई।

आदि—श्रीगणेशायनमः अथ वैताल पचीसी शिव रतन मिश्र कृत लिख्यते ॥ धारा नाम नगर एक शहिर वहां का राजा गंधर्व सेन उसकी चार रानियां थी उनसे छै पुत्र जो कि एक से एक पंडित वलवान और पराक्रमी थे। होनहार प्रवल है कि वह राजा मृत्यु को प्राप्त हुआ उसके स्थान पर वड़ा पुत्र संख नाम राजा गद्दी पर वैठा उसके कुछ दिन बाद उसका छोटा भाई विक्रम नामका अपने जेठे भाई को मार गद्दी पर बैठा और भली भांति राज काज न्याय से करने लगा थोड़े ही दिनों में वह जम्बू द्वीप का राजा हो गया और उसने अपना साका बांधा कुछ दिन पीछे राजा ने विचारा कि जिन देशों का मैं राजा हूं उनकी सैर करना चाहिये यह सोच समझ कर राज गद्दी अपने छोटे भाई भरतरी को सौंप आप जोगी वन मुल्क मुल्क और वन वन की सैर करने लगा उस सहर में एक कंगाल ब्राह्मण तपस्या करता था। एक देवता ने उसको एक अमृत फल ला दिया ब्राह्मण उस फल को ले अपने घर में ला ब्राह्मणी को दिया ॥

अंत—यह सुन राजा वैताल की वात याद कर हाथ जोड़ विनय की कि महाराज मैं प्रणाम कर नहीं जानता आप गुरु हैं जो कृपा करिके सिखा दें तो मैं करूं यह सुन जोगी ने ज्यों ही दंडवत करने को सिर झुकाया त्यों ही राजा ने एक खंग ऐसा मारा कि सिर अलग हो गया और वैताल ने आकर फूलों की वर्षा की ऐसा कहा है कि अपने को जो कोई

मारना चाहे उसको मारने में कोई अधर्म नहीं है। उस समय राजा का साहस देख इन्द्र समेत सब देवता अपने २ विमानों पर बैठ वहां जै जै कार करने लगे और राजा इन्द्र ने प्रसन्न हो राजा बीर विक्रमाजीत से कहा कि बर मांग तब राजा ने हाथ जोड़ कर कहा कि महाराज यह मेरी कथा संसार में प्रसिद्ध हो। इन्द्र ने कहा जब तक सूर्य चन्द्रमा पृथ्वी आकाश स्थिर है तब तक यह कथा प्रसिद्धि रहेगी और तू सब पृथ्वी का राजा बनेगा। इतनी कह राजा इन्द्र अपने स्थान को पधारे और राजा ने उन दोनों लोथों को ले लोहे की कड़ाही में डाल दिया तब यह दोनों वीर आ हाजिर हुये और कहने लगे कि हमें क्या आज्ञा है राजा ने कहा जब मैं याद करूं तब तुम आना इस तरह से इनसे बचन ले राजा अपने घर आ राज पाठ करने लगा ऐसा कहा है कि पंडित हो या मूर्ख लड़का हो या जवान जो बुद्धिमान होगा उसकी जै होगी॥ इति शिव रतन मिश्र कृत वैताल पचीसी सम्पूर्ण मिती आश्वन शुदी अष्टमी संवत १८९६ वि०

विषय—वैताल ने राजा विक्रमाजीत को २५ कहानियाँ सुना कर मंत्र साधन का उपदेश दिया और राजा ने अखंड राज वैताल द्वारा प्राप्त किया।

संख्या ३१५ ए. भागवत भावार्थ दीपिका, रचयिता—श्रीधरस्वामी, पत्र—१५६, आकार—१३$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६५९४, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० गौरीशंकर जी गौड़, ग्राम—न० धौकल, डाकघर—वरहना, जिला—आगरा।

आदि—(पृष्ठ ५१ तक खंडित) पृष्ठ ५१ से चूत पल्लव वास स्रक मुक्ता दाम बिलंबिभि उपस्कृतं मति द्वारं अयां कुंभे स दीपकै = ५७॥ अकारैर्गो पुराण है = शांत कुभ परिछ है = सर्व तो लेकृत श्रीमान् विमान् शिखर धुमि = ५८॥ आम जो है तिनके पतान की वंदन वारी है। मोती जो है तिनकी माला लंवायमान है। सो द्वार द्वार जो है ताके ऊपर जलन के कुंभ धरा है दीपक जे हैं ते धरे हैं॥ ५७॥ प्रकार महल है दरवाजे अस्थान ये जे हैं ते सुवर्ण की जो सामग्री है तिन करिकै संयुक्त है संपूर्ण और ते सोभायमान् विमान् जो है तिनकी शिखरणि की दुति कांति करिकै शोभायमान् है। ५८॥

अंत—इत्यान भ्यतमा मंत्र्य विदुरो गज साध्यं स्वाना दिदक्षुः प्रपयौ ज्ञातीनां निवृताशयः॥ २९॥ रातघः शृणुया द्राजन राज्ञां ह्यर्प्यं पितात्मनां आयुर्द्ध ने यशः स्वस्ति गति मैं सूर्य्यं मान्युयात्। ३०। इति श्री भागवते महापुराणे चतुर्थ स्कंधे व्याख्याने एके त्रिंशोऽध्याय। ३१। ऐसे विदुर दंडवत करिकै आज्ञा मांगी करिकै हस्तनापुर कौ जात भयो अपनेनकू देषिवे के लिये सुपित है अंतस्करण जाकौ। २९। हे राजन हरि के विषै अर्पन करो है आत्मा जिन नै तिनको जो जस है ताय श्रवण करै जे तिनको आयु धन यश कल्याण गति ईनकौ प्राप्ति होयगे। ३०। इति श्री भागवते महापुराणे चतुर्थे टीकायां एके त्रिंशोऽध्याय॥ ३१॥

विषय—भागवत चतुर्थ स्कंध का भावार्थ।

संख्या ३१५ बी. भागवत भावार्थ दीपिका, रचयिता—श्रीधर स्वामी, पत्र—६४, आकार—१३½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९४८, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० गौरीशंकर जी गौड़, ग्राम—न० धौंकल, डाकघर—बरहन, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः ॐ नम श्रीमत् परमहंसाय स्वादित कमल[2] चरण[1] चिन्मकरंदाय भक्तजन मानस निवासाय श्रीरामचन्द्राय। १। अथातः पंचम स्कंध व्याख्यानेक विशेषवान्। प्रियव्रतोन्वयोयत्रसपंचइव प्रपंचते १ अथैया के अनंतर पंचम स्कंध जो है ताकी व्यख्या विषै। अनेकन कथा करिकै युक्त ऐसो जो प्रियव्रत कौ वंश सा विस्तार करिकै सहित् वर्णन करियेगा षष्क्षि शव्य धुनाध्ययैः पंचमे स्थानईर्य्यते। लोक द्वीपादि मर्य्यदा पालनाख्या अनेकधा। २। छब्बीस अध्याय करिके पंचमस्कंध मेंऽस्थान कौ वर्णन करै हैं स्थान काहेको नाम है लोक दीपादि कईन की मर्यादा को जो पालन सो ऽस्थान कहिये सो अनेक प्रकार को है पृथिव्यु मर्य्यधालौके मर्य्यादा त्रिविधामता पुनत्रैकै कशस्ते पुर्यंयाधावहुधिमता। ३।

अंत—येत्विहवा अनाग सो अर राये ग्लामिवावै श्रंभकै रुपसृतानु पविश्रं भय्य जिजो विषून शूल सूत्रादिषु प्रोता निक्रीडान् कत पाया तप तीते पित्र प्रेत्वय मयात्त नासु शूला दिषु प्रोतात्मन् क्षुत्त दुभ्यांवाऽभिहता कंकव टाहिभि श्वेतस्तिग्यतुं डैरोहन्यमाना आत्मशमलं स्मरंति ४९ योसित्वहवै भूतान्मूद्वजयं तिनराउल्वाण स्वभावायथा दंदशू का ख्ये निर्यं तंतिथ ५०॥ यत्र न पददंशूका पंचमुखा उपस्ट त्यग्र संति यथा विलेशयान्।५१। घंटिकै छेदै हैं। भूष प्यास के मारे मरे हैं पैनी है चोंच जिनकी ऐसे जो काग वगुला वर तिन करिकै मरियै हैं। अपने पापको स्मरण करे हैं। ४२। जेह्या भूतनिको डर पावै है ऊल्लन है सुभाव जिनकौ जैसे सर्प डर पावै है। ते परलोक में। दंदश्वूक नाम नर्क में गिरे हैं। ५०। या नर्क में हे राजा पाचमुख के। सात मुषके दंद शूक हैं ते आपके या पापनि को निगल जाय हैं तैसे मूसिनकौं सर्प निगल जाय हैं तैसे।

विषय—भागवत पंचम् स्कंध का भावार्थ।

संख्या ३१५ सी. भागवत भावार्थ दीपिका, रचयिता—श्रीधर स्वामी, पत्र—७९, आकार—१३½ × ६½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३१८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० गौरीशंकर जी गौड़, ग्राम—न० धौंकल, डाकघर—बरहन, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। पुरापाहरायेन्ट सिंह के नाम विराजते यन्नादतः पलायंते महा कलमम कुंजराः १ पुण्य ही जी अरण्य बन तामें नृसिंह जी कौ नाम ही जो सिंह सो विराजै है जाके नादतै महा पाप रूप जे हाथी ते भजै है १ विसर्ग संभवान जीवान स्वमर्यादासुसं सियतान् विस्नु पाल्य खिलै रूपै रित्ये वं पंचमे स्थितं २ विसर्ग तै भये अपनी अपनी मर्यादा करिकै युक्त ऐसे जे जीव तिनै अतिसय रुप करिकै युक्त ऐसे जे जीव तिनै अतिसय रूप करिकै विष्नु जो है सो पालन करै है यह पंचम स्कंध में भई अध्यायै कोन

विंश त्याषष्टे पोषण मुच्यते अति लघित तम यादा भक्तर क्षणल क्षर्ण अव ष्टकं स्कंध के विषे गुणीस अध्यायन करिकै षोपण कहै हैं कै सो षोषन हे अति उलंघन कीनी है मर्यादा जिनै अैसे जे भक्त तिनको गो रक्षा सो है लक्षण जाकौ।

अंत—करि कै सिर सौ दंडवत करै ब्राह्मण की आज्ञा लैके बंधुन को संग लैके मौन करिके भोजन करै आचार्य जो है ताय पवित्र वाणी करिकै वंदक जो है तिन करिकै सहित अगारी करिकै होम को जो शेष चरु है तापर श्री कौ देय अैसे विधिपूर्वक यासौं तेरे श्रेष्ठ प्रजा होयगी सौभाग्यवती होयगी २४ हे विभो यह जो चरित्र है सो विधि पूर्वक कह्यौ या वृत जो है ताकौ या संसार के विषै पुरुष जो है ते करेंगे तो वांछित जो अर्थ तिनै प्राप्ति होयगे और स्त्री जे है ते पवृत को करेगी तो सौभाग्यता धन पुत्र चिरंजीव पति जस घरई तै प्राप्त होयगी २५ × × × इति षष्टे टीकायां नविंशोध्यायः ॥ १९ ॥

विषय—भागवत षष्टम् स्कंध का भावार्थ।

संख्या ३१५ डी. भागवत भावार्थ दीपिका, रचयिता—श्रीधर स्वामी, पत्र—८२, आकार—१२$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४४४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० गौरीशंकर गौड़, ग्राम—न० धौंकल, डाकघर—बरहन, जिला—आगरा।

आदि—अथवा के अनन्तर चौबीस है अध्याय जाके विषै अैसो जो अष्टम स्कन्द ताके विषै मनु के पुत्र ऋषी देवता इन्द्र हरि के अवतार न करिकै सहित मनु कौ वर्णन करियैगो १ पंचतरम चंतर प्रति मचादिक छै न्यारे न्यारे श्रेष्ठ जो धर्म तिनै प्रवर्ति करै है पालन करै है आचरण करै है २ योत मचंतर कौ सौ धर्म लक्षण कह्यौ है जा धर्म के कीये तै मनुष्य है सो नर्क में नहीं जाय हैं ३ जहां पहली अध्याय के विषै स्वायंभूः स्वारो चसः उत्तम तामस ये आदि मनु तिनकौ बगिन करियैगो ४ स्वायं भू मन्वंतर के विषै अनन्त दुस्तर जे गुनिन को जौ वर्णन ताको आनन्दित जो राजा सो सब मयंत्तर की जो स्थित तायम छै हैः सो राजा मछै है : हे गुरो : स्वायंभू मनु को जो वंश सो विस्तार तै सुनौ जामें मरीचितै आदि लैके विश्व के सजन वारे तिनको स्वर्ग होत भयौ।

अंत—प्रलय के जल में सु सहे शक्ति जाकी अैसो जो ब्रह्मा ताके मुख तै निकरे वेद के गण तिनै ल्याय देत भये दैत्य जो है ताको मारि कै और जो सत्य व्रत कौ उपदेश करत भये अखिल सबके कारण जिन ने कपट रूपी मत्स्य रूप धारण कीयौ है : अैसे जो हरि है : तिनको मैं नमस्कार करूं हैं। गुण ते गुण की प्राप्ति के लीये जाय वर्णन करै है सो जे करूणा कौ निधान परमानन्द माधवतिन कौ मैं शरणि प्राप्ति भयो हूँ। इति श्री भागवते महा पुराणे अष्टमे चतुर्विंशोऽध्याय ॥ २४ ॥

विषय—भागवत अष्टम् स्कंध का भावार्थ।

संख्या ३१५ ई. भागवत भावार्थ दीपिका, रचयिता—श्रीधर स्वामी, पत्र—९२, आकार—१२$\frac{1}{2}$ × ६$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—४१८६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान - पं० गौरीशंकर जी गौड़, ग्राम—न० धौंकल, डाकघर—बरहन, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशायनमः । गुणार्थं गुण तावास्मे वृएव ते करुणानिधि । तमहं शरणं यामि परमानंद माधवं । १ । गुण जे है तिनकौ अपन स्थान हैं । और गुण जे हैं तिनकी प्राप्ति करिकै वर्णन करिवे मैं आवे हैं । अैसे परमानंद माधव जे हैं तिनकी मैं शरणि प्राप्ति भयो हूं । १ । त्रिगुणा पर भिर ध्यायै वैवस्वत सुतान्यः । नवमे कृष्ण सत्कीर्ति प्रसंगाय वितन्वते । २ । आठ जे हैं तिनकौं त्रिगुण करै अैसी जे चौबीस अध्यायन करिके वैवस्वत जो है ताके सुतकौ जो अन्वय रचे हैं सो नवम स्कंध जो है ताके विषै कृष्ण जो है ताके श्रेष्ठ कीर्ति प्रसंग के अर्थ वर्णन करियैगी । २ । एव मुक्तोष्टमस्कंधे सद्धर्म्मः सत्व शोधकः । कर्त्तृ पालक वक्रादि मन्वादीनां निरूपणैः । ३ । अष्टम स्कंध जो है ताके विषै सत्वशोधक जो श्रेष्ठ धर्म है सो कर्त्तृ और फलक के कहिवे तैं मन्वादिकन के निरुपण करि कै वर्णन करौ । ३ ।

अंत—जातो गतः पितृ गृहा द्विज मेधितार्थो हत्वारि पून् सुत शतानि कृतो रुदार उत्पाद्यते षु पुरुष ऋतुभिः समीजे आत्मानमा निगमं प्रथय रुज नेषु । ६६ । पृथ्वयाः= सवै गुरू भरं क्षपयन् करुणामंतः समुत्थ कलिना युधि भूप चम्वः दृष्टा विधूय विजये जय मुद्विधोष्य प्रोच्योद्धवायः च परं समगात्सवधाम । ६७ । इति श्री भागवते महापुराणे नवम स्कंधे यदुवंशानु कथने नाम चतुर्विंशोऽध्यायः । २४ । (भावार्थ) जन्म लेते ही पिता जो वासुदेव है ताके घर व्रज जो है ताव जात भये वृद्धि को प्राप्त भयो है रिपु जो बैरी हैं तिनै मारिकै बहोत सीदाराऽ स्त्री है तिनै विवाह करिकै तेदारा स्त्री है तिनकै विषै सैकरान पुत्र जो हैं तिनै उत्पत्ति करिकै जो है तिन करिकै पुरुष परमात्मा कौ यजन करत भयौः आत्मा जो है ताय आत्मा के निगम जो बड़े मार्ग है तिनै जान जो है तिनके विषै विख्यात करत । ६९ । पृथ्वी जो है ताको बड़ो जो भार है ताप दूरि करत काय करि है । कौरव जो है तिनके भीतर क्लेश जो है ताकौ उत्पान करि युध जो संग्राम है ताके विषै भूप जो राजा हैं तिनकी जो चमू सेना है तिनकुं दृष्टि जो है 'तातै नाश करि कैं विजय जो अर्जुन है ताकी जो जय है ताय प्रगट करिकै उद्धव जो है ताके अर्थ परम तत्त्व जो हैं ताय कहिकै अपने जो स्वधाम है ताय जात भये । ६७ । इति श्री भागवते नवम स्कंधे टीकायां चतुर्विंशोऽध्यायः २४ नव भिर्लक्षर णै र्लक्ष्यं नव भक्ति पल क्षितं ब्रह्म तत्पर भंवंदे परमानंद विग्रहं श्री भागवत भावार्थ दीपिकासं प्रकाशिता स्वपाद नव भक्ता नाम रक्तदाता महेश्वर परमानंद संसेवी श्रीधर स्वामी सत्य ते कृत मालोड्य गृणत श्री शुकोक्ति प्रशंशयं ।

विषय—भागवत नवम् स्कंध का भावार्थ ।

संख्या ३१६ ए. गणित प्रकाश, रचयिता—श्रीलाल, पत्र—६०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१७४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०७ = १८५० ई०, लिपिकाल—सं० १९१० = १८५३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० विष्णु भरोसे, डाकघर—मारहटा, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ गणित प्रकाश लिख्यते ॥ हिसाब में पहिले संख्या के अंकौं के रुप पहिचानने आवश्यक हैं और अंक एक से ले दस तक होते हैं उनके नाम और रुप ये हैं—

एक	दो	तीन	चार	पांच	छै	सात	आठ	नौ	शून्य
१	२	३	४	५	६	७	८	९	०

गिन्ती एक से लेकर सौ तक—

रुप—	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
नाम—	एक	दो	तीन	चार	पांच	छै	सात	आठ	नौ	दस	ग्यारा	बारा	तेरा
रुप—	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३			
नाम—	चौदा	पंद्रा	सोला	सत्रा	अठारह	उन्नैस	बीस	इकईस	बाइस	तेईस			

अंत—गुरु—जितने रुपये सेर जिन्स आती हो उतने ही आने की एक छटाक आवेगी ॥ प्रश्न ॥ ५॥) सेर हींग विकती है तो बताओ की ढाई छटाक के क्या दाम होंगे ॥ गुरु के अनुसार १ छटाक हींग के दाम ।˜)॥ हुये इस लिये आधी छटाक हींग के दाम ≈) । हुये इस लिये ढाई छटाक हींग के दाम ॥।˜)॥। हुये ॥

गुरु—जै रुपये गज उतने ही आने का एक गिरह होता है । प्रश्न—३॥) रुपये गज बनात विकती है तो बताओ ५॥। गज २ गिरह बनात के क्या दाम हुये ॥ पांच हूंठा १७॥) तो पांच गज बनात के दाम हुये तीन पौना २।) और ८ पौने ६ आने पौन गज बनात के दाम हुये । गुरु के अनुसार एक गिरह के दाम ≡)॥ और दो गिरह के ।≡) याने कुल दाम ५।.।) गज के और २ गिरह के २०॥˜) हुये । इति श्री गणित प्रकास प्रथम भाग संपूर्ण लिखा छेदी लाल दर्जा ५ स्कूल मारहटा जिला ऐटा संवत् १९१० वि०

विषय—गणित ।

संख्या ३१६ बी. गणित प्रकाश दूसरा भाग, रचयिता—श्रीलाल पंडित (प्रयाग), पत्र—८०, आकार—८ X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—९७२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१८५६ ई०, लिपिकाल—१८६० ई०, प्राप्तिस्थान—रामदयाल पटवारी, ग्राम—गूदरपुर, डाकघर—बिलराम, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ गणित प्रकाश दूसरा भाग लिख्यते ॥ गणित के उपयोगी चिन्ह + यह चिन्ह जोड़ने का है जिन संख्याओं के बीच में यह चिन्ह होता है उनका जोग जानते हैं । जैसा ४+५ लिखने से जाना जाता है कि ४ और ५ का जोग करना है और इसी चिन्ह को धन चिन्ह भी कहते हैं ।

— यह चिन्ह जिस संख्या के बाई ओर हो वह संख्या बाई ओर वाली संख्या में घटानी चाहिये जैसे ५-३ अर्थ यह है कि ५ में ३ घटाने हैं इस चिन्ह को रिण चिन्ह भी कहते हैं ।

X यह गुणन का चिन्ह है जिन संख्याओं के बीच में यह चिन्ह होता है उनका घात जानते हैं जैसे ३ X ४ इसका अर्थ यह है कि ३ से ४ को गुणा करके गुणन फल जानना ॥

÷ यह भाग देने का चिन्ह है इस चिन्ह के बाई ओर भाज्य और दाहिनी ओर भाजक होता है जैसे ८÷२ इसका यह अर्थ है कि ८ में २ का भाग देना ॥

= यह तुल्य का चिन्ह है जिन दो राशों के बीच में ऐसा चिन्ह देखो उन्हें तुल्य जानौ जैसे २+३ = ५ वा ७–४ = ३ वा ४ X ३ = १२ वा १२ ÷ ३ = ४

:, ::, : ये अनुपात का चिन्ह हैं अनुपात में चार रासें होती हैं। उनके बीच में ये चिन्ह होते हैं जैसे ५ : १० :: ३ : ६ इसका यह अर्थ है कि पहिली राशि से जितने गुनी दूसरी राशि है उतने गुनी ही तीसरी से चौथी राशि है ॥

√ यह चिन्ह मूल का है जैसे ²√२५२५ वा √२५ से, २५ का वर्गमूल जानो ³√२७ से २७ का घन मूल जानो ॥

अंत—५२६ का घनमूल यौं लिखकर निकालते हैं—५२६·८ ०००·० ०००·७ ०००·२ ०००·६ ०२०·२ और शेष क्रिया जो कि पूर्णांक घन मूल में ब्यौरे वार लिख दी है यहां नहीं लिखी और विन्दुओं के बनाने की रीति के प्रगट करने के लिये इतना लिख दिया है इससे जाना गया कि ५२६ का घनमूल = ८·०७२२६२ और जानो कि जिस दसा में घनमूल पूरा न निकले और सदा सेस रहे तो दसमलव विन्दु के पीछे घन मूल के ६ स्थान निकाल के शेष को छोड़ दो और लब्ध को आसन्न घन मूल समझो ॥

॥ प्रश्न ॥

१.	२ का घन मूल	=	उत्तर	—	१·२५९९२१
२.	३२१४ ,, ,,	=	,,	—	१४·७५७५८
३.	२५ ,, ,,	=	,,	—	२·९२४१८
४.	५२८ ,, ,,	=	,,	—	८ ०८२४८०
५.	५५० ,, ,,	=	,,	—	८·१९३२१२
६.	६०१ ,, ,,	=	,,	—	८·४३९००९
७.	९५९ ,, ,,	=	,,	—	९·८३०४७५
८.	८७६ ,, ,,	=	,,	—	९·५६८२९७
९.	९०० ,, ,,	=	,,	—	९·६५४८९३
१०.	२३ ,, ,,	=	,,	—	२·८४३८६७

लिखा वेनी राम विद्यार्थी दर्जा ४ पाठ साला कादर गंज जिला एटा सन् १८६० ई०

विषय—गणित में त्रैराशिक दशमलव, आवर्त दशमलव, वर्ग-मूल, घन-मूल, आदि लिखे हैं

संख्या ३१६ सी. गणित प्रकाश तीसरा भाग, रचयिता—श्रीलाल पंडित, पत्र—६०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९७८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९११ = १८४४ ई०, लिपिकाल—सं० १९१३ = १८५६ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला रामदयाल, ग्राम—बाजनगर, डाकघर—नौखेड़ा, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ गणित प्रकाश तीसरा भाग लिखते ॥ ब्यौहारिक हिसाब लिख्यते ॥ जहां त्रैरासिक की गणित में एक की संख्या हर हो उसकी रीत लिखते

हैं वहुधा व्यौपारी लोगों को इस गणित का प्रयोजन पड़ता है उस रीति से एक वस्तु व एक प्रमाण का मोल जानकर कई एक पदार्थ वा प्रमाणों का मोल जान लेते हैं। इस गणित की कई रीतैं हैं उन सबौं में यह स्मरण रखना उचित है कि किसी राशि की निस्सेष अपवर्तन संख्या उसे कहते हैं जिसे कई वेर जोड़े वा किसी संख्या से गुणा करैं तो वही राशि पूरी हो जाय जिसका वह आवर्तनांक है जैसा १ का अपवर्तनांक १/४ है इसे चार वेर जोड़ेगे वा चार से गुणा करैंगे तो एक पूरा हो जायगा अथवा ६ का २ अपवर्तनांक है उसे तीन वेर जोड़ो वा तीन से गुण करो तो पूरे छ हो जायंगे ऐसे सरवत्र जानौः—

आनौं के निस्सेष भाग		रुपये के निस्सेष भाग	
पाई ६ = १/२	पाई २ = १/६	आना ८ = १/२	आना २ पाई ८ = १/६
,, ४ = १/३	,, ११/२ = १/८	आ० ५ पा० ४ = १/३	आना १ पा० ४ = १/१२
,, ३ = १/४	,, १ = १/१२	आ० ४ = १/४	आना १ = १/१६
		आना २ = १/८	

अंत—एक के पास ५०० सेर की वस्तु ॥।–) ४ सेर की है उसमें तीन तरह की वस्तु के कुछ कुछ भाग मिला चाहता है और उन वस्तुओं में एक का भाव ॥।)६ सेर दूसरी का ||।≡)४ सेर तीसरी का १।)६ सेर और उन्हैं मिलाकर १) ६ सेर बेचना चाहता है तो कहो उनमें से कितना भाग मिलना चाहिये ॥ उत्तर में ॥।)६—ʃ५०० सेर
,, ॥।≡) ४—ʃ५०० सेर
,, १। ६—ʃ१०४१ २/३ सेर

इस गणित में केवल एक ही पदार्थ का भाव नियत होता है पर अधिक पदार्थों के भाग भी नियत हों तो इसी प्रकार गणित हो सकता है यथा पहिले इस रीति से दूसरे नियत भाग वाले को भी ठहरा कर गणित करो ॥ इति श्री गणित प्रकाश तृतीय भागः ॥ संपूर्ण समाप्तः पं श्रीलाल कृत लिखा वैंनी राम विद्यार्थी दर्जा ३ पाठ शाला कपूर पू ॥ संवत १९१३ वि०

विषय—गणित ॥

संख्या ३१६ डी. महाजनीसार दीपिका, रचयिता—श्रीलाल पंडित, पत्र—१२, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९१३ = १८५६ ई०, लिपिकाल—सं० १९२० = १८६३ ई०, प्राप्तिस्थान—चौधरी रायकिशन, ग्राम—माली खेड़ा, डाकघर—फरौली, जिला—एटा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ महाजनी सारदीपिका लिख्यते ॥ साहूकारौं के लेन देन का लिखना पढ़ना वहुधा महजनी अक्षरौं में होता है और उन अक्षरौं के साथ लिखने में मात्रा नहीं लगाई जाती इस कारण उस लिखावट को पढ़ प्रयोजन समझना केवल देव नागरी पढ़े लोगौ को कठिन पड़ता है और वे लोग इस बात का भी संकोच करते हैं कि हम पं० हो ऐसी वात सिखने के लिये किस के पास जायं पर जब कभी महाजनी की

चिट्ठी पत्री पढ़ने का काम पड़ता है तब उस कागज को ऊपर नीचे देख विन पढ़े फेर मनमें लज्जा पाते हैं और मनमें कहते हैं कि लिखने पढ़ने का अभ्यास किया चाहेगा वह महाजनों के कार्य लिखने पढ़ने की रीत जान लेगा और किसी के पास पढ़ने को भी न जाना पड़ेगा। महजनी सार पुस्तक और महाजनी सार दीपिका दोनों पुस्तकें एक ही सी हैं। साहूकारों की वही के नाम। १. चिट्ठी वही २. नकल वही ३. रोकड़ वही ४. कच्चा खाता ५. रुज नामा ६. पक्का खाता ७. लेखा वही ॥

अंत—

लेखा वही

लेखा लखमी चन्द रामरतन फरक्काबाद वाले तुमारी वदखाते पन्ने २

११००) जोड़ जमा का
४॥≡)॥ ब्याज देना पड़ा पूस सुदी ५
२३ रु० ७००) १
१००० रु० ४००) २॥)
९७६॥।)
४॥।≈) ब्याज दर ॥)
≈)॥ छूट गई
४॥≡)॥
११०४॥≡)॥
४०२) वाकी देने पोस सुदी ५
संवत १९०३ तैं
जमा खरच को नकल पन्ने ४

७००) जोड़ जमा का
७००)
२।≡)॥ कसर लेखे की
पूस सुदी ५ तैं
१ ≈) आढ़त रुपया
११०४॥≡)॥
दर ≈) सैकड़ा
≡)॥ सकराई रु० ७००)
दर –)॥
।≡) चौधरी को रुपया
७००) दर –)॥
≈)॥। परखाई रु० ११००)
दर)।
॥)। चिट्ठी खेरीजी
२॥≡)॥
७०२॥≡)॥
४०२) वाकी देने पूस सुदी ५ तै
११०४॥≡)॥

विषय—महाजनी वही खाते आदि का बोध।

टिप्पणी—जो कुछ महाजनी सार में लिखा है वही महाजनी सार दीपिका में लिखा है।

संख्या ३१६ ई. महाजनीसार दीपिका, रचयिता—श्रीलाल पंडित, पत्र—२०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५७०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०३ = १८४६ ई०, लिपिकाल—सं०

१९०३ = १८४६ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला मनसुख राय, ग्राम—बैरगिया, डाकघर—पाली, जिला—हरदोई ।

आदि—साहूकारों के वही खातों के नाम, चिट्ठी वही, नकल वही, रोकड़ वही, कच्चा खाता, रुजनामा, पक्का खाता लेखा वही— चिट्ठी वही—

मिती आसोज सुदी ५ संवत १९०३ चिट्ठी आढ़तिये की आई

चिट्ठी एक लखमी चन्द राम रतन की फरक्का वाद की आई मिती आसोज सुदी ३

नकल ३। ११००) हुन्डी एक मानक चन्द पन्नालाल ऊपर आसोज सुदी ३ दिन १७ पीछे

चिट्ठी एक मथुरा जी की लिखी देवी सनमुख जहाना की आई चिट्ठी लिखी कातिक सुदी २

२५०) हुन्डी १ जेपुर की तुमारी वद वेच की आई

अंत—कच्चा खाता माघौ राम वसंत राम की दुकान का ॥ संवत १९०३ आसोज सुदी पंचमी विसपत वार लेखा मानक चन्द पन्नालाल का—

११००) रोकड़ पन्ना १ कातिक वदी ५	११००) नकल पन्ने ३ मिती कातिक वदी ५
२०००) रोकड़ १ कातिक बदी ११	२०००) नकल ३ कातिक वदी ११
३१००)	३१००)

लेखा दुलीचन्द जमुनादास का

७००) नकल ३ कातिक वदी ४	७००) रोकड़ १ कातिक वदी ४
७००)	७००)

लेखा संतोपराम रुपचंद का

१०८२॥-) न० ३ कातिक वदी ६	१०८२॥-) रो० १ कातिक वदी ६
१०८२॥-)	१०८२॥-)

विपय—बही खाते व महाजनी लेखा की रीति ।

संख्या ३१७. हिम्मत प्रकाश, रचयिता—श्रीपत भट्ट, पत्र—१५८, आकार—७ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७७७३/४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९८ = १८४१ ई०, प्राप्तिस्थान—अध्यापक रामप्रसाद जी, ग्राम—कोटला, डाकघर—कोटला, जिला—आगरा ।

आदि—खारो खारो चर परौ तीखो दाहक अन्न । क्रोध दाह लंघन शरद पित्त करत उत्पन्न । मीठो खारो लौन है हिम भारी दिन को शयन । अल्प चीकनो मधु समय काहे को वैन ।............। जो उपजावै को रोग को सो निदान है जानि होनहार होवै कहै आदि रूप सो मानि सो सामान्य विशेष पुनि द्व प्रकार कर लेख रोग जात पहिले कहो पूजै दोष विशेष । कहौं जु पर्व व्याधि के ते लक्षन हैं सव उपजै सुखकारी......औषध पुत्र अनूप । दोषन की कर्त्तव्यता सकल व्याधि उत्पत्ति । आगत सो वर्णत सुमति पांच अंत कर सत्य । संख्या विकल्प और सुनि पर धानक वलकाल संख्या तो जुर आठ जे वर्णत बुद्धि विशाल असं अर्स कर कल्पना वातादिक की जानि सो विकल्प प्रधानता मुख्य सेग को मानि ।

कारण पूर्व रूप पुनि सप्र सकल जुत रोग सबल भिषक तासों कहैं अबल अलपत्रिपरोग । निसि दिन भोजन वैस ऋतु अन्त मध्य पुनि आदि । वात पित्त कफ व्याधि को काल कहत चक्रादि ।

अंत—तीनि चारि मग देखिये और बर्छि सम तूल । जाग्र असाध्य विचारिये जतन न कीजै भूप । एक बूंद भर तैल की डाल मूत्रि में पेखि, व्रद २ ह्वै वह जात जब तहां प्रित को देख । सोरठा । देखे नैन निहार बूंद तैल की सूत्र में । ताके आठ प्रकार न्यारे जाके नाम हैं । दोहा । पूरब पश्चिम देखिके उत्तर दिशि को जाये ताको नीको जानिये करिये तभी उपाय । आग्नेय दक्षिण नैऋत्य और वायव्य है नाम ईसान पांचो ही जोइपे जम सो तासो काम । तिल को तैल जू डारिये फैले अनी निहार बूंद एक जो देखिये ताहि असाध्य विचार । इति श्रीयुत भट्ट विरचिते भवि प्रकाशे सर्व रोग निदान रुप लक्षण समाप्तम । सम्वत् १८९८ ज्येष्ठ सुदी नौमी, शनिवार लिखी गिरधारी वारी विधिकर श्री महाराज श्री सुमेरु सिंह को पठनार्थं गिरधारी वारी वासी कोटला श्रीराम जी सदा सहाय । श्री गंगाजी सहाय श्री बलदेव जी सहाय । जो वांचै तिनको राम राम ।

विषय—ज्वर निदान, सब प्रकार के ज्वर-निदान, ज्वर के उपद्रव, अतिसार का निदान, संग्रहणी निदान, अर्श, अजीर्ण सर्व प्रकार, कृमि रोग, पाण्डु रोग, कष्मला, राज यक्ष्मा, यक्ष्मा, श्वास, कास, हिक्का, स्वर भंग, क्षरद रोग, तृपा मूर्छा, उन्माद रोग, अपस्मार, अवतानक, वात रोग गृध्रसी आदि, वातरक्त, आमवात, सूल, उदावर्त, गुलारोग, हृदरोग, मूत्र कृच्छ, मूत्राघात, अश्मरी प्रमेह, मेद, उरुरोग, सोज, अंड, गलगंड, अर्बुद रोग, श्लीपद, विद्रधि, आम अपक्व निदान, व्रण निदान, भगंदर रोग, उपदंश, कुष्ठ, अम्ल पित्त, मुख, दन्त, जिह्वा, तालु, गल, कर्ण, नासा, प्रति श्याय, नेत्र, सिर, प्रदर, गर्भपात, सूतिका, स्तन रोग, बालक रोग, वृष्य, मूत्र परीक्षा आदि का क्रमशः विस्तृत निदान किया है ।

संख्या ३१८ ए. ध्रुवलीला, रचयिता—सुंदर ब्राह्मण (करहला, मथुरा), पत्र—४८, आकार—६ X ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—४३२, पूर्ण, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९०१ = १८४४ ई०, लिपिकाल—सं० १९१८ = १८६१ ई०, प्राप्तिस्थान—शालिग्राम चौबे, ग्राम—मुन्नागढ़ी, डाकघर—दादोन, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ ध्रुवलीला सुन्दर वैद्यकृत लिख्यते ॥ दोहा ॥ श्री सारद को सुमिरि के सुमिरूं श्री भगवान । सकल सिद्धिदायक सदा विघ्न विनासन जान ॥ कवित्त ॥ द्रुपदसुता की देखौ टेर केती दूर सुनी मेरी वेर कान्हा सो काम ना करी है ॥ भारत में भारी भीर भारई पैं परी महा सोर डारो गज घंट पीर सो हरी है ॥ वेई तुम कान्ह मेरी कान क्यों ना सुनो कान जाम मान काहे कूं सो चुपकी सरी है ॥ सुन्दर सो वैद्य प्रभू और को जहान बीज जो पै आप ईश तो हमारी सुधधारी है ॥ सो० ॥ यह संसै मन माहिं दो मैं से झूठी कवन । कि मैं ही विश्व में नाहिं विश्वंभर नामहिं हरी ॥ लीला

प्रारंभ ॥ सुनिये सखि हमारी ॥ टेक ॥ तुमया पुर में हरिभक्त जन्म ले ध्रुव कहि नाम उचारी ॥ मौसी देय तापनो ताको सुनि वन गमन सिधारी ॥ लाख कहौ कोई एक न मानैं हरि पद रति सो ठानी ॥ बालक निपट वर्ष पांचहि को तीन लोक तेहि जानी । करै तपस्या श्री मथुरा में कृष्ण ध्यान शुभ कारी ॥ सुन्दर दर्श देय प्रभुजन को भक्तन के हित कारी ॥

अंत—दो०—अंतर गति की जानके चतुर्भुजी किय रूप । सकल नम्र दर्शन कियो ध्रुव प्रताप जग भूप ॥ सो० कर गहि बोले श्याम अरे पुत्र पुनि कहँ चल्यो । भक्त वसल मो नाम भक्त मोपे न्यारो नहीं ॥ चौ० ॥ तुम उत्तान पाद सुख दाई । पर्‍यौ विष्णु के चरणन धाई ॥ रानिन सहित दई तिन फेरी । कहत धन्य प्रभु महिमा तेरी ॥ मोसम धन्य जगत नहिं कोई । सुर नर मुनि किन्नर किन होई ॥ अस कहि भूप चरण दोई धोये । जन्म जन्म के पातक खोये ॥ अवधपुरी के नर अरु नारी । दर्शन करत मगन मन भारी ॥ प्रभु अंतर जामी भगवाना । सकल विथी पूजे विधि पाना ॥ दै असीस प्रभु धाम पधारे । भक्त जनन के कारज सारे ॥ ये लीला जो सुनै सुनावै । निश्चै अंत मुक्ति नर पावै ॥ चारि पदारथ सुलभ सु होई । दृढ़ धरि पाठ करै जो कोई ॥ सुन्दर वैश्य विप्र तन पाई । ग्राम करहला बास सुहाई ॥ हरि भक्तन के दास को दासा । महा दीन हरि सेवक खासा ॥ मथुरा से सात कोस छातई । परगना थाना सोहार कहई ॥ संवत उनइस सै अरु एक । महिना भादौं कृष्ण विवेक ॥ तिथि है तीज कहौं मैं गाई । सुन्दर ध्रुव लीला रचिपाई ॥ इति श्री ध्रुवलीला संपूर्ण समाप्तः संवत १९१८ वि० ॥

विषय—ध्रुव लीला ।

संख्या ३१८ बी. हरिश्चंद्र लीला, रचयिता—सुंदरलाल (करहला, मथुरा), पत्र—३६, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा शिवलाल, ग्राम -भीषमपुरा, डाकघर—सासनी, जिला—अलीगढ़ ।

श्री गणेशाय नमः अथ हरिश्चन्द्र लीला लिख्यते ॥ दोहा ॥ सिव सुत चरण मनाय के धरि सरस्वति को ध्यान । हरि भक्तन सिर नाइ के लीला रचू सुज्ञान ॥ प्रथम सुमर श्री शार्दा धरूं कृष्ण को ध्यान ॥ हरिश्चन्द लीला रचूं सुन्दर कहत वखान ॥ सोरठा ॥ पुरी अजोध्या बास नृपति वसे हरिचन्द एक । नीत निपुण हरिदास सुन्दर सत वादी महा ॥ चौपाई ॥ नृपति पुनीत जग्य नित कर ही । हरि चरणार बिन्द उर धरही ॥ बेद वेदान्त सार नहि लीना । हरि जन भक्ति ज्ञान उर चीन्हा ॥ तासु पुत्र रोतास पियारो । अति धर्मज्ञ सील महा भारो ॥ तारा नाम नृपति की नारी । पति व्रत धर्म की पालन हारी ॥ सुन्दर जज्ञ अनेक कराये । पिछली मख यह अतिसुख दाये ॥ नारद जी का आना ॥ नारद जी आवत भये भूप यज्ञ के मांहि । देषत नृप ठाढ़ो भयो हाथ जोड़ शिर नाय ॥ सो० ॥ धन्य धन्य महराज आज कृतारथ मैं भयो ॥ बोले द्विज महराज चिरंजीव रहो भूप तुम ॥

अंत—धन्य जगत जननी वा नर की । करत भक्ति ऐसी द्रढ़ हर की ॥ और कौन या जग के मांहीं। विना विश्नु भव को सुख दाई ॥ भक्त वसल दीनन के नाथा । सदा भक्त सिर राखत हाथा ॥ जोगी जन जप तप जिहि ध्यावैं । शंभु रटत अज ध्यान न आवैं ॥ सो प्रभु प्रेम बिबस भगवाना । भक्त अधीन वेद मुख गाना ॥ जे नर तन शुभ जग तहिं माहीं । जपत न विश्नु नाम सुखदाई ॥ तिनको स्वांन समान निहारी । सकल गुनी जन देऊ विसारी ॥ हरि विमुखन संगति जो करिहै । निश्चै तेउ नर्क विच परिहैं ॥ बृज भीतर शुभ ग्राम भड़ो ई । मना मन सुखा कह सब कोई ॥ पास कहरला ग्राम सुहाई । जाको जस मुनि देवन गाई ॥ सुन्दर वैद्य विप्र तन पायो । नग्र करहला वास सुहायो ॥ सब गुन जन कवि जन को चेरो । छमियो प्रभु अपराधहिं मेरो ॥ मैं अजान बालक अज्ञानी । सकल दोष छमियो जन जानी ॥ भक्ति चरित्र यथा मति गायो । सकल जन्म को अघहिं नसायों ॥ सीखै सुनै जो यह हरि लीला । मिलै भक्ति अति सुभग शुशीला ॥ चारि पदारथ सुलभ जो पावै द्दढ़ करि पाठ जो नर कोई गावे ॥ मैं तो पतित कृष्ण को दासा । महा दीन हरि भक्त हुलासा ॥ इति श्री हरिश्चन्द लीला सुंदर वैद्य कृत संपूर्ण समाप्तः लिखतं राम अधार पांड़े हाथरस निवासी माघ मास शुक्ल पक्ष त्रयोदसी संवत् १९३२ वि०

विषय—हरिश्चंद्र लीला ।

संख्या ३१८ सी. ऊषा लीला, रचयिता—सुंदरलाल (करहला, मथुरा), पत्र—४०, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—७०२, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९४० = १८८७ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० विष्णु भरोसे, ग्राम—भद्रपुर, डाकघर—बेहटा गोकुल, जिला—हरदोई ।

आदि—श्रीगणेशायनमः ॥ अथ ऊषा लीला लिष्यते ॥ श्री गुरु चरण नवाय के धरूं सरस्वती ध्यान । ऊषा की लीला रचूं जो शुक कही बखान ॥ —रेखता आडो—बाना सुर पूजत त्रिपुरारी ॥ धूप दीप नैवेद्य आरती हाथ जोर चरनन सिर नायो । नैन मूंद कर ध्यान हृदय विच हर हर शब्द रटत सुख पायो ॥ पुलकित रोम रोम तन गद्गद दीन दीन करि अस्तुति गाई ॥ जै कृपाल अघ हरौ भक्त के तुम विन और न कोई सहाई ॥ अपनौ जान अभय प्रभु कीजै तुम समान दूजो नहि कोई । ह्वै प्रसन्न तांडव नृत कीन्हौं मन भायो हरि वर दीयो सोई ॥ अंग भभूत भुजंग अभूषन सीस चन्द्रमा अति छवि छायो ॥ सुन्दर मेरे भोलानाथ को आक धतूरे को भोग लगायो ॥ ह्वै प्रसन्न संभू कह्यो दिये सहस्र भुज तोय । तीन लोक चौदह भुवन तोसों वली न कोय ॥

अंत—घर घर भये अनंद वधाये, अनिरुध कुवँर व्याहि घर आये । कवि जन दोष गनो जन मोरा, वुद्धि हीन तुमरो जन छोरा ॥ भूल चूक देषौ चित माही, जो न सम्हारौ राम दुहाई ॥ ग्राम करहला पास मड़ोई, कोई दिन आय दर्श प्रभु दोई ॥ क्वार मास मासन के माई, महा उत्तम तिथि पूनौ गाई । होत रास लीला सुखदाई, देशान्तर दुनियां जाय छाई ॥ श्री महा प्रभू के दर्शन करिये, व्यर्थ तनै उत्तम नेक करिये ॥ ऐसो रास होत ये नाथा, अंतर दूसर नैन चहाता ॥ सुंदर विरजी नाम हम पूंछो निश्चय आय । दास चाकरी

जो कहौ, सो करि है वस पाय ॥ – सवैया – मौजा जो करहल, थाना सो सहार जाको परगना वो छातई जो सामने बराई है ॥ मथुरा इलाका वेद भाषहिं ताका जस तीनों लोक जाका वञ्यो सुखदाई है ॥ सुन्दर कहत धन्य मथुरा आदि बार बार जाकी प्रभू कीन्ह जो बड़ाई है ॥ इति श्री ऊषा लीला सम्पूर्ण समाप्तः संवत १९४० चैत्र सुदी पंचमी ॥

विषय—ऊषा-अनिरुद्ध विवाह वर्णन ।

संख्या ३१९ ए. सूरसागर, रचयिता—सूरदास (रुनकता), कागज—देशी, पत्र—३१८, आकार—१० × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८६७, रूप—अच्छा, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३१ = १७७४ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री अद्वैत चरण गोस्वामी, स्थान—घेरा श्री राधारमण, वृंदावन, डाकघर—वृंदावन, जिला—मथुरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । अथ सूरसागर लिष्यते । विस्मय पद । राग विलावल । चरन कमल वंदौ हरि राई । जाकी कृपा पंग गिरि लंघै आंधे को सब कुछ दरसाइ । बहरा सुनै गुंग पुनि बौलै रंक चलै सिर छत्र धराई । सूरदास स्वामी करुनामैं बार २ बंदौं तिहि पाई । राग कान्हरा । अवगति गति कछु कहत न आवै । ज्यों गूंगा मीठे रस कौ फल अंतरगत ही भावै । परम स्वास सब सौं निरंतर अमित पोप उपजावै । मनमाने को अगम अगोचर, सो जानै सो पावै । राग कान्हरा । वासदेव की बड़ी बड़ाई जगत पिया जगदीस जगत गुर अपनै जन की सहत ठिठाई । भृग को चरन आनि उर अंतर बोले वचन सन्दल सुषदाई । शिव विरंचि मारनि को धाए यह मत काहु देव न पाई । विन वदल उपगार करत है स्वारथ विना करत मित्राई । रावन अरि को अनुज भभीषन ताको मिलें भरथ की नाई । वकी कपट करि मारन आई । सो हरि जी वैकुंठ पठाई । विन दीनै हूं देत सूर कहि अैसे हैं जदुनाथ गुसाईं । राग धनासरी । करनी करुना सिंध की मुख कहत न आवे । कपट रहेत पर सैन की जननी गति पावै । वेद उपनपद जास क्यौं निरगुनह वतावै । सोई सुगुन ह्वै नंद के दांवरी वधावै । उग्रसैन की आपदा सुनि २ विलपावै ।

अंत—राग सारंग । अैसे और कौन पहिचानै । सुनि सुंदरि हरि दीन वंध विनु कौन मित्रई मानै । हौं अति कुटिल कुचील कुदरसन के जदुनाथ गुंसाई । तप उइ अंक भरि माधौ उठि अर्जुन की नाई । लै पंजक बैठारि परम रुचि निजकर चरन पषारे । पूरव कथा सुनाइ कसकरि सब संकोच निवारे । लए छिनायू चरिते तंदुल करतै लै मुंह···अवहु काकरी सूरज प्रभु गुर भट्ट हव से अकेले । १८६७ । पद अठारह सै सत सठि मए । संवत १८३१ फाल्गुन मासे शुक्ल पक्षे नवम्याँ रवि वासरै । लेखक तिवारी भोपति राम जी । लिखा फरक्काबाद मध्य ।

विषय—कृष्ण चरित्र वर्णन ।

संख्या ३१९ बी. सूरसागर, रचयिता—सूरसागर, पत्र—१४३, आकार—९ X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१९६, रूप—प्राचीन, लिपि—

नागरी, लिपिकाल—सं० १७९७ = १७४० ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० नैनसिंह, ग्राम—हरिपुर, डाकघर—माधोगंज, जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशाय नमः लिष्यते सूरसागर की पोथी ॥ राग धनाश्री ॥ हरि मुख देखिये वसुदेव। कोटि काम सरुप सुन्दर कोऊ न जानत भेउ ॥ चारि भुज जाके चारि आयुध दखिये निर्खाय। अजौ लग परतीत नाहीं नन्द घरनी जाई ॥ जड़े तारे पहरू पौढ़े नीद उपजी गेह। निसि अंधियारी वीजुरी सघन वरषै मेह ॥ स्वान सूते पहरू बैठे खुले धर्म दुआर। वंदी वेरी सबै काटी भये जै जै कारे ॥ सिंघ आगे सिंघ पाछे नदी भई भर पूर। नासिका लौं नीर आयो पार पह्यो दर ॥ गोद तेहिं कार वीनी जमुन जान्यो भेव ॥ वोलि कै हरि चरन परसे तरि गये वसुदेव ॥ सखी मंगलचार गावैं नंद घर आनंद ॥ सूर दास विलास व्रज हित प्रगट आनन्द कंद ॥

अंत—राग धनाश्री ॥ है मैं एकौ तौ न भई ॥ ना हरि भजन न ग्रह पायो सुख वृथा विहाइ गई ॥ ठानी तो कछु औरहिं मनमें औरे आनि ठई। अवगति गति कछु समझ परै नहिं जो कछु करत नई ॥ होत कहा अवके समझाये योहीं सब वितई। सूरदास नहिं भज्यौ कृपानिधि जो सुख सकल भई ॥ राग मलार ॥ गरब गोपालहिं भावत नाहीं ॥ कैसी करी हिरन कुस को हरि रती न राख्यो रावन माहीं ॥ जग जानी करतूत कंस की नरकासुर नास्यो वलवाही ॥ बरुन विरंचि सक्र शिव मनसा उनके मन अवगाही ॥ जोबन रुप राज धन धरती ये सव हैं जलधर की छाहीं ॥ सूरदास हरि भजे न जे नर ते अंतक पुर जाहीं ॥ ॥ राग जैत श्री ॥ हरिजू मोते और न पापी ॥ हों घातिक जो कुटिल चवाई कपटी महा क्रोध संतापी ॥ लम्पट धूत छूत दमरी को वाम कुजाय सुदा को जापी ॥ काम लुब्ध कामिनि के संग यह माला के उर मह संतापी ॥ अभप भष्यो अरु अपै पान करि करत लालसा धापी ॥ मन वच कर्म दुष्ट सवसों अति कटुक वचन आलापी ॥ इति समापति ॥ संवत १७९७ लिखी वद्रीदास कायस्थ साकिन अकबर पुर साहि पुर लिखी लाला सुवासिंह कायस्थ साकिन काशीपुर के हेत यथा प्रति तथा लिष्यते मम दोष न दीयते वांचै सुनै तिहि राम राम यथोचित राम श्री राम राम

विषय—श्रीकृष्ण चरित्र वर्णन।

संख्या ३१९ सी. सूररत्न, रचयिता—सूरदास, पत्र—१४४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७४ = १८१७ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० बालकृष्ण, ग्राम—अर्जुनपुर, डाकघर—पटियाली, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ सूर रतन सूरदास कृत लिख्यते ॥ राग केदारा ॥ बरनौ वाल भेप मुरारि ॥ थकित जित तित अमर मुनिजन नन्द लाल निहारि ॥ केस सिर विनु विपिन हरि के छिरकि चहुँ दिसि छारि ॥ सीस पर धरि जटा जनु सिसु रूप किय त्रिपुरारि। सदन रज तन स्याम सोभित सुभग इहि उन्ह हारि ॥ मनहुं अंग विभूति भ्राजित सिंधु सो मधु मारि। तिलक ललित ललाट केसरि विन्दु सोभा कारि ॥ क्रोध

अरुन तृतीय लोचन रह्यो रिपु तन जारि ॥ कंठ स्वाजित नील मनि मय माल रची समारि ॥ नील गिर वल गरल मानो लीलियो मदनारि। कुटिल हरि नष हृदै हरि के निरषि हरिषिल नारि ॥ ईस जनु रजनीस राख्यो सीस तेजु उतारि। त्रिदसपति पति जस मती सौं असन कौ करै आरि ॥ सूर दास विरंचि जाको जपत जस मुख चारि। वरनौ वाल भेष मुरारि ॥ १ ॥

अंत—रागनट नारायनी ॥ रे मन तिपटि निलज अति नीति। जियत की कहौं कौंन चालै विषत मरत पनि प्रीति ॥ स्वान कुंविज सुखंज कानौ श्रवन पुंछ विहीन। भगन भाजन कंठ क्रिम सिर स्वाननी आधीन ॥ निकट निधन कों लिये आयुध करत तीछन धार अजा नाइक मगन क्रीड़ै तदपि वारं बार ॥ पिणक महि इह पेह देही दृष्ट देखत लोग। सूर हरि ते विमुष जेनर सती के से भोग ॥ १ ॥ राग सोरठ ॥ अजौं तू सावधान क्यौं न होही ॥ माया विमुख भुअंगनि को विषु उतऱ्यो नाहिन तोहीं ॥ राम नाम सों मंत्र संजीवन जिन जग मरता जियायो। वार वार सोई श्रवन निकट होई गुरुगा रुधू तायो ॥ जागै महा मैड विहवल वैराग कीत कै गायो। सूर मिटै अज्ञान मूरछा ग्यान मूर के खाये ॥ २ ॥ राग विलावल ॥ करनी करुना सिन्धु की कहत बनि आवै ॥ कपट हेत पर सैव की जननी गति पावै ॥ वेद उपनिषद जसु कहैं निर गुनहिं वतावैं ॥ सोई सगुन होइ नंद कै दांवरी वंधावै ॥ उग्रसेन की दीनता सुनि कै दुख पावै ॥ कंस मारि राजा कियो आपुन सिर नावै ॥ असमय वन गवमे तपासी श्री पड़रावै ॥ नये वत्स हितु धेनु ज्यौं सुमिरत उठि धावै ॥ जरासिन्धु की बंदि कटी नृप कुल जस गावै ॥ सोक समुद्र तैं उद्धरैं पंडव ग्रह आवै ॥ कलिजुग नामा प्रगट है जाकी छनि छवावै ॥ वहुत दोष गनि सूर के ताते गहर लगावै ॥ इति श्री सूरदास कृत सूर रतन ग्रन्थ संपूर्ण मिती अगहन सुदी १० संवत् १८७४ वि० ।

विषय—सूरदास कृत सूरसागर से चुने हुए पदों का संग्रह।

संख्या ३१९ डी. सूर सागर, रचयिता—सूरदास, पत्र—३३९, आकार—१०×६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९६३५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१७ = १८६० ई०, प्राप्तिस्थान—लाला जयतीप्रसाद, ग्राम—बलहुर, डाकघर—बलहुर, जिला—कानपुर।

आदि—श्रीगणेशायनमः ॥ श्री गौरीशंकरायनमः ॥ श्रीकृष्णायनमः अथ श्री भागवते दशम स्कन्धे सूर कृते सूर सागर लिख्यते ॥ दोहा ॥ व्यास कह्यो सुखदेव सों श्री भागवति वखान। द्वादश स्कंध परम सुभग प्रेम भक्ति की खान ॥ नव स्कंध नृप सों कहे श्री सुकदेव सुजान। सूर कहत अव दशम को धरि उर में हरि ध्यान ॥ — विलावल — हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ। हरि चरनारविन्द उर धरौं ॥ जय अरु विजय पारषद दोई, विप्र के श्राप असुर भय सोई। दुइ जन्मन ज्यों हरि उद्धारे, सो तो मैं तुमसों उच्चारे ॥ देत वक्र शिशु पाल जे भये, वासुदेवहू सौं पुनि हये। औरहु लीला वहु विस्तार, कीन्हों जीवन को निस्तार ॥ सो अव तुमसों सकल बखानि, प्रेम सुनि हिय में आनि ॥ जो यह कथा सुनै चितलाई, सो भव तरि वैकुन्ठै जाइ ॥ जैसे सुक नृप कौ समझायौ, सूरदास त्योही कहि गायो ॥

अंत—अथ जन्मेजय कथा वर्णनं ॥ राग विलावल ॥ हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ, हरि चरनार विन्द उर धरौ ॥ जन्मेजय जब पायो राज । एक बार निज सभा विराज ॥ विना बैर मन माहि विचार । विप्रन सौं यों कह्यौ उचारि ॥ मोको तुम अब जग्य करावहु । तक्षक कुटुम्ब समेत जरावहु ॥ विप्रन सप्त कुटी जब जारे । तब राजा तिनसों उच्चरे ॥ तक्षक कुल समेत तुम जारौ । कह्यौ इन्द्र निजु सरनि उवाऱ्यौ ॥ नृप कह्यौ इंद्र सहित तुम जारौ । विप्रनहुं यह मतो विचाऱ्यौ ॥ आस्तीक तिहि अवसर आयो । राजा सों यह वचन सुनायौ । कारन करन हार भगवान । तक्षक डसन हार मति जान ॥ विन हरि अज्ञा डुलै न पात । कौन सकै करि काहु निपात ॥ हरि ज्यौ चाहे त्योंही होय । नृप यामें संदेह न कोय ॥ नृप के मन यह निश्चय आयो । जग्य छांड़ि हरि पद चितु लायो ॥ सूत सौनकन कों समझायो । सूरदास त्योंहीं कहि गायौ ॥ इति श्री भागवते सूरदास कृते सूर सागरे द्वादस स्कंध समाप्तं शुभ मस्तु ॥ श्री गौरीशंकरायनमः ॥ फाल्गुन मासे शुक्ल पक्षे तृतीया गुरुवासरे संवत १९१७ सुमम् लिखितं मेडे लाल सराफ साह केवलराम सुत साह नेवाजन लाल के नाती श्री दयाराम साह के पंती वल हुर ग्राम के वासी चिरंजीव गौरी दत्त हेतु वै जो जान्यों सों लिखो कृपा करि सोधिवी ॥ श्री गौरीशंकरायनमः श्री राधावल्लभायनमः

विषय—श्रीकृष्ण चरित्र वर्णन ।

संख्या ३१९ ई. सूरसागर दशम स्कंध (पूर्वार्द्ध), रचयिता—सूरदास, पत्र—१६१, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४२, परिमाण (अनुष्टुप्)—५१०२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१७ = १८६० ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर ज्ञानसिंह, ग्राम—मडौली, डाकघर—कादिरगंज, जिला—एटा ।

आदि—श्री गणेशायनमः श्री संकरायनमः श्री कृष्णाय नमः अथ श्री भागवते दशम स्कन्धे सूर कृते सूर सागर पूर्वार्द्ध लिख्यते ॥ दोहा ॥ व्यास कह्यो सुकदेव सौं श्री भागवति वखानि । द्वादस स्कन्ध परम सुभग प्रेम भक्ति की खानि ॥ नव स्कंध नृप सों कहे श्री सुख देव सुजान । सूर कहत अब दसम को धरि उर में हरि ध्यान ॥ विलावल ॥ हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ । हरि चरनार विन्द उर धरौ ॥ जै अरु विजय पार पद दोई । विप्र के श्राप असुर भये सोई ॥ दुई जन्मन ज्यों हरि उद्धारे । सो तो मैं तुमसौं उच्चारे ॥ दंत वक्र शिशु पाल जो भयो । वासुदेव ह्वै सो पुनि हयो ॥ औरहु लीला हरि विस्तार । कीन्हौ जीवन को निस्तार ॥ सो अव तुमसों सकल वखानि । प्रेम सहित सुनि हिय में आनि ॥ जो यह कथा सुनै चित लाइ । सो भव तरि वैकुंठै जाइ ॥ जैसे सुक नृप कों समझायो । सूरदास त्यौंही कहि गायो ॥

अंत—कल्यान—रच्यो रास रंग स्याम सवहुन सुष दीन्हों ॥ मुरली धुनि करि प्रकास षग मृग सुनि रस अवास । जुवती तजि ग्रेह वास वनहिं गवन कीन्हौं ॥ मोहे सुर असुर नाम मुनि गन जन हिये जाग । शिव सारद नारदादि चकृत भये ज्ञानी ॥ गगन अमर अमर नारि आये लोकन विसारि । ओक ओक त्यागि कहत धन्य धन्य वानी ॥ थकित भयोगन समीर चन्द्रमा भयो अधीर । तारागन लजित भये मारग नहि पावैं ॥ उलटि जमुन

बहति धार विपरित सबही विचार। सूरज प्रभु संग नारि कौतुक उपजावै ॥ टोरी ॥ नन्द कुमार रास रस कीन्हौं। वृज तरुनिनि मिलि के सुख दीन्हौं अद्भुत कौतुक प्रगट दिखायौ कियो स्याम सव हुन मन भायो ॥ विचगोपी विच मिले गुपाला। मनि कंचन सोभित सुभ माला ॥ राधामोहन मध्य विराजै। त्रिभुवन की सोभा लखि लाजै ॥ रास रंग राख्यो अति भारी। हाव भाव नाना गति न्यारी ॥ नृत्तत अंग थकित भईं नागरि। रूप गुनन करि पर्म उजागरि ॥ उमगि स्याम स्यामा उर लाई। वारंवार कह्यौ श्रम पाई ॥ कंठ कंठ भुज भुज दोउ जोरे। घन दामिनि छूटत नहि छोरे ॥ सूर स्याम जुवतिन सुख दाई। जुवतिन के मन गर्व विठाई ॥ अथ श्री भागवते सूर कृते दसम स्कन्धे अन्तर ध्यान लीला वर्णनो नाम त्रिशेध्याय ३० ॥ लिखतं मेड़े लाल फाल्गुण मासे शुक्ल पक्षे तृतीया गुरु वासरे श्री संवत १९१७ सुभम् ॥

विषय—दृशम स्कन्ध भागवत का पूर्वार्द्ध ३० अध्याय तक।

संख्या ३१९ एफ. सूरसागर भागवत दशमस्कंध (उत्तरार्द्ध), रचयिता—सूरदास, पत्र—१७२, आकार—१२×८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४२, परिमाण (अनुष्टुप्)—५४१८, रूप—प्राचीन, लिपि – नागरी, लिपिकाल—सं० १९१७ = १८६० ई०, प्राप्ति-स्थान—ठा० ज्ञानसिंह, ग्राम—मड़ौली, डाकघर—कादिरगंज, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री संकराय नमः श्री कृष्णाय नमः अथ सूरसागर भागवत दसम स्कन्ध सूरदास कृत उत्तरार्द्ध लिष्यते ॥ हरि हरि हरि हरि समुरन करो। हरि चरनार विन्द उर धरो ॥ राग विलावल ॥ गर्व भयो वृजनारि को तवहीं हरि जानी। राधा प्यारी संग लै भये अंतर ध्यानी ॥ गोपिन हरि देख्यो नहीं तव सब अकुलाई। चकृति है पूछन लगी कहँ क गये कन्हाई ॥ कोऊ मरम जानैं नहीं ब्याकुल सव वाला। सूर स्याम ढूंढ़त फिरैं जित तित व्रज वाला विहाग—हुते कान्ह अवहीं संग। बन मैं मोहन मोहन कीन्हैं टेरैं ॥ ऐसे संग तजि दूरि भये क्यों समुझी हरि गोहनि घेरैं ॥ चूक मान लीन्हीं हम अपनी कैसेहु लाल वहुरि मुख हेरैं ॥ कैहति है तुम अंतर जामी पूरम कामी हौ सव केरे। ढूंढ़त द्रुम वेलि वनमाला भई वेहाल करत अव सेरैं ॥ सूरदास प्रभु तुम्हरी दासी वृथा करत हमको क्यौं झेरैं ॥धनासिरी॥ विकल वृजनाथ वियोगिन नारि ॥ हाहा नाथ अनाथ करो जनि टेरत वांह पसारि ॥ हरि के लाउ गर्व जोवन के सकी न वचन संभारि ॥ चिंतित हैं अपराध हमारो नहिं कछु दोष मुरारि ॥ ढूंढ़त वाट घाट वन घन में मोचि नैन जल धार ॥ सूरदास अभिमान देहि के बैठीं सर्वसु हारि ॥

अंत—तहँते पुनि द्वारावति आये। ब्राह्मण के मालक पहुँचाये ॥ अर्जुन देषि चरित्र अनूप। विस्मय वहुत भयो सुनि भूपि ॥ ऐसे हैं त्रिभुवन के राय। कहा सकै रसना गुण गाय ॥ ज्यौं सुक नृप सों कहि समझायो। सूरदास ताही विधि गायो ॥ इति श्री भागवते सूर कृते दशम स्कंध समासम्। फाल्गुण मासे शुक्ल पक्षे तृतीया गुरु वासरे श्री संवत १९१७ लिखतं मेड़े लाल सराफ साह केवल रामसुत साह नेवाजन लाल के नाती श्री दयाराम साह के पंती वलहुर ग्राम के वासी चिरंजीव गोरी दत्त हेत वे जो जान्यो सों लिख्यो कृपा करि सोधवी ॥

विषय—भागवत दसम स्कंध सूर सागर के ३१ से ९० अध्याय।

संख्या ३१९ जी. सूरसागर एकादश स्कंध, रचयिता—सूरदास (ब्रज), पत्र—५, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४४, परिमाण (अनुष्टुप्)—८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१७ = १८६० ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० रामसिंह, ग्राम—दीनाखेड़ा, डाकघर—सरौ, जिला—एटा।

आदि—श्रीगणेशायनमः अथ एकादश स्कन्ध लिख्यते ॥ श्री विलावल ॥ हरि हरि हरि हरि सुमरन करौ। हरि चरनारविन्द उर धरौ ॥ सुक देव हरि चरनन चितलाय। सूर तरौ हरि के गुन गाय ॥ अथ नारायन औतार वर्णन ॥ विलावल ॥ हरि हरि हरि हरि सुमरन करौ। हरि चरनारविन्द उर धरौ ॥ नारायण ज्यौं भयो अवतार। कहौं सो कथा सुनो चित धार ॥ धर्म पिता अरु मूरति माय। भये नरायण सुत तिन आय ॥ वद्रिका आश्रम रहे पुनि जाय। जोग्या भास समाधि लगाय ॥ उनके और कामना नाहीं। सुख पावैं त्रिभुवन मन माहीं ॥ सुर पति देखत गयो डेराय। काम सैन्य संग दियो पठाय ॥ रितु वसंत फूली फुलवाई। मंद सुगंध बयारि वहाई ॥ करत गान गंधर्व सुहाये। नृत्त भाव अपसरा दिखाये ॥ काम बांन पांचौ संधाने। नारायन ते मनहिं न आने ॥ तव तिन सवन महा भय पायो। कह्यौ इंद्र हमें कहां पठायौ ॥ तब नारायन आंखि उघारी। उन सब को कीनी मनु हारी ॥ तुम कछु मन में भय मति धरौ। इतहि हमारे आश्रम करौ ॥ दोष तुम्हारो है कछु नाह। तुम्हैं पठायो है सुर नाह ॥

अंत—ब्रह्मा हरि पद ध्यान लगाये। तव हरि हंस रूप धरि आये ॥ सबहुन रुप देषि सुप पायो। तबही उठि के माथो नायो ॥ सनकादिक कह्यो या भाय। हमको दीजै प्रभु समझाय ॥ को तुम क्यौंकरि यहां पधारे। परम हंस तव वचन उचारे ॥ यह तो प्रश्न जोग्य हैं नाहीं। यैकै आतम हम तुम माहीं ॥ जो तुम देहि देखि करि पूंछी। तौहू प्रश्न तुम्हांरो छूंछी ॥ पंच भूत से सब तन भये। कहा देषि के तुम भ्रम गये ॥ यह कहि उनको गर्व नेवार्‍यो। वहुरो या विधि वचन उचार्‍यौ ॥ विषय चित्त दोऊ हैं माया। दोऊ चतुर ज्यों तरुवर छाया ॥ तरुवर डोलै डोलै सोई। ज्यौं जिय लागि चिल चेतन होई ॥ फिर जब चित्त विषय तन जोवै। चित्त विषय संजोग तब होवै ॥ ऐसी भांति रहैं दोऊ गोई। तेहि न्यारे करि सकत न कोई ॥ ज्यौं सपने में सुख दुःख जोय। जागि सत्य राखत चित पोय ॥ जब जागै तब मिथ्या जानै। ग्यानी नित उनको यों मानैं। विषय चित्त दोऊ भ्रम जानौ। आतम रुप सत्य करि मानौ ॥ श्रवनादिक में चित्त लगावहु। प्रेम सहित मम रुपहि ध्यावहु ॥ ऐसे करत विषय हूं होई। अरु मम चरन रहै चित गोई ॥ जो ऐसो विधि साधन करै। सो निश्चय मम पद अनुसरै ॥ और जो वीचहिं तन छुटि जाय। सौ लै जन्म भक्त ग्रह जाय ॥ ऊंहूं हूं प्रेम भक्ति की ठानि। पावै मेरो परम अस्थान ॥ सनकादिक सो कहि यहु ज्ञान। परम हंस भय अंतर ध्यान ॥ जो यह लीला सुनै सुनावै। सूर सो प्रेम भक्ति की पावै ॥ इति श्री एकादश स्कन्ध समाप्तः लिषितं मेड़े लाल संवत १९१७ वि० ॥

विषय—नारायण अवतार और हंसावतार की कथा।

संख्या ३१९ एच. सूरसागर, रचयिता—सूरदास (ब्रज), पत्र—३, आकार—१ ×८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—४४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१७=१८६० ई०, प्राप्तिस्थान—ठा० ज्ञान सिंह, ग्राम—मड़ौली, डाकघर—कादिरगंज, जिला—एटा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः श्री संकराय नमः श्री कृष्णाय नमः वौध्य अवतार वर्णन ॥ विलावल ॥ हरि हरि हरि हरि सुमरन करौ। हरि चरनार विन्द उर धरौ॥ सुकदेव हरी चरनन सिर नाय। राजा सौं वोलें या भाय॥ वौध रूप जैसे हरि धार्‍यो। अदित सुतन को कारज सार्‍यो॥ कहौं सो कथा सुनौ चित धारि। कहै सुनै सो तरै भव पार॥ असुर यक समय शुक्र पै जाय। कह्यौ सुरन जीतैं किहि भाय॥ शुक्र कह्यौ तुम जग्य विस्तरौ। करि के जग्य सुरन सों लरौ॥ याही विधि तुम्हरी जय होय। या बिन और उपाय न कोय॥ असुर शुक्र की आज्ञा पाय। लागे करन जग्य वहु भाय॥ तब सुर सब हरि जी पहुँचाई। कह्यो वृत्तांत सकल समुझाई॥ हरिजी तिनकों दुःखत देषि। कियो तुरत सेवरे को भेप॥ असुरन पास वहुरि चलि गये। तिनसौं वचन ऐसीं विधि कहैं॥ जग्य मांह तुम जो पशु मारत। दया नहीं आवत संहारत॥ अपनो सो जिय सबकी जानि। कीजै नहिं जीवन की हानि॥ दया धर्म पालै जो कोय। मेरे मत ताकी जय होय॥ यह सुनि असुरन जग्यहि त्यागे। दया धर्म मारग अनुरागे॥ या विधि भयो वौद्ध अवतार। सूर कह्यो भागवति अनुसार॥

अंत—अथ जन्मेजय कथा वर्णन॥ राग विलावल॥ हरि हरि हरि हरि सुमरन करो। हरि चरनार विन्द उर धरौ॥ जनमेजय जव पायो राज। एक वार निज सभा विराज॥ पिता वैर मन मांहि विचारि। विप्रनसौं यौ कह्यौ उचारि॥ मोको तुम अब जग्य करावहु। तक्षक कुटुंब समेत जरावहु॥ विप्रन सत्त कुरी जव जारि। तब राजा तिनसौं उच्चारि॥ तक्षक कुल समेत तुम जारो। कह्यौ इन्द्र निज सरन उवारो॥ नृप कह्यौ इन्द्र सहित तुम जारो। विप्रनहू यह मतो विचारो॥ आस्तीक तिहि अवसर आयो। राजा सों यह वचन सुनायो॥ कारन करन हार भगवान। तक्षक डसन हार मति जान॥ विन हरि आज्ञा डुलै न पात। कौन सकै करि काहु निपात॥ हरि ज्यौं चाहैं त्योही होय। नृप यामैं संदेह न कोय॥ नृप के मन यह निश्चय आयो। जग्य छांडि हरि पद चित लायो सूत सौनकनकौं सुमुझायौ॥ सूर दास त्यौंही कहि गायौ॥ इति श्री भागवते सूरदास विरचिते सूरसागरे द्वादस स्कन्ध समाप्तम सुभ मस्तु॥ श्री गौरी संकराय नमः॥ फाल्गुण मासे शुक्ल पक्षे तृतीया गुरुवासरे श्री संवत १९१७ सुभम् लिखतं मेड़े लाल सराफ साह केवल राम सुतसाह नेवाजन लाल के नाती श्री दयाराम साह के पंती वलहुर ग्राम के वासी चिरंजीव गौरीदत्त हेत वे जो जान्यो सो लिखो कृपा करि सोधवी॥ श्रीगौरी संकराय नमः॥ श्री राधा वल्लभाय नमः।

विषय—वौद्ध औतार, कलकी अवतार, राजा परीक्षित मुक्ति वर्णन और जन्मेजय कथा॥

संख्या ३१९ आई. रागमाला, रचयिता—सूरदास, पत्र—२८८, आकार—१२ X ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५१६४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० विद्याराम शर्मा, ग्राम—उगनपुरा; डाकघर—बाह, जिला—आगरा।

श्री गणेशाय नमः। राग भैरों। राधा माधो दोइ नहीं। प्रकृत पुरुष न्यारे नहिं कबहुं वेद पुरान कहत सबही। देह भेद ते भेन जानि कै मत भ्रम भूले लोई। ब्रह्म आदि ऊस्थावर प्रकृत पुरुष रहे गोई। भक्त हेतु औतार लियो ब्रज पूरन पुरूष पुरान। सूर दास राधा माधो तन दोइ यक भये प्रान। राग विभात—राधा माधो प्रकृति पुरुष ज्यों छाया तरवर दोइ नहीं। नैन दोइ अरू सुवन दोइ ज्यों कहन सुनन दोइ। दोइ नहीं कंचन भूपन कबहुं जल तरंग ज्यों दोइ नहीं। त्योहि जानि सूरमन विचक्रम राधा माधो दोइ नहीं।२। राग विभासा। सोइ नंद नंदन गाइये प्यारौ। चरन प्रताप तरी रिपी पत्नी हिरनाकुस उर फारौ। पतित अजामिल कुविजा दासी पुनि गोकुल पद धायै। रंक सुदामा कियो महाधनी ध्रुव निह चल कीन्यो नहिं माओ अपरम पार पार परसोत्तम वेद विद विमल जस गावत चाओ। सूरदास प्रभु पतित उदारन हरि गोकुल लीला वपधाओ।

अंत—राग विलावलि। ग्वालिनी जोवन गर्व गहीली कुंकुभ उपरि कनक तन गोरी सुगंध चढ़ाई किशोरी। क्षिन चीर ठिपाऊ लहंगा पिहरै विधि पट मोस मंहगा कुसभी पूरी मांग मोतिनि ठनि केसरि आऊ लिलाट मुकुट धन काजर रेख नैम अनियारे खंजन मीत मधुप भृग हारे अवननि कुंडिल रव ससि जोति कनक बेसरि लटकै गज मोती दसन अनार। अधर बिंब मानौ चुबुक चारू मुंदो मठ जानौ कंठ कपोत मोतिनि के हारा जनौ जुग गिरि विच सुरसरि धारा। कुच चकवा मुख ससि भ्रम भूले वैठि विधुरे दुहु अंकन कूते........ (दीमक ग्रसित) तब मोहन हलधर पकराये। किये तरूनि अपने मन भाये। नाक नैन मुख कारज लायो हरद कलस हलधर सिर नायो। इति श्री राधा माधो विहार सम्पूर्णम्।

विषय—सूरदास के एक हजार के लगभग पदों का संग्रह। पुस्तक में २५ रंगीन हस्तलिखित चित्र हैं जो बड़े सुन्दर तथा भावपूर्ण हैं।

संख्या ३१९ जे. बिसातिन लीला, रचयिता—सूरदास (ब्रज), पत्र—१६, आकार—८ X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८३१, प्राप्तिस्थान—ठाकुर हरिसिंह रघुवंशी, ग्राम—रामगढ़, डाकघर—दतौली, जिला—अलीगढ़।

आदि—श्रीगणेशायनमः॥ अथ विसातिन लीला लिख्यते॥ एक समैं बृज चंद नंद सुत मन में यही विचारी। करिके भेष विसातिन जी को छलियो राधा प्यारी॥ कीनषाव को लहँगा पहिरे अरुन जर कषी सारी। अँगिया खासि लाल मंडन की अति छवि देत किनारी॥ मोतिन की पहिरे नकवेसर झालरदार वनाई। मानौं रति पति गढ़ी आय कर कहि न जात सुघराई॥ कानन करन फूल अति सोहे माथे वीज जड़ाऊ। ताऊपर अति लसत वेंदनी मोतिन मांग भराऊ॥ कंठ लसे दुलरी और तिलरी गज मोतिन के हारा। मानहुं गिरि सुमेर को विहाय धंसी गंग की धारा॥

अंत—जसुधा कही सुनो हो लाल दिन सब कहां विताये । वालन संग कलेवा करिके तव से फिरि अव आये ॥ षेलत रहौं गवालन के संग वंसी वट की छाई । नवल कुंज जहँ नंद लगाई जमुना तट के माहीं ॥ भली करी तुम प्रान पियारे अब चलि करौ वियारी । परषे महर तुम्है है वैसी परसी धरी है थारी ॥ नंद साथ हरि भोजन कीनो वीरा मुख में दीनों । सोये आय पलंग के ऊपर हरष मातु सुष दीनों ॥ जुग जुग जीवो कुवँर राधिका जुग जुग कुवँर कन्हाई सूर दास भगतन के सेवक जिन यह लीला गाई ॥ जो कोऊ कृष्ण विसातिन लीला सुनै सुनावे गावै । तर वैकुंठै जाय सकल मनसा फल पावै ॥ इति श्री विसातिन लीला समाप्तं ॥ संवत् १८३१ भादौं कृष्ण पक्ष दसमी लिखा राम सनेही ॥ राम राम कृष्ण कृष्ण ॥

विषय—श्रीकृष्ण की ब्रज लीला ।

संख्या ३१९ के. विसातिनलीला, रचयिता—सूरदास, पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६०, रूप प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—गणेशीलाल, ग्राम—जैतपुर कलाँ, डाकघर—जैतपुर कलाँ, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ विसातिन लीला लिष्यते । एक समै बृज चंद नंद सुत मन में यही विचारी । करके भेप विसातिन जी को छलिये राधा प्यारी । कीन पांप कौ लहंगा पहिरै अरून जरकसी सारी । अंगिया खासि लाल मंडन की अति छवि देत किनारी । मोतिन की पहरे नक वेसरि झालरदार बनाई । मानों रति पति गढ़ी आप कर कहि न जात सुघराई । करन फूल अति सोहैं माथे वीज जड़ाऊ । ता ऊपर अति लसत गंदनी मोतिन मांग भराऊ । कंठ लसै दुलरी तिलरी गज मोतिन के हारा । मानो गिरि सुमेर को विहाय धरी गंग की धारा, हाथ पकरि मनि हारि न जू कौ जाय टटो···। मानहु कान आपने कर से रूचि रूचि वीज संवारे । ६ ।

अंत—अरस परस राधे सों करिके नैनन सो नैन मिलाए । नंद नंदन मान के नंद गांव चलि आए । जसुधा कही सुनौ लाल निस दिन कहां बिताए । वालन संग कलेवा करके तब से फिर अब आए । खेलत रहों गुपाल संग वनसीवट की छांही । नै कुज जहां नंद लगाई जमुनातट की मांही । भली करी तुम प्रान प्यारे अब चलि करिये वियारी । परषे महर तुम्हें है वैसी परसी धरी है थारी । नंद साथ हरि भोजन कीन्हो वीरा मुख में दीन्हो । जुग जुग जीवों कुंवर राधिका जुग जुग कुंवर कन्हाई । सूरदास भगतन के सेवक जिन यह लीला गाई । जो कोइ कृष्ण विसातिन लीला सुने सुनावै गावै । तर वैकुंठै जाइ सकल मनसा फल पावै । इति विसातिन लीला समाप्तम् ।

विषय—श्री कृष्ण द्वारा विसातिन भेप धारण कर राधा को छलने का वर्णन ।

संख्या ३२०. कवित्तावली पूर्ति प्रभाकर, रचयिता—सूर्यनारायण लाल (कोढ़, मिरजापुर), पत्र—५२, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—६७६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९५४ =

१९१७ ई०, प्राप्तिस्थान—श्रीमती पं० रामनारायण दुबे, ग्राम और डाकघर—नगराम, जिला—लखनऊ।

आदि—श्रीगणेशायनमः ॥ अथ कवितावली पूर्ति प्रभाकर लिख्यते ॥ घनाक्षरी ॥ मन वचन वंदौ पद शंकर दुलारे जू को मोचन सुकोचन के नेकु ध्यान जाके है। गुन मान वरदान गनाधीस केर साने सुधा स्वाद मुद मोक्षक मजा के हैं ॥ वदन गयंद हर द्वंद चंद्र वाल संतत अनंद कंद नंद गिरिजा के हैं ॥ १ ॥ निरतन लागे तन लागे शुभ सार छार अकनि के चन्द चूड़ वंद जू को नंद भो। देवन जु मन दे सुमन सुर तरु केर विथु रस वीथी मधु कहुँ कहुँ वंदभो ॥ त्रास अनायास वास कीन्ह है खलन × × न जान खेद मान मुख मंद भो ॥ चाँपन चलो है विनु लकुट सदा को निज गोपनि विसरि अस गोपन अनंद भो ॥ २ ॥

अंत—सजनी कहुँ जाय रहैं रजनी जहँ चीन्हे हैं नीके कै छैल छली। लगी पीक की लीक उनींदे भले वने ये दोऊ नैन सरोज कली ॥ अधरान हैं खंडित काजर रेख धरैं चींटी चुरावन खंड चली। यह आर हैं स्वाँग दिखावन को कहँवा सब रैन गँवाय अली ॥ १४४ ॥ तोहि कालि सखी मैं लखी नंद द्वार पै यों हठली नटली नटली। पुनि क्यों करि सो विकलाइ गई किमिकै विगसै हृद कंज कली ॥ रति सेज करेज जो सीतल भो कहुँजा विधि प्रीतम सों मचली। ये रे गोविन्द ने मिलि के गांव सों कहँवों सब रैन गँवाए अली ॥ १४५ ॥ इति श्री कविता वली पूर्ति प्रभाकर लाल सूर्य नारायण कोढ़ मिर्जापुर निवासी रचित समाप्तम् ॥ संवत १९४५ वि० ॥

विषय—अनेक विषयों पर समस्या पूर्ति।

संख्या ३२१ ए. नवरत्न भाषा, रचयिता—श्यामलाल (गौरीलखा, तह० शिवराजपुर, कानपुर), पत्र—७२, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८७२, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०८ = १८५१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवकुमार मिश्र, स्थान—हरदोई, डाकघर—हरदोई; जिला—हरदोई।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ नवरत्न भाष्य वृन्दावन विलास लिख्यते ॥दोहा॥ श्री गुरुचरण सुमरण करूं जिनसे पायो ज्ञान। प्रिय प्रीतम की भक्ति में निशि दिन रहे मम ध्यान ॥ १ ॥ नव रत्न भाषा कहूं सब भक्तन को दास। लीला कछु वर्णन करूं जुगुल चरण की आस ॥ २ ॥ नंद गांव नद नन्दन में वरषानें वृषभान। दोनों कुल दीपक भये गावत वेद पुरान ॥ ३ ॥ वृज समुद मथुरा कमल वृन्दावन मकरंद। वृज वनिता सब पुष्प हैं मधुकर गोकुल चंद ॥ ४ ॥ पूरण मासी सरद की रच्यो कन्हैया रास। मन मोहन शीश पाउना चंद थक्यौ आकाश ॥ ५ ॥ कहा कहूँ छवि आज की भले वने हो नाथ। तुलसी मस्तक तब नवै धनुष बाण लेउ हाथ ॥ ६ ॥ कीट मुकुट कटि काछिनी पीताम्बर वनमाल। यह सूरत मेरे मन वसी सदा बिहारी लाल ॥ ७ ॥ मेरी ओर निहारियो टेरत हों वृजराज। महल रास देखूं सभी भक्तन के सिरताज ॥ ८ ॥ वंसी वट जमुना तटहिं जहँ खिले कदम द्रुम फूल। भक्तन के प्रिय नाथ हरि प्रगटे जीवन मूल ॥ ९ ॥ ऊठी बिसाषा श्यामला अव-

मति देर लगाय । प्यारी जी को टेर के जल्दी नृत्य कराय ॥ १० ॥ सखी विसाखा उठि चली मोहन को सिरनाय । प्यारी सों अरजी करी तुरतै चली लिवाय ॥ ११ ॥ सुनत वचन प्रिय प्रेम के हर्ष न हृदय समाय । मानो गज गामिन चली शोभा वरणि न जाय ॥ १२॥

अंत—प्यारी सों सन कहति यह प्रीतम को लाई चोरि । यह जु ठगति सबको भट्ट अव याहि न दीजै छोरि ॥ १ ॥ अव न रहेगी कानि कछु लाल सुनो नाम जव चोर । कपट वेष तिय परि हरौ वनै तिहिं छिण नन्द किसोर ॥ २ ॥ हँसति मोहिनी सोहनी रस लीला निरखि अनूप । प्रेम खेल के वारने अति वाकों है रुप ॥ ३ ॥ = ॥ रेखता ॥ = ॥ हे श्यामा चलो विपिन में अद्भुत बहार है । छाई घटायें गगन विच शोभा अपार है ॥ इंदर के धनुष दामिन छवि वे शुमार है । प्रफुलित कदम खड़े हैं भौंरा गुंजार है ॥ श्यामा० ॥ रंग रंग के वोलै पक्षी दादुर चिकार हैं । कीड़े करत किलोलै यां जमुना की धार है ॥ गेंदा गुलाव तुर्रा क्या खुशबूय दार है । झौंकन चलै समीरैं द्रुम लचती डार है ॥ श्यामा० ॥ फैली है वेल इत उत शबजी बजार है । नाचत है मोर मद से मृगनी विहार है ॥ चंचल जो कोयल डोलैं पिउ की पुकार है । श्यामू के श्याम प्रिया संग चलना विचार है ॥ इति श्री नव रत्न भाष्य वृन्दावन विलास सम्पूर्ण समाप्तं ॥ लिखतं राधा मोहन मंगल वार पौष शुक्ला संवत १९०८ विक्रम ॥

विषय—राधा कृष्ण की लीला और प्रेम वर्णन।

संख्या ३२१ बी. नवरत्न भाषा, रचयिता—श्यामलाल (गौरीलखा, कानपुर), पत्र—८०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८६४, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१६ = १८५९ ई०, प्राप्ति-स्थान—मन्नीलाल वैश्य, ग्राम—नगरा हरदयाल, डाकघर—धुमरी, जिला—एटा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ नवरतन भाषा लिख्यते अथ वृन्दावन विलास लिख्यते॥ श्री गुरु सुमरन करू जिनसों पायो ज्ञान । प्रिय प्रीतम की भक्ति में निश दिन रहे मम ध्यान ॥ नवरत्न भाषा कहूं सब भक्तन को दास । लीला कछु बरनन करूं जुगुल चरन की आस ॥ नंद गांव नंद नंदन मे बरषाने वृख भान । दोनों कुल दीपक भये गावत वेद पुरान ॥ ब्रज समुद्र मथुरा कमल वृन्दावन मकरंद । बृज बनिता सब पुष्प है मधुकर गोकुल चंद ॥ पूरण मासी सरद की रच्यौ कन्‍्या रास । मन मोहन शशि पाउना चंद थक्यो अकास ॥ कहा कहौं छवि आज की भले वने हो नाथ । तुलसी मस्तक तब नबै धनुष वांण लेउ हाथ ॥ क्रीट मुकुट कटि कांछिनी पीताम्बर बन माल ॥ यह मूरत मेरे मन वसी सदा विहारी लाल ॥ मेरी ओर निहारियो टेरत हौं वृज राज ॥ रहस रास देखूं सभी भक्तन के सिर ताज ॥ वंसी वट जमुना तटहिं जहँ खिले कमल द्रुम फूल । भक्तन के प्रिय नाथ हरि प्रगटे जीवन मूल ॥ उठी विसाखा सामला अब मति देर लगाय । प्यारी जी को टेरि के जल्दी नृत्य कराय ॥

अंत—प्यारी सों सब कहति यह प्रीतम को लाई चोरि । यह जु ठगति सबको भट्ट अब याहि न दीजै छोरि ॥ अव न रहेगी कानि कछु लाल सुनो नाम जव चोर । कपट

वेप तिय परि हन्यो बने तिहि क्षण नंद किसोर ॥ हंसति मोहिनी सोहनी रस लीला निरपि अनूप । प्रेम खेल के बारने अति बाकों है रूप ॥ रेखता ॥ हे श्याम चलो विपिन में अद्भुत बहार है । छाई घटायें गगन विच शोभा अपार है ॥ इंदर के धनुष दामिन छवि वे शुमार है । प्रफुलित कदम खड़े हैं भौंरा गुंजार है ॥ श्यामा० ॥ रंग रँगके बोलें पक्षी दादुर चिकार है । कीड़े करत किलोलैं या यमुना की धार है ॥ गेंदा गुलाव तुर्रा क्या खुशवूय दार है ॥ झोंकन चलैं समीरें द्रुम लचती डार है ॥ श्यामा० ॥ फैली है वेल इत उत सब्जी बज़ार है । नाचत हैं मोर मद से मृगनी विहार है ॥ चंचल जो कोयल डोलै पिउपी पुकार है ॥ श्याम के श्याम प्रिया संग चलना विचार है ॥ श्यामा० ॥ इति श्रीनवरतन भाषा वृन्दावन विलास संपूर्ण समाप्तः लिखतं राधा मोहन मंगल वार माघ सुदी ११ एकादशी ॥

विषय—राधा कृष्ण की लीला और उनका प्रेम वर्णन ।

संख्या ३२२ ए. शैरबाटिका, रचयिता—श्यामलाल (मथुरा) पत्र—१३२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२३७६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९४ = १८३७ ई०, लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—मौलाना रसूल खां काजी, ग्राम—गंगीरी, डाकघर—सलेमपुर, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ शैर बाटिका श्यामलाल कृत लिख्यते ॥ दो०—राम बड़ाई को करै । की के बुद्धि सिवाय । आना राखै जक्त को । सो प्रभु पानी परसाय ॥ शैर—उठि प्रात समय हृदय में ध्यान धरोरे । प्रभु भजन विना जीव जन्म जात वहोरे ॥ मति मंद अंध काहे को सोच करोरे । श्री राम राम राम राम राम कहोरे ॥ जम अंत काल दावत है आय गहोरे । आवै न राम नाम कोटि जतन करोरे ॥ कर मिहर आप राज विभीषन को दयोरे । श्री राम राम राम राम राम राम कहोरे ॥

अंत—सोरठा—यह सुनि वगरे ग्वाल बरसाने की बाट में । रंग मारो ततकाल सो सुधि पाई राधिका ॥ दोहा—सुधि पाई सो राधिका सो मन आपुन कीन । डगर चलत कछु ना कही सुनी लाल परवीन ॥ शैर—बात होनहार देखो घर काउ ना कही । दधि गोरस लिये राधिका बरसाने तन गई ॥ कहै श्याम कान्ह कंचन पिचकारी दई । सोई चूनरी चपेटन चूर बोर भई ॥ भई चोर बोर चूनर झंझ झोर झपट लई । मुस क्यानी मुख राधा वाधा ग्रह वाधनन छई ॥ अकुलानी बोली वो ललिता कहां गई । नई चूनरी चपेटन की चूर बोर भई ॥ बाजत है ढोल ढपला त्राम्रंग वजा दई । वाजत सितार बीन झांझ घोट घटा छई ॥ मिलत गुलाल लाल पड़े लाल गली भई । ब्रज मंडल के ठौर ठौर फाग फैल रही ॥ मगन ठाढ़े फगुआ वारे रंग डारें अति सई ॥ ब्रज मंडल के बीच कीच केशर की भई ॥ हंस लिपटे घन श्याम झपट दौड़ पकड़ लई । ब्रज मंडल के ठौर ठौर फाग फैल रही ॥ है १८९ अरु ४ संवत् विक्रम । मधु मास सुदी दशमी अनुराधा नक्षत्रम ॥

विषय—ध्रुव चरित्र, प्रहलाद चरित्र, वलि चरित्र, दान लीला, नाग लीला आदि कृष्ण जी की अनेक लीलायें, होली वसंत बहार और रास लीला आदि का रोचक वर्णन ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता श्यामलाल मथुरा के निवासी थे। इनके रचे अनेक ग्रन्थ हैं। रचनाकाल संवत् १८९४ वि० जिसको इस प्रकार लिखा है:—१८९ और ४ संवत् विक्रम। मधुमास सुदी दशमी अनुराधा नक्षत्रम॥ लिपिकाल संवत् १९०० वि० है।

संख्या ३२२ बी. दानलीला, रचयिता—श्यामलाल (मथुरा), पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १८९१ = १८३४ ई०, लिपिकाल—सं० १९०० = १८४३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामभरोसे गौड़, ग्राम—बीघापुर, डाकघर—टप्पल, जिला—अलीगढ़।

श्री गणेशाय नमः अथ श्याम लाल कृत दान लीला लिख्यते॥ मोर मुकुट कटि काछिनी कर मुरली उर माल। जे वालक मनमें वसो सदा विहारी लाल॥ शैर—लट पटी पाग सीस बंधी नैन उनींदे। जुल्फों में वाल फैले आये उसनीदे॥ वींधे हो किसी नार से घर घर को गींदे। आये हो प्रात काल लाल वाल दही दे॥ दे दही बाल नंद लाल गुलालन घेरे। सब सखा संग मोहन मुरली में टेरें॥ व्रज बाल कहैं लाल वचन मानों मेरो। दधि दान कान्ह मांगत ना करजी तेरो॥ कट फेट बंधी सुंदर पीताम्बर पट की। शिर मोर मुकुट लकुट लोदव कर वट की॥ मधुवन के बीच जात ग्वालन भटकी। सब दूध दही खायो फोर डारी मटकी॥ नथ दुलरी तोर डारी फार डारी चोली। ऐसो चवाई छैल करैं मोसे ठठोली॥ मैं वड़ी गम खाई मुख नाहीं बोली। आई मसा के छूट लूट भई अमोली

अंत—मोर मुकुट वंसी लकुट पड़ी गले वनमाल। छका छैल मग में खड़ो राह रोक व्रज वाल॥ शैर—मिल गई अचानक मारग में पर गयो भेरो। व्रज राज कई आवो तनक मोतन हेरो॥ दई ग्वालन को सैन दही खावैं तेरो। जाकर फरियाद कंस कहा करि है मेरो॥ रहौ कौन गांव तुम कहो तुम किसके लोलना। रही खड़ी दूर हमसे घट वढ़ न बोलना॥ रहत कौन पुरा हमसे न करो टोलना। मटकी न छिवो मेरी न मोल मोलना॥ अनमोल तेरी मटकी विन माल लुटा दों। वेहाल करू वाल तुझे नाच नचा दों॥ रहो सूधी अभै ऐसी यूधो न मोको। तै मोसो कहौ एक मैं तोसो हजार कहों॥ कहिहों हजार तोसों जब जानी जैहै। रिस भर गुपाल लाल वाल गुलचा दै है॥ वकवाद करै वाद कहा हमसे लेहै। इन बातन दधि दान कान्ह कैसे पै है॥ डरहों न रहों विना लये गति करि हों तेरी। मग आन खड़ा कान्ह चढ़ा भृगुटी फेरी॥ ठानों न रार मग में कही मानों मेरी। ग्वालन न मार दान देत मत कर देरी॥ यह श्याम दान लीला रचकरके सुना दी। सब याद करो चित में यह वात दी॥ संवत है १८९ अरु एक विकरमी माघ मास कृष्ण पक्ष और सप्तमी॥ इति श्री श्यामलाल कृत दान लीला समाप्तम् शुभम् संवत १९०० वि०

विषय—श्री कृष्ण की दानलीला का वर्णन।

संख्या ३२३. गांजर की लड़ाई, रचयिता—टिकैतराय, पत्र—१६, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१२ = १८५५ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा देवगिरि-रामगढ़, डाकघर—डटौली, जिला—अलीगढ़।

श्री गणेशाय नमः अथ गांजर की लड़ाई लिख्यते ॥ सौरनी—सुमिरन करके जगदंबा को ले के रामचन्द्र को नाम । वीर पवांरे को गावति हौं शिवशंकर के चरण मनाय ॥ आदि सरसुती तुमका गइये मेरे कंठ विराजौ आय ॥ गांजर केरी करैं लड़ाई भूले अक्षर देउ वताय ॥ लगी कचहरी राजा जै चंद की भरमा भूत लगे दरबार ॥ मचिया के संग मचियां रगड़े मोढ़ा रगड़ि रगड़ि रह जाय ॥ रगड़ि बखौरा रज पूतन के जहँ तिलडारे जमी ना जाय ॥ तौलौं मीरा सैय्यद वोले औ जैचंद सों लगे वतान ॥ गांजर पैइसा जहु अटको है ताको अब कछु करो उपाय ॥ इतनी सुनिके राजा जैचंद तुरते बीरा लओ मंगाय ॥ सो धरवाय दयो कलसा पै औ छत्रिन से कही सुनाय । है कोइ क्षत्री मेरे दल में जो गांजर पर पान चवाय ॥ इतनी सुनि के ऊदनि वांकड़ा तुरतै बीरा लयो उठाय ॥ बीरा चाबि लओ ऊदनि ने और यह कही लहुरवा भाय । फौजें सजाय देव कनवज की और लाखन देव संग पठाय ॥ करैं चढ़ाई हम गांजर की पैसा तुरत लेइं भरवाय ॥ इतनी बात सुनी जैचंदने तुरतै दीनों हुकुम कराय ॥ वोलि दरोगा तोपन वारो कलंगी चीरा दई इनाम ॥

अंत—बड़ी बड़ी तोपन को सजबाओ सो आगे को देउ जुताय ॥ धुवां उड़ानो चहुँ क्षत्रिन को लसिगर रही अंधियारी छाय ॥ गोला ओला के सम छूटे गोली मघा बूंद अराय । हाथी घोड़ा बहुतक जूझे लाखन क्षत्री गयै उड़ाय ॥ तोपें धें धें लाली पर गईं ज्वांनन हाथ धरे न जाय ॥ यहौ लड़ाई पाछे पर गई लंबे वंद करे हथियार ॥ दोनों ओर से बढ़े सिपाही कमरि से खेंच लई तलवार ॥ डेढ़ कदम को अरसा रहिगो घूम के चलन लगी तलवार ॥ पैदर के संग पैदर अभिरे औ असवारन से असवार ॥ सूड़ि लपेटा हाथी हुइगे हौदन पेश कब्ज की मारु ॥ जह गति वीते दोनों दलमें सबके मारु मारु रट लागि ॥ नदिया बहन खून की लागी ढालैं कछुआ सी उतराय ॥ घेइया डारे भुइ में लोटैं जिनके प्यास प्यास रट लागि ॥ मुहर कटोरा पानी हुइगो ढूढे ना कहुं परै लखाय । लोथिन के जहँ ढेर लागि गये औ हाथिन के वंधे पंगार ॥ भजे सिपाही कनवज वारे सो उदनि की नजर परि जाय ॥ घोड़ा वेन्दुला दावे आवे सुमुहे गोल गओ समुहाय ॥ खैंचि सिरोही लई कम्मरि से सब दल काटि करी खरिहान ॥ अनी वदल गई वंगाले की ऊदनि मारि करौ संग्राम ॥ राजा गुरुपा के मुँहरा पर ऊदनि गये सेर से धाय । बहुत लड़ाई भई राजा से मेरे कौन करै बक बाद । कैद कराय लई राजा की ठाढ़े पैसा लओ भराय ॥ लूटि बंगाला ऊदन लीन्हों अपनो कूच दओ करबाय ॥ पंद्रह दिन की मैंजलि करके फिरि कनवज में पहुँचे आय ॥ दगै सलामी जहँ कनवज में जीति को डंका दओ बजाय ॥ इतनी लड़ाइ भई गांजर की टिकइत रायने कही वनाय ॥ इति गांजर की लड़ाई संपूर्ण संवत् १९१२ वि० मार्ग शीर्ष शुक्ल पक्षे बुधबासरे ॥

विषय—गांजर की लड़ाई का वर्णन । यह लड़ाई गांजर के राजा और कन्नौज के राजा जयचंद में हुई थी । राजा जयचंद ने अपने पुत्र लाखन राना के साथ ऊदनि को भेजा था । उनके हारने पर कन्नौज की सेना भागी पर ऊदनि की बहादुरी से राजा गुरषा हार गये और कन्नौज की जीत हुई ।

टिप्पणी—इस ग्रन्थ के रचयिता टिकैत राय थे जो संवत् १९०० वि० के पहले हुए थे। लिपिकाल संवत् १९१२ वि० है।

संख्या ३२४. भाषा लघुजातक, रचयिता—टीकाराम अवस्थी, पत्र—३०, आकार—१०×४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—४२७, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—ठाकुर प्रताप सिंह, ग्राम—राटौटी, डाक-घर—होलीपुरा, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः। दोहा। देवमुकुट प्रनमित चरन श्री शिव अर्थ करंत। उदय अस्त रवि करत ही जय जय बोलत संत। अर्थ राशि अंग विभाग। जानहु मेष वहि षीरव अब वृषहि कंठ बखान। मिथुन वाहु—सिंह उदर पहिचानि। कन्या कवरि बखानिये तुला वखति अवरेख। वृश्चिक कहिये गुह्य अब धनुको जंघ वखानु। घोड़नि रंग लाल है धौरो वृषभ लखाहि। मिथुन कहावत हरित अति सोसन कर्क गणाहिं। सिंह अरुण कछु धूमरो कन्या पदरो रंग तुला को चित्र बखानिये वृश्चिक कनक सुरंग। धनुष पीत कछु रकलयो कवरौ मकरि देखि भूरौ कुम्भ बखानिये मीन मलिन अवरेखि। अथ राशि भेद मेष राशि तो पुरुष है वृषभहि नर कहि यतु हैं। सिंह को कन्या कन्या जानि तुला पुरुष वृश्चिक तिया धनुष पुरुष पहचानि मीनहि नारी जानिये शिव पंडित सुविचारि। अथवा मेष मिथुन अरु सिंह तुला कुम्भ धनुप नर नील। वृष वृश्चिक कन्या मकर त्रिया कर्क अरु मीन

अंत—दूजो ज्यों को त्यों रहै तीजे नव कर हीन। एहि जोर राशि छह त्रिय को जन्म मकीन। द्वै जोर तो भ्रातृ को चारि जोरि सुत मानि तीन जोरिके मित्र को जनम ऋक्ष पहचानि। एकठौर दसौ गुन करै दूजै अष्ट गुनाई। तीजे गुनिये सातसों चौथे पंच गुनाई। अपने अपने चक्रसों भाग देइ जो कोई। यथा तित्थे घटि गुन वतो सब पावै लोई। दश गुन लिखिये पिंड तै वरस और ऋतु मास। अष्ट गुन पक्ष कहि अवर तिथिन को वास। सागुनै ते दिव सनि पंच समय निहारि। जो दस गुन तै कीजिये केश साकार। वीसा सौं सो भागदे शेष रहै व रहै नाहीं। पिंड तहि भाग छह शीश जुरत ससि राहि। सोई द्वैही भाग दे एक विच पहिलो मास। शून्य बचै तो दूसरो एक ऋतु छोड़ आस। लिप्र पिंड जु अष्ट गुनि कहिये नव संस्कार। द्वै सै भाग जु एक वच शुक्र पक्षि निरधार। इति श्री भवानीदास अवस्थी सुत टीकाराम कृत भाषा लघु जातक सम्पूर्णम्। शुभमस्तु।

विषय—फलित ज्योतिष।

संख्या ३२५ ए. रामचरित मानस, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर तथा काशी), कागज—स्याल कोटी, पत्र—६५०, आकार—११×६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२२५०, रूप—प्राचीन; लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६१३ प्राप्तिस्थान—श्री ननकूप्रसाद जी दूबे—बमरौली कटरा, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ अथ बाल काण्ड॥ वर्णनामर्थ संघाव (श्लोक्र × × × सोरठा—जेहिं सुमिरत सिध होय गग नायक करवर वदन, करहु अनुग्रह सोय, बुद्ध राशि

शुभ गुन सदन । मूक होंहि वाचाल पंगु चढ़ै गिर वर गहन । जासु कृपा सुदयाल द्रवौ सकल कलिमल दहन ' नील सरोरुह स्याम तरुन अरुन वारुन नयन । करौ सौ मम उर धाम, सदा क्षीर सागर सयन । कुन्द इन्दु समदेह, उमा रमन करुना यतन, जाहि दीन पर नेह, करौ कृपामर्दन मयन वन्दौ गुरु पद पंकज, कृपासिन्धु नर रूप हरि । महा मोह तम पुंज जासु वचन रविकर मिकर ।

अन्त--मोसों दीनन दीन हित तुम समान रघुवीर, अस विचार रघुवंस मनि हरहु विषम भव पीर । कामहि नारि पियारि जिमि, लोहि प्रिय जिम दाम तिमि रघुनाथ निरंतर, प्रिय लागहु मोही राम ॥ श्लोक ॥ × × × इति श्री राम चरित मानस सप्तम सोपानः ।

विषय--रामचरित्र वर्णन ।

संख्या ३२५ बी. बालकाण्ड, रचयिता--तुलसीदास (राजापुर), पत्र--१२२, आकार--१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)--१२, परिमाण (अनुष्टुप्)--३२९४, रूप--प्राचीन, लिपि--नागरी, लिपिकाल--सं० १८३४ = १७७७ ई०, प्राप्तिस्थान--मुंशी लक्ष्मी नारायन, ग्राम--भलसुरा, डाकघर--फीरोजाबाद, जिला--आगरा ।

आदि--श्री वल्लभाय नमः । श्लोक । वर्ण तां अर्थ संघानां रसानां छंद सा मपि । मंगला नाच ••••••••विनायकौ । १ । भवानी शंकरौ वंदे श्रद्धा विस्वास रूपि•••। याभ्यां विनान पश्यान्ति••••••द्धाः सांतस्थमीश्वरं वंदे वोध मयं नित्यं गुरुं शंवरं रुपिलं । यथा श्रितोहि वचोपि••••••सर्वत्र वंदिते । ३ । सीताराम गुणं ग्राम•••••••••विहारिक्तौ । वंदे विशुद्ध विग्यानौ•••••इवर कपीश्वरौ । ४ । जा सुमिरति सिधि होय, गन नाइक करिवर वदन । करौ अनुग्रह सोइ । बुद्धि रासि सुभ गुन सदन । मूक होइ वाचालु पंगु चढ़ै गिरिवर गहन । जासु कृपा सु दयालु द्रवै सकल कलि मल दहन । नील सरोबर स्याम । तरुन अरुन वारुज नयन । करौ सुमम उर धाम । सदा छीर सागर सयन । कुंद इंदु सम देह । उमा रवन करुना अयन । जाहि दीन परनेह करो कृपा मर्दन मयन । वंदौ गुरू पद कंज, कृपा सिंधु नर रूप हरि । महा मोह जम पुंज जासु वचन रविकर निकर ।

अन्त--राम रूप भूपति भगति व्याह उछाह अवंद । जात सराहत मनहि मन कुमुद नाधि कुल चंद । चौ० । कामदेव रघुकुल गुर ग्यानी । वहुरि जाधि सुत कथा वषानी । सुनि मुनि सुजस मनहिं मन राऊ । वरनत आपन पुंन्य प्रभाऊ । बहुरे लोग रजायसु भयऊ सुतनि समेति राऊ ग्रह जयऊ । जहं तहं राम व्याह सब गावा । सुजस पुनीत लोक तिहुं छावा । आये व्याहि राम घर जवते वसे अनंद अवधि सब तबते । प्रभु विवाह जस भयउ उछाहू, सकहिं न वरनि गिरा अहि नाइ । कवि कुल जीवन पावन जानी, राम सिया जस मंगल षानी । तिहतें मैं कछु कथा वषानी, करन पुनीत हेत निज वानी छंद--निज गिरा पावन करन कारन राम जस तुलसी कह्यौ । रघुवीर चरित अपार वारिधि पार कौने लह्यौ । उपवीत व्याह उछाह मंगल सुनि सुसादर गावही । वैदेही राम प्रसाद ते जब सर्वदा सुप पावहीं । सीय रघुवीर विवाह जे सप्रेम गावहिं सुनहिं । तिनके

सदा उछाह, मंगलाय तन राम जस । ३६ । इति श्री राम चरित्र मानसे सकल कलि कलुष विध्वंसने अविरल हरि भक्ति संपादनी नाम प्रथमो सोपान वालकांड समाप्त संपूर्ण सुभ मस्त । जथा प्रति लिपी । लि········श्रीरामप्रसाद कायस्थ श्रीवास्त वासी वहनरौली के । संवत २८३४ । वैसाख मासे कृष्ण पक्षे अमावस्यां रविवासरे । श्री श्री श्री श्री श्री ।

विषय—रामायण बालकांड की कथा ।

संख्या ३२५ सी. रामायण–बालकाण्ड, रचयिता—तुलसी दास (राजापुर), कागज—बाँसी, पत्र—२२६ आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४०७, लिपि—नागरी, रचनाकाल – सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपि-काल—सं० १९१३ = १८५६ ई०, प्राप्तिस्थान—राधाकृष्ण बनिया, मुहल्ला-पुरानी बस्ती—कटनी ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ श्री जानकीवल्लभो विजयते ॥ अथ बाल कथा लिष्यते तुलसी क्रत ॥ नाना पुरान निगमागम संवतंम मद्रामायणं निगदि तक विदन्यपि ॥ स्वातः सुपाय तुलसी रघुनाथ गाथा भाषा निबंध मतिमंजुल मातनोती ॥ १ ॥ सोरठाः—जिहि सुमिरत सिधि होइ, गन नायक करिवर वदन ॥ करहु अनुग्रह सोई बुद्धि रासि सुभ गुन सदन । १ ॥ मूक होहिं वाचल पंगु चढ़हि गिरिवर गहन ॥ जासु क्रपा सो दयाल द्रवहु सकल कलि मल दहन ॥ २ ॥ नील सरोरुह स्याम तनुज अनुज वारिज नयन ॥ करौ सो मम उर धाम सदा क्षीर सागर सयन ॥ कुंद इन्दु सम देह, उमा रमन करुना अयन । जाहि दीन पर नेह करहु क्रपा मर्दन मयन ॥ ४ ॥

अंत—सोरठा—सिय रघुवीर विवाह, जे सप्रेम गाँवहि सुनहिं । तिन कहं सदा उछाह, मंगलायतन राम जस ॥ ३७६ इति श्री राम चरित्र मानसे सकल कलि कलुष विध्वंसिने विमल वैराग संपादिनी नाम प्रथमो सोपानाः ॥ १ ॥ तले रक्षं जला रछं रछं सिथिल बंधनं ॥ मूर्ष हस्तत दातव्यं ऐवं वदति पुस्तकं १ संपूर्न लिपितं श्री तमेर भीषाम दास मिति अस्वान सुदि १५ क संवत्र १९१३ के पोथि संम पूरन ।

विषय—रामायण बालकांड की कथा ।

संख्या ३२५ डी. रामायण बालकाण्ड, रचयिता—महात्मा तुलसीदास, पत्र—१२१, आकार—$11\frac{1}{2} \times 6\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३२७, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८७८ = १८१७ ई०, प्राप्ति-स्थान—पं० राधाकृष्ण–हिरनगौ, डाकघर—फीरोजाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ लिष्यते वालकांड सोरठा—जा सुमिरै सिधि होइ गन नायक करि वर वदन । करहु अनुग्रह सोइ बुद्धि रासि सुभ गुन सदन ॥ १ ॥ मूक होहि वाचाल पंगु चढ़ै गिरि वर गहन । जासु कृपा सु दयाल द्रवो सकल कलि मल दहन ॥ २ ॥ नील सरोरुह श्याम तरुन अरुन वारिज नयन । करौ सो मम उर धाम सदा छीर सागर सयन ॥ ३ ॥ कुंद इंदु सम देह उमा रवन करुना अयन । जाहि दीन पर नेह करहु कृपा मरदन मयन ॥ ४ ॥ वंदौ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नर रुप हरि । महा मोह तम

पुंज जासु वचन रविकर निकर ॥ ५ ॥ चौपाई ॥ वंदौ गुरु पद पदुम परागा । सुरुचि सुवास सरस अनुरागा ॥ अमिय मूरि मय चूरन चारु । समन सकल भव रुज परिवारु ॥ सुकृत संभु तन विमल विभूती । मंजुल मंगल मोद प्रसूती ॥ जन मन मंजु मुकुर मल हरनी । किये तिलक गुन गन वसि करनी ॥ श्री गुरु पद नख मनि गन जोती । सुमिरत दिव्य द्रष्टि हिय होती ॥

अन्त—॥ दोहा ॥ राम रूप भूपति भगति ब्याह उछाह अनंद । जात सराहत मनहिं मन मुदित गाधि सुत चंद ॥ चौपाई ॥ वाम देव रघुकुल मनि ग्यानी । बहुरि गाधि सुत कथा वखानी ॥ सुनि मुनि सुजस मनहि मन राऊ । वरनत आपन पुन्य प्रभाऊ ॥ वहुरे लोग रजायसु भयऊ । सुतन समेत नृपति ग्रह गयऊ ॥ जह तह राम व्याह जस गावा । सुजस पुनीत लोक तिहु छावा ॥ आये व्याहि राम घर जवते । वसे अनंद अवध पति तबते ॥ सकै न वरनि सहस मुख जाहू । प्रभु विवाह जस भयो उछाहू ॥ राम सिया जस मंगल खानी । कवि कुल जोबन पावन जानी ॥ तेहिते मैं निज कहा वखानी । करन पुनीत हेतु निज वानी ॥ छंद ॥ निज गिरा पावन करन कारन राम जस तुलसी कह्यौ रघुवीर चरित अपार वारिध पार कवि कोने लह्यौ ॥ उपवीत व्याह उछाह मंगल सुनि जे सादर गावहीं । वैदेहि राम प्रताप ते जन सर्वदा सुख पावहीं ॥ रघुवीर ॥ सोरठा ॥ सिय विवाहं जे सप्रेम गावहिं सुनहिं । तिन कह सदा उछाह मंगलाय जस राम तन ॥ ४४५ ॥ इति श्री राम चरित मानसे सकल कलि कलुप विध्वंसने विमल वैराग्य संपादिनी नाम अध्यात्म रामायणे उमा महेश्वर संवादे वाल कांड रामायने तुलसी कृत प्रथम सोपानः सम्पूर्णः समाप्तं सुभ मस्तु ॥ भाद्र मासे कृष्ण पक्षे तिथौ अष्टम्यां बुध वासरे लिष्यते पूर्ण दास साधु पठनार्थं देहजीत संवत् १८७४ विक्रमै जादृश्य पुस्तके तादृश्य लिख्यते मया ॥ जदि सुध्य असुधंवा मम दोपो न दीयते ॥ लिखा रहै वरसन जो न मिटावै कोय ॥ लिपन वावरा जोगलि गलि माटी होय ॥ १ ॥

विपय—रामायण बालकांड की कथा वर्णन ।

संख्या ३२१ ई. बालकाण्ड, रचयिता—तुलसी दास (राजापुर), कागज—बाँसी, पत्र—११६, आकार—१२ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१९८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—१६३१, लिपिकाल—सं० १८७९ = १८२२ ई०, प्राप्तिस्थान—जानकीप्रसाद—बमरौली कटरा, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीगणेशायनमः ॥ श्रीसरस्वतैनमः ॥ सोरठा—जेहिं सुमिरत सिधि होय, गन नायक करिवर वदन । करहु अनुग्रह सोह, बुद्धि रासि शुभ गुन सदन । मूक होइ वाचाल, पंगु चढ़े गिरिवर गहन, जासु कृपा सु दयाल, द्रवहु सकल कलि मल दहन । नील सरोवर स्याम, तरुन अरुन वारिज नयन, करहु सुमम उर धाम, सदा छीर सागर सयन । कुंद इंदु सम देह, उमा रमन करुना यतन ॥ जाहि दीन पर नेह, करहु कृपा मरदन मयन ॥

अंत—निज गिरा पावन करन कारन राम जस तुलसी कह्यो। रघुवीर चरित अपार वारिधि, पारि भवि कोने लह्यो। उपवीत व्याह उछाह मंगल, सुनि जे सादर गावहीं। वेदेहि राम प्रसाद ते जन सर्वदा, सुख पावहीं॥ सोरठा—सिय रघुवीर विवाह, जे सप्रेम गावहिं सुनहिं, तिन कहँ सदा उछाह, मंगल यतन राम जस। इति श्री राम चरित्रे मानसे सकल कलि कलुष विध्वंसे विमल हरि भक्ति संपादिनी नाम प्रथम सोपान॥ मासोत्मासे श्रावन मासे शुक्ल पक्षे द्वादश्यां भोम वासरे संवत् १८७९

विषय—रामायण बालकांड की कथा का वर्णन। राम जन्म तथा विवाह आदि का विस्तृत वर्णन है।

संख्या ३२५ एफ. बालकाण्ड, रचयिता—तुलसी दास (काशी, राजापुर), कागज—बाँसी, पत्र—१४०, आकार—१०×५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३५००, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० सोनपाल ब्राह्मण, ग्राम—सरेन्धी, डाकघर—जगनेर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—जेहि सुमरत सिधि होय गन नायक करवर वदन। करौ अनुग्रह सोय, बुद्धि रासि सुभ गुन सदन। मूक होइ वाचाल, पंगु चढ़ै गिरिवर गहन। जासु कृपा सु दयाल, द्रवो सकल कल मल दहन। चौपाई—बन्दौ गुर पद पदम परागा, सुरुचि सुवास सरस अनुरागा। अमियमूरि मय चूरण चारु। शमन सकल भवरन परिवारु।

अंत—चौपाई—सुदिन सोधि कर कंकर छोरे, मंगल मोद विनोद न थोरे। तुम छोरो दूलह राम जानकी को कंकन छोरो। कौसिल्यादिक आरती राई नौन उतारि। कमल मुषी कंकनादि छुड़ावहिं गावहिं अमृत गारि। यह न होइ सारंग लला जू जाहि लेहु तुम तानि। सीय डोरनि छोरनि चित चोरनि सिथिल भई पीय पानि। कंकन छोरयो न जाय लला अब। लोकि कुँवर कर कोर। देखि देखि नाम चन्द्र ······ दग भये हैं चकोर। कै तुम रोकै कै कर जोरो कै तुम हाहा खाऊ। छोरि लियो चित चोरि सुख सागर नागर नाऊ।

विषय—रामायण बाल कांड की कथा वर्णन।

संख्या ३२५ जी. रामायण अयोध्याकाण्ड, रचयिता—गोस्वामी तुलसीदास (राजापुर, जिं० बाँदा), पत्र—५६, आकार—१०×६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२४६४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १७९० = १७३३ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा हरीदास, छर्रा, डाकघर—छर्रा, जिला—अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ रामायण अयोध्या कांड तुलसी कृत लिख्यते ||दोहा|| श्री गुरु चरन सरोज रज निज मन मुकुर सुधारिं। वरणों रघुवर विमल जस जो दायक फल चारि॥ चौ० जवते राम व्याहि घर आये। नित नव मंगल मोद वधाये॥ भुवन चारि दस भूधर भारी। सुकृत मेघ वरषहिं सुख वारी॥ रिधि सिद्धि संपति नदी सुहाई। उमगि

अवधि अंबुधि कहँ आई ॥ मनिगन पुर नर नारि सुजाती। सुचि अमोल सुन्दर सब भांती ॥ कहि न जाय कछु नगर विभूती। जनु इतनी विरंचि कर तूती ॥ सब विधि सब पुर लोग सुखारी। रामचन्द्र मुख चंन्द्र निहारी ॥ मुदित मातु सब सखी सहेली। फलित विलोकि मनोरथ वेली ॥ राम रुप गुण शील सुभाऊ। प्रमु दित होहिं देखि मुनि राऊ ॥ दो०-- सबके उर अभि लाप अस कहहिं मनाइ महेसु। आप अछत जुव राज पद रामहिं देहिं नरेस ॥

अन्त—चौ०—पुलक गात हिय सिय रघुवीरू। जीह नाम जप लोचन नीरू ॥ लखन राम सिय कानन वसहीं। भरत भवन वसि तप तनु कसहीं ॥ दोऊ दिसि समुझि कहत सब लोगू। सब विधि भरत सराहन जोगू ॥ सुनि व्रत नेम साधु सकुचाहीं। देषि दसा मुनि राज लजाहीं ॥ परम पुनीति भरत आचरनू। मधुर मंजु मुद मंगल करनू ॥ हरन कठिन कलि कलुप कलेसू। महा मोह निसि दलन दिनेसू ॥ पाप पुंज कुंजर मृग राजू। समन सकल संताप समाजू। जन रंजन भंजन भव भारू। राम सनेह सुधा करि सारू ॥ छंद—सिय राम प्रेम पियूष पूरन होत जन मुन भरत को। दुख दाह दारिद दंभ दूषण सुजस मित अपहरत को ॥ कलि काल तुलसी से सठन्हि हठि राम सब मुख करत को ॥ सोरठा—भरत चरित करि नेम तुलसी जे सादर सुनहिं। सीय राम पद प्रेम अवसि होइ भव रस विरति ॥ इति श्री राम चरित मानसे सकल कलि कलुष विध्वंसने भरत संगमो नाम द्वितीय सोपान समाप्तः ॥ राम राम अजोध्या कांड संपूर्ण समाप्तः लिखतं प्रहलाद दास सिष्य श्री स्वामी माधोदास निरंजनी संवत् १७९० वि०

विषय—रामायण अयोध्याकांड की कथा का वर्णन।

संख्या ३२५ एच. अयोध्याकाण्ड रामायण, रचयिता—गोस्वामी तुलसीदास जी (राजापुर, जि० बाँदा), पत्र—१४८, आकार—१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)— ३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७०६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५६ = १७९९ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० गंगादत्त मिश्र-जलेसर, डाकघर—जलेसर, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशायनमः अथ श्री रामचरित मानस अयोध्या कांड लिख्यते ॥ श्लोक ॥ वामाङ्के च विभाति भूधर सुता देवा पगा मस्तके भाले बाल विधुर्गले च गरलं यस्यो रसि व्यालराट ॥ सोयं भूति विभूषणः सुरवरा सर्वाधिपः सर्वदा। सर्वः सर्व गतः शिवा शशि निभः श्री शंकरः पातुमाम् ॥ १ ॥ प्रसन्न तांयोनगताभिषेकतः तथा न मम्लौ वनवास दुःखतः। मुखाम्बुज श्री रघुनन्दनस्यमे सदास्तु तन्मंजुल मंगल प्रदम् ॥ २ ॥ नीलाम्बुज श्यामलकोमलांगं सीतासमारौ पितु वाम भागम् ॥ पाणौ महासायक चारु चापं नमामि रामं रघुवंश नाथम् ॥ दोहा ॥ श्री गुरुचरण सरोज रज निज मन मुकुर सुधारि। वरणौ रघुवर विमल जस जो दायक फल चारि ॥ चौ०— जवते राम व्याहि घर आये। नित नव मंगल मोद वधाये ॥ भुवन चारि दस भूधर भारी। सुकृत मेघ वरषहिं सुष बारी ॥ रिधि सिधि संपति नदी सोहाई। उमगि अवध अंबुध कहँ आई ॥ मुनि गन

पुर नर नारि सुजाती । सुचि अमोल सुन्दर सब भांती ॥ कहि न जाइ कछु नगर विभूती । जनु इतनी विरंचि कर तूती ॥ सव विधि सवपुर लोग सुखारी । रामचंद मुखचंद निहारी ॥

अंत—दो०—नित पूजत प्रभु पाउड़ी प्रीति न हृदय समाति । मांगि मांगि आयुस करत राज काज बहु भांति ॥ चौ० ॥ पुलक गात हिय सिय रघु वीरू । जाहि नाम जपि लोचन नीरू ॥ लषन राम सिय कानन जाहीं । भरत भवन वसि तप तनु कसहीं ॥ दोउ दिसि समुझि कहत सव लोगू । सब विधि भरत सराहन जोगू ॥ सुनि व्रत नेम साधु सकुचाहीं । देखि दसा मुनिराज लजाहीं ॥ परम पुनीत भरत आचरनू । मधुर मंजु मुद मंगल करनूं ॥ हरन कठिन कलि कलुष कलेसू । महा मोह निसि दलन दिनेसू ॥ पाप पुंज कुंजर म्रग राजू । समन सकल संताप समाजू ॥ जन रंजन भंजन महि भारू । राम सनेह सुधार कर सारू ॥ छंद—सिय राम प्रेम पियूष पूरन हेत जनम न भरत को । मुनि मन अगम यम नियम सम दम विषम वृत आचरत को ॥ दुःख दाह दारिद दंभ दूषन सुजस मिस अपहरत को ॥ कलि काल तुलसी से सठन हठि राम सनमुख करत को ॥ सो०—भरत चरित करि नेमु, तुलसी जे सादर सुनहिं । सीय राम पद प्रेमु, अवस होइ भव रस विरति ॥ इति श्री राम चरित मानसे सकल कलि कलुष विध्वंसने विमल कर्म वैराग्य ज्ञान सम्पादनो अवध कांड संपूर्ण समाप्तः लिषतं राम भरोसे सूरज कुंड मध्ये वंदावन सुभ स्थाने संवत् १८५६ वि० राम ।

विषय—रामायण अयोध्याकांड की कथा का वर्णन ।

संख्या ३२५ आई. अयोध्या काण्ड, रचयिता—तुलसी दास (राजापुर, काशी), कागज—देशी, पत्र—८८, आकार—१२ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२३७६, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १८७९ = १८२२ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० द्वारका प्रसाद—एच० एम० बमरौली कटरा, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीगणेशायन्मः श्री सरस्वत्यैन्मः वामां के च विभाग भूधर सुता, देवा पगा मस्तके । भाले वाल विधुर्गले च गरलं, यस्यो रसि व्याल राट् । सोयं भूति विभूषणः सुरवरः, सर्वोधिकः सर्वदा । सर्व सर्व गताः शिव ससि निभः श्री संकर पातु माम् । दोहा—श्री गुरु चरन सरोज रज, निज मन मुकुर सुधारि, वरनो रघुवर विमल जस, जो दायक फल चारि ॥ जब ते राम ब्याहि घर आये । नित नव मंगल मोद बधाये । भुवन चारि दस भूधर भारी । सुकृत मेघ वर्षिहि सुखवारी । रिधि सिधि संपति नदी सुहाई । उमंगि अवध अम्बुध अधिकाई । मन गन फर नर नारि सुजाती । सुचि अमोल सुन्दर सब भांती ।

अंत—हरन कलुष कलि कंठ कलेसू । महा मोह निसि दलन दिनेसू । पाप पुंज कुंजर मृग राजू । समन सकल सन्ताप समाजू । जन रंजन भंजन भव भारू । राम सनेह सुधाकर सारू । छन्द—सिय राम प्रेम पियूष पूरण जन्म न भरत को । मुनि मन अगम संगम नेम सम दम विषम कृत आचरन को । दुष दुष्ट दारिद दम्भ दूषन सुनरूमिस

अब हरत को, कलिकालि तुलसी से सठनि हठि, राम सन्मुख करत को। सोरठा—भरत चरित करि नेम, तुलसी सादर जे सुनहिं, सीय राम पद प्रेम अविसि होइ भवरम विरति। इति श्री राम चरित्रे मानसे सकल कलि कलुष। विध्वंसने अविरल भक्ति सम्पादिनी नाम द्वितीय सोपान समाप्त मासोत्तमासे भाद्र प्राद मासे शुक्ल पक्षे सप्ताम्यां शनिवासरे संवत् १८७९।

विषय—रामायण अयोध्या कांड की कथा का वर्णन।

संख्या ३२५ जे. अजोध्या काण्ड, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर), कागज—देशी, पत्र—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६४०, रूप—प्राचीन, लिपि – नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, प्राप्तिस्थान – पं० सोनपाल ब्राह्मण, ग्राम—सरैंधी, डाकघर—जगनेर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—अथ अजुध्या काण्ड लिष्यते। श्री राम जी। दोहा—श्री गुर चरन सरोज रज, निज मन मुकुर सुधार। वरनौ रघुबर विमल जस, जो फलदेवहिं चार। चौपाई—जब ते राम ब्याहि घर आये नित नव मंगल मोद बधाये। भुवन चार दस भूधर भारी। सुकृत मेध वरषहि सुख वारी। रिधि सिधि संपति सकल सुहाई। उमगि अवधि अम्बु धरि धारी। मन गन पुर नर नारी सुजाती। सुचि अमोल सुन्दर सब भांती।

अंत—सिय राम प्रेम पियूष पूरन होत न जन्म भरत को। मुनि मन अगम सब नियम यम दम विषम व्रत आचरत को। दुखदाह दारिद दम्भ दूखन सुजस मिसु अपहरत को। कलि काल तुलसी से सठहिं हठि राम सनमुख करत को। सोरठा—भरत चरित करि नेम, तुलसी जे सादर सुनहिं। सीय राम पद प्रेम, अवधि होइ भव रस विरति।

विषय—राम बनवास, दशरथ मरण और भरत मिलन आदि का वर्णन है।

संख्या ३२५ के. रामायण आरण्य काण्ड, रचयिता—गोस्वामी तुलसीदास (राजापुर, जि० बाँदा), पत्र—५०, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२१, परिमाण (अनुष्टुप्)—७५०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १७६० = १७०३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शिवदुलार-टीकमपुर, डाकघर—जलेसर, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि – श्री गणेशाय नमः अथ आरन्य कांड लिख्यते ॥ मूलं धर्म तरोर्विवेक जलधौ पूर्णेन्दु मानंद दं ॥ वैराग्यांबुज भास्करं अघहरं ध्वांतापहं तापहं ॥ मोहांभोधर पुंज पाटन विधौ खेसं भवं शंकरम् ॥ वन्दे ब्रह्म कुलं कलंक शमनं श्री राम भूमप्रियं ॥ १ ॥ सांद्रानंद पयोद सौभगतनुं पीताम्बरं सुंदरं। पाणौ वाण सराशनं कटि लस तूणीर भारं वरं ॥ राजीवायत लोचनं धृत जटा जूटेन संसोभितं ॥ सीता लक्ष्मण संयुक्तं पथि गतं रामाभि रामं भजे ॥ सो०—उमा राम गुण गूढ़ पंडित मुनि पावहिं विरति। पावहिं मोह विमूढ़ जे हरि विमुष न धर्म रति ॥ चौ०—पूरण भरत प्रीति मैं गाई। मति अनिरुप अनूप सोहाई ॥

अब प्रभु चरित सुनहु अति पावन। करत जे वन सुर नर मुनि भावन ॥ एक वार चुनि कुसुम सुहाये। निज कर भूषण राम बनाये ॥ सीतहिं पहिराये प्रभु सादर। बैठे फटिक शिला परमाधर ॥

अन्त—दो०—गुणागार संसार दुख रहित विगत संदेह। तजि मम चरण सरोज प्रिय तिन कह देह न गेह ॥ चौ०—निज गुण श्रवण सुनत सकुचाहीं। पर गुण सुनत अधिक हरिषाहीं ॥ राम शील नहिं त्यागहिं नीती। सरल सुभाव सबहिं सन प्रीती ॥ जप तप व्रत दम संजम नेमा। गुरु गोविन्द विप्र पद प्रेमा ॥ श्रद्धा क्षमा मयत्री दाया। मुदिता मम पद प्रीति अमाया ॥ विरति विवेक विनै विज्ञाना। बोध यथा रथ वेद पुराना ॥ दंभ मान मद करहिं न काऊ। भूल न देहिं कुमारग पाऊं ॥ गावहिं सुनहि सदा मम लीला। हेतु रहित परहित रत शीला ॥ मुनि सुनि साधन के गुण जेते। कहि न सकहिं सारद श्रुति तेते ॥ छंद—कहि सक न शारद शेष नारद सुनत पद पंकज गहे। अस दीन बंधु कृपाल अपने भक्त निज गण मुप कहे ॥ सिर नाइ वारहिं वार चरणन ब्रह्म पुर नारद गये। ते धन्य तुलसी दास आस विहाइ जे हरि रंग रहे ॥ रावणादि यश पावन गावहिं सुनहिं जो लोग। राम भक्ति दृढ़ पावहीं विनु विराग जप जोग ॥ दीप सिषा सम युवति रस मन जनि होसि पतंग ॥ भजहिं राम तजि काम मद करहिं सदा सत संग ॥ इति श्री राम चरित मानसे सकल कलि कलुष विध्वंसने विमल वैराग्य संपादनो नाम तृतीया सो पानः समाप्तः लिखतं सोहन दास जेठ सुदि ११ दशी संवत् १७६० वि०

विषय—रामायण आरण्य काण्ड की कथा का वर्णन।

संख्या ३२५ एल. आरण्य काण्ड, रचयिता—तुलसी दास (राजापुर काशी), कागज—बाँसी, पत्र—२५, आकार—१२ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१, लिपिकाल—सं० १८७९ = १८२२ ई०, प्राप्तिस्थान—जानकी प्रसाद ब्राह्मण—बमरोली कटरा, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशायनमः श्रीसरस्वत्यैनमः श्लोक। मूलं धर्म्म मरो विवेक जलधैः पूर्णेन्दु मानन्ददं। वैरागं भुज भास्करं हर्थं घनं, ध्वान्ता पहं ताप इम्। मोहायो धर पुंज पाटन विधौस्व संभवं शंकरं। बन्दे ब्रह्म कुल कलंक शमनं श्रीराम भूपं प्रियम्। सोरठा—उमा राम गुण गूढ़, पंडित मुनि पावहिं विरति। पावहिं मोह विमूढ़, जे हरि विमुख न धर्म रति। चौपाई—पूरण भरत प्रीत मैं गाई। मति अनुरूप अनूप सुहाई। अब हरि चरित सुनहु अति पावन। करत जे बन सुर नर मुनि भावन।

अंत—कहि न सक सारद सेष नारद, सुनत पद पंकज गहे। अस दीन वन्धु कृपाल अपने भक्त गुन निज मुष कहे। सिर नाइ बारहिं बार चरननि, ब्रह्मपुर नारद गये। ते धन्य तुलसी दास अस विहाइ जे हरि रंग रए। दोहा—राव नारि जस पावन गावहिं सुनहि जे लोग। राम भक्ति दृढ़ पावहीं विन विराग जप जोग। इति श्री राम चरित्रे सकल कलि कलुष विधंसो। अविरल भक्ति संपादिनं तुलसी कृत रामायण तृतीय सोपान समाप्त मिती ज्येष्ठ सुदी १३ रवि वासरे संवत् १८७९

विषय—रामायण आरण्य कांड की कथा वर्णन ।

संख्या ३२५ एम. रामायन (आरण्य काण्ड), रचयिता—तुलसी दास, पत्र—४२, आकार—८¾ × ५¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—९२४, रूप—अति प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १८८३ = १८२६ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० शालिगराम जी शर्मा, ग्राम—महुवा, डाकघर—जैतपुर कलाँ, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशजूय नमः । श्रीमतेरामानुजाय नमः । श्री आरण्य काण्ड रामायन । सोरठा । मुक्ति जन्म महि जानि ग्यान पानि अघ हानिकर । ······ शंभु भवाणि, सो काशी सेइ्य कस न । चौपाई—पूरन भरत प्रीत मैं गाई, मति अनुरूप अनूप सुहाई । अब प्रभु चरित सुनहु अति पावण, करत जेवन शुर नर मुनि भावण । एक बार चुनि कुसुम सुहाये निज कर भूपन राम बनाए । सीतहि प्रभु पहिराए सादर बैठे फटिक शिला अति आगर । सुरपति शुत वायश धरि वेषा, शठ चाहत रघुपति वल देषा । जिमि पपील चह शागर थाहा । महानंद मति पावन क्षाहा । शीता चरन चोंच हति भाग भागा । मूढ़ मंद मति कारन काजा ।

अंत—छंद कहि न सुक सारद सेस नारद सुनत पद पंकज गहे । अस दीन बंधु कृपाल अपने भक्त गुन निज मुष कहे । सिरु नाइ वारहि वार चरनन्ह ब्रिह्मपुर नारद गऐ । ते धन्य तुलसी दास आस सो हाइ जे हरि रंग रहे । दोहा । रावन अरि जस पावन गावहिं सुनहिं जु लोग । राम भक्ति दृढ़ पावहिं विनु वैराग्य जोग । दीप सिपा सम जुवति रश मन जनि हो सिय तंग । भजहिं राम तजि काम, मन करहि सदा सत संग । इति श्री राम चरित्र मानसे सकल कलि कलुप विध्वंसने नाम विमल वैराग्य संदीपिनी आरण्य काण्ड कथा संपूर्ण । फाल्गुण शुक्ला पंचम्यां शंवत् १८८३ ।

विषय—रामायण आरण्य कांड की कथा का वर्णन ।

संख्या ३२५ एन. आरण्यकाण्ड, रचयिता—तुलसी दास (राजापुर), कागज—बांसी, पत्र—२१, आकार—१२ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—२९४, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १८८७ = १८३० ई०, प्राप्तिस्थान—पं० दीनदयाल द्वारिका प्रसाद मिश्र, डाकघर—कांजूरौल, तहसील–खेरागढ़ जिला—आगरा ।

आदि—उमा राम गुण गूढ़, पंडित मुनि पावहिं विरति । पावहिं मोह विमूढ़, जे हरि भक्ति न धर्म्म रति । चौं०—पूरण भरत प्रीति मैं गाई । मति अनुरूप अनूप सुहाई । अब प्रभु चरित्र सुनहु अति पावन, करत जे बन सुर नर मुनि भावन । एक बार चुनि कुसुम सुहाये निज कर भूपन राम बनाये, सीतहिं पहिराये अति सादर । बैठे फटिक सिला अति सुन्दर । सुर पति सुत धरि वायष वेपा । शठ चाहत रघुपति वल देषा । जिमि पिपीलिका सागर थाहा । महामन्द मति पावन चाहा । सीता चरन चोंच हति भागा । मूढ़ मन्द मति कारन कागा ।

अंत— रावन नारि जसि पावनह गावहिं सुनहि जे लोग। राम भगति दृढ़ पावहीं बिन विराग जप जोग। दीप सिखा सम जुगति रस मन जनि होस पतंग। वनहि राम तजि काम मद करहिं सदा सतषंग। इति श्री रामचरित्रे मानसे सकल कलि कलुष विध्वंसने विमल वैराग्य सम्पादने नाम त्रितिये सोपान सं० १८८७ साके १७५२ असाढ़ सुदी ९ भोमवासरे पुस्तक लिखी मनीराम ने सुभस्थाने पथेने मध्ये चिरंजीवलाल सदा-सुख आत्म पठनार्थम्।

विषय—रामायण आरण्य कांड की कथा का वर्णन।

संख्या ३१५ ओ. बनकाण्ड रामायण, रचयिता—तुलसीदास (राजापुरा), पत्र—४५, आकार—१० × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—९७०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १९०४ = १८४७ ई०, प्राप्तिस्थान—नाथूदास बनिया, पुरानी बस्ती—कटनी।

आदि—श्रीगणेशायन्मा ॥ परम गुरुभ्यो नमः ॥ श्रीराम ॥ अथ लिख्यते तुलसीकृत रामायण बन काण्ड ॥ सोरठा ॥ उमा रामगुण गूढ़, पंडित मुन पावहिं वरति। पावहि मोह विमूढ़, जे हरि भजत न धर्म रति ॥ चौ०—पूरन भक्ति प्रीति मैं गाई। मति अनुरूप अनूप सुहाई ॥ अब प्रभु चरित सुनौ अति पावन। करत जो सुर नर मुनि पावन ॥ निज कर भूषण राम बनाये। एक बार चुनि कुसुम सुहाये ॥ सीतहिं पहिराये प्रभु सादर। बैठे फटिक शिला पर सुंदर ॥

अंत—इति श्री राम चरित्रे ॥ मानसै सकल कलि कलुश बिध्वंसने विमल विराग संदेह संपादिनी नाम अथ सोपान सम्पूर्न समाप्तं ॥ दोहा ॥ बार बार विनती करौं पंडित सवन निहोर ॥ अछर घटे सुधार वी, मोह न दीजे खोर ॥ मिती असाढ़ वदी १४ संवद १९०४ की साल लिषते दुलारे कन्देले ने। मुकाम मुरवारे ॥ समपूरन ॥

विषय—रामचंद्र के वनवास का तथा सीता हरण आदि का वर्णन।

संख्या ३२५ पी. आरण्य काण्ड, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर, काशी), कागज—बाँसी, पत्र—१५, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १९०६ = १८४९ ई०, प्राप्तिस्थान—जानकी प्रसाद ब्राह्मण—बमरोली कटरा, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ सोरठा ॥ उमा राम गुण गूढ़, पंडित मुनि पावहिं बिरति, पावहि मोह विमूढ़, जे हरि विमुख न धर्म्म रति। चौपाई—पूरन करत प्रीति मैं गाई मति अनुरूप अनूप सुहाई। अब प्रभु चरित सुनहु अति पावन, करै चरित जे मुनि सुरभावन एक बार चुनि सुमन सुहाये, निज कर भूषन राम बनाये। सीतहि पहिराये प्रभु सादर, बैठे फटिक शिला परमादर। सुरपति सुर धर वायस भेषा। सठ चाहत रघुपति वल देखा। जिमि पिपीलका सागर थाहा। महा मन्द मति पावन चाहा। सीता चरन चोंच

हृति भागा । मूढ़ मन्द मति कारन कागा । चला रुधिर रघुनायक जाना । सींक धनुष साइक सन्धाना । दोहा—अति कृपालु रघुनायक, सदा दीन परनेह । तेहि सन आइसु कीन्ह छल, मूरख औगुन गेह ॥

अन्त—सीयराम प्रेम पियूष, पूरन होत जन्म न भरत को । मुनि मन अगम जम नियम सम दम विषय वित आचरन को । कलिकाल तुलसी सेस ठनि हरि राम सन्मुख करतहिको । सोरठाः—भरत चरन करि नेम, तुलसी जे सादर सुनहिं, सीय राम पद प्रेम अवसि होइ भव रस विरति । इति श्री राम चरित्र मानसे सकल कलि कलुष विध्वंसनो मंडलीय सोपान विमल ज्ञान नाम सम्पा दिनि नाम दो है । वा राधिकादास पुजारी को चेला ॥ राम × × तत्र वरण मासोत्त मासे वाई साख मासे ॥ शुभ क्रिसन पक्षे तीथ ३।४ बुधवासरे साके साल वाहनस्य १७३ श्री सम्वत् १९०६

विषय—सीता हरन तथा जटायु मरण ।

संख्या ३२५ क्यू. किष्किन्धा काण्ड, रचयिता—तुलसी दास (राजापुर काशी), कागज—देशी, पत्र—१९, आकार—७ × ४½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३३०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १८६२ = १८०५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० गौरीशंकर शुक्ल शास्त्री, डाकघर—जगनेर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा ।

आदि—श्लोक—सोरठा–मुक्ति जन्म महि जानि ज्ञान खान अघ हानिकर । जेहिं वस शंभु भवानि सो काशी सेइय कसन । जरत सकल सुर वृन्द विषम गरल जेहि पान किय । तेहि न भजसि मति मन्द को कृपाल शंकर सरिस । चौपाई–आगे चले बहुरि रघुराया । ऋषि मूक पर्वत नियराया ॥ तहँ रह सचिव सहित सुग्रीवा । आवत देखि अतुल बल सीवा ॥

अंत—छन्द—कपि सैन संग संघारी निसचर राम सीता आनि त्रैलोक पावन सुमरु सुर नर मुनि नाग दास बखानि हैं जो सुनत गावत कहत समुझत परम पद गावहीं रघुबीर पद पाथोज मधुकर दास तुलसी गावही–दोहा—भव भेषज रघुनाथ जस सुनहिं जे नर अरु नारि । तिन्ह कर सकल मनोरथ सिद्ध करहि त्रिपुरारि ॥ सोरठा—नीलोत्पल दल श्याम काम कोट शोभा अधिक ॥ सुनिय तासु गुन ग्राम जासु नाम अघ खग बधिक ॥ इति श्री राम चरित्रे मानसे सकल कलुख विध्वसने विसुध संतोख सम्पादिनो चतुर्थो किष्किन्धा काण्ड संवत १८६२

विषय—किष्किंधा कांड रामायण की कथा का वर्णन ।

संख्या ३२५ आर. किष्किन्धा काण्ड, रचयिता—तुलसी दास (राजापुर), कागज—बांसी, पत्र—१३, आकार—१२ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३५१, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १८७९ = १८२२ ई०, प्राप्तिस्थान—जानकी प्रसाद ब्राह्मण–बमरोली कटरा, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीगणेशायनमः। श्लोक : × × × सोरठा—मुक्ति जन्म महि जानि, ज्ञान खान अध हानिकर, तहां बस संभु भवानि, सो कासी सेइय न कस। जरत सकल सुर वृन्द, विषम गरल जेहि पान किय। तेहि न भजसि मति मन्द, को कृपाल संकर सरिस। चौपाई—आगे चले बहुरि रघुराया, रिष्यमूक पर्वत नियराया। तहं रह सचिव सहित सुग्रीवा, आवत देखि अतुल बल सीवा।

अंत—छंद—कपि सैन सिहारि निश्चरहि राम सीतहि आनि है। त्रैलोक पावन सुजस सुर मुनि नारदादि बखानि है। जो सुनत गावत कहत समुझत, पर्म पद नर पावहीं रघुवीर पद पाथोज मधुकर दास तुलसी गावहीं। दोहा—भव भेखत रघुनाथ जस, सुनहिं जे नर अरु नारि, तिनकर सकल मनोरथ, सिधि करहिं त्रिपुरारि॥ सोरठा—नीलोत्पल तन स्याम, काम कोटि शोभा अधिक, सुनीय तासु गुन ग्राम जासु नाम अघ खग वधिक। इति श्री राम चरित्रे मानसे कलि कलुष विध्वंसनो नाम चतुर्थो सोपान किष्किन्धा काण्ड सम्पूर्ण शुभ मस्तु॥ संवत् १८७९।

विषय—रामचन्द्र जी का सुग्रीव को मित्र बनाना तथा सेना एकत्र करने का वर्णन।

संख्या ३२५ एस. रामायण (किष्किन्धा काण्ड), रचयिता—तुलसीदास, पत्र—१०, आकार—११$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई० लिपिकाल—सं० १८८७ = १८३० ई०, प्राप्तिस्थान— पं० बटेश्वर दयाल जी—जैतपुर कलाँ, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशायनमः। श्री सरसुती जू परम परम गुरूये नमः। अथा रामाइनि किसिकिंधा कांड लिषते। सोरठा। मुक्ति जान्म महि जानि। ज्ञान पानि अगहनि करि जहं वसै संभु भवानि। सो कासी सेइय कसन जरत सकल सुरविंद। विषम गरुला। जिन पानि कीय। तिहि न भजसि मति मंद। को क्रपाल संकर सरस। चौपाई। आगे चले बहुरि रघुराया ऋषि मूक पर्वत नियराया। तहां वसै सचिव सहित सुग्रीवा, आवत देखे अतुल वल सीवा। अति सभीति कहि सुनि हनुमाना पुरूष जोग वल रुप निधाना। धरि वट रूप देषु तहँ जाई कहसु आनि मह्यि सवनि बुझाई। पठवा वलि होइ मनमैला, भाजों तुरत तजो यहि सैला। विप्र वेष धरि कपि तहां गएऊ, माथो नाइ पूछत अस भएऊ। को तुम स्यामल गौर सरीरा, छत्रिय रुप करहु वन वीरा। कठिन भूमि कोमल पद गामी, कवन हेत वन विचरे स्वामी। मदुर मनोहर सुंदर गाता। सहह दुसह वन आतप वाता॥ को तुम तीन देव में कोऊ, नर नारायन कै तुम दोऊ।

अन्त—कपि सँग सैन सिंहारि निश्चर राम सीतहिं आनिहै। त्रैलोक पावन सुजस सर नर नारदादि वपानि है। जो यह कथा सुनावत कहत गुणत गावत परम पादु पावही। रघुवीर पद पाथोज मधुकर सो दास तुलसी गावही दोहा—भव भेषज रघुनाथ जस, सुनहि जे नर नारि। तिन्हके सकल मनोरथ सिदि करहिं त्रिपुरारि। चौपाई—नीलोत्पल तन स्याम, काम कोटि सोभा अधिक। सुनीयति सर्गुण ग्राम जासु नाम पग अघ वधक। इति श्री राम

चरित्र मानसे सकल कलि कलुष विध्यसनो मतीः संवत १८८७ मासोत्तमासे मंण सुकल पक्ष १३ रविवार ।

विषय—सुग्रीव मिलाप तथा बालिवध वर्णन ।

संख्या ३२५ टी. किष्कि-धा काण्ड, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर), कागज—देशी, पत्र—१७, आकार—१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३२३, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल-सं० १८८७ = १८३० ई०, प्राप्तिस्थान—श्री दीन दयाल द्वारिका प्रसाद, डाकघर—कागारोल, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । सोरठा । मुक्ति जन्म महि जानि, जानि खानि अघ हानि कर । जहं बसि सम्भु भवानि, सो कासी सेइय कसन । जरत सकल सुर वृन्द, विषम गरल जिहि पान किय, तिहिं न भजसि मति मन्द, को कृपाल संकर सरस । जिहि खोजत अज ईस, सनकादिक मुनि ध्यान धरि । सेवहिं सकल मुवीस, प्रगट भराउ संसार सन । चौपाई । आगे चले बहुरि रघुराया । रिष्यमूक पर्वत नियराया ।

अन्त—दोहा—भव भेखज इक नाथ जस, सुनै जे नर अरू नारि । तिन कर सकल मनोरथ, सिद्धि करहिं त्रिपुरारि । सोरठा—निलोतपल दल स्याम, काम कोटि सोभा अधिक । सुनै तासु गुन ग्राम जासु नाम खग अघ वधिक । इति श्री राम चरित मानसे सकल कलि कलुष विध्वंसने भगति अनन्य संपदा वाद ने नाम चतुर्थ सोपानः ईती किंसकिंधा काण्ड तुलसी कृत समाप्त ॥ संवत १८८७ शाके १७५२ तत्र वर्षे श्रावण सुदी ६ रवि वासरे पुस्तक लिख्यौ मिश्र मनीराम स्वभ अस्थान पथैने मध्ये लिखी । गुलाबा के पुत्र लाला सदा सुख की आत्म पठनार्थं शुभं भवतु ।

विषय—राम चंद्र की सुग्रीव से मित्रता होना, वालि वध तथा सेना का इकट्ठा करना ।

संख्या—३२५ यू. किष्किन्धा काण्ड, रचयिता—तुलसी दास (राजापुर), पत्र—२३, आकार—८ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—८००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १९०२ = १८४५ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री कीर्तिभानु राय मालगुजार—राइवाड़ा कटनी, मध्य प्रान्त ।

आदि—श्रीगणेशजून्मः ॥ श्रीसरस्वतीजुन्मः । अथ लिषते किष्किन्धा काण्ड की कथा ॥ सोरठा-मुक्त जन्म महँ जान, ज्ञान खान अघ हान कर जहँ बसि शंभु भवानि, सो काशी सेहई न कस चौपाई :-आगे चले बहुरि रघुराया । रीष मूक परवत नियराया, तहँ रह सचिव सहित सुग्रीवा । आवत देख अतुल बल सींवा, अति सभीत कह सुन हनुमाना । पुरख जुगलबल कृपा निधाना ॥

अंत—भय भेषज रघुनाथ जसु, सुनहि जे नर अरु नारी तिन कर सकल मनोरथ, सिद्धि करहिं त्रिपुरारी । सोरठा नील जलद तनु स्याम, काम कोटि सोभा अधिक सुन जासु

गुन ग्राम, जाऊ नाम अघ खग वधिव। इति श्री राम चरित्रे मानसे सकल कलि कलुष विध्वंसने किष्किन्धा काण्ड अगहन वदी १० सं० १९०२ लिषते

विषय—राम की सुग्रीव से मित्रता होना, बालि वध तथा सेना एकत्र करना।

संख्या ३२५ व्ही. किष्किन्धा काण्ड, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर), पत्र—२८, आकार १० × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—५०४, रूप—अत्यन्त पुराना, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपि-काल—सं० १९०४ = १८४७ ई०, प्राप्तिस्थान—नाथदास बनिया-पुरानी बस्ती, कटनी, मध्यप्रदेश।

आदि—श्री गणेशजून्मा ॥ श्री सरस्वती जूमा ॥ किष्किन्धा काण्ड की कथा ॥ सोरठा ॥ मुक्त जन्म मँह जानि, ग्यान षान अघ हानि कर। जहं बस सम्भु भवानि, सो काशी सेइय न कस ॥ चोपाही—:आगे चले बहुरि रघुराया। रीष मूष पर्वत नियराया ॥ तँह रहि सचिव सहित सुग्रीवा। आवत देषि अतुल बल सींवा ॥ अति सभीत कह सुन हनुमाना। पुरुष्य जुगल बल······निधाना धरि बट रुप देषि तै जाई ॥ कहि सुजान तिउ सैन बुझाई ॥

अंत—सोरठा—नील जलद घन श्याम, काम कोटि सोभा अधिक सुनहि तासु गुन ग्राम, जासु नाम अघ भय वधिक ॥ इति श्री राम चरित्रे मानस सकल कलि कलुष विध्वंसने किष्किन्धा काण्ड सम्पूर्न ॥ शुभ मस्तु ॥ चतुर्थ सोपान समाप्ते ॥ जथा जैसी प्रति पाई तैसी लिषी ॥ मम दोष न दीयते ॥ मिती वैसाष सुदी ९ संवद १९०४ की साल ॥ लिषते दुलारे कंदेले मुकाम मुरवारा ॥ श्री गनेसजू ॥ श्री सीतारामजू

विषय—रामचंद्र की सुग्रीव से मैत्री होना, बालि वध एवं रावण के विरुद्ध सेना एकत्र करना।

संख्या ३२५ डब्ल्यु. किष्किन्धा काण्ड, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर, काशी), पत्र—२८, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४४४, रूप—अति प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—स० १९०४ = १८४७ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री गजाधर सिंह रामचरण क्षत्री, ग्राम—सरैंधी, डाकघर—जगनेर, तहसील-खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ श्री सरस्वतीय नमः। श्री गुरूभ्यो नमः। श्री जानकी वल्लभाय नमः ॥ सोरठा—मुक्ति जनम महि जानि, ज्ञान खानि अघहानिकर। जहां वस संभु भवानि सो कासी सेइय कसन। जरत सकल सुर वृन्द, विषम गरल जेहिं पान किय। तेहिन भजसि मति मन्द, को कृपाल शंकर सरिस। चौ०—बालि ताहि मारि गृह आवा, देखि मोहि जिय भेद बढ़ावा रिपु सम मोहि मारि अति भारी। हरि लीन्हसि सरबस अरु नारी।

अंत—भव भेषज रघुनाथ जस, सुनहि जे नर नाहि। तिनके सकल मनोरथा, सिधि करब त्रिपुरारि। सोरठा—नीलोत्पलदलस्याम, कोटि २ सोभा अधिक। भजिय तासु गुन ग्राम, जासु नाम अघ षग वधिक। इति श्री राम चरित्रे मानसे सकल कलि कलुष

विध्वंसने। चतुर्थ श्री पान। लिख्यते मिश्र पूर्नराम अवलिमध्यि जान उराजेउकी। अब अवस्था मीने उचे ग्राम वहा जो देखी जो लिखी मम दोसो न दीयते। संवत् १९०४ शाके १७६९ मिति असाढ़ सुदि ७ चंद्रवासरे राम लछमन।

विषय—रामकी सुग्रीव से मैत्री, बालि बध एवं सेना एकत्र करना आदिका वर्णन।

संख्या ३२५ एक्स. सुन्दर काण्ड रामायण, रचयिता—गोस्वामी तुलसी दास (राजापुर बाँदा), पत्र—२०, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१८०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७९० = १७३३ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा हरीदास—छर्रा, जिला—अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश)।

आदि—जात पवन सुत देवन देखा। जानै चह बल बुद्धि विसेखा॥ सुरसा नाम अहिन की माता। पठ इन्ह आइ कही तेहि बाता॥ आजु सुरन्ह मोहिं दीन अहारा। सुनत वचन कह पवन कुमारा॥ राम काज मैं करि फिरि आवौं। सीता की सुधि प्रभुहिं सुनावौ॥ तब तव वदन पैठि हौ आई। सत्य कहौं मोहिं जान दे माई॥ कवनेहु जतन देऊं नहिं जाना। ग्रससि न मोहिं कह्यौ हनुमाना॥ जोजन भरि तेहि वदन पसारा। कपि तन कीन्ह दुगुण विस्तारा॥ सोरह जोजन मुख तेहि ठयऊ। तुरत पवन सुत बत्तिस भयऊ॥ जस जस सुरसा बदन वढ़ावा। तासु दुगुण कपि रुप दिखावा॥ सत जोजन तेहि आनन कीन्हा। अति लघु रुप पवन सुत लीन्हा॥ वदन पैठि पुनि वाहर आवा। मांगी विदा ताहि सिर नावा॥ मोहि सुरन जेहि लागि पठावा। बुधि वल मरम तोर मैं पावा॥ दो०—राम काज सव कर हहु तुम वल बुद्धि निधान। आसिष दे सुरसा चली हरषि चले हनुमान॥

अन्त—दो०—सुनत विनीत सु वचन अति कह कृपाल मुस काइ। जेहि विधि उतरै कपि कटक तात सो कहौ उपाइ॥ नाथ नील नल कपि दोऊ भाई। लरकाईं रिषि आसिष पाई॥ तिनके परस किये गिरि भारे। तरि हहिं जलधि प्रताप तुम्हारे॥ मैं पुनि उर धरि तव प्रभुताई। करि हहु वल अनुमान सहाई॥ इहि विधि नाथ पयोद वंधाई। सुंदर सुजस लोक तिहुं गाई॥ इहिं सर मम उत्तर तट वासी। हतहु नाथ खल गन अघ रासी॥ सुनि कृपाल सागर मन पीरा। तुर तहीं हरी राम रन धीरा॥ देषि राम वल पौरुष भारी॥ हरषि पयोनिधि भयो सुखारी॥ सकल चरित कहि प्रभुहिं सुनावा। चरन वंदि पाथोधि सिधावा॥ छंद–निज भवन गवनेउ सिन्धु श्री रघुवीर यह मत भायऊ। यह चरित कलि मल हर जथा मति दास तुलसी गायऊ॥ सुख भवन संसय समन दमन विसाद रघुपति गुन गना॥ तजि सकल आस भरोस गावहु सदा संतत सुठि मना॥ दो०—सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान। सादर सुनहिं ते तरहिं भव सिंधु विना जलयान॥ इति श्री राम चरित मानसे सकल कलुष विध्वंसने॥ ज्ञान संपादिनी नाम पंचम सो पान समाप्तः सुभं भवति॥ संवत् १७९० वि मिती सावन वदी औरस लिषतं कृपाराम महंत गंगा तट वासी काइम गंज॥

विषय—रामायण सुन्दर कांड की कथा का वर्णन।

टिप्पणी—लिपिकाल संवत् १७९० वि० है। यह ग्रन्थ उस समय का लिखा है जब काइम गंज गंगा के किनारे १ मील की दूरी पर बसा था। इस समय गंगा जी काइमगंज से ७ मील की दूरी पर बह रही हैं॥

संख्या ३२५ वाई. सुन्दर काण्ड, रचयिता—तुलसी दास (राजापुर), कागज—पुराना, पत्र—२१, आकार—१०×५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—३८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १८२५ = १७६४ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री चिरंजी लाल जी—भैरों बाजार, जिला—आगरा।

आदि—श्री रामायन। अतुलित बल धामं हेम शैलाभ देहं दनुज बन कृशानं ज्ञान नाम ग्रगन्यं॥ सकल गुण निधानं वानरा नाम धीशं रघुपति वर दूतं बात जातं नमामि चौपाई॥ जामवन्त के वचन सुहाये। सुनि हनुमन्त हृदय अति भाये॥ तब लगि मोहि परिखहु भाई। सहि दुष कन्द मूल फल खाई, जब लगि आँवहु सीतहि देषी। होई काज मन हर्ष विशेषी, अस कह नाई सबन कह माथा। चले हरप हिय धरि रघुनाथा, सिन्धु तीर एक भूधर सुन्दर। कौतुक कूँदि चढ़ै ता ऊपर

अंत—छंद॥ निज भवन गवनेऊ सिंधु श्री रघुवीर यहि मन भायउ॥ यह चरित कलि मल हर जथा मति दास तुलसी गायउ॥ सुख भवन संशय मन दमन विषाद रघुपति गुन गना॥ तजि सकल आस भरोस गावहि सुनहिं संतत सुचि मना॥ दोहा॥ सकल सुमंगल दायक, रघुनायक गुन गान। सादर सुनहिं ते तरहिं भव सिंधु बिना जल यान॥ इति श्री राम चरित मानसे सकल कलि कलुप विध्वंसने विमल विज्ञान भक्ति संपादिनी नाम पंचम सोपान सुंदर काण्डं समाप्तं सं० १८२५ (९५) पुष मासे (१) कृष्न पक्षे पंचम्य सुकर वासरे॥ लिषितं गोदावरी दास।

विषय—हनुमान का अशोक वन उजाड़ना तथा लंका में आग लगाकर और सीता का पता लेकर वापस सेना में आना।

संख्या ३२५ जेड. श्री रामायण भाषा सुमेरकाण्ड (सुंदरकांड), रचयिता—गोस्वामी तुलसीदास (राजापुर बाँदा), पत्र—३०, आकार—१०×६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—६२०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १८७२ = १८१५ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर जसकरन सिंह—टिकरिया, डाकघर—कासगंज, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः॥ अथ रामायण राम चरित मानस सुमेर कांड लिख्यते॥ श्लोक॥ शांत शाश्वत मप्रमेय मनघं गीर्वाण शान्ति प्रदं। ब्रह्मा शंभु फणीन्द्र सेव्य मनिसं वेदान्त वेद्यं विभुम्॥ रामाख्यं जगदीश्वरं सुर गुरुं माया मनुष्यं हरिं। वन्देहं करुणा करं रघुवरं भूपाल चूड़ा मणिम॥ १॥ नान्या स्पृहा रघुपते हृदयेस्म दीये सत्यम वदामि च। भवान खिलांत रात्मा॥ भक्ति प्रच्छय रघु पुंगव निर्भ रामे। कामादि दोष रहितं कुरु मान संचा॥ २॥ अतुलित वल धामं स्वर्ण सैला भदेहं॥ दनुज वन कृशानु ज्ञानि नामग्र गण्यम्॥ सकल गुण निधानं वानरा णाम धीसं। रघुपति वर दूतं वात जातं नमामी॥३॥ चो० जामवंत के वचन सुहाये सुनि हनुमान हृदय अति भाये॥ तव लगि मोहिं परषेहु तुम भाई। सहि दुख कंद मूल फल खाई॥ जव लगि आवौं सीतहिं देखी। होइ काज मोहिं

हरष विसेषी ॥ अस कह नाई सवन कह माथा । चले हरषि हिय धरि रघुनाथा ॥ सिन्धु तीर इक सुन्दर भूधर कौतुक कूदि चढ़े ता ऊपर ॥ वार वार रघुवीर संभारी । तरके पवन तनय वल भारी ॥

अन्त—दो० सुन तहिं वचन विनीत अति कह कृपाल मुसकाइ । जेहि विधि उतरे कपि कटुक तात सो करहु उपाय ॥ चौ०—नाथ नील नल कपि दोऊ भाई । लरि काई ऋषि आसिष पाई ॥ तिनके परस किये गिरि भारे । तरि हहि जलधि प्रताप तुम्हारे ॥ मैं पुनि उर धर प्रभु प्रभुताई । करि हौं वल अनुमान सहाई ॥ यह विधि नाथ पयोधि वधाइय जे मह सुजसु लोक तिहुं गाइय ॥ यहि सर मम उत्तर तट वासी । हतहु नाथ खल नर अघ रासी ॥ सुनि कृपाल सागर मन पीरा । तुरतहिं हरी राम रणधीरा ॥ देखि राम वल पौरुष भारी । हर्षि पयो निधि भयो सुखारी ॥ सकल चरित कहि प्रभुहिं सुनावा । चरन वंदि पाथोधि सिधावा ॥ छंद—निज भवन गवनेउ सिन्धु श्री रघु पतिहिं यह मत भायऊ ॥ यह चरित कलि मल हर जथा मत दास तुलसी गायऊ ॥ सुख भवन संशय समन दमन विषाद रघुपति गुन गना ॥ तजि सकल आस भरोस गावहिं सुनहि संतत शुठि मना ॥ दोहा—सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान । सादर सुनहिं ते तरहिं भव सिन्धु विना जल जान ॥ इति सुमेर कांड रामायण संपूर्णम्

विषय—रामायण सुंदर कांड ।

संख्या ३२५ ए[२]. सुन्दर काण्ड, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर), कागज—बाँसी, पत्र—२०, आकार—१२ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—५७०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १८७९ = १८२२ ई०, प्राप्तिस्थान—जानकी प्रसाद ब्राह्मण—बमरोली कटरा, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीगणेशाय नमः श्लोकः अतुलित बलधामं स्वर्ण सैलाभ देहं । दनुजवन-कृसानं ज्ञान नासाग्रगम्यं । सकल गुन निधानं वानरानामधीसं । रघुपति वर दूतं वात जातं नमामी । दोहा—वारि वरो वारि वारि है, तिहि पर बहत बयारि, रघुपति पार उतारहिं आपनि ओर निहारि । चौपाई—जामवन्त के बचन सुहाये । सुनि हनुमन्त हृदय अति भाये । जब लगि मोहिं परखेहु भाई । सहि दुख कन्द मूल फल खाई ।

अन्त—निज भाव गवनेहु सिंधु श्री रघुवीर हिय मन भाइयो, यह चरित कलि मल हरिन जथा मति दास तुलसी गाइयो । सुख भवन संसय दवन नम मन विषाद रघुपति गुन गना । तजि सकल आस भरोस गावहिं सुनहिं संतत सुचिमना । दोहा—सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान । सादर सुनहिं जे तरहिं भव, सिंधु विन जल जान ॥ इति श्री राम चरित्रे मानसे सकल कलि कलुप विध्वंसने अविरल भक्ति संम्पादिनी नाम पंचम सोपान मासोत्मासे शुक्ल पक्षे द्वादश्यां दिन वासरे संवत् १८७९

विषय—सुंदरकांड रामायण की कथा ।

संख्या ३२५ बी.[२] सुन्दर काण्ड, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर, काशी), कागज—बाँसी, पत्र—४१, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण

(अनुष्टुप्)—३००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१, लिपिकाल—सं० १८८३ = १८२६ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री वासुदेव हकीम, ग्राम—बसई, डाकघर—ताँतपुर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीमते रामानुजायनमः ॥ श्री रामोजयति ॥ चौपाई–जामवन्त के बचन सुहाये, सुनि हनुमन्त हृदय अति भाये । तब लगि मोहि परेखहु भाई । सहि दुख कंद मूल फल खाई । जब लगि सीतहिं आवौं देषी । होइ काज मन हर्ष विशेषी । अस कहि नाइ सबन कहं माथा । चले हरषि हिय धरि रघुनाथा । सिंधु तीर एक भूधर सुन्दर । कौतुक कूंदि चढे ता ऊपर । बारिं २ रघुबीर सम्हारी । तरकेउ पवन तनय बल भारी । जेहि गिरि चरण देह हनुमन्ता । चलि सो गयो पताल तुरन्ता । जिमि प्रमोद रघुपति के बाना तेहि भांति चला हनुमाना ।

अन्त—निज भौन गमन जलधि अति श्री राम यह पत मायऊ । यह चरित्र कलि मलि हरन यथा मतिदास तुलसी गायऊ । सुभ भवन संसय दमन सब कहौं रघुपति गुण गना । तजि सकल आस भरोस गावहिं नित सुनहिं संतत नना । सकल सुमंगल दायक, रघुनायक गुण ग्राम । सादर सुनहि जे तरहिं भव, सिन्धु विना जल जान । इति श्री राम चरित्र मानस सकल कलि कलुष विध्वंसनी विमल वैराग्य सम्पादिनी नाम पंचमों सोपान । इति श्री सुन्दर काण्ड सम्पूर्ण । शुभ मस्तु सं० १८८३ लिपी रामकृष्ण दास पठनार्थ उभयंदं ।

विषय—हनुमान का समुद्र लांघकर सीता से मिलना, लंका जलाना और राम को सीता की खबर देने का वर्णन ।

संख्या ३२५ सी[२]. रामायण (सुन्दर काण्ड), रचयिता—तुलसीदास (काशी), पत्र—१८, आकार—११$\frac{3}{4}$ × ६$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—६३०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १८८८ = १८३१ ई०, प्राप्तिस्थान—कालिका प्रसाद जी, ग्राम—नौनेरा, डाकघर—कस्तरी, जिला—आगरा ।

आदि—श्री सिद्ध गणेश जुव वम्ह । श्री सरसुतीजु पर्म गुरभेनमः अथा श्री रामाइन सुंदर कांड लिषते । दोहा । विघन विनासन भै हरन, करन बुधि परगास । लेत नाम गनेस कौ होत सत्रु कौ नास दरीय वदन रिपु दहन, पर देसा उपदेस । दुरजन तैं सुरजन मिलै तुम प्रसाद गंनेस । सोरठा । उमा राम गुण गूढ़, पंडित मुनि पावहि विरत, पावहिं मोहि विमूढ़ जे हरि विवेमुपन धर्म व्रत । चौपही । जाम वंत के वचन सुहाये सुनि हनुमंत हृदय अति भाये । तब लगि मोहि तुम परषहु भाई, सहि दुष कंद मूल फल पाई । जब लगि अउसीताहि देषी, होइ कांम माया हर्ष विसेषी । अस कहि नाइ सबन कह माथा, चले हर्ष हीयै धरि रघुनाथा । सिंधु तीर इक भूधर सुंदर, कौतुक कुदि चढ़ि तिहि ऊपर ।

अन्त—नाथ नील नल के दोऊ भाई, लरिकाई रिषि आइष पाई तिन्ह कै परस किऐ गरि भारे, तरइ जलधि प्रताप तुम्हारे । मे पुनि उरधारि प्रभुताई, करहि उपल अनुमान सहाई । इह विधि नाथ पाय धव धारिय, जिहि यह सुजसु लोंक तिहि गाइय ऐह मम सर

उतर तट नासी, हतउ नाथ षल नर अघरासी। सुनि कृपाल सागर मन पीरा तुरतहि हरौ राम रन धीरा। देषी वल तिहि पोरष भारी, हरषि पयो निधि भएउ सुषारी। सकहि विरत प्रभुहि सुनावा, चरन वंधि पायोधि सिधावा। छंद। निजु भवन गवनेउ सिंधु श्री रघुवीर यह सत भाइयौ। यह चरित कलि मल हरन सीमीवि दास तुलसी गाइयौ। सुप पावन संसय हरन समन विषाद रघुपति गुन गान। तजि सकल आस भरोस गावहि सुनहिं संतत सुगमान। दोहरा। सकल मंगल दाइक रघुनाइक गुन गान। सादर मुनि नहि जे भव तरहिं सिंधु विना जलपान। एते श्री राम चरित्र मानसे सकल कलि कलुष विध्वंसनो नाम विमल वैराग्य संपादनी सुंदर कांड संपूरन समाप्तम् संवत् १८८८ मिती माघु सुदी २ भ्रगुवासरे लिषत लाला हरदेव प्रसाद रहत मौजा मलावुर मुकाम मौः रुदैनी।

विषय—हनुमान का सीता की सुधि लेने लंका जाना एवं लंका को जलाना और वापस आकर राम को सीता का पता देना।

संख्या ३२५ डी[२]. सुन्दर काण्ड, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर), कागज—प्राचीन, पत्र—२६, आकार—८ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—८१९, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री कीर्तिभानु राय मालगुजार-रैवाड़ा, कटनी (मध्यप्रदेश)।

आदि—श्रीगणेशाय नम अथ लिषते तुलसीकृत रामायण सुन्दर काण्ड ॥ श्लोक ॥ अतुलित वलधामं स्वर्णशैलाभ देहँ दनुज वन कृशानं। अन नामा ग्रगम्यं ॥ सकल गुण निधानं वानराणाम धीसं ॥ रघुवर वर दूतं वात जातं नमामी। चौपाईः—जाम वन्त के वचन सुहाये। सुनि हनुमन्त हृदै अति भाये ॥ जब लगि मोहि परिषहु भाई। सहि दुख कन्द मूल फल खाई ॥ जब लगि अँइऊ सीतहि देखी। होय काज मन हर्ष विशेषी ॥ अस कहि नाई सबन कँह माथा। चला हरष धरि हिय रघुनाथा।

अंत—सकल सुमंगल धाइकर। रघुनायक गुन गान। सादर सुनहिं···सिंधु विना जल जान ॥ इति श्री राम चरित मनसे सकल कलि कलुष विमल वैराग्य सम्पादिनी नाम सुन्दर काण्ड समाप्तं लिषी मनबोध कलार, मुरवारा।

विषय—हनुमान जी का समुद्र पार लंका जाना, सीता से भेंट करना, रावण के पुत्र का वध तथा लंका जलाकर वापिस लौटना और राम को सीता का पता देना।

संख्या ३२५ ई[२]. लंकाकाण्ड, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर), कागज—बाँसी, पत्र—४८, आकार—१२ × ५ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५२४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१, लिपिकाल—सं० १८७८ = १८२१ ई०, प्राप्तिस्थान—जानकी प्रसाद ब्राह्मण-बमरोली कटरा, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः श्लोका—रामा कामारि सेव्यं भव भय हरणं काल मत्तेम सिहं। जोगेन्द्रं ज्ञान गम्यं गुन निधि मुदितं निर्गुणं निर्विकारं। माया तीतं सरसिज नयनं, देव तुल्य स्वरूपं। संखे द्वाभ मतीव सुन्दर सनु साईल चर्म्मावरं। काल व्याल कराल भूषन धरं, गंगा ससांक प्रियं। काशी संकलि कुल्य षौध समनं कल्याण कल्पुद्रुमं। नौमीयं, गिराजाय निर्गुनिधि, श्री संकरंसन्य भारि। यो सदादि सजा शुंभुं कैवल्यं मदि दुर्लभं

खलाणां दंडकृतयसौ, शंकर सन्तनो तुमां । दोहा—लवनिमेष परमान जुग, वर्षकल्प सरचंड, भजसि न मन मेहि राम कह, काल जासु को दंड ।

अंत—सब भांति अधम निषाद सो हरि भक्त ज्यो कर लाइयो । मति मन्द तुलसीदास सो प्रभु मोहवस विसराइयो । यह रावनारि चरित पावन राम पद रति प्रभु सदा । कामाहि हा विज्ञान कर सुर निध मुनि गावहिं मुदा । दोहा—यह कलिकाल मला यतन, मन करि देखु विचारि । श्री रघुनायक नाम तजि, नहिं कछु आन अधार । समर विजय रघुपति चरित, सुन हरि सदा सुजान । विजय विवेक विभूत नित, तिनहिं देहि भगवान । इति श्री रामचरित्रे मानसै सकल कलिकलु विध्वंसनो विमल विज्ञान संपादिनी नाम षष्टमो सोपान ॥ समाप्तं फाल्गुण मासे कृष्णपक्षे नवम्यां भृगुवासरे संवत १८७८ ।

विषय—राम रावण युद्ध वर्णन ।

संख्या ३२५ एफ[२]. लंका काण्ड, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर), कागज—बांसी, पत्र—४९, आकार—१३ × ६ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—८२१, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १८८७ = १८३० ई०, प्राप्ति-स्थान—पं० दीनदयाल द्वारिका प्रसाद मिश्र, ग्राम—कागारौल, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । सोरठा—लव निमेश परिवाण जुग वरष कल्प सर चंड । भजसि मन तेहि राम पद कहु काल जासु को दंड । सिंधु वचन सुन राम सचिव बोलि प्रभु अस कहउ । अब विलंब केहि काम करहु सेतु उतरह कटक । सुनहु भानु कुल केतु जाम्बन्त करि जोरि कह । नाथ नाव तब सेतु नर चढ़ि सागर तरहिं ।

अन्त—सुमर विजय रघुवर चरित सादर सुनहि सुजान । विजय विवेक विभूति नित तिनहिं देहिं भगवान । यह कलि काल मलाय तन, करि मन देखि विचार । श्री रघु-नायक नाम तजि नहिं कछु आनि अधार । इति श्री राम चरित्र मानस सकल कलि कलुष विध्वंसने विमल विज्ञान सम्पादने नाम षष्टमो सोपान सं० १८८७ साके १७५२ तव वर्षे जेष्ठ सुदि ९ चन्द्र वार सुरे पुस्तक लिखी मिश्र मनीराम ने शुभ स्थान पथिनै मध्ये लिखी गुलाबा के पुत्र सदा सुखकूं ।

विषय—राम रावण का युद्ध वर्णित है ।

संख्या ३२५ जी[२]. रामायण लंकाकाण्ड, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर), कागज—पुराना मोटा, पत्र—७८, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—२६०८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ - १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री कीर्तिभानु राय मालगुजार—रैवाडू—कटनी, जिला—जब्बलपुर (मध्य प्रदेश) ।

आदि—सिधस श्री गनपतेभो नमा श्री परम गुरुभो नमा । श्री सर सुती भो नमा श्री राम सीता···सोरठा जेहि सुमिरत सिध होइ ॥ गन नाइक करिवर वदन ॥ करहु अनुग्रह सोई ॥ वुध्य रास सुभ गन सदन ॥ लिषते तुलसी दास क्रत रामाइन लंका काण्ड ॥ श्री गुरु चरण सरोज रज, निज मन मुकुर सुधार ॥ वरनौ रघुवर विसद जसु जो दाइक फल

चार ॥ लवन मेष पर वन जुग बर्ष कल्प सर चंड ॥ भजसि न मन तिहि राम कह काल जासु को दंड ॥ सिंधु वचन सुनि राम, सचिव बोल प्रभु अस कहिव ॥ अब विलम्ब केहि काम रचहु सेत उतरै कटक ॥

अन्त—दोहा यह कल कालि मालाइ तन, मन कस देखि विचारि ॥ श्री रघुनायक राम तज, नहिं कछु आनि अधारि ॥ इति श्री राम चरित्रे मानसे सकल कलि कलुष विध्वंसने विमल वैराग्य सम्पादिनी नाम लंका काण्ड षष्टमो सोपान संपूर्न समाप्त शुभ मस्तु लिषी ईसुर दास मुरवारे बैठै सुभ अस्थात ॥ पंश्री ठाकुर रामदत्त देवदत्त की साहिबी में सं० १९३२ के साल माघ वद ८ बुधवार के रोज ॥ श्री सीता राम

विषय—राम रावण युद्ध वर्णन ।

संख्या ३२५ एच[२]. रामायण उत्तर काण्ड भाषा, रचयिता—गोस्वामी तुलसीदास (राजापुर बाँदा), पत्र—३८, आकार—१० X ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) – २८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०६४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७६० = १७०३ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा हरीदास-छर्रा, डाकघर—छर्रा, जिला—अलीगढ़ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ दो० ॥ रहा एक दिन अवधि कर अति आतुर पुर लोग । जहँ तहँ सोचहिं नारि नर कृसु तनु राम वियोग ॥ सगुन होहिं सुन्दर सकल मन प्रसन्न सब केर । प्रभु आगमन जनाय जनु नगर रम्य चहुँ फेर ॥ कौशिल्यादिक मातु सब मन अनंद अस होइ । आये श्री प्रभु अनुज जुत कहन चहत अब कोइ ॥ भरत केर भुज दच्छिन फर कहिं वारहिं वार । जानि सगुन मन हरषि अति लागे करन विचार ॥ चौ०—रह्यो एक दिन अवधि अधारा । समुझत मन दुःख भयो अपारा ॥ कारन कवनि नाथ नहिं आये । जानि कुटिल किधौं मुहिं विसराये ॥ अहह धन्य लछिमन वड़ भागी । राम पदार विन्द अनुरागी ॥ कपिटी कुटिल मोहिं प्रभु चीन्हा । ताते नाथ संग नहिं लीना ॥ जो करनी समुझै प्रभु मोरी । नहिं निसतार कल्प सत कोरी ॥ जन अवगुन प्रभु मान न काऊ । दीन वन्धु अति मृदुल सुभाऊ ॥ मोरे जिय भरोस दृढ़ सोई । मिलिहहिं राम सगुन सुभ होई ॥ वीते अवधि रहैं जो प्राना । अधम कौन जग मोहि समाना ॥

अन्त—पाई न केहि गति पतित पावन राम भजु सुठि सठ मना । गणिका अजामिल व्याधि गीध गजादि खल तारे घना ॥ आभीर यमन किरात पस स्वपचादि आदि अघ रुपजे । कहि नाम नारक नेकि पावहिं होहिं राम नमामि जे ॥ रघुवंस भूषन चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं । कलिमल मनोमल धोइ विनु श्रम राम धाम सिधावहीं ॥ सुभ छन्द चौपाई मनोहर जानि जो नर उर धरै । दारुन अविद्या पंच जनित विकार श्री रघुवर हरै ॥ सुंदर सुजान कृपा निधान अनाथ पर कर प्रीति जो । सो एक राम अकाम हित निर्वान पद सम आन को ॥ जाकी कृपा लव लेश ते मतिमंद तुलसीदास हू । पायो परम विश्राम राम समान रघुबीर । अस विचारि रघुवंस मनि हरहु विषम भव पीर ॥ कामिहि नार पियार जिमि लोभिहिं प्रिय जिमि दाम ॥ तैसे ही तुम लागहु तुलसी के मन राम ॥ इति श्री राम चरित मानसे सकल कलुष विध्वंसने अविरल भक्ति संपादनो नाम सप्तमो सोपान

समाप्तः शुभ मस्तु मिती असुनि सुदी ४ लिखतं श्री स्वामी माधौ दास का शिष्य प्रहलाद दास कायम गंज गंगा तट निवासी संवत् १७६० वि०

विपय—उत्तर कांड रामायण की कथा का वर्णन।

संख्या ३२५ आई[२]. रामायण उत्तरकाण्ड भाषा, रचयिता—गोस्वामी तुलसीदास (राजापुर बाँदा), पत्र—८८, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५९०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १८७२ = १८१५ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर लाल सिंह—मनौना, डाकघर—पटियाली, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाशाय नमः अथ रामा० उत्तरकांड श्री गो० स्वामी तुलसीदास जी कृत लिख्यते ॥ हरिः ॐ तत्सत श्री रामचन्द्राय नमः॥ श्लोक ॥ केकी कंठाभिनलं सुरवर विलस द्विप्रपादाब्ज चिन्ह शोभाढ्यं पीत वस्त्रं सरसिज नयनं सर्वदासु प्रसन्नम्॥ पाणौ नाराच चापं कपि निकर युतं वंधुना सेव्य मानं नोमीढ्यं जानकीसं रघुवर मनिशं पुष्पका रुढ़ रामम्॥ कौशलेन्द्र पदकंज मंजुलौ कोमलांवुज महेश वंदितौ। जानकी कर सरोज लालितौ चिन्तकस्य मन भृंग संगिनौ॥ कुंद इन्दु दरगौर सुंदरं अंविकापति मभीष्ट सिद्धिदम्॥ २॥ कारुणीक कलकंज लोचनं नौमिशंकर मनन मोचनं॥ ३॥ दो०—रहा एक दिन अवध कर अति आरत पुर लोग। जहँ तहँ सोचहिं नारि नर कृशतन राम वियोग॥ सगुन होंहिं सुन्दर सकल मन प्रसन्न सब केर। प्रभु आगमन जनाव जनु नगर रम्य चहुँ फेर॥ कौशल्यादिक मातु सब मन अनंद अस होइ। आये प्रभु श्री अनुज युत कहत चहत अस कोइ॥ भरत नयन भुज दक्षिण फरकहिं वारहिं वार। जानि सगुन मन हरष अति लागे करन विचार।

अंत—छंद—पाई न केहि गति पतित पावन राम भजि सुन सठ मना। गनिका अजामिल व्याध गीध गजादि खल तारे घना॥ आभीर यवन किरात खल स्वपचादि अति अघ रुपजे। कहि नाम वारेक तेऽपि पावन होत राम नमामिते॥ रघुवंस भूसण चरित यह नर कहहि सुनहिं जे गावहीं॥ कलि मल मनो मल धोइ विनु श्रम राम धाम सिधा वहीं॥ शत पंच चौपाई मनोहर जानि जे नर उर धरैं। दारुण अविद्या पंच जनित विकार श्री रघुपति हरै॥ सुन्दर सुजान कृपानिधान अनाथ पर करु प्रीति जो। सो एक राम अकाम हित निर्वाण पद सम आनको॥ जाकी कृपा लवलेशतें मति मंद तुलसीदास हूँ। पायो परम विश्राम राम समान प्रभु नाहीं कहूँ॥ दो०—मोसम दीन न दीन हित तुम समान रघुवीर। अस विचारि रघुवंश मणि हरहु विषम भव पीर॥ कामिहि नारि पियारि जिमि लोभहिं प्रिय प्रिय दाम। तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय लागहु मोहिं राम॥ इति श्री राम चरित मानसे सकल कलि कलुष विध्वंसने विमल वैराग्य संपादनो नाम सप्तम सोपान उत्तरकांडः समाप्तः लिषतं राम विलास पांडे जेष्ठ सुदी ९ संवत् १८७२ वि०।

विषय—रामायण उत्तरकांड की कथा का वर्णन।

संख्या ३२५ जे[२]. उत्तरकाण्ड, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर), कागज—बाँसी, पत्र—३८, आकार—१२ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनु-

ष्टुप्)—१३३०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १८७८ = १८२१ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री जानकी प्रसाद जी, बमरोली कटरा, जिला—आगरा।

आदि—श्रीगणेशाय नमः। श्री सरस्वत्यै नमः॥ दोहा—रहा एक दिन अवधि कर, अति आतुर पुर लोग। जहां तहां सोचहिं नारि नर, कृस मनराम वियोग। सगुन होहि सुन्दर सकल, मन प्रसन्न सब केर, प्रभु आगमन जनाव जनु, नगर रम्य चहुँ फेर। कौशल्यादिक मातु सब, मन अनंद अस होइ। आए प्रभु सिय अनुज युत कहन चहत अब कोइ। भरत नयन भुज दक्षिन, फरकहिं बारहिं बार। जानि सगुन मन हर्ष अति, लागे करन विचार॥

अंत—मोसे दीन न दीन हित, तुम समान रघुवीर, अस विचारि रघुवंस मणि हरहु विषम भव भीर। कामिहिं नारि प्यारि जिमि, लोभहि प्रिय जिमि दाम, तिमि निरन्तर रघुनाथ, प्रिय लागहु, मोहि राम। इति श्री राम चरित मानसे सकल कलि कलुष, विध्वंसने अविरल भक्ति, संपादिनी नाम तुलसी कृतौ भाषा निवन्धे श्रीमद् रामायण सप्तम सोपान। मासोत्मासे माघ मासे। शुक्लपक्षे एकादश्या रवि वासरे संवत् १७७८ यद्दशं पुस्तकं दृष्ट्वा, तादृशं लिखितं मया। यदि शुद्धम शुद्धं वा मम दोष्योण दीयते।

विषय—उत्तरकांड रामायण की कथा का वर्णन।

संख्या ३२५ के[२]. उत्तर काण्ड, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर); कागज़—बाँसी, पत्र—५५, आकार—१२½ × ५½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—११५५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१, लिपिकाल—सं० १८८७ = १८३० ई०, प्राप्तिस्थाव—श्री पं० दीन दयालु द्वारिकाप्रसाद मिश्र, डाकघर—कागारौल, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशायन्मः अथ उत्तर कांड लिख्यते। दोहा—रहे एक दिन अवध कर, अति आतुर पुर लोग, जहं तहं सोचहिं नारि नर क्रसतन राम वियोग। सगुन होंहि सुन्दर सकल, मन प्रसन्न सब केर। प्रभु आगमन जनाव जनि नगर रम्यि चहुं भेर। कौसिल्यादिक मातु सब मन अनन्द अस होई। आयहु प्रभु सिय अनुज जुत कहनि चाहत अब कोई। भरत नयन भुज दक्षिने फरकत बारहिं बार। जानि सगुन मन हरषि अति लागे करन विचार।

अन्त—मोह समान नहि दीन हित तुम समान रघुवीर। अस विचार रघुवंस मनि हरहु विस मनि भीर। कामहि नारि पियारि जिमि लोभ प्यारेउ दाम। तिमि रघुनाम निरन्तर प्रिय लागहु मम राम। छन्दः—भाषा प्रबन्ध मिदम चकार तुलसीदास सन्ततत मनस पुन्य पाप हर सदा। सेवक विज्ञान भगति प्रदायकम् मायामोह प्रलाप हम सुमेल प्रेमाभि पूरम सुभम् श्री राम चरित मानस मिदम् मग त्याव गाहते इति श्री राम चरित मानस मिदम उत्तर कांड सम्पूरणम् सप्तमो अध्याय मिती असाढ़ सुदी ३ बुधवासरे संवत् १८८७ पुस्तक लिखी मिश्र मनीराम ने शुभ अस्थान पथेने मध्य। लिखी लाला सदा सुखकी।

विषय—उत्तरकांड रामायण की कथा का वर्णन।

संख्या ३२५ एल[२]. रामायण उत्तरकाण्ड, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर), कागज—पुराना, पत्र—८८, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५४०, रूप—अति प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १९०६ = १८४९ ई०, प्राप्तिस्थान—श्री कीर्तिभानु राय मालगुजार-रैवाड़ा, कटनी, (मध्य प्रदेश)।

आदि—उत्तर काण्ड श्री गनेस जू सहाइ श्री परम गुरुभ्यो नमः श्री सर सुती जू सहाई श्री रामचंद्र जू सहाइ लिषते उत्तर काण्ड रामाइन तुलसी कृत दोहा श्री मुक्त जान महि जान, खान पान अघ हानि कर जँह बस सम्भु भवानि, सो काशी सेइय न कस, जरत सकल सुर बृंद, भिषम गरल जिह पान किय, तिहि न भजस मति मन्द, को कृपाल शंकर सरस ॥ दोहा श्री गुरु चरण सरोज, निज मन मुकुर सुधार। वरनहिं रघुवर विशद जस, जो दायक फल चार ॥ रहे येक दिन अवधकर, अति आरत पुर लोग। जहँ तहँ सोचहि नारि नर, कृस तन राम वियोग ॥

अन्त—सम्पूरन संवद १९०६ साल लिषते मन बोध कलार मुकाम मुरवार ॥ यह कह जो बांचै सुनै ताको राम राम पहूँचै विप्रन दंडवत पहुँचे राम राम मीती असाढ़ सुद १ गुरउ कह सम्पूरन सीता राम सीता राम......

विषय—उत्तर कांड रामायण की कथा का वर्णन।

संख्या ३२५ एम[२]. उत्तर काण्ड, रचयिता—तुलसी दास (राजापुर, काशी), कागज—बाँसी, पत्र—७०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१०५०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० द्वारका प्रसाद प्रधानाध्यापक—बमरोली कटरा, जिला—आगरा।

आदि—चौपाई—रहा एक दिन अवध अधारा समझत मन दुष भयउ अपारा। कारन कवन नाथ नहिं आये। जानि कुटिल प्रभु मोहि विसराये। अहो लछिमन बड़ भागी। राम पदारविन्द अनुरागी। कपटी कुटिल मोहि प्रभु चीन्हा। ताते नाथ संग नहिं लीन्हा। जौं करनी समुझै प्रभु मोरी। नहिं निस्तार कल्प सत कोरी। जंन अवगुन प्रभु मान न काऊ। दीन बन्धु अति मृदुल सुभाऊ। मोरे जिय भरोस अस सोई। मिलिहई राम सगुन सुभ होई। बीते अवध रहहिं जे प्राना। अधम कौन जग मोहि समाना। दोहा—राम विरह सागर महँ भरत मगन मन होत। विप्र रूप धरि पवन सुत, आय गयऊ जनु पोत ॥

अंत—पूछेऊ राम कथा अति पावनि। सुख सनकादि संभु मन भावनि। सत संगति दुर्लभ संसारा। निमिषि दंड भरि एको बारा। देष गरुण निज हृदय विचारी। मैं रघुबीर भजन अधिकारी। सकुनाधम सब भांति अपावन, प्रभु मोहिं कीन्ह विदित जग पावन। दोहा—आज धन्य मैं धन्य अति जद्यपि सब विधि हीन निज जन जानि राम

मोहि, सन्त समागम दीन्ह ॥ नाथ जथा मति भाषेउ, राषेहु नहिं कछु गोय । चरिन सिंधु रघुनाथ करि, काह कि पावहि कोय ।

विषय—उत्तर कांड रामायण की कथा का वर्णन ।

संख्या ३२५ एन². लवकुश काण्ड, रचयिता—गोस्वामी तुलसीदास (राजापुर बाँदा), पत्र—८०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—७२०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७६० = १७०३, प्राप्तिस्थान—ठाकुर गनेश सिंह-आदमपुर, डाकघर—टडियाव, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ लवकुश कांड लिख्यते ॥ सो०—वंदौ पवन कुमार खल बन पावक ज्ञान घन । जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धरि ॥ दो०—जन्म ब्याह वन राज प्रभु सकल सुनायो मोहिं ॥ किमि गौने निज धाम प्रभु चरित सुगम सब तोहिं ॥ चौ०—जो गिरिजा सन कहा पुरारी । कहौं कथा खग पति हित कारी ॥ करि सनमान परजि सब रामा । कीने विदा चले निज धामा ॥ करत परस पर राम बड़ाई । चक्रवर्ति प्रभु हैं सुखदाई । लोक लोक जै जै धुनि होई । जीव जंतु प्रमुदित सब कोई ॥ राज नीति दस दिसा सोहाई । जीब जन्तु सब बैर बिहाई ॥ करि जय जग्य दान ब्रत नेमा । भे सुम विगत राम पंद प्रेमा ॥ गृह गृह लोक लोक पति लोका । राम प्रताप मिटे सब सोका ॥ वचन अपने मन कोउ न कहहीं । सभि अनुग्रह दिन दिन लहहीं ॥ दो०–भुवन चारि दस वेद धुनि वस हरषे सुर ईस । बरष प्रसून प्रसस करि । जय जय प्रभु जगदीस ॥

अन्त—साजोज विधि दे जुगुल अनुज भुजा जुग तन गये । कर सरजू सों मंजन चारु करि चतुर्भुज मूरत धरी ॥ तेहि समय काग भुसुंड उर में इष्ट छवि देपत भयो । मति मंद तुलसी कहत प्रभु आनन्द रस नही गयो ॥ दो०—भरत सत्रुहिन सहित प्रभु धरेउ चतुर्भुज नाम । महिमा द्विज कर साध हित यहि विधि ने सुख धाम ॥ चौ०—जेहि विधि राम रमा गृह गयऊ । व्यास मुनि षग पति सन कहेऊ ॥ सो०—विनतीं करत कर जोर । विद्या जन अरु मूढ़ जन ॥ कहियो यथा मति मूढ़ । मानत क्रत संकर भनित ॥ चौ०—खग पति कहैं दोऊ कर जोरी । हौं गुरु विनै करौं का तोरी ॥ मम उर मोह निपार उपारा । तव बाणी मम तरण प्रकारा ॥ जगत जागीर दीन तोहि रामा । कह तुम जोग देहु सुख धामा ॥ खग पति काग चरण सिर नाई । महा मोहते न उठत उठाये ॥ दो०—तासु चरण शिर नाय कह प्रेम सहित मति धीर । गयो गरुड़ अमरावती हृदै राषि रघुवीर ॥ गिरजा संत समागम समन लाभ कछु हानि । विनु प्रभु कृपा न होय सो गावहिं वेद पुरानि ॥ इति श्री राम चरित मानसे सकल कल कलुष विध्वंसने विमल वैराग्य संपादने नाम लवकुश कांड समाप्तम् लिषतं शिव गौरी संवत् १७६० वि०

विषय—इस ग्रन्थ में सीता जी को लक्ष्मण का वन में त्यागना और उनका बाल्मीकि आश्रम में जाना, लवकुश का जन्म होना, रामचंद्र जी का अश्वमेध यज्ञ करना, श्याम कर्ण घोड़ा छोड़ना, लवकुश का घोड़ा को बाँधना और फल स्वरूप युद्ध होना आदि वर्णन ।

संख्या ३२५ ओ[२]. रामायण लवकुश काण्ड, रचतिता—गोस्वामी तुलसीदास (राजापुर, बाँदा), पत्र—४०, आकार- ८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१३७०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०२ = १८४५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० गंगा प्रसाद दूबे सराय नबाब; डाकघर—सोरा, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ रामायण लवकुश कांड श्री गो० तुलसी दास कृत लिख्यते ॥ दोहा ॥ श्री भुसुंडि के वचन सुन देखि राम पद प्रीति। हुई प्रसन्न वोले गरुड़ वानी परम पुनीति ॥ सुर सरि सम पावन भयो नाथ हृदय अव मोर। जन्म जन्म छूटे नहीं नाग पदाम्बु तोर ॥ चौ०—सुने अखिल गुन गण प्रभु करे। पूरे नाथ मनोरथ मेरे ॥ तव प्रसाद वायस कुल नाथा। हृदय वसहिं अव प्रभु गुण गाथा ॥ मन संतोप न चित्त अघाहीं। यथा उदधि सरिता सर जाहीं ॥ पंच्छी पशु जंगम जड़ जाती। चर अरु अचर वरण किहि भांती ॥ जे जन अवध वसहिं सुख धामा। लिये संग सादर श्री रामा ॥ तजि सव अवध गये सह देहा। इहि सुनि नाथ परम संदेहा ॥ अव प्रभु मोहिं सव कहौ बुझाई। पिता जानि मैं करौं ढिठाई ॥ इहि इतिहास पुनीत कृपाला। जिमि मख कीन्ह राम महिपाला ॥ दो०—अस कहि गद गद वचन मृदु पुलकावली सरीर। सुनि सप्रेम हरपे विहंग वायस मति अति धीर ॥

अन्त—छंद—उच्चरित वेद प्रसन्न भरत, कृपालु हंसि सादर लयो। जल परसि कर रिपु दमन सादर पद्म वन राजा भयो ॥ कपि आदि यूथप रापि प्रभु सकल निज निज घर गये। सुग्रीव प्रभु पद वंदि वारहिं वार रवि मंडल छये ॥ सुर सहित दिनकर वंस भूपण आप जल आश्रित रहे ॥ तेहि समय बोलि अनादि प्रभु जी वचन पावन मय कहे ॥ इक मासु रहु तुम नीर यहं मम पुरी जीव जु आवहीं। तेहि सुभग देहु विमान पद निर्वान जो मम पावहीं ॥ अति प्रीति सरजू सहित मंज्जहिं मम चरण रति कर सदा। तरि जाय सुर पुर सकल सादर सुनहु मम वांणी मुदा ॥ कहि वचन अंतर ध्यान प्रभु जिमि दामिनी घन में धंसै ॥ नभ जयति जय जयकार जय जय जयति कर लै सुर लसै ॥ इहि भांति रघुपति सह चराचर लै गये निज धाम को। सो कह्यो उमहिं कृपाय तन उर राखि सादर राम को ॥ जिरिजा संत समाग महिं सम न लाभ कछु आन। विनु हरि कृपा न होंय सों गावहि वेद पुरान ॥ इहि विधि सब संबाद सुनि प्रफुलित गरुड़ शरीर। बार बार तेहि चरण गहि जानि दास रघुवीर ॥ तासु चरण शिर नाय करि हृदय रापि रघुवीर। गरुड़ गयउ वैकुंठ तब प्रेम सहित मति धीर ॥ इति श्री राम चरित मानसे सकल कलि कलुष विध्वंसने श्री गो० तुलसी दास कृते अविरल भक्ति कर संपादनो नाम लव कुश कांड संपूर्ण। लिपतं वैजनाथ गोसाई जेठ शुक्ल नवमी संवत १९०२ वि०

विषय—लवकुश और राम युद्ध वर्णन।

संख्या ३२५ पी[२]. विनयपत्रिका, रचयिता—तुलसीदास, पत्र—३७, आकार—११$\frac{3}{4}$ × ८$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७८८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—दामोदरदास गौड़, शमशाबाद, जिला - आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। गाइये गणपति जग वंदन। संकर सुवन भवानी नंदन। १। सिद्धि सदन गजवदन विनायक, कृपा सिंधु सुंदर सब लायक। २। मोदक प्रिय मुद मंगल दाता, विद्या वारिध बुद्धि विधाता। ३। मांगत तुलसी दास कर जोरे वसहु राम सिय मानस मोरे। ४॥ १॥ दीन दयाल दिवाकर देवा करि मुनि मनुज सुरासुर सेवा। १। हिम तम करि हरि कर माली, दहन दोष दुरि तरु जाली। २। कोक कोकनद लोक प्रकासी तेज प्रताप रूप रस रासी। ३। सारथी पंगु दिव्य रथ गामी, हरि शंकर विधि मूरत स्वामी। ४। वेद पुराण विदित जस जागै, तुलसी राम भगति वरु माँगै। ५॥ २॥

अंत—पवन सुवन रिपु दवन भरत लाल लपन दीनकी। निज निज औसर सुधि किए वलि जाऊँ दास आस पुजिहै पास पीन की। राज द्वार भल सब कहै साधु समी चीनकी। सुकृत सुजस साहिब कृपा स्वारथ परमारथ गति भई गति विहीन की। समैं सम्हारि सुधारिवी तुलसी मलीन की। प्रीति रीति समुझाय प्रनत पाल कृपाल परमित पराधीनकी। २७७। मारुत मन रुचि भरतकी लपित पन कही है। कलि कालहु नाथ नामसों प्रीति प्रतीति एक किंकर कीति वही है। सकल सभा सुनिलेहु वीजा तिरति सो रही है। कृपा गरीब निवाज की देषत, गरीब को सहसा वांह गही है। विहँसि राम कह्यौ सत्य है सुधि मैं तुलही है। मुदित माथ नावत वनी तुलसी अनाथ परि रघुनाथ की सही है। २७८। इति श्री विनय पत्रिका तुलसी कृत समासम् शुभम् भूयात्।

विपय—राम विनय।

संख्या ३२५ क्यु[२]. विनयपत्रिका, रचयिता—तुलसीदास, पत्र—३९, आकार—१२ × ९ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२८२८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० रामलाल जी प्रधानाध्यापक—प्राइमरी स्कूल—किरावली, जिला—अगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। गाइये गणपति गंज वंदन शंकर शुवन भवानी नंदन। सिद्धि सदन गज वदन विनायक कृपा सिंधु सुंदर सब लायक मोदक प्रिय मुद मंगल दाता विद्या वारिद वुद्धि विधाता। मांगत तुलसी दास कर जोरे वसहु राम सिय मानस मोरे दीनदयाल दिवाकर देवा कर मुनि मनुज सुरासुर सेवा। हिम तम करिके हरि कर माली दहन दोप दुप दुरित रुजासी। कोक कोकनद लोक प्रकासी तेज प्रताप रूप रस रासी। सारथी पंगु दिव्य रथ गामी। हरि शंकर विधि मूरति स्वामी। वेद पुराण विदित जस जागै। तुलसी राम भजनु वर माँगै। को जाचिय शंभु तजि आन दीन दयाल भक्त आरत हर सव प्रकार समरथ भगवान। कालकूट ज्वर जरत सुरा निज पन लागि कियौ विप पान। दाहन दनुज जगत दुप दायक जार्‌यौ त्रिपुर एक ही वान। जो गति अगम महा मुनि दुर्लभ कहत संत श्रुति सकल पुराण सोई गति मरण काल अपने पुर देत सदा शिव सबै समान सेवत सुलभ उदार कल्प तरु पारवती पति सहज सुजान। देहु राम पद नेह काम रिपु तुलसीदास कह कृपा निधान।

अंत—पवन सुवन रिपु दवन भरत लाल लपन दीनकी। निज निज औसर सुधि किए वालि जाउँ दास आस पूजि है षास पीनकी राज द्वार भल सब कहै साधु समीचीनकी। सुकृत सुजस साहिब कृपा स्वारथ परमारथ गति भई गति विहीन की। समैं सम्हारि सुधारवी तुलसी मलीन की। प्रीति रीति समुझाय प्रनत पाल कृपाल परमित पराधीन की। मारुत मन रुचि भरत की लषि लपन कही है। कलि कालहु नाथ नाम सों प्रीति प्रतीति एक किंकर की तव ही है। सकल सभा सुनि लेहु वीजानि रति सो रही है। कृपा गरीब निवाज की देपित गरीब को सहसा वांह गही है। विहंसि राम कह्यौ सत्य है सुधि मैं हुलही है। मुदित माथ नावत वनी तुलसी अनाथ परि रघुनाथ की सही है।

विषय—राम विनय।

संख्या ३२५ आर[२]. कवित्त रामायण, रचयिता—तुलसीदास, पत्र—११, आकार—४$\frac{3}{4}$ × ३$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—९०, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री रामजी अध्यापक, डाकघर—नारखी, जिला—आगरा।

आदि—श्री मिथिलेन्द्रजा प्राण वल्लभो जयति। सवैया। कीर के कागर ज्यों नृप चीर विभूषन उद्यम अंगन पाई। अवध तजी मगवास के रुष ज्यौं पंथ के साथ जो लोग लुगाई। संग सुवंधु पुनीति प्रिया मनोकर्म क्रिया धरि देह सुहाई। राजिव लोचन राम चले तजि वाप को राज वटाऊ की नाई। १। कागर चीर ज्यों भूपन चीर सरीर लस्यो तजि नीर ज्यों काई। मात पिता प्रिय लोग सबै सनमानि सुभाय सनेह सगाई। संग सुभामिनि भाई भले दिन है जनु अवध हुते पहनाई। राजिव लोचन राम चले तजि वाप को राज बटाऊ मैं नाई। २। नाम अजामिल से पल कोटि अपार नदि भव बूड़त काढ़े। जे सुमरे गिरि मेरु सिला करम होत अजाखुर वारिध वाढ़े। तुलसी जेहि के पद पंकज ते प्रगटी तटनी जेहरे अघ गाढ़े। ते प्रभु सों सरिता तरिके कह मांगत नाव किनारे ह्वै ठाढ़े।

अन्त—सुनि सुंदर वेन सुधारस सानि सयानि हे जानकि जान भलि। तिरछे करि नयन देस यत तिन्हें समुझाय कछु मुसकाय चलि। तुलसी तेहि अवसर सोह सबे अव लोकत लोचन लाहु अलि। अनुराग तड़ाग में भानु उदय विकसि मनो मंजुल कंज कलि। धरु धीर कहैं देषिय जाय जहा सज निर जनि रहि हैं। कहि हे जग पोचन सोच कछु फल लोचन आपम तो लहि हैं। सुख पाय ते कान सुने बतिया कल आपुस में कछु जो कहिहैं। तुलसी अति प्रेम लगि पलकै पुलकि लखि राम हिये महिमैं। इति श्री अयोध्या कांड कवित्त रामायण संपूर्णम्॥ छ॥ ॐ॥ छ॥

विषय—राम चरित्र।

संख्या ३२५ एस[२]. गीतावली, रचयिता—तुलसी दास, पत्र—१२०, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२६७, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९०७ = १८५० ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर सुमेर सिंह—मीठना, डाकघर—फीरोजाबाद, जिला—आगरा।

आदि— ······ ॥ राग सोहिला जैति :—सहेली सुनु सोहिल सब जग आजु । पूत सपूत कौसला जायो अचल भयो कुल राजु ॥ चैत चारु नौमी सविता दिन मध्य गगन गत भानु । नवत जोग गृह लगन भले दिन मंगल मोद निधानु ॥ व्योम पवन पावक जल थल दिसि दसहु सुमंगल मूल । सुर दुंदुभी बजावहिं हर्षित वरसहि सुर तरु फूल ॥ भूपति सुदिन सुहेली सुनिकै बाजे गह गहे निशान । जहँ तहँ सजहिं कलस ध्वज चामर तोरन केतु वितान ॥ सींचि सुगंध रची चौकै ग्रह मंगल चारु । सुनि सानंद उमगि दस स्यंदन सकल समाज समेत ॥ लियो बोलि गुरु सचिव भूमि सुर प्रमुदित चले निकेत ॥

× × ×

अंत—रघुनाथ तुम्हारे चरित मनोहर गावत सकल अवध वासी । अति उदार अवतार मनुज वपु धन्यौ ब्रह्म सोइ अविनासी ॥ प्रथम ताड़िका हति सुबाहु वल मप राष्यौ हित कारी ॥ देषि दुषी अति सिला श्राप वस रघुपति विप्र नारि तारी ॥ सब भूपन कौ गवु हन्यौ हरि भञ्ज्यौ शंभु चाप भारी । जनक सुता समेत आवत ग्रह परस राम अति मद हारी ॥ पिता वचन तजि राज काज सुर चित्रकूट मुनि वेष धन्यौ । एक नैन कीन्हौं सुरपति सुत वधि विराध रिषि सोच हन्यौ ॥ पंचवटी पावन करि राषौ सुपनेषा जो कुरुप करी । षरदूषनहि सिघारि कपट मृग गिद्ध राज कौ गति जो करी ॥ हति कवंध सुग्रीव सखा करि वेध्यौ ताल बालि मान्यौ । वानर रीछ सहाइ अनुज सँग सिंधु वांधि जग जस विस्तान्यौं ॥ सकुल पुत्र दल सहित दसानन मारि अषिल सुर दुष टान्यौ । मरम साधु जिय जानि विभीसन लंका पुरी तिलक साल्यौ ॥ सीता लषन संग लीन्हें प्रभु औरो केते दास आये । नगर निकट विमान आयो सब नर नारि देपन धाये ॥ शिव विरंचि सुक नारदादि मुनि अस्तुति करत विमल वानी । चौदह भुवन चराचर हरपित आये राम राजधानी ॥ मिले भरत जननी गुरु परिजन चाहत परमानंद भरे । दुपह वियोग रोग दारुन दुष रामचन्द्र देखत विसरे ॥ वेद पुरान विचारि लगन सुभ महाराज अभिषेक कियो । तुलसीदास जिय जानि सुअवसर भक्ति दान वर मागि लियो ॥ ३८ ॥ इति श्री तुलसी दास कृत गीतावली उत्तर कान्ड संपूर्ण शुभं भूयात् ॥ मार्ग मासे शुक्ल पक्षे तिथौ द्वादश्याँ चन्द्र वासरे ॥ इति शुभम् ॥

विषय पदों में राम चरित्र कथन ॥

संख्या ३२५ टी. श्रीकृष्ण गीतावली, रचयिता— तुलसीदास (राजापुर बाँदा), पत्र—४०, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८० = १८२३ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० विष्णु भरोसे—पुरा भादुर, डाकघर—बेहटा गोकुल, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री कृष्ण गीतावली लिष्यते राग विलावन—माता लै उछंग गोविन्द मुख बार बार निरखै । पुलकित तन आनन्द घन छन छन मन हरखै ॥ पूछत तोतरात बात मातहिं जदुराई । अति सै सुख जाते तोहि मोंहिं कहु समुझाई ॥ देखत तुव बदन कमल मन आनन्द होई । कहै कौन सुर नर मुनि जानै कोई कोई ॥ सुन्दर मुख मोहि दिखाव इच्छा अति मोरे । मम समान पुन्य पुंज बालक नहिं तोरे ॥ तुलसी प्रभु प्रेम विवस

मनुज रूप धारी । बाल केलि लीला रस ब्रज जन हित कारी ॥ १ ॥ राग ललित—छोटी मोटी मीसी रोटी चिकनी चुपरि कै तूं । देरी मैय्या लै कन्हैया सो कव आवहि तात ॥ सिगरी ही होंहिं खैहों वल दाऊ को न दैहों । सो क्यों भटू तेरो कहा कहि इत उत जात ॥ वाल वोलि यह कहि चिरावत चरित लख गोपीगण महरि मुदित पुल कित गात । नूपुर की धुनि किंकनी की कलख कूद कूद किलकि किलकि ठाढ़े ठाढ़े खात ॥ तनियां ललित कटि विचित्र टेपारे शिशु मुनि मन हरत वचन कहे तोत रात ॥ तुलसी निरखि हरखि बरखत फूल भूरि भागी ब्रजवासी विबुध सिद्ध सिहात ॥ २ ॥

अन्त—कहा भयो कपट जुआ जो हारी ॥ समर धीर महावीर पांच पति क्यों देहै मोहिं होन उघारी ॥ राज समाज सभासद समरथ भीषम द्रोण धर्म धुर धारी ॥ अवला अनघ अनवसर अनुचित होत हेरि करिहै रखवारी ॥ यों मन गुनत दुसासन दुर्जन क्यों तकि गह्यो दुहूं कर सारी ॥ सकुचि गात गोवति कमठी ज्यों हहरी हृदै विकल भई भारी ॥ अपनेनि को अपनो विलोकि वल सकल आस विस्वास विसारी । हाथ उठाई अनाथ नाथ सो पाहिं पाहि प्रभु पाहि पुकारी ॥ तुलसी परखि प्रतीति प्रीति गति आरत पाल कृपाल मुरारी ॥ बसन वेखि राखी विसेखि लखि विरदा वलि मूरति नर नारी ॥ गह गह गगन दुंदभी बाजी ॥ बरखि सुमन सुर गन जस गावत जस हरख मगन मुनि सुजन समाजी ॥ सानुज सगन ससचिव सुयोधन भये मुख मलिन खाइ खल बाजी ॥ लाज गाज उन बिन कुचाल कलि परी बजाइ कहूं कहुं गाजी ॥ प्रीति प्रतीति द्रुपद तनया की भली भूरि भय भरी न भाजी ॥ कहि पारथ सो रथहिं सराहत गई बहोरि गरीब निबाजी ॥ शिथिल सनेह मुदित मन ही मन बसन वीच बिच वधू विराजी ॥ सभा सिन्धु जदुपति जय मय जनु रमा प्रगट त्रिभुवन भरि भ्राजी ॥ जुग जुग जुग साके केशव के समन कलेस कुसाज सुसाजी ॥ तुलसी को न होइ सुन कीरत कृष्ण कृपाल भक्ति पथ राजी ॥ इति श्री कृष्ण गीतावली संपूर्ण संवत् १८८० वि०

विषय—श्री कृष्ण जी की भक्ति से पूर्ण लीला आदि के पद ।

संख्या ३२५ यू[२]. श्री कृष्ण गीतावली, रचयिता—गोस्वामी तुलसीदास (राजापुर बाँदा), पत्र—६४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—४००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८८४ = १८२७ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला दिलसुखराय-नगला भगत, डाकघर—पटियारी, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश) ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ श्री कृष्णगीतावली लिख्यते ॥ राग विलावल ॥ माता लै उछंग गोविन्द मुख बार २ निरखै ॥ पुलकित तन आनद घन छन २ मन हरषै ॥ पूँछत तोत रात बात मातहिं जदुराई ॥ अतिसय सुख जाते तोहि मोहिं कहुँ समुझाई ॥ देखत तुव बदन कमल मन आनंद होई ॥ कहै कौन सुर नर मुनि जानै कोइ कोई ॥ सुंदर मुख मोहिं दिखाउ इच्छा अति मोरे । मम समान पुंन पुंज बालक नहिं तोरे ॥ तुलसी प्रभु प्रेम विवस मनुज रूप धारी वाल केलि लीला रस ब्रज जन हितकारी ॥ राग ललित ॥

छोटी मोटी मीसी रोटी चिकनी चुपरि कैं तूं ॥ देरी मैय्या लै कन्हैया सो कब आवहिंतात ॥ सिगरिये हों हिं खैहों बलदाऊ को न देहों सो क्यों भट्ट तेरो कहा कहि इत उत जात बाल वोल इहि कि चिढ़ावत चरित लखि गोपी गण महरि मुदित पुलकित गात ॥ नूपुर की धुनि किंकनी की कलरव कूद कूद किलकि किलकि ठाढ़े ठाढ़े खात ॥ तनियां ललित कटि विचित्र टेपारे शिशु मुनि मन हरत वचन कहे तोत रात ॥ तुलसी निरषि हरषि बरसत फूल भूरि भागी व्रज वासी विवुध सिद्ध सिहात ॥

अंत—राग आसावरी—गह गह गगन दुंदभी वाजी ॥ वरषि सुमन सुर गण गावत जस हरष मगन मुनि सुजन समाजी ॥ सानुज सगनस सचिव सुयो धन भये मुख मलिन खाइ खल वाजी ॥ लाज गाज उन वनि कुचाल कलि परी वजाइ कहूं कहुँ गाजी ॥ प्रीति प्रतीति द्रुपद तनया की भली भूरि भय भरी न भाजी ॥ कहि पारथ सारथहिं सराहत गई वहोरि गरीव निबाजी ॥ सिथिल सनेह मुदित मन ही मन बसन बीच बिच वधू विराजी ॥ सभा सिन्धु जदुपति जय मय जनु रमा प्रगटि त्रिभुवन भरि भ्राजी ॥ जुग जुग जग साके केशव के समन कलेश कुसाज सुसाजी ॥ तुलसी कोन होहु सुन कीरति कृष्ण कृपाल भक्ति पथ राजी ॥ इति श्री रामगीतावली कृष्ण चरित्र श्री गोसाई तुलसीदास कृत संपूर्ण समाप्तं ॥ शिव शिव शिव ॥ जेष्ठ सोमवार सुदी संवत १८१२ वि० ॥ राम राम राम

विषय – श्री कृष्ण जी की विनय आदि वर्णन ।

संख्या ३२५ व्ही[२]. श्री कृष्णगीतावली, रचयिता—गोस्वामी तुलसीदास, पत्र—६४, आकार—८ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१२, परिमाण(अनुष्टुप्)—४२९, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १७८८ = १७३१ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामनाथ शर्मा–चौका, डाकघर—आटिया, जिला—लखनऊ ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ श्री कृष्णाय नमः ॥ अथ कृष्णगीतावली श्री गो० तुलसीदास रचित लिख्यते ॥ राग विलावल ॥ माता लै उछंग गोविन्द मुख वार बार निरषै । पुलकित तनु आनंद घन छन छन मन हरषै ॥ पूछत तोतरात वात मातहिं यदुराई ॥ अतिसै सुष जाते तोहि मोहि कहु समुझाई ॥ देखत तुव वदन कमल मन आनंद होई । कहै कौन सुर नर मुनि जानै कोई कोई ॥ सुंदर मुष मोहिं देखाव इच्छा अति मोरे । मम समान पुंन पुंज वाल नहिं तोरे ॥ तुलसी प्रभु प्रेम विवस मनुज रूप धारी । वाल केलि लीला रस व्रज जन हित कारी ॥

अंत—राग आसावरी ॥ कहा भयो कपट जुआ जौं हारी ॥ समर धीर महावीर पांचपति क्यों देहैं मोहिं होन उघारी ॥ राज समाज सभासद समरथ भीषम द्रोण धर्म धुर धारी ॥ अवला अनघ अनवसर अनुचित होत हेरि करि हैं रखवारी ॥ यों मन गुनति दुसासन दुरजन क्यों तकि गही दुहूं कर सारी ॥ सकुचि गात गोवति कमठी ज्यों हहरी हृदय विकल भई भारी ॥ अपनेनि को अपनो विलोकि बल सकल आस विस्वास विसारी ॥ हाथ उठाइ अनाथ नाथ सों पाहि पाहि प्रभु पाहि पुकारी ॥ तुलसी परषि प्रतीति प्रीति उर गति आरति पाल कृपाल मुरारी ॥ वसन वेषि राषी विसेषि लषि विरुदावलि मूरति

नर नारी ।। गह गह गगन दुंदुभी वाजी ।। वरषि सुमन सुरगन गावत जस हरष मगन मुनि सुजन समाजी सानुज सगन ससचिव सुजोधन भये मुष मलिन षाइ षल वाजी ।। लाज गाज उन वनि कुचाल कलि परी वजाइ कहूं कहूं गाजी ।। प्रीति प्रतीति द्रुपद तनया की भली भूरि भय भरी न भाजी ।। कहि पारथ सारथिहिं सराहत गई वहोरि गरीव निवाजी ।। सिथिल सनेह मुदित मनही मन बसन बीच बिच बधू विराजी ।। सभा सिन्धु जदुपति जय मय जनु रमा प्रगट त्रिभुवन भरि भ्राजी ।। जुग जुग जग साके केशव के समन कलेस कुसाज सुसाजी ।। तुलसी को न होइ सुन कीरति कृष्ण कृपाल भक्ति पथ राजी ।। इति श्री कृष्णगीतावल्यां कृष्ण चरित्रं समाप्तम् शुभ संवत् ।। १७८८ वि० क्वार सुदी दसमी लिखत दीना नाथ पाठक पुरतायं पुरा के ।।

विषय—श्री कृष्ण चरित्र वर्णन ।

संख्या ३२५ डब्ल्यू[२]. दोहावली, रचयिता—तुलसीदास जी, पत्र—८५, आकार – ६$\frac{3}{4}$ × ५$\frac{1}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ) – ९, परिमाण (अनुष्टुप्)—७६५, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० देवीप्रसाद शर्मा, डाकघर—फतहाबाद, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्रीमते रामानुजाय नमः राम नाम मन दीप धर जीह देहरी छा २ तुलसी भीतर वाहरें जो चाहसि उजियार । नाम राम को अंक निधि साधन ता सब सून अंक रहित सब सून है अंक सहित दस गुन २ । दुगुने तिगुने चौगुने पांच पष्ट अरु सात ओठो ते पुनि नौगिनो नौके नौ रहि जात ३ । नौके नौ रहि जात है तुलसी कियो विचार रम्प्रौ तम यौगत मैनहि द्वैत विस्तार विस्तार ४ । जथाला भूमि सब बीज मय नषतन वास अकास तम नाम सब धर्म मप्र जानत । तुलसीदास ५ । तुलसी रघुवर परम निधि ताहि भजै निहि संक आदि अंत निर्वाहिये जैसे लव को अंक ६ । हरि सो हित ओ राखिऐ कोट किए उपचार मिटै न तुलसी अंक नव नव के लिखत पहार ७ । तुलसी हठि हठि कहत नित हित कै चितहे मानि लाभ राम चित दे माणि सुमिरत बड़ी २ विसार हानि ८ । राम नाम जपि जो हजस भाजन भये कुजात कुतम कुसरू पुर राजमंगल हस भुवनि विष्यति ९ ।।

अन्त—जथा अमल पावन पवन पाइ कुसंग मुंसत । कहि अकुवास सुवास तिमक लमहीस प्रसंग ।। १७२ । लिषि लिपि सब जग लिपौ पाठि पठि पठिका कीन्ह वढ़ि वढ़ि वढि धरि धरि गऐ तुलसी राम न चीन्ह २७३ भक्त हेतु भगवान प्रभु तम मुध रिझत अनूप । किए चार तपावन परम प्राक्त तजन अनुरूप । ३ = ७४ जाति हीन अध जन्म मुहि मुसी कीन्ह असिनार । महा मंदयत सुप चहसि ऐसे प्रभुहि विसार ।। ४ = ७५ तुलिसी संपति को सखा परत विपति में चीन्ह । सज्जन कंचन कसनन को विपति क कसौटी कीन्ह । ५ = ७६ ।।

विषय—नीति एवं भक्ति विषयक दोहे ।

संख्या ३२५ एक्स[२]. विजय दोहावली, रचयिता—गोस्वामी तुलसीदास (राजापुर बाँदा), पत्र—३६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२८, परिमाण (अनुष्टुप्)—३४८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३५ = १५७८ ई०, लिपिकाल—सं० १८३२ = १७७५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० मन्नीलाल–धनखेड़ा, डाकघर—मुरादाबाद, उन्नाव।

आदि—श्रीगणेशायनमः अथ विजय दोहावली लिख्यते ॥ दोहा ॥ सोरह सै पैतीस को है संवत सुख रास। राम विजय दोहावली वरणी तुलसी दास ॥ विजय राम दोहावली जानै जे नर कोइ। गुप्त अर्थ रामायणै प्रगट कीजिये सोइ ॥ सो०–मूक होइ वाचाल पंगु चढ़ै गिरिवर गहन। दो०–नहीं मेघ के कंठ गति नहीं अरुन के पाय। वास करै आकास में रवि रथ चढ़िये धाइ ॥ चौ०–राम रूप दुइ ईश उपाधी अकथ अनादि सो समुझहिं साधी ॥ दो०–नाम जपत शंकर शेप न पायो पार। सब प्रकार सो अकथ है महिमा अगम अपार ॥ चौ०–भाव कुभाव अनथ आलसहू। राम जयति मंगल दस दिसहू ॥ दो०–भाव सहित संकर जप्यो कहि कुभाव मुनि वाल। कुंभ करण आलस जप्यो अनघ जप्यो दसभाल ॥ छंद–दुइ दंडि भरि ब्रह्मांड भीतर काम कृत कौतुक अयं। दो०–उभय घरी सुरलोक में ब्रह्म लोक द्वै दंड। रह्यौ भुवन में दिवस निसि व्यापो मदन प्रचंड ॥

अंत—चौ०–उलटा नाम जपत जग जाना वाल्मीक भये ब्रह्म समाना ॥ दो०–एक बीस वध पाप यहि मरी तुम्हारी देह। महि मारौ तो ना मरै तुलसी चरन सनेह ॥१॥ पांच भुजा कैलास को द्वै पठये रघुवीर। दस दस हृदै गुपाल को पांच सिन्धु के तीर ॥ २ चोला छाड़्यो स्वयंभु मनु देवन धरो उठाइ। जवहिं निपाते लंक पति दसरथ पहिरे जाइ ॥ रही दरश की लालसा राम लखण सिय नेह। आये रण की भूमि में स्वयंभू मन की देह ॥ तुलसी कहत पुकारि कै चित सुनि हित कर भान। हेम दान गज दान ते बड़ो दान सन मान ॥ तुलसी या संसार में पंच रत्न हैं सार। साधु मिलन अरु हरि भजन दया दान उपकार। और वराती से लगै जहँ लग नाम अपार। दुलहा दुलही से लगै एक रकार मकार ॥ तुलसी रा के कहत ही निकसै सबै विकार। फिर आवन को कहत देत मकार विकार ॥ इति श्री गोसाईं तुलसी दास कृत विजय दोहावली संपूर्ण समाप्तम लिखतं राम चरन सुत शिवनाथ चैत्र शुक्ल पूर्णिमा संवत् १८५२ वि०

विषय—इस ग्रन्थ में रामायण के गूढ़ अर्थों की व्याख्या दोहों में की गई है।

संख्या ३२५ वाई[२]. हनुमान चालीसा, रचयिता—तुलसीदास (राजापुर–काशी), कागज—बाँसी, पत्र—१४, आकार—३½ × १½ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३, परिमाण (अनुष्टुप्)—३७, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९२६ = १८६९ ई०, प्राप्तिस्थान—श्यामसुन्दर जी अग्रवाल, डाकघर—जगनेर, तहसील—खेरागढ़, जिला—आगरा।

आदि—श्री गुरू चरण सरोज रज, निज मन मुकुर सुधार। वरणों रघुवर विमल यश, जो दायक फल चार। बुद्धि हीन तन जानिकै, सुमिरौं पवन कुमार। बल वुधि विद्या

देहु मोहि हरहु कलेश विकार ॥ चौपाई ॥ जै हनुमान ज्ञान गुण सागर, जै कपीश तिहुं लोक उजागर। राम दूत अतुलित बल धामा। अंजनि पुत्र पवन सुत नामा। महावली बिक्रम बजरंगी। कुमति निवारि सुमति के संगी। कंचन वरणि विराजै सुवेशा। कानन कुंडल कुंचित केशा। हाथ वज्र अरु ध्वजा विराजै। कांधे मूँज जनेऊ राजै। संकर सुमन केसरी नंदन। तेज प्रताप महा जग वन्दन। विद्या वान गुणी अति चातुर। राम काज करिबो को आतुर।

अन्त--जै जै जै हनुमान गुंसाईं, कृपा करहु गुरूदेव की नाईं। यह शत बार पाठ कर सोई। छूटे वंध महा सुख होई। जो इह पढ़ै हनुमान चालीसा। होहि सिद्ध साखी गौरीशा। तुलसी दास सदा हरि चेरा। कीजै दास हृदय मंह डेरा। दोहा—पवन तनय संकट हरन, मंगल मूरति रुप। राम लषण सीता सहित, हृदय बसहु सुर भूप। इति श्री तुलसीदास कृत हनुमान चालीसा सम्पूर्ण। मिती चैत सुदी ११ मंगलवार संम्वत् १९२६ शिवलाल ने लिखी।

विषय—हनुमान जी की स्तुति।

संख्या ३२५ जेड[२]. हनुमान बाहुक, रचयिता—तुलसीदास, पत्र—११, आकार—९ × ५३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—१४३, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—ठाकुर शिवलाल सिंह पिपरौली, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ श्री रामचन्द्र हनुमान वाँहुक लिष्यते ॥ दोहा ॥ श्री रघुवीरहि प्रनाम करि। सहित लषन हनुमान। राषि हृदय विस्वास द्रिढ़। पुनि पुनि करौ प्रणाम ॥ भौम वार आदिक पढ़ैं। जो नर सहित सनेह। रुज संकठ व्यापै नहीं। बाढ़ै सुख धान ग्रेह ॥ सुचिस प्रेम पाढ़िहहि नर। निरुज गात वल धाम। होइहि रत तुलसि सदा। जस पैहै सव ठाम ॥ ३ ॥ कवित्त ॥ श्री राम कृपाल विराजत मध्य महा छवि धाम गहे धनु वाना। वापादि सामहि जा सुठि सुन्दरी दक्षिन वोर लषन वलवाना ॥ चामर पानि लिये प्रभु के ढिग सोभित वायुतने हनुमाना। तुलसी हृदै धरु ध्यान सदा भ्रम संसै त्यागि कहौं परमाना ॥ १ ॥

अन्त—बाहु पीर को नाम पुनि दहन भोज कौन काज औ वीर गहिये जागी नाहीं वन्याए रन छोड़ी कहु ठाठ को। मन राज कत अकाज भाव आजु लगी चाहो चीर चारु पैन लाहो टुक टीक को ॥ मोही ऐसो क्रूर की क्रीपा करो क्रीपानिधान पाऽवो नाम पार सहौ लाल ची वराट की। तुलसी की वनै राम रावरे वनाए नातो धोवी केसो कुकुर न घर को न घाटको ॥ ५६ ॥ असन वसन हीन वीपै वीषाद लीन हीन दीन दुबरो कन हाए हाए को। तुलसी अनाथ के सनाथ कीन्हे रघुनाथ भावो पावो फल सीधी आपने सुभाए को ॥ नीच एह नीच्च पद पाये भरु आए जे वात जोहरी भजन वचन मन काए को। ताते अत देपी अत घोर वर तोरमा सु पुटी नीक सत लोन राम राए को ॥ ५७ ॥ राम नाम मातु पीतु साहेव समरथ हीत आस राम नाम को भरोस राम नाम को। प्रेम राम नाम को सुनेम राम नाम को सो जानों राम नाम भाग दाही नेन वाम को ॥ स्वारस कल मारथ सो राम नाम राज

वीना तुलसी न कोऊ काहु काम को। राम की सप तीस ख मेरे राम नाम काम तरु काम धेनु मो सो छीनु छाम को ॥ ५८ ॥ देव सरीसे इन्नी पुरारी हीते हरौ धाम राम······

विषय—श्री हनुमान जी से तुलसी दास की बाहु पीड़ा दूर कर देने की प्रार्थना।

संख्या ३२५ ए[3]. विराग सन्दीपनी, रचयिता—गोसाईं तुलसीदास, पत्र—१२, आकार—८$\frac{1}{2}$ × ५$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—९६, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० बैजनाथ ब्रह्मभट्ट—अमौसी, डाकघर—बिजनौर, जिला—लखनऊ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ विराग संदीपनी ॥ गोसाईं तुलसी दास कृत लिष्यते ॥ दोहा ॥ राम वाम दिसि जानकी। लखन दाहिनी ओर। ध्यान सकल कल्यान मय। सुर सरि तुलसी तोर ॥ तुलसी मिटै न मोह तम। किये कोटि गुन ग्राम। हृदय कमल फूलै नहीं। विन रवि कुल रवि राम ॥ सुनत लखत विन नैन श्रुति। विन रसना रस लेत। वास लहै विन नासिका। परसत विनहि निकेत। सोरठा ॥ अज अद्वैत अनाम। अलख रुप गुन परम हित। माया पति सोइ राम। दास हेत नरतन घरो ॥ दोहा ॥ तुलसी यह तन तवा है। तपै सदा त्रै ताप। साँति होइ तब साँति। पद पावै राम प्रताप ॥ तुलसी यह तन खेत है। मन वच कर्म किसान। पाप पुन्य दो वीज हैं। वुवै सो लुनै किसान ॥

अन्त—सोई पंडित सोई पारखी। सोई दाता सोई दानि। तुलसी जाके चित्त में। राग दोष की हानि ॥ चौपाई ॥ राग दोष की अग्नि वुझानी। सकल कामना वास विकानी। जवते साँति बसी उर आई। तवते उर फिरी राम दुहाई ॥ दोहा ॥ फिरी दुहाई राम की। गे कामादिक भागि। तुलसी ज्यौं रवि के उदय। तुरत जाइ तम भाजि ॥ यह विराग संदीपनी। सुजन सुचित सुनि लेउ। अन उचित अक्षर विचारिकै। सुधारि तहँ देउ ॥ इति विराग संदीपनी महा मोह विध्वंसनी सति पद तुलसी दास कृत समाप्तम् ॥सुभ मस्तु॥ श्री राम श्रीराम श्री राम राम राम ॥

विषय—पृ० १ से १२ तक—मंगला चरण, भगवान का स्वरूप, मानव काया एवं वाणी आदि तथा साधु का वर्णन। साधुओं के लिये आदेश, संतों के लक्षण आदि का वर्णन। शांति के लाभ तथा राम के प्रभाव का वर्णन।

संख्या ३२५ बी[3]. जानकी मंगल, रचयिता—तुलसी दास, पत्र—४, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—८४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०२ = १७४५ ई०, प्राप्तिस्थान—पं० रामभंजन, छितौनी, डाकघर—मेढ़ी, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्रीगणेशायनमः अथ जानकी मंगल लिख्यते ॥ चौ०-प्रथम सुमिरि गुरु देव गणेश मनाइये। शारद को शिर नाइ राम गुण गाइये ॥ प्रभु गुण सिन्धु समान कौन वरणन करै। जैसी जाकी बुद्धि वैसी हृदै धरै ॥ तब बोले ऋषिराज अवधपुर जाइये। राम भये औतार जज्ञ हित लाइये ॥ करि सरजू अस्नान नृपति घर आइये। बहु विधि पूजा करि सिंहासन वैठाइये ॥ छंद-कहत तप धन अवध पति दोऊ कुंअर हमको दीजिये।

जग्य पूरण होइ हमरो विप्र कौ जस लीजिये ॥ चौ०—सुनि ऋषि के वचन नृप सोच कीनो घनी। कीजै कौन उपाय बात गाढ़ी वनी ॥ तव वोले गुरु वशिष्ठ नृपति सोच नहिं कीजिये। ये पूरण औतार जज्ञ हित दीजिये। छंद—प्रेम को उपकार कर नृप सुतन दोउ गोदी लिये। महा मुनि की भेंट लै श्री राम अरु लछमन दिये ॥ चौ०—रतन जड़ित पट वांध धनुष लियो हाथ सों। कीन्हों वहुत प्रणम पिता अरु मात सों ॥ नयन रहे जल पूरि पिता अरु मात के। इनको नीके राखिये पुत्र जानि अनाथ के ॥

अंत—कहत सिया सुनु तात धनुष पण जिन करौं। नातर तजि हौं प्राण कि जेइ वर मैं वरौं। करुणा सागर राम जानकी जानिये। पीतांबर कटि वांधि धनुष लै तानिये ॥ छंद—जै जै कार भई तिहुं लोक भूप सबै मुरझाइये। श्री रामचन्द्र मुख निरखि सिय ने सुमन माल पहिराइये ॥ चौ०—सोहत सीता राम कंचन मंडप तरे। सिर सोने को मुकुट मजु मुक्ता गरे ॥ राजत अंग कपोल कि मुक्ता मोल के। सुन्दर लोचन लोल कमल जनु भोर के ॥ सुरंग चूनरी निकट पीत पट छा रही। मनु अरुण घनश्याम चपलता ह्वै रही ॥ यह भूषण प्रतिविंब राम छवि उर धरै। मनो यमुना जल मध्य दीप दीपक वरै ॥ राम भुजा के निकट सिया भुज यों लसै। मरकत मणि के खंभ मनौ कंचन कसै ॥ राम भये तन गोर सिया भईं सांवरी। सादर सो बुधि वंत वधू भईं वावरी ॥ राम भये घनश्याम सिया भईं दामिनी। मुनि भये चन्द्र चकोर चकित भईं भामिनी ॥ पुस्पन वरसत मेघ मुनी सब थर हरैं। होत जनक पुर व्याह राम भाँवर फिरैं ॥ राम सिया को ध्यान सदा संकर धरैं। ब्रह्मा रूप निहार इन्द्र पूजा करैं ॥ सुर नर मुनि आनंद सुमन वरषा करैं। तुलसी सीता राम सहित उर आनिये। राम भजन विनु जन्म सु मिथ्या जानिये ॥ इति श्री जानकी मंगल तुलसी दास कृत संपूर्ण समाप्तः संवत् १८०२ वि०

विषय—श्री राम जानकी का विवाह वर्णन।

संख्या ३२५ सी[3]. जानकी मंगल, रचयिता—तुलसीदास, पत्र—८, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—८, परिमाण (अनुष्टुप्)—१००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० बिहारीलाल, डाकघर—नौगावाँ, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ श्री जानकी मंगल प्रारम्भः ॥ छन्द ॥ प्रथम सुमिरि गुरुदेव गणेश मनाइये। सारद को शिर नाइ राम गुण गाइये ॥ प्रभु गुण सिन्धु समान कौन वर्णन करै ॥ जैसी जाकी वुद्धि तैसी हृदै धरै ॥ तब वोले ऋषि राज अवध पुर जाइये। राम भये अवतार यज्ञ हित लाइये ॥ करि सरयू अस्नान नृपति ग्रह आइये। वहु विधि पूजा करि सिंहासन बैठाइये ॥ छन्द ॥ कहत तपोधन अवध पति दोउ कुँवर हमको दीजिये। यज्ञ पूरण होय हमरो विप्र को यश लीजिये ॥

अन्त—सोहत सीताराम कंचन मंडप तरै। शिर सोने को मुकुट मंजु मुक्ता गरै ॥ राजत अमल कपोल विमुक्ता मोल के। सुन्दर लोचन लोल कमल जनु भोर के ॥ सुरंग चूनरी निपट पीत पट छा रही। मानों अरुण घनश्याम चपलता है रही ॥ यह भूषण प्रति-विंब रमा छवि उर धरैं। मानो यमुना जल मध्य दीख दीपक वरै ॥ राम भुजा के निकट

सिया भुज यों लसे । मरकत मणि के खंभ मनौ कंचन कसे ॥ राम भये तन गौर सिया भई साँवरी । सादर सो बुधि वंत वधू भई बाबरी ॥ राम भये घन श्याम सिया भई दामिनी । मुनि भये चन्द्र चकोर चकृत भई भामिनी ॥ पुष्पन वर्षत मेघ मुनि सब जय जय करैं ॥ होत जनकपुर व्याह राम भामरि परैं । राम सिया को ध्यान सदा संकर धरैं ॥ ब्रह्मा रुप निहारि इन्द्र पूजा करैं ॥ सुर नर मुनि आनन्द सुमन वर्षा करैं ॥ ब्रह्मा आदि सब देव मुदित जय जय करै ॥ तुलसी सीता राम सहित उर आनिये ॥ राम भजनु विनु जन्म सुमिथ्या जानिये ॥ इति श्री जानकी मंगल सम्पूर्णम् ॥

विषय—विश्वामित्र के यज्ञ से लेकर राम विवाह तक की राम कथा का संक्षिप्त वर्णन ॥

संख्या ३२५ डी[3]. रामाज्ञा प्रश्नावली, रचयिता—गोस्वामी तुलसीदास (राजापुर, बाँदा), पत्र—२४, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)— ४८, परिमाण (अनुष्टुप्)—९८०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०३ = १७४६ ई०, प्राप्ति-स्थान—पं० रामभजन शास्त्री-भीखमपुर कलाँ, डाकघर—जलेसर, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश) ।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री जानकी वल्लभो विजयते ॥ अथ रामाज्ञा प्रश्नावली लिख्यते ॥ अध्याय १दोहा—वानि विनायक अंव रवि गुरु हर रमा रमेश । सुमिरि करहु सब काज सुभ मंगल देस विदेश ॥ १ ॥ गुरु सरसइ सिन्धुर बदन शशि सुरसरि सुर गाइ । सुमिरि चलहु मग मुदित मन होइहि सुकृत सहाइ ॥ २ ॥ गिरा गौरि गुरु गणय हर मंगल मंगल मूल । सुमिरत करतल सिद्धि सब होइ ईश अनुकूल ॥ ३ ॥ भरत भारती रिपु दमन गुरु गणेश बुधवार । सुमिरत सुलभ सुधर्म फल विद्या विनय विचार ॥ ४ ॥ सुर गुरु गुरु

१	२	३	४	५	६	७
२४	२५	२६	२७	२८	२९	८
२३	४०	४१	४२	४३	३०	९
२२	३९	४८	४९	४४	३१	१०
२१	३८	४७	४६	४५	३२	११
२०	३७	३६	३५	३४	३३	१२
१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३

दोहा चक्र

सिष राम गण राउ गिरा उर आनि। जो कछु करिय सो होइ शुभ खुलहिं सु मंगल खानि ॥ ५ ॥ इस प्रश्न के जानने की यह रीति है कि प्रथम अध्याय चक्र में अंगुली रखे पश्चात दोहा के चंक के अंक पर उंगली रखे तत्पश्चात् जिस अध्याय का जो दोहा हो उसको पढ़कर अपना हानि लाभ समझ ले

अन्त—दोहा—राम विरह दसरथ दुखित कहत केकयी काक। कुसमय जाय उपाय सत केवल करम विपाक ॥ ४० लखण राम सिय वसहिं वन। विरह विकल पुर लोग। समय सकुन कह करहु सव। जानव जोग विजोग ॥ ४१ ॥ तुलसी लाइ रसाल तरु निज कर सींचत सीय। कृपी सफल भल शकुन सुभ समय सकल कमनीय ॥ ४२ ॥ सुदिन सांझ पोथी नेवति पूजि प्रभात सप्रेम। सकुन विचारब चारु मति सादर सत्य सनेम ॥४३॥ मुनि गनि दिन गनि धातु गनि। दोहा देषि विचारि। देश करम करता वचन शकुन समय अनुहारि ॥ ४४ ॥ शकुन सत्य शशि नयन गुण। अवधि अवध अधिवान। होइ सुफल शुभ जासु जसि प्रीति प्रतीति प्रमान ॥ ४५ ॥ गुरु गणेश हर गौरि शिय राम लषण हनुमान। तुलसी सादर सुमिरि सब शकुन विचार निधान ॥४६॥ हनूमान सानुज भरत राम शीय उर आनि। लषण सुमिरि तुलसी कहत शकुन विचारि वखानि ॥ ४७ ॥ जो जेहि काजहिं अनु हरै सो दोहा जब होय। शकुन समय सब सत्य सब कहब राम गति जोय ॥ ४८ ॥ गुण विश्वास विचित्र मणि शकुन मनोहर हार। तुलसी रघुवर भगत उर विलसत विमल विचार ॥ ४९ ॥ इति श्री गो० तुलसीदास कृत रामाज्ञा प्रश्नावली संपूर्ण समाप्तः लिखा अनंदीलाल कन्नौजिया ब्रा० जेठ वदी तेरस संवत् १८०३ वि०

विषय—इस रामाज्ञा प्रश्नावली द्वारा शुभ कार्य की जानकारी प्राप्त की जाती है।

संख्या ३२५ ई[3]. तुलसी सगुनावली, रचयिता—गोस्वामी तुलसी दास (राजापुर बाँदा), पत्र—१६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६०, परिमाण (अनुष्टुप्)—४७५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०८ = १७५१ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला कन्नो मल—बिसवाँ, डाकघर—बिसवाँ, जिला—अलीगढ़, (उत्तर प्रदेश)।

१	२	३	४
०	७	६	५

१	२	३	४	५	६	७
२४	२५	२६	२७	२८	२९	८
२३	४०	४१	४२	४३	३०	९
२२	३९	४८	४९	४४	३१	१०
२१	३८	४७	४६	४५	३२	११
२०	३७	३६	३५	३४	३३	१२
१९	१८	१७	१६	१५	१४	१३

आदि—श्रीगणेशायनमः अथ तुलसी सगुनावली लिख्यते ।। इस प्रश्न के जानने की रीति यह है कि ऊपर के ७ अंक के अध्याय चक्र में प्रथम उंगली रखे पुनः दोहे के चक्र में उंगली रखे पश्चात अपना प्रश्न समझ हानि लाभ समझ ले ।। अध्याय १ ॥ वाणि विनायक अंब रवि गुरु हर रमा रमेश । सुमिरि करहु सब काज शुभ मंगल देश विदेश ।। १ ।। गुरु सर सइ सिंधुर बदन शशि सुर सरि सुर गाइ । सुमिरि चलहु मग मुदित मन होइहि सुकृत सहाइ ॥ २ ॥ गिरा गौरि गुरु गणप हर मंगल मंगल मूल । सुमिरत करतल सिद्धि सब होइ ईश अनुकूल ।। ३ ॥

अंत—राम विरह दसरथ दुखित कहत केकयी काक । कुसमय जाय उपाय सब केवल करम विपाक ।। ४० लषन राम सिय बसहिं बन विरह विकल पुर लोग । समय सकुन कह करहु सब जानव जोग विजोग ।। ४१ ।। तुलसी लाइ रसाल तरु निज कर सींचे सीय । कृषी सकल भल शकुन शुभ समय सकल कमनीय ॥ ४२ ।। सुदिन सांझ पोथी नेवति पूजि प्रभात सप्रेम । सकुन विचारब चारु मति सादर सत्य सनेम ।। ४३ ।। मुनि गनि दिन गनि धातु गनि दोहा देखि विचार । देश करम करता बचन शकुन समय अनुहारि ॥ ४४ ॥ शकुन सत्य शशि नयन गुण अवध अवधि अधवान । होइ सुफल शुभ जासु जसि प्रीति प्रतीति प्रमान ॥ ४५ ॥ गुरु गणेश हरि गौरि शिय राम लखन हनुमान । तुलसी सादर सुमिरि सब सगुन विचार निधान ।। ४६ ॥ हनूमान सानुज भरत राम सीय उर आनि । लखन सुमिरि तुलसी कहत शगुन विचारि वखानि ।। ४७ ॥ जो जेहि काजहिं अनु हरै सो दोहा जव होइ । शगुन समय शुभ सत्य सब कहव राम गति गोइ ।। ४८ ।। गुण विश्वास विचित्र मणि शगुन मनोहर हार । तुलसी रघुवर भगत उर विलसत विमल विचार ॥ ४९ ॥ इति श्री गोसाईं तुलसी दास कृत तुलसी सगुनावली संपूर्ण समाप्तः लिखा राम मोहन वैश्य जेष्ठ शुक्ल दसमी संवत् १८०८ वि०

विषय—शुभाशुभ फल वर्णन ।

संख्या ३२५ एफ³. रामाज्ञा प्रश्न, रचयिता—गोस्वामी तुलसीदास (राजापुर), पत्र—४३, आकार—५¾ × ३¾ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—४८४, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८५६ = १७९९ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर ज्वाला सिंह जी जमींदार-रामपुर चन्द्रसेनी, डाकघर—होलीपुरा, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीगनेशाय नमः ।। श्रीरामाय नमः ।। अथ प्रथम सर्ग की प्रथम दहाई लिष्यते ।। वानी विनाय अंव रवि, हर गुरु रमा रमेश । सुमिरि करहु सब काज शुभ, मंगल देश विदेश ।। १ ।। गुरु सरसुति सिन्धुर वदन, शशि सुरसरि सुर गाय । सुमिरि करहु मंगल मुदित, होइ शुभ सुकृत सहाय ॥ २ ।। गिरा गवरि गुर गनप हर, मंगल मंगल मूल ।। सुमिरत तुलसी सिद्ध जग होइ ईश अनुकूल ।। ३ ॥ भरत भाय रिपुदमन गुरु गनेश वुध वार । सुमिरत सुलभ सुधर्म फल, विद्या विनय विचार ।। ४ ।। सुर गुरु सीता राम गुन, गाव गिरा उर आनि । जो कछु करिअ सो होइ शुभ, खुलै सुमंगल खानि ।। ५ ॥

अंत—सगुन सत्य शशि नयन गुन, अवधि अधिक नव धाम। होइ सुफल सुभ पास वसु, प्रीति प्रतीति प्रमान ॥ ३ ॥ गुरु गणेश हर गौरि सिव, राम लषन हनुमान। तुलसी सादर सुमिर सब, सगुन विचारि विधान ॥ ४ ॥ हनूमान सानुज भरत, राम सिया उर आनि। लषन सुमिरि तुलसी कहत, सगुन विचार वषानि ॥ ५ ॥ जो जिहि काजै अनुसरै, सो दोहा जहि होइ। सगुन समै सब सत्य फल, कहत राम गति जोइ ॥ ६ ॥ गुन विस्वास विचित्र मन, सगुन मनोहर दास। तुलसी रघुवर भक्ति उर, जानव बिमल विचास ॥ ७ ॥ इति सप्तम सर्ग सम्पूर्णम् इति श्री स्वामी तुलसीदास कृत रामाज्ञा प्रश्न समाप्तं चैत्र वदी १ सम्वत् १८५६ लिषितं वाहि मध्ये—मिश्र मोहनलाला स्वयम् हेत ॥ श्री श्री श्री।

१	२	३	४	५	६	७
२	३	४	५	६	७	१
३	४	५	६	७	१	२
४	५	६	७	१	२	३
५	६	७	१	२	३	४
६	७	१	२	३	४	५
७	१	२	३	४	५	६

विषय—प्रश्नों के शुभा शुभ फलों का वर्णन।

संख्या ३२५ जी[३]. चेतावनी दोहा, रचयिता—तुलसीदास, पत्र—१४, आकार—७ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१२६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १८९८ = १८४१ ई०, प्राप्तिस्थान—अध्यापक राम प्रसाद कोटला, जिला—आगरा।

आदि—अथ चेतावन दोहा लिख्यते। सांचों तन मासों रहै कहा ऊंच कहां नीच। तुलसी मन को थिर करै संत गगन के वोच ॥ माया मोह विहाइ सब करै न दूसर काम। तुलसी सांचो है भजो केवल सीताराम ॥ उदासीन जगतै है रहै नाम लो लाइ। लाख बात की बात यह तुलसी कही बजाइ ॥ विचरै जाहि जगत में लगै न रंच कलेस। जैसी वारिज पत्र कौ लगै न जल को रैस। वारिज पत्र समान गत रहै संत सम भाइ। यह सुभाय जानै लखै लछिनरि ये बताय ॥ जाकी लौ लागी रहै रात दिना भरपूर रहै अखंड समाधि में सदा काल तै दूर। जगन कलेवा काल को ताकौ लखै न कोई। तुलसी ताको सो लखै जो करनी दिठ होई। जन्म मरत या जगत में ये भाई दुख होई। तुलसी मारण कठिन है रोकि सकै नहि कोई ॥ संतन को या धर्म है संत वचन लघु भाषि। मिथ्या बचन न भाषिये जामें जावे साधि।

अन्त—कहा कहौं कलिकाय के संत भये बलवंत श्रुति मारण खंडन करै जौ लंका हनिवंत। संत भये बहु भांति के संत भये बहु भाइ तुलसी संतुन संत को दीनो नाम न साइ। सेछ कहे सब जगत को भिछक भये निदान घर घर कर ओढ़त फिरैं करत सदा

कल्यान । भयो पेट को पेट की फिरै रात दिन लोग लोभ लपेटे फिरत है कहो कहा का जोग । ब्रह्मा विष्णु महेश के आदि रुप को रुप तिनको लखकर जानिये सब पोचन के भूप । कमल नाथ के म''' जब जाइ होइ आसीन सब आकर डटि जस हैं आपु आपु में लीन । अंस पौधि सम्र आपनो आपु २ आधार । रूप परस्पर ये कहैं भौटिये सब विस्तार । जो आखिनि नहीं देखिये निरादुंद सो जानि निराधार ताहि कहत तुलसी संत बखानि । नाम न काहू को जगत आंखिन परै लखाइ ताहि निरुपम कहत हैं निराधार ठहराइ इति श्री चेतावनी दोहा सम्पूर्णम् ।

विषय—राम नाम गुण गान, संसार में विरक्त बनकर रहने का उपदेश, सत्संगति की महिमा, कमल दल के तुल्य जगत नदी में संतों का निवास कथन । असंतों की अव-हेलना, उनका माया में भ्रमना, ब्रह्म को चेतन और माया को जड़ बतलाना, अंत में मायावी धूर्त कलियुगी निर्गुणोपासकों की कड़ी समालोचना की गई है । वे लोग संसार को धोका दे उदर पूर्ति के लिये ढोंग रचा करते हैं । जो गुण कलयुगी साधुओं के होते हैं उनका विशद हृदयहारी विवेचन किया गया है ।

संख्या ३२५ एच[3]. हनुमान त्रिभंगी छन्द, रचयिता—तुलसी दास (राजापुर), पत्र—३, आकार—६ × ४$\frac{3}{4}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—६, परिमाण (अनुष्टुप्)—२५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० भागवत प्रसाद जी, ग्राम—टेहू, डाकघर—अहारन, जिला—आगरा ।

आदि—ॐ नमः शसि करांसनाभ्यां वीर हनुमते नमः । जै २ वजरंगि जालम जंगि जुध अड़वंगि जो धारे । श्री रघुवर के पायक कवि दल नायक संत सहायक सुखकारं । वजरंगि वंका निडर निसंका लंका गढ़ पर ललकारे । सिंधु उलंघं कर्म फलंगं मस्त मलंगं भयकारं । १ । जै जै० । भार अटारं भाग विदारं अक्ष उमारं सिर डारं । दुर्जन भुज भंजन गर्वित गंजन जन मन रंजन प्रसि पारं । पिसुन पहारं असुर संहारं सिय दुख परं सुखकारं । २ । जै जै० । अंजनिनंदन दैत्य निकंदन श्री रघुनंदन मतसारं दानव दलनं, अरि मद मलनं जुध न टलने जै कारं । महा ऊपर वल पर वल दलनं मज खल खंडन नप गदारं ।३। जै जे० भम्य सभूरं साय ससूरं चुगल न चूरं छलकारं । पैठ पातालं दहित तकारं महिरावन मर्दन गहि कर गरदन दुर्जन दरदन दगदारं । ४ । जै जै० । घम घमसानं रावण रामं वहिते घानं वलकारं । अनकरि पट्टा देहि भुपट्टा गहि गल पट्टा पच्छारं ॥ कडछं कडछं दिग्मे कडछं तइमें तडछं तल्वारं ॥ ५ ॥ जै० जै० ॥

अन्त—प्रवल पहारं उचक उपारं अरि सिर डारं अहकारं । दृष्टि करालं कंम्र जारं वल कारे । अतिसें.. ...गुरू जे चढ़ि गढ़ धुरु जं गल्लारं । ६ । जे जै० । लोहि लड़ाकं असुर अडाकं कउकारे । जलट उलट्टे धरन भुपट्टे करन कपट्टे छिछि डारं द्रोना गिरि आनं अति अभिमानं गेंद समानं करधारं । ७ । असुर अडाकं मारत डाकं दुष्ट भयंकर खल न खयंकर होहर संकर अवतारं । पद्म अडारं मध्यदि धारं दहि दल्लारं खगदारे ॥ जन भगवाने दरस प्रमानं सरन जानकी गिरतारं ।८। जे जै० । इति श्री तुलसीदास कृत हनुमान त्रिभंगि छंद संपूर्ण । ६ ।

विषय - हनुमान की प्रशंसा का अष्टक ।

संख्या ३२५ आई³. रामचन्द्र की बारहमासी, रचयिता—तुलसीदास, पत्र—१६, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—११, परिमाण (अनुष्टुप्)—८८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० रामजती-बड़ागाँव, डाकघर—कस्तरी, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः । दोहा ॥ वचन केकई मानिके । दशरथ अज्ञा कीन्ह । राम चले बनवास को । राज भरत को दीन्ह ॥ १ ॥ छन्द ॥ चैत हरना लख्यो प्रभुजी । चाप लै ठाड़े भये । तुम रहो लछमन जानकी ढिंग । आप मारन को गये ॥ वन बीच हरना फिरत भागत । लखतु अरु छुप जात है । धनु बाण ताने फिरत रघुपति । छली छल करि जात है ॥ दोहा ॥ कहत बात श्री जानकी । सुनि लछिमन बीर । हिरना ने कुछ छल कियो । देखो तुम रण धीर ॥ २ ॥

अंत—दोहा—फेर कह्यौ दर बार में । जो कोऊ ठौर पाऊँ । राम आनि करि कहत हों । सिया हारि घर जाऊँ ॥ छंद ॥ फागुन में सब फाग खेलें । लंक में खल भल परै । इंद्रजित बलवान जोधा । राम के सन्मुख लरै ॥ तब बीर लक्ष्मण तीर तानें । सामुहें बरनी भई । दशकंध को सुत मंद मति । को खैंचि शक्ति हनि दई ॥ हनूमान लाये जब सजीवन । भ्रात को जीवन भयो । वह शक्ति सुरपुर को सिधारी । सीस को ढूंढ़त भयो ॥ भुज बीस बोला गर्ज के मैं अबै सबको मारिहौं । हनुमान अंगद नील नल । सब छार मैं करि डारिहौं ॥ रघुवीर ने तब तीर तान्यों । छांड़ रावण पै दयो । श्री राम बाण प्रतापओं वह असुर सुर पुर को गयो ॥ १२ ॥ दोहा ॥ असुर मारि सीता लई । राज विभीषण दीन । तुलसी दास हरष्षू चले । राज अवधपुर कीन ॥ इति रामचन्द्र की बारह मासी सम्पूर्णम् ॥

विषय—बारहमासी के रूप में राम का संक्षिप्त चरित्र वर्णन ।

संख्या ३२५ जे³. रामजी स्तोत्र, रचयिता—तुलसीदास, कागज—देशी, पत्र—५, आकार—६ × ५ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१३, परिमाण (अनुष्टुप्)—२२, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री अद्वैतचरण जी, गोस्वामी घेरा श्री राधारमण—बृन्दाबन ।

आदि—श्री सीताराम जी सहाय । श्री राम जी स्तोत्र लिषते । रघुकुल मंडल कुल पतक । काम धेनु सुषसीर । नाम लेत थर हरै । श्री जै जै जै रघुबीर । तात बचन हित कारनै । धेरी धनक कर धीर । वनु विचरत करुनाइ मइ । श्री जै जै जै रघुबीर । चित्रकूट के घाट पै । भई संतन की भीर । दइ भरथकूपावरी । श्री जै जै जै रघुबीर । ३ श्री राम बचन ऐसे कहे । सुनौ भरत बलबीर । परजाकूं सुप दीजियौ । जै जै जे श्री रघुवीर । ४ भरत चलै हैं अवध कूं नैन न आये नीर । ये दरसन कब पाइहो श्री जै जै जै रघुबीर । ५ हम आवैं रिपु जिति कै सुर नर मुनि की भीर । वेगि अवधि कूं आइहे श्री जे जे जे रघुवीर । ६ । गंधि व्याध रणिका तिरी । साषि भरत है कीर । पतित वहोत पावन करै । श्री जै जै जै रघुबीर ।

अन्त—नव छावरि अधिकी बनी मोती माणिक हीर। बंदीजन अब भरा भरा। श्री जै जै जै रघुबीर। २०। सिंघासन बैठे श्री राम जी। भइ वीर मानन भीर। जल सुत वरषै पहौ पघन श्री जै जै जै रघुबीर। २१। अरगंजन आनंद घन। सकल धरम मन धीर। तुलसी के हिरदै बसौ श्री जै जै जै रघुवीर। २२। इति श्री रामजी स्तोत्र संपूर्ण ॥ ० ॥

विषय—श्री रामचंद्र की प्रशंसा।

संख्या ३२५ के[3]. त्रिदेव स्तुति, रचयिता—तुलसीदास, पत्र—८, आकार—४ × २$\frac{1}{2}$ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—९, परिमाण (अनुष्टुप्)—२७, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० दुर्गाप्रसाद जी फतेहाबाद, जिला—आगरा।

आदि—श्री। जै जै। भागीरथ नंदनी मुनि चंप चकोर चंदनी नरनाग विवुध वंदनी जै जन्हु वालिका ॥ विष्णु पद सरोज जासु ईस सीस पर विभासि त्रिपथगा पुन्य पासि पाप छालिका ॥ विमल विपुल रहसि वारि सीतल त्रय ताप हारि भ्रमर वर विहंग तरत्त रंग मालिका ॥ पूरजन पूज्यो पहार सोभित ससि धवल धार भंजन भवभार भक्त कला कथालिका ॥ निज तट वासी विहंग जल थल चर पसु पतंग कीट जटिल ताप ससव सरिस पालिका ॥ तुलसी तव तार तीर सुमिरत रघुवंस वीर विचरन्ति भति देहु मो महिसि कालिका ॥ राग धनाक्षरी। जे जिलक्ष्मणानंत भगवंत भूधर भुजगराज भुवनेस भू भार हारी। प्रलय पावक महा ज्वाल माला ववन सवन सताप लीला वतारी ॥ जयति दासरथि सम रथ सुमित्रा स्वस्त्र भुवन विख्यात राम भरथ वंद्यो चारु चंपक वरन वसन भूषन धरन दिव्यतर भव्य लावन्य सिंधु जयति गाधेय गोतम जनक सुख विस्व कंटक कुटिल कोटि हंता।

अन्त—राग वसंत। देखो देखो वन्यो आजु उमाकंत मानो देखन तुहीन आई रितु वसंत। मनो तन दुति चंपक कुसुम माला वर वसन नील नौ तन तयाल कल कदलि जंघ पद कमल लाल सूचत करिके हरि गति मराल। भुवन प्रसून वह विविध रंग नुपुर किंकिन कलख विहंग। कर नवल कुल पल्लव रसाल श्री फल कुल कंचकी लता जाल। आनन सरोज कच मधुप गुंज लोचन विसाल नवनील कंज। पिक वचन चरित वर वरहि कीर सित सुवन हास लीला समीर। कह तुलसीदास सुनौ सिव सुजान जीत्यौ रति पंच-वान। इति त्रिदेव स्तुति सम्पूर्णम्।

विषय—तीनों देवों (ब्रह्मा, विष्णु और महादेव) तथा गंगा की स्तुति।

संख्या ३२५ एल[3]. ज्ञानदीपक, रचयिता—श्री तुलसीदास जी, पत्र—५४, आकार ५ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१८, परिमाण (अनुष्टुप्)—६०७$\frac{1}{2}$, रूप—अति प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १८९८ = १८४१ ई०, प्राप्तिस्थान—रामप्रसाद जी कोटला, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः। भवानी संकरौ वंदे श्रद्धा विश्वास रुपिणौ याभ्यां विना न.............। जा सुमिरत सिधि होय गणनायक करिवर वदन। करौ अनुग्रह सोइ बुद्धि दायक सुभ गुन सदन। अथ ग्यान दीपका लिख्यते। सुमिरत चरण गणेस के प्रथमति

शीश नवाहु । बुद्धि सिद्धि जाते लहौ भाषा ग्रन्थ वनाइ । चौपाई । नहिं उपजै नहिं होइ विनासा तिहु लोक जाकर परकासा । जाको लीला जगत भुलाना । नमो २ ता प्रभु भगवाना सारद सुक नारदि सुमिरि व्यास जनके पांई । ग्यान दीपका रचत हों राम चरन चितलाइ । चौपइ । सुनि २ विविध संस्कृत बानी भाषा कीन चहों रूच मानी । हरिहि मिलन के मारग पांच । देवतारे प्रघट बुध सांच । दोहा । ज्ञान दीपिका वरन हौं भापत जोति ही पांच जुक्ति जुक्ति सो ग्रंथ करि कथा पुरा तन सांच । अर्थ ग्यान दीपक यथा । दोहा ।—बुध पांच वाती उक्ति तत्व तेल की धार ब्रह्म अग्नि कर लेपिये ग्यान दीप उजयारि । संवत सोलह सो गये ब्रकतीस अधिक सुविचार शुक्ल पक्ष असाढ़ की दोज पुष्प गुरुवार । तादिन उपजी दीपिका पांच जोग परवान धर्म ग्यान अह ब्रह्म पुनि प्रतिम रुप विग्यान । ज्ञान सातु भवै स्तवाग्रह वासिनी सुख दोगहित वैरागनि । दुखैं टरत सब लोग । अथ धर्म मार्ग ।—

अन्त—भूमि हसै जब भूप मिरैं जुगमी चुहसै तन लोह छपैयो कामु हसै जब ग्यान तजै जति अनारि हसै निजु नाहर कैयो । लछि हसै षन दूर धरैं धनु कर्म हसै अभिमान वढ़ैयो । राखै रहै न रहै न चलै तुलसी जग ये नर नाच नचैयो । ४३ दोहा । मन में करि अब सोच कछु कैसो परषै भार । यह विचार लिनि राख उर हेत देत करतार । सुमति भूमि और कुमति धनु सरकरनी सव मोर......किकै करक काम तन चोर । यह विचारि नहिं आपु सिर राखि असकल अभार । करम ओट दुख सुख जगत सब भुगवैं करतार बुद्ध हीन जड़ता अधिक नहि ३ पाई की मोर । राम साधु को विरद लखि कौ दुहन की और यह विचार नहि मानिये अव गुनता मति हीन । विरद सम अनुसर निरखि छिपा करहु पर वीन । ४८ सोरठा । मति बंध कुल देस जप तप विध्ना वेद विधि रहै न इनको लहेस । नारि सुमुखै लगाइये । प्रीत हिये दिठ जानि विध नाना कव रग है ति तै टिकावै आनि जितै बसै मनु कामना ॥ इति श्री ज्ञान दीपिकायां श्री स्वामि तुलसीदास कृत श्रुति पुरान उक्ति सिद्धान्त मर्ण वर्नन नाम पंचमासे समुल्लेस समाप्तम—

विषय—धर्माधर्म विवेचन सन्मार्ग गामी होने का उपदेश, ब्रह्म-माया के लक्षण, उनका उदाहरण सहित विस्तृत प्रतिपादन, सृष्टि उत्पत्ति का क्रम, प्रकृति से महत्, महत् से अहंकार, पंच तन्मात्रायें और इन्द्रियों की उत्पत्ति । पंच महाभूतों का वर्णन, अंत में सगुणोपासना के लिये अवतार सिद्धि

संख्या ३२५ एम[3]. ज्ञानदीपिका, रचयिता—तुलसीदास, पत्र—२६, आकार—१० × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—७००, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १६३१ = १५७४ ई०, लिपिकाल—सं० १८५४ = १७९७ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा रामदास-सीतामऊ, डाकघर—मल्लावा, जिला—हरदोई ।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ ज्ञान दीपिका तुलसीदास कृत लिख्यते ॥ दोहा ॥ सुमिरत चरन गनेस कं प्रथमहि सीस नवाय ॥ बुद्धि सिद्धि जाते लहै भाषा ग्रन्थ वनाय ॥ चौ० ॥ नहि उपजै नहिं होइ विनास । तिहू लोक जाकर परकास ॥ जाकी लीला जगत

लुभान । नमो नमो ता प्रभु भगवान ॥ दोहा ॥ सारद सुक सारद सुमिरि ब्यास जनक के पाइ । ज्ञान दीपिका रचत हौं । राम चरन चितलाइ ॥ चौ० ॥ सुनि सुनि विविध संस्कृत वानी । भाषा कीनि चहौ रचिमानी ॥ हरिहर मिलन के मारग पांच । देहि बताइ प्रगट बुध सांच ॥ दो० ॥ ज्ञान दीपिका वरनि हौं भाषत जो तेहि पांच । उक्ति जुक्ति सन ग्रन्थ करि कथा पुरातम सांच ॥ बुद्धि पत्र बाती युक्ति तत्व तेल की धार । ब्रह्म अग्नि करि लेसिये ज्ञान दीप उजियारि ॥ संवत सोरह सत गये येकतिस अधिक विचार । सुक्ल पक्ष असाढ़ की दूजै पुष्य गुरुवार ॥ ता दिन उपजी दीपिका पांचा जो परवान । धर्म ज्ञान अरु ब्रह्म पुनि प्रभु सरुप विज्ञान ॥

अन्त—अति विसार सर्व सास्त्र मत लघु करि भाखौं पंथ । तुलसिदास टीका करत कोटिन वांटत ग्रन्थ ॥ जथा बुद्धि मत मैं करयौ ज्ञान दीप अनुहार । चूक परी जित होइ कछु छमियो कविहु विचार ॥ भूमि हंसै जब भूप भिरै जग मीचु हंसै तन लोभ छिपाये ॥ काम हंसै जव जूंव तजै तिय नारि हंसै निज नादर काये ॥ लक्ष हंसै खनि दूरि धरै धनु कर्म हंसै अभिमान वढ़ाये ॥ राखै रहैं न चलै पठये तुलसी जगये नर नाच नचाये ॥ मनमें करिय न छोभ कछु केतौ धरै अभार । यह विचारि जिनु राखि सिर देत हरत करतार ॥ सुमति भूमि अरु कुमति धन सर करनी सव मोट । भोग निसाना येक करि करत काम तन चोट ॥ यह विचार नहिं आयु सिर राखी सकरम अभार । कर्म ओट दुख सुख जगत सव भुगवत करतार ॥ बुद्धि हीन जड़ता अधिक करयौ पाप की मोट । राम साधु की विरद सम टिक्यो दुहूं की ओट ॥ यह विचार नहिं मांनिये औगुनता मति हीन । विरद समुझि अरु सरन लखि क्षमा करहु सु प्रवीन ॥ मीत वन्धु कुल देश जप तप विद्या वंद विधि रहै न इनकर लेस नारि जो मुखै लगाइये । प्रीति हिये दृढ़ जानि विधना ताके कर जहै ॥ तिनहिं टिकावत आनि । जितहिं वसहिं मन कामना । इति भाषा तुलसी कृत ज्ञान दीपिका संपूर्ण समाप्तः लिषतं गंगा नारायण कायस्थ संवत् १८५४ वि० राम राम राम

विषय—ज्ञानोपदेश ।

संख्या ३२६ ए. घटरामायण (पूर्वार्द्ध), रचयिता—तुलसी साहब (हाथरस, अलीगढ़), पत्र—२००, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—७१२५, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९११ = १८५४ ई०, प्राप्तिस्थान - पं० गोकुल शास्त्री—बाजनगर, डाकघर—सहावर, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश) ।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ अथ घटरामायण पूर्वार्द्ध लिख्यते ॥ सोरठा—श्रुति बुंद सिन्धु मिलाय आप अधर चढ़ि चाखिया । भाषा भोर भियान भेद भान गुरु श्रुति लखा ॥ छंद—सत सुरति समझि सिहार साधो निरखि नित नैनन रहौं । पुनि धधक धीर गंभीर मुरली मरम मन मारग गहौं ॥ सम सील लील अपील पेलैं खेल खुलि खुलि लखि परैं ॥ नित नेम प्रेम पियार पिउ कर सुरति सजि पल पल भरै ॥ धरि गगण डोरि अपोर परखें पकरि पट पिउ पिउ करैं ॥ सर साधि सुन्न सुधारि जानौं ध्यान धरि जब थुर थुआ ॥

जहँ रूप रेप न भेप काया। मन न माया तन जुआ ॥ अली अंत मूल अतूल कंवला फूल फिरि फिरि धरि धसैं ॥ तुलसी तारि निहारि सूरति सैल सत मत मन वसै ॥

मध्य—तुलसी साहेब जाति के दक्षिणी ब्राह्मण थे। इनको साहेब जी भी कहते थे। राजा पूना के जुवराज यानी बड़े बेटे थे। इनका व्याह हो गया था। जव गद्दी पर बैठने का एक दिन वाकी रहा तो भाग गये थे। वरसों जंगलों पहाड़ों में रहे फिर अलीगढ़ के हाथरस में ठहरे वहां पूरा सत संग किया घरसे निकलने के ४२ वर्ष पीछे अपने भाई बाजी राव से संवत् १८७६ में बिठूर में आकर मिले। इन तुलसी साहेब का पहिले श्याम राव नाम था। इनके लिये कहा जाता है कि गो० तुलसीदास का जन्म है।

अंत—फूल दास उवाच—बार बार चरनन सिरनाई करि हैं तुलसी मोर सहाई ॥ अब तो पौढ़ पौढ़ कर पकड़ा तुलसी चरनन में मन जकड़ा ॥ और कहूं मोहिं बोध न आवै जो कोइ कोटि कोटि समुझावै ॥ समुझि परा सब बात विधाना तुलसी बिन सूझै नहिं आना ॥ दोहा—फूलदास विनती करैं पुनि पुनि सरन तुम्हार। मैं अचेत चेतन कियो तुलसि उतार्‍यो पार ॥ वचन तुलसी साहेव—फूलदास सज्जन बड़े तुम चित मति बुधि सार। संत चरन अव मन बस्यो पइहों संत संग पार ॥ चौ०—फूलदास तुम साधु सुजाना। तुमरी बुधि निरमल परमाना ॥ दिन दोपहर भयो मध्याना। अव परसादी करो समाना आटा चून चना कर होइ। करौ प्रसाद भाजी संग सोई ॥ घीव न पास न पैसा होई। नोन मिरच चटनी संग सोई ॥ किरपा कर परसाद वनाई। पुनि वाको सब भोग लगाई ॥ फूलदास उवाचः—हम नहिं अपने हाथ वनें हैं। सीत उच्चिष्ट चरना मृत पैं हैं ॥ तुलसी उठि परसाद बनावा। भया प्रसाद साध सब आवा ॥ सब साधू मिलि भोग लगाई। भोजन करि आसन पर आई ॥ फूलदास बंदगी सिर नाई। सीस टेक कर परसे पांई ॥ हाथ जोड़ कर विनती लाई। स्वामी मोहिं भव पार लगाई ॥ हमहूं दीन दंडवत कीन्हा। शीश नवाय चरन पुनि लीन्हा ॥ इति श्री घट रामायण तुलसी साहेव कृत संपूर्ण लिखतं मयादास ब्रह्म कुटी जलेसर संवत् १९११ वि० ॥

विषय—ग्रन्थ में तुलसी साहब हाथरस वाले का जीवन चरित्र और संतों के जीवन लीला एवं नाना प्रकार के जीव, पिंड आदि का भेद भाव वर्णन है।

संख्या ३२६ बी. घटरामायण उत्तरार्द्ध, रचयिता—तुलसी साहब (हाथरस, अलीगढ़), पत्र—१९६, आकार—१२ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३०, परिमाण (अनुष्टुप्)—७०००, पद्य गद्य, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९११ = १८५४, प्राप्तिस्थान—पं० गोकुल शास्त्री—बाजनगर, डाकघर—सहावार, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः ॥ श्री सतगुरु नमः ॥ अथ घटरामायण उत्तरार्द्ध सतगुरु तुलसी साहेव कृत लिख्यते ॥ रेवतीदास चरित्र ॥ वचन तुलसी साहेव ॥ चौ०—फूलदास संग रही एक साधा। मन सुख और मान मद माता ॥ रेवतीदास ताहि कर नामा। फूलदास देखि घवराना ॥ पुनि बोला मन में रिसियाना। स्वामी अब चलिये अस्थाना ॥ फूलदास कहै आज न आवौं। तुम सब मिलि अस्थाने जावौ ॥ हमहूं भोर भिहाने अइहैं।

राति यही चरनन में रहि हैं ॥ तिन पुनि तरक कीन्ह एक बाता । हमहूं रहिहों इनके साथा ॥ हमको सूझि परा अस लेखा । तुम्हरो मति बुधि अचरज देखा ॥ फूलदास - गुसा खाइ बोले अस बानी । लै उतार दीनी सोइ सेली ॥ फूलदास दीनी तेहि हाथा । रेवती सीस नवायो माथा ॥ गल बिच डारि महंती दीन्हा । सुख पालै बकसीसी कीन्हा ॥ तुमतो करौ महंती जाई । अब हम नहिं अस्थाने आई ॥

अंत—अली आत्मरूपं अकासं सरूपं, रवी भास भूपं अनंतं अनूपं ॥ निराकार कारं मई जोति जारं । लई विश्व भारं सो सारं समारं ॥ सरगुन श्यामवारं सो सृष्टी सवांरं । रची खांनि चारं सो भूमी अपारं । अली आस अंडा जमा जीव पिंडा । सो तुलसी अखंडा वैराटं ब्रह्मंडं ॥ गुना गोह तीतं बनाबास कीतं । पके पांचपीतं सो चीतं अनीतं ॥ वैराट धारं सो वेदौन पारं । जो नेतौ पुकारं सो वारं न पारं ॥ निरवानवानं जगाजोग ध्यानं । पगा प्रेम पालं सो कालं करालं ॥ तुलसी तत्त धोयं गठे गांठि गोयं परे पांच मोयं जो सोयं सो खोयं ॥ सोरठा—श्रोतक तरक विचार समझि संघ साधू लखै । तकै सुरति धरि ध्यान सो समान पद को चखै ॥ घट रामायण अंत समझि सूर संतहि लखै । झखै भेष औ पंथ थकै जगत भौ मिल रहा ॥ दोहा—पंडित ज्ञानी भेष जो नहिं पावै काइ अंत । ये अनंत रस अगम हैं । लखै सूर कोइ संत ॥ सो०—तुलसी मैं मति हीन संत चीन्ह मोको दई । भई निरत पद लीन होइ अधीन अंदर मई ॥ इति श्री घटरामायण उत्तरार्द्ध संपूर्ण समाप्तः लिखतं मायादास ब्रह्मकुटी जलेसर सं० १९११ वि० राम राम राम ।

विषय—रेवतीदास चरित्र चरचा के साथ फूलदास अलीमियां का संवाद । भेद रामायन रचने का, संवाद गुसाईं प्रिय लाला भेद राम । तुलसी साहब के पूर्व जन्मा का वृत्तान्त आदि वर्णन ।

संख्या ३२६ सी. संवाद फूलदास कबीर पंथी और तुलसी साहब, रचयिता—तुलसीसाहब (हाथरस, अलीगढ़), पत्र—७२, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३२, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५१०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९१९ = १८६२ ई०, प्राप्तिस्थान—बाबा शिवगिरि—राजारामपुर, डाकघर—सहावर, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश) ।

आदि—श्री गणेशाय नमः संवाद फूल दास कबीर पंथी और तुलसी साहेब का लिख्यते ॥ फूल दास ॥ चौपाई ॥ फूलदास पंडित से बोलेउ । तुलसीवचन बिधी विधि खोलेउ पंडित—माना महंत से कहै बुझाई । फूल दास सुनियो चित लाई ॥ तुलसी गत मत कहौं बिचारी । उनसम मता नहीं संसारी ॥ साध संत मत भये अनेका । तुलसी सम हम एक न देखा ॥ मत तुम्हरा हमहूं पुनि जाना । तुलसी मता अगाध बखाना ॥ सुनि महंत तन तमक समानी । को कबीर सम करत बखानी ॥ खुद कबीर अविगति के आया । पुर इन पात वो भया अकाया ॥ सत्त पुरुष की आपस लाये । जग में जीव नेक मुकताये ॥ उनसम मता न जानौं भाई । इइहै यह कोई साध गुसाईं ॥ हम पूछैं सौई भेद बतावै । फूलदास के मन जब आवै ॥ जो कबीर मुख अपने भाषा । सो विधि देखों अपनी आंखा ॥ सत्त लोक की करै बखाना । पूरा साधु ताहि हम जाना ॥

अन्त—चौ०—तब तुलसी बोले इहि भांता। हिरदे भेद सुनाऊ बाता ॥ हम सत संगति बहु विधि कीन्हा। संत चरन में रहे अधीना ॥ दीन विधी औ गुरु मत लीन्हा। संत चरन घट अंतर चीन्हा ॥ सूरत लीन अधर रस माती। का पूंछौ हिरदे की वाती ॥ सत संगत विधि सिगरी जाना। सूरति सैलि फोरि असमाना ॥ दस दिस पार सार सब जाना। नौलख कंवल पार पहिचाना ॥ मान सरोवर वेनी तीरा। जल प्रयाग बहै निरमल नीरा ॥ तामें नहाइ चढ़े असमाना। सत गुरु चौथे पार ठिकाना ॥ निसि दिन सैल सुरति से खेला। सुरतिनाम करै निस दिन मेला ॥ अष्ट कंवल दल गगन समाई। सहस केवल पर तिहि कीराही ॥ ताके परे चार दल लीना। दुइ दल जाइ दोइ मैं कीन्हा ॥ एहि विधि रहे दिवस अरु राती। जानें कोइ न इनकी वाती ॥ कोउ न भेद जान घर माई। यह रहे सूरति अधर लगाई ॥ ऐसे कई दिवस गये वीती। ता पीछे भई ऐसी रीती ॥ चलि हिरदे पुनि घर की जाई। घर में तिरिया पुत्र रहाई ॥ राति वास घर अपने कीना। भोजन करि पुनि कीने सैना ॥ पुनि पुनि निसा गई अधराती। चढ़ि गई सुरति सैल रस माती ॥ तासमय तिरिया कीन उपावा। रोग सोग अपना दुख गावा ॥ जब हिरदे मन कीन बिचारा। ये ग्रह साल जाल है न्यारा ॥ अस मन में कछु भई उदासी। पुनि तबसे रहे हमरे पासी ॥ गुरुवा वांच—तुलसी स्वामी विधी वताई। हिरदे की कछु अगम सुनाई ॥ हिरदे पार सार गति पाई। तुलसी स्वामी अगम लखाई ॥ इति श्री फूल दास कबीर पंथी और सतगुरु तुलसी साहेब का संवाद संपूर्ण समाप्तः लिखा रामवली स्व पठनार्थ ॥ संवत् १९१९ वि० ॥

विषय—फूलदास कबीर पंथी और तुलसी साहेब का संवाद। इसमें कबीर पंथी मत का खंडन करना और फूलदास का तुलसी साहब का मत ग्रहण करना आदि वर्णन है।

संख्या ३२६ डी. संवाद पलकराम नानकपंथी और तुलसी साहब, रचयिता—तुलसी साहब (हाथरस, अलीगढ़), पत्र—३५, आकार—१० × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२५, खंडित, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—बाबा शिवगिरि–राजारामपुर, डाकघर—सहाबर, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री सतगुरु नमः अथ पलक राम नानक पंथी और सतगुरु तुलसी साहेब का संम्बाद लिख्यते ॥ पलक राम एक नानक पंथी। रहे कासी में वहाँ महंती ॥ कहते वाह गुरू मुख आये। मन अति लीन दीन अति गाये ॥ पैर परन हमहूँ पुनि कीना। उठि कर पकरि चरन को लीना। चाल विधी जस साधन राही। जस जस देखी उनके माहीं ॥ अंतर दया भाव दिल दीना। महिमा संत अंत नहिं चीन्हा ॥ संत प्रीति मन पूरा भावै। सुनै कोऊ संत आप उठि धावै ॥ तन मन रहत संत सरनाई। मन उमगै मुख संत बड़ाई ॥ सील सुभाव नीच मन माहीं। मिले संत चरनन लिपटाई ॥ निर्मल वुद्धि ज्ञान रस राता। मन सब चरन प्रीति हिंत बाता ॥ हमैं देखि हिय हरष समानी। चरन परे ढुरै नैनन पानी ॥ जस कछु रीति साध मत माहीं। तस तस तुलसी उनमें पाई ॥ करता पुरुष नाम सत माने। निरंकार जोती सोइ जानै ॥

अन्त—वचन तुलसी साहेब ॥ चौपाई ॥ कहे तुलसी सुन हिरदे वाता। कासी नगर काल मत राता ॥ कासी कर्म जीव अज्ञाना। जुग चारौं जग जींव भुलाना ॥ कासी जगत

धाम बतलावै । मरे जीव पुनि भूत कहावै ॥ सिव की पुरी नाम जग भाषा । उनके भूत प्रेत की साखा ॥ सिव भये भूत प्रेत के राजा । मरै जीव होइ भूत समाजा ॥ ये काशी मिलि भूत वड़ाई । सिव कैलास भूत मैं भाई ॥ तासे जड़मत जीवन लीना । जड़ संग जिव को भया अधीना ॥ घट रामायन सुनि भौ सोरा । कासी नगर भया घन घोरा ॥ पंथ भेष जग लड़न खखारा । घट रामायन परी पुकारा ॥ अस सुनि सोर भयो जग माहीं । सहर मुलक सव गवईं गाईं ॥ भेष पंथ में अचरज भइया । दरसन भेष लपन को अइया ॥ दोहा— जगत सोर सव भेष में नगर गांव सब ठौर । भेष फकीरी पंथ के लख जांचत सत मोर ॥ इति श्री पलक राम नानक पंथी और तुलसी साहेब का संवाद संपूर्ण समाप्तः ॥ राम राम सदासहाई राम राम ॥

विषय—पलक राम नानक पंथी और तुलसी साहब का संवाद ॥

संख्या ३२७ ए. बाबा वाजिद की अरल, रचयिता—बाबा वाजिद, कागज—स्यालकोटी, पत्र—७, आकार—९ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—३६४, रूप - प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री रामचन्द्र सैनी—बेलनगंज, जिला—आगरा ।

आदि—सत साहिब सत सुकृत कबीर ॥ अथ बाबा जी की अरल लिख्यते ॥ विरह अंग ॥ मूरक बल बाजोद कहौ क्यो मेल है ॥ जरै दिवस अरू रैन कराही तेल है ॥ अपनौं ही सब खेट दोस कहा राम को । हरि हानीच ऊँच सो वंधै कहौ किहि काम को ॥ बाजीद बिहद बिपन्य कहौ कहा उनको ॥ सरक माण की प्रति करी पीय मुक्त को ॥ पहिले अपणी घोर तीर को ताँह गई ॥ हरि हांपी बै मारै दूरि जगत सब जाँर गई ॥ २ ॥

अन्त— दर गर बढ़ी दिवांनन आवै टेह जी ॥ जो सिर कर वस देइ तो कीजे नेरजी॥ दरते दूरिन होइ दरद को हरि के । हरि हो वाण राइ जगदीस निवाजो केरिके ॥ १३३ ॥ इति श्री बाबा जीदजी की अरल संपूरण ॥

विषय—निम्नलिखित अंगों में भक्ति और ज्ञानोपदेश वर्णन—१) विरह को अंग, २) सुमरण को अंग । ३) करल को अंग । ४) उपदेश को अंग । ५ कृपन को अंग । ६) चाणक को अंग । ७) विश्वास को अंग । ८) साध को अंग । ९) पतिव्रता को अंग ।

संख्या ३२७ बी. वाजिद की साखी, रचयिता—वाजिद (दादू पंथी), पत्र—२८, आकार—६ × ४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२०, परिमाण (अनुष्टुप्)—३१६, खंडित, रूप—नवीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० शिवनन्दन गोसाईंगंज, डाकघर—जयगंज, जिला—अलीगढ़ (उत्तर प्रदेश) ।

आदि—अथ सुमिरण को अंग लिख्यतेः—हाथी साथी कौन के काको गढ़ अरु गांव । वाकी विरिया आइहै अब आड़ो हरि नांव ॥ तिल पल पहर घरी घरी गुनि गोविन्द के गाइ । काल जाल ते निकसि है सुमिरन सेरी पाइ ॥ राम नाम इक छांड़ि कै कहे न दूजे बैन । लोह तिरत सग काठके प्रपत देखहु नैन ॥ पांइ पसारिन सोइ है चित कीजै कछु चेत । वाजीद पतित पावन भये राम नाम के लेत ॥ सति गहे ते गति है यामें मीन न

मेष। नावहि जब लगि जगि निस्तरै जोगी जुग में सीष ॥ भव सागर डूबे नहीं तुरत लगाये तीर। वाजीद राम को नाम यहु जग जहाज है वीर ॥ सुर नर मुनि जोगी जती सिव विरंचि कह सेष। वाजीद उपासी ब्रह्मा के मुक्ति भये सब देषि ॥ वाजीद राम के नाव को विसरि जाइ जिन सूर। छाया राषै हस्त की पाप ताप है दूर ॥

अन्त—सिष की थोरी बात थी गुरुहि दिवाई गालि। स्वांग सांस को काछि करि चल्यो भेड़ की लार॥ निकसि न जाई प्राण ये पिये विन रहे सुकित। तन रवाव मम मोरना विरह बजावत नित ॥ लोही मांस सरीर में रती न छाड़्यो राढ़। अब सो बिरहा स्वान है चावत सूके हाठ ॥ देह गेह गुन वीसरी नेह लात के लागि। लोही पानी है गया जरत विरह की आगि ॥ विधना मेरी बुधि हरी धरी सीस तर वांहि ॥ नारि गवांरि न समझई भये कौन के नांह ॥ वाजीद वाम आपनो रह्यो विरानो होइ। याही दरद जरद भयो विथा न बूझत कोइ ॥ भरने को ललच्या वहुत बालम विछुरत तोहि। विरह अगिन तन पर जरै जमहु छुवत नहिं मोहिं ॥ काहे न वरप बुझावई मही तपत है देह। वरपा चूक न चाहिये इक वालम अरु मेह ॥ देहु मौज दीदार की लेहु न याको अंत। चात्रग बोले चहुं दिसा निसा अंधेरी कंत ॥ क्रिया करौ वाजीद सों धरहु सीस पर पाउं। पलक पाट दोऊ खोलि कै नैनों भीतर आव ॥

विषय—उपदेश वर्णन।

संख्या ३२८ ए. महाभारत कथा, रचयिता—विष्णुदास, पत्र—५३, आकार—११३/४ × ८ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२७, परिमाण (अनुष्टुप्)—२१४६, रूप—प्राचीन लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—श्री चौबे श्रीकृष्ण जी, डाकघर—पिनाहट, जिला—आगरा।

आदि—श्री गणेशाय नमः अथ श्री महाभारत कथा लिख्यते विनसै धर्म किये पापंडू, विनसै नारि गेह पर चंडू। विनसै रांड़ पढ़ाये पांड़े, विनसै खेलै ज्वारी डांड़े ॥ १ ॥ विनसै नीच तनैं उपजारू विनसै सूत पुराने हारू। विनसै माँगनौं जरै जु लाजे, विनसै जूझ होय विन साजे ॥ २ ॥ विनसै रोगी कुपथ जो करई, विनसै घर होतैं रन धरमी। विनसै राजा मंत्र जू हीनू, बिनसै नटकु कला विनु हीनू ॥ ३ ॥ विनसै मंदिर रावर पासा, विनसै काज पराई आसा ॥ विनसै विद्या कुसिपि पढ़ाई, विनसै सुन्दरि पर घर जाई ॥४॥ विनसै अति गति कीनै व्याहू, विनसै अति लोभी नर नाहू। विनसै घृत हीनें जु अंगारू, विनसै मन्दौ चरै जटारू ॥ ५ ॥ विनसै सोनूं लोह चढ़ायें, विनसै सेव करै अनभायें। विनसै तिरिया पुरिष उदासी, विनसै मनहि हँसै विन हांसी ॥ ६ ॥ विनसै रुप जो नदी किनारै, विनसै घरु जु चलै अनुसारे। विनसै पेती आरसु कीजे, विनसै पुस्तक पानी भींजै ॥ ७ ॥ विनसै करनु कहि जे कामूं, विनसै लोभ व्यौहेरै दामूं। विनसै देह जो राचै वेस्या, विनसै नेह मित्र परदेसा ॥ ८ ॥ विनसै पोषर जामें काई, विनसै वूढ़ौ व्याहै नई विनसै कन्या हर हर हसयी। विनसै सुन्दरि पर घर वसयी। ९ विनसै विप्र विन पट कर्मा, विनसै चोर प्रजा सै मर्मा ॥ विनसै पुत्र जो वाप लड़ायें, विनसै सेवक करि मन भा ॥ १० ॥ विनसै यज्ञ क्रोध जिहिं कीजे, विनसै दान सेव करि दीजे। इतौ कपटु काहे कों

कीजैं, जौ पंडो वन वास न दीजे ।। ११ ॥ अहंकार तैं होई अकाजू ऐसैं जाय तुम्हारो राजू । हीनि कीनिहूँ है दिन मारी, जम दीसै नर वदन पसारी ॥ १२ ॥

अन्त—किरपा कान्ह भयो आनंद, जो पोषन समर्थ गो व्यंद ॥ हरि हर करत पाप सब गयो, अमर पुरी पाप सब गयो ॥ २९४ ॥ अविचल चौक जु उत्तिम थाम, न, निश्चल वास पाँडवन जान यकादशी सहस्र जो करै, अस्वमेध यज्ञ उच्चरै ॥ २९५ ॥ तीरथ सकल करै अस्नाना, पंडौ चरित सुनै दे काना । बरिष दिवस हरिवंस पुरान, गऊ कोटि विप्रन कहँ दान ॥ २९६ ॥ जो फल मकर माघ स्नाना, जो फल पांडव सुनत पुराना । गया क्षेत्र पिंड जो भरै, सूर्य पर्व गंगा जी करै ॥२९७॥ पंडौ चरित जो मन दै सुनै । नासै पाप विष्णु कवि भनै । एक चित्त सुनै दै कान । ते पावैं अमरापुर थान ॥ २९८ ॥ पंडौ कथा सुनै दै दानु, तिनकौं होय प्रयागै थानु । स्वर्गा रोहण मन दै सुनै, नासैं पाप विष्णु कवि भनै ॥ २९९ ॥ राम कृष्ण लेषक को लिषी, बाँचै सुणै सो होसी सुषी । श्री वल्लभ राम नाम गुण गाई । तिनकें भक्ति सुदृढ़ ठहराई ॥ ३०० ॥ इति श्री महा भारते विष्णुदास कवि ॥ विरचिते स्वर्गारोहण सम्पूर्णम् ॥ श्री मस्तु । श्री रस्तु शुभं भूयात् श्री रामजी

विषय—

(१)	आदि पर्व, सभा पर्व	पृ० १—२
(२)	वन पर्व	,, २—१०
(३)	विराट पर्व	,, १०—३०
(४)	उद्यम पर्व	,, ३०—३२
(५)	भीष्म पर्व	,, ३२—३५
(६)	द्रोण पर्व	,, ३५—४०
(७)	कर्ण पर्व	,, ४०—४१
(८)	शाप गदा	,, ४१—४२
(९)	सौप्तिक पर्व, स्त्री, विशोक पर्व, अनुसासन पर्व अश्वमेध पर्व और महा प्रस्थान पर्व	,, ४२—४४
(१०)	स्वर्गा रोहण	,, ४४ - ५३

संख्या ३२८ बी. रुक्मिणी मंगल, रचयिता - गोसाईं विष्णुदास जी (वृन्दाबन) कागज़ –देसी, पत्र – ४८, आकार—८ × ७ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—१५०, रूप - कुछ पुराना, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—अद्वैतचरण जी गोस्वामी घेरा राधारमण जी वृन्दावन ।

आदि—श्री राधा रमणे जयति । श्री गणेशाय नमः । अथ रुकमणी मंगल लिख्यते । दोहा । रिधि सिधि सरबु सकल विधि नव निधि दे गुरू ज्ञान । गति मति सति पति पाईयत गनपति को धर ध्यान । जाके चरण प्रणाम ते दुख मुख परत न डिठ । ता गज मुख करन की सरन आवरे डिठ । २ । राग गौरी । प्रथमहि गुरू के चरन वंदन गौरी पुत्र मनाइये । आदि हे विष्णु जुगादि हे ब्रह्मा संकर ध्यान लगाईये । देवी पूजत कर वर मांगत बुधि

और ज्ञान दिवाइये। ताते अति सुष होत हूं अंबे आनंद मंगल गाईये । ३ । गौरी लक्ष्मी सुरसती तिनको सिस निवाइये। चंद सुरज दोऊ पद रज से मस्तक तिलक चढ़ाइये । विध्मू दास प्रभु प्रिया प्रीतम को रुक्मिन मंगल गाइये ।

अन्त—विलपद–एसे में भीखम के मन्दिर नारद मुनि गुरु आये नर नारी सपताल अकास । पर समरन करत तिहोरी रोस निपूरन परगास । घट घट व्यापक अंतर जामी सब सष रासी विध्मू । दारुक मन अपनाई जनम जनम की दास ॥ इति ॥ श्री रुक्मिण मंगल संपूरण ।

विषय—गणेश वंदना तथा रुक्मिणी की कथा ।

संख्या ३२८ सी. स्वर्गारोहण पर्व, रचयिता- कवि विष्णु दास, पत्र—१८, आकार—१० × ६३/४ इंच, परिमाण (अनुष्टुप्)—६४८, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९११ = १८५४ ई०, प्राप्तिस्थान—मिट्ठूलालजी अध्यापक, ग्राम—गढ़वार, डाकघर—पारना, जिला—आगरा ।

आदि—श्रीगणेशायन्मः । श्रीसरसुती पर्म गुरुभ्यांनमः । अथ सुर्गा रोहिणी लेषते । असलोका । नारायणं नमस्कृत्यं, नरं चैव नरोत्तमं । देवीं सर्संती व्यासं, ततो जय मुदीर-येत् । सौषादास रथीरांम, सौषा राज जुधिष्ठिर । सौष्य कर्न महात्यागी सौष्य भीम महावलं । दोहा । श्री गणपति भंदन करो, बुधि अगास करि जोई, विघन हरन सब सिधि करि सादर प्रनवो सोई । चौपाई । गवरी नंदन सुमति है तारा सुमिरत सिधि होई गुरू प्यारा । भारथ भाष्यो तोहि पसाई । और सारद के लागों पांई । ओर सहज नाथ जोगी वर लएउ, श्रुगा रोहिणी विस्ता कहेउँ । विष्णु नाथ कवि विने कराई । देहु बुधि जो कथा कहाई । राति घोस जो भारथ सुने, नसै पापु विष्ग कवि भनें, ज्यौं पांडव गरि गएहि वारें कही कथा गुरु वचन विचारें ।

अंत—वर्ष दिवस हरिवंस सुनाई, देहि काटि विप्रन को जाई । जो फलु पांडव सुनत पुराना, गया मधि पंडाजु भरांना । और अचमन पौहौ करजु कराई । सुर्ज पर्व कुर षेत अन्हाई । ताको पायु सैल सम जाई, सुर्गा रोहनि मनु दैसु नई । नसै पापु कृष्ण कवि भने, वित उनमान दांन जुवने । ताकौ फलु गंगा अस्नाना, पांडव चरित सुनत दै काना । अन धन पुत्र बहुत फल पावै, सुर्गा रोहनि सुनैं सुनावै । इति श्री महा भारथे पुरांण भाषा कवि विष्णुदास कृति स्वर्गा रोहनि संपूर्णं । शुभं । भवेत् । श्री संवतु १९११ मासोतमेमासे वैसाष मासे कृष्ण पक्षे पुनि तिथि ५ चंद्वासरे । लिषी लाला हर्देवदास रैहेत कसवा मलापुर । मोकाम मोदिप तौली । जैसी प्रति देषी तैसी प्रति लिषी । मम दोषा न दीजै मोहि । जथां लोक घटी बढ़ी होइ तथा लीजौ सम्हारि । स्वर्गा रोहनि श्री प्रति श्री गंगा जी सहाइ श्री जगन्नाथ ।

विषय—पांडवों के स्वर्गारोहण का वर्णन ।

संख्या ३२८ डी. स्वर्गारोहण, रचयिता—विष्णुदास, पत्र—२७, आकार—१२ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३६, परिमाण (अनुष्टुप्)—९४०, खंडित, रूप – प्राचीन,

लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८०६ = १७४९ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर शिवदानसिंह हिरदैपुर, डाकघर—बघारी कलाँ, जिला—एटा (उत्तर प्रदेश)।

आदि—श्रीगणेशाय नमः अथ स्वर्गारोहण विष्णुदासकृत लिख्यते ॥ दोहा—गौरी नंदन सुमति दै गन नायक वरदान। स्वर्गारोहणि ग्रन्थ को वरणों तत्व वखान ॥ चौ०—गनपति सुमति देहु आचारा। सुमिरत सिद्धि सौं होइ अपारा ॥ भारथ भाषौं तोहि पसाई। अरु शारद के लागौ पाई ॥ अरु जो सहज नाथ वरु लहऊ। स्वर्गा रोहणि विस्तार कहिहूं ॥ विष्णुदास कवि विनय कराई। देहु बुद्धि जो कथा कहाई ॥ रात दिवस जो भारत सुनई। नाशै पाप विशुन कवि भनई ॥ यों पांडव गरि गये वारे। कही कथा गुरु वचन विचारे ॥ दल कुरु षेतहिं भारत कियो। कौरव मारि राज सब लियो ॥ जदुकुल में भये धर्म नरेशा। गयो द्वापर कलि भयो प्रवेशा ॥ सुनहु भीम कहे धर्म नरेशा। वार बार सुनि ले उपदेशा ॥ अब यह राज तात तुम लेहू। कै भइया अर्जुन को देऊ ॥ राज सकल अरु यह संसारा। मैं छाड़्यो यह कहै भुवारा ॥ बन्धु चारते लये बुलाई। तिनसों कही वात यह राई ॥

अंत—कंचनपुरी सुउत्तम ठाऊँ। तहाँ बसै पांडव की राऊ ॥ एक दसि वृत यों मन धरई। अरु जो अश्वमेध मुनि करई ॥ तीरथ सकल करैं असनाना। सो फल पंडव सुनत पुराना ॥ वर्ष द्योस हरि वंस सुनाई। देइ कोटि विप्रन कौ गाई ॥ गया मध्य जो पिंड भराई। अरु पुहकर आचमन कराई ॥ सूर्य पर्व कुरु षेत अन्हाई। ताको पाप सैल सम जाई ॥ स्वर्गा रोहन मनदै सुनई। नासै पाप विष्णु कवि भनई ॥ वित उनमान देइ जो दाना। ताको फल गंगा असनाना ॥ यह स्वर्गारोहण की कथा। पढ़त सुनत फल पावै जथा ॥ पांडव चरित जो सुनै सुनावै। अन्य धन्य पुत्रहि फल पावै ॥ दोहा—स्वर्गा रोहणि की कथा। पढ़ै सुनै जो कोइ। अष्टा दशौ पुराण की। ताहि महा फल होइ ॥ इति श्री महाभारते स्वर्गा रोहणि पर्व संपूर्ण समाप्तः लिखा मंसाराम पंडित सारस्वत ब्राह्मण आगरा मध्ये गुड़ की मंडी मिती भादौ बदी चौथ संवत १८०६ वि० शिवशंकर की जै राम राम सीताराम की जे श्री गुरूजी महाराज की जै वोलो ॥

विषय—पांडवों के स्वर्गा रोहण का वर्णन।

संख्या ३२८ ई. स्वर्गारोहण, रचयिता—विष्णुदास जी, पत्र—२४, आकार—७ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—३८, परिमाण (अनुष्टुप्)—८३६, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १८९१ = १८३४ ई०, प्राप्तिस्थान—लाला शंकरलाल पटवारी-मझोला, डाकघर—दरियावगंज, जिला—एटा।

आदि—श्री गणेशाय नमः श्री गुरुचरण कमलेभ्यो नमः अथ स्वर्गा रोहण लिख्यते ॥ दोहरा—गवरी नंदन सुमति दै गन नायक बरदान। स्वर्गारोहण ग्रन्थ की बरणौं तत्व बपान ॥ चौ०—गणपति सुमति देह आचारा। सुमिरत सिद्धि सो होइ अपारा ॥ भारत भाषौ तोहि पसाई। अरु शारद के लागौ पाई ॥ अरु जो सहज नाथ वर लहहूं। स्वर्गा रोहण विस्तार कहहू ॥ विष्णुदास कवि विनय कराई। देहु बुद्धि जो कथा कहाई ॥ रात

दिवस जो भारथ सुनई। नापै पाप विष्णु कबि भनई॥ यों पांडव गरि गये हेवारे। कही कथा गुरुवचन विचारे॥ दल कुरु खेतहि भारत कियो। कौरव मारि राज सब लियो॥ जदु-कुल में भये धर्म नरेशा। गयो द्वापर कलि भयो प्रवेशा॥ सुनहु भीम कह धर्म नरेशा। वार वार सुनि लै उपदेशा॥ अब यह राज तात तुम लेहू। कै भैया अर्जुन कह देऊ॥ राज सकल अरु यह संसारा। मैं छाड़ौ यह कहै भुवारा॥ वन्धु चारते लये बुलाई। तिनसों कही वात यह राई॥ सै लै भूमि भुगतु वरबीरा। काहे दुर्लभ होउ सरीरा॥ ठाढ़े भये ते चारों भाई। भीमसेन बोले शिरनाई॥ कर जुग जोरे विनई सेवा। गयो द्वापर कलि आयो देवा॥ सात दिवस मोहिं जूझत गयऊ। टूटी गदा पंड ह्वै भयऊ॥ हारो जुद्ध न जीतो जाई। कलि जुग देव रह्यो ठहराई॥ इतने वचन सुने नर नाथा। पांचौं वंधु चले इक साथा॥ नगर लोग राखें समुझाई। मानत कह्यौ न काहु की राई॥

अन्त—कंचन पुरी सु उत्तम ठाऊं। तहां बसै पांडव को राऊ॥ एकादशि व्रत यो मन धरई। अरु जो अश्वमेध पुनि करिई॥ तीरथ सकल करै अस्नाना। सो फल पांडव सुनत पुराना॥ वर्ष द्वैस हरवंश सुनाई। देइ कोटि विप्रन कौं गाई॥ गया मध्य जो पिन्ड भराई। अरु फट कर आचमन कराई॥ सूर्य पर्व कुरू खेत नहाई। ताको पाप सैल सम जाई॥ स्वर्गा रोहण मन दै सुनई। नासै पाप विष्णु कवि भनई॥ वित उनमान देहि जो दाना। ताको फल गंगा अस्नाना॥ यह स्वर्गा रोहण की कथा। पढ़त सुनत फल पावै जथा॥ पांडव चरित जो सुनै सुनावै। अन्न धन्न पुत्रहिं फल पावै॥ दोहा—स्वर्गा रोहण की कथा। पढ़ै सुनै जो कोइ। अष्टादशौ पुराण को। ताहि महा फल होइ॥ इति श्री महा-भारते स्वर्गा रोहण ग्रन्थ संपूर्ण समाप्तम असाढ़ शुक्ल पक्षे चतुर्थ याम गुरुवासरे संवत् १८९१ वि० लिपतं छोटेलाल कायस्थ कुल श्रेष्ठ श्रोनई मध्ये ग्राम नगरा धीर मैनपुरी॥

विषय—पांडवों का हिमालय में गलने का वृत्तान्त॥

संख्या ३२८ एफ. स्वर्गारोहण पर्व, रचयिता—विष्णु दास, पत्र—१६, आकार—१०३/४ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१५, परिमाण (अनुष्टुप्)—६००, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० अजीराम—अतमादपुर, जिला—आगरा।

आदि—······सो कंत्र॥ और जो सव गुन विस्तार कहै। कहत कथा कछु अछल है॥ वाही समै हँसि बोले जगदीशा। पाँचो वीरहि वरु धीसा॥ × × × × तुम जिन हथिनापुर ठहराहू। पाँचौं वीरहि वारै जाहूँ॥ तुम जिन वीर धरौ संदेहू। पूरब जन्म लहौ फल ऐहू॥ सुनि कौंता विलखानी वैना। जल हल रुप भये ते नैना॥ जाधरती लगि भारथ कीना। द्रोबान गंगे वैपी लीना॥ कमल फूल सेई रमझारी। सो भैया घाले सिंधारी॥ मारे कर्न सक्ति संजुक्त। से घर छाड़ि चले अवपूता॥ धरिती छाड़ि सर्ग मन धरिया। इतनी सुनि कौंता लरखरिया॥ विलपि परीछित राषि समझाई। वैठे राजप्रजा पात पालौ। राज सहदेव नकुल कौं देहू। हमको संग अपने लेहू॥ तुमै छाँड़ि मोपै रह्यौ न जाई। साथ तुम्हारे चलिहौं राई॥ इतनी सुनि बोले नरनाथा। जुगति नहीं चलौं तुम साथा॥

अंत—कायापलट भई उन देहा। पिछलौ उनकों नाहिं सनेहा ॥ उनकौं नाहिंन सुरति तुम्हारी। अब तुमहिकौ घरी द्वै चारी ॥ कलि खोटी सुरपति जहाँ कहिया। ताको पाप छाडि़ते रहीया ॥ देव दृष्टि उन भये सरीरा। तुम्हैं नाहि पहचानत बीरा ॥ कलिजुग देव पापकी रासी। साध लोग छाँड़ गे जासी ॥ कलि मैं अैसी चलिहै राई। जाति वड़ी बिस्वा घर जाई ॥ और कहौं सब कलिके भेवा। कहत सुनत जग वीतौ देवा ॥ ब्रह्म कुंड तुम करौ अस्नाना। औरु अचवौ तुम अमिरत पाना ॥ देव गननिके वंदौं पाई। मुनि नारदकौ जाहुँ लिवाई ॥ अब तुमकों पहचानिहै राई ॥ देखत चरन रहे लपटाई ॥ तुव चररन मैं माथो लावै। ऐसो इंद्र जू कहि समुझावै ॥

विषय—महाभारथ के पश्चात् पाँडवों के स्वर्गारोहण का वर्णन।

संख्या ३२९ ए. औतारसिद्धी ग्रंथ, रचयिता—यमुनाशङ्कर नागर (कोलाख्य-नगर), कागज—विदेशी, पत्र—५६, आकार—८ × ६ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—२६, परिमाण (अनुष्टुप्)—१७४०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, लिपिकाल—सं० १९३२ = १८७५ ई०, प्राप्तिस्थान—ठाकुर परशु सिंह—रामनगर, डाकघर—बारा, जिला—सीतापुर।

आदि—श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ औतार सिद्धि ग्रन्थ लिख्यते ॥ शिष्य उवाचः—हे गुरु इस भारतवर्ष की सनातनीय आम्नाय पूर्वक कर्म उपासना ज्ञान कांड त्रयी रूप रिगादि वेद अरु मुनु याज्ञ वाल्क्यादि स्मृति अरु भारतादि इतिहास ब्रह्मवैवर्तादि पुराण इन करके प्रति पाद्य जे धर्म रूप से कर्तव्यता से सब अपने अपने अधिकारानुसार प्रमाण ही हैं। अरु इन विषे जो धर्म रूप से कर्तव्यता प्रतिपादन किया है तिस तिस विषे जो किंचित परस्पर विरुद्ध प्रतीत होय है सो सर्व अधिकारी के भेद से है ॥ अप्रमाण कुछ नहीं ताते जो पूर्व आम्नाय प्रमाण इस भारत वर्षीय आर्य प्रजा को प्रमाण है। क्यों जो सबसे मुख्य पुराण सनातनीय आम्नाय है जो कदापि आम्नाय त्याग देवे तो ईश्वर वेदादिकों को प्रमाण मंतव्य शेष रहे नहीं ॥

अंत—ताते हे सौम्य जो धूर्त पुरुष अपने के वेद मतावलम्वी मान आर्य विदित करते हैं अरु वेद के ही सिद्धान्त वाक्य में तर्क कर अप्रमाण करते हैं तिनको वेद मतावलम्वी अनार्य पुरुष जानना अरु तिनके वाक्य न मान कर उनका संग परित्याग करना अरु जे सनातनीय आम्नाय से वेदोक्त धर्म सर्व प्रकार आस्तिक रीत्या मानके ब्रह्म आत्मा का एकत्व अनुभव कर्त्ता आत्मवेत्तों का संग कर तिनके वाक्यों में अतर्क विश्वास से धर्म चरण करना अरु ब्रह्म आत्मा की तत्वमस्यादि महावाक्य द्वारा निः संसय एकता श्रवन मनन अनुभव अभ्यास कर तत्सित पायं जन्म मरण से रहित परम निर्माण पद को प्राप्त होना यही कर्तव्यता अरु यही परम पुरुषार्थ है। आगे जो इच्छा। यथेच्छसि तथा कुरु इच्छा हो सो करौ इति श्री जमुनाशंकर नागर ब्राह्मण कृत औरत सिद्धि नामा ग्रन्थः समाप्तः शुभ मस्तु ॥ हरिः ओं ॥

विषय—भगवान के अवतारों की सिद्धी का वर्णन।

संख्या ३२९ बी. रामगीता की टीका, रचयिता—यमुनाशंकर (बनारस), पत्र—८६, आकार—१० X ६३/४ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१०, परिमाण (अनुष्टुप्)—८६०, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, रचनाकाल—सं० १९२९ = १८७२ ई०, लिपिकाल—सं० १९२९ = १८७२ ई०, प्राप्तिस्थान—बनवारीदास पुजारी—मन्दिर बम्हनटोला, ग्राम—समाई डाकघर—अतमादपुर, जिला—आगरा ।

आदि—श्री गणेशाय नमः विविक्त आसीन उपारतेंद्रियो विनिर्जितात्मा विमलांत राशयः विभाव ये देक मनन्य साधनो विज्ञान छक्के बल मात्म स्थितिः । १ । अर्थ । हे लक्ष्मण जी जिस जिज्ञासु को आत्म साक्षात्कार नहीं भया जिसको जो आत्म प्राप्ति का मार्ग है सो सुनो हे लक्ष्मण जी हे मुमुक्षी जिसको आत्म प्राप्त की इच्छा होवे जो जिज्ञासी पुरुप इस प्रकार करै प्रथम इस जगत कों परमात्मा का रुप जाणे पीछे इसको आत्मा विषें लै करै । अर्थ । यह जो आपनें समेत संपूर्ण जगत कों एक परमात्मा स्वरूप देखै सो कैसा आत्मा है सो सर्व कारणों का कारज है और अषंड सच्चिदानंद है सो मैं हो ऐसे जब अध्यास करता है तब पूर्ण सच्चिदानंद विषें स्थित होता है तब बाहर के जे संकल्प विकल्प काम क्रोध आदि हैं तिनकों नहीं जाणता किसते जो सर्व को एक परमात्मा परब्रह्म रुप जाणता है । ४६ । हे सोम अब जिस प्रकार संपूर्ण जगत एक ऊँकार रूप जाणकर जिज्ञासी को आत्म प्राप्ति वास्ते उपासना कर्त्तव्य है सो कहते हैं सावधान होकर सुनौ ४६

अन्त—आत्मा सर्व पदार्थों से श्रेष्ठ सत्य रूप भासता है । सो भी आपके अनुग्रह कर हुआ है सो भी आपके अर्थ निवेदन करना जोग्य नहीं जो इसकी प्राप्ति मुझको आपके प्रशाद कर हुई है । अर्थ । यह जो आत्मा पर्यंत कोई अर्थ ऐसा नहीं है जो आपके किए हुए उपकार के अर्थ आपु के अर्पण किया जावै तातें आपके चरणों की वारंवार साष्टांग प्रणाम हैं हे गुरो अब मुझको इच्छा कोई नहीं है आपके अनुगृह कर आप परमानंद प्रत्यक्ष आत्मा को पाप कर आप्त का भया है और शांत कृतार्थ भया हो तातें आपको मेरा बारंबार प्रणाम है । इति श्री मन्महाराजधिराज पारमहंस्य वृत्ति परायण श्री वाराणसीस्थ गुर्जर वंशा व तंसा व टंक पचौंड़ी इति ख्यात श्री मद्यमुना शंकरा अनेक पुराण शास्त्रे वेदानु मतेन श्रीराम गीताया टीका समाप्ता संवत् १९२९ वैसाख शुक्ला ४ नानो इति ख्यातस्य पुरुपोत्तमा स्यार्थे—लिखित मिदं पुस्तकम् ।

विषय—राम गीता का गद्य में टीका ।

संख्या ३२६ सी. मांडूकोपनिषद् भाषाटीका, रचयिता—यमुनाशंकर नागर, पत्र—५००, आकार—१० X ७१/२ इंच, पंक्ति (प्रति पृष्ठ)—१४, परिमाण (अनुष्टुप्)—५२५०, खंडित, रूप—प्राचीन, लिपि—नागरी, प्राप्तिस्थान—पं० बासुदेव—सिकन्दरपुर, डाकघर—बथरा, जिला—लखनऊ ।

आदि—ॐ ॥ श्री परमात्मने नमः अथ अथर्व वेदीय माँडूक्योपनिषद् श्री गौंड़ पादीय कारिका सहित प्रारभ्यते श्रीमद् भाष्यकार स्वामी श्री संकराचार्य्य कृत ॥ मंगला चरणम् ॥ प्रज्ञा नांशु प्रतानैः स्थिर चरनिकर व्यापिभिर्व्याप्य लोकान् भुक्ता भोगान्स्थ

विष्ठान पुनरपि धिखणेदूभासितान् काम जन्यान् ॥ पीत्वा सर्वान् विशेषान् स्वपिति मधुर भुङ्माय या भोजयन् नो माया संख्या तुरीयं परम मृतमजं ब्रह्म मतन्नतोऽस्मि ॥ १ ॥ हे सौम्य भाष्यकार स्वामी शंकराचार्य्य कहते हैं कि परम मृत मजं ब्रह्म यतन्नतोस्मि ॥ अमृत अज जो पर ब्रह्म है तिसको मैं नमता हौं अर्थात् गौड़ पादाचार्य को श्री नारायण के वाशुका चार्य के प्रसाद से प्राप्त हुए अरु माँडूक्य उपनिषद के अर्थ को प्रगट करने के परायण जो श्री गौड़ पादाचार्य कृत कारिका संज्ञक श्लोक तिन सहित मांडूक्योपनिषद के व्याख्यान करने को इच्छा करते हुये भगवान भाष्यकार श्री शंकराचार्य आप करके करने को इच्छित जे भाष्य तिसकी निर्विघ्न समाप्ति के हेत पर देवता के सरुप के स्मरण पूर्वक शिष्टा चार रुप प्रमाण करके सिद्ध तिस पर देवता के अर्थ नमस्कार रुप मंगला चरण को करते हुऐ अर्थ सों इस ग्रन्थ के आरंभ विषैं वांछित विषयादिक अर्थात् ग्रन्थ के प्रयोजन विषय सम्बन्ध अरु अधिकारी चार प्रकार के अनुबन्ध को भी सूचित करते हैं। तिन विधि मुप से वस्तु का प्रतिपादन है इस प्रकूपा कों दिखावते हैं ॥ अरु यहां ब्रह्म यत्तन्नतोऽस्मि जो पर ब्रह्म है तिसको मैं नमता हौं ॥ इस कहने करके मैं इस अहं शब्द के विष यत्त्वं पद के लक्ष्य अर्थ की तिस तत् शब्द के लक्ष्यार्थ से एकता के स्मरण रुप नमन को सूचित करने वाले आचार्य ने तत्पद के लक्ष्यार्थ रुप ब्रह्म का प्रत्यगात्मपना सूचन करके तत्पद अरु त्वं पद के अर्थ की एकता रुप ग्रन्थ का विषय सूचित किया ॥ × × ×

अंत—अलात अनाभाष और अजन्मा है ॥ अर्थात् निस्यंद मान अलात अर्थात् भ्रमण से रहित बनेठी ॥ सरलादिक आकार से जन्म रहित हुआ अनाभास अरु अजन्मा है ॥ अर्थात् अलात के वा काष्ट के मुख पर लगा जो अग्नि विन्दु सो अलात के भ्रमणे से भ्रमण रुप से उत्पन्न होय । भ्रमते वस भापता है अरु उस अलात के स्थित हुए वो अग्नि विन्दु जैसा उत्पत्ति और भ्रमणसे रहित है तैसा ही अनाभास अरु अजन्मा होता है ॥अर्थात् वो अलात पर का अग्नि विन्दु जैसे अलात के भ्रमण से पूर्व है तैसे ही अलात के भ्रमण के शान्त हुए है अरु मध्य विषै जो भ्रमण रूपसे उत्पन्न हुये अरु भ्रमते वत् भासता है सो अलात के भ्रमण रूप उपाधि करके भासता है परन्तु तिस अलात के भ्रमण काल में भी वो अग्नि विन्दु अपने स्वरुप से अलात के भ्रमणादिकों करके रहित सदा एक रस है ॥ अस्यन्द मानं विज्ञान मनाभासमजे तथा ॥ तैसे निस्यन्द हुआ विज्ञान अनाभास अरु अजन्मा है अर्थात् जैसे अलात का अग्नि विन्दु जैसा अज अचल है तैसा अलात के स्थिर हुऐ भासता है तैसे ही अविद्या करके चलायमान अरु अविद्या की निवृत्ति के हुए चलने से रहित अर्थात् उत्प त्यादि आकार से आभास मान हुआ जो विज्ञान सो अनाभास कहिये अचल अरु अजन्मा ही है ॥ × × ×

विषय—(१) १ से ६४ तक—मंगला चरण । अनु बन्ध चतुष्टय । वस्तु प्रतिज्ञा टीका कार स्वामी आनन्द गिरि कृत मंगलाचरण । (२) पृ० ६५ से ९२ तक—प्रथम प्रकरण । गौड़पादाचार्य कृत कारिका यां प्रथम आगमाख्य प्रकरण भाषा भाष्य ॥ पुरुष के तीन भेद । आत्मा का एकत्व । एक देव का सर्वभूतों में गूढ़ होना । जाग्रति में सुषुप्ति का वर्णन । विश्व और विराट की एकता । तेजस और हिरण्यगर्भ तीन प्रकार की देह । तीन

प्रकार के भोग। तीन प्रकार की तृप्ति भोक्ता एवम भोग्य के ज्ञान के मध्य का फल। संसार की उत्पत्ति सृष्टि का स्वरुप॥ (३) पृ० ९२ से १५० तक—ॐकार के चतुर्थ पाद की व्याख्या। आत्मा का स्वरुप। द्वैत का अभाव। प्रभु के अव्ययादि होने का वर्णन। तुर्या के यथार्थ आत्मपने का निश्चय। तत्व ज्ञान का समय और अधिकारी। तत्व के ग्रहण में असमर्थ कनिष्ठ अधिकारी। पादों और मात्राओं का एकत्व तथा उसके जानने का फल। (मूल मंत्र समाप्त) (४) पृ० १५१ से १७० तक—ॐकार और परब्रह्म की एकता। ओंकार का महत्व और मुनि की परिभाषा॥ (५) पृ० १७१ से २६४ तक—द्वितीय प्रकरण। अद्वैत के विरोधी द्वैत का मिथ्यापना। दृष्टान्त एवम प्रमाण के द्वारा (सब प्रपंच का मिथ्या पना विविध युक्तियों द्वारा)॥ आत्मा विषैं द्वैत का अध्य स्तपना नाना रुप द्वैत क्या आत्मा के तादात्म्य से सिद्ध होता है वा स्पतंत्र सिद्ध होता है? इसकी विवेचना। (६) पृ० २६५ से ४०० तक—परमार्थ तत्व रुप अद्वैत का निश्चय उपास्य उपासक भाव की निन्दा। सम्पत्ति, अद्वैत प्रतिपादन जीव का स्वरुप। उद्वैत रुप आत्मा की सिद्धता के लिये श्रुतियों के प्रमाण। विविध शास्त्रों पर शंका समाधान ज्ञान के अभ्यास वैराग्य अर्थात् आत्मा के श्रवण मनन रूप ज्ञान का अभ्यास से लाभ। मन निरोध। (अद्वैताख्यं तृतीय प्रकरण समाप्त)। (७) पृ० ४०० से ५०० तक—अलात शान्त नामक चतुर्थ प्रकरण मंगला चरण। अन्य मतावलंबियों के विचारों का खंडन। द्वैत वादियों के परस्पर विरोध का वर्णन। पूर्व पक्षी एवम् विज्ञान वादियों आदि के मतों का खंडन (८) पृ० ५०० से पृ०—तक—खंडित।

———

तृतीय परिशिष्ट

अज्ञात रचनाकारों के ग्रंथों की सूची

तृतीय परिशिष्ट

अज्ञात रचनाकारों के ग्रंथों की सूची

क्रम संख्या	ग्रंथों के नाम	विषय	रचनाकाल ईसवी सन् में	लिपिकाल ईसवी सन् में	विशेष
३३०	अब्रजदी केवली	शकुन	...	१८१६	
३३१	आबाल चिकित्सा	बालचिकित्सा	...	...	
३३२	अघोरमंत्र	अघोर मंत्रों की प्रयोग विधि	...	...	
३३३	अलंकारभ्रमभंजन	अलंकार	...	...	
३३४	आल्हा	आल्हा और पृथ्वीराज की लड़ाई	...	...	
३३५	अमृतराख	तंत्र मंत्र	...	...	
३३६	अमृतसागर की प्रकृति तथा वैद्यक वचनिका	वैद्यक	...	...	यह ग्रंथ जयपुर नरेश महाराजा प्रतापसिंह कृत अमृत सागर ग्रंथ से मिलता है।
३३७	अनुभव हुलास	दर्शन	...		
३३८	अनुपान वंग को	ओषधि-अनुपान	...		
३३९	औषधियाँ	औषधियों के नुसखे	...		
३४०	औषधियों की पुस्तक	वैद्यक	...		
३४१	औषधि संग्रह	औषधियों और मंत्रों का संग्रह	...		
३४२	बाजनामा रूमी	आखेट पक्षियों का	...		महत्व की पुस्तक
३४३	बंदागुण (बंदावली)	वृक्षों के बाँदाओं पर विचार	...		
३४४	भागवतदशमस्कंध पूर्वार्द्ध	पुराण	...		
३४५	भागवत दशमस्कंध	,,	...		
३४६	भागवत दशमस्कंध	,,	...		
३४७	भागवत महात्म्य	भागवत की महिमा	...		

क्रम संख्या	ग्रंथों के नाम	विषय	रचनाकाल ईसवी सन् में	लिपिकाल ईसवी सन् में	विशेष
३४८	भजन	ज्ञानोपदेश	...		
३४६	भजन गोपीचंद संवादी	गोपीचंद राजा की कथा	...		
३५०	भक्ति चिंतामणि	भक्ति	...	१८७७	
३५१	भाषामंत्र सावरी हनुमान जी को	तंत्र मंत्र	...	१८३१	
३५२	भूगोल पुराण	प्राचीन भूगोल	...	...	
३५३	भूगोल पुराण	,, ,,	...	...	
३५४	बुद्धसिंह वंश भास्कर	वंशावली	...	१८४३	
३५५	चाणक्य नीति दर्पण	नीति	...	...	
३५६	चतुश्लोकी भागवत	चार श्लोकों में भागवत का सार	...	...	
३५७	छबीली भठियारी	कथा कहानी	१८५७	१८६३	
३५८	चिंतामणि प्रसंग	व्यावहारिक और पारमार्थिक अनेक विषयों का वर्णन	...	...	महत्वपूर्ण कृति जिसमें लगभग चार सहस्त्र दोहे हैं।
३५९	चीतानामा	शेर व्याघ्र को जीवित पकड़ने और पालने का विषय वर्णन।	...	...	महत्व का ग्रंथ
३६०	दमजरी को गुन	दमजरी नामक जड़ी का गुण वर्णन	...	...	
३६१	देवपूजा विधि	पूजा विधान	१६४५	१६४५	
३६२	धन्वंतरी	वैद्यक	...	१८६४	
३६३	धर्म संवाद	धर्म और युधिष्ठिर संवाद	...	१८५६	
३६४	धातुमारन विधि	आयुर्वेद	...	...	
३६५	ध्रुव चरित्र	पौराणिक कथा	...	...	
३६६	दिलबहलाव	संगीत	...	१८८३	
३६७	दोहावली	स्तुति	...	...	
३६८	द्रौपदी जी की बारहमासी	,,	...	...	
३६६	एकादशी कथा	माहात्म्य	...	१८५४	
३७०	एकादशी महात्म	,,	...	...	
३७१	एकादशी व्रत	,,	...	...	
३७२	गणित पहाड़ो	गणित तथा ज्योतिष और बारहमासी आदि फुटकर विषयों का वर्णन	...	...	

क्रम संख्या	ग्रंथों के नाम	विषय	रचनाकाल ईसवी सन् में	लिपिकाल ईसवी सन् में	विशेष
३७३	गर्गप्रश्न	शकुन	...	...	
३७४	गरुड़पुराण भाषा टीका	पुराण	...	...	
३७५	गरुड़पुराण भाषा टीका	,,	१६१८	१९१८	
३७६	गरुड़ पुराण	,,	...	...	
३७७	गरुड़ पुराण	,,	...	१८५०	
३७८	गया महात्म्य	माहात्म्य	...	...	
३७९	गोवर्द्धन पूजा	कृष्णलीला	...	...	
३८०	ग्रहों के फलाफल	ज्योतिष	...	...	
३८१	गूढार्थ कोष	कोश	...	...	
३८२	गुर्रा मुहर्रम का	शकुन (मुसलमानी)	...	...	
३८३	गुरू महात्म्य	माहात्म्य	...	...	
३८४	हनुमान जी का कवच	तंत्र मंत्र	...	...	
३८५	हरीत वाक्यादि निघंट	निघंटु	...	१८५३	
३८६	हस्तरेखादि लक्षणं	सामुद्रिक	...	...	
३८७	हिकमत यूनानी	यूनानी वैद्यक	...	...	
३८८	हिय हुलास	संगीत	...	...	
३८९	होली संग्रह	होली-गीत	...	...	
३९०	इंद्रजाल	इंद्रजाल	...	...	
३९१	इंद्रजाल	,,	...	...	
३९२	जकीरा	वैद्यक	...	...	
३९३	जंत्र	जंत्र मंत्र	...	...	
३९४	जंत्र मंत्र	,, ,,	...	...	
३९५	जंत्रावली	,, ,,	...	...	
३९६	जंत्र विद्या	,, ,,	...	...	
३९७	जोग कृष्णायण	कृष्णलीला	...	...	
३९८	ज्योतिष	ज्योतिष	...	...	
३९९	ज्योतिष	,,	...	...	
४००	ज्योतिष अष्टमभेद	,,	...	१८६७	
४०१	ज्योति जन्म विचार	,,	...	...	
४०२	ज्योतिष विचार	,,	...	...	
४०३	कान्यकुब्ज दर्पण	वंशावली	...	१८९१	
४०४	कपाली स्तोत्र	स्तोत्र	...	१८३४	
४०५	कार्तिक महात्म	माहात्म्य	...	...	
४०६	कार्तिक महात्म	माहात्म्य	...	१८४५	
४०७	कार्तिक महात्म्य	,,	...	१८७५	
४०८	कवित्त	शृंगार	...	...	
४०९	कवित्त	ज्ञानोपदेश	...	...	
४१०	कवित्त	विविध	...	...	
४११	कवित्त संग्रह	विविध	...	...	

क्रम संख्या	ग्रंथों के नाम	विषय	रचनाकाल ईसवी सन् में	लिपिकाल ईसवी सन् में	विषय
४१२	कवित्त तथा भजन संग्रह	विविध	...	...	
४१३	कायस्थोत्पत्ति कथा	कायस्थों की उत्पत्ति का वर्णन	१८५२	१८५२	
४१४	किस्सा डल्ला	कथाकहानी	...	१८७६	
४१५	कृष्ण चरित्र	कृष्णलीला	...	...	
४१६	छष्ण होली	,, ,,	...	...	
४१७	कृष्णलीला	,, ,,	...	...	
४१८	लीलासहित ब्रह्मांड खंड	संसार की उत्पत्ति वर्णन	...	...	
४१९	लीलावती	गणित	१८५५	१८५६	संस्कृत में अनुवाद
४२०	लोलंबराज	वैद्यक	...	...	
४२१	महाभारत (विराटपर्व)	इतिहास	...	१८४५	
४२२	महाभारत (,,)	,,	...	१८००	
४२३	,, (,,)	,,	...	१८०८	
४२४	महाभारत (,,)	,,	...	...	
४२५	महाभारत (सभापर्व)	,,	...	१८५८	
४२६	मनोहर कहानी	कथा कहानी	...	१८३६	
४२७	मंत्र	तंत्र मंत्र	...	...	
४२८	मंत्र संग्रह	,, ,,	...	...	
४२९	मंत्र जंत्र	मंत्र जंत्र	...	...	
४३०	मंत्रावली भाषा	,, ,,	...	...	
४३१	मंत्रों का ग्रंथ	,, ,,	...	१८१८	
४३२	मथुरा प्रवेश	श्री कृष्ण का मथुरा गमन	...	...	
४३३	मुहूर्त प्रश्नावली	ज्योतिष	...	...	
४३४	मुकुंदमहिमा स्तोत्र व्याख्या भक्त तोषिनी	स्तोत्र	...	...	
४३५	नागलीला	कृष्ण लीला	...	...	
४३६	नैनागढ़ की लड़ाई	आल्हा का विवाह	...	...	
४३७	नंदोत्सव	कृष्ण जन्मोत्सव	...	...	
४३८	नासकेतोपाख्यान	पौराणिक कथा	...	...	
४३९	नवग्रह सगुनावली	शकुन	१८४५	१८४५	
४४०	निघंटु	निघंटु	...	...	
४४१	निषभोजन की कथा	धर्म	...	...	
४४२	नितपद	कृष्णभक्ति	...	१६१७	
४४३	नुसखा संग्रह	ओषधि	...	...	
४४४	नुसखे	,,	...	...	

क्रम संख्या	ग्रंथों के नाम	विषय	रचनाकाल ईसवी सन् में	लिपिकाल ईसवी सन् में	विशेष
४४५	पद संग्रह	कृष्णभक्ति	...	...	
४४६	पाँडवगीता	ज्ञानोपदेश	...	...	
४४७	पासा केवली	शकुन	१७५४	१७५४	
४४८	पासा केवली	,,	...	१८६०	
४४९	पासा केवली	,,	...	१८१८	
४५०	पासा केवली	,,	१८१३	...	
४५१	फूलचिंतनी	शृंगार	...	१८६२	
४५२	फुटकर कवित्त	विविध	...	...	
४५३	पोथी चित्रमुकुट की	प्रेम कथा	...	१७६३	
४५४	पोथी हिकमत	यूनानी वैद्यक	...	...	
४५५	पोथी लेखिन	शिक्षा	...	...	
४५६	प्रश्नमाला भाषा	कर्मविनायक (जैनी)	...	१८६३	
४५७	प्रश्नरमल	रमल	...	...	
४५८	प्रश्नरमल	,,	...	१८१५	
४५९	प्रश्नावली	शकुन	...	...	
४६०	पुरातन कथा	कृष्णकथा	...	...	
४६१	राम जन्म वधाई	रामजन्मोत्सव	...	...	
४६२	रामजन्मोत्सव	,, ,,	...	...	
४६३	रमल प्रकाश	रमल	...	...	
४६४	रमलसार प्रश्नावली	,,	...	१८७१	
४६५	रमलसार प्रश्नावली	,,	...	१८७९	
४६६	रामसवारी रहस्य	रामकथा	...	१८८६	
४६७	सगुन सुभाषित	शकुन	१८११	१८११	
४६८	सगुनौती	शकुन	...	...	
४६९	सगुनौती परीक्षा	,,	...	१७७५	
४७०	सगुनौती और शिवासकुन	,,	...	...	
४७१	शकुनावली	,,	...	...	
४७२	शालिहोत्र	शालिहोत्र	...	...	
४७३	शालिहोत्र	,,	...	...	
४७४	समय परीक्षा	शकुन	...	...	
४७५	सामुद्रिक	सामुद्रिक	...	१८०४	
४७६	सामुद्रिक	,,	...	१८३३	
४७७	शनिपुराण	पौराणिक कथा	...	१८४६	
४७८	संकदास्वरी स्तोत्र	स्तोत्र	...	...	
४७९	संन्निपात कलिका	वैद्यक	...	...	
४८०	संग्रह	विविध	...	...	
४८१	संग्राम दर्पण	ज्योतिष	...	...	
४८२	सप्तश्लोकी गीता	सात श्लोकों में गीता का वर्णन	...	...	

क्रम संख्या	ग्रंथों के नाम	विषय	रचनाकाल ईसवी सन् में	लिपिकाल ईसवी सन् में	विषय
४८३	सारंगधर	वैद्यक	...	१७४७	
४८४	सारस्वतीय प्रक्रिया	संस्कृत व्याकरण	...	...	
४८५	सार्गंधर संहिता प्र० खंड	वैद्यक	...	...	
४८६	सरोधा	स्वरोदय	...	...	
४८७	साठक	सा० संवत्सरों का फलाफल	१७४६	१७४६	
४८८	साठिक	,, ,, ,, ,,	...	...	
४८९	साठिक मत	,, ,, ,, ,,	...	१८४१	
४९०	सत्यनारायण कथा भाषा टीका	पौराणिक कथा	...	...	
४९१	सत्यनारायण कथा भाषा	,, ,,	...	१८६७	
४९२	सत्यनारायण की कथा	,, ,,	...	...	
४९३	सत्यनाराथण की कथा भाषा टीका	,, ,,	...	१८६०	
४९४	सत्यनारायण की कथा	,, ,,	...	...	
४९५	सत्यनारायण व्रत कथा	,, ,,	...	१८८०	
४९६	सावर मंत्र	मंत्र तंत्र	...	...	
४९७	शीघ्रबोध	ज्योतिष	...	...	
४९८	शीघ्रबोध भाषाटीका	,,	...	१८४५	
४९९	शिक्षाशतार्थ	ज्ञानोपदेश	...	१८६८	
५००	सिंहासन बत्तीसी	कथाकहानी	...	१८४८	
५०१	सिरसागढ़ की लड़ाई	आल्हा का कथांक	...	...	
५०२	शिवजी अष्टक	स्तोत्र	...	१८७०	
५०३	शिवस्वरोदय	स्वरोदय	...	१८६३	
५०४	सोना लोहा झगड़ा	कथाकहानी	...	१८४६	
५०५	सोने लोहे की झगरो	,, ,,	...	...	
५०६	स्तोत्र विधि	स्तोत्र	...	१७२७	
५०७	शुक बहत्तरी	कथा कहानी	...	१७६६	
५०८	शुकदेव चरित	पौराणिक कथा	...	...	
५०९	सुखदेव की उत्पत्ति कथा	,, ,,	...	...	
५१०	शुकप्रभावती संवाद	कथाकहानी	...	१८१३	
५११	शुकप्रभावती संवाद	,, ,,	...	१८१५	
५१२	सुपच की लीला	पौराणिक कथा	...	...	
५१३	स्वरोदय शास्त्र	स्वरोदय	...	...	
५१४	स्यमंत को पाख्यान	स्यमंतकमणि की कथा	...	...	
५१५	तीर्थंकर राजमाल	जैन धर्म	...	...	
५१६	तुलसी सिद्धार्थ	ज्योतिष तथा शकुन	...	...	
५१७	वैद्य जीवन	वैद्यक	...	१८७३	

क्रम संख्या	ग्रंथों के नाम	विषय	रचनाकाल ईसवी सन् में	लिपिकाल ईसवी सन् में	विशेष
५१८	वैद्यक	,,	...	...	
५१९	वैद्यक	,,	...	...	
५२०	वैद्यक	,,	...	१७८८	
५२१	वैद्यक कल्पतरु	,,	...	१८१०	
५२२	वैद्यक रसविधि	,,	...	...	
५२३	वैद्यकसार संग्रह	,,	...	...	
५२४	वैद्यक सर्वसार संग्रह	,,	...	...	
५२५	वैद्यक सर्वस्व	,,	...	...	
५२६	वंदी मोचन	माहात्म्य	...	१८८८	
५२७	वर्ष चिकित्सा	तंत्र मंत्र	...	...	
५२८	वर्ष कर्तव्य	ज्योतिष	...	...	
५२९	वर्ष फल	,,	१७८८	१७८८	
५३०	वेदांत	दर्शन	...	...	
५३१	विष्णु पुराण	पुराण	...	...	
५३२	विवाह	कथा कहानी	...	...	
५३३	विवाह पद्धति	धार्मिक	...	...	
५३४	विवाह पद्धति	,,	१७९१	१७९१	
५३५	वृहत् काल ज्ञान	आयुर्वेद	...	...	
५३६	यज्ञोपवीत पद्धति	धार्मिक	...	१८९९	
५३७	योगशत	वैद्यक	...	...	
५३८	योगसत	वैद्यक	...	...	
५३९	रसायन	रसायन	...	...	

चतुर्थ परिशिष्ट

उन ग्रंथकारों की सूची जिनके सन् १८८० ई० के पश्चात् के रचे गये ग्रंथ प्राप्त हुए हैं।

चतुर्थ परिशिष्ट (अ)

उन ग्रंथकारों की सूची जिनके सन् १८८० ई० के पश्चात् रचे गये ग्रंथ प्राप्त हुए हैं।

क्रमसंख्या	ग्रंथकार	ग्रंथ	विषय	पद्य या गद्य	रचना-काल	लिपि-काल	विशेष
१	ईश्वरी कवि	रामायण	बालमीकि रामायण का अनुवाद	पद्य	१८६४		
२	नकछेदी तिवारी 'अजान'	विचित्र उपदेश का भड़ौवा	भड़ौवा	,,	१८८७		
३	प्रयाग शरण	शब्दावली	उपदेश	,,	१६१३	१६१६	
		सर्व विलास	पूर्व जन्म का वृतांत तथा ज्ञानोपदेश	,,	१६१३	,,	
		सुख विलास	हठयोग और भक्ति	,,	१६१२	,,	
४	बलदेव द्विज	प्रेम तरंग	श्रृंगार काव्य	,,	१६०३		
		वीर तरंग	वीर काव्य	,,			
५	मथुरादास	सत्यनाम	भक्ति और वैराग्य	,,	१६२६	१९२७	
६	यमुना भारती	औषधि सार	वैद्यक	गद्य	१८८१	१८८१	
७	रामबदल	पालागर्दी काव्य	सन् १९०४ के पाले का वर्णन	पद्य	१६०४	१९२६	
८	लालजी	कीर्ति सागर	स्वामी जगजीवन दास (सतनामी) का जीवन वृत्त	,,			
९	शंकर दीक्षित	बुढ़वा मंगल	बुढ़वा मंगल के मेले का वर्णन	,,	१८८८		
		हितोपदेशावली	ज्ञानोपदेश	,,	१८८४		
		काशी कीर्ति मंजरी	स्वामी दयानंदजी और स्वामी विशुद्धानंदजी का शास्त्रार्थ	,,	१८८६		
		माधुरी विलास	दर्शन	,,			
		विज्ञान बोध	द्वैतवाद	,,	१८८८		
१०	सूर्यबख्श	रामायण	रामचरित्र	,,	१८६५	१८६५	
		विनय संहिता	स्तुति	,,	१६१३	१६१३	
११	हकीम सिंह	पद्य संग्रह	विविध	,,	१६३०		

चतुर्थ परिशिष्ट (आ)

आश्रयदाता और आश्रित ग्रंथकारों की सूची

क्रम संख्या	परिशिष्ट १-२ में रचयिता और उसके ग्रंथों का क्रम संख्या	रचयिता	आश्रयदाता	विशेष
१	५	अजीतसिंह मेहता	रावल रणजीत सिंह, जैसलमेर	
२	३	अरुभद्र	बादशाह जहाँगीर	
३	२	आधार मिश्र	चेत सिंह भदैरिया	
४	१८५	करणीदान	राजा अभय सिंह, जोधपुर	जागीर और कविराज की उपाधि मिली।
५	१६२	केशवदास मिश्र	महाराजा मधुकर शाह, ओड़छा	
६	१६१	केशवराय कायस्थ	महाराजा छत्रसाल ओड़छा, बुंदेलखंड	
७	१६६	खेत सिंह	महाराजा परीक्षित, दतिया	
८	११०	गंगाप्रसाद माथुर	महेंद्र महेंद्र सिंह, भदावर नरेश	
६	११८	गिरधारीलाल	बादशाह औरंगजेब	
१०	१२६	गोपीनाथ	बादशाह अकबर	
११	१३५	ग्वाल कवि	जसवंत सिंह और स्व० लहना सिंह	
१२	१११	घनानंद या आनंदघन	महम्मद शाह	
१३	६४	चंद्रमणि	१-महाराज उदोत सिंह, ओड़छा (१६८९-१७३५ ई०) २-महाराजा पृथ्वी सिंह- ओड़छा (१७३५-५२ ई०)	
१४	६८	छत्र कवि	महाराज कल्याण सिंह, भदावर	
१५	१७३	जय जयराम	राजा राजकुमार जसवंत सिंह, हरियाना	
१६	८०	देवदत्त	कुशल सिंह (इटावा नरेश मधुकरी शाह के पुत्र)	
१७	२४१	नागरीदास	छज्जू रामराव (दीवान श्रीराव राजा प्रताप सिंह के	
१८	२५७	पद्माकर भट्ट	महाराजा प्रताप सिंह सवाई और महाराजा जगत सिंह सवाई, जयपुर।	
१६	२२	बलबीर	हिम्मत खान	
२०	५३	बिहारीलाल	महाराज जय सिंह, जयपुर	
२१	५०	भुल्लन सेख	महाराज रामधीर सिंह, भरतपुर	
२२	२२५	मलिक मुहम्मद जायसी	बादशाह शेरशाह सूर	
२३	२१७	माधवदास कथ्थक	महाराज विश्वनाथ सिंह, रीवाँ	

क्रम संख्या	परिशिष्ट १-६ में रचयिता और उसके ग्रंथों की क्रम संख्या	रचयिता	आश्रयदाता	विशेष
२४	२३८	मुन्नूलाल	नासीरुद्दीन नवाब, अवध	
२५	२३०	मेघराज प्रधान	महाराजा सुजान सिंह, ओड़छा	
२६	२८०	रामचंद्र	बहादुर सिंह दीवान, मारवाड़	
२७	२६१	रामप्रसाद निरंजनी	महाराजा, पटियाला	
२८	२१०	ललितलाल	महाराजा भगवंत सिंह, धौलपुर	
२९	३२८	विष्णुदास	राजा डोंगर सिंह, गोपाचल (ग्वालियर)	
३०	३११	शिवनाथ	जसवंत सिंह, बुंदेला	
३१	३०५	शीतलप्रसाद	सूबा सिंह, रहीमाबाद (संडीला)	
३२	३१७	श्रीपति भट्ट	नवाब सैय्यद हिम्मत खान (औरंगजेब के समय में) इलाहाबाद	
३३	१४४	हरिराम	महेंद्र महेंद्र सिंह, भदावर नरेश	

ग्रंथकारों की अनुक्रमणिका

ग्रंथकारों के सामने की संख्याएँ परिशिष्ट १ और २ में दी गई क्रमसंख्याएँ हैं।

ग्रंथों की अनुक्रमणिका

ग्रंथों के सामने की संख्याएँ परिशिष्ट १, २ और ३ में दी गई क्रमसंख्याएँ हैं।

---

* इति *



८८


CENTRAL ARCHAEOLOGICAL LIBRARY
New Delhi